The Himalayan Astrological Research Institutes First Book.

श्रीक्ष्मीधर-विद्यामन्दिरस्याद्यापुष्पम्

विद्वद्वर्यश्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञप्रणीतम्

ज्योतिस्तत्त्वम्

(उत्तरार्द्धम्)

जोशीत्युपाह्वाचार्यपण्डितचक्रधरभट्टकृतभाषाटीकोदाहरण
विवृत्तिकोष्ठकादिभिःसमलङ्कृतम्

तदेव

पुण्याख्यपत्तनस्थ प्रशान्तमुद्रणालये
मुद्रयित्वा प्रकाशितम्

प्रथमावृत्तिः
१०००

विक्रमाब्दाः २०१२
ख्रिष्टाब्दाः १९५५

प्रकाशक :–
आचार्य पं. चक्रधर जोशी
श्रीलक्ष्मीधर–विद्यामन्दिर
देवप्रयाग
(बदरीनाथ–हिमालय)
VIA HARDWAR.
उत्तर प्रदेश.

मुद्रक :–
श्री शिवप्रसाद मुंदडा
प्रशांत प्रिंटरी
९०५ सदाशिव पेठ,
लक्ष्मीपथ, पुण्यपत्तनम्

मूल्यम् २५ रु.

प्राप्तिस्थानम्

श्री मुकुन्ददैवज्ञ
C/o. आचार्य पं. चक्रधर जोशी,
श्रीलक्ष्मीधर–विद्यामन्दिर,
P.O. देवप्रयाग (गढवाल–उत्तरप्रदेश)

श्रीमुकुन्ददैवज्ञ वडेथवाल
मु. खंड, पो. अमोल (पट्टी ढांगू)
(जि. गढवाल उ. प्र.)

अथ ज्योतिस्तत्त्वान्तर्गतोत्तरखण्डस्य विषयानुक्रमणिका

(२८)

शत्रुभावचिन्तनप्रकरण

(२९)

जायाभावचिन्तनप्रकरण

(३०)

आयुर्भावचिन्तन प्रकरण

(३१)

भाग्यभावचिन्तनप्रकरण

(३२)

कर्मभावचिन्तनप्रकरण

(३३)

लाभभावचिन्तनप्रकरण

(३४)

व्ययभावचिन्तनप्रकरण

(३५)

अथ भावसारांश प्रकरणं प्रारभ्यते

(३६)

अथ ग्रहराशियुति प्रकरणं प्रारभ्यते

(३७)

अथ योगप्रकरणं प्रारभ्यते

(३८)

अथ जन्मपत्र्यादि लेखनानुक्रम प्रकरणं प्रारभ्यते

(३९)

अथ प्रश्नप्रकरणं प्रारभ्यते

(४०)

परीक्षापरिणाम प्रकरणं

(४१)

वृष्टि प्रकरणं

(४२)

अर्घप्रकरणम्

(४३)

प्रकीर्ण प्रकरणम्

इति ज्योतिस्तत्त्वान्तर्गतोत्तरखण्डस्य
विषयानुक्रमणिका

ईशप्रार्थना

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम् ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

अथ

सुतभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते ।

सुत भाव जन्य पदार्थों का परिज्ञानः—

सूनौ सूनुर्गर्भनीतिस्थिती धीर्विद्या तुन्दं देवसेवा प्रबन्धः ।
मंत्रो यंत्रं तातभावो विवेको भूपो मंत्री शक्तिपुण्ये विचिन्त्यम् ॥ १ ॥

पुत्र, गर्भ स्थिति, नीतिस्थिति, बुद्धि, विद्या, उदर, देव सेवा, प्रबन्ध, यंत्र, मंत्र, पितृ स्वभाव, विवेक, महीपत्व, मंत्री, शक्ति और पुण्य इन सब वस्तुओं का पञ्चम भाव में विचार करे ।

सन्तानाचिन्ता परिज्ञानः—

विचिन्तयेत्सन्तातमुद्गमाद्विधोर्बृहस्पतेरस्तगृहाच्च पुत्रभे ।
सेज्यैस्तपोनन्दनकामपैस्तथा सन्तानचिन्तां मतिमान्विनिर्दिशेत् ॥ २ ॥

लग्न, चन्द्र, गुरु तथा सप्तम भाव से जो पञ्चम स्थान हो उस में सन्तान का विचार करे । अथवा नवमेश, पञ्चमेश, सप्तमेश तथा गुरु से सन्तान का विचार करे ।

सन्तान प्राप्ति के सम्भवासम्भवत्व का परिज्ञानः—

सप्राणतो हरिजतो हिमदीधिते र्वा
यत्पञ्चमस्थलमिहात्मजवेश्म तस्मिन् ।
सद्भे सदीशसुगृहेश्वरयुक्तदृष्टे
सन्मध्यगे नहि युतेक्षित उग्रखेटैः ॥ ३ ॥

मूढाधरारिभगतैः सुरपूज्यपुत्र-
पस्त्येशयोः सबलयोः सुगृहस्थयोर्वा ।
धीतत्पयोः सशुभयोः शुभदृष्टयोश्च
सन्तानलब्धिरुदितेतरथा तथा न ॥ ४ ॥

लग्न तथा चन्द्र इन दोनों में से जो अधिक बली हो उस से जो पञ्चम स्थान है । वह पुत्र स्थान होता है । उक्त स्थान में यदि शुभ की राशि हो, अपने स्वामी अथवा सुस्थान (१, २, ३, ४, ५, ७, ९, १०, ११,) के स्वामी शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हों एवं शुभ ग्रहों के मध्य में हो पापग्रहों से वा अस्तगत नीचगत वा शत्रु राशि गत ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट न हो एवं गुरु तथा पञ्चमेश वे दोनों बली हो और सुस्थान में हो अथवा पञ्चम तथा पञ्चमेश वे दोनों शुभ युक्त और शुभ दृष्ट हो तो सन्तान की प्राप्ति कही है । यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो सन्तान की प्राप्ति नहीं होती है ।

सन्तान प्राप्ति सम्भव योग तथा सन्तानकारक ग्रह कथनः—

केन्द्रे कोणे शौर्य्यसद्युक्तधीशे सन्तानाप्तिः सम्भवा सौम्यदृष्टे ।
कोणास्ताङ्गाधीशकाव्येज्यकोणचन्द्रार्कारा: कारकाः सन्ततेः स्युः ॥ ५ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में बली पञ्चमेश हो और वह शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो सन्तान की प्राप्ति सम्भव होती है । पञ्चम, नवम, सप्तम तथा लग्न इन चार भावों के स्वामी एवं शुक्र, गुरु, शनि, चन्द्र रवि तथा मङ्गल ये दश ग्रह सन्तानकारक होते है ।

सन्तानलब्धियोगः—

मूर्त्तौ मतौ सबलधीशयुतेक्षितेऽथे-
ज्याढ्येक्षिते झषहरिस्वभगे सुतेऽस्रे ।
वास्ते सुते बलयुते सुतपे गुरौ वा
नो पापलोकितयुते पुरभे प्रजा स्यात् ॥ ६ ॥

लग्न वा पञ्चम बलवान् पञ्चमेश से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) मीन सिंह वा स्वराशि (मेष वृश्चिक) गत भौम यदि पञ्चम में हो और वह गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) सप्तम वा पञ्चम में बली पञ्चमेश गुरु हो तो (३) यदि लग्न पापग्रह से दृष्ट तथा युक्त न हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष सन्तानवाला होता है ।

बहु सन्तति योगः—

अङ्गजे सितशशाङ्कभांशके तत्समन्वितविलोकिते ततः
कर्किकौर्पिकझषैः सुतोपगैर्जायते जननवान्बहुप्रजः ॥ ७ ॥

पञ्चम में शुक्र वा चन्द्रमा की (२।४।७) राशि तथा उन का नवांश हो और वह शुक्र वा चन्द्रमा से युक्त वा दृष्ट हो अथवा पञ्चम में कर्क वृश्चिक वा मीन हो तो मनुष्य बहुत सन्तान वाला होता है ।

गिरीशकाव्यकोविदैः ससूनुपैः सहोऽन्वितैः ।
समीक्षिते युते सुते प्रभूतसन्ततेर्जनिः ॥ ८ ॥

गुरु, शुक्र, बुध तथा पञ्चमेश ये चारों बली होकर पञ्चम में हो वा पञ्चम को देखते हों तो बहुत सन्तान वाला होता है ।

शीघ्रसन्तानोदययोग तथा पुत्र सौख्य योगः—

कर्काजगोष्वात्मनि राहुचूडिनोर्नोक्तो विलम्बो विबुधैः प्रजाजनौ ।
त्रिध्यायकेन्द्रे तनुपेऽथ सोत्तमे सद्भे गुरोरात्मनि सूनुतः सुखम् ॥ ९ ॥

पञ्चम में कर्क मेष वा वृष राशि हो और उस में राहु वा केतु हो तो सन्तान की उत्पत्ति में विलम्ब नहीं होता है अर्थात् शीघ्रसन्तानोदय होता है। तृतीय पञ्चम लाभ वा केन्द्र में लग्नेश हो अथवा गुरु की आक्रान्त राशि से जो पञ्चम राशि हो वह शुभ ग्रह की राशि हो और शुभ ग्रह से युक्त हो तो पुत्र से सुख होता है।

पुत्रप्राप्ति योगः—

परस्परं पश्यत आत्मजाताङ्गेशा उतान्योन्यभगौ युतौ वा
अथात्मजेशे परिपूर्णवीर्य्ये चेद्गोपुरे वा मृदुभागयाते ॥ १० ॥

किं कामपस्थांशपतौ शुभार्थदेहेशदृष्टेऽथ शुभेशदृष्टे।
सुते सुतेशामरपूजितांड्योर्वैशेषिकांशेऽथ तपःसुतेशोः ॥ ११ ॥

परावतांशादिगयोर्धनेशे सद्दृष्टियुक्ते सुतलब्धिरेषु।
होरेश्वरस्थांशपतौ प्रबन्धे प्रबन्धभावेशयुतांशपेऽङ्गे ॥ १२ ॥

किं केन्द्र इज्यस्थितभागपे वा वर्गोत्तमांशे धिषणेऽङ्गपस्य।
नवांशपे सौम्यखगे समेते दृष्टे सुतेशेन किमर्थनाथे ॥ १३ ॥

सूनौ सवीर्य्ये च विशेषितांशे जीवेऽथ केन्द्रे सशुभाङ्गधीशौ।
स्वेशेससारेऽथ सुतेऽङ्गनाथे बलान्वितौ धीशगुरू सुताप्तिः ॥ १४ ॥

पंचमेश और लग्नेश ये दोनों परस्पर एक दूसरे को देखते हों तो (१) पञ्चमेश और लग्नेश ये दोनों परस्पर एक दूसरे की राशि में हो अर्थात् पञ्चमेश लग्नेश की राशि में और लग्नेश पञ्चमेश की राशि में हो तो (२) लग्नेश और पञ्चमेश ये दोनों एक ही स्थान में हों तो (३) गोपुरांश वा मृदंश में परिपूर्ण बली पञ्चमेश हो तो (४) सप्तमेश के नवांश का स्वामी यदि नवमेश, द्वितीयेश तथा लग्नेश से दृष्ट हो तो (५) पञ्चम स्थान को नवमेश देखता हो और वैशेषिकांश में पञ्चमेश तथा गुरु हो तो (६) पारावतांशादि में नवमेश तथा पञ्चमेश हों और लग्न का स्वामी यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो पुत्र प्राप्ति होती है। पञ्चम में लग्नेश के नवांश का स्वामी हो और लग्न में पञ्चमेश के नवांश का स्वामी हो अथवा गुरु के नवांश वा स्वामी यदि केन्द्र में हो तो (१) वर्गोत्तमांश में गुरु हो एवं लग्नेश के नवांश का स्वामी शुभ ग्रह हो और वह पञ्चमेश से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) पञ्चम में बली द्वितीयेश हो और वैशेषिकांश में गुरु हो तो (३) केन्द्र में लग्नेश तथा पञ्चमेश हो और वे शुभ ग्रह से युक्त हों एवं द्वितीयेश बली हो तो (४) पञ्चम में लग्नेश हो, पञ्चमेश तथा गुरु वे दोनों बली हो तो उक्त योगों में पुत्र की प्राप्ति होती है।

पुंभांशगेषु पुरुषग्रहधीश्वरेषु
किं धीश्वरे पुरुषखेचरयुक्तदृष्टे।
पुंभांशके पुरुषवेश्मनि वा सुतेशे
सद्वीक्षिते बलवति त्रिकभेतरस्थे ॥ १५ ॥

पुत्राप्तिमाहुरुदयाधिपयुक्तदृष्टे
वीर्यान्विते मतिपतौ तनये खलोने ।
वाधे स्वभे तनयगे तत आत्मभावे
पुंराशिगे विदि तथा विध उद्गमेशे ॥ १६ ॥

तदा सुतः स्यात्परथा सुता भवेत् प्रज्ञाधिनाथे परमोच्चभङ्गते ।
कल्याणदृष्टे सुकृताङ्कभागगे सुतस्थलेऽप्युत्तमवीक्षिते ततः ॥ १७ ॥

सूरौ सुते वा सुतपे गुरौ सुते सौम्यप्रदृष्टेऽथ विलग्नपेक्षिते ।
बलप्रपूर्णे सचिवे सुतेऽथ वा धीशार्घ्ययोः सत्पथिपालदृष्टयोः ॥ १८ ॥

वैशेषिकांशे किमुतायवेश्मनि कल्याणभांशे तदधीश उत्तमैः ।
युक्तेक्षिते कण्टककोणगेऽथ वित्सुते स्वभे वा हरिभेऽथ तुङ्गगौ ॥ १९ ॥

दृष्टौ मिथो ध्युद्गमपौ किमङ्गपेऽस्तेऽङ्गेऽस्तपे कोशपसंयुतेऽथ वा ।
जायेशयुक्ते हरिजेशभागपे कोशाङ्गपुत्राधिपसङ्गमे सुतः ॥ २० ॥

पुरुषराशि वा पुरुष नवांश में पुरुष ग्रह तथा पञ्चमेश हो तो (१) पुरुष ग्रह की राशि वा नवांश में वा विषम में पञ्चमेश हो और वह पुरुष ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) सुस्थान (१।२।३।४।५।७।९।१०।११) में बली पञ्चमेश हो और वह शुभदृष्ट हो तो पुत्र प्राप्ति होती है। बली पञ्चमेश यदि लग्नेश से युक्त वा दृष्ट हो और पञ्चमस्थान पाप रहित हों तो (१) पञ्चम में स्वराशिगत पाप ग्रह हो तो (२) पञ्चम में पुरुषराशिगत बुध वा पुरुष राशि गत लग्नेश हो तो पुत्र होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो अर्थात् सम राशि गत बुध वा लग्नेश पञ्चम में हो तो कन्या होती है। परमोच्च गत पञ्चमेश शुभदृष्ट हो, शुभ ग्रह के नवांश में हो और पञ्चमस्थान भी शुभ दृष्ट हो तो (१) पञ्चम में गुरु हो वा पञ्चम में पञ्चमेश गुरु हो और वह शुभ दृष्ट हो तो (२) पञ्चम में बली गुरु हो और वह लग्नेश से दृष्ट हो तो (३) वैशेषिकांश में पञ्चमेश तथा गुरु हों और वे शुभ ग्रह तथा भाग्येश से दृष्ट हों तो (४) लाभ में शुभ ग्रह की राशि वा नवांश हो और केन्द्र वा त्रिकोण में लाभेश हो और वह शुभ दृष्ट हो तो (५) पञ्चम में स्वराशि गत वा सिंह राशि गत बुध हो तो (६) उच्च राशि गत पञ्चमेश तथा उच्चराशि गत लग्नेश ये दोनों परस्पर देखते हों तो (७) सप्तम में लग्नेश, लग्न में सप्तमेश हो और वह धनेश से दृष्ट हो तो (८) लग्नेश के नवांश का स्वामी सप्तमेश से युक्त हो एवं धन, लग्न तथा सुत इन तीनों स्थानों के स्वामी एकही स्थान में हों तो पुत्र प्राप्ति होती है।

बहु पुत्र योगः—

ज्ञाहीना धिपि यदि कारके ससौम्ये
सद्दृष्टेऽथ शुभदृशा युते सुतेशे ।
सद्राशौ दिविषदि कारके सकेन्द्रे
वाङ्गेशे तनयगृहे तनौ मतीशे ॥ २१ ॥

वागीशे विधिमतिकेन्द्रगेऽथ मंत्रे
स्वभांशौ यमलवर्जिते सुखेटैः ।
संदृष्टे किमु सुतपे स्वतुङ्गयाते
सानुग्रे प्रथमपतौ प्रकारकेऽथो ॥ २२ ॥

सूरौ वा सुतसदने तदीश्वरे वा
दृष्टाढ्ये विगतमलैरथाङ्गनाथे ।
मेधास्थे यदि परिपूर्णवीर्य्ययुक्त
आचार्य्ये सबलसुतेश्वरेऽथ पूज्ये ॥ २३ ॥

प्रेक्षास्थे निखिलबलान्विते धनेशे
सप्राणेऽथ मतिपयुक्तभागभेशे ।
कल्याणेक्षितकलितेऽथ देहधीशौ
केन्द्रस्थौ सशुभकरौ स्वपे ससत्त्वे ॥ २४ ॥

यद्वाऽस्ते स्मरगुरुपौ पुरेऽक्षिपे वा
धीनाथे सबलगुरौ धनेशदृष्टे ।
किं सूनौ सुकृतखगे स्वराशिसंस्थे
सञ्जातो बहुतनयैः समेत एषु ॥ २५ ॥

पञ्चम में बुध, राहु तथा सूर्य हों एवं पुत्रकारक ग्रह शुभ युक्त दृष्ट हो तो (१) शुभ राशि गत पञ्चमेश यदि शुभ ग्रह से दृष्ट युक्त हो और केन्द्र में पुत्रकारक हो तो (२) पञ्चम में लग्नेश, लग्न में पञ्चमेश हो एवं त्रिकोण वा केन्द्र में गुरु हों तो (३) पंचम में राहु हो और वह शनि के नवांश में न हो एवं शुभ दृष्ट हो तो (४) स्वोच्च राशि में पञ्चमेश हो और लग्नेश तथा पुत्रकारक यदि शुभ ग्रह से युक्त हो तो (५) गुरु पञ्चम-भाव वा पंचमेश यदि शुभग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो (६) पंचम में लग्नेश हो, गुरु परिपूर्ण बली हो और पञ्चमेश भी बलवान् हों तो (७) पंचम में सम्पूर्ण बल युक्त गुरु हो और लग्नेश भी बली हो तो (८) पंचमेश के नवांश तथा राशि का स्वामी शुभग्रहों से दृष्ट युक्त हों तो (९) केन्द्र में लग्नेश तथा पंचमेश हों और वे शुभग्रह से युक्त हों एवं धनेश बली हो तो (१०) सप्तम में सप्तमेश और नवमेश हों एवं लग्न में धनेश हो तो (११) पंचमेश गुरु बली हो और लग्नेश से दृष्ट हो तो (१२) पंचम में स्वराशिगत शुभ ग्रह हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बहुत पुत्रवाला होता है ।

ओजभांशग उषाधिपे चितीनेक्षितेऽथ सुत ओजभस्थयोः ।
ग्लौभयोस्तदवलोकितेऽपि च तद्गणे न दुरितेक्षिते तथा ॥ २६ ॥

पंचम में विषम राशि गत वा विषम नवांश गत चन्द्रमा हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो (१) पञ्चम भाव यदि विषम राशि गत चन्द्र तथा शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) पंचम भाव में चन्द्र वा शुक्र का वर्ग हो और वह पाप दृष्ट न हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बहुत पुत्रवाला होता है ।

कुलीरकालान्वितपञ्चमेऽथ वा पुण्याधिपे पुंग्रहदृष्टसंयुते ।
पुंवर्गगे वा घटभृन्नृयुग्मयोर्मतिस्थयोर्भूरितनूसमुद्भवाः ॥ २७ ॥

पंचम में कर्क राशि गत शनि हो तो (१) पुरुष ग्रह के वर्ग में नवमेश हो और वह पुरुष ग्रह से दृष्ट तथा युक्त हो तो (२) पंचम में कुम्भ वा मिथुन हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष के बहुत पुत्र होते है ।

सल्लोकितेऽङ्गात्मजगे ग्रहे स्थिरे राशौ सुताः स्युर्बहवोऽन्यथाऽल्पकः ।
कुम्भेऽङ्गजस्थे बहवः स्युरात्मजा एकः सुतः श्रेष्ठतरो भवेन्नृणाम् ॥ २८ ॥

लग्न तथा पंचम में स्थिर राशि गत ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट हो तो बहुत पुत्र होते हैं । यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो अल्प पुत्रवाला होता है । पंचम में कुम्भ राशि हो तो बहुत पुत्र होते है किन्तु उन में एक ही पुत्र अत्युत्तम होता है ।

सत्पुत्र के योगः—

सन्ततिर्भवति शोभना सुते सोच्चमे सुकृतभांशके सता ।
लोकितेऽथ सबले सुताधिपे सत्समस्तमुदितं सुताधिपे ॥ २९ ॥
नन्दने किमुत तद्गते ग्रहे सद्बलेन सहिते सुपुत्रवान् ।
तत्र वीर्य्यसहिते बुधे गुरौ सत्सुतो भृगुसुतोऽतिपेशलः ॥ ३० ॥

पुत्र भाव में शुभ ग्रह की राशि तथा नवांशक हो और शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो तो उत्तम सन्तान होती है । एवं पंचमेश भी उत्तम बल से युक्त हो तो पंचम भाव जन्य समस्त शुभ फल कहना चाहिए । पंचम में उत्तम बल युक्त पंचमेश हो अथवा अन्य ग्रह हो तो उत्तम पुत्र वाला होता है । पंचम में बली बुध वा गुरु हो तो उत्तम पुत्र होता है । एवं पंचम में बली शुक्र हो तो अत्यन्त चतुर पुत्र होता है ।

अज्ञानुवर्ती पुत्र के योगः—

दृष्टौ मिथो नन्दनलग्ननायकौ किं ताविहान्योन्यगृहांशसंश्रितौ ।
आज्ञानुवर्त्ती तनयो नृणां भवेदितीरितं जातकपारदर्शिभिः ॥ ३१ ॥

पञ्चमेश तथा लग्नेश ये दोनों परस्पर देखते हों अथवा वे दोनों परस्पर एक दूसरे की राशि वा नवांश में ों तो मनुष्यों का आज्ञानुवर्ती पुत्र होता है । इस प्रकार जातक शास्त्रवेत्ताओं ने कहा है ।

पुत्रवाक्यवश्य योगः—

पौरालयस्थे प्रतिभागृहेशे विलग्नपे नन्दनमन्दिरे वा ।
तनूपदृष्टे तनये मतीशदृष्टे तनौ नन्दनवाक्यवश्यः ॥ ३२ ॥

लग्न में पञ्चमेश हो और पञ्चम में लग्नेश हो अथवा पञ्चमस्थान लग्नेश से दृष्ट हो और ' लग्न ' पञ्चमेश से ष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पुत्रवाक्यवश्य होता है ।

पितृपालक पुत्र योगः—

पराक्रमेशे निजभे मतीशे मित्रेऽमलोच्चग्रहसंयुते वा।
मंत्रे समार्त्तण्डसितामरेज्ये वैषां गृहे भोजयिताऽम्बकस्य ॥ ३३ ॥

सहज में सहजेश हो, सुख में पञ्चमेश हो और वह शुभ ग्रह तथा उच्च राशि गत ग्रह से युक्त हो अथवा पञ्चम में सूर्य, शुक्र तथा गुरु हों अथवा पञ्चम में सूर्य शुक्र वा गुरु की राशि हो तो पिता को भोजन कराने वाला होता है।

पुत्र के साथ शत्रुत्व योगः—

प्रबन्धपे पराश्रिते गुरावरातिपान्विते।
अपायपे पुरोपगे तनूजनी रिपुर्भवेत् ॥ ३४ ॥

षष्ठ में पञ्चमेश हो, गुरु यदि षष्ठेश से युक्त हो और लग्न में व्ययेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष का पुत्र शत्रु होता है।

पुत्र के साथ मित्रत्वादि योगः—

पौरप्रज्ञापालयोः शात्रवत्वे पुत्रः शत्रुस्तत्सुहृत्त्वे सखा सः।
पण्डाहोरागारपत्योः समत्व औदासीन्यं साकमात्मोद्भवेन ॥ ३५ ॥

लग्नेश तथा पञ्चमेश की शत्रुता हो तो पुत्र 'शत्रु' होता है। यदि उक्त दोनों भावों के स्वामियों की परस्पर मित्रता हो तो पुत्र 'मित्र' होता है। एवं दोनों की उदासीनता हो तो पुत्र के साथ उदासीनता होती है।

प्रीतिहीन योग तथा अन्वजात योगः—

धीस्थैर्गुरोरहियमारुणरोहिताङ्गैः
सूरेस्तनोश्च सुतपे सखले त्रिकस्थे।
वाच्या सुते विरतिरुद्गमवासरान्ते
तिथ्यन्तिमे चरलवे जनितोऽन्वजातः ॥ ३६ ॥

गुरु से पञ्चम में राहु, शनि, सूर्य और मङ्गल हों अथवा गुरु से तथा लग्न से जो पञ्चम स्थान हो उस का स्वामी यदि त्रिक में हो और वह पाप युक्त हो तो पुत्र में विरति अर्थात् स्नेह नहीं होता है। लग्न, दिन और तिथि इन तीनों के अन्त में और चरांशक में जिस का जन्म हो वह अन्वजात होता है अर्थात् उस के पश्चात् पिता के मरने के कारण दूसरा नहीं होता है।

कष्ट से पुत्र प्राप्ति के योगः—

सुतेऽग्निनाराः सुतसौख्यदाः स्युः शान्त्याः स्वनीचे सुतपे पथीशे।
देहे झकेत्वोस्तनये तु कष्टात्कुमारलब्धिर्गदिता ग्रहज्ञैः ॥ ३७ ॥

पञ्चम में राहु, सूर्य और मङ्गल हों तो उक्त ग्रहों की शान्ति से पुत्र का सुख होता है। नीच राशि में पञ्चमेश हो, लग्न में नवमेश हो और पञ्चम में बुध तथा केतु हो तो कष्ट से पुत्र की प्राप्ति होती है।

पण्डाभावे पापाक्रान्ते किं पुत्राधीशे दुःस्थे वा।
नीचर्क्षे वा शत्रुक्षेत्रे पुत्रप्राप्तिः कष्टाद्वाच्या ॥ ३८ ॥

पञ्चम स्थान पापाक्रान्त हो अथवा त्रिक में नीचराशि में वा शत्रु राशि में पञ्चमेश हो तो कष्ट से पुत्र की प्राप्ति कहनी चाहिए।

पुत्र कष्ट के योगः--

पावकेक्षितयुते प्रसूतिपे क्रूरषष्ठिलवगेऽथ देवपे।
प्रान्त्यपस्थलवपत्रिभागपाढ्येक्षितेऽत्र तनयार्त्तिरीरिता ॥ ३९ ॥

क्रूर षष्ठ्यंश में पञ्चमेश हो और वह पाप ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो अथवा पञ्चम स्थान का स्वामी यदि व्ययेश के नवांशेश से वा द्रेष्काणेश से युक्त वा दृष्ट हो तो पुत्र कष्ट होता है।

सन्ताननाथोऽस्तगतः खलेक्षितः खलैः समेतः प्रकरोति सन्ततेः।
बाधां यदा सोऽर्थचतुष्टयात्मजमनोरथज्ञानगतोऽन्यथा भवेत् ॥ ४० ॥

पञ्चमेश यदि अस्तगत हो पाप दृष्ट हो वा पाप युक्त हो तो सन्तान कष्ट को करता है। यदि वह पञ्चमेश धन केन्द्र पंचम लाभ वा नवम में हो तो विपरीत फल होता है अर्थात् पुत्र कष्ट नहीं होता है।

द्वितीय स्त्री से पुत्र प्राप्ति के योगः--

मताविने नान्ययुते सकर्कटे द्वितीयनार्य्यास्तनयाप्तिरुच्यते।
अपत्यगैर्मेषकुरङ्गकन्यकापञ्चाननैराद्यवधूरपुत्रिणी ॥ ४१ ॥

पंचम में कर्क राशिगत सूर्य हो और वह अन्य ग्रह से युक्त न हो तो द्वितीय स्त्री से पुत्र की प्राप्ति होती है। पंचम में मेष मकर कन्या वा सिंह राशि हो तो प्रथम स्त्री पुत्र रहित और द्वितीय स्त्री से पुत्र होता है।

स्मरेऽशुभैर्वास्मरभेश्यसद्गृहे सपावकाकाशचरे किमात्मजे।
वक्रासुरादित्यपतङ्गजेषु वा प्रान्त्याङ्गपत्नीषु खलेषु मङ्गले ॥ ४२ ॥
लग्नेऽथ कर्के तनये कुजेऽथ वा पत्येऽशुभे दीदिवितो मतौ मृदौ।
द्वितीयनार्य्यां तनयस्य सम्भवः सौख्यं वधूनां तिसृणामुदीरयेत् ॥ ४३ ॥

सप्तम में पाप ग्रह हों तो (१) पाप ग्रह की राशि में सप्तमेश हो और वह पाप ग्रह से युक्त हो तो (२) पंचम में मङ्गल राहु वा शनि हो तो (३) व्यय लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हों और लग्न में मङ्गल हो तो (४) पंचम में कर्क गत मङ्गल हो तो (५) पंचम में पाप ग्रह हो गुरु से पंचम में शनि हो तो उक्त योगों में द्वितीय स्त्री से पुत्र की प्राप्ति और तीन स्त्रियों का सुख होता है।

मित्राङ्कमंत्रे मलिनग्रहान्विते प्राक् सम्भवा सन्ततिरत्र मीयते।
द्वितीयभार्याभव एकनन्दनो जीवेच्चिरायुर्विधिसंयुतश्च सः ॥ ४४ ॥

सुख, नवम तथा पंचम में पाप ग्रह हो तो प्रथम जनित सन्तान की मृत्यु होती है। एवं द्वितीय से एक पुत्र होता है और वह दीर्घायु तथा भाग्यवान् होता है।

तृतीय स्त्री से पुत्र योगः—

सकर्के ऽच्छे सुते ऽदभ्रपुत्रास्तृतीययोषितः।
तृतीययोषितश्चैकः पुत्रः कोणे हरौ बुधे ॥ ४५ ॥

पंचम में कर्क का शुक्र हो तो तृतीय स्त्री से बहुत पुत्र होते हैं। त्रिकोण में सिंह का बुध हो तो तृतीय स्त्री से एक पुत्र होता हैं।

अल्पापत्य योगः—

स्वल्पप्रजा चित्रशिखण्डिसूनौ मंत्रे समत्स्ये ऽथ सुते सकार्किणि।
बुधे तथा तत्र विधौ मितात्मजः कुमारिकावानथ पुत्रपे स्वभे ॥ ४६ ॥

किं कन्यकागोमृगराजकीटभैर्धीस्थैः सखेटैरथ पावके ऽस्तपे।
मतौ ततो ऽरौ भपरिज्वनोः किमु भर्त्तव्यभे ऽरम्यगृहे ऽसदभ्रगैः ॥ ४७ ॥

युतेक्षिते नो निजनाथवीक्षिते वदेत्तदाल्पप्रसवस्य सम्भवम्।
स्यात्सन्ततिः कष्टत इन्द्रमंत्रिणा युते हयाङ्गे सुतसद्मसंश्रिते ॥ ४८ ॥

पंचम में मीन राशि गत गुरु हो तो (१) पंचम में कर्क राशि गत गुरु हो तो उक्त योगों में अल्प सन्तान होती है। एवं पंचम में कर्क राशि गत चन्द्रमा हो तो अल्प पुत्र और कन्या सन्तान वाला होता है। पञ्चम में पंचमेश हो तो (१) पंचम में कन्या वृष सिंह वा वृश्चिक राशि हो और उस में ग्रह हो तो (२) पंचम में सप्तमेश पाप ग्रह हो तो (३) षष्ठ में शुक्र तथा चन्द्रमा हो तो (४) धन में पाप ग्रह की राशि हो, पाप ग्रह से युक्त दृष्ट हो और अपने स्वामी से दृष्ट न हो तो उक्त योगों में अल्प सन्तान वाले का जन्म कहे। पंचम धनू राशि गत गुरु हो तो कष्ट से सन्तान होती है।

विलम्ब से सन्तान प्राप्ति के योगः—

इलासुते ऽङ्गे तरणौ रणे ऽमलैर्दृष्टे दके ऽथाल्पसुतर्क्षगे सुते।
भौमे यमे ऽङ्गे युधि दीदिवौ ततो गात्रे बहूग्रैः सहिते फलोपगे ॥ ४९ ॥

पूर्णे परिज्ञे खलयुक्तयोः सुरासुरेज्ययोर्वा तनये ऽल्पपुत्रभे।
मनोरथे ऽब्जे सचिवात्सुतस्थले सपामरे सप्रचुरग्रहे पुरे ॥ ५० ॥

किमङ्गनाहर्य्यलिगोषु नन्दने ऽथाङ्गे ऽसिते देवगुरौ मृतौ कुजे।
रम्येक्षिते रिःफगते किमुच्चभं याते चिरात्पुत्रजनिः प्रजायते ॥ ५१ ॥

लग्न में मङ्गल, अष्टम में सूर्य और चतुर्थ स्थान शुभ दृष्ट हो तो (१) पंचम में अल्प प्रजा राशि गत मङ्गल हो, लग्न में शनि हो और अष्टम में गुरु हो तो (२) लग्न में बहुत पाप हों, लाभ में पूर्ण चन्द्रमा हो और गुरु तथा शुक्र पाप युक्त हो तो (३) पंचम में अल्प प्रजा राशि, लाभ में चन्द्रमा, गुरु से पंचम में पाप ग्रह और लग्न में बहुत ग्रह हों तो (४) पंचम में कन्या सिंह वृश्चिक वा वृष राशि हो तो (५) लग्न में शनि, अष्टम में गुरु और द्वादश में शुभ दृष्ट वा उच्च राशि गत भौम हो तो विलम्ब से पुत्र जन्म होता है।

क्षमाङ्गजेऽङ्गनेतरि निजोच्चगे यमेनयोः ।
मृतिस्थयोः शुभग्रहैः प्रदृष्टयोस्तथा भवेत् ॥ ५२ ॥

लग्नेश मङ्गल यदि उच्चराशि में हो और अष्टम में शनि तथा सूर्य हों और वे शुभ दृष्ट हों तो विलम्ब से पुत्र प्राप्ति होती है।

अङ्गारकेऽङ्गे मृतिमन्दिरे मृदौ मतिस्थले साल्पसुतर्क्ष उष्णगौ ।
वार्कौ तनावायुषि वाक्पतौ व्यये वासुन्धरेये विबले सुतेऽथ वा ॥ ५३ ॥
सूरिज्ञसौरैः सुतगैः सुताधिपेऽध्वन्युद्गमे वात्मपतौ शुभर्क्षगे ।
अथो सुते सद्भवने सदीक्षितेऽहीनेज्यभैस्तत्रगतैः सुतेश्वरे ॥ ५४ ॥
शुभर्क्षगे वाथ शुभेऽङ्गगे खले धैर्य्ये धने सद्भवने प्रसूतिपे ।
चिरात्सुताप्तिं समुपैति जातकः सुतेऽशुभे राज्ञि शुभैर्विलम्बतः ॥ ५५ ॥
सौख्यं समेत्यङ्गभवस्य पूरुषो घनेऽघराशावसदन्विते भगे ।
बलोनिते युग्मगृहेऽवनेर्जनौ त्रिंशत्समोर्ध्वं मनुजस्य सन्ततिः ॥ ५६ ॥

लग्न में मङ्गल, अष्टम में शनि और पञ्चम में अल्प प्रजा राशि गत सूर्य हो तो (१) लग्न में शनि, अष्टम में गुरु, व्यय में भौम और पञ्चम स्थान निर्बल हो तो (२) पञ्चम में गुरु, बुध तथा शनि हो, नवम वा लग्न में पञ्चमेश हो अथवा शुभ ग्रह की राशि में पञ्चमेश हो तो (३) पञ्चम में शुभ ग्रह की राशि हो और वह शुभ दृष्ट हो उस में राहु, सूर्य, गुरु तथा शुक्र हों एवं शुभ ग्रह की राशि में पञ्चमेश हो तो (४) लग्न में शुभ ग्रह तृतीय तथा धन में पाप ग्रह और शुभ ग्रह की राशि में पञ्चमेश हो तो विलम्ब से पुत्र की प्राप्ति होती है। पञ्चम में पाप ग्रह हों और दशम में शुभ ग्रह हों तो विलम्ब से पुत्र सुख होता है। लग्न गत पाप राशि यदि पाप युक्त हो, सूर्य निर्बल हो और समराशि में भौम हो तो ३० वर्ष के पश्चात् सन्तान होती है।

सभव्यखेटै स्त्रिकगैस्तपोऽङ्गधीशैस्तु किञ्चित्समयं विलम्बः ।
स्यात्सन्ततेः पाप्मखगो गुरुर्वा कगः कलेशे कलहेऽङ्गजे वा ॥ ५७ ॥
तदा वियद्राममिताब्दतुल्यः प्रबन्ध उक्तोऽथ शुभेक्षणोनाः ।
यावन्त उग्राः सुतगास्तु तावत्समाप्रमाणो नियतं विलम्बः ॥ ५८ ॥

त्रिक में नवमेश, लग्नेश तथा पञ्चमेश हों और वे शुभ युक्त हों तो कुछ काल पर्यन्त सन्तान प्राप्ति में विलम्ब होता है। सुख में पाप ग्रह वा गुरु हो और नवम वा पञ्चम में चन्द्रमा हो तो ३० वर्ष तक सन्तान का प्रबन्ध होता है। पंचम में जितने पाप ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो प्रथम गर्भाधान समय से उतने ही वर्ष सन्तान की प्राप्ति में विलम्ब होता है।

पुरन्दरेज्ये तनये तदीश्वरे सितान्विते दन्तमिते सुरोन्मिते ।
वर्षे सुताप्तिः सुतपे सकारके केन्द्रे खरामाब्द ऋतुत्रिवत्सरे ॥ ५९ ॥

पञ्चम में गुरु और पञ्चमेश यदि शुक्र से युक्त हो तो ३२ वें वर्ष वा ३३ वें वर्ष पुत्र की प्राप्ति होती है केन्द्र में पुत्र कारक सहित पञ्चमेश हो तो ३० वें वर्ष वा ३६ वें वर्ष पुत्र की प्राप्ति होती है।

पुण्ये पूज्ये पञ्चमे साङ्गपाच्छे पुत्रप्राप्तिः खाब्धिवर्षे सकर्के ।
सोमे ऽसौम्यैर्दृष्टयुक्ते दिनेशे दृष्टे भास्वत्सूनुना ऽभ्राङ्गवर्षे ॥ ६० ॥

नवम में गुरु और पञ्चम में लग्नेश युक्त शुक्र हो तो ४० वें वर्ष में पुत्र की प्राप्ति होती है। कर्क में चन्द्रमा हो और वह पाप दृष्ट युक्त हो एवं सूर्य यदि शनि से दृष्ट हो तो ६० वें वर्ष में पुत्र की प्राप्ति होती है।

काव्यारयोरोजभसंस्थयोर्गुरुविदोः समस्तेक्षणयुक्तयोस्ततः ।
फलागमस्थे फणिनामधीश्वरे सुतस्य लब्धिः स्थविरे भवेन्नृणाम् ॥६१॥

विषम राशि में शुक्र तथा मङ्गल हो और वे गुरु बुध से पूर्ण दृष्ट हो तो (१) लाभ में राहु हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य की वृद्धावस्था में पुत्र की प्राप्ति होती है।

सन्ताने संस्थिताः सौरिलोहिताङ्गभुजङ्गमाः ।
उच्यन्ते हौरिकैरेते सन्तानप्रतिबन्धकाः ॥ ६२ ॥

पञ्चम में शनि, मङ्गल तथा राहु हो तो ये तीनों ज्योतिषशास्त्रवेत्ताओं ने सन्तान के प्रतिबन्धक कहे हैं।

बाल्यकालादि में पुत्रप्राप्ति के योगः—

सद्भे सुतेशे सशुभे चतुष्टये कोणे सुताप्तिर्जनितस्य शैशवे ।
प्राप्तो ऽमलो ऽङ्गं घनमीक्षते ऽथ वा तद्वच्छुभो राजनि यौवने ऽङ्गजम् ॥ ६३ ॥

ददाति नारीगृहगो ऽमलग्रहो वा ऽनङ्गभं पश्यति यौवनात्यये
चारुर्हिते तिष्ठति वेक्षते हितालयं प्रकुर्य्यात्स्थविरे तनूजनिम् ॥ ६४ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में शुभयुक्त पञ्चमेश हो और वह शुभग्रह की राशि में हो तो बाल्यकाल में पुत्र की प्राप्ति होती है। लग्न में शुभ ग्रह हो अथवा लग्न को देखता हो तो भी बाल्य काल में पुत्र की प्राप्ति होती है। दशम में शुभग्रह हो अथवा वह दशमको देखता हो तो युवावस्था में पुत्र की प्राप्ति होती है। सप्तम में शुभग्रह हो अथवा वह सप्तम को देखता हो तो युवावस्था के अन्त में पुत्र की प्राप्ति होती है। एवं सुख में शुभग्रह हो अथवा वह सुख को देखता हो तो वृद्धावस्था में पुत्र की प्राप्ति होती है।

वयसि प्रथमे ऽङ्गजप्रदा द्वितनौ भार्गवभार्यभूभवाः ।
यदि ते तुरगाङ्गसङ्गताः सुतदा नो प्रथमे ऽपि पश्चिमे ॥६५॥

धनु को छोडकर शेष द्विस्वभाव (मिथुन, कन्या वा मीन) राशि में शुक्र, चन्द्र तथा भौम हो तो प्रथम अवस्था में पुत्रप्रद होते हैं। यदि धनु में शुक्र, चन्द्र तथा भौम हो तो प्रथम तथा अन्तिम अवस्था में पुत्रप्रद नहीं होते हैं।

कन्या प्रजा योगः—

अपत्यपस्त्थे समराशिवर्गे सज्ञार्कजे चन्द्रमसा सितेन।
वाऽऽलोकितेऽथो चिति नेत्रपाण्यवस्थाचिते सोमसुतेऽथ सूनौ॥ ६६॥

यद्वा मनोजे सितकेतुसूनौ सभां प्रयाते तनयाजनिः स्यात्।
विधोः प्रबन्धे भृगुजस्य वर्गे तद्भांशके तद्युतवीक्षिते वा॥६७॥

युग्मर्क्षवर्गेऽपि न पुंग्रहान्वितदृष्टे कुमार्यो बहुधाऽगमे मतौ
ज्ञेऽब्जे सितेऽथ प्रमदागृहांशके धीशे सुते भेन्दुयुतोक्षिते तथा॥६८॥

पञ्चम में समराशि का वर्ग हो और वह बुध तथा शनि से युक्त हो एवं चन्द्रमासे वा शुक्र से दृष्ट हो तो (१) नेत्रपाणि अवस्था में बुध हो और वह पञ्चमभाव में हो तो (२) सभावस्था में बुध हो और वह पंचम वा सप्तम में हो तो उक्तयोगों में कन्या की प्राप्ति होती है। पञ्चम में चन्द्रमा का वा शुक्र का वर्ग हो अथवा शुक्र वा चन्द्रमा की राशि तथा नवांश हो अथवा पञ्चमभाव यदि चन्द्रमा तथा शुक्र से युक्त दृष्ट हो अथवा पञ्चम भाव समराशि का वर्ग हो और पुरुष ग्रहों से दृष्ट युक्त न हो तो प्रायः कन्या की प्राप्ति होती है। लाभ तथा पञ्चम में बुध, चन्द्र तथा शुक्र हो तो (१) स्त्री राशि वा स्त्रीनवांश में पञ्चमेश हो और पञ्चम भाव यदि चन्द्र शुक्र से युक्त दृष्ट हो तो कन्या की प्राप्ति होती है।

धीशे रणे द्रविणभेऽथ विधौ कुमार्य्यां
नीरे हरौ सुत उतात्मजपे शपे वा।
कामेऽथवा समभ इन्दुभयुक्तदृष्टे
ऽथेज्ये सकर्किणि सुते बहुदारिकाः स्युः॥ ६९॥

अष्टम वा द्वितीय मे पञ्चमेश हो तो (१) सुख में कन्यागत चन्द्रमा हो तो (२) पञ्चम मे सिंह राशिगत चन्द्रमा हो तो (३) सप्तम में वा समराशि मे पंञ्चमेश वा भाग्येश हो और वह चन्द्र शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो (४) पञ्चम में कर्क राशिगत गुरु हो तो बहुत कन्यायें होती है।

गोस्त्रीमृगैर्नन्दनगैः कुमारी शनैश्चरे कर्म्मणि पद्मपाणौ।
एकादशे मन्मथमन्दिरेऽहौ स्वप्नेऽपि लब्धिर्नहि कन्यकायाः॥ ७०॥

पंञ्चम में वृष, कन्या वा मकर राशि हो तो कन्या होती है। दशम में शनि, एकादश में सूर्य और सप्तम में राहु हो तो स्वप्न में भी कन्या की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रथम पुत्रजन्म के योगः—

पुत्रेशे पुरुषग्रहे नृलवभे ऽथो नन्दनेशे किमु
पुण्येशे पुरुषे च पुंगृहगणे वाऽऽद्याधिपः पुंगृहे ।
पश्येत्पुंगृहगं सुतस्थलपतिं वार्थे पुरे सोदरे
पौरेशे तनयालयाधिपतिना पूर्णेक्षणेनेक्षिते ।। ७१ ।।

प्राक् पुत्रस्य जनिर्भवेद्धरिजभात्पुत्रे कलते कपौ
सार्कौ शक्तिसमन्विते तनुभवोत्पत्तिं पुरा निर्दिशेत् ।
कल्याणे स्वगृहादिगे बलयुते धीस्थेऽथ वा द्व्यङ्गभे
चन्द्रारास्फुजितस्ततोऽस्ततनये प्राणान्वितैः पुंखगैः ।। ७२ ।।

यद्वाऽऽत्मपो गोपुरभागगोऽनघैर्दृष्टः सदंशे प्रथमं सुतोद्भवम् ।
करोति किंवा स नपुंसकान्वितः षण्ढांशभे प्रागिह षण्ढसम्भवम् ।। ७३ ।।

पुरुष राशि वा पुरुष नवांश में पञ्चमेश पुरुष ग्रह हो तो (१) पुरुष ग्रह की राशि वा वर्ग में पञ्चमेश वा भाग्येश पुरुष ग्रह हो तो (२) पुरुष राशि में लग्नेश हो और वह पुरुष राशि गत पञ्चमेश को देखता हो तो (३) धन सहज वा लग्न में लग्नेश हो और उस को पञ्चमेश पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो उक्त योगों में प्रथम पुत्र का जन्म होता है । लग्न सें पञ्चम वा सप्तम में बली सूर्य हो और वह शनि से युक्त हो तो प्रथम पुत्र जन्म होता है । पञ्चम में स्वगृहादि गत बली शुभ ग्रह हो तो (१) द्विस्वभाव राशि में चन्द्र भौम शुक्र हो तो (२) सप्तम तथा पञ्चम में बली पुरुष ग्रह हो तो (३) गोपुरांश में तथा शुभांश में शुभ दृष्ट पञ्चमेश हो तो उक्त योगों में प्रथम पुत्र जन्म होता है । नपुंसक ग्रह की राशि में तथा नवांश में नपुंसक ग्रह युक्त पञ्चमेश हो तो प्रथम नपुंसक का जन्म होता है ।

प्रथम कन्या जन्म के योगः—

धीशे स्त्रीद्युचरे वधुलवगृहेऽथो सूनुपे वा शपे
दारस्थे समभेऽसुरेज्यसितरुग्युक्तेक्षिते वाङ्गपः ।
स्त्रीभे स्त्रीगृहगं कुमारगृहपं पश्येत्ततः पौरषे
कोणायास्तमये गदन्ति गणकाः प्राक् कन्यकाया जनुः ।। ७४ ।।

स्त्री राशि में वा स्त्री राशि के नवांश में पञ्चमेश स्त्री ग्रह हो तो (१) सप्तम में वा समराशि में पञ्चमेश वा नवमेश हो और वह शुक्र चन्द्रमा से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) स्त्री राशि में लग्नेश हो और वह स्त्रीराशि गत पञ्चमेश को देखता हो तो (३) त्रिकोण लाभ वा सप्तम में लग्नेश हो तो उक्त योगों में प्रथम कन्या का जन्म होता है ।

सप्राणयोः स्त्रीगगनौकसोश्चेत्पत्यौ मतौ तद्वदघे फलस्थे ।
सूनौ समेऽब्जे तनुजाजनिः प्राक् तस्याः प्रसूः कष्टयुता तदानीम् ।। ७५ ।।

सप्तम वा पञ्चम में बली स्त्री ग्रह हों तो (१) लाभ में पाप ग्रह हो और पञ्चम में शुक्र युक्त चन्द्रमा हो तो प्रथम कन्या का जन्म और माता को कष्ट होता है ।

पुत्र तथा पुत्री संख्या परिज्ञानः—

सद्दृष्टे सबले सुतेशि तरणावेकात्मजो वाक्यता-
वेवं पञ्च सुताः कुजे त्रितनयाश्चन्द्रे द्विकन्ये सिते।
कन्याः षड् रविनन्दने नगमिताः कन्याः स्मृतास्तद्विधे
तारायास्तनये तदा निगदिताः पुंसां चतस्रः सुताः ॥ ७६ ॥

सूर्य यदि पञ्चमेश हो और वह बलवान् हो एवं शुभ दृष्ट हो तो एक पुत्र होता है । एवं बली गुरु पञ्चमेश हों और वह शुभ दृष्ट हो तो पाँच पुत्र होते है । पञ्चमेश भौम हो तो तीन कन्या, चन्द्रमा हो तो दो कन्या, शुक्र हो तो छः कन्या, शनि हो तो सात कन्या और बुध हो तो चार कन्या होती है ।

पुत्रे शे हिमधाम्नि गोघटगते कुर्यात्स एकं सुतं
मंत्रे ऽहिः किमुताकचो यदि तथा तत्रार्य्यमा शोभनैः ।
दृष्टश्चेत्कुरुते तदा त्रितनयान् धर्माङ्गधी लब्धिगौ ।
भौमेनौ कुरुतस्तदैकतनुजं हंसः स्वराशिं गतः ॥ ७७ ॥

धीशेज्यौ धिषणोपगौ तनुभवान्पञ्चोन्मितान्कण्टके-
ऽङ्गे शे किं द्विजखेटयोर्मतिगयोः पुत्रास्त्रयः कीर्तिताः ।
कन्यैका धिषणे घने किमु कवौ सोमे सुते सप्त वा-
ऽष्टौ कन्याः सबले सुते दिनमणावेकः सुतो वा त्रयः ॥ ७८ ॥

पञ्चम वा नवम में वृष वा तुला राशि गत चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है । पञ्चम में राहु वा केतु हो तो भी एक पुत्र होता है । पञ्चम गत सूर्य यदि शुभ दृष्ट हो तो तीन पुत्र होते है । नवम लग्न पञ्चम वा लाभ में भौम तथा सूर्य हो तो एक पुत्र होता है । सिंह में सूर्य हो और पञ्चम में पञ्चमेश तथा गुरु पञ्चम में हों तो पाँच पुत्र होते है । केन्द्र में लग्नेश हो अथवा पञ्चम में गुरु शुक्र हो तो तीन पुत्र और एक कन्या होती है । लग्न में गुरु वा शुक्र हो और पञ्चम में चन्द्रमा हो तो सात वा आठ कन्या यें होती है । पञ्चम में बली सूर्य हों तो एक वा तीन पुत्र होते है ।

तत्रेन्दौ त्रिसुताः कुजे त्रितनयाश्चान्द्रौ चतस्रः सुताः।
पूज्ये पञ्चसुताः सिते रसमिताः कन्यास्तमोमन्दयोः ।
कन्याः सप्त मता मतौ मिहिरजे पुत्रास्त्रयो लक्ष्मणे ।
तत्राक्षप्रमिताः सुता विदि चतुःपुत्राः पतङ्गासृजोः ॥ ७९ ॥

तद्वत्तत्र भगेज्ययोर्निरतयोः षट् सूनवो ऽस्रेज्ययोः ।
पुत्रा नागमिताः कुजेज्यरविषु स्युर्नन्दना ग्रोप्रमाः ।

काव्येन्द्वोस्तनये सुता गजमिता ग्लौमन्दयोर्दिङ्मिताः ।
कन्याः पञ्चदशेन्दुशुक्रशनिषु च्छायाज कव्योरिनाः ॥ ८० ॥

पंचम में बली चन्द्र हो तो ३ कन्या, भौम हो तो ३ पुत्र, बुध हों तो ४ कन्या गुरु हो तो ५ पुत्र, शुक्र हों तो ६ कन्या, राहु तथा शनि हो तो ७ कन्या होती हैं। मतान्तर में यदि पंचम में शनि हो तो ३ पुत्र, चन्द्रमा हो तो ५ पुत्र एवं बुध हो तो ४ पुत्र होते है। यदि पंचम में भौम तथा सूर्य ये दोनों हों तो ४ पुत्र, रवि गुरु हो तो ६ पुत्र भौम गुरु हो तो ८ पुत्र और सूर्य गुरु मङ्गल हो तो ९ पुत्र होते हैं। एवं पंचम में शुक्र तथा चन्द्रमा ये दोनों हो तो ८ कन्या, चन्द्र शनि हो तो १० कन्या; चन्द्र, शुक्र तथा शनि हो तो १५ कन्या और शुक्र शनि हो तो १२ कन्या यें होती है।

खारित्रिगे ऽसृजि सिते पथि पूजिते ऽस्ते।
पञ्चाङ्गजा द्विषि कुजार्कयमेषु रम्यैः ।
चेत्केन्द्रयुग्मगृहगैस्त्रिमिता रमण्यः ।
पुत्राश्चतुर्दशमिता मनुजस्य वाच्याः ॥ ८१ ॥

दशम षष्ठ वा तृतीय में भौम, नवम में शुक्र और सप्तम में गुरु हो तो पाँच पुत्र होते हैं। षष्ठ में भौम, सूर्य तथा शनि हो एवं केन्द्र में समराशिगत शुभ ग्रह हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य की तीन स्त्रियां और चौदह पुत्र कहने चाहिएँ

पुत्रास्त्रयो ऽसृजि सुते समृगे ऽथ सोम-
दैत्यर्त्विजोरुदितयोर्गुरुपूर्णदृष्ट्या ।
संदृष्टयोस्तनयभावगयोस्तदानीं
पुत्रा मताः शरमिताः शिरसो ऽनुजे ज्ञे ॥ ८२ ॥

तिस्रः सुता द्वितनयौ यदि तत्र काव्ये
द्वे कन्यके त्रितनया धिषणे ऽक्षतुल्याः ।
पुत्रा भवन्ति तनये मृदुगः स्वभागं
हित्वा जनौ स कलशे यदि वर्त्तते नुः ॥ ८३ ॥

पञ्चात्मजाः स मकरे स्वलवं विहाय
तत्रस्थितस्त्रितनया नियतौ कुशाङ्गे ।
पाते पुरे सुरगुरौ सुत एकसूनू
राज्ञि स्वपे मतिसखे नवमे तनूजे ॥ ८४ ॥

धीधामपे बलिनि कुञ्जरतुल्यपुत्राः
पत्यौ गिरां परमतुङ्गगते ऽर्थनाथे ।

साहौ स्वकीयभवने गुरुपे ऽङ्कपुत्रा
धीशे सदेहगृहपे परमोच्चमाप्ते ॥ ८५ ॥

रम्याक्षिते ऽमरगुरौ दश नन्दनाः स्यु-
र्मंत्रे ऽमरेज्यभलवे तदवेक्षिताढ्ये ।
किं सेज्य आत्मजगृहे निखिलेन्दुदृष्टे—
ऽक्षाः सूनवो ऽसृजि तथा विधके त्रिपुत्राः ॥ ८६ ॥

पंचम में मकर राशि गत भौम हो तो ३ पुत्र होते है। पंचम में चन्द्र शुक्र हो और वे उदय को प्राप्त हो एवं गुरु से पूर्ण दृष्ट हो तो ५ पुत्र होते है। लग्न से तृतीय में बुध हो तो ३ कन्या, २ पुत्र होते है। एवं तृतीय में शुक्र हो तो २ कन्या ३ पुत्र होते हैं। पंचम में गुरु हो तो ५ पुत्र होते हैं। पंचम में कुम्भ राशि गत शनि हो किन्तु मकरांश वा कुम्भांश में न हो तो ५ पुत्र होते है। एवं पंचम मे मकरराशिगत शनि हो किन्तु मकरांश वा कुम्भांश में न हो तो ३ पुत्र होते हैं। नवम में शनि लग्न मे राहु और पंचम मे गुरु हो तो १ पुत्र होता है। दशम में धनेश, त्रिकोण में गुरु एवं पंचमेश बली हो तो ८ पुत्र होते है। परमोच्च में गुरु हो, राहु यदि धनेश से युक्त हो और नवम में नवमेश हो तो ९ पुत्र होते हैं। परमोच्च में लग्नेश युक्त पंचमेश हो एवं 'गुरु' यदि शुभ दृष्ट हो तो १० पुत्र होते हैं। पंचम मे गुरु का नवांश वा राशि हो और वह गुरु से दृष्ट वा युक्त हो अथवा पंचम में गुरु हो और वह पूर्ण चन्द्रमा से दृष्ट हो तो ५ पुत्र होते हैं। एवं पंचम में भौम हो और वह पूर्ण चन्द्र से दृष्ट हो तो ३ पुत्र होते हैं।

तादृग्विधः श्यामल एकपुत्रं तद्यात्सुतान्पञ्च तथाविधो वित् ।
सो ऽस्तङ्गतश्चेद्विफलं विधत्ते द्वे दारिके द्वौ तनयौ सितश्चे ॥ ८७ ॥

पंचम में शनि हो और वह पूर्ण चन्द्र से दृष्ट हो तो एकपुत्र को देता है। एवं पंचम गत बुध यदि पूर्ण चन्द्र से दृष्ट हो तो पाँच पुत्र को देता है। किन्तु वह बुध अस्तगत हो तो निष्फलता को करता है। यदि पंचम में शुक्र हो और वह पूर्ण चन्द्र से दृष्ट हो तो २ कन्यायें और २ पुत्र होते हैं।

धीभागेशे स्वर्क्षभागे ऽथ केन्द्रे कोणे रम्ये सुस्थले ऽर्के सुतेशे ।
वा ऽऽचार्य्ये स्यादेकपुत्रो ऽमरेज्ये लाभे ज्ञे ऽङ्के नागतुल्याः सुताः स्युः ॥ ८८ ॥

पंचमभागवत नवांश का स्वामी यदि स्वराशि वा स्वनवांश में हो तो (१) केंन्द्र वा त्रिकोण में शुभग्रह हो और सुस्थान में सूर्य पंचमेश वा गुरु हो तो एक पुत्र होता है। लाभ में गुरु और नवम में बुध हो तो ८ पुत्र होते है।

प्रकारान्तर से पुत्र तथा पुत्री संख्या परिज्ञानः—

जीवेन्द्विनस्फुटयुते गृहभागसंख्याः
पुत्रा उताम्बुपथिपुत्रपतिस्फुटैक्ये ।
लब्धांशतुल्यतनयाः सुखधीगुरुस्थ-
खेटस्फुटैक्यभवने गतभागतुल्याः ॥ ८९ ॥

गुरु, चन्द्र तथा सूर्य इन तीनों के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो राशि हो और उस में जो नवांश हो उस के समान पुत्रोंकी संख्या होती है । चतुर्थ, नवम तथा पंञ्चम इन तीनों भावों के स्वामियों के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो नवांश हो उसके समान पुत्रों की संख्या होती है । सुख, सुत, तथा भाग्य इन तीनों स्थानों में जितने ग्रह हो उनके स्पष्ट राश्यादिका योग करे तब जो राशि हो उसमें जितने गत नवांश हो उनके तुल्य पुत्रों की संख्या होती है ।

—: उदाहरण :—

स्पष्टगुरु ४।१४।१३ २० स्पष्ट चन्द्र ४।२९।३४।४६ स्पष्ट सूर्य २।२१।३४।२५ है इन तीनों का योग किया तो ०।५।२२।३१ राश्यादि हुए । यहां मेष राशि है और उसका द्वितीय नवांश वर्तमान हैं अतः २ सन्तान होंगी । चतुर्थेश बुध २।९।५८ ५३ नवमेश मङ्गल ४।८।९।४० पंचमेश चन्द्रमा ४।२९।३४।४६ है इन तीनों का योग किया तो ११।१७।४३।१९ राश्यादि हुए । यहां मीन राशि में छठा नवांश है अतः ६ सन्तान होंगी । चतुर्थ गत सूर्य २।२१।३४।२५ एवं चतुर्थ गत बुध २।९।५८।५३ नवम गत शनि ७।१।५९।३३ है इन तीनों का योग किया तो ०।३।३२।५२ राश्यादि हुए । यहां मेष राशि में १ गत नवांश हैं अतः १ सन्तान होगी ।

यदुन्मितानां द्युसदां दृशः सुते तदुन्मिताः सन्ततयो भवन्ति नुः ।
स्युर्यावतां पुंद्युसदां दृशो मतौ तावत्सुताः स्त्रीग्रहदृष्टिसम्मिताः ॥ ९० ॥
पुत्र्यो ऽथ दर्शी खचरः स्वभस्थश्चेत्तत्र संख्या द्विगुणा विधेया ।
मूलत्रिकोणोच्चगताः स दर्शी संख्या मता रामगुणा सुधीभिः ॥ ९१ ॥

पुत्र स्थान पर जितने ग्रहों की दृष्टि हो उतनी ही सन्तान होती हैं । पुत्र स्थान पर जितने पुरुष ग्रहों की दृष्टि हो उतने पुत्र और जितने स्त्री ग्रहों की दृष्टि हो उतनी कन्यायें होती हैं । पंचम स्थान को देखने वाले ग्रह यदि स्वराशि में हो तो उनकी संख्या को २ से गुणे तब जो संख्या हो उसके समान सन्तान की संख्या कहे । यदि पंचम स्थान को देखने वाले ग्रह मूलत्रिकोण राशि वा स्वोच्च राशि में हो उनकी संख्या को ३ से गुणे तब जो गुणन फल हो उसके समान सन्तान की संख्या को कहे ।

सुताङ्कतुल्या किमु पुत्रगांशतुल्या मितिः सा शुभयुक्तदृष्टा ।
सतां दृशा तद्द्विगुणा निरुक्ता क्लिष्टा खलांशे खलवीक्षणेन ॥ ९२ ॥

पंचम भाव में जो राशि हो उसकी संख्या के समान सन्तान की संख्या होती है । पंचम भाव में जितने नवांश हो उनके समान सन्तान की संख्या होती है। किन्तु वह शुभ ग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो नवांश संख्या के तुल्य सन्तान संख्या को कहे । पंचम भावपर जितने शुभग्रहों की दृष्टि हो उतनी संख्या को २ से गुणकर तब जो संख्या हो वह सन्तान की संख्या होती है । एवं पंचम भाव में पाप ग्रहों का नवांश हो और जितने पाप ग्रहों से दृष्ट हों उतनी संख्या न्यून करे तब जो शेष वचे उसके समान सन्तान की संख्या कहे ।

यत्संख्यांशे नन्दनागारधीशः संख्या ज्ञेया तन्मिता नुः प्रजायाः ।
यद्वा पुत्रागारनाथांशतुल्या पुत्र यावद्वीर्य्ययुक्तग्रहाणाम् ॥ ९३ ॥

दृष्टिः संख्या सन्ततस्तोन्मिता वा पुत्रात्किं वा तत्पतेश्चन्द्रशुक्रौ ।
यत्संख्यर्क्षे तन्मिता वा सुतेशो यस्मिन्भावे वर्त्तते तन्मितिर्यां ॥ ९४ ॥
त्रिघ्ना कार्या ऽ ऽ काशरूपैर्विभक्ते शेषाङ्कात्स्यात्सन्ततेरत्र संख्या ।
पुत्रे यावत्पुंग्रहा वीर्य्ययुक्तास्तावत्पुत्रा अन्यथा कन्यकाः स्युः ॥ ९५ ॥

जितने संख्या के नवांश में पंचमेश हो उतनी ही सन्तान की संख्या होती है अथवा पंचमेश की रश्मियों की संख्या के समान सन्तान की संख्या होती है। अथवा पंचम स्थान पर जितने बली ग्रहों की दृष्टि हो उतनी सन्तान की संख्या कहे। पंचम वा पंचमेश से चन्द्र तथा शुक्र जितनी संख्या कि राशि पर हो उनके समान सन्तान की संख्या कहे। जिस भाव में पंचमेश हो उसकी संख्या को ३ से गुणकर १० से भाग दे शेष संख्या के तुल्य सन्तानकी संख्या कहे। अथवा पंचम स्थान में जितने बली पुरुष ग्रह हो उतने पुत्र और जितने बली स्त्री ग्रह हो उतनी कन्या यें कहे।

—: उदाहरण :—

षष्ठ भाव में पंचमेश चन्द्रमा है अतः ६ को ३ से गुणा तो १८ हुए। इन में १० से भाग दिया तो ८ शेष बचे। अतः ८ सन्तान होगी।

जीवांशुतो गुरुभतः फलसंख्यया वा
रेखां विना ऽ स्तरिपुनीचगृहस्थितानाम् ।
सूनावमूढरिपुनीचलवैः सुते ऽ थो
धीस्थैर्मतीशसहितैश्च तथा विधैस्तैः ॥ ९६ ॥

गुरु की रश्मि संख्या के समान सन्तान की संख्या कहे। अथवा गुरु की आक्रान्त राशि से सन्तान संख्या कहे। अथवा गुरु वा लग्न से पंचम स्थान में जितनी रेखा हो उनके समान सन्तान संख्या कहे। किन्तु रेखा देनेवाले ग्रह अस्तगत, शत्रुराशि गत तथा नीच राशि गत हो तो उनकी संख्या को छोडकर शेष शुभफल प्रद ग्रहों की दिई रेखाओं के समान सन्तान संख्या कहे। पंचम भाव में अस्तगत, शत्रु राशि गत तथा नीचराशि गत ग्रहों के नवांश को छोडकर शेष नवांशों से सन्तान संख्या कहे। एवं अस्तगत रहित, शत्र राशि रहित तथा नीचराशि रहित पंचम गत ग्रहों से वा पंचमेश युक्त ग्रहों से सन्तान संख्या कहे।

सोर्ज्जे ऽ स्तात्मजपे ऽ रिपेक्षितयुते कल्याणदृष्टे ऽ थ वा–
ऽ स्तेशे ऽ र्थे रुधिरेक्षिते सदुरिते ऽ थ ज्ञेक्षिते मेचके ।
मंत्रे वारकपीक्षिते विबुधभे मन्दे किमर्कारयो–
र्भांशे साधर आत्मपे सुतजनुर्वीर्य्यात्परस्योच्यते ॥ ९७ ॥

बली सप्तमेश तथा बली पञ्चमेश यदि षष्टेश से दृष्ट वा युक्त हो एवं शुभ दृष्ट हो तो (१) धन में पाप युक्त सप्तमेश हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो तो (२) पंचम में शनि हो और वह बुध से दृष्ट हो अथवा बुध की राशि में शनि हो और वह भौम सूर्य से दृष्ट हो अथवा सूर्य वा मंगल की राशि में शनि हो अथवा पंचमेश शनि नीचराशि गत ग्रह से युक्त हो तो उक्त योगों में अन्य के वीर्य से पुत्र होता हैं।

नारी यदा नन्दनलब्धियोगजा पुत्रे सता पञ्चमतोऽरिपेन वा ।
निरीक्षिते पुत्रवती प्रजायते जारेण जायाऽस्य जनस्य जन्मनि ॥ ९८ ॥

जब स्त्री के योग पुत्र प्राप्ति के हों और पुरुष के जन्म लग्न से जो पंचम स्थान हो वह शुभ ग्रह से दृष्ट हो अथवा दशमेश से दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री जार से पुत्रवती होती है।

जार जात योगः—

अन्योन्यराशिस्थितयोः ककायपत्योरुताङ्गाधिपतौ कपे वा ।
सोपग्रहे वोद्गमशीतभान्वोर्नेज्येनयुक्तेक्षितयोरुताङ्गे ॥ ९९ ॥

चन्द्रेऽनुजेऽस्रास्फुजितोः किमुद्गमेऽहीलाजयोर्योषिति भानुभार्ययोः ।
ततः स्थिरेऽङ्गे समदेशि मूर्त्तिपेऽथाङ्गे खले खे भृदुगेऽमले मदे ॥ १०० ॥

वारीक्षिताढ्येऽम्बुनि नो ग्रहेक्षितेऽथवोदये धीत्रिरिपुस्वपैस्ततः ।
सर्वैर्ग्रहैर्द्वित्रिकगैरथाम्बरे तुर्य्ये पुरे सासति रोहिणिप्रिये ॥ १०१ ॥

वेन्दौ सपङ्के तपनान्विते किमु सेने विधौ नामरपूजितेक्षिते
आहो सदीशैर्न निरीक्ष्यते तनुर्यद्वोदयेन्दू गुरुवर्गगौ न वा ॥ १०२ ॥

केन्द्रेषु शून्येष्वथ पावकग्रहे पुण्ये प्रसूभे परपे सहोन्विते ।
वाहौ हितेऽर्के घनगेऽथ कण्टकसोत्थेशयोगेऽथ खलान्तरे हिते ॥ १०३ ॥

मूर्धाधिनाथे मलिनेन लोकिते वीर्यैर्विमुक्तेऽन्यज एषु जातकः ।
रन्ध्रारिपारेन्दुषु नीरगेषु वा शारातिपत्योः सखलाभ्रचारिणोः ॥ १०४ ॥

तदाऽन्यजातो युतयोः पपीभुवा शूद्राद्बुधेनोरुजतोऽशुमालिना ।
क्षत्रात्सुरेज्येन सितेन वाडवात्सुतोऽथ वा षोडशिशोणितान्वये ॥ १०५ ॥

परेण जातोऽघनभोगमात्रसम्बन्धकेंऽशेऽथ कलेवरेशे ।
तपोऽम्बरीशैः सहितेऽथ योगे त्रिपुष्करे ना परजात एषु ॥ १०६ ॥

सुखेश लग्नेश की राशि में और लग्नेश सुखेश की राशि मे हो तो (१) लग्नेश वा सुखेश यदि उप ग्रह (राहु वा केतु) से युक्त हो तो (२) चन्द्रमा तथा लग्न ये दोनों गुरु से युक्त वा दृष्ट न हों तो (३) लग्न में चन्द्रमा और तृतीय में मङ्गल तथा शुक्र हों तो (४) लग्न में मङ्गल राहु हों और सप्तम में सूर्य चन्द्रमा हों तो (५) लग्न में स्थिर राशि हो और लग्नेश यदि सप्तमेश से युक्त हो तो (६) लग्न में पाप ग्रह, दशम में शनि और सप्तम में शुभ ग्रह हो तो (७) सुखभाव शत्रु ग्रह से दृष्ट युक्त हो अथवा ग्रह से दृष्ट न हो तो (८) लग्न में पंचम, तृतीय, षष्ठ तथा द्वितीय इन चारों स्थानों के स्वामी हों तो (९) द्वितीय तथा त्रिकस्थान में सब ग्रह हों तो (१०) दशम चतुर्थ वा लग्न में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो (११) पाप युक्त चन्द्रमा यदि सूर्य से

युक्त हो तो (१२) सूर्य सहित चन्द्रमा यदि गुरु से दृष्ट न हो तो (१३) लग्न को शुभ ग्रह तथा स्वामी न देखते हों तो (१४) चारों केन्द्र ग्रह रहित हों तो (१५) नवम तथा चतुर्थ में पाप ग्रह हों और लग्नेश निर्बल हो तो (१६) सुख में राहु और लग्न में सूर्य हो तो (१७) तृतीयेश के साथ यदि केन्द्र के स्वामियों का योग हो तो (१८) पापान्तराल में सुखस्थान हो और निर्बल लग्नेश यदि पाप दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य परजात (जारपुत्र) होता है। सुख में अष्टमेश तथा षष्ठेश हों और वे मङ्गल चन्द्र से युक्त हों तो (१) नवमेश तथा षष्ठेश ये दोनों पाप युक्त हों तो अन्य जात अर्थात् जारज होता है। यदि भाग्येश तथा षष्ठेश शनि से युक्त हों तो शूद्र से, बुध से युक्त हों तो वैश्य से, सूर्य से युक्त हों तो क्षत्रिय से एव गुरु शुक्र से युक्त हो तो ब्राह्मण से उत्पन्न होता है। चन्द्रमा तथा मङ्गल का योग हो तो (१) कारकांश लग्न में केवल पाप ग्रहों का सम्बध हो तो (२) लग्नेश यदि नवमेश, सुखेश तथा षष्ठेश इन तनिों से युक्त हो तो (३) त्रिपुष्कर योग में जन्म हो तो उक्त योगों में मनुष्य परजात होता है।

आदित्ययुक्ता पवनाद्वितीया बुधान्विता पौष्णभसप्तमी च।
सवासवा विष्णुतिथिः ससूर्या यदैषु योगेष्वपि नाऽन्यजातः ॥ १०७ ॥

रविवार, स्वाति नक्षत्र तथा द्वितिया तिथि हो तो (१) बुधवार, रेवती नक्षत्र तथा सप्तमी तिथि हो तो (२) धनिष्ठा नक्षत्र, द्वादशी तिथि तथा रविवार हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष अन्यजात होता है।

जारजात योग भङ्ग परिज्ञानः—

होरा स्वपेज्यान्वितवीक्षिता वा नक्षत्रपो दृष्टयुतोऽर्चितेन।
वार्य्यस्य वर्गे भवनेऽङ्गनेमी तदा भवेज्जारजयोगभङ्गः ॥ १०८ ॥

जन्म लग्न यदि अपने स्वामी से तथा गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) चन्द्रमा यदि गुरु से दृष्ट वा युक्त हो तो (२) लग्न तथा चन्द्रमा यदि गुरु के वर्ग वा राशि में हों तो उक्त योगों उत्पन्न पुरुष के जारजात योग भङ्ग हो जाते हैं।

औरसादिपुत्रजन्म योगः—

होराहिमांश्वोर्बलयोगतो जनौ पुंसां मतावेकतमे गुरोर्गणे।
किं सद्गणे वार्कगणे सतां गृहे निरीक्षिते वा निरतेऽनघग्रहैः ॥ १०९ ॥

यद्वा सहःसंयुत उद्गताधिपे तदा स्मृता औरसनन्दना बुधैः।
अंशे सकेतौ कविकोविदेक्षितेऽथान्त्ये यमांशे भृगुजेऽथ नन्दने ॥ ११० ॥

कवेर्गृहे तेन निरीक्षिते तथाऽप्यब्जाच्च दासीजसुता अथात्मजः
क्रीतो ज्ञदृष्टे यमयुक्त आर्किभे सुतेऽथ सार्कौ सुतभेऽब्जविद्युते ॥ १११ ॥

लग्न तथा चन्द्रमा इन दोनों में जो अधिक बली हो उस से जो पञ्चमस्थान हो उस में केवल गुरु का वर्ग हो शुभ ग्रहों का वर्ग हो सूर्य का वर्ग हो वा शुभ ग्रहों की राशि हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो अथवा

लग्नेश बली हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के औरस (अपने शरीर से उत्पन्न) पुत्र होते है। कारकांश लग्न में केतु हो और वह शुक्र बुध से दृष्ट हो तो (१) व्यय में शुक्र हो और वह शनि के नवांश में हो तो (२) पञ्चम में शुक्र की राशि हो और वह शुक्र से दृष्ट हो तो (३) एवं पञ्चम में चन्द्रमा की राशि हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के दासी से उत्पन्न पुत्र होते हैं। पंचम में स्वराशि गत शनि हो और वह बुध से दृष्ट हो अथवा पंचम में शनि हों और वह चन्द्रमा तथा बुध से युक्त हो तो मनुष्य का क्रात (खरीदा हुआ) पुत्र होता है।

क्षेत्रज पुत्र जन्म योगः—

चित्यैनिभे तद्गण ऐन्दवेक्षिते ऽरुणक्षमाभूधिषणेक्षणोनिते।
किं तत्र बौधोऽपि गणः समन्दगेक्षणः सुतः क्षेत्रभवो जनुष्मताम् ॥ ११२ ॥

पञ्चम में शनि की राशि तथा वर्ग हो और वे सूर्य, भौम तथा गुरु से दृष्ट न हो अथवा पञ्चम में बुध क वर्ग हो और शनि से दृष्ट हो तो मनुष्य का क्षेत्रज पुत्र होता है।

कृत्रिम तथा अधम पुत्र के योगः—

कौजेऽगभागे तनयेऽसितान्विते शेषद्युसद्दृग्रहितेऽस्य कृत्रिमः।
पुत्रोऽथ वा हांसिगणेऽसृगीक्षिते संविद्गृहे हंसयुते सुतोऽधमः ॥ ११३ ॥

पंचम में मङ्गल की राशि तथा नवांश हो वा स्थिर राशि का नवांश हो और शनि से युक्त हो एवं शेष ग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो कृत्रिम पुत्र होता है। पंचम में शनि का वर्ग हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो एवं सूर्य से युक्त हो तो अधम पुत्र होता है।

गूढोत्पन्न तथा अपाविद्ध पुत्र योगः—

धीस्थे भेशे भौमभागे भगोत्थदृष्टे शेषानन्तवासेक्षयोने।
गूढोत्पन्नो नन्दनस्तत्र भौमे भास्वद्दृष्टे ब्राह्मिवर्गेऽपविद्धः ॥ ११४ ॥

पंचम में चन्द्रमा हो और वह मङ्गल के नवांश में हो एवं शनि से दृष्ट हो और अन्य ग्रहों से दृष्ट न हो तो गुढोत्पन्न पुत्र होता है। पंचम में शनि का वर्ग हो और उस में मङ्गल हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो अपाविद्ध पुत्र होता है।

कानीन तथा सहोढ पुत्र के योगः—

गर्भस्थाने ग्लौकला हेलिदृष्टयुक्ता चूडा सूरसक्ता सुतो नुः।
कानीनोऽथो देव इन्द्वर्कवर्गे सादित्येन्दौ धिष्ण्यदृष्टे सहोढः ॥ ११५ ॥

पंचम में चन्द्रमा की कला (वर्ग) हो और वह सूर्य से दृष्ट वा युक्त हो एवं चन्द्रमा सूर्य से युक्त हो तो कानीन (कुमारी से उत्पन्न) पुत्र होता है। पंचम में सूर्य चन्द्रमा का वर्ग हो और सूर्य चन्द्रमा से युक्त हो एवं शुक्र से दृष्ट हो तो सहोढ पुत्र होता है।

पौनर्भव पुत्र योगः—

नन्दने शनिगणे निशाकरे दानवार्चितदिनेशवीक्षिते ।
सूनुलब्धिरुदिता पुनर्भवागर्भतो जनिमतां विपश्चिता ।। ११६ ।।

पंचम में शनि का वर्ग हो और उस में चन्द्रमा हो एवं वह शुक्र तथा सूर्य से दृष्ट हो तो पुनर्भवा स्त्री के गर्भ से पुत्र होता है ।

मतान्तर से औरसादि पुत्र जन्म के योगः—

स्यादौरसोऽयं शुभभे तनौ विधौ वाऽनुष्णगौ वाक्पतिवर्गसंश्रिते ।
स्यात्क्षेत्रजोऽयं स्वगणस्थयो रवीन्द्वोर्नास्रदृष्टे बलविद्युतेऽर्चिते ।। ११७ ।।

लग्न में शुभ राशि गत चन्द्रमा हो अथवा गुरु के वर्ग में चन्द्रमा हो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष औरस होता है । अपने वर्ग में सूर्य तथा चन्द्रमा हो एवं ' गुरु ' बल तथा बुध से युक्त हो और मङ्गल से दृष्ट न हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष क्षेत्रज होता है ।

यदाऽवसाने तपनेक्ष्यमाणे वार्केन्दुवर्गे तरणीन्दुयुक्ते ।
कानीनकोऽयं गुलिकेऽब्जदृष्टे यमेक्षिताढ्ये यदि दत्तपुत्रः ।। ११८ ।।

व्यय स्थान यदि सूर्य से दृष्ट हो अथवा सूर्य चन्द्रमा के वर्ग मे सूर्य चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष कानीन होता है । गुलिक यदि चन्द्रमा से दृष्ट हो और शनि से दृष्ट वा युक्त होतो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष दत्तक होता हैं ।

सनाथे मङ्गलार्किभ्यां नन्दने मदनेऽथ वा ।
नेक्षिते खेचरैरन्यैः कृत्रिमोऽयं नरो भवेत् ।। ११९ ।।

पंचम वा सप्तम यदि मङ्गल तथा शनि से युक्त हो और अन्य ग्रहों से दृष्ट न हो तो युक्त योग में उत्पन्न पुरुष कृत्रिम होता है ।

दत्त पुत्र प्राप्ति के योगः—

मंत्रे मृदौ किमसृजि ज्ञगृहे तनूपे
विद्वीक्षितान्वित उतार्कजभे ज्ञभे वा
पुत्रे पतङ्गजनिमान्दियुतेक्षिते वा
बुद्धिस्थले बुधगृहे बुधयुक्तदृष्टे ।। १२० ।।

मन्देऽङ्गपे किमुत नन्दनपे समन्दे
हेम्नेक्षिते क्षितिसुते तनुपे बुधांशे
वास्ताधिपे भवगृहेऽङ्गजपे सभव्ये
ज्ञे वा यमे मतिगृहेऽथ शुभे सुतेशे ।। १२१ ।।

दैवाधिपे दिवि मतौ गुलिकेन दृष्टे
    किं कारके बलयुते भृगुजे घनेशे ।
स्वोच्चेऽसिते सुतगतेऽथ सुताधिपेऽब्जे
    मूर्त्तौ मताविनजनौ परिपूर्णवीर्य्ये ॥ १२२ ॥

सूरौ ततः सुतपतौ तपने तनुस्थे
    ज्ञार्क्योर्मतौ बलिनि नन्दनपेऽथ चान्द्रौ ।
देहेश्वरे तनय आरदृशा समेते
    प्राप्तौ प्रकारकखगेऽथ तनूप इज्ये ॥ १२३ ॥

मंत्रे पतङ्गजदृशा सहितेऽस्वराशौ
    बुद्धीश्वरेऽथ मतिपे शुभगे तमींशे ।
पापर्क्षगे प्रथमपे गुरुगर्भगे वा
    द्वन्द्वोदये तनयपे हिबुके यमांशे ॥ १२४ ॥

किं सार्कवित्तनयपे यमयुग्मभागे-
    ऽथाङ्गेश्वरेऽङ्गजगतेऽङ्गजपे घने वा ।
संदृष्टयोस्त्रिकगयोस्तनुबुद्धिपत्यो-
    र्यद्वेन्दुदृष्टयुत आत्मानि मन्दभांशे ॥ १२५ ॥

किं वा सभेश्वरयमेऽथ सपूर्णवीर्य्यः
    कश्चित्सुते यदि न केनचिदात्मजेशे ।
संवीक्षितेऽथ सचिवेऽम्भसि शुक्लपक्ष-
    वीर्य्याधिकैर्गगनगैर्यमभागगैर्वा ॥ १२६ ॥

मन्दारयोर्भुवनवेश्मनि दत्तपुत्र-
    लब्धिर्भवेद्यमलवे मतिपेऽच्छगुर्व्वोः ।
स्वर्क्षे पुरा भवति दत्तकुमारलब्धिः
    पश्चात्स्त्रियाः पुनरिहाङ्गभवस्य लाभः ॥ १२७ ॥

पंचम में शनि वा मङ्गल हो और लग्नेश बुध की राशि में हो एवं बुध से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) पंचम में शनि की राशि वा बुध की राशि हो और वह शनि तथा गुलिक से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) पंचम में बुध की राशि हो और वह बुध से युक्त वा दृष्ट हो एवं लग्न का स्वामी शनि हो तो (३) पंचमेश यदि शनि से युक्त हो भौम को बुध देखता हो और बुध के नवांश में लग्नेश हो तो (४) लाभ में सप्तमेश हो, पञ्चमेश यदि शुभ ग्रह से युक्त हो और पञ्चम में बुध वा शनि हो तो (५) नवम में पञ्चमेश और दशम वा पञ्चम में भाग्येश हो और वह गुलिक से दृष्ट हो तो (६) पुत्र कारक (गुरु) बलवान् हो, स्वोच्च में लग्नेश शुक्र हो और

पञ्चम में शनि हो तो (७) लग्न में पञ्चमेश चन्द्रमा हो, पञ्चम में शनि हो और गुरु पूर्णबली हो तो (८) लग्न में पञ्चमेश सूर्य हो, पंचम में बुध शनि हों और पञ्चमेश बली हो तो (९) पंचम में लग्नेश बुध हो और वह भौम से दृष्ट हो एवं एकादश में पुत्रकारक ग्रह हो तो (१०) पंचम में लग्नेश गुरु हो और वह शनि से दृष्ट हो एवं मङ्गल की राशि में पञ्चमेश हो तो (११) नवम में पञ्चमेश हो, पाप राशि में चन्द्रमा हो और नवम वा पंचम में लग्नेश हो तो (१२) लग्न में द्विस्वभाव राशि हो और सुख में शनि नवांशगत पञ्चमेश हो तो (१३) शनि के नवांश में वा सम राशि के नवांश में पंचमेश हो और वह सूर्य बुध से युक्त हो तो (१४) पंचम में लग्नेश और लग्न में पञ्चमेश हो तो (१५) त्रिक में लग्नेश तथा पंचमेश हों और शुभ ग्रहों से दृष्ट हों तो (१६) पंचम में शनि की राशि तथा नवांश हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट वा युक्त हो अथवा 'शनि' चन्द्राक्रान्त राशि के स्वामी से युक्त हो तो (१८) पंचम में कोई भी ग्रह हों और वह परिपूर्ण बली हों एवं पंचमेश को कोई न देखता हो तो (१९) सुख में गुरु हों, शनि के नवांश में शुभ ग्रह हों वा शुक्ल पक्ष का जन्म हो और शनि के नवांश में बलवान् ग्रह हो तो (२०) सुख में भौम तथा सूर्य हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष दत्तपुत्र वाला होता है। शनि के नवांश में पंचमेश हो और स्वराशि में शुक्र तथा गुरु हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष प्रथम दत्तपुत्र ग्रहण करे और पिछली स्त्री से पुनः औरस पुत्र का जन्म होता है।

प्राणहीनः प्रबन्धेशः पत्नीपौरगृहेशयोः।
सम्बन्धेन विमुक्तश्चेज्जायते दत्तपुत्रवान् ॥ १२८ ॥

सप्तमेश और लग्नेश के साथ निर्बल पञ्चमेश का सम्बन्ध न हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष दत्तपुत्र वाला होता है।

पुत्रसुखाभाव योगः—

ध्यङ्के केन्द्रेऽनुजपशशिनोर्वा मतौ मन्दगेऽथो
निम्ने जीवे किमु भृगुजनौ ज्ञे समेऽर्केऽसमे किम्।
द्वेष्ये धीशे कुटिलयमयोः सैणपात्मस्थयोर्वा
पुत्रेऽजेऽलौ तमसि रुधिरालोकिते वात्मनीज्यात् ॥ १२९ ॥

पापेऽथाच्छे तनयमदने कर्किमीनालिभागे
मन्देऽङ्गे वा त्रितनुतनयार्थान्तिमे त्राहुपे वा।
साघेऽङ्गेशे चरममरणे मंत्रपेऽथोदये वि-
न्मन्दौ कौर्प्ये सितसचिवयोर्नो सुखं नन्दनानाम् ॥ १३० ॥

पंचम नवम वा केन्द्र में तृतीयेश तथा चन्द्रमा हों तो (१) पंचम में शनि हो तो (२) नीच राशि में गुरु वा शुक्र हो, समराशि में बुध हो और विषम राशि में सूर्य हो तो (३) षष्ठ में पंचमेश हो और पंचम में सिंह राशि गत शनि मङ्गल हों तो (४) पंचम में मेष वा वृश्चिक का राहु हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो तो (५) गुरु से पंचम में पापग्रह हो तो (६) पंचम वा सप्तम में शुक्र हो और वह कर्क मीन वा वृश्चिक के नवांश में हो एवं लग्न में शनि हो तो (७) तृतीय लग्न पंचम द्वितीय वा व्यय में तृतीयेश हो तो (८) लग्नेश यदि पाप युक्त हो और व्यय वा अष्टम में पंचमेश हो तो (९) लग्न में बुध तथा शनि हों और वृश्चिक में शुक्र तथा गुरु हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष को पुत्रों का सुख नहीं होता है।

क्षीणे क्षपापरिवृढे हरिजेऽघखेटैः
कोणाश्रितैः सुरगुरौ यमभे विमूढे।
ज्ञे पञ्चमे वपुषि पापखगे पयःस्थे
भूत्वा प्रणश्यति सुखं तनयस्य जन्तोः॥ १३१॥

लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो, त्रिकोण में पाप ग्रह हो शनि की राशि में गुरु हो और वह अस्तगत हो पंचम वा लग्न में बुध हो और सुख में पाप ग्रह हो तो पुत्र का सुख होकर नाश हो जाता है।

अस्तङ्गते सकलशे समृगेऽमरेज्ये
भेशे कृशे वपुषि सर्वखलैस्त्रिकोणे।
किं ज्ञेऽङ्गजेऽम्बुनि तनौ सखले सुतस्थैः
क्रूरैर्नरस्य निधनं सुतसौख्यतः प्राक्॥ १३२॥

कुम्भ वा मकर में अस्तंगत गुरु हो, लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो और त्रिकोण में सब पापग्रह हों तो (१) पंचम चतुर्थ वा लग्न में पाप युक्त बुध हो और पंचम में पाप ग्रह हों तो पुत्र के सुख से पूर्व ही पुरुष की मृत्यु होती है।

अनपत्यत्व योगः—

सर्वग्रहेषूर्ज्जविवर्जितेषु वाऽहीनारनीलैः सबलैः सुतेऽबलैः।
चेत्कारकाद्यैः किमनङ्गकोशचित्पगांशपैः साघखगैरघांशगैः॥ १३३॥

उतान्त्यपस्थांशपतौ निमीलनेऽसद्व्योमरागांशग आत्मनेतरि।
आहो त्रिके ध्यङ्गपयोः प्रकारके नीचेऽनपत्याम्बरगे मतौ ततः॥ १३४॥

आर्य्ये दुरभ्राङ्गलवे मतौ मृतौ मंत्राधिनाथे मरणेऽनपत्यता।
प्राग्लग्नकान्तामतिनाथपूजितैः सर्वैर्विवीर्य्यैरनपत्यता भवेत्॥ १३५॥

सब रव्यादि ग्रह निर्बल हो तो (१) पञ्चम में राहु, सूर्य, भौम तथा शनि हों और वे बलवान् हों एवं पुत्रकारकादि निर्बल हों तो (२) सप्तम, द्वितीय तथा पञ्चम इन तीनों भावों के स्वामियों के नवांश के स्वामी यदि पाप युक्त हों और पाप ग्रहों के नवांश में हों तो (३) अष्टम में व्ययेश के नवांश का स्वामी हो और क्रूरषष्ठ्यंश में पञ्चमेश हो तो (४) त्रिक में पञ्चमेश तथा लग्नेश हों, नीच राशि में पुत्रकारक हो और पञ्चम में अनपत्य ग्रह हो तो (५) पञ्चम वा अष्टम में क्रूरषष्ठ्यंश गत गुरु हो और अष्टम में पञ्चमेश हो तो अनपत्यता (सन्तान हीनता) होती है। लग्नेश, सप्तमेश, पञ्चमेश तथा गुरु ये चारों निर्बल हो तो भी अनपत्यता होती है।

खलान्तराले सुरयाजकेऽङ्गजाधीशेऽबले सद्युतिवीक्षणोज्झिते।
किं दारकस्थे दुरिते तदीश्वरे सकल्मषे नीचगृहान्वितेऽथ वा॥ १३६॥

नो निर्मलैरभ्रचरैर्युतेक्षिते ऽथो पञ्चमात्पञ्चमपे त्रिकङ्गते ।
नाचार्य्यदृष्टे ऽथ सुते ऽघखेटभे बल्युग्रयुक्ते न शुभेक्षिते तथा ॥ १३७ ॥

पापान्तराल में गुरु हो, पञ्चमेश निर्बल हो और शुभग्रहों से युक्त दृष्ट न हो तो (१) पञ्चम में पाप ग्रह हो और पापान्तराल में वा नीच राशि में पञ्चमेश हो और वह शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट न हो तो (२) पञ्चम से पञ्चम का स्वामी अर्थात् नवमेश त्रिक में हो और वह गुरु से दृष्ट न हो तो (३) पञ्चम में पाप ग्रह की राशि हो, उस में बली पाप ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो अनपत्यता होती है ।

सपापके त्र्यङ्गभवास्तकोणभे स्त्रीमिश्रखेटैः कलिते ऽथ भास्वौ ।
सूनावके नन्दनपे शनैश्चरे वार्कीनयोगे चरमे ऽथ कोणगे ॥ १३८ ॥

अङ्गारके ऽके रविचान्द्रिसङ्गमे यद्वा त्रिभिः पङ्क्खगैर्निशान्तगैः ।
सपत्नभस्थैर्दिवि दानवे यमे भवे ऽथ शीर्षे भुजगे ऽथैधामगैः ॥ १३९ ॥

ब्रघ्नेन्दुवक्रैः किमु सन्ततीश्वरे मूढे ऽघयुक्ते खलकर्त्तरीङ्गते ।
असाधुदृष्टे ऽथ सपामरे भपे चतुष्टयस्थे तनये स्वनिम्नगे ॥ १४० ॥

खगे ऽरिदृष्टे ऽसृजि वा ऽनपत्यता परस्परं कव्यसृजोर्दृशोर्नहि ।
किं वा न सम्पर्क इहोद्भवे तयोर्नरो ऽप्रसूतो बहुकामिनायुतः ॥ १४१ ॥

तृतीय, लग्न, एकादश, सप्तम, पञ्चम तथा नवम ये छः स्थान यदि पाप ग्रह, स्त्री ग्रह तथा मिश्र ग्रहों से युक्त हों तो (१) पञ्चम में सूर्य और व्यय में पञ्चमेश शनि हो तो (२) व्यय में शनि सूर्य का योग हो तो (३) त्रिकोण में भौम और व्यय में सूर्य बुध का संयोग होतो (४) सुख में शत्रु राशि गत तीन पाप ग्रह हों, दशम में राहु और एकादश में शनि हो तो (५) लग्न में राहु और द्वितीय में चन्द्र, सूर्य तथा भौम हों तो (६) पञ्चमेश यदि अस्तगत हो, पाप युक्त हो, पाप ग्रहों की कर्त्तरी में एवं पाप दृष्ट हो तो (७) केन्द्र में पाप युक्त चन्द्रमा हो, पञ्चम में नीच राशि गत ग्रह वा मङ्गल हो और वह शत्रु दृष्ट हो तो अनपत्यता होती है । यदि शुक्र तथा मङ्गल इन दोनों की परस्पर दृष्टि न हो अथवा उन दोनों का सम्पर्क (सम्बन्ध) न हो तो बहुत स्त्रियों से युक्त होनेपर भी अनपत्यता होती है ।

पापे प्रबन्धे तदिने खलान्तरे चारुग्रहालोकनयोगवर्जिते ।
किं नीचभे नोत्तमवीक्षिते ऽथ वा ऽपत्ये ऽघभे ऽघान्वितलोकिते तथा ॥ १४२ ॥

पञ्चम में पाप ग्रह हो, पापान्तर में पञ्चमेश हो एवं शुभ ग्रह की दृष्टि तथा योग से रहित हो तो (१) नीच राशि में पञ्चमेश हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (२) पञ्चम में पाप ग्रह की राशि हो और वह पाप ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो उक्त योगों में अनपत्यता होती है ।

सन्तान हीन योगः—

असृक् सितो वा सुतभं नहीक्षते द्वित्र्यादियोषित्स्वपि जातको जनः ।
सन्तानहीनस्तनयार्थनाथयोर्विवीर्य्ययोरात्मनि गर्हितेक्षिते ॥ १४३ ॥

धीशे ऽस्तनीचारिभगे ऽतिदुर्बले पापार्दिते वा तनये किमूदये ।
योगे ऽहिमाहेययमेज्यभास्वतां न सन्ततिः स्यान्म्रियते शिशुर्भवः ॥ १४४ ॥

पञ्चमस्थान को मङ्गल वा शुक्र न देखता हो तो दो तीन इत्यादि विवाह होने पर भी मनुष्य सन्तान हीन होता है। पञ्चम तथा द्वितीय इन दोनों स्थानों के स्वामी यदि निर्बल हों, पंचमस्थान यदि पाप दृष्ट हो एवं पञ्चम स्थान का स्वामी अस्तगत नीच राशिगत शत्रुराशिगत अत्यन्त निर्बल वा पापाक्रान्त हो तो सन्तान रहित होता है। पञ्चम वा लग्न में राहु, भौम, शनि, गुरु तथा सूर्य इन का योग हो तो सन्तान नहीं होती है और उत्पन्न हुई सन्तान मर जाती है।

सशीतगौ यमे भवे ऽप्रजत्वमेति वाक्पतौ ।
सकर्कटे सहृद्घुजि सुते न सन्ततिर्भवेत् ॥ १४५ ॥

लाभ में चन्द्रमा सहित शनि हो तो सन्तान रहित होता है। पञ्चम में कर्क राशिगत वा कुम्भ राशिगत गुरु हो तो सन्तान नहीं होती है।

पुत्राभावकारण परिज्ञानः—

अन्यदेशगमनाच्च नैधनात् क्लैब्यतो ऽप्रसवतो वियोगतः ।
प्राणिनां सुगणकैः पुरातनैः पञ्चधा तनयदुःखमुच्यते ॥ १४६ ॥

विदेशगमन से, मृत्यु से नपुंसकता से, वन्ध्यत्व से और वियोग (बिछोई) से मनुष्यों को पाँच प्रकारका पुत्र दुखः होता है। इस प्रकार प्राचीन पण्डितजन कहते है।

पुत्राभाव योगः—

तारानाथेज्योद्गमानां सुतेषु क्रूरैर्युक्तालोकितेषूत्तमैर्नो ।
दृष्टाढ्येषु क्रूरलग्नेषु धीषु वीर्य्योनेष्वात्मेश्वरेषु त्रिकेषु ॥ १४७ ॥

वा ऽऽरे सूतौ सवितरि पुरे ऽथेज्यतो नन्दनेशे
दुःस्थे देहात्पतितमृतिगैः पुत्रपुण्योदयेशैः
वा ऽऽर्य्ये सूनावमरसचिवाद्भभे गर्हिते वा-
ऽङ्गास्ते धीशे सबलरिपुपालोकितोपेत आहो ॥ १४८ ॥

नो सद्दृष्टे तनयसदने धीशपौ शौर्य्ययुक्तौ
दुःस्थौ युक्तौ मदनपतिना वा ऽऽर्किवक्रौ शुभे खे ।
वास्ते काव्येनतनयकुजैर्वा ऽरिभे ज्ञेन्दुदृष्टे
ऽङ्गेशे हंसे रुजि परिजने ऽथास्तगांशे ऽङ्गजेशे ॥ १४९ ॥

क्रूरैर्युक्ते ऽथ तनयपतौ वाक्पतौ वीर्य्यमुक्ते
पापैर्लीने क्रिमघनिरते पौरपे पुत्रपाले।
दुःस्थे यद्वा मलिनकलिते पूजिते कोणगे वा
घाते धीशे कुटिलनिलये पौरपे पुत्रहीनः ॥ १५० ॥

चन्द्र गुरु और लग्न इन तीनों से जो पञ्चम स्थान हों वे पाप ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हों, शुभ ग्रहों से दृष्ट तथा युक्त न हों, उन में पाप ग्रह को राशि हों, उन के स्वामी निर्बल हों और वे त्रिक स्थान में हों उक्त योग में उत्पन्न पुरुष के पुत्र नहीं होते हैं। अथवा पञ्चम में मङ्गल और लग्न में सूर्य हो तो (१) गुरु से पञ्चम में जो राशि हो उस का स्वामी यदि त्रिक में हो एवं पञ्चम, नवम तथा लग्न इन तीनों के स्वामी यदि लग्न से त्रिक में हो तो (२) पञ्चम में गुरु हो और गुरु से पञ्चम में पाप ग्रह हो तो (३) लग्न वा सप्तम में पञ्चमेश हो और वह बली षष्ठेश से दृष्ट वा युक्त हो तो (४) पञ्चम स्थान शुभ दृष्ट न हो, पंचम तथा नवम इन दोनों के स्वामी बली हों और वे त्रिक में हों एवं सप्तमेश से युक्त हों तो (५) नवम वा दशम में शनि तथा मङ्गल हों तो (६) सप्तम में शुक्र शनि तथा मङ्गल हों तो (७) शत्रु राशि में लग्नेश हो बुध तथा चन्द्रमा से दृष्ट हो और षष्ठ वा द्वितीय में सूर्य हो तो (८) सप्तम गत नवांश में पंचमेश हो और वह पाप युक्त हो तो (९) पंचमेश गुरु निर्बल और वह पाप युक्त हो तो (१०) लग्नेश यदि पाप ग्रह से युक्त हो और त्रिक में पंचमेश हो तो (११) त्रिकोण में पाप युक्त गुरु हो तो (१२) षष्ठ में पंचमेश हो और मङ्गल की राशि में लग्नेश हो तो उक्त यागों में उत्पन्न पुरुष पुत्र रहित होता है।

प्रान्त्याधीशे दिवि शिरसि वा ऽहस्करे कन्यकाङ्के
वक्रे बुद्धावथ सुतपतेर्ध्यन्त्यदेहेषु पापैः।
वा क्षीणे ऽब्जे वपुषि दुरितैरायुरन्त्योदयस्थै-
र्यद्वा ज्ञप्तौ गलितहिमगौ वौजभे ऽङ्के ऽङ्गजे ऽब्जे ॥ १५१ ॥

भास्वद्दृष्टे ऽथ शिरसि खले ज्ञपिपे शक्तिमुक्ते
मित्रे चन्द्रे घनभवनपे पञ्चमे ऽथात्मगेहे।
वर्गे काव्यामृतकिरणयोर्मन्दमाहेय दृष्टे
जातो जन्तुस्तनुजरहितः प्राहुरेवं मुनीन्द्राः ॥ १५२ ॥

दशम वा लग्न में व्ययेश होतो (१) लग्न में कन्या गत सूर्य हो और पञ्चम में मङ्गल हो तो (२) पञ्चमेश जिस स्थान में हों उस से पञ्चम, द्वादश तथा प्रथम स्थान में पाप ग्रह हों तो (३) लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो एवं अष्टम, व्यय तथा लग्न में पाप ग्रह होंतो (४) पंचम में क्षीण चन्द्रमा हो तो (५) लग्न में विषम राशि हो और पंचम में चन्द्रमा हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो (६) लग्न में पाप ग्रह हो पंचमेश निर्बल हो, चतुर्थ में चन्द्रमा हो और पञ्चम में लग्नेश हो तो (७) पञ्चम में शुक्र चन्द्रमा के वर्ग हों और वे शनि मङ्गल से दृष्ट हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पुत्र रहित होता है। इस प्रकार मुनिजन कहते है।

आत्माधिपे ऽरिगृहगे किमुतास्तमाप्ते
नीचं गते पतितनैधनगे तथैव।

धीस्थोऽपि दुष्टगृहपो वशतश्च तस्य
सूनोरभाव उदितो गणकैः प्रवीणैः ॥ १५३ ॥

षष्ठ व्यय वा अष्टम में पंचमेश हो और वह शत्रु राशि में हो अस्तगत हो वा नीच राशि में हो तो उक्त योग में पुत्र रहित होता है। पंचम में दुष्ट (६।१२।८) स्थान का स्वामी हो तो उस के कारण से पुत्र का अभाव चतुर पण्डितों ने कहा है।

सितः समर्क्षे क्षितिसूनुरोजभे तयोर्विवस्वद्यमपूर्णदृष्टयोः।
सूनोरभावस्तनयेऽघलोकिते बलोनयोर्लोचनचित्पयोस्तथा ॥ १५४ ॥

सम राशि में शुक्र हों, विषम राशि में मङ्गल हो और वे दोनों सूर्य शनि से पूर्ण दृष्ट हो तो पुत्र का अभाव होता है। पंचम स्थान पाप दृष्ट हो, द्वितीयेश तथा पंचमेश ये दोनों निर्बल हों तो भी पुत्राभाव होता है।

घाते घटेशे ज्ञरवीन्दुदृष्टे घनेऽघदृष्टेऽथ कुमारनाथात्।
व्यन्त्यारिगं गर्हितमर्चितो नो संवीक्ष्य कुर्य्यान्मनुजं विपुत्रम् ॥ १५५ ॥

षष्ठ में शनि हो और वह बुध, सूर्य तथा चन्द्रमा से दृष्ट हो एवं लग्न पाप दृष्ट हो तो (१) पंचमेश की आक्रान्त राशि से पंचम द्वादश वा षष्ठ में पाप ग्रह हो और उस को गुरु देखता न हो तो मनुष्य को पुत्र रहित करता है।

धीमन्दिरे मन्दकुजारुणैकतमाश्रिते तैः परिलोक्यमाने।
किं तत्र तेषां भवनांशके वा सोग्रद्वये पुत्रगृहे विपुत्रः ॥ १५६ ॥

पंचम में शनि, भौम तथा सूर्य इन तीनों में से कोई एक हो और उक्त ग्रहों से दृष्ट हो अथवा पंचम में उक्त ग्रहों की राशि तथा नवांश हो अथवा पंचम में दो पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में पुत्र रहित होता है।

वक्रे विवीर्य्ये चिति तद्गृहे वा विपक्षभावे विमले विहङ्गे।
तन्नायके निर्व्यथनालयस्थे सूनोरभावं ब्रुवते बुधेन्द्राः ॥ १५७ ॥

पंचम में निर्बल भौम हो वा पंचम में निर्बल भौम की राशि हो, षष्ठ में शुभ ग्रह हो और अष्टम में षष्ठेश हो तो उक्त योग में पण्डितजन पुत्राभाव को कहते हैं।

वंश विच्छेद योगः—

पङ्क्तिश्चिद्व्यययाम्यगैः किममृते क्रूरैः किमिन्दोर्मृता—
उग्रैः किं तनयेऽशुभैरुत सितेऽनङ्गे भपेऽभ्रे खलैः।
पाथःस्थैरुत रन्ध्रगे भगभवेऽस्त्रेऽङ्गे सुतेऽर्केऽथ वा
क्रूरेऽङ्गेऽल्पबले कुमारगृहपेऽङ्गेशेऽङ्गजेऽब्जे जले ॥ १५८ ॥

वास्ते काव्यविदोरघेऽर्णसि मतावर्च्येऽथ लग्नेतर-
केन्द्रे चान्द्रिपुरेशयोरथ यमे वारे मदेऽङ्गस्थयोः ।
ग्लौगुर्व्वोरथ पामरैर्व्ययवपुर्धीरन्ध्रगैर्वात्मजे-
ऽब्जे सद्भिर्व्ययनैधनोदयगतैर्वंशस्य विच्छेदकः ॥ १५९ ॥

पंचम, व्यय तथा अष्टम स्थान में पाप ग्रह हों तो (१) लग्न से चतुर्थ में पाप ग्रह हों तो (२) चन्द्रमा से अष्टम में पाप ग्रह हों तो (३) लग्न से पंचम में पाप ग्रह हों तो (४) सप्तम में शुक्र, दशम में चन्द्रमा एवं चतुर्थ में पाप ग्रह हों तो (५) अष्टम में शनि लग्न में भौम और पंचम में सूर्य हो तो (६) लग्न में पाप ग्रह, पंचमेश अल्प बली, पंचम में लग्नेश और सुख में चन्द्रमा हो तो (७) सप्तम में शुक्र तथा बुध हों चतुर्थ में पाप ग्रह हो और पंचम में गुरु हो तो (८) लग्न को छोडकर अन्य केन्द्र में बुध तथा लग्नेश हो तो (९) लग्न में शनि वा मङ्गल हो और चन्द्र तथा गुरु भी लग्न में हो तो (१०) व्यय, लग्न, पंचम तथा अष्टम इन चारों स्थानों में पाप ग्रह हों तो (११) पंचम में चन्द्रमा हो एवं व्यय अष्टम तथा लग्न में शुभ ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के वंश का विच्छेद (नाश) होता है ।

खलैः शुभान्त्यास्ततनूस्थितै रिपुभवर्गगैर्वाऽखिलकेन्द्रगैःऽखलैः ।
कोणार्थगैः किं तनयात्त्रिकेऽशुभैर्विच्छेद एतेषु कुलस्य देहिनः ॥ १६० ॥

नवम, व्यय, सप्तम तथा लग्न में शत्रु राशिगत तथा शत्रु वर्ग गत पाप ग्रह हों तो (१) चारों केन्द्रों में वा त्रिकोण द्वितीय में पाप ग्रह हों तो (३) पंचम से त्रिकस्थान में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में वंश विच्छेद होता है ।

चिन्मृत्युकस्थैर्मलिनैस्तनूपे सज्ञेऽथ पूज्ये पुरगे सचन्द्रे ।
तन्मन्मथस्थे मृदुगे किमारे विच्छेदमाहुर्भविनोऽन्वयस्य ॥ १६१ ॥

पंचम, अष्टम तथा व्यय में पाप ग्रह हों और लग्नेश बुध से युक्त हो तो (१) लग्न में चन्द्र युक्त गुरु हो उस से सप्तम में शनि वा मङ्गल हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य के वंश का नाश होता है ।

कुलध्वंस योगः—

खेऽब्जे सितेऽस्ते पथि पामरेऽथ वा पापे पदे वाचि गुरौ बलोनिते ।
किमङ्गजन्माधिपयोः सदन्वयेक्षणोनयोर्हेलिविलुप्तयोर्व्यये ॥ १६२ ॥

साघे शपे वार्किलवेऽङ्गपेक्षितेऽब्जे कण्टकेषूग्रशुभेषु वा विधोः ।
क्रमेण मारे मतिभेऽमृतायुषि सितज्ञयोर्मत्रिणि गर्हितग्रहे ॥ १६३ ॥

किं वाऽऽद्यभावे गुलिके स्वनिम्नभे नीचांशके विग्रहवेश्मभर्त्तरि ।
सद्भिर्नदृष्टैः पतिताश्रितैः खलैर्निजान्वयध्वंसक एषु जायते ॥ १६४ ॥

दशम में चन्द्रमा, सप्तम में शुक्र तथा नवम में पाप ग्रह हो तो (१) दशम तथा धन में पाप ग्रह और गुरु निर्बल हो तो (२) जन्म लग्नेश तथा जन्म चन्द्र राशि का स्वामी ये दोनों शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट न हों

और अस्तगत हों एवं व्यय में पाप युक्त नवमेश हों तो (३) शनि के नवांश में चन्द्रमा हों और वह लग्नेश से दृष्ट हो एवं केन्द्र में पाप शुभ ग्रह हों तो (४) चन्द्रमा से सप्तम में शुक्र तथा बुध हों, पंचम में गुरु एवं सुख तथा अष्टम में पाप ग्रह हों तो (५) लग्न में गुलिक, नीच राशि तथा नीचांशक में लग्नेश और षष्ठ तथा अष्टम में पाप-ग्रह हों और वे शुभ ग्रहों से दृष्ट न हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष कुल का ध्वंस(नाश) करनेवाला होता है ।

मृतापत्य योगः—

भुजेऽङ्गजेऽब्जे हरिजे यमासृजोः किं सार्ककाव्ये जठरेऽथ वाऽर्कजे ।
गात्रे सगोत्राभुवि शेऽथ गुह्यभे गोत्राज उग्रे चिति भानवे भवे ॥ १६५ ॥

वेन्दोस्तनोर्वा तनये गुराविनेऽस्ते वाऽथरार्य्यस्तगतेऽघलोकिते ।
मृतप्रजोऽथौर्धिषणोपगैस्तथाऽपत्ये प्रकाशे खरदीधितौ सुतः ॥ १६६ ॥

जातश्च जातो म्रियते चिदन्त्यखेऽबलेन्दुतोऽर्के तनयो न जीवति ।
भृगौ गदेशेऽनिमिषाश्रितेऽर्दितेऽनन्तातनूजेन मृताल्पसूतिकः ॥ १६७ ॥

तृतीय वा पंचम में चन्द्रमा लग्न में शनि तथा मङ्गल हों तो (१) पंचम में सूर्य उक्त शुक्र हो तो (२) लग्न में शनि और नवम में भौम हो तो (३) अष्टम में भौम, पंचम में पाप और लाभ में शनि हो तो (४) चन्द्रमा वा लग्न से पंचम में गुरु एवं नीच राशि में शत्रु राशि में वा अस्तगत सूर्य वा मङ्गल हों और वह पाप दृष्ट हो तो मृत सन्तानवाला होता है। पंचम में बहुत पाप ग्रह हों तो भी मृत सन्तानवाला होता है। पंचम में सूर्य हो और वह प्रकाशावस्था में हो तो पुत्र उत्पन्न हो होकर मर जावे। निर्बल चन्द्रमा से पंचम व्यय वा दशम में सूर्य हो तो पुत्र न जीवे। मीन में षष्ठेश शुक्र हो और वह मङ्गल से आक्रान्त हो तो मृतापत्य तथा अल्प प्रसववाला होता है।

नीचारिभे नीचसपत्नभागगौ पराजितौ षड्बलवर्जितौ यदा ।
सर्वंसहानन्दनषोडशार्चिषौ यदुद्भवे तं कुरुतो मृतप्रजम् ॥ १६८ ॥

जिस के जन्म समय में भौम तथा शुक्र ये दोनों नीच वा शत्रु राशि में हों और नीच तथा शत्रु नवांश में हों एवं ग्रह युद्ध में पराजित हों और षड्बल से रहित हों तो उस मनुष्य को मृतप्रजावाला करते हैं।

मतौ तदिन्द्रेऽशुभमध्यगे कृशेऽशुभाढ्यदृष्टे विजिते खलार्दिते ।
सनीचभस्थेऽरियुतेऽरिभेऽस्तगे नीचे न सद्देहपसद्युते क्षिते ॥ १६९ ॥

किमोजभे गर्भगयोः सितासृजोर्नदृष्टयोश्चन्द्रमसाऽथ नन्दने ।
सोरे भुजङ्गे किमु बुद्धिवेश्मनि वाचां विभावेणगते मृतप्रजः ॥ १७० ॥

पाप ग्रहों के अन्तराल में पंचम भाव तथा पंचमेश हों और वे निर्बल हों, पाप युक्त दृष्ट हों, युद्ध में पराजित हों, पापाक्रान्त हों, नीच राशिगत ग्रहों से युक्त हों, शत्रु ग्रह से युक्त हों, शत्रु राशि में हों, अस्तंगत हों नीच राशि में हो, सुस्थानों के स्वामी शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट न हों तो (१) पंचम में विषम-

राशिगत शुक्र तथा मङ्गल हों और चन्द्रमा से दृष्ट न हों तो (२) पंचम में मङ्गल युक्त राहु हो तो (३) पंचम में मकर राशिगत गुरु हो तो मृत प्रजावाला होता है।

सन्तान नाश के योगः—

मतौ मृतीशे मतिपे मृतौ रिपो राशौ स्वनिम्ने न शुभेक्षिते ततः।
असद्द्वयान्तःस्थित आत्मभे शुभैर्न युक्तदृष्टे चिदिने सदुष्कृते ॥ १७१ ॥
ततो गिरीशे दुरितद्वयान्तरस्थिते चिदिन्द्रे विबले न साधुभिः
उपेतदृष्टे किमुताधरारिभे मूढे मतीन्द्रे त्रिकभावपान्विते ॥ १७२ ॥
सन्तानभावे तदिने च गर्हितैर्दृष्टे समेतेऽथ कलाधरेऽम्बरे।
जायापदे साघखगे सभार्गवे सन्ताननाशं कथयन्ति हौरिकाः ॥ १७३ ॥

पञ्चम में शत्रु राशिगत वा नीच राशिगत अष्टमेश हो और वह शुभ दृष्ट न हो एवं अष्टम में शत्रु राशिगत वा नीच राशिगत पञ्चमेश हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (१) पापान्तराल में पञ्चमस्थान हो, शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट न हो और पंचमेश पापयुक्त हो तो (२) दो पापों के अन्तराल में गुरु हो एवं निर्बल पंचमेश शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट न हो तो (३) शत्रु राशि नीच राशि वा अस्तगत पंचमेश हो और वह त्रिकेश से युक्त हो एवं पुत्रभाव तथा पुत्रेश यदि पाप ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हों तो (४) दशम में चन्द्रमा और सप्तम में पाप युक्त शुक्र हो तो उक्त योगों में ज्योतिःशास्त्रवेत्ता सन्ताननाश को कहते हैं।

प्रथम गर्भ हानि के योगः—

देवे देवे हृदुदवसितेऽनन्तवासैः समस्तै—
नुः सन्तानं प्रथमजनितं नाशमाप्नोति नित्यम्।
मेधाधीशे परिभवगृहे पौरपे पापिभे वा
मेधाधाम्नि त्रिदशगुरुभेऽत्राद्यगर्भस्य हानिः ॥ १७४ ॥

नवम, पंचम तथा चतुर्थ में समस्त ग्रह हों तो मनुष्य की प्रथम जनित सन्तान नित्य नाश को प्राप्त होती है। शत्रु स्थान में पंचमेश हो और भौम की राशि में लग्नेश हो तो अथवा पंचम में गुरु की (९।१२) राशि हो तो प्रथम गर्भ की हानि होती है।

वक्रे विवेकेऽधरभेऽरिभे वा दुर्हृत्प्रदृष्टे तनयस्य हानिः।
तस्मिन् सुरप्राक्सुरवंद्यदृष्ट आद्यस्य हानिर्निखिलेक्षिते नो ॥ १७५ ॥

पंचम में नीच राशिगत वा शत्रुराशिगत मङ्गल हो और वह शत्रु ग्रह से दृष्ट हो तो पुत्र की हानि होती है। यदि पञ्चमगत भौम गुरु तथा शुक्र से दृष्ट हो तो प्रथम गर्भ की हानि होती है। एवं पंचम गत भौम सब ग्रहों से दृष्ट हो तो गर्भ हानि नहीं होती है।

पुत्र शोक के योगः —

सूनौ स्वर्क्षे ज्ञे तनूजस्य शुग्वा प्रज्ञांप्राप्तैर्मीनलेयालिगोभिः।
खेटैरूनैः पुत्रशोकेन दुःखी तैः खेटाढ्यैरल्पपुत्रत्वमेति ॥ १७६ ॥

पंचम में स्वराशिगत बुध हो तो पुत्र का शोक होता है। पंचम में मीन, सिंह, वृश्चिक तथा वृष राशि हों और वे ग्रहों से रहित हों तो पुत्र शोक से दुःखित होता है। यदि पंचम गत मीनादि राशि ग्रह से युक्त हों तो अल्प पुत्र वाला होता है।

कलेशकल्पकाव्यतः कुमारभे समागमः।
अशोभनद्युचारिणां कुमारशोक ईर्य्यते ॥ १७७ ॥

चन्द्रमा, लग्न तथा शुक्र से पंचम में पाप ग्रहों का समागम (योग) हो तो पुत्र शोक होता है।

पुत्र नाश के योगः—

क्रूरान्तरे तनुजनौ किमु तत्पतौ वा
तत्कारके सकलुषे किमुतोग्रयुक्तैः।
क्रूरांशगैः पथिमतिद्युनपांशपैर्वा
नीचास्तगे मतिदये ऽ घलवे ऽ घदृष्टे ॥ १७८ ॥

पंचम भाव वा पंचमेश पाप ग्रहों के अन्तराल में हो और पंचमकारक पाप ग्रह से युक्त हो तो (१) नवम, पंचम तथा सप्तम इन तीनों स्थानों के स्वामियों के नवांश के स्वामी यदि पाप युक्त हों और क्रूरांश में हों तो (२) नीचगत वा अस्त गत पंचमेश यदि पापांश में हो और पाप दृष्ट हों तो पुत्र का नाश होता है।

वा ऽ ऽ युर्गदे देहविभौ प्रबन्धपे नीचारिमूढे सखलान्वयेक्षणे।
किं क्रूरषष्ठ्यंशगते सगर्हिते दुःस्थानगे दारकपे ऽ ङ्गजक्षयः ॥ १७९ ॥

अष्टम वा षष्ठ में लग्नेश हो, पंचमेश नीच राशि वा शत्रु राशि में हो वा अस्त गत हो एवं पाप ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) अथवा पंचमेश क्रूरषष्ठ्यंश में हो, पाप युक्त हो और त्रिक स्थान में हो तो पुत्र का नाश होता है।

पुत्रे कलत्रे ऽ हियमेनसंयुते धीशे ऽ घदृष्टे ऽ थ सुते क्षयाधिपे।
किं तत्र पापे विबले किमङ्गजे सर्पे त्रिकस्थे सुतपे सुतक्षयः ॥ १८० ॥

पञ्चम तथा सप्तम में राहु, शनि तथा सूर्य हों और पञ्चमेश यदि पाप दृष्ट हो तो (१) पञ्चम में अष्टमेश हो तो (२) पञ्चम में निर्बल पाप ग्रह हो तो (३) पञ्चम में राहु हो और त्रिक में पञ्चमेश हो तो पुत्र का नाश होता है।

पृदाकुपृथ्वीतनयान्तरालगे प्रज्ञापतौ वा तमसा ऽ थ वा सृजा
तस्मिन्युते ऽ थो मलिने घनस्थले पतङ्गयोः पुष्पवतोः सुतक्षयः ॥ १८१ ॥

पञ्चम भाव का स्वामी यदि राहु और मंगल के अन्तराल में अथवा राहु से वा मङ्गल से युक्त हो तो (१) लग्न में पाप ग्रह हो और सप्तम में सूर्य चन्द्र हों तो उक्त योगों में पुत्र का नाश होता है।

सर्पशाप से पुत्र नाश के योगः—

अगौ चितीलाजनिलोकिते वा ऽ सृग्भे ऽ थ वैनौ तनये ऽ ब्जदृष्टे ।
सेन्दुंतुदे तुन्दविभौ किमात्मपाले ऽ बले साङ्गपता इलाजे ॥ १८२ ॥

सभोगिनाथे सुतकारके ऽ थो धीशे त्रिके नन्दनकारकाख्ये ।
सारे भुजङ्गेश्युदये ऽ थ संवित्पे सोमजे सासृजि शोणितांशे ॥ १८३ ॥

पौरालये पङ्गुजपातयुक्ते किं चिद्द्ये ऽ स्ने तिमिरे ऽ ङ्गजे नो ।
सद्दृष्टयुक्ते ऽ थ सुताङ्गपत्योर्विप्राणयोः सार्य्यबुधैरसौम्यैः ॥ १८४ ॥

देवालये ऽ थो सकुजे सुतेशे स्वर्भाणुयुक्ते पुरपे समीक्ष्य ।
यदाहिनाथः सुतकारकाख्यं सुतस्य नाशं कुरुते ऽ हिशापात् ॥ १८५ ॥

पंचम में राहु हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो वा मङ्गल की राशि में हो तो (१) पंचम में शनि हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट हो एवं पंचमेश यदि राहु से युक्त हो तो (२) पंचमेश निर्बल हो, मङ्गल यदि लग्नेश से युक्त हो एवं पुत्रकारक ग्रह यदि राहु से युक्त हो तो (३) त्रिक में पंचमेश हो, पुत्रकारक मङ्गल से युक्त और लग्न में राहु हो तो (४) पंचमेश बुध हो और वह मङ्गल से युक्त हो, मङ्गल के नवांश में हों और लग्न में गुलिक तथा राहु हों तो (५) पंचमेश मङ्गल हो तथा पंचम में राहु हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (६) पंचमेश तथा लग्नेश ये दोनों निर्बल हों और पंचम में पाप हों और वे गुरु बुध से युक्त हों तो (७) पंचमेश यदि मङ्गल से युक्त हो, लग्नेश राहु से युक्त हो और पुत्रकारक ग्रह को राहु देखता हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के पुत्र का सर्पशाप से नाश होता है।

सुतस्थले ऽ बले ऽ गुना ध्वजेन वेक्षितान्विते ।
तदीश्वरे तथा विधे ऽ थ वा सुतक्षयस्तथा ॥ १८६ ॥

पंचमस्थान निर्बल हो और वह राहु वा केतु से दृष्ट वा युक्त हो अथवा पंचमेश निर्बल हो और वह राहु वा केतु से दृष्ट वा युक्त हो तो सर्पशाप से पुत्र का नाश होता है।

पितृ शाप से पुत्र नाश के योगः—

उग्रान्तरे दिनकरे सुतपे त्रिकोणे
पङ्क्ग्रहेक्षितयुते ऽ थ खलान्तरे ऽ र्के ।
सूनौ शनैश्वरलवे ऽ धरराशिगे वा
ध्यङ्गस्थयोरशुभयोर्मतिपे सभानौ ॥ १८७ ॥

सिंहे ऽ र्चिते ऽ थ सुतपे ऽ हियुते पतङ्गे
याम्ये यमे जठरभे ऽ थ सुते मृतीशे ।

भ्रान्त्याधिपे वपुषि मानपतौ मृतौ वा
धीशे सभानुतनये गुलिके त्रिकोणे ॥ १८८ ॥

शस्तेऽशुभेऽथ भगगे मतिपे विवीर्ये
पुत्रेऽङ्गपे समलिने तनये विलग्ने ।
किं तातपे सुतगते किमु पुत्रपाले
तत्राश्रितेऽङ्गसुतयोः खलयुक्तयोर्वा ॥ १८९ ॥

ताताधिपारे तनयेशसंयुते मतौ पदेऽङ्गे सखलेऽथ गीष्पतौ ।
ताताधिपेऽसद्भवने त्रिकोपगे धीस्थे खले देहदये ततो मृतौ ॥ १९० ॥

व्ययेऽगुगुर्वोरिनमङ्गलैनिषु चिदङ्गगेषूत सदैत्यभर्त्तरि ।
तत्कारके खारिपयोः सुतस्थयोस्तातस्य शापात्तनयक्षयो भवेत् ॥ १९१ ॥

पाप ग्रहों के अन्तराल पंचमेश सूर्य हो और वह त्रिकोण में हो तथा पाप ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो (१) पंचम में सूर्य हो और वह पापान्तराल में हों, नीच राशि में हो और शनि के नवांश में हो तो (२) सिंह राशि में गुरु हो, पंचमेश सूर्य से युक्त हो, एवं लग्न तथा पंचम में पाप ग्रह हों तो (३) पंचमेश राहु से युक्त हो, अष्टम में सूर्य हो और पंचम में शनि हो तो (४) पंचम में अष्टमेश हो, लग्न में व्ययेश हो और अष्टम में दशमेश हो तो (५) पंचमेश यदि शनि से युक्त हो, त्रिकोण में गुलिक हो और नवम में पाप ग्रह हो तो (६) पंचमेश अस्तगत हो, पंचम में निर्बल लग्नेश हो और पंचम तथा लग्न में पाप ग्रह हो तो (७) पंचम में दशमेश वा पंचमेश हो और लग्न तथा पंचम में पाप ग्रह हों तो (८) दशमेश मङ्गल यदि पंचमेश से युक्त हो एवं दशम पंचम तथा लग्न में पाप ग्रह हों तो (९) पाप राशि में गुरु हो, त्रिक में दशमेश हो एवं लग्नेश पाप ग्रह हो और वह पंचम में हो तो (१०) व्यय में राहु तथा गुरु हो और पंचम तथा लग्न में शनि, भौम तथा सूर्य हो तो (११) पुत्रकारक यदि राहु से युक्त हों एवं पंचम में दशमेश तथा षष्ठेश हो तो युक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के पुत्र का पितृशाप से नाश होता है।

सुतेऽसुरे सुताधिपान्वितेऽथवैनिना युते ।
न सद्भिरीक्षिते सुतक्षयः स्वताततशापतः ॥ १९२ ॥

पंचम में राहु हो और वह पंचमेश से वा शनि से युक्त हो एवं शुभ दृष्ट न हों तो पितृशाप से पुत्रमरण होता है।

मातृ शाप से पुत्रमरण के योगः—

पुत्रेशेऽब्जे दुरितखचरान्तःस्थिते वा स्वनिम्न
मंत्रे नित्रे सनलिनखगे वा भवे भानुसूनौ ।
पापैर्बन्धौ तनयभवने नीचगेऽब्जेऽथ नीचे
देहाधीशे शशिनि सखले सूनुपे दुष्टगे वा ॥ १९३ ॥

साद्याकर्थारे शिशिरकिरणे चिद्विभौ कारके च
पुष्ये पुत्रेऽथ धनरसपे मङ्गले सागुमन्दे ।
अब्जग्लावोस्तनुसुतगयो किं कपाले कलिस्थ
पुत्राङ्गेशोः क्षतगृहगयोश्छिद्रखेशोः शरीरे ॥ १९४ ॥

किं प्रान्त्यायुर्धनतनयगैः पङ्गुपापीनपातैः
पाथोऽङ्गेशोस्त्रिकगृहगयोर्वाऽऽस्पातामरेज्यैः ।
दुःस्थैःपुत्रेऽसितशशभृतोर्वा मृतांशौ खलांशे
दुःस्थे धीशे शिरसि तनयेऽघेऽथ याम्यारिपत्योः ॥ १९५ ॥

पौरे प्रान्त्ये सुखनदयिते साघयोश्छिद्रयोश्चे-
द्वौरग्लावोः किमुदयगृहे पापमध्ये क्षयीन्दौ ।
दारागारे तिमिरयमयोर्बुद्धिबन्धुस्थयोर्वा
दिष्टान्तेशे तनयनिलये नन्दनेशे विना ॥ १९६ ॥

केशेन्द्वोः षड्व्ययमृतिगयोः किं तनौ चन्द्रराशौ
साहीलाजे भपभगमुवोर्धीस्थयोर्वाङ्गजेशे ।
सार्कौ पापे वनितिलयगे कल्मषानन्तगेहे
रन्ध्रे रिःफे मरणमुदितं मातृशापात्सुतस्य ॥ १९७ ॥

अपनी नीचराशि में वा पाप ग्रहों के अन्तराल में पंचमेश चन्द्रमा हो एवं पंचम तथा चतुर्थ में पाप ग्रह हों तो (१) लाभ में शनि, सुख में पाप ग्रह और पंचम में नीचराशि गत चन्द्रमा हो तो (२) नीचराशि में लग्नेश हो चन्द्रमा यदि पाप युक्त हो और त्रिक पंचमेश हो तो (३) पंचमेश चन्द्रमा यदि राहु, शनि तथा भौम से युक्त हो और नवम वा पंचम में पुत्रकारक हो तो (४) सुखेश मङ्गल यदि राहु तथा शनि से युक्त हो एवं लग्न वा पंचम में सूर्य तथा चन्द्रमा हों तो (५) अष्टम में सुखेश हो, षष्ठ में पंचमेश तथा लग्नेश हों लग्न में अष्टमेश तथा दशमेश हों तो (६) व्यय, अष्टम, लग्न तथा पञ्चम में शनि, मङ्गल, रवि तथा राहु हों और त्रिक में चतुर्थेश तथा लग्नेश हों तो (७) त्रिक में मङ्गल, राहु तथा गुरु हों और पञ्चम में शनि तथा चन्द्रमा हों तो (८) पाप नवांश में चन्द्रमा हो, त्रिक में पञ्चमेश हो और लग्न तथा पञ्चम में पाप ग्रह हों तो (९) लग्न में अष्टमेश तथा षष्ठेश हों, व्यय में सुखेश हो और पञ्चम में पाप युक्त चन्द्र गुरु हों तो (१०) पापान्तराल में लग्न हो, सप्तम में क्षीण चन्द्रमा हो और पञ्चम तथा चतुर्थ में राहु शनि हों तो (११) पञ्चम में अष्टमेश अष्टम में पञ्चमेश हो एवं त्रिक में सुखेश तथा चन्द्रमा हों तो (१२) लग्न में कर्क राशिगत राहु मङ्गल हों और पञ्चम में चन्द्रमा तथा शनि हों तो (१३) पञ्चमेश यदि शनि से युक्त हो, सुख में पाप ग्रह हो एवं अष्टम तथा व्यय में भी पाप ग्रह हों तो उक्त योग में मातृशाप से पुत्र मरण होता है ।

भ्रातृ शाप से पुत्र मरण योग:—

मनुस्थाने सतिमिरकुजे धैर्यपे व्यङ्गपत्यो-
र्गुह्ये वाङ्गे धियि कुजपशीजन्मनोः कारके च ।

शान्ते शस्ते भुजभवनपेऽथामरेज्ये स्वनिम्ने
सोऽस्थे धीस्थे तपनतनये नाशगैः पापिपुण्यैः ॥ १९८ ॥

वाऽन्त्येऽङ्गेशे रुधिरकिरणे मंत्रगे मंत्रनाथे
छिद्रस्थानेऽथ मलिनखागान्तःस्थयोर्मंत्रमूर्त्योः ।
तद्भर्त्रोश्चेत्कुभवनगयोः कारकाश्चैकसोर्वा
सोऽस्थे खेशेऽध्वनि तनयभे सोग्रखेटे सुतेऽस्ते ॥ १९९ ॥

वा साह्यार्कौ विबुधभवने पञ्चमे भान्त्यभावे
सज्ञे भौमे किमुदयपतौ भ्रातृगे भ्रातृनाथे
पुत्रे पापैः सहजतनयाङ्गस्थितैर्वा विनाशे
धैर्य्याधीशे सुतसदनगे कारके मान्द्यहिभ्याम् ॥२००॥

दृष्टोपेते किमुत तनये नैधनागारनाथे
संयुक्ते चेद्भृतकविभुना पञ्चतापस्त्ययाते ।
धात्रीपुत्रे यमवति तदा शापतः सोदरस्य
जन्तूनां स्यात्तनयनिधनं हौरिका एवमाहुः ॥२०१॥

पंचम में तृतीयेश हो और वह राहु तथा मङ्गल से युक्त हो और एवं अष्टम में पंचमेश तथा लग्नेश हो तो (१) लग्न तथा पंचम में मंगल और शनि हों, अष्टम में पुत्रकारक हो एवं नवम में तृतीयेश हो तो (२) तृतीय में नीच राशि गत गुरु हो, पंचम में शनि हो और अष्टम में शुभ ग्रह तथा मङ्गल हों तो (३) व्यय में लग्नेश, पंचम में मंगल और अष्टम में पंचमेश हो तो (४) लग्न तथा पंचम ये दोनों स्थान पाप ग्रहों के अन्तराल में हो और उन दोनों के स्वामी तथा कारक ग्रह त्रिक में हों तो (५) तृतीय में दशमेश, पंचम तथा नवम में पाप ग्रह और पंचम में मंगल हो तो (६) पंचम में बुध की राशि हो और उस में राहु तथा शनि हों एवं व्यय में बुध तथा भौम हों तो (७) तृतीय में लग्नेश, पंचम में तृतीयेश एवं तृतीय, पंचम तथा लग्न में पाप ग्रह हों तो (८) अष्टम में तृतीयेश एवं पंचम में पुत्रकारक हो और वह गुलिक तथा राहु से युक्त वा दृष्ट हो तो (९) पंचम में अष्टमेश हो और वह तृतीयेश से युक्त हो एवं अष्टम में मंगल तथा शनि हों तो उक्त योगों में भ्रातृशाप से पुत्र मरण होता है ।

ब्रह्मशाप से पुत्र नाश के योग :—

नाभे मीने धनुषि धिषणश्यामलारैः सुतस्थै-
र्निर्याणस्थे नियतिगृहपेऽथात्मजस्थे विधीशे ।
पातारज्यैर्मृतिभवनगैर्नाशगे नन्दनेश-
आह्नो नीचे शसदनदये द्वादशेशेऽङ्गजस्थे ॥२०२॥

संदृष्टाढ्ये भुजगविभुनाऽथाधरे शेमुषीशे
पाते पौरे चिति च्छिद्रपे दुःस्थितेऽथात्मपेषु ।
देवाचार्येन्दुकविषु खलैर्व्योमवासैर्युतेषु
आयूराशौ किमिनजलवे संयुतेऽस्तासिताभ्याम् ॥२०३॥
वाचां पत्यौ चरमनिलये नन्दनागारपे किं
गात्रागारे दुरितकलिते पैङ्गलौ पत्रपेशे ।
पुण्यस्थाने विबुधगुरुणा संयुते प्रान्त्यपस्त्वे
सूनोरन्तं कथयति कविर्ब्रह्मणः शापतो नुः ॥२०४॥

मीन वा धनु में राहु, पञ्चम में गुरु, शनि तथा मङ्गल हों और अष्टम में नवमेश हो तो (१) पञ्चम में नवमेश, अष्टम में राहु, मङ्गल तथा गुरु हों और अष्टम में पञ्चमेश भी हो तो (२) नीच राशि में नवमेश और पञ्चम में व्ययेश हो और वह राहु से दृष्ट वा युक्त हो तो (३) अपनी नीच राशि में गुरु हो, पञ्चम वा लग्न में राहु हो और त्रिक में पञ्चमेश हो तो (४) गुरु, चन्द्र तथा रवि इन तीनों के मध्य में कोई भी पञ्चमेश हो और वह पाप युक्त होकर अष्टम में हो तो (५) शनि के नवांश में गुरु हो और वह मङ्गल वा शनि से युक्त हो एवं व्यय में पञ्चमेश हो तो (६) लग्न में पाप युक्त शनि हो, नवम में राहु और व्यय में गुरु हो तो ब्रह्मशाप से पुत्र मरण होता है ।

पत्नीशाप से पुत्र मरण योग :—

मदनसदननाथे नन्दनागारयात-
इनजनिलवमाप्ते नैधने नन्दनेशे ।
किमु कलुषसमेते कारके कामनाथे
निधननिलयलीनेऽप्यायपे पुत्रगे वा ॥२०५॥
चिति भृगुजनियुक्ते कारकाकाशवासे
वृजिनखसदुपेते मन्मथेशे मृतौ वा ।
असति तनुकुमारे भार्गवे भाग्यभावे
रतिपतिवसतीशे शान्तसद्माश्रिते किम् ॥२०६॥
पथिपुरपतिपालैर्दुष्टगैः पुण्यपेऽच्छे
तनयनिलयनाथे शत्रुभे वा प्रवन्धे ।
यदि भृगुसुतराशौ रात्रिनाथाहियुक्ते
हरिजचरमभिते क्रूरयुक्ते किमस्ते ॥ २०७॥
भगभवभृगुजन्योरात्मजेऽर्के मृतौज्ये
धवलकरसपत्ने कल्पभे वाथ भौमे ।

चरमविबुधवन्द्ये पातयुक्तेक्षिते ऽच्छे
सुत उत मृतिभावेस्वास्तपत्योश्चिदङ्गे ॥ २०८ ॥
रुधिरमिहिरजन्योः कारके ऽसद्युते वा
तनुसुतशुभयातैर्दानवादित्यजारैः ।
क्रमश इह विनाशे पुत्रदारालयेशौ
तनयमरणमाहुः शापतो योषितायाः ॥ २०९ ॥

पंचम में सप्तमेश हो और वह शनि के नवांश में हो एवं अष्टम में पञ्चमेश हो तो (१) पुत्रकारक पाप युक्त हो, अष्टम में सप्तमेश और पंचम में व्ययेश हो तो (२) पंचम में शुक्र हो, पुत्रकारक पाप युक्त हो और अष्टम में सप्तमेश हो तो (३) लग्न तथा पंचम में पाप ग्रह हो नवम में शुक्र हो और अष्टम में सप्तमेश हो तो (४) त्रिक में बृहस्पति, लग्नेश तथा सप्तमेश हों, नवमेश शुक्र हो, और शत्रु राशि में पंचमेश हो तो (५) पंचम में शुक्र की राशि हो और वह चन्द्र राहु से युक्त हो एवं व्यय, लग्न तथा धन ये तीनों स्थान पाप युक्त हों तो (६) सप्तम में शुक्र तथा शनि हों, पंचम में सूर्य, अष्टम में गुरु और लग्न में राहु हो तो (७) धन में भौम व्यय में गुरु, और पंचम में शुक्र हो और वह राहु से युक्त वा दृष्ट हो तो (८) अष्टम में द्वितीयेश तथा सप्तमेश हों पंचम में मङ्गल तथा शनि हों और पुत्रकारक पाप युक्त हो तो (९) लग्न में राहु, पंचम में शनि, नवम में मङ्गल अष्टम में पंचमेश तथा सप्तमेश ये दोनों हों तो स्त्री के शापसे पुत्र मरण होता है।

प्रतिभायामसत्खेटे दारागारपतौ मृतौ ।
द्रविणे क्रूरसम्बन्धे वधूशापात्सुतक्षयः ॥ २१० ॥

पञ्चम में पाप ग्रह, अष्टम में सप्तमेश और द्वितीय में पाप ग्रहों का सम्बन्ध हो तो स्त्री के शाप से पुत्र का नाश होता है।

प्रेतशाप से पुत्रनाश के योगः—

क्षीणे चन्द्रे मन्मथे मन्दभान्वोः पुत्रे पूज्ये द्वादशेऽहौ तनौ किम् ।
मृत्यौ मन्दे मंत्रपे मङ्गलेऽङ्गे मृत्युस्थाने कारके वाङ्ग उग्रे ॥ २११ ॥
मार्त्तण्डेऽन्त्ये ज्ञारमन्दैर्मतिस्थैरायुर्भावे धीविभौ वोदयेऽहौ ।
सौरौ सूनौ कारके कालगे वा पौरे पातग्लौसमन्दार्च्ययोगे ॥ २१२ ॥
दिष्टान्तस्थे देहपे वोद्गमेऽगौ पङ्गौ पुत्रे वक्रयुक्तेक्षिते वा ।
निम्ने राशौ कारके पुत्रनाथे नीचालोके नीचयुक्ते स्थिरर्क्षे ॥ २१३ ॥
वाऽऽर्कौ लग्नेऽहौ सुतेऽर्के मृतिस्थे प्रान्त्ये भौमे किं मदेशे त्रिकस्थे ।
मंत्रे चन्द्रे मान्दिमन्दान्वितेऽङ्गे सूतोर्नाशं प्रेतशापाद्वदन्ति ॥ २१४ ॥

सप्तम में क्षीण चन्द्रमा हो, पञ्चम में शनि तथा सूर्य हों, द्वादश में गुरु और लग्न में राहु हो तो (१) अष्टम में पञ्चमेश शनि; लग्न में मङ्गल और अष्टम में पुत्रकारक हो तो (२) लग्न में पाप ग्रह; व्यय में सूर्य,

पंचम में बुध, भौम तथा शनि हों और अष्टम में पञ्चमेश होतो (३) लग्नमें राहु, पञ्चम में शनि और अष्टम में पुत्र कारक हो तो (४) लग्न में चन्द्र, शनि, गुरु तथा शुक्र का योग हो एवं अष्टम में लग्नेश हो तो (५) लग्न में राहु तथा पञ्चम में शनि हो और वह मङ्गल से दृष्ट वा युक्त हो तो (६) नीच राशि में पुत्र कारक हो तथा स्थिर राशि में पंचमेश हो और वह नीच ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो (७) लग्न में शनि पंचम में राहु, अष्टम में सूर्य और व्यय में भौम हो तो (८) त्रिक में सप्तमेश, पंचम में चन्द्रमा और लग्न में गुलिक तथा शनि हो तो प्रेतशाप से पुत्रनाश होता है।

त्रिकेश्वरे सुतस्थलेऽसितासुरेज्यसंयुते।
यदेह कारकग्रहे निनाशगे तथा भवेत् ॥ २१५॥

पञ्चम में त्रिकेश हो और वह शनि तथा शुक्र से युक्त हो एवं अष्टम में पुत्रकारक हो तो भी प्रेतशाप से पुत्रनाश होता है।

मातुल शाप से पुत्रनाश के योग :—

पुत्रे पूज्ये पण्डितेऽस्राहियुक्ते कल्पे क्रोडे किं सुते ध्यङ्गपत्योः।
भौमार्किज्ञैर्युक्तयोर्वाकेलुप्ते सन्तानेशे विग्रहे मातुजेऽस्ते ॥ २१६॥
सप्तेऽङ्गेशे किं तनौ ज्ञातिनाथे प्रान्त्याधीशेनान्विते नन्दनस्थैः।
विचन्द्रारैः शापतो मातुलस्य नाशो वाच्यः सन्ततेर्धीरमुख्यैः ॥ २१७॥

पञ्चम में गुरु तथा बुध हों और वे राहु तथा मङ्गल से युक्त हों एवं लग्न में शनि हो तो (१) पञ्चम में पञ्चमेश तथा लग्नेश हों और वे मङ्गल, शनि तथा बुध से युक्त हों तो (२) लग्न में अस्तगत पंचमेश हो, सप्तम में शनि एवं लग्नेश यदि बुध से युक्त हो तो (३) लग्न में व्ययेश युक्त षष्ठेश हो और पंचम में बुध, चन्द्र तथा मङ्गल हो तो मातुल (मामा) के शाप से पुत्र नाश होता है।

देवता तथा ब्राह्मण के शाप से पुत्रनाश के योग :—

पुत्रे कुलीरेऽनिमिषे घटे हये क्रूरेक्षिते तत्र गुरौ सुतक्षयः
गीर्वाणशापादरिपेक्षितान्विते सूरौ सुतान्तः क्षितिदेवशापतः ॥ २१८॥

पञ्चम में कर्क मीन कुम्भ वा धनु राशी हो और वह पाप ग्रह से दृष्ट हो एवं गुरु से युक्त हो तो देवता के शाप से पुत्र मरण होता है। बृहस्पति यदि षष्ठेश से दृष्ट वा युक्त हो तो ब्राम्हण के शाप से पुत्रनाश होता है।

कुलदेव के दोष से पुत्रनाश के योग :—

ज्ञार्केन्दुदृष्टे रिपुगे शनैश्चरेऽहोर्वीक्षितेऽङ्गेऽथ घटैणगे भगे।
दृष्टे खलैर्वा खलवर्ग उद्गमे सन्ताननाशः कुलदेवदोषतः ॥ २१९॥

षष्ठ में शनि हो और वह बुध, सूर्य तथा चन्द्र से दृष्ट हो एवं लग्न पाप दृष्ट हों तो (१) कुम्भ वा मकर में सूर्य हो और वह पाप दृष्ट हो एवं लग्न में पापवर्ग हो तो कुलदेव के दोष से पुत्रनाश होता है।

शत्रु दोष तथा दुर्दैव पीडा से नाश के योगः—

सारे धीशेऽरीशदृष्टेऽमर्तां दृङ्गक्के शत्रोर्दोषतो नन्दनान्तः।
पुर्वास्तेशोः सारगुर्व्वोः कुदेवपीडातः स्यात्पुत्रपुत्रीविनाशः॥ २२०॥

पञ्चम स्थान का स्वामी यदि मङ्गल से युक्त हो, षष्ठेश से दृष्ट हो और शुभ दृष्ट न हो तो शत्रु के दोष से पुत्र की मृत्यु होती है। पञ्चमेश तथा सप्तमेश ये दोनों मङ्गल तथा गुरु से युक्त हो तो दुष्ट देवता की पीडा से पुत्र तथा पुत्री का नाश होता है।

सूर्यादि ग्रहों के सन्तान प्रतिबन्धत्व के कारण का परिज्ञानः—

द्रोहात्खगेशशिवयोः पितृशापतश्च
भानोर्विधोर्भगवतीजननीवधूनाम्।
कोपात्तथा हृदयदोषवशाद्धलाजे
स्वग्रामदेवरिपुबन्धुगुहोत्थदोषात्॥ २२१॥

हेम्ने बिडालवधतः किमु बालशापा-
द्दोषात्तथा मधुरिपोर्धिषणे द्विजानाम्।
द्रोहाद्गुरोर्जनपरम्परयाऽमराणां
ये वल्लभा मनुभुवोऽत्र तदुत्थदोषाम्॥ २२२॥

छेदात्फलान्विततरोरथ दानवेज्ये
विच्छेदनात्कुसुमभूमिरुहस्य सत्याः।
यक्ष्याश्च गोकुलजदोषत आत्मजो नो
मन्दे रुषा पितृपतेश्च पिशाचपूर्वैः॥ २२३॥

प्रेतैश्च पिप्पलवधादुरगे सुतस्थे
सन्तानपेन सहिते भुजगस्य शापात्।
केतौ धराविबुधदोषत आर्किसूनौ
प्रेतोत्थदोषयजतोऽब्जभयोः समान्योः॥ २२४॥

गोस्त्रीवधात्सगुलिके धिषणे ध्वज वा
पुत्रालये वदतु भूसुरहन्तिमेभिः।
उक्तैरथैर्भवति सन्ततिवर्जितोऽस्मा-
त्सन् दोषकृद्विविषदां प्रकरोतु शान्तिम्॥ २२५॥

'सूर्य' यदि सन्तान बाधक हो तो गरुड तथा श्रीशिवाजी के द्रोह से एवं पितृ शाप से सन्तान की हानि होती है। चन्द्रमा हो तो भगवती (उमा), माता तथा स्त्रियों के कोप तथा हृदय दोष से सन्तान की हानि होती है।

मङ्गल हो तो अपने ग्राम देवता, शत्रु बन्धुजन और कार्तिकेय क दोषसे सन्तान की हानि होती है । बुध हो तो बिडाल मारने से बालकों के शाप से तथा श्रीविष्णु भगवान् के दोष से सन्तान हानि होती है । गुरु हो तो ब्राह्मण तथा गुरु के दोह से, जन परम्परा स देवताओं के सेवकों से उत्पन्न दोष से एवं फल युक्त वृक्ष के काटने से सन्तान नहीं होती है। शुक्र हो तो पुष्प तथा वृक्ष के काटने से सती, यक्षी तथा गोकुल के दोष से सन्तान नहीं होती है। शनि हो तो यम के दोष से पिशाच्च इत्यादि से, प्रेतों से और पिप्पल के काटने से सन्तति नहीं होती है। पञ्चम में राहु हो और वह पञ्चमेश से युक्त हो तो सर्पके शाप से सन्तति नहीं होती है । पञ्चम मे केतु हो तो ब्राह्मणों के दोष से सन्तान नहीं होती है। पञ्चम में गुलिक हो तो प्रेत के दोष से एवं शुक्र चन्द्रमा ये दोनों गुलिक से युक्त हों तो गौ तथा स्त्री के वध से सन्तान नहीं होती है। पंचम में गुरु वा केतु हो और वह गुलिक से युक्त हो तो ब्राह्मण की हत्या से सन्तान नहीं होती है। उक्त पापों से मनुष्य की सन्तान का प्रतिबन्ध होता है। अतएव दोष कारक ग्रहों की शान्ति करे।

सन्तान की मृत्यु के कारण का परिज्ञान :—

सुतात्क्षयेऽर्के ज्वरतः प्रपीडनं शिशोः शशाङ्के जलशीतदोषतः ।
शस्त्रेण वक्रे विदि शीतलामयाद्विषोरगाद्देवपुरोहिते सिते ॥ २२६ ॥
पशोश्च बालग्रहतोऽर्कनन्दने वृक्षाद्भुजङ्गेशि विकारतो गुदे ।
तथात्मजान्निधनगे नभोमणौ बालस्य मृत्युः प्रसवावसानके ॥ २२७ ॥
षण्मासतो वा परतो वधे विधौ पौगण्डकेऽस्त्रे निधनं द्रुतं शिशोः ।
नष्टः कुमारे करपीडनाद्गुरौ कैशोरके यौवन आस्फुजिद्ग्रहे ॥ २२८ ॥
स्यान्मध्यभागात्परतः शनैश्चरे गर्भप्रणष्टोऽसुर आयुधैर्ध्वजे ।
एवं विचार्य्य द्युसदां बलाबलं तेषां फलं जातकवेदिनो विदुः ॥ २२९ ॥

पंचम से अष्टम में सूर्य हो तो बालक को ज्वर से पीडा, चन्द्रमा हो तो जल तथा शीत जन्य कष्ट, भौम हो तो शत्रुजन्य कष्ट, बुध हो तो शीतल रोग, गुरु हो तो विष तथा सर्पजन्य कष्ट, शुक्र हो तो पशुजन्य कष्ट, शनि हो तो बाल ग्रह जन्य कष्ट, राहु हो तो वृक्षजन्य कष्ट एवं केतु हो तो विकार से बालक को पीडा होती है। यदि पंचम स्थान से अष्टम में सूर्य हो तो प्रसव के अन्त में छःमास में आठ मास में बालक की मृत्यु, चन्द्रमा हो तो पौगण्डावस्था में बालक की मृत्यु, भौम हो तो बालक की शीघ्र मृत्यु, बुध हो तो विवाह से परे बालक की मृत्यु गुरु हो तो किशोर अवस्था में बालक की मृत्यु, शुक्र हो तो युवावस्था में मृत्यु, शनि हो तो मध्यावस्था से परे मृत्यु, राहु हो तो गर्भ में मृत्यु और केतु हो तो शस्त्र से बालक की मृत्यु होती है । इसप्रकार ग्रहों के बलाबल को विचार कर उन के फलादेश को कहे ।

मतान्तर से सन्तान की मृत्यु के कारण का परिज्ञान :—

यदाऽऽत्मनीने विबले विषाज्ज्वरात्पित्तामयाद्गर्भनिपाततनात्किमु ।
स्यात्सन्ततेर्नाशनमारखेचरे व्रणेन शस्त्रेण च रक्तपीडनात् ॥ २३० ॥
तत्रार्कपुत्रे किमु दानवेश्वरे स्याच्चेतनान्तः कृमिणा कृशानुना ।
पाषाणतः पर्वतसम्भवात्किमु कीलालदोषादुत दारुहेतुतः ॥ २३१ ॥

पंचम में निर्बल सूर्य हो तो विषज्वर पित्तरोग वा गर्भ पात से एवं भौम हो तो व्रण शस्त्र वा रक्तविकारसे, पंचम में शनि वा राहु हो तो कृमि अग्नि पाषाण पर्वत जल दोष वा काष्ठ से बालक की मृत्यु होती है।

सन्तति मरण समय परिज्ञानः—

चिन्नाथकारकसमेतनिरीक्षका ये
ते दुर्बलास्त्रिकभपास्त्रिकगा यदि स्युः।
तद्दायभुक्तिसमये नियतं नरस्य
वैवस्वतस्य सदनं समुपैति बालः ॥२३२॥

पुत्रस्थानेश, पुत्र कारक, पुत्रयुक्त तथा पुत्रदर्शी इन चारों के मध्य में जो दुर्बल हों एवं त्रिकेश होकर त्रिकस्थान में हो तो उन की दशा के समय वा अन्तर्दशा के समय में मनुष्य का बालक मृत्यु को प्राप्त होता है।

धीशकारकयुतेक्षकग्रहस्पष्टयोगगृहभागसङ्गते।
गोचरेण तपनात्मजे यदा नन्दनस्य निधनं तदा वदेत् ॥ २३३ ॥

पंचमेश, पंचम कारक, पंचम युक्त तथा पंचम दर्शी इन सब ग्रहों के राश्यादि स्पष्टों के योग करने से जो राशि तथा नवांश हो जब उस में गोचर से शनि आवे तब पुत्र की मृत्यु को कहे।

सन्तान प्रतिबन्धक रवि शान्तिः—

सन्तानप्रतिबन्धके खतिलके सन्तानभावं गते
वारेऽर्कस्य च वेदपाठकरणं न्यग्रोधवृक्षार्चनम्।
अश्वत्थार्चनमत्र वेदकथितं दानं व्रतं त्र्यम्बकं
जाप्यं वा हरिवंशकश्रवणतः सन्नन्दनं विन्दतु ॥ २३४ ॥

सन्तान प्रतिबन्धक वा सन्तानभाव में सूर्य हो तो रविवार के दिन वेद पाठ वटवृक्ष तथा पिप्पल की पूज वेदोक्त दान व्रत त्र्यम्बक जप वा हरिवंश की कथा के श्रवण से उत्तम पुत्र की प्राप्ति होती है।

सन्तान प्रतिबन्धक चन्द्र शान्तिः—

सूनौ क्षीणनिशापतौ हरिदिने भूदेवतास्तर्पयेद्
गोश्वेताम्बरहेमधान्यसहितं मुक्ताफलेनान्वितम्।
देयं ब्राह्मणपुङ्गवाय सततं सन्तानगोपालक-
मंत्राराधनतो व्रतात्पशुपतेर्यंत्रौषधान्मंत्रतः ॥ २३५ ॥

पंचम में क्षीण चन्द्रमा हो तो हरिवासर में ब्राह्मणों को भोजनादि से सन्तुष्ट करे। एवं गौ, श्वेतवस्त्र, सुवर्ण धान्य और मोती इत्यादि ब्राह्मणों को दे। नित्य सन्तान-गोपाल मंत्रका जप, श्रीशिवव्रत, यंत्र ओषध तथा मंत्र जप करने से उत्तम पुत्रकी प्राप्ति होती है।

सन्तान प्रतिबन्धक भौम तथा बुध शान्तिः—

कुर्य्यात्पार्थिवपूजनं प्रतिदिनं कार्या च रुद्रीक्रिया
स्थाणोश्चेदभिषेचनं व्रतकरं गौर्य्यर्चनं मङ्गले।
चान्द्रिर्यच्छति सन्ततिं सुतगतो मृत्युञ्जयाराधना-
न्नित्यं सम्पुटकांस्यभाजनमुखत्यागात्सुवर्णस्य च ॥ २३६ ॥

सन्तान बाधक भौम हो तो नित्य पार्थिव पूजन रुद्रीक्रिया रुद्राभिषेक व्रत वा पार्वती का पूजन करे। सन्तान बाधक बुध हो तो नित्य मृत्युञ्जयाराधन सम्पुटकांस्यपात्र दान वा सुवर्ण दान से सन्तान को देता है।

सन्तान प्रतिबन्धक गुरु प्रभृति की शान्तिः—

सूरावौषधयंत्रमंत्रमुखतः पैत्र्यातिथेः पूजनाद्
दैत्येज्ये शिवपूजनात्सुतनयो गोपालनान्मन्दगे।
चेन्मृत्युञ्जयतोऽभिषेचनमुखाच्छम्भोरहौ कन्यका-
दानात्तलगतेऽकचे तु कपिलादानात्सुताप्तिं वदेत् ॥ २३७ ॥

सन्तान प्रतिबन्धक गुरु हो तो औषध यंत्र मंत्रादि पितृपूजन वा अतिथि पूजन से सन्तान होती है। सन्तान प्रतिबन्धक शुक्र हो तो शिव पूजन वा गोपालन से उत्तम पुत्र होता है। सन्तान प्रतिबन्धक शनि हो तो मृत्युञ्जयजप वा रुद्राभिषेक से सन्तान होती है। एवं राहु हो तो कन्या दान से और केतु हो तो कपिला गौ के दान से पुत्र की प्राप्ति कहे।

सन्तानप्रतिबन्धक समस्त ग्रह शान्तिः—

सर्वे ग्रहा दोषकरा यदोद्भवे तद्दोषशान्त्यै भगभूसुवोर्व्रतम्।
कुर्य्याद्विधानात्किमु पञ्चसायकव्रतं भवेत्तेन सुसन्ततेर्जनिः ॥ २३८ ॥

जब जन्म समय में समस्त ग्रह सन्तान प्रतिबन्धक हों तो उन के दोष शान्ति के लिए विधान से सूर्य मङ्गल वा कामदेव का व्रत करे तब उत्तम सन्तान का जन्म होता है।

मतान्तर से सन्तानप्रतिबन्धकग्रहों की शान्तिः—

दोषे सुधास्रत्कविकोविदानां गङ्गाधराराधनतः सुताप्तिः।
पत्युर्गिरामौषधयंत्रमंत्राद्दोषे परेषां निजवंशपार्चा ॥ २३९ ॥

चन्द्र, शुक्र तथा बुध सन्तानप्रतिबन्धक हों तो श्री शिवजी के पूजनादि से पुत्र की प्राप्ति होती है। सन्तान प्रतिबन्धक गुरु हो तो औषध सेवन से यंत्र से वा मंत्र से पुत्र प्राप्ति होती है। एवं अन्यग्रहों के सन्तान प्रतिबन्धक होनेपर कुल-देवता की पूजा करे तब पुत्र प्राप्ति होती है।

पौत्रप्राप्ति योगः—

पुत्रात्पत्न्यां पुण्यर्क्षांशे तल्पे पुण्यैर्युक्ते दृष्टे।
पुत्रे पुण्ये केन्द्रे किं वा पौत्रप्राप्तिस्तज्ज्ञैर्वाच्या ॥ २४० ॥

पञ्चम से जो सप्तम स्थान हो उस में अर्थात् लाभ भाव में शुभ ग्रह की राशि तथा नवांश हो और पंचम नवम वा केन्द्र में लाभेश हो और वह शुभ ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो पण्डितजनों ने पौत्र की प्राप्ति कहनी चाहिए।

बुद्धि चिन्ता तथा बुद्धिमद् योगः—

चेतनां चिन्तयेच्चन्द्रजाच्चात्मजाच्चेतनामन्दिरे रम्यभे सद्दृशि
सामले तद्विभौ निर्मले किं गुरौ कण्टके दीक्षणे दारके बुद्धिमान् ॥ २४१ ॥

बुध तथा पञ्चम भाव से बुद्धि का विचार करे। पञ्चम में शुभ ग्रह की राशि हो, शुभ ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो और शुभ ग्रह पञ्चमेश हो अथवा केन्द्र वा त्रिकोण में गुरु हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बुद्धिमान् होता है।

प्रजापतौ स्वोच्चगते सदन्तरे वार्ये सुते सद्भवने सुते शि वा
चितीन्दुजे वाक्पतिभार्गवेक्षिते तथाविधे धीदयितेऽथ धीधवे ॥ २४२ ॥
बुधे च भावेऽमलखेटमध्यगे तत्र स्थिते शक्रपुरोहिते किमु।
सत्स्वर्थलेखात्मगतेषु वाऽमलैश्चिद्रैः सशौर्य्यैर्निजतुङ्गगैस्तथा ॥ २४३ ॥

स्वोच्च राशि में तथा शुभ ग्रहों के अन्तराल में पञ्चमेश हो तो (१) पञ्चम में गुरु और शुभ राशि में पञ्चमेश हो तो (२) पञ्चम में बुध हो और वह गुरु शुक्र से दृष्ट हो एवं पञ्चम में पञ्चमेश हो और वह गुरु शुक्र से दृष्ट हो तो (३) पञ्चमेश, बुध तथा पञ्चम भाव ये तीनों शुभग्रहों के अन्तराल में हो और पञ्चम में गुरु हो तो (४) द्वितीय, लग्न तथा पञ्चम में शुभ ग्रह हो तो (५) पञ्चम में स्वोच्च गत बली शुभ ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बुद्धिमान् होता है।

सद्भे सुते तद्रमणे सुखेटे सद्व्योमसद्दृग्वति शेमुषीमान्।
खचिद्धिधीशाः स्वगृहेऽधिवीर्य्यवशात्सुधीस्तद्धृतिदायकाले ॥ २४४ ॥

पञ्चम में शुभग्रह की राशि हो और वह शुभदृष्ट हो तो भी बुद्धिमान् होता है। दशम, पञ्चम तथा नवम इन तीनों स्थानों के स्वामी यदि स्वराशि में हों एवं उन में जो अधिक बली हो उस के बल के वश से उस की अन्तर्दशा वा दशा में मनुष्य की उत्तम बुद्धि होती है।

तीव्र बुद्धि योगः—

स्वामीक्षिते संविदि शोभनान्तरे तस्मिन्विहङ्गे परमोच्चभागगे।
किं कारके वीर्य्ययुते शुभेक्षिते तत्पे सुते सौम्य उतात्मपेक्षिते ॥ २४५ ॥
चेत्कारकस्थांशभपे चतुष्टये कोणेऽथ सूनौ सशुभे सदन्तरे।
किं धीशगांशर्क्षपतौ सदीक्षिते वैशेषिकांशे यदि तीव्रबुद्धिमान् ॥ २४६ ॥

पंचम स्थान यदि अपने स्वामी से दृष्ट हो, शुभ ग्रहों के अन्तराल में हो और परमोच्च राशिगत ग्रह से युक्त हो तो (१) बुद्धिकारक ग्रह बली हो, पञ्चमेश यदि शुभ दृष्ट हो और पंचम में शुभ ग्रह हो तो (२) केन्द्र

वा त्रिकोण में बुद्धिकारक (गुरु) के नवांश तथा राशी के स्वामी हों और वे पंचमेश से दृष्ट हों तो (३) पंचम स्थान यदि शुभ युक्त हो तथा शुभ ग्रहों के अन्तर में हो तो (४) पंचमेश के नवांश तथा राशि के स्वामी यदि वैशेषिकांश में हों और वे शुभ दृष्ट हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष तीव्र बुद्धिवाला होता है।

मेधावी प्रभृति योगः—

मेधावी च परेङ्गितज्ञ उदितश्चेत्कारकस्थांशपे
दृष्टे कारकखेचरेण गुरुचित्केन्द्रे किमूर्जान्विते।
धीशे सार्य्यबुधेऽङ्ककेन्द्रधिषणास्थे वा शुभेनेक्षिते
सौम्ये नायककारकस्थितलवत्र्यंशाधिपे कण्टके ॥ २४७ ॥

चित्यङ्केऽथ स धारणादिकपटुर्धीनायकः कारक-
स्तौ मृद्वंशमुखे च गोपुरलवे दृष्टौ सुखेटैरथो।
भव्यव्योमचरान्विते मतिपतौ तुङ्गद्युसत्संयुते
केन्द्रस्थे ग्रहणादिके पटुतरो जातस्तदानीं जनः ॥ २४८ ॥

त्रिकोण वा केन्द्र में बुद्धिकारक (गुरु) के नवांश का स्वामी यदि बुद्धिकारक ग्रह से दृष्ट हो तो (१) केन्द्र वा त्रिकोण में बली पंचमेश हो और वह बुध गुरु से युक्त हो तो (२) पंचमेश तथा बुद्धिकारक इन दोनों के नवांश तथा द्रेष्काण के स्वामी यदि शुभ ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष मेधावी (धारणावती बुद्धिवाला) पर इङ्गित वेत्ता (दूसरे के अभिप्राय को उस की चेष्टा से समझनेवाला) होता है। मृद्वंशादि तथा गोपुरांश में पंचमेश तथा बुद्धिकारक ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट हो तो धारणादि में अतीव चतुर होता है। केन्द्र में पंचमेश हो और वह शुभ ग्रह तथा उच्च राशिगत ग्रह से युक्त हो तो ग्रहणादि के गणित में चतुर होता है।

बुद्धि हीन योगः—

ऐन्द्रीलग्ने ग्लावि नीलांशुकेलाभूदृष्टे वाऽदृश्यगे शेमुषीशे।
दुःस्थे यद्वा धीविभौ क्रूरषष्ठिभागे याते जायते हीनधीर्ना ॥ २४९ ॥

लग्न में चन्द्रमा हो और वह शनि मङ्गल से दृष्ट हो तो (१) त्रिक में अदृश्य भाग गत पंचमेश हो तो (२) क्रूर षष्ठ्यंश में पंचमेश हो तो उक्त योगों में मनुष्य बुद्धि हीन होता है।

पौरं प्राप्ते मङ्गले मन्दगामितारारजान्योर्भामिनीभस्थयोर्वा।
पृथ्वीपुत्रे पुष्पवन्मध्यगे वा राज्येऽस्तेऽस्त्रेन्द्वोः शरीरस्थयोर्वा ॥ २५० ॥
लेखेशेन्द्वोर्भूसुवाऽऽक्रान्तयोश्चेत्तारापुत्रेऽप्युद्गमे वार्कसौरी।
सौम्यादृष्टौ क्रूरदृष्टौ रिपुस्थावेकर्क्षे वैकांशके बुद्धिहीनः ॥ २५१ ॥

लग्न में मङ्गल और सप्तम में शनि चन्द्र हो तो (१) सूर्य तथा चन्द्रमा के मध्य में यदि बुध हो तो (२) सप्तम में बुध और लग्न में मङ्गल चन्द्र हों तो (३) लग्न तथा चन्द्रमा यदि मङ्गल से आक्रान्त हों एवं

लग्न में बुध भी हो तो (४) षष्ठ में एक राशिगत वा एक नवांश गत सूर्य तथा शनि हों और वे पाप दृष्ट हो एवं शुभ दृष्ट न हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बुद्धि से हीन होता है।

घने विदैन्यो रुधिरे स्मरे वा क्षते क्षये ऽस्तङ्गत आत्मजेशे।
प्रबन्धभं पापयुतेक्षितं वा धीभं परित्यज्य सपत्नभस्थः॥ २५२॥

विनष्टवीर्य्यो ऽस्तमुपैति धीशः किं साधिकारे नभसीनजाते।
मूर्त्तौ मृगांके मनसीन्दुपुत्रे मत्या वियुङ् मानव एषु जातः॥ २५३॥

लग्न में बुध शनि हों और सप्तम में मङ्गल हों तो (१) षष्ठ वा अष्टम में अस्तङ्गत पंचमेश हो और पंचम स्थान पाप युक्त दृष्ट हो तो (२) पंचम भाव को छोडकर अन्यस्थान में शत्रुराशिगत अस्तंगत वा नष्टबली पंचमेश हो तो (३) दशम में अधिकार युक्त शनि हो, लग्न में चन्द्रमा और सुख में बुध हो तो उक्त योगों में मनुष्य बुद्धिहीन होता है

विह्वल बुद्धि योगः—

सपत्नदृष्ट्या परिपश्यतीनो भूभावगं भूतनयं किमङ्ग।
ग्लौहेलिजौ ज्ञः परिपूर्णदृष्ट्या पश्येदथानङ्गगते पतङ्गे॥ २५४॥

सहासृजा मूसरिफे ऽथ पूर्णचन्द्रे मृदोर्मूसरिफे किमङ्गम्।
तन्नायकं चोग्रयुतं सदीक्षामुक्तं प्रपश्यन्त्यशुभग्रहा वा॥ २५५॥

दिवांशुमन्तं च तदीयभेशं नक्तं भपं तद्भवनेशमुग्राः।
पश्यन्ति सम्पूर्णदृशा ऽथ शुक्ले चापेत्थसिस्थं जलगोलमूर्त्तिम्॥ २५६॥

पृथ्वीसुतः पश्यति वा सवक्रविधौ घने वा परिपन्थिदृष्ट्या।
निरीक्ष्यमाणे गगनोल्मुकेन चकोरबन्धौ मतिविह्वलः स्यात्॥ २५७॥

चतुर्थ में स्थित भौम को सूर्य यदि शत्रु दृष्टि से देखता हो तो (१) लग्न गत चन्द्र शनि को यदि बुध पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो (२) सप्तम भावगत सूर्य यदि मङ्गल के साथ इसराफ करे तो (३) पूर्ण चन्द्रमा शनि के साथ इसराफ करे तो (४) लग्न तथा लग्नेश को पाप ग्रह देखते हों तो (५) दिन के जन्म में सूर्य तथा सूर्य-राशि स्वामी को एवं रात्रि के जन्म में चन्द्रमा और चन्द्रराशि स्वामी को पाप ग्रह यदि पूर्ण दृष्टि से देखते हों तो (६) शुक्ल पक्ष में जन्म हो और धनु वा मीन में चन्द्रमा हो एवं वह मङ्गल से दृष्ट हो तो (७) लग्न में मङ्गल युक्त चन्द्रमा हो वा चन्द्रमा को मङ्गल यदि शत्रुदृष्टि से देखता हो तो बुद्धिविह्वल होता है।

लेखालयेशि विकले विकलग्रहेन्द्र-
दृष्ट्या युते विकलखेचरभागयाते।
धीनायकस्य विकलस्य निकेतनस्थे
किं कल्पपे खलयुते ऽस्तमिते ऽहितस्थे॥ २५८॥

प्रज्ञाधिपे गदगते ऽस्तमिते ऽथ धीशे-
ऽरावस्तगे खलनिपीडित उद्गमेशे।
किं ध्यङ्गपौ व्ययगृहे द्विषि नष्टभागे-
ऽथास्तङ्गते ऽरिलयगे ऽङ्गजपे ऽङ्गनाथे ॥ २५९ ॥

आग्नेयभाजि मतिगे ऽधरभस्थखेटे
जातो जनो विकलधीः कथितः सुधीभिः।
धीकारके सदुरितान्वयवीक्षणे ऽस्त-
नीचारिभे भवति विस्मृतिपूर्विका धीः ॥ २६० ॥

लग्नेश यदि विकल (अस्तगत) हो, विकल ग्रह से दृष्ट हो, विकल ग्रह के नवांश में हो एवं विकल पञ्चमेश की राशि में लग्नेश हो तो (१) सुख में पाप युक्त लग्नेश हो और वह अस्तगत हो एवं षष्ठ में अस्तगत पञ्चमेश हो तो (२) षष्ठ में अस्तगत पंचमेश हो और लग्नेश क्रूराक्रान्त हो तो (३) व्यय वा षष्ठ में पंचमेश तथा लग्नेश हों और वे नष्टांश में हों तो (४) षष्ठ वा अष्टम में पंचमेश तथा लग्नेश हों और वे क्रूर युक्त हों तथा अस्तगत हों एवं पंचम में नीच राशि गत ग्रह हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष विकल बुद्धिवाला होता है। यदि बुद्धिकारक ग्रह (गुरु) पाप ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो और वह अस्तगत नीच राशिगत वा शत्रुराशिगत हो तो विस्मृति बुद्धि वाला होता है।

भ्रम बुद्धि योगः—

मेधाङ्गेशौ क्रूरयुक्तौ विनष्टौ रन्ध्रारिस्थौ वा ऽधरारातिभस्थैः।
प्रज्ञापालज्ञार्य्यकाव्यैरसौम्यैर्धीस्थैः किं वा कल्पपे नन्दनस्थे ॥ २६१ ॥
सोग्रे नीचे हीनवीर्य्ये नवांशनाथे नष्टे नन्दनागारनाथे।
अस्तं प्राप्ते नष्टवीर्य्ये विनष्टे ऽन्त्ये ऽरौ दृष्टे ऽघैर्भ्रमज्ञप्तिभाक् स्यात् ॥ २६२ ॥

अष्टम वा षष्ठ में क्रूर युक्त पञ्चमेश लग्नेश हों और वे विनष्ट हों तो (१) पंचमेश, बुध, गुरु तथा शुक्र ये चारों शत्रुराशिमें वा नीच राशि में हों एवं पंचम में पाप ग्रह हो तो (२) पंचम में पाप युक्त लग्नेश हो और वह नीच राशि में हो तथा हीन बली हो एवं लग्न गत नवांश का स्वामी नष्ट हो और षष्ठ वा व्यय में अस्तगत पंचमेश हो और वह नष्टबली हो, विनष्ट हो एवं क्रूरदृष्ट हो तो भ्रमबुद्धि वाला होता है।

बुद्धिनाश के योगः—

मेधास्थाने मेघयानार्चितांघ्रौ मेधानाशो नन्दने पङ्कयुक्ते।
युक्ते ऽभव्यव्योमवासैस्तदिन्द्रे क्रूराकारारातिभागप्रयुक्ते ॥ २६३ ॥
बुद्ध्या नाशः सन्ततौ तत्पतौ च क्रूरव्योमाङ्गांशयाते ऽस्तयाते।
नीचर्क्षे वा वैरिराशिं गते वा क्रूरैः खेटैर्वीक्षिते तद्वदेव ॥ २६४ ॥

पंचम में गुरु हो तो मेधा (धारणावती बुद्धि) का नाश होता है। पंचम में पाप ग्रह हो, पंचमेश पापयुक्त हो और क्रूरषष्ठ्यंश में हो तो बुद्धिका नाश होता है। पंचम में क्रूरषष्ठ्यंश हो एवं पंचमेश भी क्रूरषष्ठ्यंश में हो अस्तगत हो नीच राशि में हो शत्रु राशि में हो वा पापदृष्ट हो तो बुद्धिनाश होता है।

चञ्चल बुद्धि प्रभृति योगः—

कोणाङ्ग उष्णोस्रहिमत्विषोः किमु केन्द्रेऽर्चिते चञ्चलधीः खपेऽबले ।
तथोग्रदृष्टेऽबलविद् धने चलस्वान्तोऽथ देहे व्ययपे सुवाग्भवेत् ॥ २६५ ॥

त्रिकोण वा लग्न में सूर्य तथा चन्द्रमा हों तो (१) केन्द्र में गुरु हो तो उक्त योगों में चञ्चलबुद्धि वाला होता है। दशमेश निर्बल हो तो भी चञ्चल बुद्धि वाला होता है। धन में निर्बल बुध हो और वह पाप दृष्ट हो तो चञ्चल हृदय वाला होता है। लग्न में व्ययेश हो तो सुन्दर वाणी वाला होता है।

जड योगः—

मन्देन्द्वर्कैः केन्द्रगैः किं गिरीनमान्द्योः पापैर्दृष्टयोर्वा भुजेशे ।
सव्यालेशे वा सपङ्गौ किमार्कौ मंत्रेऽङ्गेशे मन्ददृष्टे तदीशे ॥ २६६ ॥

अंहोदृष्टे वात्मजे सार्किमान्दिव्यालेशे सद्वर्जितेऽसाधुदृष्टे ।
तत्पेऽथो धीकारकेऽभव्ययुक्ते सोग्रे तत्पे क्रूरषष्ठ्यंशके वा ॥ २६७ ॥

हीनेऽङ्गेशे वाऽशुभैः सोमयुक्तैः सौम्यादृष्टे सन्धिगैर्वाऽवसाने
आचार्य्येशेऽर्थेऽन्त्यपे विक्रमस्थैश्चेदाग्रेयैरेषु जन्तुर्जडः स्यात् ॥ २६८ ॥

केन्द्र में शनि, चन्द्र तथा सूर्य हों तो (१) धन में पाप दृष्ट सूर्य गुलिक हों तो (२) तृतीयेश यदि राहु-से वा शनि से युक्त हो तो (३) पंचम में शनि हो और वह लग्नेश को देखता हो एवं पंचमेश पाप दृष्ट हो तो (४) पंचम में राहु, शनि तथा गुलिक हों और वे शुभ युक्त न हों एवं पंचमेश पापदृष्ट होतो (५) बुद्धि-कारक पाप युक्त हो और बुद्धि स्थान का स्वामी यदि पाप युक्त हो वा क्रूरषष्ठ्यंश में हों तो (६) लग्नेश निर्बल हो तो (७) सन्धि में चन्द्र युक्त पाप ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो (८) व्यय में भाग्येश, धन में व्ययेश और तृतीय में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य जडबुद्धि (महामूर्ख) होता है।

सभा जड योगः—

कुटुम्बभावभर्त्तरि क्रियानिकेतगे यदा ।
अरम्यखेचरान्विते तदा जनः सभाजडः ॥ २६९ ॥

दशम में धनेश हो और वह पाप युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य सभाजड अर्थात् सभा में कुछ न बोलसकने वाला होता है।

मूर्ख तथा महामूर्ख योगः—

ग्लौर्लोकितो मिहिररक्तयमैः किमुग्रै-
र्धीभावगैरहितनीचभगैश्च मूर्खः
क्रूरः शुभः किमु विवीर्य्यविनष्टतेजा
नीचे प्रसूतिगृहगो जनितोऽतिमूर्खः ॥ २७० ॥

चन्द्रमा को यदि मङ्गल, सूर्य तथा शनि ये तीनों देखते हों तो (१) पंचम में शत्रुराशिगत वा नीच राशि गत पापग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष मूर्ख होता है। पंचम में पापग्रह वा शुभग्रह हो और वह नीच राशि में हो निर्बल हो तथा विनष्ट तेज हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष महामूर्ख होता है।

मन्देन्दुहेलिफणिनामपि पञ्चमस्थ
एको विनष्ट उदरालयपोऽतिमूर्खः।
पातङ्गिपन्नगभगैः सहितप्रदृष्टे
नष्टङ्गते मतिपतौ जनितोऽतिमूर्खः ॥ २७१ ॥

शनि, चन्द्र, रवि तथा राहु इन चारों के मध्य में एक भी पंचम स्थान में हो और पंचमेश विनष्ट हो तो महामूर्ख होता है। पंचमेश यदि शनि, राहु तथा सूर्य से युक्त वा दृष्ट हो और वह विनष्ट हो तो भी महामूर्ख होता है।

क्षिप्रोत्तरदानशीलप्रभृति योगः—

विद्ग्लाविलाजैर्बलिभव्यखेटदृष्टैस्तदाऽऽशूत्तरदानशीलः।
धीशे सपापेऽथ शशीक्षितेऽच्छे त्रिकेऽथ धीकारक उग्रयुक्ते ॥ २७२ ॥
किं दुर्वियद्रागलवोपयाते जातस्तदा विस्मयशील एषु।
निशीथिनीनाथसुते सहोत्थनाथान्विते जन्मनि सात्त्विकः स्यात् ॥ २७३ ॥

बुध, चन्द्र तथा भौम ये तीनों बली शुभ ग्रह से दृष्ट हों तो शीघ्र उत्तर देने वाला होता है। पंचमेश यदि पापयुक्त हो तो (१) त्रिक में शुक्र हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट हो तो (२) बुद्धि कारक ग्रह यदि पाप युक्त हो अथवा क्रूरषष्ठ्यंश में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य विस्मयशील होता है। 'बुध' यदि तृतीयेश से युक्त हो तो मनुष्य सात्त्विक स्वभाव वाला होता है।

पण्डित तथा राजा के रञ्जन के योगः—

आदित्येनालोकितौ लोहिताङ्गतारापुत्रौ कुम्भकुम्भीरगौ वा।
सद्भे चान्द्रावावनेयेन युक्ते विद्वद्भूभृद्रञ्जने पेशलः स्यात् ॥ २७४ ॥

कुम्भ वा मकरराशि में मङ्गल तथा बुध हों और वे सूर्य से दृष्ट हो तो (१) शुभ ग्रह की राशि में मङ्गल युक्त बुध हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पण्डित तथा राजा ओं के मनोरञ्जन करने में चतुर होता है।

हास्यासक्त योगः—

ज्ञे लेखायां लेखवन्द्ये द्युनेऽथो मन्दागारे रौहिणेयासृजौ वा
ज्ञांशे लग्ने वामरेज्ये विराड्भे हास्यासक्तः सम्भवः सम्प्रदिष्टः ॥ २७५ ॥

लग्न में बुध और सप्तम में गुरु हो तो (१) शनि की राशि में बुध तथा मङ्गल हों तो (२) लग्न में बुध का नवांश हो तो (३) 'गुरु' यदि क्षात्रिय (मेष सिंह वा धनु) राशि में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष हास्य में आसक्त होता है।

परिहास तथा विप्रलम्भ योगः—

सोऽर्जे निधाने भगभागभर्त्तरि वैशेषिकांशे परिहासकृन्नरः ।
स्याद्विप्रलम्भः स्वपभेशगांशपे पङ्गौ कुजे सासति कोणकण्टके ॥ २७६ ॥

धन में सूर्याधिष्ठितनवांश राशि का स्वामी हो और बली हो तथा वैशेषिकांश में हो तो परिहास करने वाला होता है। द्वितीयेश की राशि के स्वामी के नवांश का स्वामी यदि मङ्गल वा शनि हो और वह पाप युक्त होकर केन्द्र वा त्रिकोण में हो तो विप्रलम्भ (झगडा करने वाला) होता है।

विद्यायुक्त योगः—

विद्यागारे परिवृढयुते युक्तदृष्टे सुखेटै-
र्यद्वा राज्ये ऽधिबलकलिते ऽथो त्रिकोणे च केन्द्रे ।
विद्याधीशामरगुरुबुधैः स्वोच्चगैः स्वर्क्षगैर्वा
जातो विद्याविनयसहितो राजराजप्रियश्च ॥ २७७ ॥

विद्यास्थाम (पंचम भाव) अपने स्वामी से युक्त हों एवं शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) यदि बुध अतीव बली हो तो (२) विद्यास्थानेश, गुरु तथा बुध ये तीनों स्वराशि में वा स्वोच्चराशि में हो और वे त्रिकोण वा केन्द्र में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष विद्या तथा विनय से युक्त एवं राजाधिराज का प्रियपात्र होता है।

विद्याहीन योगः—

विद्याभेशे ऽककलिगदगे गर्हितैर्दृष्टयुक्ते
क्रूरर्क्षे वा सहजसदने द्वादशे नैधने ऽरौ ।
विद्यास्थानाधिपगुरुविदो नीचभे वा ऽरिराशौ
मर्त्यो विद्यामतिविरहितो वा विवेकेन हीनः ॥ २७८ ॥

त्रिक में पाप राशि गत विद्यास्थानेश हो और वह पाप ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो तो (१) तृतीय में वा त्रिक में नीचराशि गत वा शत्रु राशिगत विद्यास्थानेश, गुरु तथा बुध हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष विद्या तथा बुद्धि से रहित वा विवेक से रहित होता है।

वाणीहीन प्रभृति योगः—

विद्येने वा विबुधसचिवे दुष्टगे वाग्विहीनः
प्रज्ञामान्द्यं जनुषि खसदां शैशवे वार्द्धके वा ।
पातालेशे भृगुभुवि च खाङ्गद्युनाम्बागृहेषु
स्वोच्चे चान्द्रौ भवति जनितः पण्डितश्चात्र विद्वान् ॥ २७९ ॥

त्रिक में पञ्चमेश वा गुरु हो तो वाणी से रहित होता है। यदि जन्म समय में बुद्धि योग कारक बाल वा वृद्ध हो तो उक्त योग में मनुष्य की मन्द बुद्धि होती है। केन्द्र में चतुर्थेश तथा शुक्र हों और स्वोच्च राशि में बुध हो तो उक्त योग में मनुष्य पण्डित तथा विद्वान् होता है।

पण्डितः पदफले मतिपेऽथो स्वे भवे धनविभौ सुकृतज्ञः।
पण्डितश्च नियतौ चिति केन्द्रे वीर्य्यभाजि तनयेशि स विद्वान्॥ २८०॥

दशम वा एकादश में पञ्चमेश हो तो पण्डित होता है। धन वा लाभ में लग्नेश हो तो धर्म्म वेत्ता तथा पण्डित होता है। नवव पंचम वा केन्द्र में बली पञ्चमेश हो तो विद्वान् होता है।

याज्ञिक योगः—

यदा लवे शिखावता युते भमात्रलोकिते।
तदा पुरातना बुधा वदन्ति याज्ञिकोद्भवम्॥ २८१॥

कारकांश लग्न में केतु हो और वह केवल शुक्र से दृष्ट हो तो उक्त योग में याज्ञिक होता है।

मांत्रिक तथा वैद्य योगः—

कोणेंऽशतो द्विखलयोर्यदि मांत्रिकः स्याद्
द्युग्रौ लवात्पथि मतौ मलिनप्रदृष्टौ
भूतादिनिग्रहकरो जनितस्तदानीं
सद्वीक्षितेऽसति खगे पथि नन्दनेंऽशात्॥ २८२॥

जातस्त्वनुग्रहकरो लव इन्दुकाव्य-
राज्येक्षिते किमु धने भिषगिन्दुभाभ्याम्।
दृष्टेंऽशके रसभिषग् लव उग्रयुक्तौ
भानूरगौ सशुभदौ गरलस्य वैद्यः॥ २८३॥

कारकांशलग्न से पंचम तथा नवम में दो पाप ग्रह हों तो मंत्रशास्त्रवेत्ता होता है। कारकांशलग्न से त्रिकोण में दो पाप ग्रह हों और वे पाप दृष्ट हों तो भूतादि का निग्रह करने वाला होता है। कारकांशलग्न से नवम तथा पंचम में पाप ग्रह हों और उन को शुभ ग्रह देखते हों तो अनुग्रह करने वाला होता है। कारकांशलग्न को यदि चन्द्र, बुध तथा शुक्र देखते हों अथवा वे तीनों कारकांशलग्न से द्वितीय स्थान को देखते हों तो भिषक् (वैद्य) होता है। कारकांशलग्न को यदि शुक्र तथा चन्द्रमा वे दोनों देखते हो तो रसवैद्य होता है। कारकांशलग्न में सूर्य तथा राहु हो और वे शुभाशुभ ग्रहों से युक्त हो तो विषवैद्य होता है।

तार्किक तथा मीमांसक योगः—

गीर्वाणेज्यभयोः स्वतुङ्गभगयोर्मूलत्रिकोणस्थयो-
र्यद्वाऽऽरारुणदृष्टयोर्यदि तयोर्वित्तेशयोर्वांशतः।

धीसोत्थार्थगयोर्गुरुक्षितिभुवोः स्यात्तार्किको भागत-
स्तत्राचार्य्यविदोर्जनौ जनिमतो मीमांसको यस्य सः ॥ २८४ ॥

स्वराशि स्वोच्चराशि वा मूलत्रिकोण राशि में गुरु तथा शुक्र हों तो (१) कारकांशलग्न से द्वितीय स्थान का स्वामी गुरु अथवा शुक्र हो और वह मङ्गल सूर्य से दृष्ट हो तो (२) कारकांशलग्न से पंचम तृतीय वा द्वितीय में गुरु तथा मङ्गल हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष तार्किक (न्याय शास्त्री) होता है। कारकांशलग्न से पञ्चम तृतीय वा द्वितीय में गुरु तथा बुध हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष मीमांसाशास्त्र जानने वाला होता है।

ऊहापोहसमर्थ योगः—

बुद्धिकारकराशीशे पौरपालस्यदृग्वति ।
गोपुरांशे गिरां पत्या ऊहापोहसमर्थकः ॥ २८५ ॥

बुद्धिकारकग्रह की राशि का स्वामी यदि लग्नेश से दृष्ट हो एवं गोपुरांश में गुरु हो तो ऊहापोह (शङ्का समाधान करने) में समर्थ होता है।

सांख्यवेत्ता प्रभृति योगः—

सिन्धूत्थयोर्लवाद्बुद्धिधनधैर्य्येषु सांख्यवित् ।
गोपत्योस्तत्र वेदान्तसङ्गीतज्ञो नरो भवेत् ॥ २८६ ॥

कारकांशलग्न से पञ्चम द्वितीय वा तृतीय में सूर्य गुरु हो तो सांख्यशास्त्र वेत्ता होता है। एवं कारकांश लग्न से पंचम द्वितीय वा तृतीय में सूर्य गुरु हो तो वेदान्त तथा सङ्गीतशास्त्रज्ञ होता है।

वेदान्तशास्त्र वेत्ता योगः—

सिंहासनांशे सचिवे विदि स्वपे स्वतुङ्गगे गोपुरगे पतङ्गजे ।
किं केन्द्रकोणे सुरयाजकेऽथ वा पारावते मन्दगतौ महामतौ ॥ २८७ ॥

विद्दृग्वतीहाथ भ उत्तमांशगे कल्येऽथ चन्द्रेऽमरलोकगे भृगौ ।
चतुष्टये चोत्तमभागगेऽथ वा पारावतांशे गिरिने क्षतौ भृगौ ॥ २८८ ॥

हिमांशुसूनौ हरिजे स्वतुङ्गगे यद्वोदयेशे द्रविणालयाश्रिते ।
पारावतांशोपगते निधीश्वरे वेदान्तवित्पूरुष एषु जायते ॥ २८९ ॥

सिंहासनांश में गुरु, गोपुरांश में शनि और स्वोच्चराशि में धनेश बुध हो तो (१) केन्द्र वा त्रिकोण में गुरु हो तो (२) परावतांश में शनि हो और गुरु यदि बुध से दृष्ट हो तो (३) उत्तमांश में लग्न गत शुक्र हो तो (४) देवलोकांश में चन्द्रमा हो और उत्तमांश में केन्द्रगत शुक्र हो तो (५) पारावतांश में धनेश, व्यय में शुक्र और लग्न में उच्चराशिगत बुध हो तो (६) धन में लग्नेश और पारावतांश में धनेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष वेदान्तशास्त्र जानने वाला होता है।

गणितज्ञ योगः—

केन्द्रे ज्ञेऽसृजि वा गिरीन्दुकुजयोर्विद्दृष्टयोर्वा कुजे
सद्दृष्टेऽर्थ उतोच्चगे द्रविणपे ज्ञेऽङ्गे गुरौ श्यामले ।
याम्येऽथार्थपतौ बुधे किमु धने केन्द्रत्रिकोणेऽचिंते
स्वोच्चेऽच्छे गणकोऽशतो गुरुगुदौ सोत्थार्थचिद्गौ तथा ॥ २९० ॥

केन्द्र में बुध वा भौम हो तो (१) धन में चन्द्र तथा मङ्गल हों और वे बुध से दृष्ट हों तो (२) धन में भौम हो और वह शुभ दृष्ट हो तो (३) धन में उच्च गत बुध हो, लग्न में गुरु हो और अष्टम में शनि हो तो (४) धनेश वा धन में बुध हो, केन्द्र वा त्रिकोण में गुरु हो और स्वोच्च में शुक्र हो तो गणक (गणित शास्त्रज्ञ) होता है। कारकांश लग्न से तृतीय द्वितीय वा पञ्चम में गुरु तथा केतु हों तो भी गणित शास्त्र वेत्ता होता है।

ज्यौतिष शास्त्रज्ञ योगः—

त्र्यर्थस्थयोर्ज्ञास्फुजितोः किमुच्चेऽच्चितेऽर्थभे वा भवकेन्द्रकोणे ।
उपेत ऊर्जैर्हिमरश्मिपुत्रे ज्योतिर्विदां सत्तम एषु मर्त्यः ॥ २९१ ॥

तृतीय तथा धन में बुध और शुक्र हों तो (१) धन में उच्च राशि गत गुरु हो तो (२) लाभ केन्द्र वा त्रिकोण में बुध हो और द्वितीयेश बलवान् हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष ज्योतिषियों के मध्य में श्रेष्ठ होता है।

भविष्य वक्ता योगः—

केन्द्रे कोणे शेमुषीकारकाख्ये कल्याणस्यांशाश्रिते ज्ञेनभेन ।
युक्ते ताभ्यां लोकिते स्याद् भविष्यद्वक्ता जातो हौरिकैरुक्तमेवम् ॥ २९२ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में बुद्धि कारक ग्रह हो और वह शुभ ग्रह के नवांश में हो एवं बुध तथा शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष भविष्य वक्ता होता है। इस प्रकार होराशास्त्र वेत्ताओंने कहा है।

त्रिकालज्ञ योगः—

गुरौ स्वभागगे मृदुलवेऽथ वेह गोपुरे ।
शुभांशके शुभेक्षिते भवेन्नरो त्रिकालवित् ॥ २९३ ॥

यदि स्वांश में तथा मृदुभाग में गुरु हो अथवा गोपुरांश में तथा शुभांश में गुरु हो और वह शुभ दृष्ट हो तो त्रिकालज्ञ होता है।

क्रमान्तज्ञ योगः—

भर्त्तव्यभावे बलिनीन्द्रमंत्रिणि तन्नायकाक्रान्तलवाधिपे सता ।
समीक्षिते दारककेन्द्रदीक्षणे क्रमान्तवेत्ता जनितस्तदा भवेत् ॥ २९४ ॥

धनमें बली गुरु हो और पञ्चम केन्द्र वा नवम में द्वितीयेश के नवांशका स्वामी हो और वह शुभ दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष क्रमान्तवेत्ता होता है।

कवि योगः—

यदोदये पदाधिपेऽथ वा मनोरथेश्वरे।
स्वकीयसद्मसंस्थिते कविर्भवेन्मनूद्भवः॥ २९५॥

लग्न में दशमेश हो अथवा लाभमें लाभेश हो तो मनुष्य कवि होता है।

षट्शास्त्रवल्लभ योगः—

जीवे केन्द्रे भेऽत्र सिंहासनांशे स्वस्थर्क्षांशे गोपुरे चन्द्रजे वा।
केन्द्रे कोणे पङ्कयुक्तेऽर्थपस्थभेशांशेशे भानवे वा कुजेऽथो॥ २९६॥
स्वेशांशेशे कण्टके सौम्यदृष्टे जीवे वित्ते वीर्य्ययुक्ते ऽथ वित्ते।
धीरे सूर्यांशेशि वैशेषिकांशे षट्छास्त्राणां वल्लभो जातकोऽसौ॥ २९७॥

केन्द्र में गुरु, सिंहाशनांशमें शुक्र और धन भावमें जो राशि हो उस राशिके नवांश में बुध हो और वह गोपुरांश में हो तो (१) धनेश जिस राशि में हो उस के स्वामी के नवांशका स्वामी शनि वा मङ्गल हो और वह पाप युक्त होकर केन्द्र वा त्रिकोण में हो तो (२) केन्द्र में धनेश के नवांश का स्वामी हो और वह शुभ दृष्ट हो एवं धन में बली गुरु हो तो (३) धन भाव बलवान् हो और सूर्य जिस राशि के नवांश में हो उसका स्वामी वैशेषिकांश में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष षट्शास्त्रवेत्ता होता है।

ब्रह्मनिष्ठ तथा ग्रन्थकर्ता योगः—

सौम्यैर्दृष्टेऽङ्केशि पारावते वा सत्संदृष्टे मानपेऽमर्त्त्यलोके।
प्रोक्तो जातो ब्रह्मनिष्ठोऽथ भागात्पुत्रे सोग्रौ ग्लौगुरू ग्रन्थकृत्स्यात्॥ २९८॥

पारावतांश में भाग्येश हो और वह शुभ दृष्ट हो अथवा देवलोकांश में दशमेश हो और वह शुभ दृष्ट हो तो उक्त योगो में ब्रह्मनिष्ठ होता है। कारकांश लग्न से पञ्चम में पाप युक्त चन्द्र गुरु हो तो ग्रन्थकर्ता होता है।

शास्त्रकर्ता तथा सर्वविद्यायोगः—

एको भव्यो वीर्य्यवान् बुद्धियातो जातो जन्तुः शास्त्रकर्त्ता सुधाङ्गात्।
आर्य्ये कोणे ज्ञात्त्रिकोणे कुपुत्रे प्राणी प्रोक्तः सर्वविद्यासमेतः॥ २९९॥

पञ्चम में एक बली शुभग्रह हो तो मनुष्य शास्त्र करने वाला होता है। यदि चन्द्रमा से त्रिकोण में गुरु हो और बुध से त्रिकोण में मङ्गल हो तो सब विद्याओं से युक्त होता है।

शाब्दिक योगः—

अंशात्सूनौ स्वापतेये सुरेज्ये यद्वा भाषाभावपे वासवेड्ये।
भास्वत्काव्यालोकिते पूर्णवीर्य्ययुक्ते जातः शब्दशास्त्रस्य वेत्ता॥ ३००॥

कारकांश लग्न से पञ्चम वा द्वितीय में गुरु हो अथवा धनेश गुरु पूर्ण बली हो और वह सूर्य शुक्र से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष व्याकरण शास्त्र जानने वाला होता है।

शूद्रका विद्वान् योगः—

भोगीन्द्रमन्दामरनाथवन्दितैरेकर्क्षगैः कोविदकाव्यलोकितैः।
शूद्रोऽपि विप्रत्वमुपैति मानवः समेति विद्यां निखिलामिलासुरः॥ ३०१॥

एकराशि में राहु, शनि तथा गुरु हों और वे बुध तथा शुक्र से दृष्ट हों तो शूद्र भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त होता है। यदि उक्त योग में ब्राह्मण का जन्म हो तो सम्पूर्ण विद्याको प्राप्त होता है।

अंग्रेजी तथा पारसी विद्या योगः—

माहेयमन्दफणिभैर्मिहिरान्मतिस्थैः
क्रूरेक्षितैर्जनित आँग्लगिरं समेति।
साघेऽङ्गजे समलिने मतिपे पुरस्थे
जैवातृके यवनवाचमुपैति जन्तुः॥ ३०२॥

सूर्य से पञ्चम में भौम, शनि, राहु तथा शुक्र हों और वे पापदृष्ट हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष अंग्रेजी विद्या जानने वाला होता है। पञ्चम में पाप हो, पञ्चमेश यदि पाप युक्त हो और लग्न में चन्द्रमा हो तो अरबी विद्या जानने वाला होता है।

न्यायाधीश तथा वक्ता योगः—

कामाङ्गयोस्त्रिदययोः समवाप्तितन्वो-
र्दिष्टान्तवित्तगृहयोस्त्रिदशेज्यशन्योः।
एकस्थयोर्यदि समीपलवस्थयोर्वा
मन्दाद्गुरौ मदनगे किमुत त्रिकोणे॥ ३०३॥
सम्प्रोक्तमन्दिरगतौ यदि तौ तदानीं
न्यायालयाधिपतिरेष्वथवेह वाग्मी।
तौ कुम्भतौलिनृयुग्घरिकार्मुकाज-
यातौ तथा विबुधपिङ्गलपुत्रयोगे॥ ३०४॥
तद्वत्परान्त्विह भवो मनुजोऽल्पभाषी
योगा इमे मतिगृहे निखिलोत्तमाः स्युः।
मध्याः शुभेऽङ्गधनयोः सुकृशाः सुखेशे
कामोदये सदसि गाणतिकोऽपि मूकः॥ ३०५॥

सप्तम लग्न में तृतीय नवम में पञ्चम एकादश में वा द्वितिय अष्टम में शनि तथा गुरु यदि समीप के अंशों में हों अथवा शनि से सप्तम में वा त्रिकोण में गुरु हो अथवा वे दोनों उक्त स्थानों के मध्य में किसी स्थान में

हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष न्यायाधीश अथवा वाग्मी (उत्तम वक्ता) होता है। कुम्भ तुला मिथुन सिंह धनु वा मेष में शनि गुरु हों तो भी न्यायाधीश वा वाग्मी होता है। यदि बुध और शनिका योग हो तो न्यायाधीश होता है। किन्तु उक्त योग में उत्पन्न पुरुष अल्पभाषी होता है। पञ्चम में पूर्वोक्त योग उत्तम, नवम में मध्यम एवं लग्न तथा धनमें कनिष्ठ होते हैं। लग्न वा सप्तम में सुखेश हो तो उक्त योग में पण्डितजन भी सभा में मूक (गूंगा) होता है।

उदर रोग तथा मन्दाग्नि रोग योगः—

गात्रे गदेशि विषमोदयभेऽङ्गनाथे
वक्रर्क्षगे शनिदृशा युतयो द्वयोर्वा।
क्रोडाच्छयोर्मृतिगयोरथपीडितेऽरौ
तन्नायके कुसुमधन्वनि तुन्दरोगी ॥ ३०६ ॥

लग्न में विषमोदयराशिगत षष्ठेश हो, विषमोदय राशिमें लग्नेश भी हो और वे शनि से दृष्ट हों तो (१) अष्टम में शनि तथा शुक्र हों, षष्ठ में पापग्रह हो और सप्तम में षष्ठेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य उदर रोगी होता है।

मन्दे मृतौ मूर्तिगृहे मृगाङ्के वाऽहौ ध्वजे वा मकरध्वजे वा।
धीस्थे खगे दुष्टगतौ सपापे पयोऽङ्गपत्यो रुजि वारिपेऽस्ते ॥ ३०७ ॥

साघे खलेऽरौ युधि तुन्दरुग्भाक् कलेवरे कालसमेतदृष्टे।
दुष्टेक्षिते दुर्बल आयुरीशे स्याच्चेतनो मन्दकृशानुरुग्भाक् ॥ ३०८ ॥

अष्टम में शनि तथा लग्न में चन्द्रमा हो तो (१) सप्तम में राहु वा केतु हो तो (२) पञ्चम में दुष्टगति (वक्रगति) ग्रह हो और वह पाप युक्त हो एवं षष्ठ में सुखेश तथा लग्नेश हो तो (३) सप्तम में पापयुक्त षष्ठेश हो, षष्ठ वा अष्टम में पापग्रह हो तो उदर रोग वाला होता है। यदि 'लग्न' शनि से युक्त वा दृष्ट हो एवं अष्टमेश निर्बल हो और पापदृष्ट हो तो मनुष्य को मन्दाग्नि रोग होता है।

सभार्गवे सुधाकरे खलेक्षिते क्षते क्षये।
कृशानुमन्दतोदरामयोऽथ वाऽङ्गवर्जितः ॥ ३०९ ॥

षष्ठ वा अष्टम में शुक्रयुक्त चन्द्रमा हो और वह पापदृष्ट हो तो मन्दाग्नि उदर रोग वा गात्रहीन होता है।

कुक्षिरोग तथा कुक्षि विदीर्ण योगः—

सगर्हिते गात्रगृहे सपन्नगे वायुर्गृहे दैनकरौ च कुक्षिरुक्।
दर्शे जनिर्मन्दतनौ सदीक्षिते किं कृष्णचन्द्रे सभुजङ्गभास्करे ॥ ३१० ॥

शस्त्रेण कुक्षेर्दलनं महीजभे होरानिकेते किमु तल्लवे यदि।
कृष्णे शशाङ्के सरवौ शशाङ्कजे मूढे सराहौ जठरस्य भेदनम् ॥ ३११ ॥

लग्न में पापग्रह वा राहु हो और अष्टम में शनि हो तो कुक्षिरोग होता है । अमावास्या का जन्म हो, लग्न में शनिकी राशि हो वा लग्न में शनि हो और शुभदृष्ट हो अथवा कृष्णपक्ष का चन्द्रमा यदि सूर्य तथा राहु से युक्त हो तो शस्त्र से कुक्षिभेदन होता है । लग्न में मङ्गल की राशि वा नवांश हो कृष्णपक्षका चन्द्रमा यदि सूर्य से युक्त हो एवं अस्तंगत बुध यदि राहु से युक्त हो तो उदर भेदन होता है ।

चोरालये चित्रशिखण्डिसूनौ तद्गेहमाप्ते क्षणदाधिनाथे ।
जात्युन्मिते गोजगतीप्रमे ऽब्दे भवी भवेत्कुक्षिगदेन दुःखी ॥ ३१२ ॥

षष्ठ में गुरु हो और गुरु की (९।१२) राशि में चन्द्रमा हो तो २२ वें वर्ष वा १९ वें वर्ष में कुक्षि रोग से दुःखित होता है ।

उदरशूल तथा हृदयशूल योगः—

नष्टे धराभुवि गिरोरमणे ऽह्नि जन्मा-
ऽसृक्पूर्णवीक्षणयुते ऽथ शुभैर्यदा ऽऽर्त्तैः ।
साधे ऽरिपे किमु रवावलिराशियाते
शूलं जनस्य जठरे हृदयप्रदेशे ॥ ३१३ ॥

दिन का जन्म हो, मङ्गल नष्ट हो एवं गुरु यदि मङ्गल से पूर्ण दृष्ट हो तो (१) शुभ ग्रह यदि पापाक्रान्त हों और षष्ठेश पाप युक्त हो तो (२) वृश्चिक में सूर्य हो तो मनुष्य के उदर में तथा हृदय में शूल होता है ।

देवता आराधन के योगः—

पुत्रालये पुंग्रहयोगदृग्वति पुंदेवताराधनमादिशेद्बुधः ।
तत्राबलाखेचरयुक्तलोकिते स्त्रीदेवताया भजनं तदेच्छति ॥ ३१४ ॥

पञ्चमस्थान में यदि पुरुष ग्रह का योग वा दृष्टि हो तो पुरुष देवता के आराधन को कहे । एवं पंचमस्थान स्त्री ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो स्त्री देवता का आराधन करना कहे है ।

सुते ऽर्कसम्बन्ध इनेशभाजनो ऽब्जे तादृशे पर्वतजां च यक्षिणीम् ।
कुजे कुमारं किमु भैरवाभिधं ज्ञे शारदां चक्रकरं सुरार्च्चिते ॥ ३१५ ॥
तादृग्विधे सात्त्विकमीशमिच्छति चामुण्डिकां हैमवतीं सिते ऽसिते ।
प्रेताशनीं प्रेतवसुन्धरालयां पाते पताके परपीडनाभिधाम् ॥ ३१६ ॥

पंचम में सूर्य की राशि वा सूर्य से युक्त दृष्ट हो तो सूर्य वा शिव, एवं चन्द्रमा हो तो पार्वती वा यक्षिणी, मङ्गल हो तो कार्त्तिकेय वा भैरव, बुध हो तो शारदा वा विष्णु, गुरु हो तो तात्त्विक देवता वा शिव, शुक्र हो तो चामुण्डा वा पार्वती, शनि हो तो प्रेताशनी वा प्रेतभूमि वासिनी एवं राहु वा केतु हो तो परपीडन देवता का आराधन करे ।

प्रोक्तेषु खेटेषु निजोच्चमित्रांशकेषु चेत्तद्भजनं निजार्थम् ।
यदोक्ततः स्यात्परथा परार्थं सर्वेषु सत्खेचर वीक्षितेषु ॥ ३१७ ॥
मृद्वंशयातेषु तदैव सौम्यता स्यात्क्रूरता क्रूरलवेऽङ्गजाङ्गयोः ।
पत्योः सखित्वे सखिताऽरिता तदरित्वे समत्वे समता समीरिता ॥ ३१८ ॥

पञ्चमस्थान में जिस का सम्बन्ध हो यदि वह ग्रह स्वांश में स्वोच्चांश में वा स्वमित्रांश में हो तो उक्त देवता का भजन स्वार्थ के लिए होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो उक्त देतता का भजन अन्यजनों के लिए होता है। पंचमस्थान सम्बन्धी ग्रह यदि शुभ दृष्ट हों तथा मृदु षष्ठ्यंश में हों तो देवताराधन सौम्यत्व के लिए होता है। यदि उक्त ग्रह पाप दृष्ट हों तथा क्रूर षष्ठ्यंश में हो तो उक्त देवता का आराधन क्रूरता के लिए होता है। यदि पंचमेश तथा लग्नेश की परस्पर मित्रता हो तो देवता से मित्रता, शत्रुता हो तो देवता से शत्रुता और समता हो तो देवता से समता कहनी चाहिए।

पंचम भाव के प्रकीर्ण योगः—

तातालये वाऽऽत्मनि पञ्चपाणि पीयूषगूष्णांशुजपापिनस्ते ।
ताताम्बिकाबालकमातुलानां कुर्वन्ति सद्यः क्रमशो विनाशम् ॥ ३१९ ॥

दशम वा पंचम में सूर्य, चन्द्र, शनि तथा मङ्गल हों तो वे क्रम से शीघ्र पिता, माता, पुत्र तथा मातुल का नाश करते है।

ब्रध्नेऽतिनीचांशगतेऽधरर्क्षगेऽपिश्रीकुमाराशनदारवर्जितः ।
सितेऽसिते वा सितगौ सुतस्थले तुन्दे तनूजस्य समीरजा व्यथा ॥ ३२० ॥

नीच राशि गत 'सूर्य' यदि परमनीचांश में हो तो धन, पुत्र, भोजन तथा स्त्री रहित होता है। पंचम में शुक्र शनि वा चन्द्रमा हो तो पुत्र के उदर में वातजन्य पीडा होती है।

सूनून्सुतात्सहजतः सहजांश्चतुर्था-
दासीः स्त्रियः सुमशरात्सुहृदश्च दासान् ।
स्वात्सदृशा गतलवान् गुणयेद्विभज्य
खाभ्राक्षिभिः सुतमुखास्तु तथा च भूताः ॥ ३२१ ॥

पंचम से पुत्र, सहज से भ्राता, सुख से दासी, सप्तम से स्त्री और द्वितीय से मित्र तथा दासजनों का विचार करे। उक्त स्थानों में जितने गतनवांश हों उन को शुभ ग्रहों की दृष्टि के योग से गुणकर २०० से भाग दे तब जो लब्ध हो वह पुत्रादियों की संख्या होती है।

—:कल्पित उदाहरणः—

कल्पित पञ्चमभाव ४।२०।४०।२० है। यहां छः गतनवांश हैं अतः ६ को शुभ दृष्टियोग कला ४०।२५ से गुणा तो २४२।३० हुए। इन में २०० से भाग दिया तो १ लब्ध हुआ। यहां १ लब्ध संख्या है अतः १ सन्तान होगी। एवं भ्रातादियों की संख्या का विचार करे।

राशीन्विनोदयसुतास्तसहोत्थबन्धूं-
स्ताल्लिप्तिकाः क्रमत उत्तमदृग्बलघ्नाः।
षष्ठ्योद्धृताः खनखहृत्फलदासदासी-
पुत्राङ्गनासहजमित्रमितिः क्रमेण ॥ ३२२ ॥

तथाऽघदृग्बलाहताः खषड्हृताःक्रमात्फलम्।
वियन्नखैर्विभाजिते मितिर्मतेह तत्क्षतेः ॥ ३२३ ॥

लग्न, पञ्चम, सप्तम, तृतीय तथा चतुर्थ इन पाँचों भावों की राशि को त्यागकर उन के अंशों की पृथक् पृथक् कलाकरके तब जो कलादि हों उन को शुभ ग्रहों के दृग्बल योग से गुणकर ६० से भाग दे तब जो लब्ध हो उस में २०० से भाग दे लब्ध दास प्रभृतियों की संख्या होती है। एवं उक्त भावों की कला ओं को पाप ग्रहों के दृग्बलयोग से गुणकर ६० से भाग दे तब जो लब्ध हो उस में २०० से भाग दे लब्ध दास प्रभृतियों की हानि संख्या होती है।

—: कल्पित उदाहरण :—

११।१९।४५।४४ स्पष्ट लग्न है। इस की राशि ११ को हटाकर १९।४५।४४ शेष अंशादि हुए। इन की कला ११८५।४४ को शुभ दृग्बल योग ०।४०।१० से गुणकर ४७६२६।५७ हुए। इन में ६० से भाग दिया तो ७९३ लब्ध हुए। इन में २०० से भाग दिया तो लब्ध हुए ३ दासदासी की संख्या हुई। एवं पुत्रादि भावों से पुत्रप्रभृतियों की संख्या का साधन करे।

पञ्चम गत रवि फलः—

सूनौ सूनौ निर्धनः स्थूलदेही धीमांस्तातारिष्टभाक् सप्तमेऽब्दे।
मेधावी स्यादल्पपुत्रः सवीर्य्ये भावेशे चेत्सन्नुसिद्धिस्तदानीम् ॥ ३२४ ॥
तस्मिन्पापैः संयुते वीक्षिते वा वृद्धिर्वाच्या स्त्रीप्रजायाः समेते।
आश्लेषाभूगूढपादृभ्यां भुजङ्गशापान्नाशो नन्दनानां नरस्य ॥ ३२५ ॥
सवासुधेये रिपुवर्गमूलात्सुतक्षयः शोभनयुक्तदृष्टे।
दोषो न भास्वच्छरभादिकानां भक्तः सवीर्य्ये प्रभवेत्सुतैधा ॥ ३२६ ॥

पञ्चम में सूर्य हो तो निर्धन, स्थूल शरीर, बुद्धिमान् ७ वें वर्ष में पिता को कष्ट करने वाला, धारणा बुद्धि वाला एवं अल्प पुत्र वाला होता है। पञ्चमेश बली हो तो पुत्र की प्राप्ति होती है। पञ्चमगत 'सूर्य' यदि पाप ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो कन्या प्रजा की वृद्धि कहे। यदि वह 'सूर्य' केतु वा राहु से युक्त हो तो सर्प शाप से पुत्र हानि, मङ्गल से युक्त हो तो शत्रु वर्ग से पुत्र हानि होती है। एवं वह 'सूर्य' शुभ युक्त दृष्ट हो तो उक्त दोष नहीं होता है। और वह मनुष्य सूर्य तथा शरभादियों भक्त होता है। यदि 'सूर्य' बली हो तो पुत्रवृद्धि होती है।

पञ्चम गत चन्द्र फलः—

सोमे सुते रूपवती वधूः क्वचित्कोपान्विताऽङ्कः कुचयोर्वधूद्वयम्।
स्त्रीदेवता सिद्धिरथैकपुत्रवान्कन्याप्रजावांश्चतुरङ्गिलाभभाक् ॥ ३२७ ॥

स्त्रीदेवतोपासनया युतो बहुश्रमोत्थचिन्तासहितश्च सत्त्वयुक् ।
प्रभूतदुग्धाप्तिरिहोत्तमान्वितदृष्टे समर्थः प्रभवेदनुग्रहे ॥ ३२८ ॥

स्यादन्यथोग्रैर्निखिले विधौ बली भाग्याधिकर्द्धिर्नृपयोगभाग् जनः ।
ज्ञान्यन्नदाने रुचिमाननेकसत्प्रसन्नतैश्वर्य्ययुतः सुकर्म्मकृत् ॥ ३२९ ॥

पञ्चम में चन्द्रमा हो तो रूपवती स्त्री कभी क्रोधयुक्त, स्तनप्रदेश में चिन्ह से युक्त, दो स्त्री और स्त्री देवता की सिद्धि होती है। एवं वह मनुष्य एक पुत्र वाला, कन्याप्रजा वाला, चतुष्पद लाभ वाला, स्त्री देवता की उपासना से युक्त, अधिक परिश्रम से उत्पन्न चिन्ता युक्त, पराक्रम युक्त और बहुत दुग्ध की प्राप्ति से युक्त होता है। पञ्चम गत चन्द्रमा शुभ युक्त दृष्ट हो तो अनुग्रह में समर्थ और पाप युक्त दृष्ट हो तो निग्रह में समर्थ होता है। यदि 'चन्द्रमा पूर्ण हो तो बलवान्, अधिक भाग्य वृद्धिवाला, राजयोग वाला, ज्ञानवान्, अन्न दान में रुचिवाला, अनेकपण्डितों के प्रसाद से ऐश्वर्य्य युक्त एवं सुकर्म करने वाला होता है।

पञ्चम गत भौम फलः—

वक्रे बुद्धौ विवित्तः सुतजनरहितो गण्डकालस्तु किञ्चि-
च्छस्त्रेणाङ्गप्रमे ऽब्दे कुवसनसहितो ज्ञानशीलप्रसन्नः ।
दुर्मार्गी राजकोपः खलु खरधिषणः शाम्बरीवादवान् स्यात्
स्वोच्चे स्वर्क्षे ऽन्नदानप्रिय इह भवति द्विड्व्यथो नन्दनैधः ॥ ३३० ॥

राजाधिकारसहितो दहनेन युक्ते
तत्रोग्रखेचरगृहे मरणं सुतानाम् ।
धीभ्रंशपूर्वकगदः सखलाष्टमेशे
वीरस्त्वघी भवति दत्तकुमारयोगः ॥ ३३१ ॥

पञ्चम में मङ्गल हो तो धन हीन, पुत्र हीन, छठे वर्ष में शस्त्र से अल्पकष्ट, कुत्सित वस्त्रों से युक्त ज्ञानी शीलवान, दुष्टमार्गावलम्बी, राजकोप वाला, तीक्ष्ण बुद्धि वाला तथा शाबरी विद्या वाला होता है। पञ्चम में स्वराशि-गत वा स्वोच्चराशिगत भौम हो तो अन्न दान में प्रीति रखने वाला, शत्रुओं से पीडित, पुत्रवृद्धि वाला एवं राजाधिकार युक्त होता है। यदि पञ्चमगत भौम पाप युक्त वा पाप राशि में हो तो पुत्रमरण तथा बुद्धि भ्रंशादि रोगसे युक्त होता है। एवं पञ्चमगत भौम पापग्रह तथा अष्टमेश से युक्त हो तो शूरवीर, पापात्मा तथा दत्तपुत्र वाला होता है।

पंचम गत बुध फलः—

मेधाविनं मातुलगण्डमात्मजविघ्नं विधत्ते प्रियभाषिणं बुधः ।
धीस्थः प्रसूसौख्यसमन्वितं मतिमन्तं गृहेशे विबले सगर्हिते ॥ ३३२ ॥

अपुत्रो दत्तपुत्राप्तिभाक् तथैव मृतात्मजः ।
मंत्रवादी भवेज्जन्तुः संयुतः पापकर्म्मणा ॥ ३३३ ॥

पंचम में बुध हो तो धारणा बुद्धिवाला, मामा को कष्ट प्रद, पुत्रों को भयदायक, प्रिय वचन बोलनेवाला, माता के सौख्य से युक्त एवं बुद्धिमान् करता है। एवं पंचमेश निर्बल वा पाप युक्त हो तो पुत्र हीन, दत्त पुत्र वाला, मृतापत्य, मंत्रशास्त्र वेत्ता तथा पाप कर्म युक्त होता है।

पंचम गत गुरु फलः—

गौरे यदाऽऽत्मनि बृहन्नयनो मनीषा-
चातुर्य्यवान्भवति पेशलकः प्रतापी।
वंशान्नदानदयितो धृतितुल्यवर्षे
सर्वसहापतिगृहे पृतनेशयोगः॥ ३३४॥

शौर्य्यैः समेते सुतभाधिपे सुतसमृद्धिरुग्राधरवैरिराशिगे।
नाशः सुतस्यैककुमारवांस्तथा जातो जनुष्मान्वसुना समन्वितः॥ ३३५॥

राजद्वारे धरानाथमूलेन द्रविणव्ययः।
साहिध्वजे न सद्दृष्टे नागशापात्सुतक्षयः॥ ३३६॥

पंचम में गुरु हो तो विशाल नेत्रवाला, बुद्धि से चतुरतावाला, चतुर, प्रतापशाली, वंश के लोगों को अन्नदान देने में प्रीति रखनेवाला एवं १८ वें वर्ष में सेनापति का योग होता है। पंचमेश बली हो तो पुत्रों की वृद्धि और पंचमेश पाप राशि नीच राशि वा शत्रु राशि में हो तो पुत्र का नाश वा एक पुत्रवाला तथा धन से युक्त होता है। एवं राजद्वार में राजा के कारण धन का व्यय होता है। यदि पंचमेश राहु वा केतु से युक्त हो और शुभ दृष्ट न हो तो सर्प शाप से पुत्र का नाश होता है।

पंचम गत शुक्र फलः—

सिते सुते मातृमहप्रदर्शी मंत्री वधूयौवनपुत्रयुक्तः।
सुज्ञश्च धीमान् ध्वजिनीश्वरः स्त्रीप्रसादवृद्धिर्नरनाथमानी॥ ३३७॥

तत्राघभे पापयुतेऽरिनीचभे धीजाड्ययुक्तस्तनुसम्भवक्षयः।
तत्रोत्तमाढ्ये मतिमांश्चनीतिमान्यानस्य योगः सुतसिद्धिरीरिता॥ ३३८॥

पंचम में शुक्र हो तो मातामह (नाना) को देखनेवाला, राज मंत्री, स्त्री, यौवन तथा पुत्र से युक्त, उत्तम पण्डित, बुद्धिमान्, सेनापति, स्त्रीजनों की प्रसन्नता की वृद्धिवाला एवं राजा से सम्मानित होता है। पञ्चम गत शुक्र पाप राशि में वा पाप युक्त वा शत्रु राशि में वा नीच राशि में हो तो बुद्धिजाडय से युक्त तथा पुत्र का नाश होता है। यदि पंचम गत शुक्र शुभ ग्रह से युक्त हो तो बुद्धिमान् नीतिमान्, वाहन का योग और पुत्र की प्राप्ति कही है।

पंचम गत शनि फलः—

पङ्गौ पुत्रे व्यात्मजोऽतीव दीनः स्याद्दुर्वृत्तो दत्तपुत्री स्वराशौ
कन्यासिद्धिः सूरिदृष्टे द्विभार्य्यस्तत्रापुत्राऽऽद्या द्वितीया सपुत्रा॥ ३३९॥

पंचम में शनि हो तो पुत्र हीन, अत्यन्त दरिद्र, दुश्चरित्र और दत्तपुत्रवाला होता है। पंचम गत शनि स्वराशि में हो तो कन्या की प्राप्ति एवं गुरु दृष्ट हो तो दो स्त्रीवाला, प्रथम स्त्री अपुत्रिणी और द्वितीय स्त्री पुत्रवती होती है।

पञ्चम गत राहु फलः—

पुत्राभावः पुत्रनाशोऽहिशापात्पुत्रप्राप्तिर्नागदेवार्चनेन।
वातव्याधी राजकोपो दुरध्वी दुष्टग्रामे नुर्निवासः सुतेऽहौ॥ ३४०॥

पञ्चम में राहु हो तो पुत्र का अभाव अथवा सर्प शाप से पुत्र का नाश एवं नागदेव की पूजा से पुत्र की प्राप्ति और वह मनुष्य वातरोगी, राजा के क्रोध का पात्र, दुष्टमार्गावलम्बी एवं दुष्टग्राम में वास करने वाला होता है।

पञ्चम गत केतु फलः—

सन्तानभे शिखिनि यस्य मनूद्भवस्यो—
त्पत्तौ विदेशगमने निरतः स दुःखी।
सन्तानहानिरिह भीतियुतश्च विद्या—
ज्ञानच्युतो भवति सन्त उदीरयन्ति॥ ३४१॥

जिस के जन्म समय में पञ्चम में केतु हो तो वह मनुष्य विदेश गमन में तत्पर, दुःखी, सन्तान की हानि, भय से युक्त एवं विद्या तथा ज्ञान से हीन होता है। इस प्रकार पण्डित जन कहते हैं।

सुत गत रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

कष्टं शरीरे जनकस्य कुर्य्यादब्देऽङ्कतुल्येऽङ्गजगो भगो ज्ञः।
अम्बाव्यथां षड्नयनप्रमेऽब्जः सुतेऽग्निभीतिं रसवत्सरेऽच्छः॥ ३४२॥
वर्षे युगेऽक्षे धनदः स्वबन्धुहानिं ध्वजाद्यास्त्रयमाः प्रकुर्य्युः।
अब्देऽक्षतुल्ये मतिगा विधत्ते सन्तानयातो गुरुरम्बिकार्तिम्॥ ३४३॥

पञ्चम में सूर्य हो तो ९ वें वर्ष में पिता के शरीर में कष्ट, बुध हो तो २६ वें वर्ष में माता को कष्ट, चन्द्रमा हो तो छठे वर्ष में अग्नि से भय, शुक्र हो तो चौथे वा पाँच वें वर्ष में धन दायक एवं केतु, राहु, मङ्गल तथा शनि हों तो ५ वें वर्ष में बन्धु हानि और गुरु हो तो मातृ पीडा को करता है।

रवि दृष्ट सुत भाव फलः—

पुत्रेणाद्यसमुद्भवेन रहितः क्रूरो दयार्द्रो बहु—
प्रज्ञाढ्यः पवनार्दितः सुनिपुणः सन्मंत्रविद्यासु च।
पुंसो जन्मनि चेद्यदा दिनकृता प्रज्ञागृहे लोकिते
स्वल्पं सौख्यमिहोदितं भवनजं प्राचीनकैः कोविदैः॥ ३४४॥

पञ्चम स्थान यदि सूर्य से दृष्ट हो तो प्रथम गर्भ से रहित, क्रूर स्वभाव, दया से आर्द्र हृदय, बहुत बुद्धि वाला, वातरोग से पीडित एवं उत्तम विद्या ओं में अति निपुण और गृह का स्वल्प सुख होता है। इस प्रकार प्राचीन पण्डित जनों ने कहा है।

चन्द्र दृष्ट सुत भाव फलः—

बुद्धिस्थाने जनुषि विधुना वीक्षिते यस्य जन्तोः
कान्तासक्तः शुभमतियुतोऽतीव लोभी च लोलः।
कन्याजन्मा क्रयत इह ना जीवितः सोऽन्यदेशे
भूभृत्तुल्यो नृपतिदयितः स्वीयवंशे प्रधानः॥ ३४५॥

पञ्चमस्थान यदि चन्द्रमा से दृष्ट हो तो स्त्रियों में आसक्तहृदय, उत्तम बुद्धि से युक्त, अत्यन्त लोभी, चञ्चल कन्या ओं को उत्पन्न करने वाला, व्यापार से जीविका वाला, परदेश में राजा के समान, राजा का प्रिय एवं अपने वंश में श्रेष्ठ होता है।

भौम दृष्ट सुत भाव फलः—

पूर्वापत्यविनाशकृज्जनुषि चेद्वामाविरोधी खलो
नूनं दुष्टतरः सुसाहसरतो युद्धोद्यमी यस्य नुः।
आहाराय गृहे गृहे भ्रमति ना तुन्देऽधिकोर्षद्बुधः
संयुक्तोऽनललक्ष्मणा तनुभवे संवीक्ष्यमाणेऽसृजा॥ ३४६॥

पञ्चम स्थान भौम से दृष्ट हो तो प्रथम सन्तति का नाश करने वाला, स्त्री जनों का विरोधी, दुर्जन, अत्यन्त दुष्ट, साहसी, युद्ध के लिए उद्योग करने वाला, घर घर में भोजन के लिए भ्रमण करने वाला, अधिक जठराग्नि वाला एवं अग्नि चिह्न से युक्त होता है।

बुध दृष्ट सुत भाव फलः—

ऐश्वर्य्यकीर्त्तिसहितस्तनयाप्रसूतिः
पुत्रस्य जन्म कथयन्ति चतुष्टयान्ते
धीमान्बुधः परवधूनिरतः सुशिल्प-
विद्यो विवादलिपिकृत्तनये ज्ञदृष्टे॥ ३४७॥

पञ्चमस्थान बुध से दृष्ट हो तो ऐश्वर्य तथा कीर्त्ति युक्त, कन्या उत्पन्न करनेवाला एवं चार सन्तान के पश्चात् पुत्र का जन्म और वह पुरुष बुद्धिमान्, पराई स्त्री में तत्पर, उत्तम शिल्प विद्यावाला, विवाद तथा लेखन कर्म करनेवाला होता है।

गुरु दृष्ट सुतभाव फलः—

मेधामन्दिरमीक्षतेऽमरगुरुर्यस्याङ्गिनो जन्मनि
सन्तानस्य सुखं भुनक्ति विपुलं धर्म्मे मतिः शास्त्रवित्।

सत्कृत्या सहितश्च गायनपरो द्विड्भीलुकः स्याद् धनी
विद्याढ्यश्चिरजीवितः कमलया युक्तो मनुष्यः सदा ॥ ३४८ ॥

पंचमस्थान को गुरु देखता हो तो वह पुरुष सन्तान का बहुत सुख भोगता है। एवं मनुष्य धर्म बुद्धिवाला, शास्त्र वेता, उत्तम कर्म से युक्त, गायन विद्या में तत्पर शत्रुजनों को पीडित करनेवाला, धनवान्, विद्यावान्; दीर्घायुवाला एवं नित्य लक्ष्मी से युक्त होता है।

शुक्र दृष्ट सुतभाव फलः—

काव्येनात्मनिकेतने यदि भवे संवीक्ष्यमाणे सुत-
जन्म स्यात्पुनरात्मजाजनिरसौ शास्त्रं पठेदङ्गभृत् ।
विद्याढ्यः कविताकरः कमलतः प्राप्तार्थवान् सौख्यभाग्
धान्यानां च सुसञ्चयी परधनस्वामी बुधानन्दकृत् ॥ ३४९ ॥

पंचमस्थान यदि शुक्र से दृष्ट हो तो प्रथम पुत्र का जन्म और पश्चात्पुत्री का जन्म होता है और वह शास्त्र को पढे, धन से युक्त, कविता करनेवाला, जल से लब्ध धन वाला, सुखी, अन्न सञ्चय करनेवाला, पराये धन का स्वामी एवं पण्डितजनों के लिए आनन्ददायक होता है।

शनि दृष्ट सुतभाव फलः—

सौरीक्षिते तनय आत्मकुलस्य धर्म्मे
रक्तः खलोऽधरयुतः सुतसौख्यहीनः
मन्दोऽलसः स्थिरमनाः शुभकर्म्महीनो
कामी गदी जितरिपुः सुयशाः सगर्वः ॥ ३५० ॥

पंचमस्थान यदि शनि से दृष्ट हो तो कुलधर्म में तत्पर, दुर्जन, नीच जनों से युक्त, पुत्र के सौख्य से रहित, मन्दगति, आलसी, स्थिर चित्त, शुभ कर्म से हीन, कामी, रोगी, शत्रु को जीतने वाला, यशस्वी एवं गर्वयुक्त होता है।

राहु दृष्ट सुतभाव फलः—

स्वर्भाणुना सुतनिकेतन ईक्ष्यमाणे
जन्तोर्जनौ भवति नो तनयस्य सौख्यम् ।
विद्या सदा श्रमकृताऽप्यफला नरस्य
भूपाज्जयस्तदनु भाग्ययुतः सदैषः ॥ ३५१ ॥

पंचमस्थान राहु से दृष्ट हो तो उस पुरुष को पुत्र का सुख नहीं होता है और उस की परिश्रम से अध्ययन किई हुई विद्या भी असफल होती है। एवं राजा से जय और वह मनुष्य नित्य भाग्य से युक्त होता है।

लग्न गत सुतेश फलः—

तनुस्थे सुतेशे जनौ विष्णुभक्तः प्रसिद्धः प्रभूतात्मजो मंत्रसिद्धः ।
सुविद्यारतिः शत्रुभङ्गोऽपमित्रः सुकर्म्माङ्गरागैर्युतः शास्त्रवेत्ता ॥ ३५२ ॥

सुसङ्गः श्रुतिविद् गीतज्ञाता शोभनविग्रहः ।
शातयुक्तः सुपानश्च सुमानश्च सुमानसः ॥ ३५३ ॥

लग्न में पंचमेश हो तो वह मनुष्य विष्णु का भक्त, विख्यात, बहुत पुत्रवाला, मंत्र सिद्धिवाला, उत्तम विद्या में प्रीतिवाला, शत्रु से पराजित, निन्दित मित्रवाला, उत्तम कर्म्मवाला, अङ्गरागों से युक्त शास्त्रज्ञाता, उत्तम जनों की सङ्गतिवाला, वेद तथा गायन विद्या का जाननेवाला, उत्तम शरीर, सुखी; उत्तम खान, पान, मान एवं उत्तम हृदय वाला होता है ।

सन्तानपे कल्पगतेऽथ वाऽनुजे मायासमेतः परदोषसूचकः ।
न क्वापि लोष्टं ददते जनाय स कलेवरी कौ द्रविणस्य का कथा ॥ ३५४ ॥

लग्न वा तृतीय में पंचमेश हो तो मायावी, पराये दोषों को जतलानेवाला होता है । एवं वह मनुष्य लोगों को मिट्टी का ढेला तक नहीं देता है । धन की तो क्या कथा कही जाय ।

धन गत पंचमेश फलः—

दोषं रोषं नैव कुर्याच्चिदीशो वित्तस्थानस्थो विरोधं कुटुम्बे ।
सद्विद्यं सद्यानपानादिकं च कुर्य्यात्तोषं चात्मबोधं सुखानम् ॥ ३५५ ॥
सौम्ये च धामप्रवरो व्यथायुतो जीवात्मजो गीतखलार्थयुक् खले ।
निःस्वः कुलेशाप्तधनश्च हानिकृत्स्याद्भोगवान्वैरकरः कुटुम्बके ॥ ३५६ ॥

धन में पंचमेश हो तो दोष तथा रोष को नहीं करता है । एवं कुटुम्ब में विरोध; उत्तम विद्या, उत्तम वाहन, उत्तम पेय पदार्थ, सन्तोष, आत्म बोध और उत्तम भोजन को करता है । शुभ ग्रह पंचमेश हो तो स्थान से श्रेष्ठ, पीडा युक्त, जीवित पुत्रवाला, गायन विद्या तथा नीच के धन से युक्त होता है । यदि पाप ग्रह पंचमेश हो तो निर्धन, वंश के स्वामी से प्राप्त धनवाला, धन की हानि करनेवाला, भोगवाला एवं कुटुम्ब में वैर करनेवाला होता है ।

नरस्य यस्योद्भव आत्मनाथे निधानभे निर्व्यथनालये वा
क्रोधेन युक्तो न सुखी सवित्तः सश्वासकासो बहुपुत्रयुक्तः ॥ ३५७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में द्वितीय वा अष्टम में पंचमेश हो तो वह मनुष्य क्रोध युक्त, सुख रहित, धनी, श्वासकास रोगवाला एवं बहुत पुत्र युक्त होता है ।

सहजगत पंचमेश फलः—

धीशेऽनुजे मधुरवाङ् निजबन्धुवर्गे
ख्यातश्च तस्य तनयाः परिपालयन्ति ।
तद्बान्धवान् बलयुतः सखिशान्तियुक्तः
सौम्ये सुखी भवति मानसकार्यसिद्धिः ॥ ३५८ ॥

शान्तो विनम्रो नृपलाभकारी वाग्मी दयालुश्च तथा शिरालुः।
सुस्त्रीविहारी क्षितिभृत्कुचारी पराक्रमी स्नेहकरो हितेषु ॥ ३५९ ॥

सहज में पंचमेश हो तो मधुर वचनवाला, अपने बन्धु वर्ग में प्रसिद्ध और उस के बन्धुजनों का पालन उस के पुत्र करते हैं। एवं वह मनुष्य बलवान्, मित्र तथा शान्ति युक्त होता है। शुभ ग्रह पंचमेश हो तो सुखी, मनोवाञ्छित कार्य की सिद्धिवाला, शान्त, विनम्र, राजा से धन लाभवाला, शास्त्र सम्मत बोलनेवाला, दयावान्, शिरानाडीवाला, उत्तम स्त्रीके विहारवाला, भूमिका स्वामी, भूमि में विचरनेवाला, पराक्रमी एवं मित्रों में स्नेह करनेवाला होता है।

सुख गत पञ्चमेश फलः—

गर्भेश्वरे गृहगते गुरुभक्तियुक्तो
ऽमात्यो ऽथ वा मनुभवेद्गुरुरिन्दिराढ्यः।
अम्बासुखं चिरतरं कृषितस्तथोग्र–
लाभः सुबुद्धिसहितः श्रमतो ऽल्पलब्धिः ॥ ३६० ॥

स्यादात्मभूतिः कुशलो नवीनप्रसूतिकः स्वस्य पितुश्च भक्त्या।
युक्तः प्रदद्यात्कवये ऽम्बरार्थान् खले विहङ्गे पितृभिर्विरोधी ॥ ३६१ ॥

सुख में पञ्चमेश हो तो गुरुभक्तिवाला, राजमंत्री वा राजगुरु, लक्ष्मीयुक्त और उसको दर्घिकाल तक माता का सुख होता है। एवं वह मनुष्य कृषि से बहुत लाभवाला, उत्तम बुद्धि युक्त, परिश्रम से अल्पलाभवाला, आत्म-ऐश्वर्यवाला, नवीन प्रसववाला, पितृभक्तियुक्त और कविजन को वस्त्र तथा द्रव्य देता है। पापग्रह पञ्चमेश हो तो पितृजनों से विरोध करनेवाला होता है।

पञ्चमगत पञ्चमेश फल—

धीशे धीस्थे सस्तनुः सुवचनकुशलो ऽन्याङ्गनानां सुहासैः
संयुक्तो वा विलासैर्वरजनविदितः स्यादनोज्ञो मनोज्ञः।
नो पीनो नो दरिद्रः कुयुवतिसहितः शास्त्रविन्मान्युदारः
प्रज्ञावान् क्रूरभाषी क्षणिक उत भवी धार्म्मिको ऽन्योपकारी ॥ ३६२ ॥

जातको मनुजश्रेष्ठस्तस्य स्वोरसि सम्भवः।
नो जीवेन्नन्दनः केचिदित्याहुर्गणकोत्तमाः ॥ ३६३ ॥

पञ्चम में पञ्चमेश होतो उत्तम वचन बोलने में चतुर, पराई स्त्रियों के सुन्दर हास वा विलासों से युक्त, श्रेष्ठ मनुष्यों में प्रसिद्ध, गाडी निर्माण करनेवाला, मनोहर शरीर, स्थूलता रहित, दरिद्रता रहित, निन्दित स्त्री युक्त, शास्त्रवेत्ता, सम्मानवाला, उदारस्वभाव, बुद्धिमान्, क्रूरभाषणवाला, क्षणिक हृदयवाला, धर्मात्मा, पराया उपकार करनेवाला; मनुष्यों में श्रेष्ठ और उसका औरस पुत्र न जीवे। इस प्रकार कोई पण्डित कहते हैं।

षष्ठ गत पञ्चमेश फलः—

चोरे चिदीशे रिपुवर्गभीतियुक्तो विभाव्यः सुतनुः कुलीनः।
नूत्नो गरिष्ठः सुबलः सुजापः सुशीलयुक्तस्तनुतां समेति ॥ ३६४ ॥

असत्खगेन्द्रे बहुदोषयुक्तः शस्त्रप्रियः संहननोत्थितोनः।
अरातियुक् क्रूरतरो दृढाङ्गो रोगान्वितो मानधनेन मुक्तः ॥ ३६५ ॥

षष्ठ में पञ्चमेश हो तो शत्रुवर्ग के भय से युक्त, विशेष सुन्दर, सुन्दर शरीर, कुलवान्, नवीन देह, गौरव युक्त, अति बली, उत्तम जपवाला, शीलवान् एवं दुर्बलता को प्राप्त होता है। पञ्चमेश पाप ग्रह हो तो बहुत दोषों से युक्त, शस्त्रों को प्रिय मानने वाला, पुत्ररहित, शत्रुयुक्त, अत्यन्त क्रूर स्वभाव, दृढशरीर, रोगी एवं मान धन से रहित होता है।

घातोपयाते यदि वाऽवसानगे प्रज्ञाधिनाथे रिपुतामवाप्नुयात्।
क्रीतात्मजो वा परदत्तनन्दनोऽनपत्यको वा मनुजो मृतप्रजः ॥ ३६६ ॥

षष्ठ वा व्यय में पञ्चमेश हो तो वह मनुष्य लोगों से शत्रुता को प्राप्त होता एवं क्रीत पुत्रवाला दत्तपुत्र वाला अनपत्य वा मृतप्रजावाला होता है।

सप्तम गत पञ्चमेश फलः—

चित्तोत्थगे चित्प उदग्रदेहः सत्कर्म्मयुक् सत्यवचा उदारः।
स्वस्वामिभक्त्या सहितः शरीरी मानी सुधीरः स्थिरमानसश्च ॥ ३६७ ॥

तस्याङ्गना सुजनशीलवती सुरूपा
युक्ता सुनन्दनगुणैः सुभगा पुरन्ध्री।
दैवे रता निजपतिक्षितिदेवदेव–
भक्तौ रता कृशकटी प्रियवादिनी च ॥ ३६८ ॥

सप्तम में पञ्चमेश हो तो ऊंचे शरीर वाला, सत्कर्मयुक्त, सत्यवचन वाला, उदार स्वभाव, अपने स्वामी की भक्ति से युक्त, सम्मानित, अतीव धैर्यशाली तथा स्थिरचित्त वाला होता है। एवं उस की स्त्री सुजन, सुशील सुन्दररूपवती, उत्तम पुत्र तथा गुणों से युक्त, सौभाग्यवती, पतिव्रता, प्रारब्ध में निरत; अपने स्वामी, ब्राह्मण तथा देवताओं की भक्ति में तत्पर, दुर्बल कटी (पतली कमर) एवं प्रिय वचन बोलने वाली होती है।

अष्टम गत सुतेश फलः—

याम्ये धीशे विलज्जो विगततनुधनो लब्धवैकल्पदोषो
निर्गेहो नीचसङ्गी प्रथमसुतवियुग् भाण्डसक्तः कुवाणी।
स्याच्चौरो मन्दभागी विमतनिजवधूर्भार्य्यया वा विहीन–
स्तस्य व्यङ्गाश्च नष्टाः सहजसुतजनाश्चञ्चलश्चण्डकान्तिः ॥ ३६९ ॥

अष्टम में पञ्चमेश हो तो लज्जा रहित, शरीर तथा धन से हीन, वैकल्य दोष वाला, गृह रहित, नीच जनों के साथ रहने वाला, प्रथम पुत्र से रहित, भाण्ड विद्या में आसक्त चित्त, दुर्वचन बोलने वाला चोर, मन्दभागी, अपनी स्त्री से अमान्य वा स्त्री रहित चञ्चल स्वभाव और प्रचण्ड कान्ति वाला होता है। एवं उस के भ्राता तथा पुत्र अङ्ग भङ्ग और नष्ट होते हैं।

नवम गत पञ्चमेश फलः—

धीशे शुभे पुण्यरतः सुबोधविद्यान्वितो गीतरतः सुरूपः।
नरेशदत्ताश्वरथैरुपेतो विख्यातकीर्त्तिः क्षितिपालपूज्यः॥ ३७०॥
धीस्तीर्थकृत्ये यतिरात्मबोधे सुसिद्धपीठे गतिरीशभक्तौ।
रतिः समेतस्तपसा समस्तशास्त्रार्थवेत्ता स तु नाटकज्ञः॥ ३७१॥

नवम में पञ्चमेश हो तो पुण्य कर्म में तत्पर, उत्तम बोध विद्या से युक्त, गायन विद्या में लीन, सुन्दर रूपवान्, राजा के दिए हुए घोडे तथा रथों से युक्त, प्रसिद्ध कीर्तिवाला राजा से सम्मानित, तीर्थकृत्य में बुद्धि रखनेवाला, आत्म बोधमें संन्यासी के समान उत्तमसिद्ध पीठों का दर्शक, परमेश्वर की भक्ति में प्रीति रखने वाला, तप से युक्त, समस्त शास्त्रों के अर्थ का ज्ञाता एवं नाटक विद्या का वेत्ता होता है।

प्रबन्धपाले पतिभे पदे वा कुलप्रदीपोऽस्य सुतः प्रसिद्धः।
ग्रन्थस्य कर्त्ता नरनाथतुल्योऽलसोज्झितस्तीर्थकरस्तनूभृत्॥ ३७२॥

नवम वा दशम में पञ्चमेश हो तो वह पुरुष अपने कुल का दीपक, ग्रन्थ करने वाला, राजा के समान, आलस्य रहित, तीर्थकरने वाला और उस का पुत्र विख्यात होता है।

दशम गत पञ्चमेश फलः—

धीपे पदे प्रवरकर्मकरोऽतिलीलो
भूपाललब्धविभवो जननीसुखाढ्यः।
उद्यानतोयनिरतो यदि सद्बुधानां
मान्यो नरः सुखयुतः प्रमदाप्रसक्तः॥ ३७३॥
प्रवासी च सदभ्यासशीलो द्यूतक्रियारतः।
प्रसक्तोऽपि नियोगी स्यान्मानुषाधीशकर्म्मकृत्॥ ३७४॥

दशम में पञ्चमेश होतो श्रेष्ठ कर्मकरनेवाला, अतीव लीलावाला, राजा से धनलाभवाला, माता के सुख से युक्त, उद्यान तथा जल सम्बधी कार्य में लीन उत्तम पण्डितों का मान्य, सुखी, स्त्री में आसक्त हृदय, परदेश में निवास करनेवाला, उत्तम अभ्यासवाला, द्यूत क्रिया में लीन, गृहकार्य में प्रसक्त होनेपरभी नियोगवाला एवं राज्यकृत्य को करनेवाला होता है।

लाभगत सुतेश फलः—

लब्धौ मतीशे नृपवंशतुल्यः प्रभूतपुत्रो नरनाथलाभी।
भोगी सुगीतादिकलासमेतो विभुः सुवासा जनवल्लभः स्यात्॥ ३७५॥

व्युपद्रवो ग्रन्थकरश्च शूरो धनी सुदक्षः सुसुहृच्च मानी।
संसक्तचेताः कृतिमुख्यमान्यो मिष्टान्नपानादिवणिक्क्रियाढ्यः ॥ ३७६ ॥

लाभ में पञ्चमेश होतो राजकुल के समान कुलवाला, बहुत पुत्रवाला, राजा से धनलाभवाला, भोगवान्, उत्तम गीतादि कलाओं से युक्त, समर्थ, उत्तम वस्त्रवाला, लोगों का प्रिय, उपद्रवरहित, ग्रन्थकर्ता, शूरवीर, धनवान्, अतिचतुर, उत्तममित्रवाला, मानी कर्म से प्रधान एवं मिष्टान्न पानादि के व्यापारवाला होता है।

व्ययगत सुतेश फलः—

मंत्रेशेऽन्त्ये मन्मथी मानवर्गारूढः सौम्ये सात्मजश्चान्यदेशे।
सौख्योपेतः प्रान्त्यदुःखी व्ययाढ्योऽघे पुत्रोनः पुत्रसन्तापभाक् च ॥ ३७७ ॥

व्यय में पञ्चमेश होतो कामी, मान्य गणों में गिने जानेवाला होता है। शुभग्रह पञ्चमेश होतो पुत्रयुक्त परदेश में सौख्ययुक्त, अन्त में दुःखित और व्ययशील होता है। यदि पापग्रह पञ्चमेश होतो पुत्ररहित तथा पुत्र संतापवाला होता है।

पञ्चमगत मेष राशि फलः—

यदाऽऽद्यभेऽपत्यगतेऽनपत्यान् क्रूरान्कुशीलान्विकृतान्विवित्तान्।
सुखोज्झितान्मोहसमन्वितान्वा प्रायेण मर्त्यस्तनयाँल्लभेत ॥ ३७८ ॥

पञ्चम में मेष होतो सन्तान हीन, क्रूर, दुष्टस्वभाव, विकृतशरीर, निर्धन, सुखरहित एवं मोहयुक्त पुत्रों की प्राप्ति होती है।

पंचम गत वृष फलः—

प्रभावयाते वृषभाभिधाने प्रायेण पुत्र्यः सुभगाः सुरूपाः।
स्वभर्तृधर्म्मे निरता अपत्यहीना भवेयुर्बहुकान्तियुक्ताः ॥ ३७९ ॥

पंचम में वृष हो तो उस मनुष्य की बहुधा सौभाग्यवती, रूपवती, पति के धर्म में लीन, सन्तान रहित एवं बहुत शोभा युक्त कन्या यें होती है।

पंचम गत मिथुन फलः—

नृयुग्मराशौ प्रतिमागृहस्थ आप्नोत्यपत्यानि बलान्वितानि।
गुणाधिकानि प्रभया युतानि रम्याणि वा शीलसमन्वितानि ॥ ३८० ॥

पंचम में मिथुन हो तो बलवान्, अधिक गुणवान्, कान्तिमान्, मनोहर और शील युक्त सन्तान को पाता है।

पंचम गत कर्क फलः—

सम्प्राप्नोति महाशयान् सविनयान्विस्तीर्णकीर्त्तींस्तथा
विख्यातान्सुतलालसान्धनयुतानात्मोद्भवान्मानवः।

कर्के नन्दनगेऽथ वा सुतयुतः शीतस्वभावः स्मर-
रक्तः प्राप्तयशोऽधिको रतजलक्रीडश्च योषित्प्रियः ॥ ३८१ ॥

पंचम में कर्क होतो वह मनुष्य बड़े आशय वाले, विनय युक्त, बडी कीर्ति वाले,प्रसिद्ध, पुत्राभिलाषी और धनवान् पुत्रों को पाता है । अथवा वह मनुष्य पुत्र युक्त, शीतलस्वभाव, कामी, अधिक यशस्वी, जलक्रीडा वाला एवं स्त्री जनों का प्रिय होता है।

पंचम गत सिंह फलः——

मृगेन्द्रभे नन्दनभे सुतीव्रा योषाप्रसूताः क्षुधया समेताः ।
नृशंसभावाः पलवल्लभाश्च कान्त्या विहीनाः परदेशभाजः ॥ ३८२ ॥

पंचम में सिंह हो तो तीक्ष्ण स्वभाव वाले, कन्यासन्तान वाले, क्षुधा युक्त, क्रूरस्वभाव वाले, मांसाहारी कान्तिराहित और परदेश में वास करने वाले पुत्र होते हैं।

पंचम गत कन्या फलः——

पाथोननाम्न्यात्मजमन्दिराश्रिते भवन्ति कन्यास्तनयैर्विवर्जिताः ।
प्रियाधवानां दुरितच्युताः सदा तथा प्रगल्भा वृषभूषणप्रियाः ॥ ३८३ ॥

पञ्चम में कन्या हो तो मनुष्य की पुत्र रहित, पतियों की प्यारी, नित्य पाप रहित, निर्भय स्वभाव वाली एवं धर्म तथा भूषण को प्रिय मानने वाली कन्या यें होती है।

पञ्चम गत तुला फलः——

यस्योपलब्धौ जनने घटर्क्षे क्रियायुतानि स्युरपत्यकानि ।
जन्तोः सुशीलानि तथा स्वरूपयुक्तानि रम्याणि सुशिक्षितानि ॥ ३८४ ॥

पञ्चम में तुला होतो क्रियायुक्त, सुशील, रूपवान्, मनोहर शरीर एवं सुशिक्षित सन्तान होती है।

पञ्चम गत वृश्चिक फलः——

सरीसृपे यस्य नरस्य सूतौ सूनौ वियोनौ सुभगास्तनूजाः ।
स्युः स्वीयधर्म्मेऽनुरताः सुशीला आढ्यास्तथा सप्रणया अदोषाः ॥ ३८५ ॥

पञ्चम में वृश्चिक हो तो मनुष्य के वियोनि में सज्जन, स्वधर्म परायण, सुशील, धनी प्रेमयुक्त एवं निर्दोष पुत्र होते है।

पंचम गत धनू राशि फलः——

तुरङ्गजंघे तनयालयोपगे पुंसां विचित्रा हयमार्गपेशलाः ।
हतारिपक्षा नृपमानसंयुता: सेवाप्रियाः कार्मुकचर्यकाः सुताः ॥ ३८६ ॥

पंचम में धनु हो तो पुरुषों के विचित्र, अश्वविद्या में चतुर, शत्रुपक्ष को नाश करने वाले, राजा से सम्मानित एवं धनुर्विद्या में निपुण पुत्र होते है।

पंचम गत मकर राशि फलः—

एणानने चेद् धिषणालयाश्रिते नपुंसभावाः प्रियताविवर्जिताः।
गतप्रभावाश्च मृषाघबुद्धयः सुताः कुरूपा अतिनिष्ठुरा मताः ३८७॥

पंचम में मकर होतो मनुष्य के नपुंसक स्वभाव वाले, प्रियता रहित, प्रभाव रहित, मृषाभाषी तथा पाप बुद्धि वाले, कुत्सित रूपवाले, एवं अत्यन्त निष्ठुर पुत्र होते है।

पंचम गत कुम्भ राशि फलः—

घटाभिधाने मनुमन्दिरस्थिते कष्टप्रसूतास्तनया बहुश्रुताः।
सुशक्तियुक्ताः स्थिरतासमन्विता गम्भीरचेष्टाश्च विनष्टनन्दनाः॥ ३८८॥

पंचम में कुम्भ हो तो पुरुषों के कष्ट से प्रसव होने वाले, प्रसिद्ध, अतिशक्ति शाली, स्थिरता युक्त, गम्भीर चेष्टावाले एवं विनष्ट पुत्रवाले पुत्र होते है।

पंचम गत मीन राशि फलः—

संविन्निकेतेऽनिमिषे तनूभृतां भवन्ति पुत्राः सगदाः सकल्मषाः।
अम्भोरता हास्ययुताः सरूपकास्तथाऽल्पवीर्य्या वशगाः स्वयोषिताम् ॥ ३८९॥

पंचम में मीन होतो मनुष्यों के रोगी, पापी, जलक्रीडा वाले, हास्य युक्त, रूपवान्, अल्प बली एवं स्त्रियों के वशीभूत पुत्र होते है।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते सुतभावचिन्तनप्रकरणं सप्तविंशमवसितम्।

अथ

शत्रुभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते।

शत्रुभाव में विचारणीय पदार्थ परिज्ञानः—

वैरी रुजेर्म्ममधुरादिषडौपदंशा-
श्चिन्ता व्यथा भयकटी पशुमातुलौ च।
नाभिः क्षतं व्यसनतस्करविघ्नशङ्का-
सापत्नमातृसमरा रिपुभे विचिन्त्यम् ॥ १ ॥

वैरी, रोग व्रण, मधुरादि षड्रस, चिन्ता, व्यथा, भय, कटि (कमर) पशु, मातुल (मामा) नाभिस्थान क्षत (घाव) व्यसन, तस्कर (चोर) विघ्न, शङ्का, सापत्नमाता (सौतेली माता) समर (युद्ध) इत्यादि पदार्थों का विचार षष्ठ स्थान में करना चाहिए।

शत्रु परिज्ञानः—

सपत्नभावो यदि वाऽस्य नाथो यादृग्भवेत्तादृगरिर्जनस्य।
तत्रारुणे क्षत्रियजातिशत्रुः सोमे स्वकीयः कुटिले तुरुष्कः॥ २ ॥

ज्ञे स्त्रीजनो देवगुरौ कुदेवो वेश्याजनोऽच्छेऽन्त्यभवो विपक्षः।
कोणे फणीन्द्रेऽरिगतेऽरिपे वा षष्ठेऽरिपे ज्ञातिजनोऽरिरुक्तः॥ ३ ॥

षष्ठ भाव अथवा षष्ठ भाव का स्वामी जिस जाति, जिस वर्ण तथा जिस स्वभाव वाला हो उसी के समान मनुष्य का शत्रु होता है। षष्ठ भाव में सूर्य हो अथवा षष्ठ भाव का स्वामी सूर्य हो तो क्षत्रिय जातिवाला शत्रु एवं चन्द्रमा हो तो स्वजाति का शत्रु भौम हो तो तुरुष्क (मुसलमान) शत्रु, बुध हो तो स्त्री शत्रु, गुरु हो तो ब्राह्मण शत्रु, शुक्र हो तो वेश्या शत्रु एवं शनि तथा राहु हो तो अन्त्यज (चण्डाल) जाति का शत्रु होता है। यदि षष्ठ भाव में षष्ठेश हो तो ज्ञाति जन शत्रु होता है।

शत्रुजित्प्रभृति योगः—

जितारिरिज्येऽरिगतेऽथ पौरे खेऽस्तेऽरिपेऽसृग्वति पौरपेऽरेः।
दोषो निधाने यदि पाप्मयोगाधिक्येऽधरारातिवशङ्गतो ना ॥ ४ ॥

षष्ठ में गुरु हो तो शत्रु को जीतनेवाला होता है। लग्न दशम वा सप्तम में षष्ठेश हो और लग्नेश यदि मङ्गल से युक्त हो तो शत्रु का दोष होता है। यदि धनस्थान में अधिक पाप ग्रहों का योग हो तो नीच शत्रु के वश में मनुष्य होता है।

शत्रु नाश योगः—

दुःस्थेऽरीशे नीचमूढारियुक्ते सोर्ज्जे होराधीश्वरे वोदयेशात् ।
द्वेष्याधीशे स्वल्पवीर्य्येऽथ वाऽरौ छायानाथे कौतुके वैरिनाशः ॥ ५ ॥

त्रिक में नीचराशिगत अस्तगत वा शत्रु राशि गत ग्रह से युक्त षष्ठेश हो और लग्नेश बली होतो (१) लग्नेश की अपेक्षा यदि षष्ठेश अल्प बली हो तो (२) कौतुक अवस्था में षष्ठ भावगत सूर्य हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष शत्रुजनों का नाश करनेवाला होता है।

वैरि हन्ता योगः—

घातेशे घनयाते किं तस्मिन्बलयुक्ते ।
किं द्वेष्ये शुभदृष्ट्या धिक्ये द्वेषणहन्ता ॥ ६ ॥

लग्न में षष्ठेश हो वा षष्ठेश बली हो वा षष्ठ स्थान में शुभ ग्रहों की आधिक दृष्टि हो तो शत्रु को मारने वाला होता है।

शत्रु के साथ मित्रता का योगः—

सद्युक्तदृष्टे शुभभे विपक्षे यद्वाङ्गपाद्वैरिविभौ बलोने ।
उपेतदृष्टे विमलैर्विहङ्गैर्वदन्ति मैत्रीं सह शात्रवेण ॥ ७ ॥

शत्रु स्थान में शुभ ग्रह की राशि हो और वह शुभ युक्त दृष्ट हो तो (१) लग्नेश की अपेक्षा षष्ठेश निर्बल हो और वह शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की शत्रु के साथ मित्रता होती है।

शत्रु के चिन्तवन का विशेष विचारः—

कृष्णेक्षितेऽस्रो द्विषि वैरिणं दिशेत्सद्युक्तदृष्टोऽतिभयं न वैरितः ।
घातेऽसतां दृष्टियुती रिपुक्षयं तत्रोत्तमानामुदयोऽभिघातिनाम् ॥ ८ ॥

षष्ठ में भौम हो और वह शनि से दृष्ट हो तो शत्रु को देता है। अर्थात् उस का शत्रु होता है। षष्ठ गत भौम यदि शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो शत्रुजन से विशेष भय नहीं होता है। एवं षष्ठ स्थान पाप ग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो शत्रु का नाश और शुभ ग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो शत्रुओं का उदय होता है।

मतान्तर से षष्ठ गत दर्शी शुभाशुभ ग्रहों के फल का परिज्ञानः—

उत्पत्तिमूर्तेररिमन्दिरेऽमलैर्युक्तेक्षिते वैरिजनान्न साध्वसम् ।
तत्रोग्रखेटैर्युतलोकिते व्रणं शत्रुक्षतं लाञ्छनकं दरं बहु ॥ ९ ॥

जन्म लग्न से जो षष्ठ स्थान हो यदि वह शुभ ग्रहों से दृष्ट तथा युक्त हो तो शत्रुजनों से भय नहीं होता है। एवं षष्ठ स्थान यदि पाप युक्त दृष्ट हो तो मनुष्य के शरीर में व्रण शत्रु से क्षत (घाव), लाञ्छन (चिन्ह) एवं बहुत भय होता है।

षष्ठ भाव में विशेष विचारः—

सञ्चिन्तयेत्क्षतरिपुव्यसनानि रोगान्
भौमारितः किमु गदान् गदभावयातैः ।
गुह्यान्त्यगैर्गगनगैर्गदगेहपेन
यद्वा तदन्वितखगैः परिचिन्तयेद्वित् ॥ १० ॥

मङ्गल तथा षष्ठ भाव से क्षत, शत्रु, व्यसन तथा रोगों का विचार करे। अथवा षष्ठ अष्टम तथा व्यय गत ग्रहों से अथवा षष्ठेश से अथवा षष्ठेश युक्त ग्रहों से रोगों का विचार करे।

सूर्य के रोगः—

शिरोऽक्षिपीडां ज्वरदेहतापनामोष्णातिसारक्षयतापकामयान् ।
पित्तं विषास्त्रानलदारुजव्यथां हृत्क्रोडजव्याधिमरातिसाध्वसम् ॥ ११ ॥

त्वग्दोषमस्थिस्रुतिमङ्गनात्मजव्यापच्चतुष्पाद्भयं नरेशतः ।
चौरात्सुराद्विप्रजनाच्च भूतपाद्हेर्दरं दुष्ट इनः करोति नुः ॥ १२ ॥

'सूर्य' यदि दुष्ट हो तो शिर तथा नेत्रों में पीडा, ज्वर, देहतापन, उष्णातिसार, क्षय, तापरोग पित्त एवं विष अस्त्र, अग्नि तथा काष्ठ से पीडा को करता है। हृदय तथा उदर में रोग एवं शत्रु से भयको करता है। त्वचा में दोष (चर्मरोग), अस्थिस्रुति (हड्डीका टूटना), स्त्री पुत्र की हानि एवं पशु, राजा, चोर, देवता, ब्राह्मण, भूत-पति (शिव) और सर्प से भयको करता है।

चन्द्रमा के रोगः—

आलस्यनिद्रापिटकाग्निमन्दतारुचीर्मरुच्छ्लेष्मकपीनसामयान् ।
प्रमेहपाण्डूदकदोषकामिलातिसारवाताधिकताङ्गनाव्यथाः ॥ १३ ॥

शीतज्वरं रक्तविकारमम्बुजशृङ्ग्याहतिं बालविहङ्गकिन्नरैः ।
यक्ष्या भयं धर्म्मसुराहिकालिकाप्सरोऽम्बुभीतिं कुरुते कलाधरः ॥ १४ ॥

'चन्द्रमा' यदि दुष्ट हो तो आलस्य, निद्रा, पिटक (फोडा), अग्निमान्द्य (मन्दाग्नि), अरुचि (बदहजमी) वायु, श्लेष्म, पीनस रोग, पाण्डु, जलदोष, कामिला (कमल वायु) अतिसार, वाताधिकता, स्त्री पीडा, शीतज्वर रक्तविकार, जलजन्तु तथा शृङ्गी पशु से पीडा, बालग्रह, किन्नर तथा यक्षी से भय, एवं धर्म्म, देवता, सर्प, कालिका अप्सरा और जल से भय को करता है।

भौम के रोगः—

तृष्णास्रकोपज्वरपित्तपावकविषास्त्रपीडातनुभङ्गपामिकाः ।
ग्रन्थ्यक्षिरुक्कुष्ठदरिद्रजामयापस्मारमज्जाविहतिव्रणादिकान् ॥ १५ ॥

नैष्ठुर्य्यगुल्मामयपीनबीजकसुहृत्सहोत्थात्मजयुद्धशत्रुताः।
स्तेनारिघोरग्रहभूपराक्षसगन्धर्वमाहेशभयं करोत्यसृक् ॥ १६ ॥

'मङ्गल' यदि अनिष्ट हो तो तृष्णा, रक्तकोप, ज्वर, पित्त, अग्नि, विष तथा अस्त्र से पीडा, देहभङ्ग, पामिका (खुजली) ग्रन्थी, नेत्ररोग, कुष्ठ, दरिद्र जन्य रोग, अपस्मार (मृगीरोग), मज्जाविहति, व्रणादि, निष्ठुरता, गुल्मरोग, पीनबीजक (अण्डवृद्धि), मित्र, भ्रातृ तथा पुत्रजनों से कलह और शत्रुता एवं चोर, शत्रु, घोर ग्रह राजा, राक्षस, गन्धर्व और शिवगणों से भय को करता है।

बुध के रोगः—

भ्रान्तिं गलघ्राणभवामयं ज्वरं दुःस्वप्नमोहाक्षिगदांश्च दुर्वचः।
नैष्ठुर्य्यबन्धश्रमगुह्यकोदरादृश्यामयान्मायुमरुत्कफोद्भवम् ॥ १७ ॥

विषं च कुष्ठं पतनं धनञ्जये मन्दाग्निशूलग्रहणीविचर्चिकाः।
गन्धर्वभूहर्म्यनिवासिवैष्णवग्रहैर्व्यथां सूचयतीन्दुनन्दनः ॥ १८ ॥

'बुध' यदि दुष्ट हो तो भ्रान्ति (भ्रम) गलजन्य तथा नासिकाजन्य रोग, ज्वर, दुष्टस्वप्न, मोह (मूर्छा), नेत्ररोग, दुष्टवचन, निष्ठुरता, बन्धन, परिश्रम, गुह्य, उदर, अदृश्यरोग; पित्त, बायु तथा कफ से उत्पन्न रोग, विष (त्रिदोष), कुष्ठ, अग्निपतन, मन्दाग्नि, शूल, संग्रहणी, विचर्चिका रोग एवं गन्धर्व, भूमिवासी, हर्म्यवासी, वैष्णव तथा ग्रहों से पीडा को करता है।

गुरु के रोगः—

गुल्मान्त्रजूर्त्यामहमोहशोककच्छर्दीकफोत्थानुपतापकांश्च।
श्रोत्रव्यथां किन्नरयक्षदेवविद्याधरव्यालभवामयांश्च ॥ १९ ॥

गीर्वाणधामस्थनिधिप्रपीडनं भूदेवताशापसमुद्भवां व्यथाम्।
विपश्चिदाचार्य्यजनापचारजां पीडां नराणां कुरुते बृहस्पतिः ॥ २० ॥

'गुरु' यदि दुष्ट हो तो गुल्मरोग, अंत्र (आतडी में) रोग, ज्वररोग; मोह (मूर्छा), शोक, छर्दी (वमन) कफजन्यरोग, उपताप, कानों में पीडा; किन्नर, यक्ष, देवता, विद्याधर तथा सर्प से उत्पन्न रोग, देवमन्दिर स्थित निधिसे पीडा, ब्राह्मण के शाप से उत्पन्न पीडा एवं पण्डित और गुरुजन के अपमान से उत्पन्न पीडा को करता है।

शुक्र के रोगः—

शोषामयं श्लेष्ममरुत्प्रकोपं पाण्डुं प्रमेहामयमूत्रकृच्छ्रे।
शुक्रस्रुतिं गुह्यगदाक्षिरोगौ स्मर व्यथां दानवसंघभीतिम् ॥ २१ ॥

रोगं सदा वारवधूविकारजं निजेष्टवामाकृतयोगिनिभयम्।
यक्ष्या दरं मातृगणाद् भयं कविः करोति भङ्गं प्रियमित्रयोस्तथा ॥ २२ ॥

'शुक्र' यदि दुष्ट हो तो शोष रोग, श्लेष्म तथा वातजन्य कोप, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रस्रुति (नेत्ररोग विशेष) गुह्य, नेत्र रोग, कामजन्य पीडा, दैत्यगणों से भय; वेश्याओंसे उत्पन्न रोग; मित्र, स्त्री, योगिनी, यक्षी तथा मातृगण से भय एवं प्रियजन तथा मित्रजन का नाश करता है।

शनि के रोगः—

गुह्ये व्यथां श्वासगदानिलोदररुग्भ्यन्तरुष्णांघ्रितनूहृतीर्हृदि ।
तापं विपत्तिं सुतभार्य्ययोः कफमरुद्विकारं भृतकक्षयं तथा ॥ २३ ॥

भ्रान्तिं च पार्श्वाहतिकुक्षिसन्धिरुक्तन्द्राश्रमापत्तिकुटाश्मकक्षतीः ।
दारिद्र्यभूपेशपिशाचतस्करमूर्च्छाभयं भास्करजः प्रसूचयेत् ॥ २४ ॥

'शनि' यदि दुष्ट हो तो गुह्येन्द्रिय में पीडा, श्वास रोग; वात तथा उदर रोग से भय, चरणों में उष्णता, हृदय में ताप; पुत्र तथा स्त्री की विपत्ति; कफ तथा वातजन्य विकार सेवक का नाश, भ्रान्ति (भ्रम) पार्श्वहति (बगलों में पीडा), कुक्षि तथा सन्धियों में रोग; तन्द्रा (ऊंघ) तथा परिश्रम से आपत्ति; कुट (अस्त्र) तथा पत्थर से क्षति एवं दारिद्र्य, राजा, शिवगण, पिशाच, चोर तथा मूर्च्छा से भय को करता है।

राहु के रोगः—

कुष्ठं चेतसि तापमात्मजवधूव्यापत्तिमंघ्रिव्यथां
भूतप्रेतपिशाचसम्भवभयापस्मारविध्यामयान् ।
क्षुद्रारज्जुमसूरिकृत्रिमकृमिव्याधीन्विषोद्बन्धने
मर्त्यानां प्रकरोति सर्पजगदं सिंहीतनूसम्भवः ॥ २५ ॥

'राहु' यदि दुष्ट हो तो कुष्ठ रोग, हृदय में रोग, पुत्र स्त्री की विपत्ति, पादपीडा; भूत; प्रेत तथा पिशाच जनित भय; अपस्मार तथा विधि रोग; क्षुधा, रज्जु, मसूरी, कृत्रिम तथा कृमि रोग, विष तथा उद्बन्धन एवं सर्पजन्य भय को करता है।

केतु तथा गुलिक के रोगः—

पाथोबाधनकण्डुकर्म्मजगदस्वाचारहीनोद्भवान्
रोगानल्पकजातिवृन्दरिपुजां भीतिं मसूर्य्यामयम् ।
विप्रक्षत्रियवैरकृत्रिमसुखान्भीतिं विषप्रेतजां
केतुः कालसुतः कलेवरभवामार्त्तिं तथाऽऽशौचकम् ॥ २६ ॥

'केतु' यदि दुष्ट हो तो जलजन्य बाधा, कण्डु (खुजली), कर्म रोग, निजाचारहीनजन्य रोग, लघुजातियों के समुदाय से तथा शत्रु से उत्पन्न भय, मसूरिका रोग ब्राह्मण तथा क्षत्रिय से वैर तथा कृत्रिम (बनावटी) इत्यादि रोग एवं विष तथा प्रेतजन्य भय को करता है। 'गुलिक' यदि दुष्ट हो तो शरीरजन्यपीडा तथा अशौच (अशुद्धि) को करता है।

रोग योगः—

रम्येतराक्रान्त उषेश्वरे पुरे किं कण्टकेऽघे सुकृतेक्षणोनिते ।
यद्वाऽऽस्फुजिद्भे कलुषे कुजार्चितकाव्यैरदृष्टे जनितो रुजान्वितः ॥ २७ ॥

लग्न में पापाक्रान्त चन्द्रमा हो तो (१) केन्द्र में पाप ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (२) शुक्र की (२।७) राशि में पाप ग्रह हो और वह भौम, गुरु तथा शुक्र से दृष्ट न हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष रोग युक्त होता है ।

मन्दासृजोर्मन्थ्यगयोस्तदुद्भवो रोगोऽरिगे साघनिशाकरे गदी ।
स्वोच्चेऽरिपे पुंतनुगेऽघलोकिते गूढो गदोऽङ्गेऽरिवशाज्जनुष्मताम् ॥ २८ ॥

षष्ठ में शनि तथा मङ्गल हों तो मनुष्यों के शरीर में उन से उत्पन्न रोग होता है । स्वोच्च राशि में वा पुरुष राशि के लग्न में षष्ठेश हो और वह पाप दृष्ट हो तो मनुष्यों के शरीर में शत्रु के कारण गुप्त रोग होता है ।

केन्द्रे कोणे शक्तिमुक्तेऽङ्गपे वा लेखापाले सारिपेऽङ्गे त्रिके किम् ।
साग्नेयेऽङ्गे पौरपे प्राणहीने वाङ्गेऽङ्गेशे सत्रिकेशेऽथ वाऽङ्गे ॥ २९ ॥

पापैर्दृष्टे संयुतेऽङ्गेशि मृत्यौ पञ्चत्वेशे पौरगे किं पुरेशे ।
रोगागारे रोहिणीशान्वितेऽङ्गे क्रूरैर्दृष्टे वा खलैः सन्ततिस्थैः ॥ ३० ॥

याम्ये सोग्रेऽङ्गेशि वाऽस्तं प्रयातौ भेज्यौ होरेशेऽस्तमाप्ते विशेषात् ।
मृत्युस्थाने मन्दतामन्दिरे वा नीहारांशौ मन्दतामेति नित्यम् ॥ ३१ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में निर्बल लग्नेश हो तो (१) लग्न वा त्रिक में षष्ठेश युक्त लग्नेश हो तो (२) लग्न में पाप हो और लग्नेश निर्बल हो तो (३) लग्न में त्रिकेश युक्त लग्नेश हो तो (४) 'लग्न' यदि पाप दृष्ट युक्त हो अष्टम में लग्नेश और लग्न में अष्टमेश हो तो (५) षष्ठ में लग्नेश और लग्न में पाप दृष्ट चन्द्रमा हो तो (६) पञ्चम में पाप ग्रह हों और अष्टम में पापयुक्त लग्नेश हो तो (७) शुक्र तथा गुरु अस्तंगत हों, विशेषतः लग्नेश अस्तगत हो और अष्टम वा षष्ठ में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष नित्य रोग युक्त होता है ।

प्रान्त्ये वा पथि पुत्रे पङ्गौ पापविहङ्गैः ।
संयुक्ते किमु दृष्टे सञ्जातो गदयुक्तः ॥ ३२ ॥

व्यय नवम वा पञ्चम में पाप युक्त दृष्ट शनि हो तो मनुष्य रोग युक्त होता है ।

एकर्क्षगैस्त्रिचतुरादिभिरुग्रखेटै—
जर्तो जनो गदयुतो निवसन्ति खेटाः
सर्वे त्र्यकास्तपदवेश्मसु तत्र पापाः
कष्टप्रदा निजतनूविषये भवन्ति ॥ ३३ ॥

एक स्थान में तीन चार प्रभृति पापग्रह हों तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य रोग युक्त होता है। तृतीय, व्यय, सप्तम तथा दशम में सब ग्रह हों तो उन में पापग्रह अपने अङ्ग के प्रदेश में कष्टदायक होते है।

व्ययविधुर्व्ययकान्तकुलाशुभा अधिककष्टकराः कलुषेऽङ्गपे।
शिरसि वा कृशमासि घने गदः किमुत तौ तनुगौ गददायकौ ॥ ३४ ॥

व्यय में चन्द्रमा और व्यय, सप्तम तथा दशम में पापग्रह हों तो अधिक कष्ट करते है। लग्न में पाप लग्नेश हो वा लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो वा लग्न में पाप लग्नेश और क्षीण चन्द्रमा हो तो रोग दायक होते है।

अनेक रोग योगः—

देहद्वेष्येशौ मिथः पूर्णदृष्ट्या दृष्टौ वार्केऽङ्गेऽङ्गपे साघखेटे।
मंत्रेऽमित्रे राजराजेऽथ वाङ्गे त्वाष्ट्रीन्द्वर्कैर्विग्रहेऽनेकरोगाः ॥ ३५ ॥

लग्नेश और षष्ठेश ये दोनों परस्पर पूर्ण दृष्टिसे देखते हों तो (१) लग्न में सूर्य, लग्नेश पापयुक्त और पञ्चम वा अष्टम में चन्द्रमा हो तो (२) लग्न में शनि, चन्द्र तथा सूर्य हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य के शरीर में अनेक रोग होते है।

दुःखोदयद्रव्यगतैरघग्रहैर्धिष्ण्यानिदाघांशुनिलिम्पमंत्रिभिः।
पुष्पेषुशान्तामयगैः किमायपे शत्रावनेकामयभाग्भवी भवेत् ॥ ३६ ॥

व्यय, लग्न तथा धन में पापग्रह हों और सप्तम, अष्टम तथा षष्ठ में शुक्र, चन्द्र तथा गुरु हों अथवा षष्ठ में लाभेष हों तो मनुष्य अनेक रोग युक्त होता है।

वचोनिशान्तसंश्रितौ वसुन्धराप्रभासुतौ।
समस्तरोगकारका उदाहृतौ विचक्षणैः ॥ ३७ ॥

धन में मङ्गल तथा शनि हों तो समस्त रोगों को करने वाले कहे हैं।

नित्य रोगी योगः—

त्रिकेऽत्ययेशि वा भये तदीश्वरे सपावके।
पतङ्गजेऽहिनाऽन्विते सदा नरो रुजान्वितः ॥ ३८ ॥

त्रिक में अष्टमेश हो तो (१) षष्ठस्थान तथा षष्ठेश ये दोनों पापयुक्त हों और शनि यदि राहु से युक्त हो तो उक्त योगों में नित्य रोगी होता है।

पित्त रोग योगः—

सवैधवे देहधवे त्रिके वा दिवाकरेऽरावघयुक्तदृष्टे।
किं कोशगे क्रूरखगे विनाशे त्र्यम्बे विवीर्य्येऽसृजि पित्तरोगः ॥ ३९ ॥

त्रिक में लग्नेश बुध हो तो (१) षष्ठ में सूर्य हो और वह पापयुक्त दृष्ट हो तो (२) धन में पाप, अष्टम में सूर्य और भौम निर्बल हो तो उक्त योगों में पित्तरोग होता है।

सार्कौ सितेऽरीशि हरौ हयेऽजे किं पूर्णदृष्ट्या किमु तुर्य्यदृष्ट्या।
दृष्टे पपीजेन तथा विधेऽच्छे सम्पीड्यते पित्तगदेन मर्त्यः ॥ ४० ॥

सिंह धनु वा मेष में षष्ठेष शुक्र हो और वह शनि से युक्त हो तो (१) षष्ठेष शुक्र को यदि शनि पूर्ण दृष्टि से वा चतुर्थ दृष्टि से देखता हो तो उक्त योगों में मनुष्य पित्तरोग से पीडित होता है।

छिद्रेऽङ्गे सकुजेऽङ्गपे न सुकृतैर्दृष्टे तनौ वाष्टमे
कल्पेशे किमु भास्करे सपुरपे पौरे न पुण्येक्षिते।
यद्वेन्दुविमर्दने निधनगे वित्तेऽथ वा वैरिणि
धात्रीनन्दनवीक्षिते हरिजभे पित्तार्दितो जातकः ॥ ४१ ॥

अष्टम वा लग्न में मङ्गल युक्त लग्नेश हो और वह शुभ दृष्ट न हो एवं लग्न वा अष्टम में लग्नेश हो तो (१) लग्न में लग्नेश युक्त सूर्य हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (२) अष्टम धन वा षष्ठ में राहु हो और 'लग्न' यदि मङ्गल से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पित्त से पीडित होता है।

इलाभवे भयस्थले खलेक्षिते खलांशगे।
तदीश्वरे सपामरान्वयेक्षणेऽस्रपित्तभाक् ॥ ४२ ॥

षष्ठ में पापांश गत मङ्गल हो और वह पापदृष्ट हो एवं षष्ठेश यदि पाप ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योग में रक्त पित्त रोग से युक्त होता है।

वात रोग योगः—

दुर्बलौ द्रविणपार्चितौ गिरि किं रिपौ खललवे खलेक्षिते।
श्वेतगौ तदधिपेऽहसेक्षिते संयुतेऽथ समये सपत्नपे ॥ ४३ ॥
निम्नगे किमु गुरौ पुरे स्मरे भास्करावथ तनौ शनौ कुजे।
धीगुरुस्मर उतान्तिमे यमे क्षीणचन्द्रकलितेऽनिलार्दितः ॥ ४४ ॥

द्वितीय में दुर्बल द्वितीयेश तथा दुर्बल गुरु हों तो (१) षष्ठ में पापांशगत चन्द्रमा हो और वह पापदृष्ट हो एवं षष्ठेश पाप दृष्ट युक्त हो तो (२) नीच राशि में शनि युक्त षष्ठेश हो तो (३) लग्न में गुरु हो और सप्तम में शनि हो तो (४) लग्न में शनि और पञ्चम नवम वा सप्तम में मङ्गल हो तो (५) व्यय में क्षीण चन्द्र युक्त शनि हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य वात रोग से पीडित होता है।

सपामरे कलाधरे खलग्रहेण लोकिते।
कलेवरालयाश्रिते सशीतरुक् पुमान्भवेत् ॥ ४५ ॥

लग्न में पाप युक्त चन्द्रमा हो और वह पाप दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष शीत रोग से युक्त होता है।

मूर्त्तौ मूर्त्तिपतौ मृदौ द्विषि नवाक्षाब्दे ऽनिलेनार्दितो
लेखेशे खलपीडिते पुरगृहे पापे मरुत्पीडितः।
साहौ राजनि रायि शीतलयुतः स्यात्सन्निपातामयो
माहेयेक्षितमन्दगे युधि गदे ऽङ्गे वातरक्तार्दितः ॥ ४६ ॥

लग्न में लग्नेश हो और षष्ठ में शनि हो तो (१) लग्नेश यदि पाप ग्रह से पीडित हो और लग्न में पाप ग्रह हो तो मनुष्य वात रोग से पीडित होता है। धन में राहु युक्त चन्द्रमा हो तो शीत युक्त सन्निपात रोग होता है। अष्टम षष्ठ वा लग्न में मङ्गल दृष्ट शनि हो तो वात रक्त से पीडित होता है।

कफ रोग योगः—

तुरीयराश्यङ्कलवस्थिते विधौ क्रूरैरुपेते ऽथ भगे ऽथ वा भपे।
मन्दार्दिते मानसगे ऽथ मन्दगमार्त्तण्डयोगे कफतो निपीडितः ॥ ४७ ॥

चतुर्थ भाव में जो राशि और जो नवांश हो उस में यदि चन्द्रमा हो और वह पाप युक्त हो तो (१) चतुर्थ में शनि से पीडित सूर्य वा चन्द्रमा हो तो (२) शनि और सूर्य का योग हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष कफ रोग से पीडित होता है।

अरातिधाम्नि विद्वति बलासवे ऽशुभांशके।
विधूशनोविलोकिते कफामयेन पीड्यते ॥ ४८ ॥

षष्ठ में बुध युक्त मङ्गल हो और वह पापांशक में हो एवं चन्द्र तथा शुक्र से दृष्ट हो तो कफ रोग से पीडित होता है।

रक्त विकार योगः—

कान्तान्त्यकल्पकटिगे कुटिले सकोले
हेलीक्षिते किमु कुजे ऽरिभनीचमूढे।
किं मङ्गले सगुलिके ऽर्थलये किमस्र
दृष्टान्विते द्रविणपे रुधिरोपतापः ॥ ४९ ॥

सप्तम व्यय लग्न वा षष्ठ में शनि युक्त मङ्गल हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो (१) शत्रुराशि में नीचराशि में वा अस्तगत भौम हो तो (२) द्वितीय वा अष्टम में गुलिक युक्त मङ्गल हो तो (३) द्वितीयेश यदि मङ्गल से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योगों में रक्तविकार रोग होता है।

वित्ते वक्रे ब्रध्नदृष्टे समेति नाऽऽज्यस्पर्शं पिङ्गले मङ्गले वा।
होरास्तार्थाऽऽयोधने ऽन्योन्यदृष्ट आज्यस्पर्शो वह्निभीः शीतला वा ॥ ५० ॥

धन में भौम हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो मनुष्य आज्यस्पर्श (रुधिर विकार) को प्राप्त होता है। लग्न, सप्तम, द्वितीय तथा अष्टम में सूर्य वा मङ्गल हो और सूर्य मंगल की परस्पर दृष्टि हो तो आज्यस्पर्श (रुधिर विकार) अग्नि भय वा शीतला रोग होता है।

वात कफादि योगः—

ज्ञेऽरौ खलांशे खललोकिते खलोपेतेक्षिते तद्रमणे निपीडितः।
मरुत्कफाभ्यां सखलारुणे स्मरे वातोदरास्रग्विनिपीडितो जनः ॥ ५१ ॥

षष्ठ में पापांश गत बुध हो और वह पाप दृष्ट हो एवं षष्ठेश पाप युक्त दृष्ट हो तो वात तथा कफ से पीडित होता है। सप्तम में पाप युक्त सूर्य हो तो वायु, उदर पीडा तथा रुधिर विकार से पीडित होता है।

दीर्घ रोग योगः—

भूमीनजौ भयाश्रितौ भाकोषभोगिलोकितौ।
कल्पाधिपे बलोनिते दीर्घामयान्वितो भवी ॥ ५२ ॥

षष्ठ में मङ्गल तथा शनि हों और वे सूर्य तथा राहु से दृष्ट हों एवं लग्नेश निर्बल हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष दीर्घ रोग से युक्त होता है।

वाध्य तथा आम रोग योगः—

असन्नभोगेक्षितयोर्मदस्थयोर्महीजभृग्वोर्यदि वाध्यरोगभाक्।
विलग्ननाथामरनाथमंत्रिणोस्त्रिकस्थयोरामगदेन पीड्यते ॥ ५३ ॥

सप्तम में पापदृष्ट मङ्गल शुक्र हों तो वाध्य (बद) रोगवाला होता है। त्रिक में लग्नेश तथा गुरु हों तो मनुष्य आम रोग से पीडित होता है।

ज्वर रोग योगः—

क्षितिभुवि भययातेऽभ्यागमस्थे तदीशे
रसरविमितवर्षे जूर्तिरोगार्दितः स्यात्।
दशशतकरपुत्रे पापिपातेनयुक्ते
न विमलखगदृष्टे रक्ततापामयी स्यात् ॥ ५४

षष्ठ में मङ्गल हो और अष्टम में षष्ठेश हो तो छठे वा बारह वें वर्ष में ज्वर रोग से पीडित होता है। 'शनि' यदि मङ्गल राहु तथा सूर्य से युक्त हो और शुभ दृष्ट न हो तो रक्त ज्वर रोगवाला होता है।

चातुर्थिक ज्वर रोग योगः—

आयोधनानाथे सोषाविभुशत्रौ।
किं केतुसमेते चातुर्थिकजूर्त्तिः ॥ ५५ ॥

अष्टमेश यदि राहु वा केतु से युक्त हो तो चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर रोग होता है।

प्रमेह रोग योगः—

मदनगेमिहिरभार्कजैरुत मङ्गले मनसिजे तनाविने।
किं कुजे जनकभे यमेक्षितसंयुते जनिमतां प्रमेहरुक् ॥ ५६ ॥

पञ्चम में सूर्य, शुक्र तथा शनि हों तो (१) सप्तम में मङ्गल और लग्न में सूर्य हो तो (२) दशम में मङ्गल हो और वह शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में मनुष्यों को प्रमेह रोग होता है।

* प्राचीविलग्नेश्यरिनीचराशौ लग्ने खलप्रेक्षणतां प्रयाते।
उपेतदृष्टं निधनं सितेन प्रमेहकृत्कीर्तित एष योगः ॥ ५७ ॥

नीच वा शत्रु राशि में लग्नेश हो, लग्न पाप दृष्ट हो और अष्टम स्थान यदि शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो यह प्रमेह कारक योग होता है।

सकल्मषेऽर्चिते क्षते किमुग्रगे विलग्नभे।
खलग्रहैर्निरीक्षिते न सद्विलोकिते तथा ॥ ५८ ॥

षष्ठ में पाप युक्त गुरु हो अथवा गुरु पाप युक्त हो, लग्न पाप दृष्ट हो और शुभ दृष्ट न हो तो प्रमेह रोग से पीड़ित होता है।

क्षय रोग योगः—

व्ययलयभययातौ भोद्गमेशौ किमङ्गे
रुधिररविजदृष्टे किं बुधे कर्कगे वा।
निधननिलय उग्रे मन्दगे नन्दनस्थे
भवभवन इनेऽथो मध्यगौ मङ्गलैनौ ॥ ५९ ॥

हितहरहरिजेऽर्के वाऽहितेऽस्ते सहेन्द्रे
शशधरसितदृष्टे क्रूरभागेऽथवांशात्।
क्रमत उरगभौमौ द्वादशक्षीरगौ वा
कुटिलकलितचन्द्रेऽङ्गेशदृष्टे लयेऽरौ ॥ ६० ॥

क्षयी भवेत्सौरियुते सुधाकरे पृथ्वीजदृष्टे परिवेषगे क्षयी।
किं निष्ठुरोक्तिर्ग्रहणीभवक्षयी मृग्याख्यपूर्वेण गदेन दुःखितः ॥ ६१ ॥

---

* 'अत्र पाठान्तरम्'—काव्ये कुटुम्बमैधने कायाधिपे नतारिभे। आग्नेयलोकिते तनौ मेहादिरोगपीडित' इति।

त्रिक में लग्नेश तथा शुक्र हों तो (१) लग्नेश को यदि मङ्गल तथा शनि देखते हों तो (२) कर्क में बुध हो तो (३) अष्टम में पाप ग्रह, पञ्चम में शनि और लाभ में सूर्य हो तो (४) दशम में मङ्गल तथा शनि हों और लग्न अष्टम वा चतुर्थ में सूर्य हो तो (५) षष्ठ में बुध युक्त मङ्गल हो और वह क्रूरांश में हो एवं चन्द्र शुक्र से दृष्ट हो तो (६) कारकांश लग्न से व्यय में राहु और सुख में मङ्गल हो तो (७) अष्टम वा षष्ठ में मङ्गल युक्त चन्द्रमा हो और वह लग्नेश से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष क्षय रोग वाला होता है। परिवेष में शनि युक्त चन्द्रमा हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष क्षय रोगी निष्ठुरभाषी संग्रहणीजन्य क्षय रोगी वा मृगी प्रभृति रोग से पीडित होता है।

क्षीणे विधौ जलभगे मलिनान्विते ऽरौ
साघे वने क्षयगदो निधने घनेशे।
केन्द्रे मृदावहिपतावहिते रसाश्वि-
सँव्वत्सरे क्षयगदेन निपीड्यमानः ॥ ६२ ॥

षष्ठ में जल राशि का पाप युक्त क्षीण चन्द्रमा हो और लग्न पाप युक्त हो तो क्षय रोग होता है। अष्टम में लग्नेश, केन्द्र में शनि और षष्ठ में राहु हो तो २६ वें वर्ष में क्षय रोग से पीडित होता है।

शोषरोग वा क्षय रोग योगः—

चन्द्रार्कयोर्भांशगयोः परस्परं शोषी मनुष्यो युगपद्धगाब्जयोः।
क्षेत्रे तथैकस्थितयोः कलेवरी शोषी कृशो वा क्षयरोगपीडितः ॥ ६३ ॥

चन्द्रमा सिंहराशि में वा सिंहांश में हो और सूर्य कर्क राशि में वा कर्कांश में हो तो शोष रोगवाला होता है। सूर्य और चन्द्रमा ये दोनों कर्क में वा सिंह में एक ही साथ हों तो शोष रोगी दुर्बल वा क्षय रोग से पीडित होता है।

श्वासकासक्षयजनितरोग योगः—

मान्द्यस्थाने मन्दगे मान्दियुक्ते ऽसृक्पातिनप्रेक्षणत्वं प्रयाते।
कल्याणानामन्वयेक्षाविमुक्ते जातो जन्तुः सक्षयश्वासकासः ॥ ६४ ॥

षष्ठ में गुलिक युक्त शनि हो और वह भौम, राहु तथा सूर्य से दृष्ट हो एवं शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट न हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष क्षय श्वास वा कास रोग से पीडित होता है।

ग्रन्थ्यादि रोग योगः—

विधुन्तुदे नैधनभागयाते तन्नायके नैधनधीविधिस्थे।
पुराणतुल्ये किमु जातितुल्ये ऽब्दे ग्रन्थिमेहादिगदेन कष्टम् ॥ ६५ ॥

अष्टम भाव में जिस राशि का नवांश हो उस में राहु हो और अष्टम पञ्चम वा नवम में उस नवांश राशि का स्वामी हो तो १८ वें वा २२ वें वर्ष में ग्रन्थि (गठिया) रोग तथा प्रमेहादि से कष्ट होता है।

शोणितादि रोग योगः—

सास्रेक्षणेऽब्जे पतितेऽसितान्विते कलेवरे शोणितरोगभाग्भवेत् ।
हेलौ तनौ लोहितदेहलेक्षिते गुल्मक्षयश्वासगदान्वितो जनः ॥ ६६ ॥

पतित (६।१२) में भौम दृष्ट चन्द्रमा हो और लग्न में शनि हो तो शोणित (रक्त) रोग वाला होता है। लग्न में सूर्य हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो तो गुल्म, क्षय तथा श्वास रोग से युक्त होता है।

सङ्ग्रहणीरोग योगः—

पोष्यवेश्मनि पृदाकुसनाथे तत्र भानुभुवि वा ग्रहणीभाक् ।
कारकांशकतनोर्मतियाते केशपाशिखचरे ग्रहणीभाक् ॥ ६७ ॥

द्वितीय में राहु वा शनि हो तो संग्रहणी रोग वाला होता है। कारकांश लग्न से पञ्चम में केतु हो तो भी संग्रहणी रोग वाला होता है।

अति सार रोग योगः—

साहौ बुधेऽङ्के सकुजेऽसिते स्मरे वारौ भृगौ क्रूरलवेऽहसेक्षिते ।
तदीयनाथे सखलान्वयेक्षणे तदा भवी स्यादतिसाररोगभाक् ॥ ६८ ॥

लग्न में राहु युक्त बुध हो और सप्तम में मङ्गल युक्त शनि हो अथवा षष्ठ में क्रूरांशगत शुक्र हो और वह पापदृष्ट हो एवं षष्ठेश भी पाप युक्त दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष अतिसार रोग वाला होता है।

मान्द्यमन्दिरगे मासे मेदिनीनन्दनान्विते ।
वान्तिभ्रान्तिसमुत्पन्नपाण्डुरोगेण पीडितः ॥ ६९ ॥

षष्ठ में मङ्गल युक्त चन्द्रमा हो तो वान्ति भ्रान्ति जन्य पाण्डु रोग से पीडित होता है।

पाण्डुभङ्गन्दरादि रोग योगः—

दृष्टेऽब्जेऽघैर्दुष्टयोगे मृतीशेऽङ्के सास्तेशेऽङ्गेशि शान्ते स्मरस्थे ।
आरे सागूर्णांशुजे पाण्डुशोफ वाल्मीक्यर्शोदद्रुमेहोपतापी ॥ ७० ॥

दुष्ट योग में यदि चन्द्रमा पाप दृष्ट हो और लग्न में अष्टमेश हो एवं अष्टम में सप्तमेश युक्त लग्नेश हो और सप्तम में राहु शनि से युक्त भौम हो तो पाण्डु भङ्गन्दर अर्श वाल्मीकि दद्रु वा प्रमेह रोगवाला होता है।

जलोदर रोग योगः—

मेषे सनाथे सिंहिकामरीचिना कोले कुलीरे सलिलोदरार्दितः ।
हर्य्योर्रवाप्तौ हरिजे भुजङ्गमे जलोदरी खेचररूपवत्सरे ॥ ७१ ॥

मेष में चन्द्रमा और कर्क में शनि हो तो जलोदर रोग से पीडित होता है। लाभ में सूर्य चन्द्र हों और लग्न में राहु हो तो १९ वें वर्ष में मनुष्य जलोदर रोगवाला होता है।

प्लीह रोग योगः—

पुण्याद्दष्टे पङ्कदृष्टे ऽरिपेन्दौ वैवं भूते कामकल्पेट् कलेशे ।
प्लीही चन्द्रेनोत्थयोर्धीस्थयोर्वा ऽरीशग्लौभेशोरसद्दृष्टयोः स्यात् ॥ ७२ ॥
प्लीहाराक्योर्मध्यगे शीतभानौ भानौ नक्रे श्वासभाक् प्लीहवांश्च ।
पौरे पङ्गौ प्लीहवान् सम्मदोनः सौरौ सौख्ये प्लीहवान्नष्टदृष्टिः ॥ ७३ ॥

षष्ठेश चन्द्रमा हो और वह पाप दृष्ट हो एवं शुभ दृष्ट न हो अथवा सप्तमेश वा लग्नेश चन्द्रमा हो और वह पाप दृष्ट हो एवं शुभ दृष्ट न हो तो प्लीही (तिल्ली) रोग वाला होता है । पञ्चम में चन्द्रमा तथा शनि हों अथवा षष्ठेश तथा चन्द्रराशीश ये दोनों पाप दृष्ट हो तो प्लीह रोगवाला होता है । मङ्गल तथा शनि के मध्य में चन्द्रमा हो और मकर में सूर्य हो तो श्वास तथा प्लीह रोगवाला होता है । लग्न में शनि हो तो प्लीह रोगी और हर्ष रहित होता है । सुख में शनि हो तो प्लीह रोगी और नष्ट दृष्टि वाला होता है ।

क्रूरैर्दृष्टे द्यूनपे वा विनष्टदग्धत्राधावह्नि तुर्ये ऽथ पापैः ।
दृष्टे द्यूने देहपे सद्दृशोने वैनौ पौरे पीडिते पामरेण ॥ ७४ ॥
कायेशे ऽथो कृष्णपक्षे रजन्यां दग्धे ऽङ्गेशे दुष्टगे वा सपापे ।
पीथे पाथोभांशगे ऽथास्तषष्ठे पापोपेते प्लीहमेतीह देही ॥ ७५ ॥

सप्तमेश यदि पाप दृष्ट हो तो (१) दिन का जन्म हो और चतुर्थ में नष्ट दग्ध शनि हो तो (२) सप्तम में लग्नेश हो और वह पाप दृष्ट हो एवं शुभ दृष्ट न हो तो (३) लग्न में शनि हो और लग्नेश पापाक्रान्त हो तो (४) कृष्ण पक्ष में रात्रि का जन्म हो और दुष्ट स्थान में दग्ध लग्नेश हो तो (५) चतुर्थ में पाप युक्त सूर्य हो वा चतुर्थभाव गत नवांश राशि में पापयुक्त सूर्य हो अथवा पाप युक्त सूर्य जलराशि के नवांश में हो तो (६) सप्तम तथा षष्ठ में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष प्लीह रोग को प्राप्त होता है ।

प्लीहार्शः स्यात्सोदये सूनुसूनौ होरापाले पावकैः पीडिते ऽथो ।
कृष्णे पक्षे नक्तमङ्गे हिते ऽस्ते सौरौ शीतोष्णोत्थितप्लीहभाक् स्यात् ॥ ७६ ॥

लग्न में शनि और लग्नेश पापाक्रान्त हो तो प्लीह तथा अर्श रोग होता है । कृष्ण पक्ष में रात्रि का जन्म हो लग्न सुख वा सप्तम में शनि हो तो शीतोष्णजन्य प्लीह रोगवाला होता है ।

गुल्म रोग योगः—

रुजि मिहिरतनूजे पापदृष्टे खलांशे
खलखगयुतदृष्टे तत्पतौ वा ससौरौ ।
शशिनि कलशकर्काल्यंशके ऽथान्तके ऽङ्गे
सखलकृशकलेशे ऽरौ कलौ गुल्मरोगः ॥ ७७ ॥

षष्ठ में पापांशगत शनि हो और वह पाप दृष्ट हो एवं षष्ठेश भी पाप युक्त दृष्ट हो तो (१) कुम्भ कर्क वा वृश्चिक के नवांश में शनि युक्त चन्द्रमा हो तो (२) लग्न में शनि और षष्ठ वा अष्टम में पाप युक्त क्षीण चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के शरीर में गुल्म रोग होता है ।

बलविरहितपापाः पञ्चमे प्रत्यनीके
तनुभवभवनेशे वीर्य्यमुक्ते तथैव ।
द्विषि चरमगृहेशेऽन्त्ये तदिन्द्रे शरत्सु
तिथिषु खगुणतुल्यास्वत गुल्मामयः स्यात् ॥ ७८ ॥

पञ्चम में निर्बल पाप ग्रह हों और षष्ठ में निर्बल पञ्चमेश हो तो गुल्म-रोग होता है। षष्ठ में व्ययेश और व्यय में षष्ठेश हो तो १५ वें वर्ष में वा ३० वें वर्ष में गुल्म रोग होता है।

वातकृद्गुल्मादिरोग योगः—

साघे क्षीणे मन्दसाङ्गोपगेऽब्जे वाऽरौ रन्ध्रे वातकृद्गुल्मरोगः ।
प्रत्यर्थीशे प्राणमुक्ते कुजेऽङ्गे रोगोऽजीर्त्तिः शूलगुल्मान्विता स्यात् ॥ ७९ ॥

शनि की राशि के लग्न में षष्ठ में वा अष्टम में पाप युक्त क्षीण चन्द्रमा हो तो वातजन्य गुल्म रोग होता है। षष्ठेश निर्बल हो और लग्न में मङ्गल हो तो शूल तथा गुल्म युक्त अजीर्ण रोग होता है।

गुल्मादि रोग योगः—

प्राणोज्झितेऽरिपालके यद्वोदये कुनन्दने ।
मूर्धास्यगुल्मविद्रधिरोगार्दितो नरो भवेत् ॥ ८० ॥

षष्ठेश बलरहित हो अथवा लग्न में मङ्गल हो तो उक्त योगों में शिर, मुख, गुल्म तथा विद्रधि रोग से पीडित होता है।

विद्रधि रोग योगः—

क्षतेऽर्चितेऽशुभेक्षितेऽशुभांशके तदीश्वरे ।
अघान्वितेक्षिते भजेद्यदुद्भवे स विद्रधिम् ॥ ८१ ॥

षष्ठ में पापांश गत गुरु हो और वह पाप दृष्ट हो एवं षष्ठेश पाप युक्त दृष्ट हो तो विद्रधि रोग को प्राप्त होता है।

विद्रधिश्वासादि रोग योगः—

गौरद्युतौ गर्हितखेचरान्तरे कृष्णप्रभेऽस्तेऽथ भगे मृगानने ।
मन्दारमध्ये हिमभाश्रि विद्रधिप्लीहक्षयश्वासकगुल्मभाग् जनः ॥ ८२ ॥

पाप ग्रहों के अन्तराल में चन्द्रमा हो और सप्तम में शनि हो तो (१) मकर में सूर्य और शनि मङ्गल के मध्य में चन्द्रमा हो तो विद्रधि प्लीह क्षय श्वास वा गुल्म रोग वाला होता है।

वसूरिकादिरोग योगः—

काये कुजे कोणविवस्वदीक्षिते वसूरिरोगाभिहतो हिमत्विषि ।
स्वे सौरिभे स्निग्धदृशा विलापकृत्काव्यासृजोः कान्तगयोर्वधूगदः ॥ ८३ ॥

लग्न में भौम हो और वह शनि तथा सूर्य से दृष्ट हो तो वसूरी (शीतला) रोग से पीड़ित होता है। धन में शनि की (१०।११) राशि गत चन्द्रमा हो और वह किसी ग्रह की मित्रदृष्टि से दृष्ट हो तो विलाप रोग को करता है। सप्तम में शुक्र तथा मङ्गल हों तो स्त्रीरोग होता है।

अर्शो रोग योगः—

मन्दे ऽन्त्ये मलिनेक्षिते ऽथ रुधिरे द्यूने घने मन्दगे
वास्ते नोत्तमलोकिते लयभवे ऽहःपीड्यमाने ततः।
कौर्प्ये ऽस्रे नवमे दिने मदनगे कृष्णे ऽथ कृष्णे व्यये
लग्नेड्मङ्गललोकिते किमु कुजे साङ्गाधिपे वेक्षिते ॥ ८४ ॥

क्षोणीभुवा कामदृशोदयेशे वाङ्गे कुजे ऽलौ न सितेज्यदृष्टे।
किं पूर्णिमामान्त इलाजयुक्ते ऽर्के ऽब्जे किमर्शोगदतप्त एषु ॥ ८५ ॥

व्यय में पाप दृष्ट शनि हो तो (१) सप्तम में मङ्गल और लग्न में शनि हो तो (२) सप्तम में पाप पीड़ित अष्टमेश हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (३) दिन का जन्म हो, नवम में वृश्चिक राशि गत मङ्गल हो और सप्तम में शनि हो तो (४) व्यय में शनि हो और वह लग्नेश तथा मङ्गल से दृष्ट हो तो (५) मङ्गल यदि लग्नेश से युक्त हो तो (६) लग्न में वृश्चिक राशि गत मङ्गल हो और वह शुक्र गुरु से दृष्ट न हो तो (७) जन्म समय से पूर्व की पूर्णिमा वा अमावास्या के अवसान काल में जो लग्न हो उस में जन्म हो और उस में मङ्गल युक्त सूर्य वा चन्द्र हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष अर्शोरोग (ववासिर) से पीड़ित होता है।

मृदौ व्यये ऽङ्गपासृजोः स्मरस्थयोः किमस्तगे।
न शोभनेक्षिते ऽशुभे पराभवाधिपे तथा ॥ ८६ ॥

व्यय में शनि और सप्तम में लग्नेश तथा मङ्गल हों अथवा सप्तम में अष्टमेश पाप ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो अर्शो रोग (ववासिर) से पीड़ित होता है।

भगन्दर अर्श तथा कुष्ठ रोग योगः—

छिद्रे सभूजे भविभौ भगन्दरार्शःकुष्ठरोगाः स्युरिनारमन्दगैः।
भार्यालयस्थैः स भगन्दरानिलार्शःशूलरोगैर्विनिपीडितो भवी ॥ ८७ ॥

अष्टम में मङ्गल युक्त चन्द्र हो तो भगन्दर, अर्श तथा कुष्ठ रोग होते हैं। सप्तम में सूर्य, भौम तथा शनि हों तो भगन्दर, वात, अर्श तथा शूल रोगों से पीड़ित होता है।

मुख शोफादि रोग योगः—

वाचस्पतौ वा ऽऽस्फुजिति क्षतेशे दृष्टे खलैर्लग्नग आस्यशोफी।
ज्ञासृग्भगे ऽङ्गेशि विपक्षवीक्षिते स्यादासनार्द्धे रुगरातिपे ऽनुजे ॥ ८८ ॥
स्यान्नाभिरोगी रुजि भानुजे ऽग्निरुग् गुल्मापतापो व्ययगे बृहस्पतौ।
कालालयस्थैः कविपूज्यपण्डितैस्त्रिदोषदाः स्युर्घनतुल्यवत्सरे ॥ ८९ ॥

षष्ठेश गुरु वा शुक्र हो और वह पाप दृष्ट होकर लग्न में हो तो उक्त योग में मुख में शोष होता है। बुध की (३।६) राशि में वा मंगल की (१।८) राशि में लग्नेश हो और वह शत्रुग्रह से दृष्ट हो तो आसन के अर्द्धभाग में रोग होता है। तृतीय में षष्ठेश हो तो नाभि रोग वाला होता है। षष्ठ में शनि हो तो पाद रोगी होता है। व्यय में गुरु हो तो गुप्त रोग रोगी होता है। अष्टम में शुक्र, गुरु तथा बुध हों तो १७ वें वर्ष में त्रिदोष रोग को करते हैं।

शूल रोग योगः—

वैरिनिम्नभवने घननाथे मङ्गले मनसि पामरदृष्टे।
पैङ्गलौ किमु हरौ हिमभानौ पापपीडित उतानुगधाम्नि ॥ ९० ॥

प्राप्तिपेऽथ भृगुजे हरिराशौ केन्द्रकोणकलितेऽनुज इज्ये।
किं गदव्ययगयोः कुजशन्योः शूलरोगविनिपीडित एषु ॥ ९१ ॥

नीच राशि वा शत्रु राशि में लग्नेश हो, मुख में भौम हो और शनि पाप दृष्ट हो तो (१) सिंह में पापाक्रान्त चन्द्रमा हो तो (२) तृतीय में लाभेश हो तो (३) केन्द्र वा त्रिकोण में सिंह राशि गत शुक्र हो और तृतीय में गुरु हो तो (४) षष्ठ तथा व्यय में शनि तथा मङ्गल हों तो उक्त योगों में शूल रोग से पीडित होता है।

सन्धि शूल रोग योगः—

क्षितेरधःस्थे मिहिरे खलार्दिते नक्तं ततो दग्धतुषारदीधितौ।
सौरीसराफे किमु केन्द्रगार्किणा दृष्टे रजन्यां यदि दग्धशुभ्रगौ ॥ ९२ ॥

किं दग्धचन्द्रेऽहनि मङ्गलेक्षितेऽथाङ्गांशकामांशगयोरसौम्ययोः।
अन्तःस्थिते ग्लावि चतुष्टये तथेनेन्द्वोरपाये रुजि सन्धिशूलरुक् ॥ ९३ ॥

रात्रि का जन्म हो और लग्न से पञ्चम में पापाक्रान्त सूर्य हो तो (१) शनि से दग्ध चन्द्रमा का इसराफ योग हो तो (२) रात्रि का जन्म हो और दग्ध चन्द्रमा को केन्द्रगत शनि देखता हो तो (३) दिन का जन्म हो और दग्ध चन्द्रमा को मङ्गल देखता हो तो (४) लग्न तथा सप्तम में जो नवांश राशि हो उन में पाप ग्रह हों और उन पाप ग्रहों के अन्तराल में केन्द्रगत चन्द्रमा हो तो (५) व्यय तथा षष्ठ में सूर्य और चन्द्रमा हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष को सन्धि शूल रोग होता है।

शूलवैसर्पादि रोग योगः—

आदित्यासृक्संयुते शीतकेतौ घातस्थाने शूलवैसर्परुग्भाक्।
लग्नस्थेऽर्के सैनसीलाजशन्यो रन्ध्रे रोगेऽङ्गोत्थरुग्भाक् सशूलः ॥ ९४ ॥

षष्ठ में सूर्य मङ्गल युक्त चन्द्रमा हों तो शूल वैसर्प रोग वाला होता है। लग्न में पाप युक्त सूर्य हो अष्टम वा षष्ठ में मङ्गल शनि हों तो शूल सहित अङ्गजन्य रोग से युक्त होता है।

अपस्मार (मृगी) रोग योगः—

क्रूराकाशचरैः सपत्ननिधनान्त्यस्थैः परिध्यन्विते
गौरे केन्द्रगते किमक्षयमयो रोगे विनाशेऽथवा।

कालागारगतैः समस्तदहनैः केन्द्रस्थयोर्भार्गव-
ग्लावोर्वा सपतङ्गजे शिशिरगौ वक्रेक्षिते ऽथो बधे ॥ ९५ ॥

चन्द्राह्नोर्विगतोर्ज्जयोः किमु रवीन्द्वारैः क्षयाङ्गाश्रितैः
संदृष्टे दहनैरथेह परिधौ किं वा ग्रहानेहसि ।
रन्ध्रे ऽरौ कुजमन्दयोर्गतगुरावङ्गे त्रिकोणे किमु
क्षीणग्लावि लये कुजार्क्यहियुते दुःस्थे ऽप्यपस्मारभाक् ॥ ९६ ॥

त्रिक में पाप ग्रह हों और केन्द्र में परिवेष युक्त गुरु हो तो (१) षष्ठ वा अष्टम में मङ्गल शनि हों तो (२) अष्टम में समस्त पाप ग्रह हों और केन्द्र में शुक्र चन्द्रमा हों तो (३) 'चन्द्रमा' यदि शनि से युक्त हो और मङ्गल से दृष्ट हो तो (४) अष्टम में निर्बल चन्द्रमा राहु हों तो (५) अष्टम तथा लग्न में सूर्य, चन्द्र तथा मङ्गल हों और वे पापदृष्ट हों तो (६) परिवेष समय में वा ग्रहण दिन में जन्म हो, अष्टम वा षष्ठ में भौम तथा शनि हों और लग्न तथा त्रिकोण रहित स्थान में गुरु हो तो (७) अष्टम वा त्रिक में क्षीण चन्द्रमा हो और वह मङ्गल, शनि तथा राहु से युक्त हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष अपस्मार (मृगी) रोग वाला होता है।

यमे तमे च नैधने ऽशुभास्त्रिकोणवर्त्तिनः ।
सहोयुतास्तथा रविः कुजश्च रोगदौ यदि ॥ ९७ ॥

अष्टम में शनि तथा राहु हों और त्रिकोण में बलवान् पाप हों तो (१) त्रिक में रवि हों तो (२) त्रिक में भौम हों तो भी उक्त योगों में अपस्मार रोग होता है।

कलानिधावरातिगे कलेवरे कविग्रहे ।
यदुद्भवे स मानुषो मृगीमुखामयार्दितः ॥ ९८ ॥

जिस के जन्म समय में षष्ठ में चन्द्रमा और लग्न में शुक्र हो तो वह मृगी प्रभृति रोग से पीडित होता है।

पक्षाघात रोग योगः—

पीयूषांशौ पीथपुत्रेसराफे पक्षाघातः कम्पतः शूलतश्च ।
जर्णे जीर्णे पूषजातेसराफे पक्षाघातो मांसगुल्माद् गदः स्यात् ॥ ९९ ॥

शनि के साथ चन्द्रमा का इसराफ योग हो तो कम्प तथा शूल से पक्षाघात (लकवा) रोग होता है। एवं शनि के साथ क्षीण चन्द्रमा का इसराफ योग हो तो मांसगुल्म से पक्षाघात रोग होता है।

श्यामानाथे ऽस्तङ्गते श्लेष्मघातो घाते ऽघे ऽरीशे ऽहसा पीडिते च
मुक्ते ऽमर्त्यामात्यदृष्ट्या मनुष्यो जातः पक्षाघातरोगेण दुःखी ॥ १०० ॥

चन्द्रमा अस्तंगत हो तो कफ के कारण पक्षाघात रोग होता है। षष्ठ में पाप हो और षष्ठेश पापाक्रान्त हो एवं वह गुरु से दृष्ट न हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य पक्षाघात रोग से दुःखित होता है।

उन्माद योगः—

मूढेन्दुराज्यौ हरिजे ऽथ साघकृशक्षपेशो ऽङ्गभवाङ्कचिद्रः ।
अथार्किजो ऽस्ते सखलो ऽथ सोग्रो ज्ञस्त्रिकस्थः कुरुते प्रमादम् ॥ १०१ ॥

लग्न में क्षीण चन्द्रमा और बुध हों तो (१) लग्न लाभ नवम वा पञ्चम में पाप युक्त क्षीण चन्द्रमा हो तो (२) सप्तम में पाप युक्त मान्दि हो तो (३) तृतीय वा त्रिक में पाप युक्त बुध हो तो उक्त योगों में मनुष्य को उन्मादरोग को करता है।

गौरे ऽङ्गे ऽस्ते ऽस्र उतार्किजो वा मृदूदये ऽस्रो मदकोणगो वा ।
सार्कौ कलेशे गलिते ऽवसाने किं रोहिणीशे चरणे सराहौ ॥ १०२ ॥

सार्वे शुभैरायुरितैरथार्कौ देहे ऽरुणे ऽन्त्ये ऽसृजि वा सुधांशौ ।
त्रिकोणयाते किमु पुष्पवन्तौ कोणाङ्गगौ विक्रमकण्टकस्थे ॥ १०३ ॥

यूपध्वजे भौममृदुक्षणाह उन्मादभाक् स्याज्जनितस्तदानीम् ।
कोलग्रहे कोशगृहेशयुक्ते सपावले वातभयात्प्रमादः ॥ १०४ ॥

लग्न में गुरु और सप्तम में भौम वा शनि हो तो (१) लग्न में शनि और सप्तम वा त्रिकोण में भौम हो तो (२) व्यय में शनि युक्त क्षीण चन्द्रमा हो तो (३) व्यय में राहु युक्त तथा पाप युक्त चन्द्रमा और अष्टम में शुभ ग्रह हो तो (४) लग्न में शनि, व्यय में सूर्य और त्रिकोण में मङ्गल वा चन्द्रमा हो तो (५) त्रिकोण वा लग्न में सूर्य तथा चन्द्रमा हों, तृतीय वा केन्द्र में गुरु हो और जन्म समय में मङ्गल वा शनि की काल होरा तथा वार हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष उन्माद रोग वाला (विक्षिप्त) होता है। यदि 'शनि' द्वितीयेश तथा पाप ग्रह युक्त हो तो वातजन्य प्रमाद होता है।

कुटुम्बपार्क्योः सविवस्वतोर्नृपक्रोधात्प्रमादो वसुधाजयुक्तयोः ।
पङ्क्त्यर्थपत्योर्यदि पित्तसम्भवो मूढारिनिम्ने ऽनुजमन्दिराश्रिते ॥ १०५ ॥

नभश्चरे पामरलोकनाचिते विषप्रमादो भुजभावभर्त्तरि ।
सनिर्जरेज्ये जलराशिविग्रहे पाथःप्रमादं समुपैति पुङ्गलः ॥ १०६ ॥

द्वितीयेश तथा शनि ये दोनों सूर्य से युक्त हों तो राजा के क्रोध से प्रमाद। एवं वे दोनों मङ्गल से युक्त हों तो पित्तजन्य उन्माद। तृतीय में अस्तगत शत्रु राशि गत वा नीच राशि गत ग्रह हो और वह पाप दृष्ट हो तो विषजन्य उन्माद जल राशि के लग्न में गुरु युक्त तृतीयेश हो तो जलजन्य प्रमाद को प्राप्त होता है।

भ्रम युक्त योगः—

तुषाररश्मिहेम्नयोश्चतुष्टयालयस्थयोः ।
न निर्मलांशयातयोर्वदन्ति सभ्रमोद्भवम् ॥ १०७ ॥

केन्द्र में चन्द्रमा तथा बुध हों और वे शुभ ग्रहों के नवांश में न हों तो उक्त योग में भ्रम युक्त पुरुष के जन्म को कहते हैं।

दद्रुरोग योगः—

स्वे ऽब्जे ऽम्बुभे वा सयमे ऽथ भारवौ भूकेन्द्रगे किं तनुपे ऽथ वा विधौ।
स्निग्धर्क्षगे दारगृहे कुभागगादित्यात्मयुक्ते मनुजः स दद्रुमान् ॥ १०८ ॥

धन में जल राशि गत अथवा शनि युक्त चन्द्रमा हो तो (१) भूकेन्द्र (लग्न वा चतुर्थ) में सूर्य वा लग्नेश हो तो (२) सप्तम में स्निग्ध (४।८।१२) राशि गत चन्द्रमा हो और वह भूमि भाग गत शनि से युक्त हो तो मनुष्य दद्रु रोग वाला होता है।

चान्द्रीन्द्विनाः कलत्रगा अन्यग्रहा हिताश्रिताः।
सँव्वत्सरे ऽष्टिसम्मिते दद्रुप्रदा भवन्ति ते ॥ १०९ ॥

सप्तम में बुध, चन्द्र तथा सूर्य हों और चतुर्थ में अन्य ग्रह हों तो १६ वें वर्ष में दद्रु (दाद) रोग को करते है।

खर्ज्जु (खुजली) कुष्ठ रोग योगः—

पुण्यसद्मनि तनौ मृगक्रियतोयभे तपनजेन लोकिते।
किं विधावघयुतेक्षिते किमु श्यामलः क्रियमृगाम्बुराशिगः ॥ ११० ॥

तद्युतेक्षितपयोभगो विधुः किं विधौ सद्वजिनग्रहे शुभे।
धार्किजे सकुटिले बलान्विते सोदरे ऽथ सखले कलावति ॥ १११ ॥

कर्किकीटझषगे सुखोज्झितः खर्जुकुष्ठसहितस्तमीपतौ।
किल्बिषाम्बरचरैः समन्विते वारिभे मिहिरजेक्षिते तथा ॥ ११२ ॥

पुण्य सहम के लग्न में मकर मेष वा जलचर राशि हो और वह शनि से दृष्ट हो तो (१) 'चन्द्रमा' यदि पाप ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो (२) जलचर राशि गत चन्द्रमा यदि मेष मकर वा जलचर राशि गत शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो (३) नवम में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो (४) सहज में भौम युक्त बली शनि हो तो (५) कर्क वृश्चिक वा मीन में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य सुख से रहित तथा खर्ज्जु (खुजली) कुष्ठ रोग वाला होता है। जलचर राशि में पाप युक्त चन्द्रमा हो और वह शनि से दृष्ट हो तो भी खर्ज्जु कुष्ठ रोग वाला होता है।

कुष्ठ रोग योगः—

ज्ञे ऽजे कर्म्मणि शुभ्रगौ घटविभूर्वीपुत्रयोगे ऽथ वा
क्रूरैर्वृश्चिककर्किगोहरिणगैः कोणे युते वेक्षिते।
किं सध्वान्तगुदग्रहैः पुरपविचन्द्रैरथारे पुरे
काले ऽर्के मनसीनजे ऽथ निधने ऽरौ वेज्यभास्वद्बुधैः ॥ ११३ ॥

पापे पौरपतौ पुरे खलखगैर्दृष्टेऽथ सर्वैः शुभै-
र्दैष्यच्छिद्रगतैरघैर्घनगतैः सोऽज्ञैः सहःसंयुते ।
दिष्टान्तेशि विनष्ट उद्गमपतौ किं पौरपालं विना
पौरस्थेषु वियच्चरेषु जनिमान् कुष्ठामयेनार्दितः ॥ ११४ ॥

मेष में बुध, दशम में चन्द्रमा और किसी स्थान में शनि मङ्गल का योग हो तो (१) त्रिकोण (५।९) स्थान यदि वृश्चिक कर्क वृष वा मकर राशि गत पाप ग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) लग्नेश, बुध तथा चन्द्रमा ये तीनों राहु वा केतु से युक्त हों तो (३) लग्न में मङ्गल, अष्टम में सूर्य और सुख में शनि हो तो (४) अष्टम वा षष्ठ में गुरु, सूर्य तथा बुध हों, लग्नेश पाप ग्रह हो और लग्न पाप दृष्ट हो तो (५) षष्ठ तथा अष्टम में सब शुभ ग्रह हों, बलवान् पाप ग्रह लग्न में हों, अष्टमेश बली हो और लग्नेश विनष्ट हो तो (६) लग्न में लग्नेश को छोड़कर अन्य ग्रह हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष कुष्ठ रोग से पीड़ित होता है ।

युते कुजेन पित्तजं मरुज्जकुष्ठमार्किणा ।
इनेन रक्तजं तनौ ग्रहोक्तदेहभागके ॥ ११५ ॥

'लग्न' यदि मङ्गल से युक्त हो तो मङ्गल के शरीर भाग में पित्तजन्य कुष्ठ, शनि से युक्त हो तो शनि के शरीर भाग में वातजन्य कुष्ठ एवं सूर्य से युक्त हो तो सूर्य के शरीर प्रदेश में रक्त जन्य कुष्ठ होता है ।

ग्लौयुक्तयोर्विल्कुभुवोः पुरंशयोर्भुजङ्गमे तिग्ममहोसुवा युते ।
किं भारवेर्निर्गतपर्वरश्मिरस्थ गालस्वात्मामलनोकितान्वितः ॥ ११६ ॥

वाऽथाङ्गमध्यांशगते तुषारगौ पतङ्गभूभूसुतयोगदृग्वति ।
कुष्ठी तथाब्जे मृगमत्स्यकर्क्यजांशे योगदृग्वत्यसितावनीजयोः ॥ ११७ ॥

'लग्नेश' यदि बुध वा मंगल हो और वह चन्द्रमा से युक्त हो एवं 'राहु' शनि से युक्त हो तो (१ सूर्य से निर्गत (निकला हुआ) चन्द्रमा अर्थात् शुक्ल पञ्चमी पर्यन्त का क्षीण चन्द्रमा यदि शनि से इत्थशाल योग करे और वह शुभ ग्रह से दृष्ट युक्त न हो तो (२) धनुराशि गत चन्द्रमा यदि मध्यांशक में अर्थात् सिंहांश में हो और वह शनि मंगल से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष कुष्ठी होता है । मकर मीन कर्क वा मेष राशि के नवांश में चन्द्रमा हो और वह शनि मंगल से युक्त दृष्ट हो तो भी कुष्ठी होता है ।

अस्तङ्गते पुराधिपे पौरोपगे समन्विते ।
पातेन पिङ्गलात्मजे पश्चात्वगे स कुष्ठभाक् ॥ ११८ ॥

लग्न में अस्तंगत लग्नेश हो और वह राहु से युक्त हो एवं अष्टम में शनि हो तो भी कुष्ठ रोग वाला होता है ।

श्वेतकुष्ठरोग योगः—

क्वापि स्थितौ कुजविधू बुधविग्रहेशौ
युक्तौ तमेन शिखिना सितकुष्ठवन्तम् ।

कुर्वन्ति ते मनुभवं मृदुमङ्गलाभ्यां
युक्ते कलावति गवि क्रियभे तथैव ॥ ११९ ॥

किसी भी स्थान में मङ्गल चन्द्रमा एक साथ हों एवं बुध तथा लग्नेश भी एक साथ हों और राहु वा केतु से युक्त हों तो श्वेत कुष्ठ (सफेद कोढ़) को करते है। वृष वा मेष में चन्द्रमा हो और वह शनि मङ्गल से युक्त हो तो भी श्वेत कुष्ठ रोग होता है।

सौरारयोः स्वान्त्यगयोरिने द्युने ऽब्जे ऽङ्ग ऽथ वा पुष्पवतोः सपापयोः।
कर्कालिमत्स्योपगयोस्तृणभृत्कव्योः पयोभस्थितयोः सपाप्मनोः ॥ १२० ॥
वार्को व्यये ऽर्थे रुधिरे ऽरुणे स्मरे मूर्त्तौ विधौ वोदयपे वधे खलैः।
युक्तेक्षिते किं लवतो भभर्त्तरि भूमौ भदृष्टे सितकुष्ठभाक् पुमान् ॥ १२१ ॥

द्वितीय और द्वादशस्थान में शनि और मङ्गल हों एवं सप्तम में सूर्य और लग्न में चन्द्रमा हों तो (१) कर्क वृश्चिक वा मीन में पाप युक्त सूर्य चन्द्र हों तो (२) जलचर राशि में पाप युक्त चन्द्र शुक्र हों तो (३) व्यय में शनि, द्वितीय में मङ्गल, सप्तम में सूर्य और लग्न में चन्द्रमा हो तो (४) अष्टम में लग्नेश हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो तो (५) कारकांश लग्न से चतुर्थ में चन्द्रमा हो और वह शुक्र से दृष्ट हो तो उक्त योगों में श्वेत कुष्ठ रोग वाला होता है।

कायाधिपं विनोद्गमे चन्द्रे ऽहिना युते यदा।
कुष्ठं सितं तदा वदेच्चेदार्किणा युते ऽसितम् ॥ १२२ ॥

लग्न में लग्नेश को छोड़कर राहु युक्त चन्द्रमा हो तो श्वेत कुष्ठ को कहे। यदि लग्न गत चन्द्रमा शनि से युक्त हो तो श्याम कुष्ठ होता है।

श्वेतादि कुष्ठ रोग योगः—

कीलाले चरभे कलेशसितयोर्योगे खलेनान्विते
जातः पाण्डुरकुष्ठभाग् गतमलैर्मुक्तैर्यदा शक्तिभिः।
निर्यार्णारिगतैर्वने ऽघविहगैर्दृष्टे सनष्टे लये
कुष्ठं मण्डलमत्रिजे हितगते ऽशात्केतुदृष्टे ऽसितम् ॥ १२३ ॥

पाप युक्त चतुर्थ में चरराशिगत चन्द्र शुक्र का योग हो तो श्वेत कुष्ठ रोग वाला होता है। अष्टम तथा षष्ठ में निर्बल शुभ ग्रह हों और 'लग्न' यदि पाप दृष्ट हो एवं अष्टम में विनष्ट ग्रह हों तो मण्डल कुष्ठ होता है। कारकांश लग्न से चतुर्थ में चन्द्रमा हो और वह केतु से दृष्ट हो तो नील कुष्ठ होता है।

भानौ भौमयमान्विते ऽसृगसितं कुष्ठं सिताक्र्योः क्षते
दृष्टे ऽवैरुदये लये ऽसतपसोर्वारीशभान्वोस्तनौ।
स्यात्कुष्ठं क्षतजं क्षते समृदुगे ऽब्जे ऽक्षशुगाब्दे तथा
पाठीनालिकुलीरगैरघखगैः कुष्ठी सलूतो भवेत् ॥ १२४ ॥

यदि जन्म समय में किसी स्थान में सूर्य हो और वह मङ्गल शनि से युक्त हो तो रक्त कृष्ण कुष्ठ होता है। षष्ठ में शुक्र तथा शनि हों और अष्टम में मङ्गल तथा गुरु हों एवं लग्न पाप दृष्ट हो अथवा लग्न में षष्ठेश तथा सूर्य हों तो रक्त कुष्ठ होता है। षष्ठ में शनि युक्त चन्द्रमा हो तो ५५ वें वर्ष में रक्त कुष्ठ रोग होता है। मीन वृश्चिक तथा कर्क में पाप ग्रह हों तो लूत कुष्ठवाला होता है।

लग्नेऽरिपे सासृजि पित्तकुष्ठभाक् तिथिप्रणीपङ्गुबलाजभार्गवैः।
खलार्दितैर्वारिभसंश्रितैः पुमान्नीलेन कुष्ठेन सवारिणार्दितः॥ १२५॥

लग्न में मङ्गल युक्त षष्ठेश हो तो पित्त कुष्ठ रोग वाला होता है। जलचर राशि में पापाक्रांत चन्द्र, शनि, भौम तथा शुक्र हों तो सजल नील कुष्ठ से पीडित होता है।

लग्नान्मित्रगे मङ्गलेनेक्षितेऽब्जे महाकुष्ठभाङ् मान्द्यपे मन्दयुक्ते।
विलग्ने कफं कुष्ठमन्त्यालयस्थे विवस्वत्सुते गुप्तभागेऽस्य कुष्ठम्॥ १२६॥

कारकांश लग्न से चतुर्थ में चन्द्रमा हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो तो महाकुष्ठी होता है। लग्न में शनि युक्त षष्ठेश हो तो कफ कुष्ठी होता है। एवं व्यय में शनि हो तो उस के गुप्त स्थल में कुष्ठ रोग होता है।

भक्ष्यावरोधजन्य रोग योगः—

अङ्गारकेऽम्बाभवनं प्रयाते पतङ्गजे पापनिरीक्ष्यमाणे।
वैरेऽपि पापाम्बरचारिदृष्टे भक्ष्यावरोधोत्थगदं वदन्ति॥ १२७॥

सुख में भौम हो और शनि पाप दृष्ट हो एवं लग्न भी पाप दृष्ट हो तो भक्ष्यावरोध से उत्पन्न रोग को कहते हैं।

भक्त विरोध रोग योगः—

विलग्नभं पापकवीक्ष्यमाणं विलोकितं श्यामलशोचिषाऽऽयुः।
पश्चात्यपालोऽबल एष योगः प्रकीर्तितो भक्तविरोधकृज्ज्ञैः॥ १२८॥

'लग्न' यदि पाप ग्रह से दृष्ट हो, अष्टमस्थान शनि से दृष्ट हो और अष्टमेश निर्बल हो तो वह भक्त विरोध रोग योग कहा है।

देवता दर्शन जनित रोग योगः—

जननिजनकदेहे देवताराजपूज्ये
यमभुवि यदि केन्द्रे देवतादर्शनोत्थम्।
निगदति गदमङ्गागारपे गर्हिताढ्ये
उदयति चरराशौ श्यामलेऽस्ते तथैव॥ १२९॥

चतुर्थ दशम वा लग्न में गुरु हो और केंद्र में गुलिक हों तो देव दर्शन से रोग को कहते हैं। लग्नेश पाप युक्त हो, लग्न में चरराशि हो और सप्तम में शनि हो तो भी देव दर्शन से रोग होता है।

सपिशाच जन्म योगः—

कोणासृजोः कोणगयोः कलेशेऽसुरास्यगे विग्रहमेऽथ वाऽस्ते।
सौरौ चराङ्गे सखले हिमांशावाग्नेयदृष्टे सपिशाचजन्म ॥ १३० ॥

त्रिकोण में शनि तथा मङ्गल हों और राहु के मुख में लग्न गत चन्द्रमा हो तो (१) सप्तम में शनि, लग्न में चरराशि हो और वह पाप युक्त हो एवं चन्द्रमा पाप दृष्ट हो तो उक्त योगों में पिशाच युक्त पुरुष का जन्म होता है।

चौरान्त्यज जनित रोग योगः—

विहङ्गकल्लोलपतङ्गपुत्रशिखावतामेकतमे त्रिकस्थे।
समन्विते गात्रगृहेश्वरेण रोगोभवेदन्त्यज तस्करोत्थः ॥ १३१ ॥

राहु शनि तथा केतु इन तीनों के मध्य में एक कोई भी लग्नेश से युक्त होकर त्रिक में हो तो अन्त्यज (चण्डाल) तथा चौर से उत्पन्न रोग होता है।

सन्धि रोग योगः—

शत्रुस्थशत्रुपतिशात्रववीक्षकाणां
मध्ये बलेन सहितोऽस्य स्वगस्य धातोः।
स्निग्धोष्णशीतिभवरुक् तनुसन्धिषु स्या-
द्भागगो वपुष उग्रखगो हि तत्र ॥ १३२ ॥

शत्रु भाव गत, शत्रु भाव का स्वामी और शत्रु भाव दर्शी ग्रह इन सब के मध्य में जो अत्यन्त बली हो उस की पित्त प्रभृति धातु से स्निग्ध उष्ण तथा शीतजन्य रोग होता है। लग्न के जिस भाग (दक्षिण वा वाम) में उक्त पाप ग्रह हो शरीर के उसी भाग की सन्धियों में स्निग्ध प्रभृति जन्य रोग होता है।

गण्ड तथा गण्डमालादि रोग योगः—

दुष्टेऽब्जदेहदरपैरुदकोत्थगण्डो
भागे कुरङ्गवदने यदि दुष्टग्रन्थिः।
गण्डादिरुक् पतितगं भगजं सभौमं
वीक्षित भव्यखचरो नहि गण्डमाला ॥ १३३ ॥

त्रिक में चन्द्रमा, लग्नेश तथा षष्ठेश हों तो जल से उत्पन्न गण्ड रोग होता है। यदि कारकांश कुण्डली में मकर लग्न हो तो दुष्टग्रन्थि तथा गण्डादि रोग होता है। षष्ठ वा व्यय में मङ्गल युक्त शनि हो और उस को शुभ ग्रह न देखता हो तो गण्डमाला रोग होता है।

ना तापगण्डीनयुतेऽङ्गपे त्रिके गण्डः कलेशेन कजः कुसूनुना।
ग्रन्थ्यायुधेर्म्मोऽथ बुधेन पित्तरुगामोद्भवोगीष्पतिना क्षयो गदः ॥ १३४ ॥

काव्येन युक्ते त्रिकगे तनूविभौ चौरान्त्यजोद्भूतगदोऽङ्गनायके।
त्रिकाश्रिते श्यामलरोचिषा युते किं सिंहिकादेहभवेन केतुना ॥ १३५॥

त्रिक में सूर्य युक्त लग्नेश हो तो उष्ण जन्य गण्ड। एवं त्रिक में चन्द्र युक्त हो तो जल जन्य गण्ड। मङ्गल हो तो ग्रन्थि, शस्त्र तथा व्रण जन्य गण्ड। बुध हो तो पित्त रोग। गुरु हो तो आम जन्य रोग। शुक्र हो तो क्षय रोग। एवं शनि राहु वा केतु युक्त लग्नेश त्रिक में हो तो चोर तथा चण्डाल जन्य रोग होता है।

शरीर में चित्रता का योगः—

ज्ञकाव्ययोर्गुरुस्थयोर्महामतीनपुत्रयोः।
क्षयस्थयोः क्षते विधौ वदन्ति चित्रतां तनौ ॥ १३६ ॥

नवम में बुध शुक्र हों, अष्टमें में गुरु शनि हों और षष्ठ में चन्द्रमा हो तो शरीर में चित्रता को कहते हैं।

रोगों के प्रकीर्ण योगः—

मान्द्याङ्गपौ सोष्णकरौ ज्वरं सेन्दू कप्रमादः सकुजौ तु कष्टम्।
युद्धेन विस्फोटकराशिभिर्वा सज्ञौ तु पित्तानवधानता तौ ॥ १३७॥

सेज्यौ विमान्द्यौ भयुतौ गृहिण्या विपन्मरुन्नीचरुजा सनीलौ।
साही सकेतू किमुतोरगार्तिश्चौराग्निभीर्वातभवप्रमादः ॥ १३८ ॥

षष्ठेश तथा लग्नेश ये दोनों सूर्य से युक्त हों तो ज्वर रोग, चन्द्रमा से युक्त हों तो जल जन्य प्रमाद, भौम से युक्त हों तो युद्ध तथा विस्फोटक समूह से कष्ट, बुध से युक्त हों तो पित्त से प्रमाद, गुरु से युक्त हों तो नीरोगता शुक्र से युक्त हों तो स्त्री की विपत्ति, शनि से युक्त हों तो वायु तथा नीच रोग एवं राहु वा केतु से युक्त हों तो सर्पपीडा, चौर, अग्निभय और वातजन्य प्रमाद होता है।

सोग्रेऽघदृष्टेऽहितगे हिमद्युतौ रुजा मरुज्जा प्रभवेत्तथा विधे।
इलातनूजे यदि रक्तपित्तकं तथा विधे ज्ञे कफमारुतामयः ॥ १३९ ॥

षष्ठ में चन्द्रमा हो और वह पाप दृष्ट हो तो वातजन्य रोग एवं मङ्गल हो तो रक्त पित्त बुध हो तो कफवात रोग होता है।

मूलातिसारोऽसुरराजपूजिते पतङ्गजे गुल्मगदः प्रजल्पितः।
पैशाचरोगं प्रवदन्ति पण्डितास्तथा विधे दानवपे शिखावति ॥ १४० ॥

षष्ठ में पाप दृष्ट शुक्र हो तो मूलातिसार रोग, शनि हो तो गुल्म रोग एवं राहु वा केतु हो तो पिशाच-जन्य रोग को कहते है।

नीरोगता निर्जरपूज्ययुक्तेऽरीशे सकाव्ये नयनस्य रोगः।
वातामयः स्याच्छितिरुक्समेते साहौ सकेतावुदरामयः स्यात् ॥ १४१ ॥

षष्ठेश यदि गुरु से युक्त हो तो आरोग्यता, शुक्र से युक्त हो तो नेत्र रोग, शनि से युक्त हो तो वात रोग एवं राहु वा केतु से युक्त हो तो उदर रोग होता है।

रवौ रिपौ वा मरणं ज्वराद्भयं गुह्यामयो दैत्यगुरौ मरुन्नुते ।
क्षयोऽथ केतौ कुटिले व्रणो यमे तथाविधे मारुतपीडितः पुमान् ॥ १४२ ॥

षष्ठ वा अष्टम में सूर्य हो तो ज्वर से भय एवं शुक्र हो तो गुह्य रोग, गुरु हो तो क्षय रोग केतु वा मङ्गल हो तो व्रण और शनि हो तो वात से पीडित होता है।

गुल्मोऽन्यरुक् तत्र यमे समासे भौमेक्षितेऽहौ पिटिकामयः स्यात् ।
प्रक्षीणचन्द्रे सखलाम्बुराशौ तत्राश्रिते तोयरुजा क्षयश्च ॥ १४३ ॥

षष्ठ वा अष्टम में चन्द्र युक्त शनि हो तो गुल्मजन्य रोग होता है। एवं षष्ठ वा अष्टम में भौम दृष्ट राहु हो तो पिटिका रोग होता है। षष्ठ वा अष्टम में जलचर राशि गत क्षीण चन्द्रमा हो और वह पाप युक्त हो तो जल जन्य रोग और क्षय रोग होता है।

व्रण रोग योगः—

यदाऽरिभावे सति सम्भवेऽसति तदाङ्ग ईर्म्मं तिल उत्तमग्रहे ।
पतन्ति यत्र त्रिखगाः सबोधना व्रणो भवेत्तद्भसमानविग्रहे ॥ १४४ ॥

जब षष्ठ भाव में पाप ग्रह हो तब मनुष्य के शरीर में व्रण (घाव) और शुभ ग्रह हो तो तिल मशक चिह्न होता है। जिस राशि में बुध से युक्त तीन ग्रह हों उस के उक्त शीर्षादि अवयव में व्रण होता है।

व्रणोऽम्बुजेशे पशुकाष्ठसम्भवः शृङ्ग्यम्बुजातः सितभासि शोणिते ।
विषाग्निशस्त्रोत्थित इन्दुनन्दने कौजो दृषन्मारुतजो महाग्रहे ॥ १४५ ॥

यदि पूर्वोक्त व्रणकारक ग्रहों के मध्य में सूर्य हो तो पशुजन्य तथा काष्ठजन्य व्रण, चन्द्रमा हो तो शृङ्गीजन्तुजन्य तथा जलजन्य व्रण, भौम हो तो विष, अग्नि तथा शस्त्र से उत्पन्न व्रण, बुध हो तो पार्थिव (पृथ्वीजन्य) व्रण और शनि हो तो प्रस्तर (पत्थर) जन्य तथा वातजन्य व्रण होता है।

सदुष्कृतो द्वेष्पदयस्त्रिकस्थस्तनुस्थितो वा व्रणकृच्छरीरे ।
तद्भावगामीत्थमिनः क इन्दुरास्ये गलेऽस्रो हृदि विद्यमोऽग्नौ ॥ १४६ ॥
काव्योऽक्षिपृष्ठे धिषणस्तु नाभिमूले तदेर्म्मं कुरुतेऽधरेऽहिः ।
सार्पेऽरिनाथे गगनेऽघदृष्टे यदङ्गभेऽरुः प्रभवेत्तदङ्गे ॥ १४७ ॥

त्रिक वा लग्न में पाप युक्त षष्ठेश हो तो शरीर में व्रण को करता है। यदि पूर्वोक्त लक्षण सम्बन्धी सूर्य हो तो शिर में व्रण एवं चन्द्रमा हो तो मुख में व्रण, मङ्गल हो तो गल में व्रण, बुध हो तो हृदय में व्रण, शनि हो तो पाद में व्रण, शुक्र हो तो नेत्र तथा पृष्ठ में व्रण, गुरु हो तो नाभि के मूल में व्रण एवं राहु हो तो अधर (ओष्ठ) में व्रण करता है। जिस अङ्ग की राशि में पाप युक्त दृष्ट षष्ठेश दशम में हों उस अङ्ग में व्रण होता है।

मेषादि राशियों के क्रमसे अङ्ग विभागः—

शीर्षास्यकण्ठश्रुतिगन्धवाहा मेषाच्च गुह्येन्द्रियहस्तपार्श्वाः ।
क्रमाद् दृगंघ्रिप्रपदाश्च कुक्षी यत्राशुभस्तत्र वदेद् व्रणं वित् ॥ १४८ ॥

मेषादि राशियों के क्रमसे मेष शिर, वृष मुख, मिथुन कण्ठ, कर्क कर्ण, सिंह नासिका, कन्या गुप्तस्थल, तुला बाहु, वृश्चिक पार्श्व (बगल), धनु नेत्र, मकर पाद, कुम्भ प्रपद (तलुआ) एवं मीन का कुक्षि प्रदेश है। जो राशि षष्ठेश तथा पाप युक्त होकर त्रिक वा लग्न में हो उस के उक्त प्रदेश में व्रण को कहे ।

सपत्नभावे किमपायसद्मनि वसुन्धराजध्वनतनूजयोर्व्रणी ।
कीटे कुजेऽच्छेज्यदृशा विवर्जितेऽथास्ते ध्वजार्क्योः पिटकाव्रणार्दित ॥ १४९ ॥

षष्ठ वा व्यय में भौम तथा शनि हो तो मनुष्य व्रण रोग वाला होता है । वृश्चिक में मंगल हो और वह शुक्र गुरु से दृष्ट न हो अथवा सप्तम में केतु तथा शनि हो तो उक्त योगों में पिटका तथा व्रण से पीडित होता है ।

वसुन्धराजोदयनाथयोस्त्रिके व्रणव्यथा ग्रन्थिभवा च शस्त्रजा ।
आयुःपुरेशोः रुगुदाहिमन्दयोर्व्रणे व्रणास्तत्परिपाकदिष्टके ॥ १५० ॥

त्रिक में मंगल तथा लग्नेश हों तो ग्रन्थिजन्य व्रण तथा शस्त्रजन्य व्रण से पीडा होती है। षष्ठ में अष्टमेश तथा लग्नेश हों और वे केतु राहु वा शनि से युक्त हों तो उन की दशा के परिपाक काल में मनुष्य के शरीर में व्रण होते है ।

धिष्ण्ये व्ययेऽस्नेऽरिफलानुजस्थे स्याद्वामपार्श्वे व्रण उद्भवस्य ।
अपाय इन्दौ ससुरेशपूज्ये भये भवे ज्ञे रुरपानदेशे ॥ १५१ ॥

व्यय में शुक्र हो, और षष्ठ एकादश वा तृतीय में भौम हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्यके वामपार्श्वमें व्रण होता है । व्यय में चन्द्रमा हो और वह गुरु से युक्त हो एवं षष्ठ वा एकादश में बुध हो तो गुदा में व्रण होता हैं ।

गोत्रात्मजे गात्रगते स्मरे सिते किं वेन्द्रवन्द्ये शिरसीर्म्ममुच्यते ।
पुत्रेऽङ्गपेऽस्त्रेऽशुभलोकितान्विते शिलास्त्रजेर्म्मं मनुजस्य मूर्धनि ॥ १५२ ॥

लग्न में मंगल और सप्तम में शुक्र वा गुरु हो तो शिर में व्रण कहे । पञ्चम में लग्नेश मङ्गल हो और वह पाप ग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो मनुष्य के शिर में शिला से अथवा शस्त्र से व्रण होता है ।

रोगे रवौ तदधिपे ऽशुभयुक्तदृष्टे
नाभौ व्रणो भवति पित्तभवस्तदानीम् ।
भव्येतरैर्वचनगैः श्रवसोरुतांसे
पद्मानने नयनयोश्च विघात ईर्म्मम् ॥ १५३ ॥

षष्ठ में सूर्य हो और षष्ठेश पाप युक्त दृष्ट हो तो नाभि प्रदेश में पित्तजन्य व्रण होता है। धन में पाप ग्रह हों तो कर्ण स्कन्ध, मुख वा नेत्र में प्रहार वा व्रण होता है।

भगे भयेशे विरतौ सपङ्के मन्दारगौरैः पुरगैः सपङ्कैः।
भव्ये विहङ्गे रुजि कृष्णपित्तविकारजं स्यादुरुरंघ्रिदेशे ॥ १५४ ॥

अष्टम में पाप युक्त षष्ठेश सूर्य हो, लग्न में पाप युक्त शनि, मंगल तथा गुरु हो और षष्ठ में शुभग्रह हों तो पैरों में कृष्णपित्तविकारजन्य व्रण होता है।

यदाङ्गनागारगते धराजे वैरोचनौ मृत्युनिकेतनस्थे।
खाग्निप्रमेऽब्दे किमु पंक्तितुल्ये पुंसां भवेत्स्फोटमुखेन भीतिः ॥ १५५ ॥

सप्तम में मंगल और अष्टम में शनि हो तो ३० वें वर्ष में अथवा १० वें वर्ष में पुरुषों के लिए विस्फोटक आदि से भय होता है।

तातादिभावाधिपसंयुतो वा तत्कारकाढ्यो व्रणपास्त्रिकस्थः।
भावस्य भर्त्तुः किमु कारकस्य दशासु तेषां व्रणमाहुराद्याः ॥ १५६ ॥

यदि षष्ठेश पिता प्रभृति भावों के स्वामियों से युक्त हो अथवा पिता प्रभृति के कारक ग्रहों से युक्त होकर त्रिक में हों तो भावेश तथा कारक ग्रह की दशाओं में पिताप्रभृतियों के शरीर में पण्डिजन व्रण को कहते हैं।

साघेऽरिपे चिति सुताम्बक विग्रहेऽरुः
कास्तानुजाङ्कभवभे सखलेऽरिनाथे।
मातुः स्त्रियोऽनुजननस्य च मातुलस्य
ज्येष्ठस्य वर्ष्मसु भवेदरुरेवमाहुः ॥ १५७ ॥

पञ्चम में पाप युक्त षष्ठेश हो तो पिता तथा पुत्र के शरीर में व्रण होता है। चतुर्थ, सप्तम, तृतीय, नवम तथा एकादश में पाप युक्त षष्ठेश हो तो क्रमसे माता, स्त्री, लघुभ्राता, मामा तथा ज्येष्ठभ्राता के शरीर में व्रणको कहे।

पराभवे भूसुवि पङ्कदृष्टे मृत्यौ मुखे मृत्युसुते नुरङ्गे।
व्रणः स्मरे सून्वसृजोः शरीरे द्विजाधिराजे पिटकादिभाङ्ना ॥ १५८ ॥

अष्टम में क्रूरदृष्ट मंगल और अष्टम वा द्वितीयमें केतु हो तो मनुष्य के शरीर में व्रण होता है। सप्तम में सूर्य, मंगल हो और लग्नमें चन्द्रमा हो तो मनुष्य पिटकादि रोगसे युक्त होता है।

पूर्वोक्तफलों के अल्पाधिकत्वका परिज्ञानः—

इहोदिता ये विबुधैरनिष्टा योगा असद्वीक्षणतो विशेषात्।
तद्दुष्फलं नेतरथेति शस्ताः सौम्येक्षया सत्फलमेव पुष्टम् ॥ १५९ ॥

होराशास्त्र वेत्ताओंने इस प्रकरण में जो अनिष्ट योग कहे हैं यदि वे अधिक पापग्रहों से दृष्ट हों तो उन का प्रायः दुष्ट फल होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो अर्थात् अनिष्ट योग कारक ग्रह शुभ दृष्ट हों तो उक्त योगों का अल्प अशुभ फल होता है। एवं शुभयोग कारक ग्रह यदि शुभ दृष्ट हों तो उन का शुभ फल पुष्ट होता है और शुभ कारक ग्रह यदि पाप दृष्ट हों तो उन का अल्प शुभ फल होता है।

मधुरादि षडुपदंशप्रिय योगः—

ज्ञे पुण्यदृष्टे षष्ठगे तदीशे पापान्तरे चारुविहङ्गयुक्ते।
ना स्यात्षडुपदंशप्रिय इन्दुसूनौ वेज्ये जिघांसौ किमु तत्र तद्भे॥ १६०॥
स्थिते च सद्दंशगते तदोपदंशप्रियोऽरेः स्मणेऽथ्वेज्ये।
गौरेऽथ वा गोपुरभागगे वा सज्ञे सितेऽरौ सुकृतेक्ष्यमाणे॥ १६१॥
वीर्यान्विते भव्यलवोपयाते ऽजस्रं प्रजातो मधुरप्रियोऽसौ।
तारातनूजे वृजिनग्रहेन्द्रनिरीक्ष्यमाणे मधुरेण मुक्तः॥ १६२॥

षष्ठ में शुभ दृष्ट बुध हो और पाप ग्रहों के अन्तराल में शुभ युक्त षष्ठेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष मधुरादि छः रसों को प्रिय मानने वाला होता है। षष्ठभाव में बुध वा गुरु हो अथवा षष्ठ में बुध वा गुरु की राशि हो अथवा षष्ठ में शुभ षड्वंश हो तो भी मधुरादि छः रसों को प्रिय मानने वाला होता है। गोपुरांश में षष्ठेश गुरु हो अथवा षष्ठ में बुध युक्त शुक्र हो और वह शुभ दृष्ट हो, बलवान हो और शुभांश में हो तो नित्य मधुर रस को प्रिय मानने वाला होता है। यदि बुध पापदृष्ट हो तो मधुर रस से वर्जित होता है।

सभार्गवे ज्ञे भयभावगे वा भीतिस्थयोर्भार्गवभूमिसून्वोः।
किं भे भये भास्करवीक्षिते वा भृगात्मजेनाम्लरसप्रियः सः॥ १६३॥

षष्ठ में शुक्र युक्त बुध हो अथवा षष्ठ में शुक्र मंगल हो अथवा षष्ठ में सूर्य दृष्ट वा भौम दृष्ट शुक्र हो तो अम्ल (खट्टा) रस प्रिय मानने वाला होता है।

पौरेशयोः पर्वरिदानवेज्ययोः क्षाराम्लभाक् स्याङ्गगयोस्तयोस्तथा।
भुङ्क्ते कषायं विदि तत्र वाक्पतौ माधुर्य्यमन्येष्वतितीक्ष्णकं रसम्॥ १६४॥

चन्द्र तथा शुक्र लग्नेश हों तो क्रमसे क्षार (लवण) और अम्ल (खट्टा) रस को प्रिय मानने वाला होता है। एवं द्वितीय वा लग्न में चन्द्र तथा शुक्र हों तो क्षार और अम्लरस को प्रिय मानने वाला होता है। यदि द्वितीय वा लग्न में बुध हो तो कषाय (कसैला) रस, गुरु हो तो मधुर (मीठा) रस एवं शनि राहु वा केतु हो तो मिर्च प्रभृति तीक्ष्ण रसों को प्रिय मानने वाला होता है।

चिन्ता परिज्ञानः:—

भौमेऽम्रस्थे क्षेत्रचिन्ता त्रिकस्थे चिन्ता सौख्यस्याथ तत्रेन्द्रपूज्ये।
वासोभूषावाहानाद्योद्भवा सा शुक्रे चन्द्रे चामरच्छत्रचिन्ता॥ १६५॥

दशम में भौम हो तो क्षेत्र (खेत) की चिन्ता होती है। एवं त्रिक में भौम हो तो सौख्य की चिन्ता; गुरु हो तो वस्त्र, भूषण, वाहन तथा अश्वजनितचिन्ता; शुक्र वा चन्द्रमा हो तो चामर (चँवर) तथा छत्र की चिन्ता होती है।

मतौ कुमारे मतिजा त्रिकोणेऽर्के तातबन्धोर्दयितात्रिकोणे।
क्षिते गमोऽस्था ऽऽस्तमभमात्मपो न पश्येद्गुरौ कोणमदे सुतोत्था॥ १६६॥
चिन्ता शुभाद्भाग्यभवा खभान्नृपभूषामहत्कर्म्महयांशुकोद्भवा।
प्राप्तेः स्मृतिः प्राप्तिगृहेऽन्त्यरन्ध्रभाच्चिन्ता विधेयाऽखिलपङ्ककर्म्मणाम्॥१६७॥

पञ्चम में बुध हो तो बुद्धिजन्य चिन्ता, त्रिकोण में सूर्य हो तो पितृ बन्धु (ताऊ चाचा) ओं की चिन्ता; सप्तम वा त्रिकोण में यात्रा की चिन्ता। त्रिकोण वा सप्तम में गुरु हो और पञ्चम को पञ्चमेश न देखता हो तो पुत्रजन्य चिन्ता होती है। नवमस्थान से भाग्य की चिन्ता। दशम से राजा, भूषण, महत्कर्म, अश्व तथा वस्त्रजन्य चिन्ता। लाभ से लाभ की चिन्ता एवं व्यय तथा अष्टम से समस्त पाप कर्म्मों की चिन्ता का विचार करे।

शत्रु पीडा योगः—

दुरितखचरदृष्टे द्वेष्यपे केन्द्रगे वा
बहुमलिननभोगा रोगगा वाङ्गपे ऽरौ।
उदयति दरनाथे वा ऽरिपे वीर्यहीने
वृजिनविहगमध्ये पङ्कदृष्टे ऽरिपीडा॥ १६८॥

केन्द्र में पाप दृष्ट षष्ठेश हो तो (१) षष्ठ में बहुत पाप ग्रह हों तो (२) षष्ठ में लग्नेश और लग्न में षष्ठेश हो तो (३) पापान्तराल में निर्बल षष्ठेश हो और वह पाप दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य को शत्रु से पीडा होती है।

द्वेष्योपयातेष्विनपूर्वकेषु तत्तत्कारकव्योमगवर्गवैरिणा।
अनारतं पञ्चजनः प्रपीड्येत ऽरीशे समान्द्यार्कितमे ऽहितार्दितः॥ १६९॥

सूर्यादि ग्रहों के मध्य में जो जो ग्रह षष्ठ स्थान में हो उन उन के कारक ग्रह के वर्ग के शत्रु से मनुष्य नित्य दुःखित होता है। षष्ठेश यदि गुलिक शनि वा राहु से युक्त हो तो शत्रु से पीडित होता है।

जलपिशाच पीडा योगः—

ससौरिसोमे विबले लये ततो ऽङ्गे ऽहीनजौ वा द्विषि चक्रिचूडिनोः।
क्रूरेक्षिते क्रूरलवे तदीश्वरे ऽघाढ्येक्षिते तोयपिशाचजा व्यथा॥ १७०॥

अष्टम में शनि युक्त निर्बल चन्द्रमा हो तो (१) लग्न में राहु तथा शनि हों तो (२) षष्ठ में राहु वा केतु हो और वह क्रूर दृष्ट हो तथा क्रूरांश में हो एवं षष्ठेश पाप युक्त दृष्ट हो तो जलपिशाच से पीडा होती है।

विषाग्नि तथा चोराग्नि पीड़ायोगः

धर्म्मे धराजेऽग्निविषार्दितोऽरिपे सशनितमस्के नियतेर्निकेतपे ।
गदेशदृष्टे गदगेहसंस्थिते पाटच्चरेभ्योऽग्निजा व्यथा भवेत् ॥ १७१ ॥

नवम में भौम हो तो अग्नि या विष से पीड़ित होता है। षष्ठेश यदि शनि तथा मङ्गल से युक्त हो एवं षष्ठ में षष्ठेश दृष्ट नवमेश हो तो चोर या अग्नि से पीड़ा होती है।

खड्गादि पीड़ा योगः—

मेदिनीनन्दनोऽङ्गस्थो मन्दार्काभ्यां यदीक्ष्यते ।
जातः पञ्चजनोऽजस्रं खड्गपूर्वैः प्रपीडितः ॥ १७२ ॥

लग्न में मङ्गल हो और वह शनि तथा सूर्य से दृष्ट हो तो उक्त योग में मनुष्य खड्गादि से पीड़ित होता है।

ज्ञाति पीड़ा योगः—

पौरेऽष्टमेऽङ्गेशदृष्टेऽथ पौराङ्गेशौ पौरस्थावुताराकिपातैः ।
दृष्टौ सागीशौ पुरस्थौ सपूज्यौ जातो जन्मी ज्ञातिभिः पीड्यते सः ॥ १७३ ॥

अष्टम में लग्नेश हो और वह षष्ठेश से दृष्ट हो तो (१) लग्न में लग्नेश तथा षष्ठेश हों तो (२) लग्न में षष्ठेश युक्त शुक्र तथा गुरु हों और वे भौम, शनि तथा राहु से दृष्ट हों तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य ज्ञातिजनों से पीड़ित होता है।

बहुत ज्ञातिजन योग—

सास्ताग्निकाधरसेऽरिपे रिपौ बहुक्षताङ्गो बहवः सगोत्रकाः ।
गौरेऽरिपे रम्ययुतेक्षिते मृदुभागे सगोत्रा बहवो जनुष्मतः ॥ १७४ ॥

षष्ठ में अस्तगत शत्रुराशिगत नीच राशिगत षष्ठेश हो तो बहुत क्षत (घाव) युक्त शरीर तथा बहुत ज्ञातिजन होते हैं। मृदु षष्ठ्यंश में षष्ठेश शुक्र हो और वह शुभयुक्त दृष्ट हो तो बहुत ज्ञातिजन होते हैं।

मूर्त्तीशमित्रखचरे यदि मातुलेशे
स्वोच्चे सुहृद्भगणगे व्रणवैरिहीनः ।
स्युर्भूरिबान्धवजनाः पुरपे सपुण्य
ऽशौ ग्लावि शेऽथ विदि कण्टककोणगेऽस्य ॥ १७५ ॥
स्याज्जीवनं सह सगोत्रजनैर्जगत्सु
दृष्टे सशौर्य्यधनभर्त्तरि गोपुरादौ ।
दुर्हृद्गृहेशि स भवेदुपकारकर्त्ता
ज्ञातेः सदम्बरगलोकित उद्गमेशे ॥ १७६ ॥

पारावतादौ जनितस्य यस्योत्पत्तौ विशौर्य्ये भयमेशि तस्मात् ।
उत्कर्षता तस्य मनूद्भवस्य वाच्या पुराणैर्गणकाग्रगण्यैः ॥ १७७ ॥

षष्ठेश यदि लग्नेश का मित्र हो और वह स्वोच्चराशि मित्र राशि वा मित्र के वर्ग में हो तो बहुत बन्धुजन होते हैं। एवं व्रण तथा शत्रु से रहित होता है। षष्ठ में शुभ युक्त लग्नेश हो और नवम में चन्द्रमा हो तो केन्द्र वा त्रिकोण में बुध हो तो उक्त योगो में उत्पन्न पुरुष का ज्ञातिजनों के साथ जीवन व्यतीत होता है। बली लग्नेश यदि सूर्य से दृष्ट हो और गोपुरादि भाग में षष्ठेश हो तो मनुष्य ज्ञातिजनों का उपकार करने वाला होता है। पारावतादि भाग में शुभ दृष्ट लग्नेश हो और षष्ठेश निर्बल हो तो ज्ञातिजनों से उत्कर्षता होती है।

ज्ञाति क्षय योगः—

सास्ताधरारिभेऽरीशे सपङ्के पङ्कभागगे ।
सौम्यदर्शनयोगोने ज्ञातिक्षयं विनिर्दिशेत् ॥ १७८ ॥

पापांश में पाप युक्त षष्ठेश हो और वह अस्तगत नीच राशिगत वा शत्रु राशि गत हो एवं शुभ ग्रह की दृष्टि तथा योग से रहित हो तो ज्ञातिजनो के नाश को कहे।

सर्पपीडा तथा अग्निचोर भय योगः—

अरातिगेहनेतरि भुजङ्गमेन केतुना ।
युते भुजङ्गमव्यथाऽथ वाग्निचोरतो भयम् ॥ १७९ ॥

षष्ठ स्थान का स्वामी यदि राहु वा केतु से युक्त हो तो सर्प से पीडा अथवा अग्नि चोर स भय होता है।

हस्ति भय योगः—

सगौरयोः कलेवराभिघातिनाथयोस्ततः ।
यमेऽरिपे सवाक्पतौ मतङ्गजाद्भयं वदेत् ॥ १८० ॥

षष्ठेश तथा लग्नेश ये दोनों यदि गुरु से युक्त हों अथवा षष्ठेश शनि यदि गुरु से युक्त हो तो हाथी से भय होता है।

शृगालादि से भय योगः—

निधाननैधनालये यमात्मजे महीसुते ।
विलोचनेशलोकिते शृगालपूर्वसाध्वसम् ॥ १८१ ॥

द्वितीय तथा अष्टम में गुलिक और मंगल हों और वे द्वितीयेश से दृष्ट हों तो शृगालादि से भय होता है।

विषवञ्चनादि भययोगः—

सदानवेऽङ्गपे दरं विषाच्च वञ्चनाद्धने ।
सपापदुर्बलेऽङ्गपे भयं प्रतारणादितः ॥ १८२ ॥

लग्नेश यदि राहु से युक्त हो तो विष तथा बन्धन से भय होता है। यदि दुर्बल लग्नेश पाप युक्त हो तो बन्धनादि से भय होता है।

अश्वादि भय योगः—

सेन्द्वोर्द्विष्यतनूपयोः किमु यमेऽरीशे समासेऽथ वा—
ऽर्थेशे सांग्युतेक्षिते हयभयं कृष्णाहियुक्तेऽरिपे।
तद्वद्वा पशुतो भयं सभुजपे गौरे पुरे साध्वसं
तुर्य्यांघ्रेः पशुभी रवीन्दुसहितेऽहौ वा रवीन्द्वोर्गृहे ॥ १८३ ॥

षष्ठेश तथा लग्नेश यदि चन्द्रमा से युक्त हों तो (१) षष्ठेश शनि यदि चन्द्रमा से युक्त हो तो (२) धनेश यदि शनि युक्त या दृष्ट हो तो उक्त योगों में अश्व (घोड़ा) से भय होता है। एवं षष्ठेश शनि यदि राहु से युक्त हो तो अश्व या पशु से भय होता है। लग्न में सहजेश युक्त गुरु हो तो चतुष्पद से भय होता है। कर्क या सिंह में सूर्य चन्द्र युक्त राहु हो तो पशु से भय होता है।

वाहन भय तथा गेह शैथिल्य योगः—

केन्द्रे सारेऽनुष्णभाव्याजिगेहे कश्मिश्चिद्वा क्षीणचन्द्रे चतुर्थे।
प्रोक्ता भीनिर्वाहनाद्वाष्टमेऽर्के गुंधे कोणे गेहशैथिल्यभीतिः ॥ १८४ ॥

केन्द्र में मंगल युक्त चन्द्रमा हो और अष्टम में कोई ग्रह हो अथवा चतुर्थ में क्षीण चन्द्रमा हो तो वाहन से भय होता है। अष्टम या त्रिकोण में सूर्य हो तो गृह शैथिल्य (घर गिरने का) भय होता है।

अग्नि भय योगः—

सारेऽरिपे वा हरिजेऽष्टमेऽशुभोपेतप्रदृष्टे किमु गीरथे गदे।
याम्ये यमे कर्किणि तापने कुजदृशा युते पावकसाध्वसं भवेत ॥ १८५ ॥

षष्ठेश यदि मङ्गल से युक्त हो तो (१) लग्न में पाप ग्रह की राशि हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो तो (२) षष्ठ में गुरु, अष्टम में शनि और कर्क गत सूर्य यदि मङ्गल से दृष्ट हो तो उक्त योगों में अग्नि से भय होता है।

पराभवे दुर्हृदि दन्दशूके तस्माद्विनाशे नलिनीशसूनौ।
स्यादेकवर्षेऽनलभीस्त्रिवर्षे विन्देत दुःखं विहगस्य दोषात ॥ १८६ ॥

अष्टम या षष्ठ में राहु हो और उस से अष्टम में शनि हो तो प्रथम वर्ष में अग्नि भय और तीसरे वर्ष में पक्षी के दोष से कष्ट पाता है।

चौर तथा अग्नि भय योगः—

मान्दौ त्रिकोणे प्रथमेऽथखेचरं स्तेनाद्भयं सैनिरसाभवेऽरिपे।
किं दीक्षणेशे क्षतपेक्षिते क्षते मलिम्लुचोषर्बुधभीतिरीर्य्यते ॥ १८७ ॥

त्रिकोण में मान्दि और लग्न में पापग्रह हो तो चोर से भय होता है। षष्ठेश यदि शनि मंगल से युक्त हो अथवा षष्ठ में षष्ठेश दृष्ट नवमेश हो तो चोर तथा अग्नि से भय होता है।

विस्फोटक, अग्नि तथा खल भय योगः—

स्वाङ्गास्तशान्तेषु सरोजबान्धवे माहेयदृष्टे किमु मेदिनीजनौ।
तत्र स्थिते पङ्कजबोधनेक्षिते स्फोटाग्निभीतिर्यदि वा खलाद्भयम् ॥ १८८ ॥

धन लग्न सप्तम वा अष्टम में भौम दृष्ट सूर्य हो अथवा उक्त भावों में सूर्य दृष्ट भौम हो तो विस्फोटक अग्नि वा दुष्टजन से भय होता है।

चौर, पिशाच भय तथा पिशाचबाधा योगः—

दृष्टे बहुग्राम्बरगैः शिखाभृति शीर्षे दरं चौरपिशाचतस्तनौ।
सोपप्लवे वा सकबन्धखेचरे पिशाचबाधा कथिता चिरन्तनैः ॥ १८९ ॥

लग्न में बहुत पाप दृष्ट केतु हो तो चौर तथा पिशाच से भय होता है। लग्न में राहु वा केतु हो तो पिशाचजन्य बाधा होती है।

नृप, वञ्चन तथा चौरभय योगः—

कोणे तनौ सतिमिरे गुलिकेऽङ्गयातैः
क्रूरैः किमुग्रसहितेऽङ्गप उद्गतेऽहौ।
किं तत्र मेचकरुचेः परिलोकनाद्वा
योगाद्वदेन्नृपतिवञ्चनचौरभीतिम् ॥ १९० ॥

त्रिकोण वा लग्न में राहु युक्त गुलिक हो और लग्न में पाप हो तो (१) लग्नेश यदि पाप युक्त हो और लग्न में राहु हो तो (२) अथवा लग्न में शनि की दृष्टि हो वा लग्न में शनि हो तो राजा, वञ्चन तथा चोर से भय को कहे।

मृगभय योगः—

यमेऽरिपे सराहुकेतने मृगाद्भयं यमे
तथा विधे सपुष्करे मृगाद्भयं सशृङ्गतः।
विपक्षगे वधाधिपे वपुर्गृहे व्ययेश्वरे-
ऽनिदाघधाम्नि सारिपेऽष्टवत्सरे मृगाद्भयम् ॥ १९१ ॥

षष्ठेश शनि यदि राहु वा केतु से युक्त हो तो मृग से भय होता है। षष्ठेश शनि यदि सूर्य से युक्त हो तो सींग वाले मृग से भय होता है। षष्ठ में अष्टमेश, लग्न में व्ययेश एवं चन्द्रमा यदि षष्ठेश से युक्त हो तो ८ वें वर्ष में मृग से भय होता है।

शुनक भय योगः—

समङ्गलेऽरिपे यमे किमर्थपान्वितेक्षिते ।
ऽसितेऽथ पापवीक्षितान्विते धने यमे श्वभीः
पुरेश्वरे दराश्रिते तदंशकेऽरिभावगे ।
दशाब्दके किमङ्कभूमिताब्दके शुनो भयम् ॥१९२॥

षष्ठेश शनि यदि मङ्गल से युक्त हो तो (१) शनि धनेश से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) धन में पाप दृष्ट युक्त शनि हो तो श्वान (कुत्ता) से भय होता है। षष्ठ में लग्नेश हो और लग्नेश की नवांश राशि भी षष्ठ में हो तो १० वें वर्ष में अथवा १९ वें वर्ष में कुक्कुर से भय होता है।

जलभय योगः—

महोनिधौ युधि व्रणे ततो व्यये कलानिधौ
समास्विषून्मितासु खेचरप्रमासु वाम्बुभीः ।
विधौ धने मृधेऽथवोग्रवीक्षिते भये तनौ ।
किमंशके कुलीरभे कलेवरे कतो दरम् ॥ १९३ ॥

अष्टम वा षष्ठ में सूर्य हो और उस से व्यय में चन्द्रमा हो तो ५ वें अथवा ९ वें वर्ष में जल से भय होता है। धन वा अष्टम में चन्द्रमा हो अथवा लग्न में पापदृष्ट चन्द्रमा हो अथवा कारकांश कुण्डली में कर्क लग्न हो तो भी जलसे भय होता है।

सर्पभय योगः—

आजौ जिघांसौ कुजपक्षजौ वा मान्दीक्षिताढ्ये तमसि स्वगे वा ।
तमे तनौ भातृविभौ भुजङ्गसंयुक्तराशीशयुतेऽहिभीतिः ॥ १९४ ॥

अष्टम वा षष्ठ में मङ्गल तथा चन्द्रमा हो अथवा धन में गुलिक दृष्ट युक्त राहु हो अथवा लग्न में राहु हो और तृतीयेश यदि लग्नेश से युक्त होंतो उक्त योगों में सर्प से भय होता है।

शत्रुभय योगः—

अरातिखेचरान्तरे कलेवराधिपे ऽरिभीः ।
गदे स्वपोत्तमेक्षितेऽरिभीतिरन्यथा नहि ॥ १९५ ॥

शत्रु ग्रहों के अन्तर में लग्नेश हो तो शत्रु से भय होता है। एवं षष्ठ भाव यदि अपने स्वामी तथा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो शत्रु से भय होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो शत्रु से भय नहीं होता है।

शत्रु कृताभिचारक (जादू टोना) योगः—

लोहितद्युतिविलोकिते तनौ द्वेष्यपे दिवि धने द्युनेऽथवा ।
मङ्गलेऽङ्गपयुते चतुष्टये किं तनौ गदगृहेश्वरे ततः ॥ १९६ ॥

पर्वरौ पुरगतेऽरिपेक्षिते लब्धिगे वसुमतीसुते तमे ।
द्वन्द्वभे शुभगृहेऽगमन्दिरे स्यात्सपत्नकृतमाभिचारकम् ॥ १९७ ॥

'लग्न' यदि मंगल से दृष्ट हो और दशम लग्न वा सप्तम में षष्ठेश हो तो (१) केन्द्र में लग्नेश युक्त मंगल हो तो (२) लग्न में षष्ठेश हो तो (३) लग्न में षष्ठेश दृष्ट चन्द्रमा हो, लाभ में मंगल हो और द्विस्वभाव राशि गत वा स्थिर राशिगत राहु नवम में हो तो शत्रुकृताभिचारिक (शत्रु कृत जादू टोने से उत्पन्न) रोग वाला होता है।

क्षुद्राभिचारक योगः—

के ऽ भ्रे ऽ निले नीलजनौ चतुष्टये क्षुद्राभिचारं समुपैति विग्रहे ।
दृष्टेऽसृजा धिष्ण्यभपेऽम्बरे पुरे योषित्यवाप्नोत्यभिचारमङ्गभृत् ॥ १९८ ॥

चतुर्थ वा दशम में केतु और केन्द्र में गुलिक हो तो मनुष्य क्षुद्राभिचारक (तुच्छ जन कृत जादू टोना) को प्राप्त होता है। 'लग्न' यदि मंगल दृष्ट हो और दशम लग्न वा सप्तम में शुक्राक्रान्त राशि का स्वामी हो तो भिचारिक रोग को प्राप्त होता है।

कट्यादि वैकल्य योग —

श्रोण्या विभागे विकलोऽङ्गगं भं पश्येद्यमोऽथो भुवनस्थले भे ।
क्वापीज्ययुक्तेऽसृजिवा रवौ ज्ञे कटचा विभागे विकलः करेंऽघ्रौ ॥ १९९ ॥

लग्न गत शुक्र को शनि देखता हो तो कटि प्रदेश (कमर) में विकलता होती है। सुख में शुक्र हो एवं किसी भी स्थान में मंगल, रवि वा बुध हो और वह गुरु से युक्त हो तो कटिप्रदेश, हस्त या पाद में विकलता होती है।

पशुसौख्य योगः—

शुक्रश्यामानाथवर्गाचितेऽम्बानाथे यद्वा युक्तदृष्टेऽब्जभाभ्याम् ।
मुक्ते नीचार्य्युग्रदृष्ट्या ततः सद्दृष्ट्याधिक्येऽम्भोगृहे वा वृषांशे ॥ २०० ॥
तुर्य्याङ्घ्रीणां सौख्यमाहुर्ग्रहज्ञा नीरे नीले नीरजेशेन युक्ते ।
कल्याणऽब्जे मङ्गले लब्धिमाप्ते लाभो वाच्यो गोलुलायादिकानाम् ॥ २०१ ॥

शुक्र वा चन्द्रमा के वर्ग में सुखेश हो तो (१) अथवा चतुर्थेश यदि चन्द्र शुक्र से युक्त दृष्ट हो और वह नीचराशि गत शत्रु राशि गत वा पाप ग्रह की दृष्टि से रहित हो तो (२) अथवा, चतुर्थ में अधिक शुभ दृष्टि हो तो (३) अथवा कारकांश में वृष लग्न हो तो उक्त योगों में चतुष्पदों के सुख को कहते है। सुख में सूर्य युक्त शनि हो नवम में चन्द्रमा हो और लाभ में मंगल हो तो गौ तथा महिषी प्रभृति का लाभ कहना चाहिए।

शत्रौ सवीर्य्यशुभदे बहुगोधनं स्यात्
सूरासृजोः सबलयोर्बहुसौरभेयाः ।
उष्ट्राजवित्तमपि वीर्य्यवतीनजेवा—
ऽहौ तत्र मृत्युभुवि कासरवित्तमस्य ॥ २०२ ॥

षष्ठ में बली शुभ ग्रह हो तो बहुत गोधन होता है । एवं षष्ठ में बली सूर्य मंगल हो तो बहुत बैल, ऊंठ तथा बकरे का धन होता है । यदि षष्ठ में शनि राहु वा केतु हो तो महिषी धन होता है ।

मातुल सौख्य योगः—

सञ्चिन्तयेद्बुधादरेरम्बानुजं बुधे गदे ।
तत्पे च सद्युतेक्षिते स्यान्मातुलस्य शातकम् ॥ २०३ ॥

बुध तथा षष्ठ भाव मे मामा के शुभाशुभ का विचार करे । यदि मातुल कारक बुध षष्ठस्थान और षष्ठेश ये तीनों शुभ युक्त दृष्ट हों तो मामा का सुख होता है ।

मातुलसुखाभाव योगः—

ज्ञाद्गदे खले किमथाचार्य्यगं धरातनूजम् ।
वीक्षतेऽशुभाथवासो मातुलस्य नो सुखं स्यात् ॥ २०४ ॥

बुध से षष्ठ स्थान में पाप ग्रह हो अथवा दशम वा नवम में मंगल हो और उस को अशुभ ग्रह देखता हो तो मामा का सुख नहीं होता है ।

मातुल संख्या परिज्ञानः—

यदुन्मितांशा ज्ञदृशा सुखोपगास्तदुन्मिताः स्युः पुरुषस्य मातुलाः ।
दृष्टा अरालोच्चगतैस्तदुन्मितित्रिघ्न्यस्तनीचारिखलैस्तदत्ययः ॥ २०५ ॥

चतुर्थ में जितने नवांश हो और वे बुध से दृष्ट हों तो उस संख्या के समान मामा होते है । चतुर्थगत नवांश यदि वक्र का उच्चराशिगत ग्रह से दृष्ट हों तो उंन को ३ से गुणकर मामाओं की संख्या होती है । एवं चतुर्थगत नवांश यदि शत्रुराशिगत, नीचराशिगत वा अस्तगत ग्रह से वा पापग्रह से दृष्ट हों तो मामाओं की मृत्युसंख्या कहनी चाहिए ।

मातुलसंख्या तथा मातृष्वसृसंख्या परिज्ञानः—

दरे दशाश्वे गिरि गीरथाह्वये द्वौ मातुलौ सेन्दुकुजे दरे सरुक् ।
स्यान्मातुलैक्यं भयगे भृगौ तदेकाम्बास्वसा द्वे किमु तत्सुखं भवेत् ॥ २०६ ॥

षष्ठ में चन्द्रमा और द्वितीय में गुरु हो तो दो मामा होते है । षष्ठ में चन्द्र युक्त भौम हो तो रोगयुक्त एक मामा होता है । षष्ठ मे शुक्र हो तो एक वा दो मातृष्वसृ (मौसी) होती है और उनका सुख होता है ।

मातुष्वसृ सौख्यासौख्य योगः—

मातृष्वसुः स्वाभितनूजवत्याः सुखं सशौर्य्यैरनघैर्गदस्थैः ।
तद्धानिरुक्ता गदगैरभव्यैर्वाच्यं फलं मिश्र खगैर्विमिश्रम् ॥ २०७ ॥

षष्ठ में बली शुभ ग्रह हों तो पति पुत्रवती मातृष्वसृ (मौसी) का सुख होता है। एवं षष्ठ में पाप ग्रह हो तो मातृष्वसृ की हानि और मिश्र ग्रहों से मिश्र फल कहना चाहिए।

मातुल पुत्र लाभादि के योगः—

पुंभिर्विधूज्ञैः खचरैर्युतेक्षितेऽरौ मातुलस्यात्मजकन्यकाः क्रमात्।
वार्कौ तमेऽरौ निनदन्ति मातुलानपत्यतां काष्ठदृशद्विघातकैः ॥ २०८ ॥
तुर्य्यांघ्रिणा वा सलिलेन पादपप्रपाततो मृत्युमुपैति मातुलः।
असद्ग्रहालोकनयुक्त आमये तदीयनाथे विदि मातुलक्षतिः ॥ २०९ ॥

षष्ठ भाव यदि पुरुष ग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो मामा के पुत्र और स्त्री ग्रह (चन्द्र वा शुक्र) वा बुध से युक्त दृष्ट हो तो मामाकी कन्यायें होती हैं। षष्ठ में शनि वा राहु हो तो मामा की अनपत्यता को कहे। एवं काष्ठ तथा प्रस्तर के प्रहार से वा चतुष्पद से वा जल से वा वृक्ष से गिरकर मामा मृत्यु को प्राप्त होता है। षष्ठ भाव, षष्ठेश तथा बुध यदि पाप दृष्ट युक्त हों तो मामा की हानि होती है।

मातुल कष्ट योगः—

अरातिगाभ्यां रविमङ्गलाभ्यां यदोगदृष्ट्या परिलोकिताभ्याम्।
तन्मातुलाङ्गे दहनायुधाभ्यामादीनवो वा गरलादिभीतिः ॥ २१० ॥

षष्ठ में सूर्य तथा मङ्गल हो और वे पाप दृष्ट हो तो मामा के शरीर में अग्नि वा शस्त्र से क्लेश अथवा विषादि से भय होता है।

मातुल मृत्यु योगः—

पङ्केक्षिते पथि पदे रुधिरेऽथ राज्या-
द्रोगे खलै स्तदधिपे वृजिने बुधेऽपि।
नीचाश्रिते मलिनमध्यगते प्रणष्ट-
वीर्य्येऽस्य मातुलविनाशमुशन्ति सन्तः ॥ २११ ॥

नवम वा दशम में पापदृष्ट भौम हो अथवा बुध से षष्ठ स्थान में पाप ग्रह हों और उस का स्वामी पाप ग्रह हो एवं बुध भी नीचराशि में पापान्तर में वा नष्टबल हो तो मामा की मृत्यु को कहते है।

पुनः मातुल मृत्यु तथा मातामही (नानी) के मृत्यु योगः—

ग्लावः कोणेऽर्के मृतिर्मातुलस्य कायात्कीर्तौ गीरथे दुष्टदृष्टे।
वक्रे तद्वद्भार्गवात्कोण आरे क्रूरैर्दृष्टे मातृमातुर्मृतिः स्यात् ॥ २१२ ॥

चन्द्रमा से त्रिकोण में सूर्य हो तो मामा की मृत्यु होती है। एवं लग्न से दशम में गुरु हो और मङ्गलपाप दृष्ट हो तो मामा की मृत्यु होती है। शुक्र से त्रिकोण में पाप दृष्ट मङ्गल हो तो मातामही (नानी) की मृत्यु होती है।

वृक्षादि से पतन योगः—

पराक्रमे रक्तकरे तुषारगावरातिभावे पतनं तरोर्भवेत् ।
धनुर्विलग्ने यदि कारकांशके तुङ्गप्रदेशात्पतनं च वाहनात् ॥ २१३ ॥

तृतीय में भौम और षष्ठ में चन्द्रमा हो तो वृक्ष से पतन (गिरना) होता है। कारकांश कुण्डली में धनु लग्न हो तो उच्चस्थान से वा वाहन से पतन होता है।

षष्ठ भाव के प्रकीर्ण योगः—

वैरीशवैर्य्याचितवीक्षकास्त्रयश्चेद्दुर्बलाः पापखगा रिपोर्भयम् ।
स्यादामयो गोधननाशनं ततः सर्वे शुभास्ते सबला गदक्षयम् ॥ २१४ ॥
राजान्नमत्राखिलकोपदंशयुक्तं तथा गोधनघोटकादीन् ।
रिपोर्विनाशं प्रवदेत्सुधीन्द्रस्तेषां खगानामतिशोभनौ द्वौ ॥ २१५ ॥
केन्द्रत्रिकोणायगतौ सवीर्य्यौ व्याध्यादिनाशं लघु मानवानाम् ।
एकोऽपि खेटः प्रबलस्तु तेषां किञ्चित्फलं क्लेशरिपुव्रणानाम् ॥ २१६ ॥

षष्ठेश, षष्ठगत तथा षष्ठदर्शी ये सब पाप ग्रह हों और दुष्टबली हों तो शत्रु से भय, शरीर में रोग एवं गोधन की हानि होती है। यदि वे सब शुभ ग्रह हो और बली हों तो रोग का नाश, समस्त मधुरादि षड्रसयुक्त राजान्न (उत्तमान्न) भोजन, गोधन अश्वप्रभृति का लाभ और शत्रुओं के नाश को कहे। यदि उन तीनों के मध्य में दो ग्रह बली हो और केन्द्र त्रिकोण वा लाभ में हो तो मनुष्यों के रोगादि का शीघ्र नाश करते हैं। यदि उक्त तीनों के मध्य में एक ही ग्रह अधिक बली हो तो क्लेश, शत्रु तथा व्रणादियोंका स्वल्प फल कहे।

चोर योगः—

खला विलग्ने त्रिभवे विशेषतो निरीक्षिता नीचखगैस्ततोऽनुजे ।
नीचा भुजङ्गार्किकुजास्तदीश्वरे नीचङ्गतेऽथानुगपे स्वनीचगे ॥ २१७ ॥
सनीचखेटे घननायकेऽपि च नीचेऽथ हानौ नयने खलान्विते ।
विशेषतो वीर्य्यगृहे खलग्रहो भावाधिपैर्नीचगतैर्मलिम्लुचः ॥ २१८ ॥

लग्न, तृतीय तथा लाभ में पाप ग्रह हों और वे विशेषतः नीचराशि गत ग्रहों से दृष्ट हो तो (१) तृतीय में नीचराशि गत राहु, शनि तथा भौम हों और तृतीयेश नीचराशि में हो तो (२) अपनी नीचराशि में तृतीयेश हों वा नीचराशि गत ग्रह से युक्त हों एवं लग्नेश भी नीचराशि में हों तो (३) व्यय तथा धन में पाप ग्रह हो विशेषतः तृतीय में पाप ग्रह हों एवं उक्त भावों के स्वामी नीचराशि में हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष चोर होता है।

तृतीयभं नीचगतं विशेषतः शनिर्नताकाशचरेक्षितस्ततः ।
शौर्य्येश्वरो नीचपदानुगो भवेऽतिनीचगो गात्रविभुर्व्ययेऽथ वा ॥ २१९ ॥

विलग्नभं नीचखगानुगं व्यये हीनोऽनुजेशः किमु लग्नलाभपौ ।
नीचौ सपङ्कौ फलपे स्वनीचभे सोत्थे किमार्क्यारबुधाः ककामयोः ॥ २२० ॥
विलोकिताः पूर्णदृशा पारिञ्चना किं केन्द्रगा ज्ञेन्दुकुजाः सदीक्षिताः ।
वारे मृगे कर्किणि मन्दगेऽथ वा केन्द्रेऽब्जतोऽस्रे न शुभेक्षिते तथा ॥ २२१ ॥

तृतीय में नीचराशिगत ग्रह हो विशेषतः नीचराशिगत शनि हो और वह नीचराशि ग्रह से दृष्ट हो तो (१) लाभ में नीचराशिगत तृतीयेश हो और व्यय में अतिनीचगत लग्नेश हो तो (२) लग्न में नीचराशिगत ग्रह हों और व्यय में निर्बल तृतीयेश हो तो (३) लग्नेश तथा लाभेश नीचराशि में हो और वे पाप युक्त हों अथवा तृतीय में नीचराशिगत लाभेश हो तो (४) सुख वा सप्तम में शनि, मङ्गल तथा बुध हों और वे चन्द्रमा से पूर्ण दृष्ट हो तो (५) केन्द्र में बुध, चन्द्र तथा मङ्गल हो और वे शुभ दृष्ट हों तो (६) मकर में मङ्गल और कर्क में शनि हो तो (७) चन्द्रमा से केन्द्र में मङ्गल हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो उक्त योगों में चोर होता है ।

ज्ञेन्द्वसदृष्टे मदने यमे ततोऽरीशे ध्वजध्वान्तकुजेक्षितेऽथ वा ।
कुजर्क्षगे थो विधुतो निधौ भगे ततो यमेऽतोऽसृजि मोषको भवी ॥ २२२ ॥

सप्तम में शनि हो और वह बुध, चन्द्र तथा भौम से दृष्ट हो तो (१) षष्ठेश यदि केतु राहु वा भौम से दृष्ट हो अथवा मङ्गल की राशि में षष्ठेश हो तो (२) चन्द्रमा से द्वितीय में सूर्य और उस से द्वितीय में शनि और उस से द्वितीय में भौम हो तो चोर होता है ।

निधाने रन्ध्रेशे किमु दकदयेऽरावथ तनौ
बुधारौ वा रिःफे सुजभवनपे वाऽहितगतौ ।
सवीर्यौ वक्रज्ञावथ शिखिनि वा मन्दतनये
यदा भागे याते प्रभवति स पाटच्चरवरः ॥ २२३ ॥

द्वितीय में अष्टमेश हों तो (१) षष्ठ में सुखेश हो तो (२) लग्न में बुध मङ्गल हो तो (३) व्यय में तृतीयेश हो तो (४) षष्ठ में बली भौम, बुध हों तो (५) कारकांश लग्न में केतु वा गुलिक हो तो उक्त योगों में श्रेष्ठ चोर होता है ।

शत्रुगत रविफलः—

षष्ठेऽर्के रुक्छोकभाग् वैरिवृद्धिरल्पज्ञातिर्धान्यरायां समृद्धिः ।
विंशद्वर्षे नेत्रयोर्वैपरीत्यं सद्दृष्टाढ्ये स्यान्न दोषो यशस्वी ॥ २२४ ॥
व्यालाटव्योः पारकृन्मंत्रसेवी चात्युष्णाङ्गो दुर्बले भावनाथे ।
तातामांसोऽरिक्षयः सद्युतेऽस्मिन्देहारोग्यं ज्ञात्यरीणां बहुत्वम् ॥ २२५ ॥

षष्ठ में रवि हो तो रोग तथा शोकवाला, शत्रुवृद्धिवाला, अल्पज्ञाति और उसके धान्य धन की वृद्धि होती है । एवं २०वें वर्ष में नेत्रों में विपरीतता होती है । यदि वह 'सूर्य' शुभ दृष्ट युक्त हो तो उक्त दोष नहीं होता है । एवं वह मनुष्य सर्प तथा वनों को पार करने वाला, मंत्रविद्या का ज्ञाता और उष्ण शरीर वाला होता है ।

यदि षष्ठेश निर्बल हो तो उसका पिता दुर्बल और उस के शत्रुजनों का नाश होता है। यदि षष्ठ शुभयुक्त हो तो आरोग्य, शरीर, ज्ञातिजन तथा शत्रुजनों की अधिकता होती है।

शत्रुगत चन्द्र फल:—

अरात्यगारे रजनीकरेऽधिकदारिद्र्यदाही रसरामवत्सरे।
रण्डाङ्गनासङ्गमभागसद्युते हीनाधकृत्तत्र तमोग्रहान्विते ॥ २२६ ॥
घोरोऽर्थहीनः कलहोऽरिणा सह सहोदरोनोऽनलमान्द्यरोगभाक्।
जलादिगण्डोऽन्धतटाकपूर्वके सोग्रे रुजाभाग् गलिते तमोनुदे ॥ २२७ ॥
फलान्युक्तानि पूर्णानि तस्मिंश्चेच्छोभनान्विते।
जायते बलवान्मर्त्य उपतापविवर्जितः ॥ २२८ ॥

षष्ठ में चन्द्रमा हो तो अधिक दरिद्र से पीडित और ३६ वें वर्ष में रण्डा स्त्री से सहवास करता है। यदि वह चन्द्रमा पाप युक्त हो तो नीच पाप कर्म करनेवाला होता है। यदि वह चन्द्रमा राहु वा केतु से युक्त हो तो भयंकर प्रकृति, निर्धन, शत्रु के साथ कलह, भ्राता से रहित, मन्दाग्नि रोगी एवं कूआ, तलाब आदि में जल-जन्य कष्ट होता है। यदि वह पाप युक्त हो तो रोगी एवं क्षीण होतो उक्त फल पूर्ण और शुभयुक्त हो तो बलवान् तथा रोग रहित होता है।

षष्ठगत भौम फल:—

आरे रोगे प्रसिद्धस्तदनु सतनयो ना समर्थः स्वकार्ये
हन्ताऽरीणां कुमारीजनकहयमुखारूढवान्वैरिनाशः।
भाब्देऽथोग्राढ्यदृष्टे खलखगभवने सर्वमेतत्प्रपूर्णं
स्याद्रोगो वातशूलो बुधभ इह न सद्वीक्षिते कुष्ठरोगः ॥ २२९ ॥

षष्ठ में भौम हो तो विख्यात पुत्रयुक्त अपने कार्य में समर्थ, शत्रुजनों का नाशक, २७ वें वर्ष में कन्या जन्म, अश्व प्रभृति वाहन की सवारी और शत्रु का नाश होता है। यदि वह पाप युक्त दृष्ट हो वा पाप राशि में हो तो उक्त फल पूर्ण एवं वात शूल रोग होता है। यदि वह बुध की (३।६) राशि में हो और शुभ दृष्ट न हो तो कुष्ठ रोग होता है।

षष्ठगत बुध फल:—

अरातियाते विधुदेहजाते विवादशूरो नरनाथपूज्यः।
विद्यान्तरायः स तु दाम्भिकः स्यात्खत्र्युन्मितेऽब्दे बहुराजहार्दः ॥ २३० ॥
पत्रादिलेखक इलाजनिधाम्नि नील—
कुष्ठादिरोगसहितो गुदमन्दपातैः।
युक्ते प्रभञ्जनकशूलमुखामयाढ्यो
द्विड्ज्ञातिभिः सह कलिर्भवनाधिनाथे ॥ २३१ ॥

ओजसा सहिते ज्ञातिप्रबलस्तत्र नीचभे ।
अरातिभवने यद्वा ज्ञातीनां संक्षयो भवेत् ॥२३२॥

षष्ठ में बुध हो तो विवाद में शूर, वीर, राजा से सम्मानित, विद्या अध्ययन में विघ्न, दम्भयुक्त, ३० वें वर्ष में बहुत राजाओं से प्रीति (मुलाकात) तथा पात्रादि का लेखक होता है । यदि वह बुध मङ्गल की (१।८) राशि में हो तो नील कुष्ठादि रोग से युक्त होता है । यदि वह केतु, शनि वा राहु से युक्त हो तो वात शूल रोग, शत्रु तथा ज्ञातिजनों के साथ कलह होता है । यदि षष्ठेश बली हो तो ज्ञातिजन प्रबल और नीचराशि में वा शत्रु राशि में हो तो ज्ञातिजनों का नाश होता है ।

षष्ठगत गुरु फल:—

गौरेऽरौ ज्ञातिवृद्धिर्भवति सुतसुतालोकनं विग्रहेऽरुः
शत्रूणां संक्षयः सद्विचरसहिते चेद्गदानामभावः ।
क्षेत्रे पापाश्रगाणां समलिनखचरे वातशैत्यादिरोगो
गेहे मार्त्तण्डसूनोर्भुजगपतियुते स्यान्महारोगयुक्तः ॥२३३॥

षष्ठ में गुरु हो तो ज्ञातिजनों की वृद्धि, पौत्रका दर्शन, शरीर में व्रण और शत्रुजनों का नाश होता है । यदि वह शुभ युक्त हो तो रोगरहित, पापराशि में वा पापयुक्त हो तो वातशीतादि रोग एवं शनि की राशि में हो और राहु से युक्त हो तो महारोगी होता है ।

षष्ठगत शुक्र फल:—

ज्ञातौ सिते ज्ञातिजनप्रजायाः सिद्धिश्च मायासहितोऽरिनाशः ।
रोगान्वितोऽर्य्यासुतवानपात्रव्ययस्य कर्त्ता सुतपौत्रवान् स्यात् ॥ २३४ ॥

सबले भावपे शत्रुज्ञातिवृद्धिस्त्रिकेऽधरे ।
तत्रार्य्यघयुते शत्रुज्ञातिनाश उदाहृतः ॥ २३५ ॥

षष्ठ में शुक्र हो तो ज्ञातिजनों को सन्तान का लाभ, माया से युक्त, शत्रुजनों का नाश, रोग युक्त, स्त्री पुत्र युक्त, कुपात्रों के लिए धन व्यय वाला एवं पुत्र पौत्र वाला होता है । यदि षष्ठेश बली हो तो शत्रु तथा ज्ञातिजन की वृद्धि होती है । यदि त्रिक में नीच राशि गत शत्रुयुक्त वा पापयुक्त भावेश हो तो शत्रु तथा ज्ञातिजनों का नाश कहा है ।

षष्ठगत शनि फल:—

भास्करजे भययातेऽल्पज्ञातिर्धनधान्यसमृद्धः स्यात् ।
शत्रुक्षयः कुजयुते देशान्तरसञ्चारी मानवोऽत्र ॥ २३६ ॥
स्वल्पमहीपतियोगो भङ्गयोगात्क्वचित्सौख्यं क्वचिच्च ।
योगभङ्गो निधनपे यमेऽरिष्टं वातादिरुक् सेर्म्मः ॥ २३७ ॥

षष्ठ में शनि हो तो अल्प ज्ञाति, धन धान्य से समृद्ध और शत्रु का नाश होता है। यदि वह शनि मङ्गल से युक्त हो तो देशान्तर भ्रमण करने वाला और स्वल्प राज योग होता है। यदि राजभङ्ग योग हो तो कहीं सौख्य और कहीं योगभङ्ग होता है। यदि शनि अष्टमेश हो तो अरिष्ट, वातादि रोग तथा व्रण युक्त होता है।

षष्ठ गत राहु फलः—

सपत्नसद्मोपगते शिरोग्रहे प्राणी प्रजातोऽतिसुखी च धीरवान्।
विभावरीभर्तृसमन्विते नृपस्त्रीभोगभाङ् निर्द्रविणो मलिम्लुचः॥ २३८॥

षष्ठ में राहु हो तो अतिसुखी तथा धैर्य शाली होता है। यदि वह चन्द्रमा से युक्त हो तो राजपत्नी से संभोगवाला, निर्धन तथा चोर होता है।

षष्ठगत केतु फलः—

शिखावति द्वेष्यगतेऽरिनाशस्तुच्छं सुखं तुर्यपदान्निरोगः।
मानस्य भङ्गः प्रभवेज्जनन्याः पक्षाद्गुदे लोचनयोश्च रोगः॥ २३९॥

षष्ठ में केतु हो तो शत्रुजनों का नाश; चतुष्पदों से अल्प सुख, आरोग्यता, मातृ पक्ष से मानहानि एवं गुदा तथा नेत्रों में रोग होता है।

षष्ठ गत रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

रवी रिपुस्थो धनदोऽग्निचन्द्रमोऽब्दे वा त्रियुग्मेऽहियमास्तकेतवः।
कुर्युः सुताप्तिं जिनवत्सरे मृतिं सुरप्रमे वाङ्गमितेऽरिगो विधुः॥ २४०॥

अरातिभीतिं खयुगे गुरुः सितोऽसिभीतिदो भूमियुगे कुदोर्मिते।
सपत्नगो ज्ञः कलहारिभीतिदः स्वर्गप्रमेऽब्दे किमगाग्निहायने॥ २४१॥

षष्ठ में सूर्य हो तो १३ वें वा २३ वें वर्ष में धन देता है। षष्ठ में राहु, शनि, मङ्गल तथा केतु हों तो २४ वें वर्ष में पुत्र की प्राप्ति को करते हैं। षष्ठ गत चन्द्रमा ३३ वें वा छठे वर्ष में मृत्यु, गुरु हो ४० वें वर्ष शत्रु से भय, शुक्र हो तो ४१ वें वर्ष वा २१ वें वर्ष में तलवार से भय एवं बुध हो तो २१ वें वर्ष वा ३७ वें वर्ष में कलह तथा शत्रु से भय होता है।

रवि दृष्ट रिपुभाव फलः—

नाम्बासुखं समररङ्गयुतो रिपुघ्नो
रोगोऽपसव्यनयने कविलासशीलः।
लोलेक्षणो भवति मातुलपक्षहीनो
दृष्टे रिपौ दिनकरेण गुणाभिलाषी॥ २४२॥

षष्ठ स्थान यदि सूर्य से दृष्ट हो तो मातृ सौख्य रहित, युद्ध में तत्पर, शत्रुहन्ता, चञ्चल नेत्र, जल विलास वाला, दाहिना नेत्र रोग युक्त, मामा के पक्ष से हीन और गुणों की अभिलाषा वाला होता है।

चन्द्र दृष्ट रिपुभाव फलः—

राजेक्षिते रुजि कफक्षयरोगपीडा
चौरात्खलाद् द्रविणहानिररेर्विवृद्धिः।
पुंसां मृदुश्वसनसम्भवदेहबाधा
बन्धोः सुखं नहि भवेद्बहुरुक् सगुरौ॥ २४३॥

षष्ठस्थान यदि चन्द्र से दृष्ट हो तो कफ तथा क्षयरोग से पीडा, चौर तथा दुष्टजन से धन की हानि, शत्रु की वृद्धि, शरीर में मन्द वायु जन्य बाधा एवं बन्धु जनों का सुख नहीं होता है। यदि 'चन्द्रमा' गुरु से युक्त हो तो बहुत रोग होता है।

भौम दृष्ट रिपुभाव फलः—

वैरिक्षयो भवति मातुलसौख्यनाशो
बाधाऽऽयुधक्षतजपावकलोहजाता।
स्याद्राजनीतिनिपुणो बहुलप्रतापी
प्रौढीक्षिते प्रहरणे धरणीभवेन॥ २४४॥

षष्ठ स्थान यदि भौम से दृष्ट हो तो मातुलजन्य सुख का नाश; शस्त्र, रक्त, अग्नि तथा लोह से उत्पन्न पीडा एवं राजनीति में चतुर तथा प्रतापी होता है।

बुध दृष्ट रिपु भाव फलः—

स्यान्मातुलोद्भवसुखं प्रचुरं पराप-
वाद्यन्यकर्म्मकृदनेकसपत्नलोकैः।
सार्द्धं विरोधकर इन्दुजनीक्षितेऽरौ
धीरः क्षमी विधुसमश्च नयावहः स्यात्॥ २४५॥

षष्ठ स्थान यदि बुध से दृष्ट हो तो मामा का बहुत सुख, अन्यों के अपवाद वाला, अन्य कर्म करने वाला, शत्रुजनों के साथ वैर करने वाला, धैर्यशाली, क्षमावान्, चन्द्रसदृशदेह एवं नीतिशास्त्रवेत्ता होता है।

गुरु दृष्ट रिपुभाव फलः—

मुक्तो दयागदभयैर्वचसां विलासो
मानान्वितः स्थितिविनाशकरो रिपूणाम्।
वृद्धेर्विनाशनकरो निजमातुलस्य
सौख्यं सुभोगविधियुग् गुरुणेक्षितेऽरौ॥ २४६॥

षष्ठ स्थान यदि गुरु से दृष्ट हो तो दया, रोग तथा भय से रहित, वचनों का विलासी, सम्मानित, स्थिति का नाश करने वाला, शत्रुजनों की वृद्धि का नाश करने वाला, मामा का सुख एवं भोग तथा भाग्य से युक्त होता है।

शुक्र दृष्ट रिपु भाव फलः—

दृष्टे दैत्यपुरोधसा प्रहरणे नीचोऽतिनीचान्वितः
स्यात्क्रूरः कुटिलोग्रकर्म्मनिरतः कौतूहली मोषकः।
दुष्टोऽतीव खलाभिलाषसहितो मंत्रैर्विचारैर्वियुग्
द्विड्वृद्धिक्षयकृत्स्वमातुलभवं सौख्यं जनैः पूजितः ॥ २४७ ॥

षष्ठ स्थान शुक्र से दृष्ट हो तो वह मनुष्य नीच तथा नीचजनों से युक्त, क्रूर, कुटिल स्वभाव, उग्र कर्म में लीन, खेल करने वाला, चोर, अत्यन्त दुष्ट, दुष्ट अभिलाषा युक्त, मंत्र तथा विचार शून्य, शत्रुजनों की वृद्धि का नाशक, मामा से सुखी एवं लोगों से सम्मानित होता है।

शनि दृष्ट रिपुभाव फलः—

द्विण्मातुलक्षयकरो व्रणपीडितोऽङ्घ्रौ
नेत्रे मुखे परुषगीर्ज्वरपीडिताङ्गः
मेहार्दितो बहुविधिः प्रमदोऽतिधीरो
भूमीट् प्रतापसहितो द्विषि कृष्णदृष्टे ॥ २४८ ॥

षष्ठ स्थान यदि शनि से हो तो शत्रु तथा मामाओं का नाश करने वाला; चरण, नेत्र तथा मुख व्रण से पीड़ित, निष्ठुर भाषी, ज्वर से पीडित शरीर एवं प्रमेह से पीडित, बहुत भाग्यवान्, हर्षित, अतिधैर्यशाली, भूमि का स्वामी और प्रतापी होता है।

राहु दृष्ट रिपु भाव फलः—

आलोकिते पवनभुक्पतिना सपत्न-
भावे विपक्षजननाशनमर्थहानिः
स्याद्दुर्जनस्य वशतो विनयेन युक्तः
सम्पूर्णसद्गुणयुतो जनने स यस्य ॥ २४९ ॥

षष्ठ स्थान यदि राहु से दृष्ट हो तो शत्रु का नाश दुर्जन के कारण धन की हानि, विनय तथा समस्त गुणों से युक्त होता है।

लग्न गत षष्ठेश फलः—

शत्रूणां पृतनौघजिद्बलयुतो मानी प्रदाता निज-
लोकाभीलकरः प्रपञ्चचतुरो निर्वैररुग् स्युत्सवः।

संयुक्तोबहुवाहनैः शुभकृतौ सक्तोऽरिचौरापहा
भोगैर्युक् सुतरैश्चतुष्पदयुतो छिद्रे पुरे स्वैरवाक् ॥ २५० ॥

लग्न में षष्ठेश हो तो शत्रुसेनासमूह को जीतने वाला, बली, सम्मानित, दानी, निजजनों को दुःखदायक, प्रपञ्चम में प्रवीण, पैर तथा राग रहित, भय तथा उत्सव वाला, बहुत वाहनों से युक्त, शुभ कर्मों में आसक्त, शत्रु तथा चोरों का नाशकरने वाला, उत्तम भोग तथा चतुष्पदों से युक्त एवं स्वच्छन्द बोलने वाला होता है।

मान्येश्वो मूर्धनि मन्मथे वा मनोरथे ना गुणवानुदारः ।
कीर्त्या समेतो रहितोऽङ्गजेन मान्यो भवः साहसवान् ससारः ॥ २५१ ॥

लग्न सप्तम वा लाभ में लग्नेश हो तो गुणवान्, उदार, यशस्वी, पुत्ररहित, माननीय, साहसी एवं धनी होता है।

धन गत षष्ठेश फलः—

स्वेऽरीशे विदितो गुणैस्तु चतुरो द्रव्यप्रयोगे पशु-
यानाढ्यो मधुरान्नभुक् कृशतरो युक्तार्थवाक् पादगः ।
दुष्टः सङ्ग्रहवान् कुसङ्गनिरतः पुत्रात्तवित्तः सरुक्
सुस्थानः कठिनो नरेशजनतः स्याल्लब्धकामश्चलः ॥ २५२ ॥

धन में षष्ठेश हो तो गुणों से विख्यात, धन के प्रयोग में चतुर, पशु तथा वाहनों से युक्त, मधुरान्न भोजी, दुर्बल, युक्त वचन भाषी, पाद से चलने वाला, दुष्ट स्वभाव, सङ्ग्रह वाला, नीन्दितजनों के सङ्ग वाला, पुत्रगृहीत धन वाला, रोग युक्त, उत्तम स्थान वाला, कठोर हृदय, राजा से लब्ध इच्छा वाला एवं चञ्चल स्वभाव वाला होता है।

वित्ते क्रिमभ्रे भयभावभर्त्तरि जातः ससौख्यः कुलविश्रुतो जनः ।
वक्ता शुचिः स्याद्विषयान्तरे सुखी रतः स्वधर्म्मेषु तथा स्वकर्म्मसु ॥ २५३ ॥

धन वा दशम में षष्ठेश हो तो सौख्य युक्त, कुल में प्रसिद्ध, बोलने वाला, पवित्र हृदय परदेश में सुखी अपने धर्म में तथा अपने कर्म में तत्पर रहता है।

सहज गत षष्ठेश फलः—

भीतिर्न भुजगे क्षमी शुभतनुर्वंशानुजार्थादिहा
कोपी पण्डितसङ्गतिर्निजपितुर्लक्ष्मीविलासे मतिः ।
शत्रूणां क्षयकृत्खले खलरतः सोत्थोज्झितः कष्टकृत्
स्वस्य ग्रामजनस्य यस्य जनने काले स जातः पुमान् ॥ २५४ ॥

तृतीय में षष्ठेश हो तो क्षमावान्, उत्तमशरीर; कुल भ्राता तथा धन को नाश करने वाला, क्रोधी, पण्डित जनों की सङ्गति वाला अपने पिता की सञ्चित लक्ष्मी के विलास बुद्धि वाला एवं शत्रुजनों का नाश करने वाला

होता है। यदि षष्ठेश पाप ग्रह हो तो दुर्जनों में लीन, भ्राताओं से रहित एवं अपने ग्राम के मनुष्यों को कष्ट करने वाला होता है।

विपक्षपे विक्रमभावगे किमु चेतोनिकेते ऽतिरुषा जनुर्भृतः।
रक्तेक्षणो धैर्यधरश्च दुर्जनो द्वेषी धनी चञ्चलमानसोऽप्यसौ ॥ २५५ ॥

तृतीय वा चतुर्थ में षष्ठेश हो तो अत्यन्त क्रोध के कारण लाल नेत्र वाला, धैर्यशाली, दुर्जन, वैर बुद्धि एवं चञ्चल होने पर भी धनवान् होता है।

सुख गत षष्ठेश फल:—

पृथ्वीतलालयगतेऽरिनिकेतनेशे
शत्रू मिथः पितृसुतौ कमलां लभेत।
तातात्पिताऽस्य सगदो गदयुक् स्वयं सो-
ऽम्बासौख्ययुग् बलयुतश्चपलः कृपालुः ॥ २५६ ॥

सुख में षष्ठेश हो तो पिता पुत्र परस्पर शत्रु, पिता से लक्ष्मी की प्राप्ति, पिता रोग युक्त और स्वयं भी रोगी होता है। एवं वह मनुष्य माता के सुख से युक्त, बलवान्, चञ्चल स्वभाव और दयावान् होता है।

प्रधानः स्वान्वये जातो नरः पौरुषसंयुतः
दाता दीनः कलेः कर्त्ता पौत्रपूर्वैः सहोद्भवः ॥ २५७ ॥

अपने वंश में प्रधान, पुरुषार्थी, दानी, दरिद्र एवं पौत्रादियों के साथ कलह करने वाला होता है।

सुत गत षष्ठेश फल:—

मत्या सर्वमपाकरोत्यरिगणं दक्षः प्रयोगे धियः
कार्ये स्वस्य महानसौ सुचतुरः सौम्यो मनस्वी सुखी।
युक्तोऽदभ्रतनूद्भवैश्चलसुहृद्वित्तादिभाक् स्याद्दया-
प्रीत्याढ्यो मनुजो जिघांसुगृहपे सन्तानभावोपगे ॥ २५८ ॥

पञ्चम में षष्ठेश हो तो बुद्धि से सब शत्रुगणों का नाश करने वाला, बुद्धि के प्रयोग में प्रवीण, अपने कार्य में बड़ा चतुर, सौम्यस्वभाव, मनमाने कार्य करने वाला, सुखी, बहुत पुत्रों से युक्त, चञ्चल मित्र के धन वाला एवं दया तथा प्रीती से युक्त होता है।

क्रूरेऽरिता ताततनूजयोः सुतान्मृतिर्मृतापत्यक उग्रयोगतः।
सौम्ये तु दुष्टोऽध्वनि वित्तवर्जितः सशोभनेऽप्यद्भुतवित्तभाङ्नरः ॥ २५९ ॥

षष्ठेश यदि पाप ग्रह हो तो पिता पुत्र की परस्पर शत्रुता अथवा पुत्र से पिता की मृत्यु, एवं पाप योग से मृतापत्य होता है। षष्ठेश शुभ ग्रह हो तो दुष्ट तथा मार्ग में धन रहित होता है। यदि षष्ठेश शुभ युक्त होते अद्भुत धन वाला होता है।

षष्ठ गत षष्ठेश फलः—

आतङ्कं ऽशविभो न सीदति जनैरन्योपकारी बुधः
सोऽर्थैर्वैरकरः सुवेषसुभगो मान्यल्पकान्तात्मजः।
स्वज्ञाती रिपुवत्पवित्रचरणो ऽन्यज्ञातिभिर्मित्रता
नुर्यस्य प्रभवे सुवाहनयुतः कौ नो चलेद्दीनभृत् ॥ २६० ॥

षष्ठ में षष्ठेश हो तो जन्म से दुःखी, पराया उपकार करने वाला, पण्डित, भ्राता ओं से वैर करने वाला, सुन्दर वेष तथा ऐश्वर वाला, मानी, अल्प स्त्री पुत्र वाला, अपनी जाति के मनुष्य शत्रु के समान, पवित्र चरण, अन्यजाति वालों से मित्रता, सुन्दर वाहन युक्त, दीनों का पालन करने वाला एवं भूमि में नहीं चलता है।

सप्तम गत षष्ठेश फलः—

आतङ्कपे ऽस्ते प्रबलः प्रपञ्ची दाता दयालुर्गतबन्ध्यदारः।
तत्स्त्री सुशीला सुभगा तथोद्यद्विलासदक्षा शुभचिह्नयुक्ता ॥ २६१ ॥

तस्मिन्खलव्योमचरे विरोधिनी चण्डा वधूस्तापकरी शुभे वशा।
गर्भस्रवा पापयुते सुकामयुक्कान्तायुतो ऽदभ्रविवाददारकः ॥ २६२ ॥

विषस्य सेवको जातः सौम्यैराकाशवासिभिः।
बहुभिस्तनयैर्लाभैः संयुक्तो जायते भवी ॥ २६३ ॥

सप्तम में षष्ठेश हो तो अधिक बली, प्रपञ्च वाला, दानी, दयालु एवं वन्ध्या स्त्री रहित और उसकी स्त्री सुशीला, सौभाग्यवती, उद्यत् विलास में चतुर तथा सौभाग्य चिन्हों से युक्त होती है। षष्ठेश पाप ग्रह हो तो विरोधित, प्रचण्ड स्वभाव वाली और सन्ताप करने वाली होती है। यदि षष्ठेश शुभ ग्रह हो तो उस की स्त्री वन्ध्या तथा गर्भपात वाली होती है। यदि षष्ठेश पाप युक्त हो तो वह मनुष्य उत्तम काम युक्त स्त्रीवाला, बहुत बिवाद करनेवाला एवं विष का सेवन करनेवाला और शुभग्रह से युक्त हो तो बहुत पुत्र तथा धनलाभ से युक्त होता है।

अष्टम गत षष्ठेश फलः—

विषारिभूनाथभुजङ्गभीतिर्नेत्रोपतापः कटिपीडनं च।
विरुद्धभावो निखिलैर्जगद्भी रोगागमो निर्व्यथने ऽरिनाथे ॥ २६४ ॥

अष्टम में षष्ठेश हो तो विष, शत्रु, राजा तथा सर्प से भय, नेत्रों में रोग, कमर में पीड़ा, समस्त मनुष्यों से विरुद्ध भाव एवं रोगों का आगमन होता है।

तत्रेन्दुसूनौ विषतो ऽहितः कुजे सद्यः सुधाङ्गे नृपसिंहयो रवेः।
दैत्यार्चिते लोचनयो रुजा ऽर्चिते स्याद्दुष्टधीर्वैरिजनाद्यमानुजे ॥ २६५ ॥

समीरदोषाद् ग्रहणीरुजा मृतिः रुयन्तो भवेत्केनचिदेवमीरितम्।
पूर्वोक्तदोषान्नृपतश्च मृत्युदौ ग्लौभास्करौ सूरिसितौ दृगर्दितौ ॥ २६६ ॥

षष्ठेश बुध हो तो विष से मृत्यु मङ्गल हो तो सर्प से मृत्यु, चन्द्रमा हो तो शीघ्र मरण, सूर्य हो तो राजा तथा सिंह से मृत्यु, शुक्र हो तो नेत्र में रोग, गुरु हो तो दुष्ट बुद्धि तथा शत्रु से मृत्यु, शनि हो तो वात दोष से तथा संग्रहणी से मृत्यु होती है। उक्त रोगों से किसी आचार्य ने स्त्री का मरण कहा है। अथवा षष्ठेश चन्द्र सूर्य हों तो पूर्वोक्त दोषों से तथा राजा से मृत्यु एवं गुरु शुक्र हों तो नेत्र पीडा को करते है।

कालेऽपाये सपत्नेशे परकान्ताभिभोगभाक्।
सामयो जीवहिंसासु जातस्तत्परमानसः॥ २६७॥

अष्टम वा व्यय में षष्ठेश हो तो परस्त्रीगामी, रोग युक्त एवं जीव हिंसा ओं में दत्तचित्त होता है।

नवम गत षष्ठेश फलः—

न पुण्यलेशः सुकृतेषु कर्म्मसु स्याद्विघ्नता विप्रसुरार्चनप्रियः।
स्थिरेन्दिरावान् दृषदादिविक्रयी विधोः कलावद् व्यवहारके क्षतिः॥ २६८॥
वृद्धिस्तथा क्वाप्यरिपे शुभे खले भ्रष्टश्च खञ्जो गुरुयाचकामरान्।
न मन्यते सौख्यधनात्मजैर्वियुक् पुण्योज्झितोऽनेकविवादकृद्भवेत्॥ २६९॥

नवम में षष्ठेश हो तो पुण्य का लेश मात्र न करनेवाला, पुण्य कर्म में विघ्नता, ब्राह्मण तथा देवताओं के पूजन में प्रीति रखनेवाला, स्थिर लक्ष्मीवाला, पत्थर विक्रय करनेवाला व्यवहार में चन्द्र कला के समान कभी हानि और कभी वृद्धि होती है। षष्ठेश पाप ग्रह हो तो आचार भ्रष्ट, खञ्ज (लङ्गडा); गुरु, याचक तथा देवताओं को न माने; सौख्य, धन तथा पुत्रों से रहित, पुण्य हीन एवं अनेक प्रकार के विवाद को करनेवाला होता है।

दशम गत षष्ठेश फलः—

खेऽरीशेऽरिविनाशकृन्निजगुरोमातुः पितुर्भक्तिमान्
सौभाग्याङ्कयुतः सुतार्थरहितो लोकोपकारी रणे।
शूरोऽघे चपलः खलः स्वजननीदोषी तथा शात्रवो
दुष्टो दत्तसुतान्वितः शुभखगे भूपालकस्तातहा॥ २७०॥

दशम में षष्ठेश हो तो शत्रुजनों का नाश करनेवाला; गुरु, माता तथा पिता की भक्तिवाला सौभाग्य चिह्न से युक्त पुत्र धन से रहित, लोगों का उपकार करनेवाला एवं सङ्ग्राम में शूर वीर होता है। षष्ठेश यदि पाप ग्रह हो तो चञ्चलचित्त, दुर्जन, माता का दोषी तथा वैरी, दुष्ट स्वभाव तथा दत्त पुत्रवाला होता है। षष्ठेश शुभ ग्रह हो तो भूमि का स्वामी और पिता का नाश करनेवाला होता है।

लाभ गत षष्ठेश फलः—

लाभे मातुलपे गजाश्वमहिषीगोपूर्वतो लाभवान्
भूभृद्वल्लभ उग्रके रिपुजनात्पश्वत्वतुल्यं भयम्।
सक्तोऽन्यप्रमदासु भूपजनतश्चौराद् धनस्य क्षयो
वाच्यैवं खलसङ्गतिः शुभकरे स्यात्सर्वदा शस्तकृत्॥ २७१॥

लाभ में षष्ठेश हो तो हाथी, घोड़े भैंस तथा गौ इत्यादि से लाभवाला एवं राजा का प्रिय होता है। षष्ठेश यदि पाप ग्रह हो तो मृत्यु तुल्य भय, पर स्त्री में आसक्त, राजा तथा चोर से धन का नाश और दुर्जनों का साथ होता है। षष्ठेश शुभ ग्रह हो तो नित्यशुभ फलकारक होता है।

व्यय गत षष्ठेश फलः—

भूषणैर्व्यसनैर्नव्यवयः स्त्रीपुत्रवर्जितः।
रम्यदेहो मनस्वी च शुच्यूनो दैवतत्परः॥ २७२॥
अहोरात्रं हिरण्याय गमागमात्कृतोद्यमः।
धनधान्यादिभिर्हीनोऽन्याङ्गनाभाग्व्ययेऽरिपे॥ २७३॥

व्यय में षष्ठेश हो तो भूषण तथा वस्त्रों से नूतन अवस्थावाला, स्त्री पुत्र से रहित सुन्दर शरीर मनमान कार्य-करनेवाला पवित्रता रहित, भाग्य परायण दिन रात गमनागमन से अधिक उद्यम करनेवाला, धन धान्यादि से रहित एवं पराई स्त्री वाला होता है।

षष्ठ गत मेष राशि फलः—

यदा नराणां जननेऽविराशौ प्रत्यर्थिभावोपगते सुरौद्राः।
तथाऽतितीक्ष्णाश्चतुरंघ्रयः स्युः कार्यं विना म्लेच्छजनाः सपत्नाः॥ २७४॥

षष्ठ में मेष हो तो अतिभयानक तथा अतितीक्ष्ण चतुष्पद होते हैं। एवं अकारण म्लेच्छ (यवन) जन शत्रु होते हैं।

षष्ठ गत वृष राशि फलः—

प्रसूतिकाले मनुजस्य यस्य वृषाभिधाने द्विषि तस्य वैरम्।
चतुष्पदार्थे प्रमदाप्रसङ्गादसत्यमार्गेण च बन्धुवर्गे॥ २७५॥

षष्ठ में वृष हो तो चतुष्पदों के लिए अन्य लोगों से वैर एवं स्त्री के प्रसङ्ग से तथा असत्य मार्ग से बान्धव गणों में वैर होता है।

षष्ठ गत मिथुन राशि फलः—

नृयुग्मराशौ परिपन्थिगेहे भवेद्विरोधो वनिताजनोत्थः।
वणिग्जनैः पापजनैश्च नीचलोकानुरक्तैर्जनितो विरोधः॥ २७६॥

षष्ठ में मिथुन हो तो स्त्रियों से उत्पन्न वैर, वैश्यों से उत्पन्न वैर, पापात्माओं से एवं नीचजनों से अनुरक्त मनुष्यों से उत्पन्न वैर होता है।

षष्ठ गत कर्क राशि फलः—

कुलीरराशावभिघातिभावे निकेतनोत्थं मनुजस्य वैरम्।
विरोधकर्ता सह विप्रमुख्यैर्महाजनेन क्षितिपालकेन॥ २७७॥

षष्ठ में कर्क हो तो गृह जन्य वैर, श्रेष्ठ ब्राह्मणों से, महाजन से एवं राजा से वैर होता है।

षष्ठ गत सिंह राशि फलः—

कण्ठीरवे शात्रवगेहमाप्ते समं विरोधो निजबन्धुलोकैः।
श्रेष्ठाबलाभिस्तनयैर्धनोत्थमार्त्तस्यमर्त्त्यस्य विनिर्जितस्य ॥ २७८ ॥

षष्ठ में सिंह हो तो आर्त्त तथा निर्जित मनुष्य का बान्धवजन, उत्तम स्त्री तथा पुत्रजनों के साथ धनजन्य वैर होता है।

षष्ठ गत कन्या राशि फलः—

पाथोनराशौ यदि जन्मकालेऽरातौ विरोधः सह कन्यकाभिः।
दुश्चारिणीभिर्विगतत्रपाभिर्वाराङ्गनाभिः सह कामिनीभिः ॥ २७९ ॥

षष्ठ में कन्या राशि हो तो दुश्चारिणी तथा निर्लज्ज कन्याओं के साथ वैर एवं वेश्या और कामिनी स्त्रियों के साथ वैर होता है।

षष्ठ गत तुला राशि फलः—

द्वेष्योपयाते घटनामधेये भवेद्विरोधो निजबन्धुवर्गात्।
साधोः स्वगेहात्सुकृतस्य कार्ये नरस्य वैरं निधिसम्भवं स्यात् ॥ २८० ॥

षष्ठ में तुला हो तो अपने बन्धुवर्ग से, साधुजन से तथा अपने घर से पुण्य कार्य में निधिजन्य वैर होता है।

षष्ठ गत वृश्चिक राशि फलः—

सरीसृपे जन्मनि वैरभावे पुण्यस्य कार्ये मनुजस्य वैरम्।
भूदेवताभिः सह तस्कराद्यैः सरीसृपैः कुण्डलिभिः कुरङ्गैः ॥ २८१ ॥

षष्ठ में वृश्चिक हो तो ब्राह्मण, चोरादि, बिलवासी, सर्प तथा मृगों के साथ पुण्य कार्य में वैर होता है।

षष्ठ गत धनु राशि फलः—

तुरङ्गदेहे व्यसनोपयाते वैरं मनुष्यैरिषुभिः समेतैः।
सत्रा धनुर्भिः पर वञ्चनाख्यैः परैस्तुरङ्गैर्द्विरदाभिधानैः ॥ २८२ ॥

षष्ठ में धनु हो तो बाण तथा धनुषधारी मनुष्यों के साथ वैर एवं पर वञ्चनों से शत्रुओं से, घोड़ों से और हाथियों से वैर होता है।

षष्ठ गत मकरराशि फलः—

मृगानने व्याधिनिकेतनस्थे वैरं नराणां धनजं तदानीम्।
सार्कं सुहृद्भिर्गृहजं प्रभूतकालं भवेत्साधुमहाजनेन ॥ २८३ ॥

षष्ठ में मकर हो तो मित्रों के साथ धनजन्य वेर एवं साधु महाजन के साथ चिरकाल पर्यन्त गृहजन्य वैर होता है।

षष्ठ गत कुम्भ राशि फलः—

विपक्षसंस्थे कलशे विरोधः सार्द्धं क्षितीशैर्द्रविणस्य हेतोः।
तोयाश्रयैर्वप्रतडागवापीपूर्वैर्मनुष्यैरधमस्वभावैः॥ २८४॥

षष्ठ में कुम्भ हो तो धन के कारण राजा के साथ वैर एवं जलाश्रय, क्षेत्र, तडाग तथा वापी प्रभृति से और निन्दित स्वभाव वाले मनुष्यों के साथ वैर होता है।

षष्ठ गत मीन राशि फलः—

यदेत्थसौ दस्युनिशान्तसंस्थे नित्यं नृणां नन्दनवस्तुजन्यम्।
आत्मीयलोकेषु कलत्रहेतोर्वैरं समं स्वीयपितुर्विपक्षैः॥ २८५॥

षष्ठ में मीन हो तो मनुष्यों का नित्य पुत्र की वस्तुजन्य वैर एवं स्त्री के कारण परिवार के लोगों के मध्य में बैर और पिता के शत्रुओं के साथ वैर होता है।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते शत्रुभावचिन्तनप्रकरणमष्टाविंशमवासितम्।

अथ

जायाभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते।

सप्तम भाव जन्य पदार्थ परिज्ञानः—

जायाविवाहपतिकामपदाप्तिबस्ति-
नष्टार्थवाददधिसूपपयोगुडादि।
यात्राप्रपास्वतनुमृत्युवणिक्क्रियादि
कामे स्वतातजनको निखिलं विलोक्यम् ॥ १ ॥

जाया (स्त्री), विवाह, पति, कामदेव, पदप्राप्ति, बस्ति प्रदेश, नष्ट द्रव्य, वाद (झगडा), दधि (दही), सूप (दाल), पय (दूध), गुडादि, यात्रा (सामान्य यात्रा), प्रपा (प्याऊ), स्वतनुमृत्यु (निजमृत्यु), वणिक्-क्रियादि (क्रय विक्रय), स्वतातजनक (पितामह) इन सब पूर्वोक्तवस्तुओं का विचार सप्तम भाव में देखना चाहिए।

अशुभ सम्बन्ध के कारण जायाभाव के मध्यमत्व का परिज्ञानः—

पत्नीगृहस्था उदयोडुनाथयोः पङ्गाः खगाः सत्फलदा न कामपे।
त्रिकेऽघभस्थेऽघसमन्वितेक्षिते सर्वं फलं स्त्रीभवनस्य मध्यमम् ॥ २ ॥

लग्न तथा चन्द्रमा के मध्य में जो अधिक बली हो उस से सप्तम स्थान में पापग्रह हों तो शुभ फल नहीं देते हैं। त्रिकस्थान में तथा पाप राशि में सप्तमेश हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो तो सप्तमभाव का सम्पूर्ण फल मध्यम जानना चाहिए।

मूर्त्तीन्द्वोर्यदि मन्मथे सुकृतभे सुस्थाननाथोत्तमैः
संदृष्टे सहिते स्वकीयपतिना नास्तारिनीचाशुभैः।
जायाप्तिं प्रवदन्ति कान्त उदये सौम्यग्रहाणां लवो
त्र्यंशो द्वादशभाग एव भवति स्त्र्याप्तिर्निरुक्ताऽचिरात् ॥ ३ ॥

लग्न वा चन्द्रमा से सप्तम स्थान में शुभ ग्रह की राशि हो और वह सुस्थानेश शुभ ग्रहों से तथा अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो एवं अस्तगत, शत्रुराशिगत नीचराशिगत तथा पाप ग्रहों से दृष्ट युक्त न हो तो स्त्री की प्राप्ति को कहते हैं। यदि सप्तम स्थान में तथा लग्न में शुभ ग्रहों का नवांश, द्रेष्काण तथा द्वादशांश हो तो शीघ्र स्त्री की प्राप्ति कहनी चाहिए।

कलत्रचिन्ता भमदार्थपैर्वा स्त्रीकारकज्ञेज्यसितेन्दुमध्ये ।
प्राणी खगो योऽत्र ततः समस्तं निरूपयेद्वर्णमुखं गृहिण्याः ॥ ४ ॥

अथवा शुक्र, सप्तमेश तथा द्वितीयेश से स्त्री सम्बन्धी विचार करना चाहिए। स्त्रीकारकग्रह, बुध, गुरु, शुक्र तथा चन्द्रमा के मध्य में जो ग्रह अधिक बली हो उस से स्त्री के समस्त वर्ण जाति प्रभृति का निरूपण करे।

स्त्रीवर्णादि परिज्ञानः—

अङ्गना भृगुलवाधिपतुल्या वर्णरूपगुणपूर्वकयुक्ता ।
किं वधूभपरिणायकतुल्यं वर्णशीलमुदितं दयितायाः ॥ ५ ॥

नवांशकुण्डली में जिस राशि में शुक्र हो उस के पति के समान वर्ण रूप गुण वाली स्त्री होती है। अथवा सप्तमेश के तुल्य स्त्री का वर्ण तथा स्वभाव कहना चाहिए।

वर्णं वदेद्दारगृहस्य वास्तनाथस्य वा कारकखेचरस्य ।
तेषां समस्तोत्तमवीर्य्ययुक्तो यस्तस्य वर्णं निगदन्तु तेषाम् ॥ ६ ॥

मध्ये विहङ्गे यदि चेत्समग्रसद्वीर्य्ययुक्ते भृगुगौरदृष्टे ।
रूपेण युक्ता सुगुणाऽबलाऽसत्संवीक्षिते दुर्गुणिका कुरूपा ॥ ७ ॥

सप्तम गत राशि के समान वर्ण वा सप्तमेश के समान वर्ण वा सप्तम कारक के समान वर्ण कहे। अथवा उन सब ग्रहों के मध्य में जो ग्रह सम्पूर्ण उत्तमबलों से युक्त हो उस के समान वर्ण कहे। अथवा उन सब उत्तम बल युक्त ग्रहों के मध्य में जो ग्रह शुक्र गुरु से दृष्ट हो उस के समान रूप से युक्त एवं उत्तम गुणवाली स्त्री होती है। यदि वह ग्रह पाप दृष्ट हो तो दुष्टगुणवाली तथा कुरूपवाली स्त्री होती है।

सुवर्णवर्णा धिषणे भृगौ भपे सोर्ज्जे कलत्र विबुधे सनीलभा ।
सुशोणभाऽस्रे तिमिरे शनैश्चरे कान्ता तदा श्यामतरा शरीरिणः ॥ ८ ॥

सप्तम में बली गुरु शुक्र वा चन्द्रमा हो तो सुवर्ण के समान वर्ण वाली स्त्री होती है। एवं सप्तम में बली बुध हो तो नीलकान्ति वाली, मङ्गल हो तो अतिरक्तकान्ति वाली और राहु वा शनि हो तो मनुष्य की अतीव श्यामवर्ण वाली स्त्री होती है।

स्त्रीवंश परिज्ञानः—

पौरेशे पतिगे सपुण्यखचरे किं प्रेयसीपस्त्यपे
सद्भागे विमलेक्षिते यदि वधूं सद्वंशजां प्राप्नुयात् ।
देहेशेऽघविहङ्गभे द्युनगते यद्वाऽङ्गनागारप
आग्नेयग्रहवर्गगे समलिने दुर्वंशजां स्त्रीं लभेत् ॥ ९ ॥

सप्तम में शुभ युक्त लग्नेश हो अथवा शुभ ग्रह के नवांश में शुभ दृष्ट सप्तमेश हो तो उत्तम वंश में उत्पन्न स्त्री की प्राप्ति होती है। एवं सप्तम में पाप राशि गत लग्नेश हो अथवा पापग्रहों के वर्ग में पाप युक्त सप्तमेश हो तो दुष्ट वंश में उत्पन्न स्त्री की प्राप्ति होती है।

स्त्रीजाति परिज्ञानः—

अनङ्गभाद्दारभपात्स्वपाद्वा सारेण साम्ये हरिजालयेशे ।
समानजातिर्धवभक्तिचित्ता सुशीलयुक्ता महिला नरस्य॥ १० ॥

सप्तम स्थान से सप्तमेश से वा धनेश यदि लग्न का स्वामी बल से समान हो तो समान जाति, पति भक्ति चित्तवाली तथा उत्तम शीलवाली स्त्री होती है।

भगौरभागेऽस्तविभौ स्ववर्णा बह्वङ्गनाः स्युर्जनितस्य तस्मिन् ।
हेलीन्दुमन्दारलवेऽबलोनजात्युद्भवा शेषलवे तु तस्मिन् ॥ ११ ॥

स्यान्मध्यजातिप्रभवा वधूटी दैत्यार्चिते वारवधू समाना ।
प्रायस्तथा कैरविणीश्वरेऽपीति केतुमाला कथयन्ति धीराः ॥ १२ ॥

सप्तमेश यदि शुक्र वा गुरु के नवांश में हो तो अपने वर्ण (जाति) की बहुत स्त्रियां होती हैं। यदि सूर्य चन्द्र शनि वा मङ्गल के नवांश में सप्तमेश हो तो हीन जाति की स्त्री होती है। यदि अन्य ग्रह के नवांश में अर्थात् बुध के नवांश में सप्तमेश हो तो मध्यम जाति की स्त्री होती है। यदि शुक्र वा चन्द्रमा के नवांश में सप्तमेश हो तो प्रायः वेश्या के समान स्त्री होती है। इस प्रकार केतुमाल आचार्य कहते हैं।

ज्ञांशे ज्ञदृष्टे वनितेशि वेश्या समाऽङ्गना भे स्वभतुङ्गगेऽस्ते ।
सद्युक्तदृष्टे शुभभे सुरूपा गौरी गुरौ भाग्ययुतश्चिरायुः ॥ १३ ॥

बुध के नवांश में बुध दृष्ट सप्तमेश हो तो वेश्या के समान स्त्री होती है। सप्तम में स्वराशि गत स्वोच्च-राशि गत वा शुभ ग्रह की राशि में स्थित शुक्र हो और वह शुभ युक्त दृष्ट हो तो सुन्दर रूपवती स्त्री होती है। एवं गुरु हो तो गौर शरीर वाली स्त्री और वह भाग्यवान् तथा दीर्घायु होता है।

लेखाधिपान्न्यूनबलेऽबलेशे नीचेऽस्तगे नीचलवेऽरिभांशे ।
निकृष्टजातौ ललनाप्तिरङ्गपालात्पतीशे परिपूर्णवीर्य्ये ॥ १४ ॥

विशेषितांशे विमलांशयाते सल्लोकनाढ्ये परमोच्चभागे ।
उत्कृष्टजातौ महिलाप्तिरस्तेशादङ्गपे सत्सहिते सशक्तौ ॥ १५ ॥

आरोहभागे गुरुपुत्रकेन्द्रे परोच्चभांशे जनितो युवत्याः ।
जातेर्मनुष्यः स्वयमुच्चजातिर्देहाधिनाथे दयिताधिनाथात् ॥ १६ ॥

प्राणैर्विहीने दहनग्रहेण समन्विते नीचलवोपयाते ।
दुःस्थानसंस्थेऽप्यवरोहभागे स्त्रीजातितो ना स्वयमूनजातिः ॥ १७ ॥

लग्नेश की अपेक्षा यदि सप्तमेश हीन बली हो नीचराशि में हो अस्तगत हो नीचांश में हो शत्रुराशि में वा शत्रु नवांश में हो तो निकृष्ट (हीन) जाति की स्त्री की प्राप्ति होती है। एवं लग्नेश की अपेक्षा यदि सप्तमेश परिपूर्ण बली हो वैशेषिकांश में हो शुभांश में हो शुभ दृष्ट हो वा परमोच्चांश में हो तो उत्कृष्ट (उत्तम) जाति वाली स्त्री की

प्राप्ति होती है। सप्तमेश की अपेक्षा यदि लग्नेश अधिकबली हो शुभ युक्त हो आरोहभाग में हो त्रिकोण में हो केन्द्र में हो वा परमोच्चांश में हो तो स्त्री की जाति से उक्त योग में उत्पन्न पुरुष स्वयं उच्चजाति वाला होता है। एवं सप्तमेश की अपेक्षा लग्नेश हीन बली हो पापयुक्त हो नीचांशक में हो दुष्टस्थान में हो वा अवरोहभाग में हो तो स्त्री की जाति से उक्त योग में उत्पन्न पुरुष स्वयं हीन जाति वाला होता है।

स्त्रीस्वभाव परिज्ञानः—

द्यूने नृखेटेषु नरस्वभावा क्लीवा कृशाङ्गे तिमिरे स्मरस्थे।
तत्रामृताङ्के यदि वा मघाजे योषास्वभावा हरिणेक्षणा नुः॥ १८॥

सप्तम में पुरुष ग्रह हों तो पुरुष स्वभाव वाली स्त्री एवं शनि वा राहु हो तो नपुंसक स्वभाव वाली स्त्री और चन्द्र वा शुक्र हो तो मनुष्य की स्त्री स्वभाव वाली स्त्री होती है।

स्त्री की अवस्था का परिज्ञानः—

वृद्धा यमेऽहौ मदनेऽमरार्च्ये पुत्रप्रसूसद्गुणयुक्सुरम्या।
स्त्री कालजीर्णा तरणौ बुधेन्द्वोर्बालाऽसुरेज्येऽसृजि यौवनाढ्या॥ १९॥

सप्तम में शनि वा राहु हो तो वृद्धा स्त्री, गुरु हो तो पुत्रवती, उत्तम गुणवती तथा अति मनोहर शरीर वाली स्त्री, सूर्य हो तो अधिक अवस्था वाली स्त्री, बुध तथा चन्द्रमा हों तो बालावस्था वाली स्त्री एवं शुक्र तथा मङ्गल हों तो युवावस्थायुक्त स्त्री होती है।

स्त्री सौख्याभाव तथा स्त्री सौख्य योगः—

स्त्रीकारके वीतबले द्युने विधौ तदीश्वरेऽन्त्ये न सुखं स्वयोषितः।
साघे सिते दुष्कृतभे किमच्छतः वामालयेऽघे वनिता न सौख्यदा॥ २०॥

स्त्रीकारक ग्रह (शुक्र) निर्बल हो, सप्तम में चन्द्रमा हो और व्यय में सप्तमेश हो तो अपनी स्त्री का सुख नहीं होता है। पाप राशि गत शुक्र यदि पाप युक्त हो अथवा शुक्र से सप्तम में पाप ग्रह हो तो भी स्त्री सुख देने वाली नहीं होती है।

खला मदस्था न सुखं स्त्रिया सह लभेत मर्त्यः सुकृता वियच्चराः।
तत्राश्रिताः स्त्री सुखकारिका विधुमुखी सुरूपा बहुभिर्गुणैर्युता॥ २१॥

सप्तम में यदि पाप ग्रह हों तो मनुष्य स्त्री के साथ सुख को नहीं पाता है। यदि सप्तम में शुभ ग्रह हों तो सुखदेने वाली, चन्द्रमुखी, सुन्दररूपवती और बहुत गुणवती होती है।

भार्या हीन योगः—

सितासृजोः कोणवधूगयोः किमु च्छायाङ्कतोऽस्ते सभयोर्यमासृजोः।
भार्याविमुक्तोऽधरवैरिभागगे गौरे विदारो मृतयोषितोऽथ वा॥ २२॥

त्रिकोण वा सप्तम में शुक्र तथा मङ्गल हों अथवा चन्द्रमा से सप्तम में शुक्रयुक्त शनि मङ्गल हों तो मनुष्य स्त्री रहित होता है। एवं नीच वा शत्रु नवांश में गुरु हो तो स्त्रीरहित वा मृतस्त्रीक होता है।

स्त्रिया वियुक्तः सततं कुजेऽस्ते म्रियेत नूनं शितिदीप्तिदृष्टे।
संवीक्ष्यते मन्मथगोऽहिनाथो द्वाभ्यामघाभ्यां न कलत्रयोगः॥ २३॥

भूत्वाऽपि चेदाशु मृतिं व्रजेन्मदेऽङ्गेशे विरक्तो वनिताविवर्जितः।
ग्लौधिष्ण्ययोरेकभसंस्थयोः स्मरेऽस्राक्र्योः किमस्ताधिपतौ सुतेऽथ वा॥ २४॥

कृशे कलेशे चिति गर्हितैर्व्ययोदयास्तयातैरसुताबलाजनुः।
कामस्थयोश्चान्द्रिभयोस्तथा तयोः सद्दृष्टयोः पश्चिमकेऽङ्गनां लभेत्॥ २५॥

सप्तम में मङ्गल हो तो नित्य स्त्री रहित होता है। यदि सप्तमगत मङ्गल शनि से दृष्ट हो तो अवश्य स्त्री की मृत्यु होती है। एवं सप्तमगत राहु यदि दो पापों से दृष्ट हो तो स्त्री का योग नहीं होता है। उक्त योग में विवाह होकर भी शीघ्र स्त्री मृत्यु को प्राप्त होती है। सप्तम में लग्नेश हो तो उक्त योग में पुरुष विरक्त वा स्त्री रहित होता है। एक राशि में चन्द्रमा तथा शुक्र हों एवं सप्तम में मङ्गल तथा शुक्र हों अथवा पञ्चम में सप्तमेश हो अथवा पञ्चम में क्षीण चन्द्रमा हो और व्यय, लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पुत्र स्त्री रहित होता है। एवं सप्तम में बुध तथा शुक्र हों तो स्त्री पुत्र रहित होता है। यदि वे सप्तम गत बुध शुक्र शुभ दृष्ट हों तो आयु के उत्तरार्द्ध में स्त्री की प्राप्ति होती है।

स्त्री युक्त योगः—

निजोच्चगे कलत्रपेऽमलग्रहे कलत्रगे।
बलान्विते विलग्नपे कलत्रवान्भवेद्ध्रुवी॥ २६॥

स्वोच्चराशि में सप्तमेश हो, सप्तम में शुभ ग्रह हो, और लग्नेश बली हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य स्त्री युक्त होता है।

पुत्रस्त्री युक्त योग तथा स्त्री जन्म राशि परिज्ञानः—

योषालये समगृहे स्मरपे सितेऽपि
प्राणान्विते तनयदारभ ऊर्ज्जयुक्ते।
नो मूढगे ससुतदारजनिं वदन्ति
स्वास्तान्त्यपा नवमकण्टकनन्दनस्थाः॥ २७॥

सूरीक्षिताः सत्सु मुखायमन्मथगेष्वस्तपान्नन्दनदारसौख्यभाक्।
स्त्रीशस्थभं स्त्रीप्रभुतुङ्गनीचभं यद्वा तदस्तत्रितयं कलत्रभम्॥ २९॥

सप्तम में समराशि हो, सप्तमेश तथा शुक्र बली हों एवं पञ्चम तथा सप्तम स्थान भी बली हों और अस्तगत ग्रह से युक्त न हों तो उक्त योग में पुत्र स्त्री युक्त पुरुष के जन्म को कहते हैं। नवम, केन्द्र तथा पञ्चम में धनेश, सप्तमेश तथा व्ययेश हों और वे गुरु से दृष्ट हों एवं सप्तमेश की आक्रान्त राशि से द्वितीय, एकादश तथा सप्तम

में शुभ ग्रह हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पुत्र स्त्री के सुखवाला होता है। सप्तमेश की आक्रान्त राशि सप्तमेश की उच्च वा नीच राशि अथवा उक्त राशियों से सप्तम राशि इन तीन राशियों में स्त्री की जन्म राशि होती है।

स्त्रीभत्रये वा तदनङ्गनाथगभतत्रिकोणे यदि चेत्कलत्रभम् ।
तनूजशाली प्रभवेद्यदीतरराशिः स्त्रियो नन्दनवर्जितस्तदा ॥ २९ ॥

यदि उक्त तीन राशियों के मध्य में स्त्री की जन्म राशि हो अथवा उक्त तीन राशियों से सप्तम में जो राशि हों उन में अथवा न से त्रिकोण (५।९) राशि में स्त्री की जन्म राशि हो तो वह पुरुष पुत्रवान होता है। यदि उक्त राशियों में स्त्री की जन्म राशि न हो तो वह पुरुष पुत्ररहित होता है।

अष्टवर्गे विधोर्यङ्के भवन्तु भूरिरेखिकाः ।
तद्भे कलत्रजन्म स्यादिति केचिद्विदो विदुः ॥ ३० ॥

पुरुष के चन्द्राष्टक वर्ग में जिस राशि में अधिक रेखा हों उस राशि में स्त्री का जन्म होता है। इस प्रकार कोई आचार्य्य कहते हैं।

स्त्रीणां जनौ केसरिकन्यकोक्षसु स्याज्जन्मराशिः प्रमदाऽल्पनन्दना ।
यदैषु युक्तेषु शुभद्युचारिभिर्भूयोगुणोपेततनूद्भवप्रसूः ॥ ३१ ॥

स्त्री की जन्म कुण्डली में सिंह, कन्या तथा वृष इन तीन राशियों के मध्य में स्त्री की जन्म राशि हो तो वह स्त्री अल्पपुत्रवती होती है। यदि उक्त राशियों में शुभ ग्रह हों तो वह स्त्री बहुत गुणवान पुत्रों को उत्पन्न करनेवाली होती है।

पतिप्रिय स्त्री प्रभृति योगः—

विधोः स्मरस्थेक्षकखेटराशिजा या पङ्कजाक्षी सुभगा धवप्रिया।
इष्टप्रदः स्त्रीजनने पतिः स्त्रिया दिग्देशपूर्वं द्युनपस्य भार्गवात् ॥ ३२ ॥

पुरुष की चन्द्राधिष्ठित राशि से जो सप्तम राशि हो वह जिस ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो उस ग्रह की राशि में जो स्त्री उत्पन्न हो वह सौभाग्यवती तथा पति की प्रिय होती है। एवं स्त्री की चन्द्राधिष्ठित राशि से जो सप्तम राशि हो वह जिस ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो उस ग्रह की राशि में जो पुरुष उत्पन्न हो वह स्त्री के लिए हितकारक होता है। पुरुष की जन्म कुण्डली में जिस राशि में शुक्र हो उस से सप्तम स्थान में जो राशि हो उस के स्वामी की जो दिशा और देश हो वह स्त्री के जन्म स्थान की दिशा और देश जानना चाहिए।

क्लिमस्तस्थतदीशाच्छमध्ये यो बलवान् ग्रहः ।
तत्प्राप्तभस्य या काष्ठा पुंसस्तज्जा वधूर्भवेत् ॥ ३३ ॥

पुरुष के जन्म लग्न से सप्तम में जो ग्रह हो वह और सप्तमेश एवं शुक्र इन तीनों के मध्य में जो बली हो उस की आक्रान्त राशि की जो दिशा हो पुरुष की उस दिशा में उत्पन्न स्त्री होती है।

स्मरे सिते सूरवतीनसूनुना समेतदृष्टे वनिता स्मिताननाः।
विभूषणै रूपगुणैस्तनूत्थितैर्धनैश्च धान्यैः सततं समन्विता ॥ ३४ ॥

सप्तम में गुरु युक्त शुक्र हो और वह शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो युक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री हंस-मुख वाली; भूषण, रूप, गुण, पुत्र एवं धन धान्य से युक्त होती है।

पतिव्रता स्त्री के योगः—

सबलमनसिजेशे कारके मन्दिरे वा
मतिसखयुतदृष्टेऽथास्तपेऽर्के सिते वा।
यदि सुकृतविहङ्गैर्वीक्षिते वाऽबलेशे
वियति वयसि वामा मानवस्य व्रताढ्या ॥ ३५ ॥

सप्तमेश यदि बली हो, स्त्रीकारक (शुक्र) तथा सप्तम स्थान गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) सूर्य वा शुक्र यदि सप्तमेश हो और वह शुभ दृष्ट हो तो (२) दशम वा सुख में सप्तमेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की स्त्री पतिव्रता होती है।

केन्द्रेऽस्तपे सद्भलवे शुभग्रहैः संदृष्टयुक्तेऽथ गुरौ कलत्रगे।
स्त्री धर्म्मशीला रमणव्रता स्मरे कर्कास्रभास्वद्यति शोभना सती ॥ ३६ ॥

केंद्र में शुभ राशि नवांश गत सप्तमेश हो और वह शुभ दृष्ट युक्त हो अथवा सप्तम में गुरु हो तो मनुष्य की स्त्री धर्म शीला तथा पतिव्रता होती है। सप्तम में कर्क राशि हो और उस में मङ्गल तथा सूर्य हों तो उक्त योग में पुरुष की स्त्री उत्तम शरीर वाली तथा पतिव्रता होती है।

भाग्येऽर्कभौमौ सुहृदौ स्मराङ्गपौ मिथो विधीशो विधिभे वधूः सती।
साध्वी वधूः शुभ्रकरे निजोच्चगे कल्पे कलत्रे किमु सद्भिलोकिते ॥ ३७ ॥

नवम में सूर्य मङ्गल हो, सप्तमेश तथा लग्नेश ये दोनों परस्पर मित्र हो एवं नवम में नवमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री पतिव्रता होती है। लग्न वा सप्तम में उच्चराशिगत चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री पतिव्रता होती है।

मनोजलग्नेड्युतभांशकेऽङ्गाया सम्भवा सा निजनायकस्य।
स्वान्तप्रसादं प्रमदा करोति भर्त्ता स्वयोषाहृदयं तथैव ॥ ३८ ॥

पुरुष के जन्म लग्न से सप्तमस्थान में जो राशि हो उस का स्वामी जिस राशि में वा जिस नवांश में हो उस में जिस स्त्री का जन्म हो वह अपने पति के हृदय को प्रसन्न करने वाली होती है। एवं स्त्री के जन्म लग्न से सप्तम स्थान का स्वामी जिस राशि में वा जिस नवांश में हो उस में जिस पुरुष का जन्म हो वह स्त्री के हृदय को प्रसन्न करने वाला होता है।

पति आज्ञा पालन करने वाली स्त्री का योगः—

चित्तोत्थनाथे हरिजांश्रिते यदा स्वनायकादेशकृदङ्गना तदा।
नारीगृहे नीरजलोचनापतौ पतिस्तदाऽऽदेशकरः स्वयोषितः॥ ३९॥

लग्न में सप्तमेश हो तो उक्त योग में मनुष्य की स्त्री अपने पति की आज्ञा पालन वाली होती एवं सप्तम में सप्तमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष अपनी स्त्री की आज्ञा पालन करने वाला होता है।

दम्पति की परस्पर प्रीति योगः—

मूर्त्तीश्वरे मूर्त्तिमिते मदेशे मदेऽथ वा मूर्त्तिनिकेतने द्वौ।
जामित्रगौ वा कथितो विशेषात्प्रेमातिरेकः पतिपङ्कजाक्ष्योः॥ ४०॥

लग्न में लग्नेश हों और सप्तम में सप्तमेश हो अथवा लग्न में वा सप्तम में लग्नेश तथा सप्तमेश हों तो पति तथा पत्नी का परस्पर अत्यन्त प्रेम होता है।

दम्पति झकटक तथा स्पष्ट प्रीति योगः—

विलग्नास्तपयोः शत्रुदृष्ट्या झकटकः सदा।
दम्पत्योरनयोः कामदृष्ट्या चेत्प्रीतिरुल्वणा॥ ४१॥

लग्नेश तथा सप्तमेश की परस्मर शत्रु (१।४।१०) दृष्टि हो तो दम्पति का नित्य झकटक (झगडा) होता है। यदि लग्नेश सप्तमेश की सप्तम दृष्टि हो तो दम्पति की स्पष्ट प्रीति होती है।

स्त्री शत्रु योग तथा शत्रु स्त्री प्राप्ति योगः—

पत्योर्मन्मथतन्वोः शत्रुत्वे वनिताऽरिः।
षष्ठेऽस्रे शनिदृष्टे सम्प्राप्नोत्यरिभार्याम्॥ ४२॥

सप्तमेश तथा लग्नेश की परस्पर शत्रुता हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री शत्रु होती है। एवं षष्ठ में शनि दृष्ट मङ्गल हो तो शत्रु स्त्री की प्राप्ति होती है।

कोपादियुक्त स्त्रीप्राप्ति योगः—

गर्हिते गृहिणीनाथे कटुवाणी प्रकोपना।
पुण्यग्रहे प्रिया पुंसां प्रसन्ना च प्रियंवदा॥ ४३॥

सप्तमेश यदि पाप ग्रह हो तो उस पुरुष की स्त्री कटुवचन बोलने वाली तथा क्रोधिनी होती है। एवं सप्तमेश यदि शुभ ग्रह हो तो प्रिय, प्रसन्नमुख वाली तथा प्रियवचन बोलने वाली होती है।

सुन्दरी स्त्री प्रभृति योगः—

कामेऽशतो विधुगुरू यदि सुन्दरी स्त्री
भागात्स्मरे विदि वधूस्तु कलावती स्यात्।

भौमेऽशकान्मदनगे विकलाङ्गकान्ता
कोणे स्मरे सितयुते तपने तथैव ॥ ४४ ॥

कारकांश लग्न से सप्तम में बुध गुरु हों तो सुन्दर शरीर वाली स्त्री, कारकांशलग्न से सप्तम में बुध हो तो कलावती स्त्री एवं कारकांशलग्न से सप्तम में भौम हो तो विकल शरीर वाली स्त्री होती है। यदि जन्मलग्न से त्रिकोण वा सप्तम में शुक्र युक्त सूर्य हो तो भी विकल शरीर वाली स्त्री होती है।

सगर्वा स्त्री योगः—

दृष्टेऽस्रभाभ्यां कुसुमेषुगेहे सिते नते यस्य जनौ सगर्वा।
कान्ताऽस्य तद्वत्कविराजगौरराशौ स्मरे भारदृशा समेते ॥ ४५ ॥

सप्तम स्थान यदि मङ्गल तथा शुक्र से दृष्ट हो और नीचराशि में शुक्र हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की गर्व युक्त स्त्री होती है। एवं सप्तम में शुक्र चन्द्र वा गुरु की राशि हो और वह शुक्र भौम से दृष्ट हो तो भी गर्व (अहंकार) वाली स्त्री होती है।

सबलाबला स्त्री योगः—

सुतायगैः शुभैः कान्ता सबला प्रीतिसंयुता।
तत्रोग्राम्बरगैः प्रीतिमुक्ता शक्तिविवर्जिता ॥ ४६ ॥

पञ्चम तथा लाभ में शुभ ग्रह हों तो बल तथा प्रीति युक्त स्त्री होती है। यदि उक्त स्थानों में पाप ग्रह हों तो निर्बल तथा प्रीतिहीन स्त्री होती है

गर्भवती स्त्री प्राप्ति योगः—

नरस्य यस्य सम्भवे यमावनीजनी यदा।
अमित्रमित्रधामगौ वधूं लभेत गुर्विणीम् ॥ ४७ ॥

षष्ठ तथा अष्टम में शनि और मङ्गल हों तो मनुष्य को गर्भवती स्त्री की प्राप्ति होती है।

वयोऽधिकादि स्त्री प्राप्ति योगः—

वयोऽधिका स्त्री लवतोऽस्त आर्कौ लवाद् ध्रुवेऽगौ विधवा गृहेऽस्य।
पत्नीस्थयोः पङ्गुविदोः पुनर्भूभार्या तथास्ते शितिशीतदीप्त्योः ॥ ४८ ॥

कारकांश लग्न से सप्तम में शनि हो तो अधिक अवस्था वाली स्त्री एवं कारकांश लग्न से सप्तम में राहु हो तो उस के घर में विधवा स्त्री होती है। जन्मलग्न से सप्तम में शनि बुध हों अथवा शनि चन्द्रमा हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की पुनर्विवाहित स्त्री होती है।

दम्पति दीर्घायु तथा असती स्त्री योगः—

वधूपती परिणतविग्रहौ यदैकभस्थयोः पुरुषवधूविहङ्गयोः।
वधूगृहे रुधिरयमौ शुभेक्षितावथो विधौ सविधुसितेऽङ्गनाऽसती ॥ ४९ ॥

एक ही राशि में पुरुष ग्रह तथा स्त्री ग्रह हों एवं सप्तम में मङ्गल तथा शनि हों और वे शुभ दृष्ट हो तो पुरुष की वृद्धावस्था पर्यन्त स्त्री जीवित रहे। नवम में शुक्र युक्त चन्द्रमा हों तो पुरुष की स्त्री असती (व्यभिचारिणी) होती है।

जारिणी स्त्री योगः—

केन्द्राधिपेषूग्रखगेषु यद्वा ऽर्य्यङ्काष्टपाः पापयुतेक्षिता वा।
कलौ कलीशेऽथ मदे ऽस्रमन्दौ तद्भे स्मरे वा परगामिनी स्त्री ॥ ५० ॥

केन्द्रेश पापग्रह हों तो (१) षष्ठ, नवम तथा अष्टम इन तीन स्थानों के स्वामी यदि पाप युक्त दृष्ट हों तो (२) अष्टम में अष्टमेश हो तो (३) सप्तम में मङ्गल तथा शनि हों तो (४) अथवा सप्तम में मङ्गलशनि राशि हो तो उक्त योगों में पुरुष की स्त्री जारिणी होती है।

चञ्चलस्त्री योगः—

नवार्चिषा नीलरुचा समेते निरीक्षिते नीरजदृङ्निशान्ते।
नरस्य भार्या चपला सरक्ता कट्यङ्कयुक्ता पवनार्दिता च ॥ ५१ ॥

सप्तम स्थान यदि मङ्गल तथा शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो मनुष्य की स्त्री चञ्चल, रक्त रोग युक्त, कटि (कमर) में चिन्ह युक्त एवं वात रोग से पीडित होती है।

कुष्ठादि चिन्ह युक्त स्त्री योगः—

जायाजायाधिपौ यस्य लग्नलग्नाधिपौ जनौ।
क्रूरौ तद्गृहिणी वाच्या दुरङ्गा नियतं बुधैः ॥ ५२ ॥

सप्तम स्थान और सप्तमेश एवं लग्न और लग्नेश यादि ये चारों क्रूर हों तो उस की स्त्री निश्चय से कुष्ठादि विकृत चिन्ह युक्त होती है।

षण्ढा (नपुंसक) स्त्री योगः—

दस्यौ दैत्यपुरोधाः सोऽत्थेशेन समेतः।
वाऽस्तेशे ससिते ऽरौ षण्ढा नुर्जलजाक्षी ॥ ५३ ॥

षष्ठ में तृतीयेश युक्त हो अथवा षष्ठ में शुक्र युक्त सप्तमेश हो तो मनुष्य की स्त्री षण्ढा नपुंसक होती है।

सुदार तथा कुदार योगः—

वामाधामधवे प्रकारकखगे चारुग्रहान्तः स्थिते
संयुक्ते परिलोकिते गतमलैर्यद्वा ऽङ्गनामन्दिरे।
सौम्याकाशगभे ऽथ गोपुरमुखे स्वोच्चे स्ववर्गे सिते
मृद्वंशे सखिवर्गगे ऽथ मदपे सद्वांशके कारके ॥ ५४ ॥

वाऽभेशे सबले सुदारसहितो मंत्रीक्षिते मन्मथे
वामा शीलयुता मदे महिरजेऽस्तेशांशपे पामरे।
वार्के दारपतावघेक्षितयुतेऽघर्क्षांशके वास्तपे—
ऽब्जेऽघैर्दृष्टयुते खलस्य भवने भागे कुदारो भवेत्॥ ५५॥

सप्तमेश तथा स्त्रीकारक ग्रह यदि शुभ ग्रहों के अन्तराल में हो और शुभ युक्त दृष्ट हो तो (१) सप्तम में शुभ ग्रह की राशि हो तो (२) गोपुरांश में स्वोच्च में स्ववर्ग में मृद्वंश में वा मित्रवर्ग में शुक्र हो तो (३) शुभ राशि में तथा शुभांश में सप्तमेश तथा सप्तम कारक हो तो (४) अथवा दशमेश बली हो तो उक्त योगों में पुरुष उत्तम स्त्री से युक्त होता है। सप्तम स्थान यदि गुरु से दृष्ट हो तो शीलवती स्त्री होती है। सप्तम में शनि हो और सप्तमेश के नवांश का स्वामी पाप ग्रह हो तो (१) पाप ग्रह की राशि में वा पाप ग्रह के नवांश में सप्तमेश सूर्य हो और वह पाप युक्त दृष्ट हों तो (२) एवं पापराशि में वा पापांश में सप्तमेश चन्द्रमा हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष कुदार (कुत्सित स्त्री) वाला होता है।

प्रद्युम्ने सखलेऽथ वा स्तमयपे सोग्रेऽथ जायेशगां—
शेशेऽघे किमु दारपेऽशुभखषड्भागे कुदारान्वितः।
कामेशे किमु कारकाम्बरचरे नीचांशकं सङ्गते
नीचाकाशचरैर्युतेऽमलखसद्दृष्ट्या विहीने तथा॥ ५६॥

सप्तम में पाप ग्रह हो तो (१) सप्तमेश यदि पाप युक्त हो तो (२) सप्तमेश के नवांश का स्वामी यदि पाप ग्रह हो तो (३) क्रूर षष्ठ्यंश में सप्तमेश हो तो उक्त योगों में कुत्सित स्त्री से युक्त होता है। नीचांश में सप्तमेश वा सप्तम कारक हो और वह नीचराशिगत ग्रह से युक्त हो एवं शुभ दृष्ट न हो तो भी कुत्सित (दुष्ट) स्त्री वाला होता है।

एक विवाह योगः—

स्त्रीकारकाः पुष्करगास्त्रिकोणे केन्द्रे स्वभस्थौ मदनार्थनाथौ।
एको विवाहः पुरुहूतपूज्ये सोर्जे सुहृद्भागगते तथैव॥ ५७॥

त्रिकोण वा केन्द्र में स्त्रीकारक ग्रह हो और स्वराशि में सप्तमेश तथा द्वितीयेश हों तो उक्त योग में एक विवाह होता है। मित्र के नवांश में बली गुरु हो तो भी एक विवाह होता है।

एकाङ्गनाऽनङ्गगतौ बुधेज्यौ तद्वत्स्मरेशौ रविरोहिताङ्गौ।
किं स्वोच्चगे स्वीयगृहे बलिष्ठे दारेशि वाऽर्थेशि कलत्रमेकम्॥ ५८॥

सप्तम में बुध तथा गुरु हों तो (१) सप्तमेश यदि सूर्य वा मङ्गल हो तो (२) स्वोच्च राशि में वा स्वराशि में बली सप्तमेश वा द्वितीयेश हो तो उक्त योगों में एक स्त्री होती है।

केन्द्रे कोणे सुकृताः स्वास्तनाथौ नीचेऽथास्ते ज्ञकुजेज्यार्कभागे।
वेज्यर्क्षेऽस्तेऽथ कुजादित्यभागे ज्ञेज्यावेको मनुजस्योपयामः॥ ५९॥

केन्द्र तथा त्रिकोण में शुभ ग्रह हों और स्वनीच राशि में द्वितीयेश तथा सप्तमेश हों तो (१) बुध, भौम, गुरु तथा सूर्य इन चारों में से किसी एक का नवांश सप्तम में हो तो (२) सप्तम में गुरु की राशि हो तो (३) मङ्गल वा सूर्य के नवांश में बुध तथा गुरु हो तो उक्त योगों में मनुष्य का एक विवाह होता है।

मान्द्यान्त्योदययातौ ज्ञार्कावेकविवाहः ।
कोणेऽस्ते कुजकाव्यावेका स्त्री विकला सा ॥ ६० ॥

षष्ठ व्यय वा लग्न में बुध तथा सूर्य हों तो एक विवाह होता है। त्रिकोण वा सप्तम में भौम तथा शुक्र हों तो विकल देहवाली एक स्त्री होती है।

द्विभार्य योगः—

लेखापाले कलहभवनेऽस्ते खले क्रूरयुक्ते
स्वेशेऽप्याहो पतिपरिवृढो वीक्ष्यते सद्विहङ्गैः ।
नीचारिस्थो द्युननिलयगे गर्हिते वायगौ द्वौ
खेटौ वाच्छास्तभवनधवौ द्वन्द्वभांशेऽथ पूज्ये ॥ ६१ ॥

प्राणोपेते निजनवलवेऽथास्तपे पाप्मराशौ
नीचर्क्षस्थे बहुखलयुते क्लीवराशौ कलत्रे ।
तल्लग्नांशे किमघसहितालोकिते कारकाख्ये
निम्नर्क्षांशे किमुत कुटिलेऽस्ते मृतौ मन्दगे वा ॥ ६२॥

लग्नास्तेशौ वपुषि मदने व्यस्तगौ स्वस्वभस्थौ
यद्वाऽस्तस्थैरघदिविचरैर्वाऽर्थपेऽरौ सपापे ।
द्यूतेऽथारावुदयगिरिपे वोदयेऽस्ते वधेशे
किं होरायां समुदयपतौ पुङ्गलः स्याद् द्विभार्य्यः ॥ ६३ ॥

अष्टम में लग्नेश हो, सप्तम में पाप ग्रह हो और द्वितीयेश पाप युक्त हो तो (१) नीच राशि वा शत्रु राशि में सप्तमेश हो और वह शुभ दृष्ट हो एवं सप्तम में पाप ग्रह हो तो (२) लाभ में दो ग्रह हों तो (३) द्विस्वभाव राशि में वा द्विस्वभाव राशि के नवांश में शुक्र तथा सप्तमेश हों तो (४) स्वनवांश में बली गुरु हो तो (५) पाप राशि में वा नीच राशि राशि में सप्तमेश हो और वह बहुत पाप ग्रहों से युक्त हो एवं सप्तम में नपुंसक ग्रहों की राशि हो अथवा नपुंसक ग्रहों का लग्न में नवांश हो तो (६) नीच राशि में तथा नीचांश में स्त्रीकारक ग्रह हों और वह पाप ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो (७) सप्तम में भौम और अष्टम में शनि हो तो (८) लग्न वा सप्तम में लग्नेश तथा सप्तमेश हों अथवा सप्तम में लग्नेश और लग्न में सप्तमेश हो अथवा लग्न में लग्न में लग्नेश और सप्तम में सप्तमेश हो तो (९) सप्तम में बहुत पाप ग्रह हों तो (१०) षष्ठ में द्वितीयेश हो और सप्तम स्थान पाप युक्त हो तो (११) षष्ठ में लग्नेश हो तो (१२) लग्न में वा सप्तम में अष्टमेश हो तो (१३) लग्न में लग्नेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष दो स्त्रीवाला होता है।

कलत्र त्रय योगः—

स्वस्थैः पापैर्विभवविभुना नेक्षितैः किं कलत्रे
क्रूरैः खेटैर्मनसिजधवावीक्षितैर्वोग्रयुक्ताः ।
देहास्तार्थाः स्मरसदनपे मूढनीचारिगे वा
कामे चन्द्रादुशनसि लये लग्नपे मार आरे ॥ ६४ ॥

वारौ ध्वजेऽनङ्गपतौ सपापे पोष्ये प्रभूतैर्दुरितैर्युते वा ।
स्वेऽस्ते युतेऽघैः प्रचुरैस्तदीशे संदृष्ट उग्रेण जन स्त्रिभार्यः ॥ ६५ ॥

धनमें बहुत पापग्रह हों और वे द्वितीयेश से दृष्ट न हों तो (१) सप्तम में बहुत पाप हों और वे सप्तमेश से दृष्ट न हों तो (२) लग्न, सप्तम तथा धन ये तीन स्थान पाप युक्त हों एवं अस्तगत नीच राशि में वा शत्रु राशि में सप्तमेश हो तो (३) चद्रमा से सप्तम में शुक्र हो और लग्न से अष्टम में लग्नेश हो एवं सप्तम में मङ्गल हो तो (४) षष्ठ में केतु, सप्तमेश पाप युक्त और धन में बहुत पाप हों तो (५) धन तथा सप्तम में बहुत पाप हों एवं द्वितीयेश तथा सप्तमेश पाप दृष्ट हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष तीन स्त्रीवाला होता है ।

बहु स्त्री योगः—

ग्लौज्ञेज्याच्छैः सर्वखेटैस्त्रिभिर्वा द्वाभ्यां युक्ते वैकखेटेन कामे ।
तैर्दृष्टे वा तद्गृहे तद्गणे वा बह्व्यः पत्न्यो मानवानां भवेयुः ॥ ६६ ॥

सप्तम में चन्द्र, बुध, गुरु तथा शुक्र ये चारों हों वा उक्त ग्रहों के मध्य में तीन ग्रह हों वा दो ग्रह हों वा एक ग्रह हो अथवा सप्तम स्थान उक्त ग्रहों से दृष्ट हो अथवा सप्तम में उक्त ग्रहों की राशि हो वा वर्ग हो तो उक्त योगों में मनुष्यों की बहुत स्त्रियां होती हैं ।

बाहौ स्वान्त्यपती अमर्त्यगुरुणा दृष्टौ दयेशेन वा–
ऽथास्तेशात्सहजे विधौ बलयुते खे ज्ञेऽङ्गपाद्वास्तपे ।
वक्रोच्चादिकहेतुभिर्बहुगुणे किं प्राक्कुजस्थेऽथ वा
ज्ञानेशे मदनेऽस्तपे भुवनभे तन्नायके वाऽऽयपे ॥ ६७ ॥

केन्द्रेऽथास्तमयायपौ बलयुतौ कोणस्थितौ तौ युतौ
किं वाऽन्योन्यसमीक्षितौ किमु कवौ सोर्जे कलत्रे ततः ।
कोणे कण्टकभे वधूभवनपे सन्मित्रवर्गोच्चगे
व्यापारेशयुतेक्षिते यदि बहुस्त्रीकः पुमाञ्जायते ॥ ६८ ॥

सहज में द्वितीयेश तथा व्ययेश हों और वे गुरु से वा भाग्येश से दृष्ट हो तो (१) सप्तमेश से तृतीय में बली चन्द्रमा हो अथवा लग्नेश से दशम में बली बुध हो तो (२) सप्तमेश यदि वक्रगति में स्वोच्चराशि में वा स्वमूलत्रिकोण राशि में हो तथा बहुत गुणों से युक्त अथवा लग्न में हो तो (३) सप्तम में नवमेश और चतुर्थ में सप्तमेश हो एवं केन्द्र में उक्त स्थानों के स्वामी हों वा लाभेश हो तो (४) त्रिकोण में बली सप्तमेश तथा लाभेश

हों अथवा वे दोनों एकस्थान में हो अथवा वे दोनों परस्पर देखते हों तो (५) सप्तम में बली शुक्र हो तो (६) त्रिकोण वा केन्द्र में सप्तमेश हो और वह शुभवर्ग वा मित्र वर्ग में हो वा स्वोच्च में हो एवं दशमेश से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बहुत स्त्री वाला होता है।

नारायणाधीशतदङ्कभागपौ छायेयसम्बन्धयुतौ युतेक्षितौ।
आतङ्कपेनाथ विलग्नचन्द्रतः कामेऽब्जकाव्येक्षितसंयुते तयोः ॥ ६९ ॥

राशौ गणे तत्र सिते विशेषतः प्रभूतकीलालजलोचनायुतः।
सद्वीक्षितेऽस्ते परमोच्चगेऽस्तपे किमुच्चगेऽच्छेऽथ तरोन्वितेऽस्तपे ॥ ७० ॥

द्विमूर्त्तिराशौ भृगुजे तु तद्भपे स्वोच्चेऽथ सौरे स्मरपे सपामरे।
वास्तेऽरिवित्तोदयपैः सकल्मपैः किं शक्तिमन्तौ भविधू युतौ तथा ॥ ७१ ॥

दशमेश तथा दशमेश के नवांशेश का यदि शनि से सम्बन्ध हो और षष्ठेश से युक्त तथा दृष्ट हो तो (१) लग्न वा चन्द्रमा से जो सप्तम स्थान हो यदि वह चन्द्रमा तथा शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो अथवा उक्त सप्तम स्थान में चन्द्र वा शुक्र की राशि वा वर्ग हो अथवा विशेषतः उस में शुक्र हो तो उक्त योगों में मनुष्य बहुत स्त्रियों से युक्त होता है। सप्तम स्थान यदि शुभ दृष्ट हो और परमोच्च में सप्तमेश हो तो (१) स्वोच्च राशि में शुक्र हो तो (२) सप्तमेश बली हो, द्विस्वभाव राशि में शुक्र हो और उस की राशि का स्वामी यदि स्वोच्च में हो तो (३) सप्तमेश शनि हो और वह पाप युक्त हो तो (४) सप्तम में षष्ठेश, धनेश तथा लग्नेश हों और वे पाप युक्त हों तो (५) एक ही स्थान में बली शुक्र चन्द्र हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बहुत स्त्रियों से युक्त होता है।

नभश्चरे सतुङ्गभे घनङ्गते घनाधिपे।
स्वतुङ्गराशिमाश्रितेऽथ वा प्रभूतदारभाक् ॥ ७२ ॥

लग्न में उच्चराशिगत ग्रह हों अथवा स्वोच्चराशि में लग्नेश हो तो उक्त योग में बहुत स्त्रियों से युक्त होता है।

दश स्त्री योगः—

अनङ्गभेशि गोपुरे तथा विधे धनेश्यपि।
पदेशि मीनकेतने दशाङ्गनासमन्वितः ॥ ७३ ॥

गोपुरांश में सप्तमेश तथा द्वितीयेश हों एवं सप्तम में दशमेश हो तो मनुष्य दश स्त्रियों से युक्त होता है।

शत स्त्री योगः—

जामित्रवर्गे शशिजः शशाङ्कः सितेक्षितोऽक्रूरदृशा युतो वा।
सास्ताधिपेऽङ्गाधिपतौ किमस्ते ज्ञे सौम्यदृष्टे शतमङ्गनानाम् ॥ ७४ ॥

सप्तम स्थान के सप्तवर्ग में बुध तथा चन्द्रमा हों और वे शुक्र से दृष्ट हों वा शुभ दृष्ट हों तो (१) लग्नेश यदि सप्तमेश से युक्त हो तो (२) सप्तम में बुध हो और वह शुभ दृष्ट हो तो सौ स्त्रीवाला होता है।

शत, द्विशत तथा त्रिशत स्त्री योग:—

जायेशसंयुतलवेशयुतांशनाथे
पारावतांशकमुखे सशुभे सवीर्ये ।
जातः शतैणनयनासहितः स्वपस्य
भेशस्य षष्ठि लवपे यदि गोपुरांशे ॥ ७५ ॥
मृद्वंश ऊर्जसहिते द्विशती वधूनां
तत्कारकस्थलवपस्थ भपस्थभागेट् ।
केन्द्रस्थितो मृदुलवे यदि गोपुरांशे
तज्जैर्नृणां कलदशां त्रिशती निरुक्ता ॥ ७६ ॥

सप्तमेश के नवांश का स्वामी जिस राशि के नवांश में हो उस का स्वामी पारावतांश दि में हो और बली हो और एवं शुभ ग्रह से युक्त हो तो मनुष्य सौ स्त्रियों से युक्त होता है । द्वितीयेश का राशि का स्वामी जिस राशि के षष्ठ्यंश में हो उस का स्वामी यदि गोपुरांश में हो तथा मृदंश में हो एवं बलवान् हो तो दो सौ स्त्रियों से युक्त होता है । स्त्रीकारक ग्रह के नवांश का स्वामी जिस राशि में हो उस के स्वामी के नवांश का स्वामी यदि केन्द्र में हो, गोपुरांश में हो तथा मृदुषष्ठ्यंश में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुषों की तीन सौ स्त्रियां होती हैं।

प्रकारान्तर से स्त्रीसंख्या परिज्ञान:—

कामे सखेटे कवियुक्तखेचरैः कलत्रसंख्यां कथयन्ति कोविदाः ।
तुङ्गस्थखेटे गणना न योषितां भयुक्तखेटैरुत मारपेऽच्छभे ॥ ७७ ॥
खेऽच्छाढ्यसंख्या किमु काव्यकामपयुक्खेटसंख्या गदितेह योषिताम् ।
कन्दर्पपालो यतमे नवांशके नार्य्यस्तु तावत्य उतास्तदर्शिनाम् ॥ ७८ ॥
वियच्चराणां मितितुल्ययोषितः खेशेक्षितः स्वास्तगता विहङ्गमाः ।
ये ते स्वसंख्याप्रमिताबलाकरास्तत्र स्थिताश्चेत्प्रबलाः कुजेन्दिनाः ॥ ७९ ॥
तुरङ्गकाष्ठारससम्मिताः कमायोषाप्रदाः स्युर्विबुधो वदेदिति ।
निजेशदृष्टासु कुलीरतावुरितुलासु राशेः प्रमितेः समाः स्त्रियः ॥ ८० ॥

यदि सप्तम में ग्रह हो तो शुक्र के साथ जितने अन्यग्रह हों पण्डितजन उतनी स्त्रियां कहते है । सप्तम में उच्चराशिगत ग्रह हो तो स्त्रियों की गणना नहीं होती है अर्थात् बहुत स्त्रिया होती हैं । अथवा शुक्र युक्त ग्रहों से स्त्रियों की संख्या कहे । अथवा धन में शुक्र राशि (२ । ७) गत सप्तमेश होतो भी शुक्र युक्त ग्रहों के, समान स्त्रियों की संख्या कहे । अथवा शुक्र और सप्तमेश के साथ जितने ग्रह हों उनकी सख्या के समान स्त्रियां कहे। सप्तमेश जितनी संख्या के नवांश में हो उतनी स्त्रियां होती हैं । अथवा सप्तम भाव को जितने ग्रह देखते हैं उनकी संख्या के समान स्त्रियां होती हैं । धन में तथा सप्तम में अपने अपने स्वामियों से जितने ग्रह दृष्ट हों वे अपनी अपनी संख्या के समान स्त्रियों को करते हैं । धन वा सप्तम में बली मङ्गल हो तो सात, चन्द्रमा हो तो दश

और सूर्य हो तो छः स्त्रियों को कहता है। सप्तम में अपने स्वामी से दृष्ट कर्क वृष वा तुला राशि होतो उक्त राशियों की संख्या के समान स्त्रियां होती हैं।

यावन्तोऽम्बरपान्थाः पञ्चत्वालयगाः स्युः।
तावन्तः कथितव्या उद्वाहा बुधमुख्यैः ॥ ८१ ॥

जन्म लग्न से अष्टम में जितने ग्रह हों उनकी संख्या के समान पण्डितजनोंने पुरुष के विवाह कहने चाहिएँ।

कलत्रच्युति योगः—

कान्ताभावे किं तदीशेऽघखेटसंदृष्टाढ्ये वैरिनीचर्क्षयाते।
पापान्तःस्थे पिङ्गलोस्रैर्विलुप्ते प्रोक्ता तज्ज्ञैः स्त्रीच्युतिर्मानवानाम् ॥ ८२ ॥

सप्तमस्थान अथवा सप्तमेश यदि पापग्रह से दृष्ट युक्त हो, शत्रु वा नीचराशि में हो, पापान्तराल में हो तथा अस्तगत हो तो पण्डितजनोंने मनुष्यों की स्त्री की च्युति (त्याग) कहे।

लोकापवाद के भय से स्त्रीत्याग योगः—

विधुन्तुदप्रभासुतौ पुरालयं समाश्रितौ।
जनो जनापवादतस्त्यजेत्सुवासिनीं तदा ॥ ८३ ॥

लग्न में राहु तथा शनि हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष लोकापवाद के भय से अपनी स्त्री को त्याग देता है।

स्त्री के शरीर में पिशाच पीडा का योगः—

पङ्गुपातपताकारान्यतमे प्रेयसीगृहे।
प्रोक्ता पिशाचजा पीडा पङ्कजाक्षीकलेवरे ॥ ८४ ॥

सप्तम में शनि, राहु, केतु तथा भौम इन चारों के मध्य में कोई भी एक ग्रह हो तो स्त्री के शरीर में पिशाच भूत, प्रेत, डाकिनी वा चुडेल प्रभृति की) पीडा होती है।

जायारिष्ट योगः—

आरे मारे धिष्ण्यस्यांशे दाराधीशे धीभं प्राप्ते।
दारारिष्टं धीरैरुक्तं सार्था जायैवं कामेऽर्के ॥ ८५ ॥

सप्तम में शुक्र नवांश गत मङ्गल हो और पंचम में सप्तमेश हो तो स्त्री को कष्ट कहना चाहिए। एवं सप्तम सूर्य हो तो धनवती स्त्री होती है।

रोग पीडित स्त्री योगः—

अनङ्गभावनायकः स्वभं स्वतुङ्गभं विना।
वधार्कवैरिगो वधूः सदोपतापपीडिता ॥ ८६ ॥

अष्टम व्यय वा षष्ठ में स्वराशि तथा स्वोच्च राशि को छोडकर अन्यराशि गत सप्तमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री नित्य रोग से पीडित होती है। होता है।

गोचर से स्त्री कष्ट योग—

लग्ने गुदज्ञौ ललना गदार्त्ताऽसितासृजौ ज्ञारभगौ किमङ्गे।
नासामयार्त्ताऽऽयुषि दर्पकेशे स्त्री क्रोधिनी रोगयुता नरस्य ॥ ८७ ॥

लग्न में केतु बुध हो तो स्त्री रोग से पीडित होती है। बुध वा मङ्गल की राशि में शनि तथा मङ्गल हो अथवा वे दोनों लग्न में हों तो स्त्री नासिका रोग से पीडित होती है। अष्टम में सप्तमेश हो तो स्त्री क्रोध वाली तथा रोग युक्त होती है।

गोचर से स्त्री कष्ट योग:—

यद्भं स्मरे जन्मनि यस्य तस्मिन्विलोमगत्या यदि गोचरेण।
आयाति कालः किमु लोहिताङ्गस्तदाऽङ्गना कष्टमुपैति तस्य ॥ ८८ ॥

पुरुष के जन्म समय में जन्म लग्न से सप्तम में जो राशि हो उस में गोचर से जब वक्री शनि वा वक्री मङ्गल आवे तब उस मनुष्य की स्त्री कष्ट को प्राप्त होती है।

जनौ धनेऽस्ते क्रियकर्कसिंहकुरङ्गकोदण्डसरीसृपेषु।
तस्मिन्यमो वा कुटिलस्तमो वा विशेद्यदा नो गृहिणीसुखं स्यात् ॥ ८९ ॥

पुरुष के जन्म समय में जन्म लग्न से द्वितीय तथा सप्तम में मेष, कर्क, सिंह, मकर, धनु तथा वृश्चिक इन राशियों के मध्य में कोई भी राशि हो और उस में जब गोचर से शनि, मङ्गल वा राहु आवे तब स्त्री को कष्ट होता है।

बहवोऽघा यदा स्वेऽस्ते रमणी रोगपीडिता।
यस्मिन्वर्षे सृजो दृष्टिस्तत्र स्त्रीकष्टमुच्यते ॥ ९० ॥

जन्म लग्न से द्वितीय तथा सप्तम में जो राशि हो उन में गोचर से जब बहुत पाप ग्रह आवें तब स्त्री रोग से पीडित होती है। लग्नादि द्वादश भावों में जो भाव भौम दृष्ट हो उन के समान वर्ष में स्त्री कष्ट कहा है।

जम्पत्योर्जनिपौरपर्वरिभतो भार्यार्थभे गोचरे
दृष्टाढ्ये दुरितैः किमर्थमदयोर्नाथौ खलैर्लोकितौ।
युक्तौ वास्तधनेशतो द्युनधने पङ्क्वान्वितालोकिते
योगैरेभिरुदीरितैः प्रचुरकैः पुंयोषितोर्मारकः ॥ ९१ ॥

पुरुष तथा स्त्री के जन्म लग्न से तथा जन्मचन्द्र राशि से सप्तम तथा द्वितीय में जो राशि हों वे गोचर में जब पाप ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हों अथवा उन दोनों के द्वितीय तथा सप्त स्थान के स्वामी यदि पाप ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हों अथवा सप्तमेश से तथा धनेश से जो राशि सप्तम तथा द्वितीय में हों यदि वे पाप ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हों तो उक्त योगों में बहुत योग जब गोचर प्रभृति से आवें तब पुरुष तथा स्त्री का मारक होता है।

स्त्रीजन्य दुःख योगः—

खलौ कुटुम्बास्तगतौ वियोगजव्यथाकरौ तौ यदि जन्मनि स्त्रियाः।
यदा नरस्तादृशयोगसम्भवः कान्तान्वितो जीवति वित्तपुत्रयुक् ॥ ९२ ॥

यदि जन्म समय में द्वितीय तथा सप्तम में दो पापग्रह हों तो वे स्त्री वियोग जन्य पीडा को करते हैं। जब उक्त योग में उत्पन्न पुरुष यदि स्त्री से युक्त हो तो धन तथा युक्त होकर जीवित रहे।

स्त्रीविपत्यादि योगः—

वामाया विपदास्फुजिद्रिपुपयोर्योगेऽथ देहोत्थपे
मारे दारपतौ सपापखगे काव्येऽबले योषितः।
नाशो गर्भनिमित्ततो निगदितोऽच्छे क्रूरखेटान्तरे
नारी नाशमुपैति तुङ्गपतनादेवं वदेयुर्बुधाः ॥ ९३ ॥

जिसके जन्म में किसी एकस्थान में शुक्र और षष्ठेश का योग हो तो उसको स्त्री की विपत्ति होती है। सप्तम में लग्नेश, सप्तमेश पाप युक्त और शुक्र निर्बल हो तो गर्भ के कारण स्त्री के मरण को कहे। पापान्तराल में शुक्र हो तो उच्चस्थान से गिरकर स्त्री की मृत्यु होती है। इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं।

दार हन्ता तथा स्त्री का अग्नि दाह योगः—

दैत्यामात्ये सुन्दरीमन्दिरस्थे दोषानाथे द्वादशे दारहन्ता।
कालाम्भः स्थैःकाव्यतः कल्मषाख्यैर्वाच्यो वामावह्निदाहो बुधेन्द्रैः ॥ ९४ ॥

जिस के जन्म समय में सप्तम में शुक्र और व्यय में चन्द्रमा हो तो वह मनुष्य दारहन्ता अर्थात स्त्री को मारनेवाला होता है। यदि शुक्र से अष्टम तथा चतुर्थ में पापग्रह हो तो स्त्री का अग्निदाह कहना चाहिए।

अग्निदाह से तथा पाश (फांसी) से स्त्री मरण योगः—

सोग्रे सिते सौम्यखगैरनीक्षितेऽग्निदाहतः स्त्रीमरणं खलान्तरे।
भे किं मृतौ पाथसि सद्युतीक्षणमुक्तेऽङ्गनान्तं कथयन्ति पाशतः ॥ ९५ ॥

पाप युक्त शुक्र यदि शुभग्रहों से अदृष्ट हो तो अग्निदाह से स्त्री का मरण होता है। एवं पापान्तराल में शुक्र हो और वह अष्टम वा चतुर्थ में हो एवं शुभ युक्त दृष्ट न हो तो पाश (फांसी) से स्त्री के मरण को कहते हैं।

उद्बन्धन से तथा विषभक्षण से स्त्री मृत्यु योगः—

कन्दर्पपे पाशफणित्रिभागग उद्बन्धनान्मृत्युमुपैति भामिनी।
नीचे सितेऽब्जेऽम्बुनि साहिमन्दजे माराधिपेऽन्नो गरलादनात्स्त्रियः ॥ ९६ ॥

पाश वा सर्प द्रेष्काण में सप्तमेश हो तो उद्बन्धन (फांसी) से स्त्री मृत्यु को प्राप्त होती है। नीचराशि में शुक्र, सुख में चन्द्रमा और सप्तमेश यदि राहु तथा गुलिक से युक्त हों तो विष भक्षण से स्त्री की मृत्यु होती है।

उदर प्रभृति योग से स्त्रीमरण योगः—

साब्जे कुजेऽस्ते मृदुगाभिदृष्टे रामामृतिः स्यादुदरामयेन ।
तत्रागुपङ्ग्वोः कृमितोयतोऽन्तो मृगीदृशो वा पशुडाकिनीभिः ॥ ९७ ॥

सप्तम में चन्द्र युक्त मङ्गल हो और वह शनि से दृष्ट हो तो उदर रोग से स्त्री की मृत्यु होती है । सप्तम में राहु तथा शनि हों तो कृमिरोग जल, पशु वा डाकिनी से स्त्री की मृत्यु होती है ।

स्त्री नाश योगः—

सवनितासवितातनुगोऽस्तगः सशफरेनजनिर्वनिताहरः ।
समलिनो मदपो मदगस्तथा मदनगा मलिना ह्यबलाकरा ॥ ९८ ॥

लग्न में कन्या राशि गत सूर्य हो और सप्तम में मीन राशिगत शनि हो तो स्त्री का नाश करता है । सप्तम में पापयुक्त सप्तमेश हो तो भी स्त्री का नाश करता है । एवं सप्तम में बहुत पापग्रह हों तो दो स्त्री को करते है

साहिमन्दरुधिरोऽस्तपोऽथ वा क्रूरषष्ठिलवगः कलत्रहा ।
राज्यगोऽम्बरमणिस्तिथिप्रणीर्व्याधिगो यदि वधूविनाशकृत् ॥९९ ॥

सप्तमेश यदि राहु, शनि वा मङ्गल से युक्त हो अथवा क्रूरषष्ठ्यंश में हो तो स्त्री का नाश करता है । एवं दशम में सूर्य और षष्ठ में चन्द्रमा हो तो भी स्त्री का नाश करता है ।

सौरे स्मरे सवितरि प्रथमेऽथ पौरे
नीचग्रहे हरिजपे निजनीचगे वा ।
नीचे जले भृगुजनौ किमु रात्रिपेऽथो
निद्रागतः सदितरो दुरितार्दितोऽस्ते ॥ १०० ॥
वेलाभवे युवति वेश्मनि नेत्रपाणौ
यद्वा प्रकाशक इने मदनालये वा ।
शुक्रात्स्मरे सदुरिते रुधिरेऽथ गौरे
निम्ने मदेऽथ मतिमौ मृदुगेऽस्तगे वा ॥ १०१ ॥
खलेऽतिनीचे दिवि वक्रखेचरान्विते प्रदृष्टे दहने न वो क्षणि ।
सत्रे द्युने वा ससितेऽलिभे स्मरेऽथायुःप्रपन्वेश्वरयोः स्मरस्थयोः ॥ १०२ ॥
किमस्तपे मूढसपत्ननीचगे क्रूरेक्षिते वा त्रिकगे च दुर्बले ।
वाऽस्तेऽघदृष्टाढ्य उतार्कवित्कुजजीवांशकेऽस्ते सखलेऽबलालयः ॥ १०३ ॥

सप्तम में शनि और लग्न में सूर्य हो तो (१) लग्न में नीच राशि गत ग्रह हो और नीच राशि में लग्नेश भी हो तो (२) सुख में नीच राशि गत शुक्र वा नीच राशि गत चन्द्रमा हो तो (३) सप्तम में निद्रावस्था गत पाप ग्रह हो और वह पापक्रान्त हो तो (४) सप्तम में नेत्रपाणि अवस्था गत मङ्गल हो तो (५) सप्तम में

प्रकाशावस्था गत सूर्य हो तो (६) शुक्र से सप्तम में पाप युक्त मङ्गल हो तो (७) सप्तम में मकर राशि गत गुरु हो तो (८) सप्तम में मीन राशि गत शनि हो तो (९) दशम में परम नीच गत पाप ग्रह हो और वह वक्र गति ग्रह से युक्त हो एवं पाप दृष्ट हो तो (१०) सप्तम में वृष राशि गत बुध हो तो (११) सप्तम में वृश्चिक राशि गत शुक्र हो तो (१२) सप्तम में अष्टमेश तथा पञ्चमेश हों तो (१३) अस्तगत शत्रु राशि गत वा नीच राशि गत सप्तमेश यदि पाप दृष्ट हो तो (१४) त्रिक में दुर्बल सप्तमेश हो तो (१५) सप्तमस्थान यदि पाप दृष्ट युक्त हो तो (१६) सप्तम में सूर्य, बुध, भौम वा गुरु का नवांश हो और वह पाप युक्त हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की स्त्री की मृत्यु होती है।

आयाधिपे वधमदे ऽथ मृदौ वधे ऽगौ
कामे कुजे ऽरिभवने ललना न जीवेत् ।
द्व्यङ्गे विधौ मृदुगमङ्गलयुक्तदृष्टे
किं भे ऽस्तगे तपनदृष्टयुते ऽङ्गनान्तः ॥ १०४ ॥

अष्टम वा सप्तम में लाभेश हो तो (१) अष्टम में शनि, सप्तम में राहु और षष्ठ में भौम हो तो स्त्री जीवित न रहे। द्विस्वभाव राशि में चन्द्रमा हो और वह शनि तथा मंगल से दृष्ट हो अथवा सप्तम में शुक्र हो और वह सूर्य से दृष्ट वा युक्त हो तो स्त्री की मृत्यु होती है।

स्त्रियों की मृत्यु संख्या का परिज्ञानः—

वागीशवामावेश्मनाथौ सितेन युक्तौ दुःस्थौ धैर्य्यधामस्थितौ वा ।
तौ यावद्भिःपापखेटैरुपेतौ वाच्यः स्त्रीणां तावतीनां वियोगः ॥ १०५ ॥

त्रिक वा तृतीय में द्वितीयेश तथा सप्तमेश हों और शुक्र से युक्त होकर जितने पाप ग्रहों से युक्त हो उतनी स्त्रियों का वियोग (शोक) होता है।

यावन्त अकाशचरा विवीर्य्या दुःस्थानपाः पोष्यपतीशयुक्ताः ।
तत्तुल्यसंख्याककलत्रहानिर्वाच्या न भव्यैः सहितेक्षिताश्चेत् ॥ १०६ ॥

जितने निर्बल त्रिकेश यदि द्वितीयेश तथा सप्तमेश से युक्त हो और वे शुभ युक्त दृष्ट न हों तो उनकी संख्या के समान स्त्रियों की हानि कहनी चाहिए।

स्त्री के मृत्यु दिनादि का परिज्ञानः—

अस्ते कुजे ऽहौ गिरि नागदंशनान्मृतिस्तृतीये ऽह्नि विवाहतः स्त्रियः ।
दिष्टान्तगे दैत्यगुरौ तदीश्वरे द्यूते ऽर्कवर्षे किमु गोकुवत्सरे ॥ १०७ ॥
निम्नग्रहे ऽस्ते ऽरिलये भृगौ धृतिवर्षे सुराब्दे व्ययपे मदे ऽस्तपे ।
मृतौ द्युसद्भूशरादि स्वपे क्षये ऽङ्गेशे स्वनीचे ऽश्वयुगाब्दके स्त्रियाः ॥ १०८ ॥
मृतिर्मदेशः सुकविः कलत्रभं चेद्रोचरेणारुगजेन वीक्ष्यते ।
तथा ऽर्थदिष्टान्तविलग्ननायकदशासु वा भुक्तिषु योषितो ऽत्ययः ॥ १०९ ॥

सप्तम में मंगल और धन में राहु हो तो विवाह से तीसरे दिन सर्प के काटने से स्त्री की मृत्यु होती है। अष्टम में शुक्र और सप्तम में अष्टमेश हो तो १२ वें वर्ष में वा १९ वें वर्ष में स्त्री का मरण होता है। सप्तम में नीच राशि गत ग्रह हो षष्ठ वा अष्टम में शुक्र हो तो १८ वें वर्ष में वा ३३ वें वर्ष में स्त्री का मरण होता है। सप्तम में व्ययेश और अष्टम में सप्तमेश हो तो १९ वें वर्ष में स्त्री का मरण होता है। अष्टम में द्वितीयेश और नीच राशि में लग्नेश हो तो ४० वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। सप्तमेश, शुक्र तथा सप्तमस्थान यदि ये तीनों गोचर में शनि से दृष्ट हों एवं द्वितीयेश, अष्टमेश वा लग्नेश की दशा वा अन्तर्दशाओं में स्त्री की मृत्यु होती है।

गोचर से स्त्री मरण समय परिज्ञान:—

देहे द्युनेशस्फुटतो विशोधिते राशित्रिकोणे चरतीन्द्रवन्दिते।
स्त्रिया मृतिः स्यात्तनुतोऽस्तपस्फुटे संशोधिते भे धिषणे तथा भवेत्॥ ११०॥

सप्तमेश के स्पष्ट राश्यादि में स्पष्ट लग्न के राश्यादि को शोधन करे तब जो राशि शेष बचे उस में वा उस से त्रिकोण (५।९) राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब स्त्री की मृत्यु होती है। अथवा लग्न के स्पष्टराश्यादि में सप्तमेश स्पष्टराश्यादि को शोधन करे तब जो राशि शेष बचे उस में वा उस से त्रिकोण (५।९) राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब स्त्री की मृत्यु होती है।

कामेशकारकखगौ शुभकारकौ चे—
द्वीर्य्याधिके मदनभे न खलेक्षिताढ्ये
पत्या सहात्ययमुपैत्यबला मनोजा—
द्याम्येशपाकसमये किमु भाष्टवर्गे॥ १११॥
अत्यल्पा रेखिका यद्भे तत्र चेच्चरतीनजे।
तदंशोपगते गौरे विन्देतान्तं नितम्बिनी॥ ११२॥

सप्तमेश तथा सप्तम कारक ये दोनों शुभ कारक हों, सप्तम स्थान बली हो और वह पाप दृष्ट युक्त न हो तो पति के साथ स्त्री मृत्यु को पाती है। अथवा सप्तमस्थान से जो अष्टमस्थान हो अर्थात् द्वितीयस्थान उस के स्वामी की दशा के समय में स्त्री की मृत्यु होती है। अथवा शुक्राष्टक वर्ग में जिस राशि में सब से अल्प रेखा हों उस में गोचर से जब शनि आवे और उसी राशि के नवांश में गोचर से जब गुरु आवे तब स्त्री मृत्यु को प्राप्त होती है।

विवाह समय परिज्ञान:—

सद्राशिस्थे कान्तपे स्वर्क्षतुङ्गे काव्ये वर्षे पञ्चमे वाङ्कतुल्ये।
उद्वाहः स्याद् भास्करेऽस्ते स्मरेशे साच्छे वर्षे सप्तमे वेशवर्षे॥ ११३॥

शुभ ग्रह को राशि में सप्तमेश और स्वराशि वा स्वोच्च राशि में शुक्र हो तो ५ वें वर्ष में वा ९ वें वर्ष में विवाह होता है। सप्तम में सूर्य और सप्तमेश यदि शुक्र से युक्त हो तो ७ वें वर्ष में वा ११ वें वर्ष में विवाह होता है।

लाभे ऽ स्तेशे भार्गवे ऽ र्थे दशाब्दे भूपाब्दे वा कान्तभे कायनाथे ।
कल्पे काव्ये रुद्रवर्षे ऽ थ केन्द्रे धिष्ण्ये तस्मात्सप्तमे सूनुसूनौ ॥ ११४ ॥
भास्वत्तुल्ये नन्दभूसम्मिते ऽ ब्दे प्राप्तीशे ऽ र्थे पोष्यपे प्राप्तिभाप्ते ।
अब्दे रामक्षोणितुल्ये ऽ ङ्गपे खे प्राप्तौ स्वेशे ऽ क्षेन्दुवर्षे विवाहः ॥ ११५ ॥

लाभ में सप्तमेश और धन में शुक्र हो तो १० वें वर्ष में वा १६ वें वर्ष में विवाह होता है। सप्तम में लग्नेश और लग्न में शुक्र हो तो ११ वें वर्ष में विवाह होता है। केन्द्र में शुक्र हो और उससे सप्तम में शनि हो तो १२ वें वर्ष वा १९ वें वर्ष में विवाह होता है। धनमें लाभेश और लाभ में धनेश हो तो १३ वें वर्ष में विवाह होता है। दशम में लग्नेश और लाभ में धनेश हो तो १४ वें वर्ष में विवाह होता है।

केन्द्रे कायाङ्केशपे षोडशाब्दे जामित्रेऽब्जाद्दैत्यपूज्ये ततोऽस्ते ।
छायापुत्रे चेत्पुराणोन्मितेऽब्दे पस्त्ये पाते पञ्चमे प्राक्सुरेज्ये ॥ ११६ ॥
भूदोस्तुल्ये देवतुल्येऽथ काणे कोशे तत्पेनान्विते भूकुमारे ।
आकृत्यब्दे भोन्मिताब्दे मदांशे मूर्तीशेऽन्त्ये मारपे त्र्यश्विवर्षे ॥ ११७ ॥
षड्विंशेब्दे ऽ ङ्गांशनाथे त्रिकोणे प्राप्ते वर्षे तत्त्वतुल्ये लयांशे ।
यामित्रस्थे देहभागे ऽ च्छयुक्ते तत्त्वाब्दे वा त्र्यग्निवर्षे सहोत्थे ॥ ११८ ॥
दैत्याचार्ये दानगे दारनाथे तारातुल्ये खाग्नितुल्ये विवाहः ।
शुक्रादस्ते शीतकेतौ ततो ज्ञे मारस्थाने मृत्युनाथे मतिस्थे ॥ ११९ ॥
काष्ठातुल्ये वत्सरे प्राग्विवाहो द्वाविंशे ऽ ब्दे स्याद् द्वितीयो विवाहः ।
वर्षे ग्रामाज्याशतुल्ये तृतीय उद्वाहः स्यात्प्राक्तना एवमाहुः ॥ १२० ॥

जन्म लग्न में जिस राशि का नवांश हो उस का स्वामी यदि केन्द्र में हो तो १६ वें वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सप्तम में शुक्र हो और उस से सप्तम में शनि हो तो १८ वें वर्ष में विवाह होता है। सुख में राहु और पञ्चम में शुक्र हो तो २१ वें वर्ष में वा ३३ वें वर्ष में विवाह होता है। धन में शुक्र और मङ्गल यदि द्वितीयेश से युक्त हो तो २२वें वर्ष में वा २७ वें वर्ष मे विवाह होता है। सप्तम में जिस राशि का नवांश हो उसमें लग्नेश हो और व्यय में सप्तमेश हो तो २३ वें वर्ष में वा २६ वें वर्ष में विवाह होता है। लग्न में जिस राशि का नवांश हो उसका स्वामी त्रिकोण में हो तो २५ वें वर्ष में विवाह होता है। अष्टम में जिस राशि का नवांश हो वह राशि सप्तम में हो और लग्न में जिस राशि का नवांश हो उस राशि में शुक्र हो तो २५ वें वर्ष में वा ३३ वें वर्ष में विवाह होता है। तृतीय में शुक्र और नवममें सप्तमेश हो तो २७ वें वर्ष में वा ३० वें वर्ष में विवाह होता है। शुक्र से सप्तम में चन्द्रमा हो और उससे सप्तम में बुध हो एवं पञ्चम में अष्टमेश हो तो १० वें वर्ष में प्रथम विवाह, २२ वें वर्ष में द्वितीय विवाह और ३३ वें वर्ष में तृतीय विवाह होता है।

प्रकारान्तर से विवाह समय परिज्ञान:—

यो ऽ जादिराशौ रतिपे प्रवर्त्तते तदङ्कसंख्योन्मितवत्सरे नृणाम् ।
कल्याणकालः कृतमौञ्जिबन्धनात्पश्चाद्भुजङ्गान्वितहायने ऽ थ वा ॥ १२१ ॥

सप्तमस्थान में जो मेषादि राशि हो उस की अङ्क संख्या के समान वर्ष में मनुष्यों का विवाह होता है। अथवा तदन्ध से ८ वर्ष पश्चात् विवाह होता है।

कलेशकव्योर्बलिनो ऽस्तभं तत्संख्याप्रमाब्दैरुत तद्युताब्दैः।
प्रोक्तो विवाहो मनुजस्य यद्वा तत्पाकमध्ये करपीडनं स्यात् ॥ १२२ ॥

चन्द्रमा और शुक्र इन दोनों के मध्य में जो अधिक बली हो उस से सप्तम में जो राशि हो उस राशि की संख्या के समान वर्षों में विवाह होता है। अथवा चन्द्रमा और शुक्र से जो सप्तम स्थान हों उन दोनों में जो राशि हो उन का योग करे तब जो संख्या हो उस के तुल्य वर्षों में विवाह होता है। अथवा चन्द्रमा और शुक्र की दशा के परिपाक काल में विवाह होता है।

कायकामायुरीशांशपूर्वं कृत्वा ऽब्धिसङ्गुणम्।
तत्संख्याप्रमिते वर्षे विवाहो जायते ऽङ्गिनः ॥ १२३ ॥

लग्न, सप्तम तथा अष्टम इन तीनों भावों के स्वामीयों की नवांश संख्या को ४ से गुणकर जो गुणन फल हो उस के तुल्य वर्ष में मनुष्य का विवाह होता है।

विधाय वामाम्बरभावयोगं संख्या ऽस्ति या तत्प्रमवत्सरैर्वा।
यस्यां समायां धिषणस्य दृष्टिस्तस्यां विवाहः कथितो नरस्य ॥ १२४ ॥

सप्तम और दशम भाव के स्पष्ट रश्यादि का योग करे तब जो संख्या हो उस के समान वर्षों में विवाह होता है। अथवा जिस भाव पर बृहस्पति की दृष्टि हो उस के समान वर्षों में मनुष्य का विवाह होता है।

क्षपाकराधिष्ठिततारकावध पतिस्फुटैक्यांशगृहे गुरौ किमु।
देहास्तनाथस्फुटयोगभे यदा करग्रहः स्यान्नरतीन्द्रियाजके ॥ १२५ ॥

चन्द्रमा तथा अष्टमेश के स्पष्टराश्यादि का योग करे तब जो राश्यादि हो और उस में जो नवांश राशि हो उस में गोचर से जब गुरु आवे तब विवाह होता है। अथवा लग्नेश और सप्तमेश के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो राशि हो उस में गोचर से जब गुरु आवे तब विवाह होता है।

यदोदयेशर्क्षलवत्रिकोणं व्रजेत्कविर्वास्तविभुर्विवाहः।
योषिद्गृहं यातु यदोदयेशस्तदोपयामं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥ १२६ ॥

लग्नेश जिस राशि वा जिस राशि के नवांश में हो उस से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब शुक्र वा सप्तमेश आवे तब विवाह होता है। अथवा सप्तम स्थान में जो राशि हो उस में गोचर से जब लग्नेश आवे तब विवाह को कहते हैं।

दैत्याचार्यात्कोणराशिं प्रयाते वाचामीशे गोचरे वा विवाहः।
लेखानाथस्थांशनाथे स्वराशौ गीर्वाणेज्ये चौषधीनामधीशे ॥ १२७ ॥

पत्न्याः प्राप्तिर्मारनाथास्फुजिद्भं प्राप्ते पूज्ये पञ्चजे कण्टके वा ।
शुक्राचार्येणान्विते गोचरेण प्रोक्तः पुंसां बुद्धिमद्भिर्विवाहः ॥ १२८ ॥

जन्म समय में जिसराशि में शुक्र हो उस से जो पञ्चम वा नवम राशि हो उस में गोचर से जब गुरु आवे तब विवाह होता है। लग्नेश के नवांश का स्वामी, गुरु और चन्द्रमा ये तीनों गोचर से जब अपनी अपनी राशि में आवे तब स्त्री की प्राप्ति होती है सप्तमेश तथा शुक्र की आक्रांत राशि में गोचर से जब गुरु आवे और चन्द्रमा केन्द्र में हो वा गोचर में शुक्र से युक्त हो तो पुरुषों का विवाह कहना चाहिए।

नारीनाथस्थर्क्षभागत्रिकोणं याते गौरे मानवानां विवाहः ।
वामाभावाधीशभांशाधिपत्योर्दैत्येड्येन्द्वोः प्राणिनः पाककाले ॥ १२९ ॥

जिस राशि वा नवांश में सप्तमेश हो उससे जो पञ्चम वा नवम राशि हो उसमें गोचर से जब गुरु आवे तब विवाह होता है। शुक्र तथा चन्द्रमा से जो सप्तम स्थान हों उनकी राशि और नवांश के स्वामियों के मध्य में जो बली हो उसकी दशा के परिपाक काल में विवाह होता है।

काव्योपेतास्तर्क्षनाथस्य पाके भुक्तौ स्वायुर्नाथपाके च भुक्तौ ।
दाये भुक्तौ कामपाढ्यग्रहस्य स्वेशस्थर्क्षाधीशदाये हृतौ वा ॥ १३० ॥

शुक्र से सप्तम स्थान में जो राशि हो उसके स्वामी की दशा वा अन्तर्दशा में विवाह होता है। अथवा दशमेश और अष्टमेश की दशा वा अन्तर्दशा में अथवा सप्तमेश से युक्त ग्रह की दशा वा अन्तर्दशा में अथवा सप्तमेश की राशि के स्वामी की दशा वा अन्तर्दशा में विवाह होता है।

जायेशजायालययातदर्शिनभःसदां भुक्तिदशागमे वा ।
स्वास्तेशसम्बन्धिहृतौ विवाहोऽङ्गाच्छेन्दुतोऽस्तेशदशाहृतौ वा ॥ १३१ ॥

जायेश, जायाभावस्थ तथा जायाभावद्रष्टा ग्रहों की अन्तर्दशा वा दशाके आगमन काल में विवाह होता है। अथवा द्वितीयेश और सप्तमेश के सम्बन्धी ग्रहों की अन्तर्दशा में विवाह होता है। अथवा लग्न, शुक्र तथा चन्द्रमा इन तीनों में जो अधिक बली हो उस से सप्तमेश की दशा वा अन्तर्दशा में विवाह होता है।

कान्ताकारकखेचरोऽमलयुतः सद्भे दिशेन्मङ्गल-
मादौ पापगृहे शुभाम्बरचरो दायस्य मध्ये शिवम् ।
दायान्तेऽघविहङ्गमोऽघभवने कुर्याद्विवाहादिकं
कल्याणोऽमलसंयुतो विमलभे यच्छेच्छ्रियं सर्वदा ॥ १३२ ॥

शुभ राशि में शुभ ग्रह युक्त स्त्रीकारक हो तो दशा के आरम्भ काल में विवाहादि मङ्गल कार्य को करता है। पापराशि में स्त्रीकारक शुभग्रह हो तो दशा के मध्य काल में मङ्गल को करता है। पापराशि में स्त्रीकारक पापग्रह हो तो दशा के अन्त में विवाह को करता है। एवं शुभ राशि में शुभ युक्त स्त्रीकारक शुभ ग्रह हो तो नित्य मङ्गल को करता है।

विलग्नतस्त्रिकाश्रितेऽशुक्रे गृहे महामतौ ।
यदाऽऽगते तदा नरो लभेत वामलोचनाम् ॥ १३३ ॥

जिस राशि के नवांश में तथा जिस राशि में लग्नेश हो उसमें गोचर से जब गुरु आवे तब मनुष्य को स्त्री की प्राप्ति होती है।

गोचर से विवाह समय परिज्ञानः—

उद्वाहकाले वरभाद्वधूभान्नार्किर्भवेदेकधनान्त्यभेषु।
असद्दृशायोग उषेशशन्योर्न स्यात्तदानीं न षडष्टयोगः॥ १३४॥

विवाह समय में वर की राशि से तथा कन्या की राशि से प्रथम, द्वितीय तथा द्वादश राशि में शनि नहीं होता है। एवं विवाह समय में चन्द्रमा और शनि का अशुभ दृष्टि (१।४।७।१०) योग और षडष्टक (६।८) योग भी नहीं होता है।

जनेः सितेन्द्वर्कभतस्त्रिकोणकोशानुजायास्तगृहेषु गौरः।
तथाऽऽस्फुजिद्भात्प्रथमेऽमरेज्योऽथाघाः स्वशान्तान्त्यमदाङ्गगा नो॥ १३५॥

विवाह समय में जन्मकालीन शुक्र, चन्द्र तथा सूर्य की राशि से पञ्चम नवम द्वितीय तृतीय एकादश वा सप्तम राशि में गुरु होता है। अथवा जन्म कालीन शुक्र की राशि में गुरु होता है। एवं जन्म राशि से द्वितीय अष्टम, व्यय, सप्तम तथा प्रथम इन राशियों में पाप ग्रह नहीं होते है।

अथास्तनाथामरपूज्ययोगः किं वा तयोः शोभनदृष्टियोगः।
चारक्रमेणेन्द्रपुरोहितोऽर्थत्रिकोणकर्मास्तमयायभस्थः॥ १३६॥

विवाह समय में सप्तमेश तथा गुरु का योग अथवा सप्तमेश और गुरु की शुभ दृष्टि (३।५।९।११) योग होता है। एवं गोचर से द्वितीय पञ्चम नवम दशम सप्तम वा एकादश राशि में गुरु होता है।

पाणिग्रहानेहसि जन्मचक्रे वित्तात्मजद्यूनभवप्रमाब्दः।
चिन्त्यस्तथाच्छेन्दुकलत्रपेभ्यः किं चारगत्या स्वसुतास्तयातः॥ १३७॥

यदा द्युनेशः किमु वित्तपेऽर्थे किं वा तयोः स्वोच्चभसंस्थयोर्वा।
परस्परक्षेत्रगयोस्तदानीं पाणिग्रहः कामकुटुम्बपत्योः॥ १३८॥

पुत्रास्तपत्योर्मदनायपत्योर्धीस्वेशयोः स्वायपयोर्विवाहः।
लग्नास्तपत्योर्मतिमूर्त्तिपत्योः स्वाङ्गेशयोः सद्भवनेषु योगे॥ १३९॥

विवाह समय में जन्म कुण्डली के द्वितीय पञ्चम सप्तम वा एकादश स्थान के तुल्य लग्नादि भाव गणना के अनुसार वर्ष होता है। अथवा जन्म कालीन शुक्र, चन्द्र तथा सप्तमेश की आक्रान्त राशि से द्वितीय पञ्चम सप्तम वा एकादश स्थान के तुल्य शुक्रादियों कि आक्रान्त राशि प्रभृति गणना के अनुसार विवाह का वर्ष होता है। अथवा चारगति (गोचर) के क्रम से द्वितीय पञ्चम वा सप्तम स्थान में स्थित राशि में गोचर से जब सप्तमेश आवे तब विवाह होता है। अथवा धन में धनेश आवे अथवा सप्तमेश तथा धनेश जब अपनी अपनी उच्च राशि में आवे अथवा सप्तमेश धनेश की राशि में और धनेश सप्तमेश की राशि में आवे तब विवाह होता है। एवं

शुभस्थानों (१।२।४।५।७।९।११) में द्वितीयेश सप्तमेश का पञ्चमेश सप्तमेश का सप्तमेश लाभेश का पञ्चमेश द्वितीयेश का द्वितीयेश लाभेश का लग्नेश सप्तमेश का पञ्चमेश लग्नेश का वा द्वितीयेश लग्नेश का जब गोचर से योग हो तब विवाह होता है।

करोति काव्यः शुभदृष्टियोगं सहेन्दुमाहेयदिनाधिनाथैः।
यद्वा स्मरेशः स्वविभुः शशी वा सितेन सार्कं प्रकरोति योगम् ॥ १४० ॥

शुभस्थलेऽथो सिततोऽस्तयाता यामित्रयोषापरिवारपात्रा।
विधोः स्मरे शुक्रधनास्तपुत्रनाथा यदा गोचरतो भवेयुः ॥ १४१ ॥

किं भार्गवो जन्मनि यत्र राशौ तिष्ठेत्ततो दारकदारगोऽच्छः।
किं तत्र यातः स जनुर्विलग्नादुपान्त्यपुत्राननगो विवाहः ॥ १४२ ॥

चन्द्र, मङ्गल तथा सूर्य के साथ यदि शुक्र का शुभदृष्टि (३।५।९।११) योग हो अथवा शुभस्थानों (१।२।४।५।७।९।११) में शुक्र के साथ सप्तमेश, धनेश तथा चन्द्रमा का योग हो अथवा शुक्र से सप्तम में पञ्चमेश, सप्तमेश तथा द्वितीयेश हों अथवा चन्द्रमा से सप्तम में शुक्र, द्वितीयेश, सप्तमेश तथा पञ्चमेश हों अथवा जन्मसमय में जिस राशि में शुक्र हो उस से पञ्चम वा सप्तम में गोचर गत शुक्र हो अथवा वह सप्तम गत वा पञ्चम गत शुक्र यदि जन्म लग्न से लाभ पञ्चम वा द्वितीय में हो तो उस समय विवाह होता है।

लग्नाद्यथास्तार्थविदीश्वरेभ्यो वित्ताङ्गकोणास्तपयःफलेषु।
द्रव्योदयास्तात्मजपैः सहाच्छो योगं विधत्ते करपीडनं चेत् ॥ १४३ ॥

लग्न, सप्तमेश, द्वितीयेश तथा पञ्चमेश से द्वितीय प्रथम त्रिकोण सप्तम चतुर्थ वा एकादश में द्वितीयेश लग्नेश सप्तमेश वा पञ्चमेश के साथ यदि शुक्र गोचर क्रम से जब योग करे तब विवाह होता है।

शीघ्र विवाह योगः—

यदाङ्गनागृहेश्वरे स्वभोच्चगे चतुष्टये।
त्रिकोणभे शुभेक्षितान्विते द्रुतं करग्रहः ॥ १४४ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में स्वराशि गत वा स्वोच्च राशि गत सप्तमेश हो और वह शुभ दृष्ट युक्त हो तो शीघ्र विवाह होता है।

बाल्यकाल में विवाह योगः—

शरीरपात्सन्निहितेऽस्तपे वा शुभे समीपे तनुतः किमस्तात्।
किं वा ससत्सु स्वमदोदयेषु सद्वर्गयुक्तेषु युतेक्षितेषु ॥ १४५ ॥

स्वस्वामिभिर्वा प्रमदाधिनाथे पारावतादौ वसुपे ससारे।
मृद्वंशके मूर्धनिशान्तनाथे बाल्ये सुधीन्द्रैरुपयाम उक्तः ॥ १४६ ॥

लग्नेश के समीप अर्थात् एक राशि में वा एक राशि के अन्तराल में यदि सप्तमेश हो तो (१) लग्न से किंवा सप्तम भाव से समीप के भाव (धन वा अष्टम) में शुभ ग्रह हो तो (२) लग्न धन तथा सप्तम ये तीन

स्थान शुभ युक्त हो एवं उक्त स्थानों में शुभ ग्रहों के वर्ग हों और अपने अपने स्वामियों से युक्त वा दृष्ट हों तो (३) पारावतादि भाग में सप्तमेश हो, धनेश बली हो और मृदुषष्ठ्यंश में लग्नेश हो तो बाल्य काल में विवाह कहे।

सकर्किवैसारिणवृश्चिकेषु विलग्नवामाप्रतिभागृहेषु ।
वार्मण्डले पूर्णबलेऽस्तमत्योर्दृष्टेखगेन्द्रैः प्रचुरैस्तथा स्यात् ॥ १४७ ॥

लग्न, सप्तम तथा पञ्चम में कर्क, मीन तथा वृश्चिक राशि हों एवं सप्तम वा पञ्चम में पूर्ण बली चन्द्रमा हो और वह बहुत ग्रहों से दृष्ट हो तो भी बाल्यकाल में विवाह होता है।

दूरदेश में विवाह योगः—

दूरे विवाहोऽस्तविभौ त्रिकोणे स्त्रीकारके वाचि कुले सपङ्के ।
अथोग्रदृष्टे कलुषांशकेऽस्ते सोग्रेषु तीर्थार्थिकुलेषु तद्वत् ॥ १४८ ॥

त्रिकोण में सप्तमेश और धन वा दशम में पाप युक्त स्त्री कारक ग्रह हो अथवा सप्तम में पापांश हो और वह पापदृष्ट हो एवं नवम, द्वितीय तथा दशम यदि पापयुक्त हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का दूरदेश में विवाह होता है।

स्त्री के वंशजनों से शत्रुता तथा मित्रता का योगः—

होराधिपस्यास्तपतिः सपत्नः स्त्रीवंशजाताः परिपंथिभूताः ।
स्युर्मित्रभूता यदि पौरपस्य सखाऽस्तपालो ललनाकुलोत्थाः ॥ १४९ ॥

लग्नेश का सप्तमेश शत्रु हो तो स्त्री के कुल के पुरुष शत्रु होते हैं। एवं लग्नेश का सप्तमेश मित्र हो तो स्त्री के कुल के पुरुष मित्र होते हैं।

स्त्री के पितृकुल से सौख्य योगः—

सद्युते सप्तमे सद्भे वीक्ष्यमाणे शुभग्रहैः ।
श्वश्रूपक्षात्सुखं ज्ञेयं व्यत्ययात्परथा भवेत् ॥ १५० ॥

सप्तम में शुभ ग्रह की राशि हो और वह शुभ युक्त दृष्ट हो तो सास के पक्ष से सुख जानना चाहिए। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो सास के पक्ष से सुख नहीं होता है।

श्वशुरगृह से धनप्राप्ति के योगः—

बलवति दिविजेज्ये वा सिते शान्तगेऽथो
निधननिलयनाथे स्वर्क्षतुङ्गोपयाते ।
सुकृतखचरयुक्तालोकिते यस्य जन्तो-
र्जनुषि यदि स वध्वास्ताततोऽर्थं समेति ॥ १५१ ॥

अष्टम में बली गुरु वा शुक्र हो तो (१) अथवा स्वराशि वा स्वोच्च राशि में अष्टमेश हो और वह शुभ युक्त दृष्ट हो तो युक्त योगों में उत्पन्न पुरुष स्त्री की पिता से धन को पाता है।

कुच परिज्ञानः—

स्थूलस्तना केन्द्रगते कलत्रपे कवीन्दुवाग्ग्मीन्दुसुतैर्युते ततः।
सौम्यद्वयेनास्तगृहे युते तथा विधे मदेशे महिला समस्तनी ॥ १५२ ॥

केन्द्र में सप्तमेश हो और शुक्र, चन्द्र, गुरु तथा बुध से युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री स्थूलस्तन वाली होती है। सप्तम स्थान दो शुभ ग्रहों से युक्त हो एवं सप्तमेश भी दो शुभ ग्रहों से युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री समस्तन वाली होती है।

स्यात्पापयोगे परथा सशोभने कन्दर्पपे तोयखगे पयोभगे।
वृत्रारिपूज्येन निरीक्षिते त्वतिस्थूलस्तना वामविलोचनाऽङ्गिनः ॥ १५३ ॥

सप्तम भाव में तथा सप्तमेश के साथ पाप ग्रहों का योग हो तो विपरीत होता है। अर्थात् विषमस्तन वाली स्त्री होती है। सप्तमेश जल ग्रह हो और वह शुभ ग्रह से युक्त होकर जलराशि में हो एवं गुरु से दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री अतीव स्थूलस्तन वाली होती है।

कलत्रभावे कुटिले कृशस्तना तत्राब्जबन्धौ कठिनोरुकस्तना।
तत्रार्कजेऽहौ गुलिके शिखावति लम्बा तथा पीनपयोधरा वधूः ॥ १५४ ॥

सप्तम में मङ्गल हो तो कृशस्तन, सूर्य हो तो कठोर ऊरु तथा स्तन एवं शनि राहु गुलिक वा केतु हों तो लम्ब तथा पीन स्तन वाली स्त्री होती है।

धूमादिकेऽस्ते विषमाकृतिस्तना दाराधिपे दुष्टगृहे तथा भवेत्।
एकेन पापेन युते विलक्षणकुचाऽस्तपे पाप उतोत्तमे तथा ॥ १५५ ॥

सप्तम में धूमादि उपग्रह हो तो विषमाकृतिस्तन एवं पाप राशि में सप्तमेश हो तो भी उक्त फल हो तो है। सप्तमेश पाप वा शुभ हो और वह एक पाप ग्रह से युक्त हो तो विलक्षणकुच वाली स्त्री होती है।

योनि परिज्ञानः—

गुरुः सितो वास्तपतिः शुभांशके भगं मनोज्ञं सममस्य योषितः।
यदि स्मरागारपतौ पतङ्गजशाशाङ्किनेम्यन्यतमे स्त्रियो भगम् ॥ १५६॥
ह्रस्वं हरिद्वाज्यसृजोर्मनोजपे समान्दिमन्दोरगपे लवेऽसताम्।
दीर्घं भगं स्याद्धरिणदृशोऽङ्गिनस्तथा भवेच्चित्तजपे सपापके ॥ १५७ ॥

सप्तमेश गुरु वा शुक्र हो और वह शुभांश में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री की समान मनोहर योनि होती है। यदि सप्तमेश शनि बुध वा चन्द्रमा हो तो स्त्री की ह्रस्व योनि होती है। एवं सप्तमेश सूर्य वा मङ्गल हो और वह मान्दि शनि वा राहु से युक्त होकर पापांश में हो तो स्त्री का दीर्घभग होता है। सप्तमेश यदि पापयुक्त हो तो भी दीर्घभग होता है।

आर्द्रं भगं तोयभगेऽस्तपे किमु स्त्रीकारके वा सकभे कलत्रभे ।
पूर्णाब्जदृष्टे किमु तोयभे भपेऽनङ्गेऽम्बुभस्थाच्छ बुधेक्षिते तथा ॥ १५८ ॥

जलराशि में सप्तमेश वा स्त्री कारक ग्रह हो अथवा सप्तम में जल राशि हो और वह पूर्ण चन्द्र से दृष्ट हो अथवा सप्तम में जलराशिगत चन्द्रमा हो और वह जलराशिगत शुक्र बुध से दृष्ट होतो उक्त योगों में स्त्री का आर्द्र भग होता है ।

पूर्णे सुधाङ्गे स्मरगेऽथ वा जलराश्यंशकेऽप्यम्बुभगेज्यवीक्षिते ।
तदाऽऽर्द्रता सन्ततमङ्गनाभगे प्राग्देवपूज्ये परमोच्चभागगे ॥ १५९ ॥
यद्वाम्बुभस्थेऽप्युत भानुनान्विते स्यान्मैथुनादेव भगं तु तादृशम् ।
स्वान्तोत्थपे शुष्कगृहोपगे किमु सशुष्कभे शम्बरवैरिभे युते ॥ १६० ॥
शुष्कग्रहेणाथ मदे खलान्तरेऽहोभेऽपि भार्य्यागृहपे तथाविधे ।
सौम्येतर व्योमगवीक्षणान्वयसम्पातकेऽनार्द्रभगं मृगीदृशः ॥ १६१ ॥

सप्तम में पूर्णचन्द्रमा हो अथवा जलराशि वा जलांशक में पूर्णचन्द्रमा हो और वह जलराशि गत गुरु से दृष्ट होतो युक्त योगों में उत्पन्नपुरुषकी स्त्री की नित्य आर्द्र योनि होती है । परमोच्चांश में वा जलराशि में शुक्र हो अथवा 'शुक्र' सूर्य से युक्त होतो स्त्री की योनि मैथुन से ही आर्द्र होती है । शुष्क राशि में सप्तमेश हो अथवा सप्तम में शुष्क राशि हो और वह शुष्क ग्रह से युक्त हो अथवा सप्तम में पापराशी हो और वह पापान्तराल में हों, पापराशि में पापान्तर्गत सप्तमेश हो एवं पाप ग्रहों की दृष्टि तथा योग से युक्त होंतो स्त्री की योनि शुष्क होती है ।

भग चुम्बन तथा शिश्न चुम्बन शील योगः—

वाक्स्मरपे भकुजभांश उतारकाव्य-
युक्तेक्षितेऽथ ससितेऽम्बयपेऽस्त्रभे वा ।
शौरीक्षितेऽम्बरप आरगृहस्थिते वा
काव्यान्विते जनुषि चुम्बति योनिमङ्गी ॥ १६२ ॥

मङ्गल वा शुक्र की राशि वा नवांश में सप्तमेश तथा द्वितीयेश हों अथवा वे दोनों मङ्गल वा शुक्र से युक्त दृष्ट हों अथवा मङ्गल की राशि में शुक्र युक्त दशमेश हो अथवा मङ्गल की राशि में दशमेश हो और वह शनि से दृष्ट हो वा शुक्र से युक्त हो तो उक्त योगों में पुरुष भग चुम्बन शील होता है ।

आद्येश्वरे वाऽऽननपे स्वनीचराश्यादिगे तद्वदथासुरेज्ये ।
भांशे शनेस्तत्सहितेक्षिते वा तन्वी तदा चुम्बति शिश्नमस्य ॥ १६३ ॥

लग्नेश वा धनेश अपने नीच राश्यादि में हो तो भी योनि चुम्बनवाला होता है । शनि की राशि वा नवांश में शुक्र हो अथवा वह शुक्र हो यदि शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री शिश्नचुम्बन शील होती है ।

स्त्री के द्वारा मृत्यु योग तथा विषदायिनी स्त्री योगः—

कालासृजोः कामगयोर्द्युनेशे दुःस्थे स्वजायाजनतो नुरन्तः।
प्रद्योतने पञ्चशरे त्रिकस्थे पुष्पेषुपाले विषदाङ्गना ऽस्य ॥ १६४॥

कामी योग तथा परदारपराङ्मुख योग

चक्षो ऽर्कक्षितिजैरनङ्गभवनं युक्तेक्षितं वा ध्रुवं
दृष्टं दीदिविनोदयं क्षितिभुवा दृष्टं तदा कामुकः।
अन्यस्त्रीषु पराङ्मुखो गुरुगृहे शुक्रे ऽस्रदृष्टिं विना—
ऽङ्गे खे सूरिसितौ कुजेक्षणमृते त्र्यभ्रे सिते ऽङ्गे गुरौ ॥ १६५॥

सप्तम स्थान यदि गुरु सूर्य तथा मङ्गल से युक्त वा दृष्ट हो अथवा सप्तम स्थान यदि गुरु से दृष्ट हो और लग्न यदि भौम से दृष्ट होतो उक्त योगों में कामी होता है। गुरु की (९।१२) राशि में शुक्र हो और वह मङ्गल से दृष्ट न हो अथवा लग्न दशम में गुरु तथा शुक्र हों और वे मंगल से दृष्ट न हों अथवा तृतीय वा दशम में शुक्र हो और लग्न में गुरु हो तो उक्त योगों में पुरुष परस्त्रियों में पराङ्मुख अर्थात् पर स्त्री से प्रसङ्ग न करने वाला होता है।

स्वदार निरत योगः—

वामावस्त्ये सतां राशौ वाग्मिना यदि वीक्षिते।
यद्वा समन्विते तेन स्वदारनिरतो नरः ॥ १६६॥

सप्तम में शुभ ग्रहों की राशि हो और वह गुरु से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष स्वदारगामी होता है।

सुकाम तथा तीक्ष्ण काम योगः—

शम्बरारिगृहे सौम्यैः सुकामो मनुजो भवेत्।
खरः स्मरः परैस्तत्र क्लीबाभ्यां क्लीबतां वदेत् ॥ १६७॥

सप्तम में शुभ ग्रह हों तो सुकाम वाला पुरुष होता है। यदि सप्तम में पाप हों तो तीक्ष्ण काम एवं नपुंसक होतो नपुंसकता को कहे।

अधिकाल्प काम योगः—

कामाधिक्यं भौमयुग्वैरिपो ऽच्छो दृष्टः क्रूरैः स्याद्विशेषात्ततो ऽच्छे।
कामे ऽथेज्ये ऽरीश्वरे ऽच्छारयोगे ऽथाल्पः कामो मन्दगे ऽङ्गे सगो ऽश्वे ॥ १६८॥

षष्ठेश शुक्र यदि मङ्गल से युक्त हो विशेषतया पापदृष्ट हो अथवा सप्तम में शुक्र हो अथवा षष्ठेश गुरु हो और शुक्र मङ्गल का योग हो तो अधिक कामी होता है। लग्न में वृष वा धनु हो और उस में शनि हो तो अल्प कामी होता है।

कामी योगः—

स्वांशे शुक्रो वा स पापेन दृष्टः स्वर्क्षे युग्मेऽच्छोऽथ नीचे किमुच्चे।
सिंहाद्यार्द्धे भार्गवे दुष्टगे वा धीमध्याङ्गेष्वर्थभावेशि कामी ॥ १६९ ॥

'शुक्र' यदि अपने नवांश में हो वा पाप दृष्ट हो वा स्वराशि में हो वा मिथुन में हो अथवा नीच राशिगत वा उच्च राशिगत वा सिंह के पूर्वार्द्ध में स्थित शुक्र यदि त्रिक में हो अथवा पञ्चम दशम वा लग्न में धनेश हो तो उक्त योगों में कामी होता है।

काम स्त्री तथा कामातुर योगः—

साच्छेऽस्तेशे पापभे कामबुद्धिर्युग्मान्त्यार्द्धे गोनवांशे सिते वा।
पुण्ये पापास्तारिपा वा हरिस्त्रीद्वन्द्वेऽच्छे स्यादेषु कामातुरोऽसौ ॥ १७० ॥

पापराशि में शुक्र युक्त सप्तमेश हो तो मनुष्य काम बुद्धि वाला होता है। मिथुन के उत्तरार्द्ध में वा वृषांश में शुक्र हो अथवा नवम में पाप ग्रह, सप्तमेश तथा षष्ठेश हों अथवा सिंह कन्या वा मिथुन में शुक्र हो तो उक्त योगों में पुरुष कामी होता है।

कामातुर योग तथा वृद्धस्त्रीगामी योगः—

ज्ञेन्द्वर्किधिष्ण्यैः सहितेक्षितेऽस्तभे कामातुरोऽन्याबलया समन्वितः।
ज्ञेऽस्तेऽस्तपे लाभ उताङ्गधीशुभानङ्गे कुजांशे स्थविराबलारतः ॥ १७१ ॥

सप्तम स्थान यदि बुध, चन्द्र, शनि तथा शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो कामातुर तथा अन्य की स्त्री से युक्त होता है। सप्तम में बुध और लाभ में सप्तमेश हो अथवा लग्न पञ्चम नवम वा सप्तम में मङ्गल का नवांश होतो वृद्ध स्त्री में आसक्त होता है।

वृद्धस्त्रीरति योगः—

धराजभागे हरिजोपयाते सीमन्तिनीभे सवितुस्तनूजे।
स्यात्पञ्चनाराचनिपीडितात्मा वृद्धासु योषासु रतः स जन्मी ॥ १७२ ॥

लग्न में मङ्गल का नवांश हो और सप्तम में शनि हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष वृद्ध स्त्रियों में आसक्त और काम पीडित होता है।

कन्या रति योगः—

कन्यकांशयुतभार्गवोदये सद्दृशा विरहिते स वाञ्छति।
कन्यकारतिमघान्विते यदि वित्रपो हरिणदृक्षु लम्पटः ॥ १७३ ॥

लग्न में कन्यांशगत शुक्र हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो कन्या में आसक्त होता है। यदि वह शुक्र पाप युक्त हो तो उक्त योग में पुरुष निर्लज्ज और स्त्रियों मे लम्पट होता है।

वेश्यानुरक्त योगः—

सचापचन्द्रो हरिजालयस्थस्तत्रास्ति चेदंश इनात्मजस्य ।
कुर्याज्जनं घातुकमातुरं च सदुष्कृतं वारवधूसमेतम् ॥ १७४ ॥

लग्न में धनुगत चन्द्रमा हो और वह शनि के नवांश में हो तो मनुष्य को हिंसक, रोगी, पापानुरक्त और वेश्या से युक्त करता है ।

वृषली पाति योगः—

नेज्येक्षिते दिवि विधौ रविजेऽस्तगे वा—
ऽस्तेऽच्छो न शोभननिरीक्षित आर्किरङ्गे ।
वाऽब्जे मदे नहि विदीक्षित ऐनिमानू
दृश्ये दले द्विषि जनो वृषलीपतिः स्यात् ॥ १७५ ॥

दशम में चन्द्रमा हो और वह गुरु से दृष्ट न हो और सप्तम में शनि हो तो (१) सप्तम में शुक्र हो और वह शुभ दृष्ट न हो एवं लग्न में शनि हो तो (२) सप्तम में चन्द्रमा हो और वह बुध से दृष्ट न हो एवं दृश्यार्द्ध में वा षष्ठ में शनि तथा सूर्य हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष वृषली (शूद्रस्त्री) का पति होता है ।

वियोनि रति योगः—

मूर्त्तौ मन्दे सलेयांशे यद्वाऽस्ते मन्दगामिनि ।
निरीक्षिते महीजेन वियोनिरतिमिच्छति ॥ १७६ ॥

लग्न में सिंहांशगत शनि हो अथवा सप्तम में शनि हो और वह मङ्गल से दृष्ट हो तो युक्त योग में उत्पन्न पुरुष वियोनि (पशु) रति की इच्छा करता है ।

पशु गामी योगः—

वक्रे वने रतिपतौ तिमिरेऽथ वाऽर्के
किं केन्द्रदानतनये सखले चतुष्के ।
केन्द्रेऽहसेक्षितयुते किमु पाप्मयुक्ते
कोलेऽथ वा सगुलिके चतुरंघ्रिगामी ॥ १७७ ॥

सुख में भौम और सप्तम में राहु वा सूर्य हो तो (१) केन्द्र नवम वा पञ्चम पाप युक्त हों तो (२) अथवा चारों केन्द्र यदि पाप युक्त वा दृष्ट हों तो (३) अथवा शनि यदि पापसे वा गुलिक से युक्त हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पशुगामी होता है ।

बन्ध्यादि प्रसङ्ग योग तथा प्रसङ्गस्थान परिज्ञानः—

वशाऽबलासङ्गमिनेऽस्तगे समस्त्रीकेलिमब्जे रुधिरे रजोवतीम् ।
बन्ध्यां बुधे वारवधूं वचोविभौ विप्राबलां भार्गव एति गुर्विणीम् ॥ १७८ ॥

सप्तम में सूर्य हो तो वन्ध्या स्त्री का सङ्ग, चन्द्रमा हो तो समान स्त्री का सङ्ग भौम हो तो रजोवती तथा वन्ध्या का सङ्ग, बुध हो तो वेश्या का सङ्ग, गुरु हो तो ब्राह्मण की स्त्री का सङ्ग एवं शुक्र हो तो गर्भवती स्त्री से प्रसङ्ग करता है।

तत्रार्कचेऽष्टावमिते च पुष्पिणीं नीचाबलासङ्गममेति मानुषः।
क्रीडागृहं चेतसि चण्डदीधितौ रम्यस्वगेहं रजनीकरे कुजे॥ १७९॥

कुड्यं विहारस्थलमिन्दुनन्दने देवालयं देवपुरोहिते सिते।
कस्थानमन्येषु गणेशमाधवस्थानं वधूसङ्गमधाम कीर्त्यते॥ १८०॥

सप्तम में केतु राहु वा शनि हो तो रजोवती तथा नीच स्त्री के सङ्गम को प्राप्त होता है। सुख में सूर्य हो तो क्रीडा स्थान, चन्द्रमा हो तो मनोहर स्थान वा निजस्थान, भौम हो तो कुड्य (भित्ति वाला) स्थान, बुध हो तो विहार योग्य स्थान, गुरु हो तो देवालय, शुक्र हो तो जल स्थान, अन्यग्रह (शनि राहु वा केतु) हो तो गणेशजीका वा विष्णुजी का स्थान नववधू प्रसङ्ग में कहे।

व्यभिचारी योगः—

मार्गाङ्किधिष्ण्यौ मृतिमारमानगौ किं मङ्गलाच्छौ मदमध्यगामिनौ।
किं शुक्रभौमौ जनकाम्बिकाभगौ वेन्दोः शनिः खे शनितोऽम्बुभे कविः॥ १८१॥

वाच्छर्क्षगैर्ज्ञार्किसितैः स्मरेऽम्बरे योगान्वितौ शामितदेवदानवौ।
स्वास्तारियातावथ वैरिपे त्रिकेऽथास्तार्थखेशा दिवि जार उच्यते॥ १८२॥

अष्टम सप्तम वा दशम में बुध तथा शुक्र हों तो (१) सप्तम वा दशम में मङ्गल तथा शुक्र हों तो (२) दशम वा सुख में शुक्र तथा भौम हों तो (३) चन्द्रमा से दशम में शनि और उस से सुख में शुक्र हों तो (४) सप्तम वा दशम में शुक्र राशि गत बुध, शनि तथा शुक्र हों तो (५) द्वितीय सप्तम वा षष्ठ में पाप युक्त गुरु तथा शुक्र हों तो (६) त्रिक में षष्ठेश हो तो (७) दशम में सप्तमेश द्वितीयेश तथा दशमेश हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष व्यभिचारी होता है।

दैत्येन्द्रमंत्रिणि मदे कुजकोणवर्गे
आलोकिते तपनन्दनमङ्गलाभ्याम्।
जारो नरोऽमरनुते मृदुभौमभाशं
प्राप्तेऽथ वा मृदुमहीजयुते स जारः॥ १८३॥

सप्तम में शुक्र हो और वह मङ्गल वा शनि के वर्ग में हो, एवं शनि तथा मङ्गल से दृष्ट हो तो जार होता है। अथवा शनि वा मङ्गल की राशि वा नवांश में गुरु हो अथवा गुरु यदि शनि मङ्गल से युक्त हो तो भी जार होता है।

तमोग्रहाभ्यां कलितेऽङ्गनेशे खेऽक्षितेऽथारवीक्षितेऽङ्के।
सौरारवर्गे किमु सोग्रयोः षड्दृहेशयोर्वा गलितामृतांशौ॥ १८४॥

साधे स्मरे वाङ्कमृतीशयोगे किमस्तपे क्रूरयुते विशेषात् ।
यद्वा बुधे ऽस्ते तत उद्गमेशें ऽहसान्विते वा सखलौ भचारू ॥ १८५ ॥

स्वास्तारिगौ किं सितपापयुक्तैः स्वास्तारिनाथैः पुरगैः किमुग्रैः ।
युक्तैः स्वदेहारिधवैः किमार्कौ स्मरे ऽस्तपे क्रूरयुते किमर्थे ॥ १८६ ॥

साहिध्वजे दर्पकपे सपापे किमुग्रखेटैः कलिते कलत्रे ।
स्वार्य्यङ्गपे किं सखले ऽङ्गमास्तेः नितम्बिनीनेतरि जारमाहुः ॥ १८७ ॥

सप्तमेश यदि राहु वा केतु से युक्त हो और वह पाप दृष्ट हो तो (१) शनि वा मङ्गल के वर्ग में शुक्र हो और वह मङ्गल सूर्य से दृष्ट हो तो (२) षष्ठेश तथा लग्नेश पाप युक्त हों तो (३) सप्तम में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो (४) किसी भी स्थान में नवमेश तथा अष्टमेश का योग हो तो (५) विशेषतः सप्तमेश पाप युक्त हो तो (६) सप्तम में बुध हो तो (७) लग्नेश यदि पाप युक्त हो तो (८) द्वितीय सप्तम वा षष्ठ में पाप युक्त शुक्र गुरु हों तो (९) लग्न में सप्तमेश, षष्ठेश तथा द्वितीयेश हों और वे शुक्र तथा पापग्रह से युक्त हों तो (१०) द्वितीयेश, लग्नेश तथा षष्ठेश ये तीनों पाप युक्त हों तो (११) सप्तम में शनि हो और सप्तमेश पाप युक्त हो तो (१२) द्वितीय में राहु वा केतु हो और सप्तमेश पाप युक्त हो तो (१३) सप्तम में द्वितीयेश, षष्ठेश तथा लग्नेश हों और वे पाप युक्त हों तो (१४) लग्न में पाप युक्त सप्तमेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष जार (व्यभिचारी) होता है।

इलातले ऽनङ्गविभौ तनूधवे ऽनङ्गे धने ऽङ्गे व्यभिचारभाङ्नरः ।
कान्ते घने कान्तपतौ तथा ऽनुजे नीरे निधानेशि तथा च विक्रमी ॥ १८८ ॥

सुख में सप्तमेश हो और लग्नेश सप्तम द्वितीय वा लग्न में हो तो व्यभिचारी होता है। सप्तम वा लग्न में सप्तमेश हो तो भी व्यभिचारी होता है। तृतीय में वा चतुर्थ में द्वितीयेश हो तो जार तथा विशेष पराक्रमवाला होता है।

श्यामासृजोर्गदगयोरुत शुक्रतो ऽस्ते
स्वर्क्षे कुजे ऽथ भृगुजे कुजभांशके वा ।
युक्तेक्षिते कुजनिना परदारगामी
तद्वत्सिते यमगणे यमयुक्तदृष्टे ॥ १८९ ॥

षष्ठ में शनि मङ्गल हो तो (१) शुक्र से सप्तम में मेष वा वृश्चिक राशि गत मङ्गल हो तो (२) मङ्गल की राशि वा नवांश में शुक्र हो अथवा वह शुक्र यदि मङ्गल से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पर स्त्री गामी होता है। शनि के वर्ग में शुक्र हो अथवा वह शनि से युक्त वा दृष्ट होतो पर स्त्री गामी होता है।

दम्पति का चपल योगः—

कन्दर्पभं कलमषवीक्ष्यमाणमस्ति द्विरङ्गान्तरितं खलानाम् ।
गेहं मृगाक्षी चपला नरो ऽपि परावलाभुक् चपलावशेन ॥ १९० ॥

सप्तमस्थान यदि पाप दृष्ट हो पाप ग्रहों के अन्तराल हो वा सप्तम में पाप ग्रहों की राशि हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री चपला (जारिणी) और पुरुष भी चपला के कारण पर स्त्री का उपभोग करता है।

ग्लौलोकितेऽस्ते ललनाऽस्य चञ्चला तत्रार्यवर्गे विबुधेक्षितान्विते ।
विधौ तथा तत्र कुजार्किवर्गयोग्लौस्तत्र तद्दृक् चपलौ वधूवरौ ॥ १९१ ॥

सप्तम स्थान यदि चन्द्रमा से दृष्ट हो तो उक्त योग में पुरुष की स्त्री चञ्चला होती है। सप्तम में गुरु वर्ग चन्द्रमा हो और वह बुध से दृष्ट वा युक्त होतो भी स्त्री चञ्चला होती है। सप्तम में मङ्गल वा शनि का वर्ग हो और वह चन्द्रमा से युक्त वा दृष्ट हो तो स्त्री पुरुष दोनो चञ्चल होते है।

कान्तेशे तनुगेऽङ्गपे पतिभगे चन्द्रेक्षिते चञ्चलः
कन्दर्पे चरभे तथा चरलवे चन्द्रे चरर्क्षे स्मरे।
जायेशे चरभे नरोऽतिचपलो कामेऽगभे साधुतां
विन्देद्दारगृहे यदि द्वितनुभे मिश्रत्वमाहुर्बुधाः ॥ १९२ ॥

लग्न में सप्तमेश हो, सप्तम में लग्नेश हो और वे चन्द्रमा से दृष्ट हों उक्त योग में उत्पन्न पुरुष चञ्चल होता है। सप्तम में चरराशि हो तथा चरांशक हो, सप्तम में चरराशिगत चन्द्रमा हो और चरराशि में सप्तमेश भी हो तो उक्त योग में पुरुष अतीव चपल होता है। सप्तम में यदि स्थिर राशि हो तो पुरुष साधुता को प्राप्त होता है। एवं सप्तम में द्विस्वभाव राशि हो तो पण्डितजन मिश्रत्व को कहते हैं।

पुंश्चल योगः—

पुंश्चलोऽहनि सिते स्वराशिगेऽथो विधौ यमकुजान्तरेऽथ वा।
मन्दचन्द्ररुधिरैर्मिथो युतालोकितैः सवनितः स पुंश्चलः॥ १९३ ॥

दिन का जन्म हो और स्वराशि में शुक्र हो तो पुरुष पुंश्चल (गुदामैथुनशील) होता है। शनि और मङ्गल के मध्य में चन्द्रमा हो अथवा शनि, चन्द्र तथा मङ्गल ये तीनों परस्पर युक्त दृष्ट हों तो उक्त योगों में पुरुष तथा स्त्री दोनों पुंश्चल होते हैं।

सोमे यमारान्वितवीक्षितेऽन्यैः खगैः खगैः स्त्रीग्रहदृष्टियुक्तैः।
वियोनिहेतोः परदाररक्तो गुदारतः पुंग्रहदृष्टियुक्तैः॥ १९४॥

'चन्द्रमा' यदि शनि तथा मङ्गल से युक्त वा दृष्ट हो और दशम में अन्य ग्रह हो और वे स्त्री ग्रहों से दृष्ट हों तो वियोनि (पशु) के कारण पर स्त्री में आसक्त होता है। यदि वे दशमस्थ ग्रह पुरुष ग्रहों से दृष्ट हो तो पुरुष गुदारमण शील होता है।

कलत्रान्तरभाग् योगः —

मृतौ मारे चेत्र चरभवने भूमितनये
द्युनेशे दृश्यार्द्धे किमु मदनपस्थांशकपतौ।

खलान्तःस्थे नीचारिभवनलवेऽर्कस्य करगे
खलैः संदृष्टे वाऽऽननमदनपौ साररहितौ ॥ १९५ ॥

कान्तार्थयोः कल्मषयुक्तदृष्टयोर्नरः कलत्रान्तरभाक् कलत्रपे ।
यद्वाङ्गपे मूढसपत्ननीचगेऽसत्षष्ठिभागे यदि मानवस्तथा ॥ १९६ ॥

अष्टम तथा सप्तम में पाप ग्रह हों, व्यय में भौम हो और दृश्य खण्ड में सप्तमेश हो तो (१) सप्तमेश के नवांश का स्वामी यदि पाप ग्रहों के अन्तराल में हो नीचराशि में शत्रु राशि में शत्रु नवांश में वा अस्तंगत हो एवं पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो (२) सप्तमेश तथा द्वितीयेश निर्बल हो एवं सप्तम तथा द्वितीय स्थान पाप युक्त दृष्ट हों तो मनुष्य कलत्रान्तर भागी (रखेली स्त्री वा अविवाहित स्त्री से सहवास करने वाला) होता। अस्तगत शत्रुराशि नीच राशि वा क्रूरषष्ठ्यंश में सप्तमेश वा लग्नेश हो तो भी मनुष्य कलात्रान्तर भागी होता है।

लम्पटालम्पट योगः—

नीचेऽस्तेशे नीचयुक्तेऽघखेटैर्दृष्टं युक्तं बस्तिभं लम्पटः स्यात् ।
स्वोच्चे स्वांशे वीर्य्ययुग्बस्तिभेशोद्यूतं क्रूरैर्लोक्यते लम्पटो न ॥ १९८ ॥

स्वनीचराशि में सप्तमेश हो वा नीचराशि गत ग्रह से युक्त हो एवं सप्तम स्थान पापयुक्त दृष्ट हो तो उक्त योग में मनुष्य लम्पट (आसक्त) होता है। स्वोच्च राशि में वा स्वांश में बलवान् सप्तमेश हो और सप्तम स्थान पापदृष्ट हो तो लम्पट नहीं होता है।

अनेक स्त्री गमन योगः—

अनङ्गभेऽर्चितेन्द्वौ क्रिमास्फुजिज्ज्ञडोद्भवौ ।
बहुप्रतीपदर्शिनीरतो भवी समुद्भवः ॥ १९८ ॥

सप्तम में गुरु बुध हों अथवा शुक्र चन्द्र हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष बहुत स्त्रियों का प्रसङ्ग करने वाला होता है।

जार योग भङ्ग परिज्ञानः—

सुवासिनीस्थले सतां गृहे विलोकिते युते ।
शचीपतेः पुरोधसा न जार उच्यते जनः ॥ १९९ ॥

सप्तम में शुभ ग्रहों की राशि हो और वह गुरु से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष व्यभिचारी नहीं होता है।

सवीर्य्य योगः—

सीमन्तिनीभं सुकृतैः समेतं स वीर्य्यवान् वाडवनाकवासी ।
ऐन्द्रीविलग्ने समसप्तयाते चान्द्राबुपान्त्ये सितगौ समर्थः ॥ २०० ॥

सप्तम स्थान यदि शुभ युक्त हो तो वह पुरुष वीर्य्य वाला होता है। लग्न में गुरु शुक्र हों, समसप्तक में बुध हो एवं लग्न में चन्द्रमा हो तो समर्थ (सवीर्य) होता है।

वीर्य्य च्युति योगः—

स्वोच्चेष्वहीनजासितेषु विधौ क्रिये ऽर्के
कर्के ऽथ कोणधिषणौ तनये ऽङ्ग इन्दौ।
किं स्त्र्युद्गमे शितिरुचीन्दुजवीक्षिते ऽच्छे
पातङ्गिभे यदि मदक्षरणं नरस्य ॥ २०१ ॥

अपने अपने उच्च मे राहु, शनि तथा शुक्र हों एवं मेष में चन्द्रमा और कर्क में सूर्य हो तो (१) पञ्चम में शनि गुरु हों और लग्न में चन्द्रमा हो तो (२) लग्न में कन्या राशि हो और वह शनि बुध से दृष्ट हो एवं शनि की राशि में शुक्र हो तो वीर्य्यच्युति (वीर्य्य श्राव) वाला होता है।

अल्प वीर्य योगः—

पाथःस्थयोः पङ्गुसुधाङ्गयोर्वा काव्ये कलत्रे हरिजेशदृष्टे।
किं वा सकाव्ये क्रियविग्रहे वा नक्षत्रनाथे कविभे ऽल्परेताः ॥ २०२ ॥

सुख में शनि चन्द्र हों तो (१) सप्तम में शुक्र हो और वह लग्नेश से दृष्ट हो तो (२) लग्न में मेषराशि गत शुक्र हों तो (३) शुक्र की राशि में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में पुरुष अल्पवीर्य्य वाला होता है।

निर्वीर्य्य योगः—

क्रूराक्रान्ते ऽब्जे स्वभे वा कृशेन्दौ कान्ते वास्ते पावके वीतवीर्य्यौ।
लेखास्तेशौ वास्तपे निर्बले वा निर्वीर्यो ऽस्ते ऽघैस्तथा सौख्यहीनः ॥ २०३ ॥

स्वराशि में क्रूराक्रान्त चन्द्रमा हो तो (१) सप्तम में क्षीण चन्द्रमा हो तो (२) सप्तम में पाप ग्रह हो एवं लग्नेश तथा सप्तमेश निर्बल हों तो (३) अथवा सप्तमेश निर्बल हो तो निर्वीर्य होता है। यदि सप्तम में बहुत पाप हों तो निर्वीर्य तथा सौख्य रहित होता है।

नपुंसक योगः—

भास्वद्विधू ओजसमर्क्षगौ मिथः प्रपश्यतौ वा ज्ञशनी तथा क्रमात्।
ओजर्क्षगो ऽसृक् समराशिगं रविं पश्येद्युतौजर्क्षगतौ तनूविधू ॥ २०४ ॥

दृष्टौ महीजेन समर्क्षगेण क्रिमोजर्क्षे युग्मर्क्षे गतौ ज्ञशीतगू।
कुजेक्षितौ वा विषमांशगास्तनू सितेन्दवो वा दिवि भाग्यभार्गवौ ॥ २०५ ॥

किं भाग्यभौ व्योम्नि मृतौ सतां दृशा मुक्तावथार्कौ सकभे भयार्कयोः
सद्वीक्षणोने ऽथ सपङ्ककान्तपे नीचे क्षये ऽरौ विकलग्रहान्वितम् ॥ २०६ ॥

द्यूनं ततोऽस्ते विबलः खलः शुभो वास्ताधिपो नष्टमितः परांशके।
किमूनवीर्य्योऽङ्गपतिः स्वनीचगो नीचग्रदृष्टोऽस्तमितोऽस्तपोऽरिगः॥ २०७॥

किं नष्टनारीगृहपोऽत्यये भये विनष्टखेटर्क्षगतो नपुंसकः।
शनैश्चरेऽच्छाच्चरमेऽभिघातिभे यद्वा विवस्वत्सुतभार्गवौ वधे॥ २०८॥

दृष्टौ न सौम्यैरथ नीचगे व्यये शत्रौ शनौ षण्ढ उतेह तादृशः
अंशे शिखावान् द्विजराजसूनुना शनैश्चरेणापि विलोक्यते तथा॥ २०९॥

विषम राशि में सूर्य एवं समराशि में चन्द्रमा हो और वे दोनों परस्पर देखते होंतो (१) एवं विषम राशि में बुध तथा समराशि में शनि हो और वे दोनो परस्पर देखते होंतो (२) समराशि गत सूर्य को विषम राशि गत मङ्गल देखता होतो (३) विषम राशि गत लग्न तथा चन्द्रमा को समराशि गत मङ्गल देखता होतो (४) विषम राशि में बुध तथा समराशि में चन्द्रमा हो और वे मङ्गल से दृष्ट होंतो (५) विषम राशि के नवांश में लग्न, शुक्र तथा चन्द्रमा हों तो (६) दशम में शनि तथा शुक्र होंतो (७) दशम वा अष्टम में शुक्र तथा शनि हों और वे शुभ दृष्ट न होंतो (८) षष्ट वा व्यय में जलराशि गत शनि हो और वह शुभ दृष्ट न हों तो (९) अष्टम वा षष्ठ में नीच-राशि गत पाप युक्त सप्तमेश हो और सप्तम भाव विकलग्रह से युक्त हो तो (१०) सप्तम में निर्बल पाप वा निर्बल शुभ हों तो (११) शत्रुनवांश वा अन्यांश में नष्टगत सप्तमेश हो तो (१२) नीचराशि में अस्तगत निर्बल लग्नेश हो और वह नीचराशि गत ग्रह से दृष्ट हो षष्ठ में सप्तमेश हो तो (१३) अष्टम वा षष्ट में विनष्टग्रह की राशि में स्थित विनष्ट सप्तमेश होतो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष नपुंसक (हिजडा) होता है। शुक्र से व्यय वा षष्ठ में शनि हो तो (१) अष्टम में शनि तथा शुक्र हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो (२) व्यय वा षष्ठ में नीचराशि गत शनि हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष नपुंसक वा उसके समान आकार वाला होता है। कारकांश लग्न में केतु हो और वह बुध शनि से दृष्ट हो तो भी नपुंसक वा उसके समान आकार वाला होता है।

स्त्री प्रसङ्ग में असन्तोष दायी योगः—

वक्रर्क्षस्थे भार्गवे वोदयेशे काये काव्यः कान्तभे किं कुसूनोः।
मध्ये मित्रे मन्दयुक्तो मृगाङ्को ना कामिन्या नो रतेस्तोषदायी॥ २१०॥

वक्री ग्रहकी राशि में शुक्र होतो (१) लग्न में लग्नेश और सप्तम में शुक्र हो तो (२) मङ्गल से दशम वा सुख में शनि युक्त चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष सम्भोग से स्त्री को प्रसन्न करने में असमर्थ होता है।

कामरोग योग :—

शान्तेऽशुभे विरतिपेऽघसमेतदृष्टे
प्रान्त्ये सपापशशिनीज्यसितौ विनाशे।
मारे स्मरी त्रिकवचोभवनेषु सत्सु
मार्त्तण्डमङ्गलयमेन्दुषु कामरोगी॥ २११॥

लग्न में पाप ग्रह हो, अष्टमेश यदि पाप युक्त दृष्ट हो, व्यय में पाप युक्त चन्द्र हो अष्टम वा सप्तम में गुरु शुक्र हों तो उक्त योग में स्मरी :(कामरोगी) होता है। षष्ठ अष्टम, व्यय तथा धन में सूर्य, मङ्गल, शनि तथा चन्द्रमा हों तो भी कामरोगी होता है।

स्त्रीसम्बन्धी प्रकीर्ण योगः—

तनोः स्मरेऽस्य गृहे किमंशेऽथ स्त्रीजनुर्भे यदि तत्र वामा
दास्यस्तनीचर्क्षगखेचरांशे दुष्टाऽथ वा यौवन ईशहीना ॥ २१२ ॥

पुरुषके जन्म लग्न से सप्तम में मङ्गल की राशि वा नवांश हो अथवा पुरुष के जन्मलग्न से सप्तम में स्त्री की जन्म राशि हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की स्त्री दासी होती है। सप्तम में अस्तगत वा नीच राशि गत ग्रह का नवांश होतो उक्त योगमें उत्पन्न पुरुष की स्त्री दुष्टा वा युवावस्था में रण्डा होती है।

सद्भांशके सद्गुणसंयुता स्त्री रामाऽतिरम्या शुभखेटदृष्टे।
वामा धवघ्नी विबलेन्दुभांशे साध्वी सुधांशौ सबले वधूः स्यात् ॥ २१३ ॥

सप्तम में शुभग्रह की राशि वा नवांश होतो स्त्री उत्तम गुणों से युक्त होती है। सप्तमस्थान यदि शुभ दृष्ट होतो अतिसुन्दर स्त्री होती है। सप्तम में क्षीण चन्द्रमा की राशि वा नवांश होतो स्त्री पतिका नाश करने वाली होती है। एवं सप्तम में बली चन्द्रमा की राशि वा नवांश हो तो स्त्री साध्वी होती है।

तत्रारुणांशे कुलटाऽरिनिम्नमूढान्विते वा यदि सन्धिभागे।
विहङ्गमासन्निगडाहिपाशत्र्यंशे व्रतोना विधवाऽस्य वामा ॥ २१४ ॥

सप्तम में सूर्य का नवांश होतो कुलटा (असती) स्त्री होती है। सप्तम में यदि शत्रुराशि गत नीच राशि गत वा अस्तगत ग्रह हो वा सन्ध्यंश हो अथवा सप्तम में पक्षी अशुभ निगड सर्प वा पाश द्रेष्काण हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री पातिव्रत्य धर्मरहित तथा रण्डा होती है।

त्रध्ने वधूभे वनिता वशास्याज्जायानिशान्ते जलगोलमूर्त्तौ।
दासी समाना हरिणेक्षणाऽस्य क्षीणे परिज्ञे व्यभिचारिणी स्त्री ॥ २१५ ॥

सप्तम में सूर्य हो तो वशा (वंध्या), चन्द्रमा हो तो दासी के तुल्य एवं क्षीण चन्द्रमा हो तो स्त्री व्यभिचारिणी होती है।

साधधूमवदने मनोजभे भामिनी भवति दुष्टचारिणी।
मीयते कुतनये पतङ्गजे दुर्भगा सभुजगेऽन्यदारभाक् ॥ २१६ ॥

सप्तम में पाप युक्त धूमादि उपग्रह हो तो युक्त योग में मनुष्य की स्त्री दुष्टाचार वाली होती है। एवं सप्तम में मङ्गल हो तो स्त्री मर जाती है। शनि हो तो दुर्भगा (अभागिनी) और राहु हो तो वह पुरुष परस्त्रीगामी होता है।

धूमे मनोजे शयपीडनेऽनितश्चापाभिधाने म्रियते सुवासिनी।
दुःशीलयुक्ता परिधौ शिखावती वन्ध्या सती कालखगे वधूज्झितः ॥ २१७ ॥

सप्तम में धूम हो तो विवाह रहित, चाप हो तो स्त्री मर जाती है। एवं सप्तम में परिधि (परिवेष) हो तो, दुष्ट स्वभाव वाली, केतु हो तो वंध्या तथा सती और काल हो तो स्त्री रहित होता है।

गर्भस्रावाढ्या खले ज्ञे सपुत्रा पूर्णे चन्द्रे स्त्रीप्रसूता सुशीला।
सौभाग्याढ्या श्रीमती वीर्य्यभाजि भे वागीशे नन्दनाढ्या गुणाढ्या ॥ २१८ ॥

सप्तम में पापग्रह हो तो गर्भस्राव विकार से युक्त, बुध हो तो उत्तम पुत्र वाली, पूर्ण चन्द्र हो तो सुशील तथा कन्या उत्पन्न करने वाली, बली शुक्र हो तो सौभाग्य युक्त तथा श्रीमती एवं गुरु हो तो पुत्र तथा गुणों से युक्त होती है।

सवीर्य्ये उत्तमे खगे मनोजमन्दिरेश्वरे।
सुपुत्रसंयुता सती तदा कुरङ्गलोचना ॥ २१९ ॥

सप्तमेश यदि बली हो और वह शुभ ग्रह हो तो उक्त योग में उत्तम पुत्रों से युक्त तथा सती स्त्री होती है।

वामावित्तगृहे खलेक्षितयुते वध्वन्त एनःखसद्-
दृक् तत्राशुभदायिनी निगदिताऽजस्रं विशेषाद्बुधैः।
जायाया जनने मनोजनिधनेऽप्येवं न दोषो भवेत्
संयुक्ते सति वीक्षिते शुभकरैर्दैवान्वितौ दम्पती ॥ २२० ॥

सप्तम तथा द्वितीय यदि पाप दृष्ट युक्त हो तो स्त्री का नाश होता है। यदि उक्त स्थानों में पापदृष्टि हो तो विशेषतः अशुभ फल होता है। एवं स्त्री के जन्म लग्न से सप्तम तथा अष्टम स्थान यदि पाप युक्त दृष्ट हो तो पुरुष के द्वितीय तथा सप्तम स्थान जन्य दोष नहीं होता है। यदि दम्पति (स्त्री पुरुष) के उक्तस्थान शुभ युक्त दृष्ट हों तो दम्पती भाग्यवान् होते है।

पङ्कः खपान्थः स्फुटरश्मिजालोऽनङ्गे स्वभस्थो निजतुङ्गयातः।
पुंसः सुशीला कुजला सती स्त्री दुःशीलयुक्ता चपलाऽस्तनीचः ॥ २२१ ॥

सप्तम में पाप ग्रह हो और वह स्पष्ट रश्मियों वाला हो स्वराशि में वा स्वोच्च राशि में हो तो पुरुष की स्त्री सुशीला, सुवंश में उत्पन्न तथा सती होती है। एवं सप्तमस्थ पाप ग्रह अस्तगत हो वा नीच राशि गत होतो पुरुष की स्त्री दुष्टस्वभाव वाली तथा चपला (व्यभिचारिणी) होती है।

सीमन्तिनीजनजनावपि पङ्कखेट
आत्मीयराशिमधिगम्य वधूनिशान्ते
वस्तं सदा प्रकुरुते स्मरगा नभोगाः
सौख्याग्रहा व्ययवधारिविभून्विहाय ॥ २२२ ॥

स्त्री के जन्म समय में यदि सप्तम भाव में स्वराशिगत पापग्रह भी हो तो शुभ फल को करता है। व्यय, अष्टम तथा षष्ठ भाव के स्वामियों को छोड़कर शेष ग्रह सप्तम में हों तो शुभ फलदायक होते हैं।

पत्नीभपे पूर्णबलप्रपन्ने सद्युक्तदृष्टे गुणवान् समर्थः ।
दाता च सौभाग्ययुतो विभोग्यमदप्रधान्यं प्रभवेत्तदानीम् ॥ २२३ ॥

पूर्ण बली सप्तमेश यदि शुभ युक्त दृष्ट हो तो गुणवान् समर्थ दानी सौभाग्य लक्षण वाला और उस के विशेष भोग्य तथा धान्य होता है।

मूत्र कृच्छ्र योगः—

अङ्गारे मुहिरेऽसदीक्षितयुतेऽथो वारिराशौ विधौ
तन्नाथे रुजि नीरराशिगविदा प्रोद्वीक्षितेऽथो शनौ ।
कन्दर्पे तमसेक्षितेऽथ बहवः पङ्का विहङ्गा यदा
क्रूराप्राङ्गलवे कलत्रकटिगाः स्यान्मूत्रकृच्छ्रामयः ॥ २२४ ॥

सप्तम में पाप युक्त दृष्ट मङ्गल हो तो (१) जलचरराशि में चन्द्रमा हो और षष्ठ में चन्द्राक्रान्त राशि का स्वामी हो और वह जलराशिगत बुध से दृष्ट हो तो (२) सप्तम में शनि हो और वह राहु से दृष्ट हो तो (३) सप्तम तथा षष्ठ में बहुत पाप ग्रह हो और वे क्रूरषष्ठ्यंश में हो तो उक्त योगों में मूत्रकृच्छ्र रोग होता है।

उपदंश योगः—

सङ्केऽस्तपे वाग्विभुना युतेक्षिते चेत्पारिजातादिलवे समेति ना ।
रामां सुरम्यां सह तक्रसूपकपक्वोपदंशाज्यपयोऽन्नमाक्षिकैः ॥ २२५ ॥

शुभ राशि में गुरु से युक्त दृष्ट सप्तमेश हो और वह पारिजातादि दश वर्ग में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष दधि, दाल, पक्वान्न, घृत दुग्ध, और शहद के साथ सुन्दर स्त्री को पाता है।

पत्नीशे ज्ञे पूज्यदृष्टे बलिष्ठे भुक्तीशेनापीक्षिते वा सुरार्ग्ये ।
रामानाथे भुक्तिपेनेक्षिते सद्भागे ज्ञांशे ज्ञेक्षिते वा वधूपे ॥ २२६ ॥
काणे पूर्णाब्जेक्षितु पाप्मना नो युक्ते दृष्टे सूपदध्याज्यभाक् स्यात् ।
सूरे वारेऽस्तेश्वरे रम्यदृष्टे भुक्तौ दध्याज्यादिभाक् स्यात्कदाचित् ॥ २२७ ॥

सप्तम स्थान का स्वामी बुध हो और वह बली हो एवं गुरु तथा द्वितीयेश से भी दृष्ट हो तो (१) सप्तम स्थान का स्वामी गुरु हो और वह द्वितीयेश से दृष्ट हो एवं शुभांश में वा बुधांश में हो वा बुध से दृष्ट हो तो (२) सप्तमेश शुक्र हो और वह पूर्ण चन्द्रमा से दृष्ट हो एवं पाप युक्त दृष्ट न हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष दाल दही घृत इत्यादि युक्त अन्न भोजन करने वाला होता है। एवं सप्तमेश सूर्य वा मङ्गल हो और द्वितीयस्थान शुभ दृष्ट हो तो कभी कभी दही घृत इत्यादि युक्त अन्न भोजन करने वाला होता है।

भार्ये वार्ये भामिनीशे कमांशे पाथःखेटालोकिते वा शुभांशे ।
सद्दृग्युक्ते भूतपस्थांशनाथे जातो जन्तुः क्षीरपानादिभाक् स्यात् ॥ २२८ ॥

सप्तम स्थान का स्वामी यदि चन्द्रमा वा गुरु हो और वह जलराशि में वा जलराशि के नवांश में हो तथा जल ग्रह से दृष्ट हो अथवा सप्तमेश के नवांश का स्वामी यदि शुभांश में हो और शुभ से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य दुग्धपानादि वाला होता है।

आग्नेये स्वान्तोत्थस्थे चेदेनाभियुक्ते तन्नाथे।
किं वा क्रूरव्योमाङ्गांशे सूपक्षीराज्याद्यैर्हीनः ॥ २२९ ॥

सप्तम में पाप ग्रह हो और सप्तमेश पाप युक्त हो वा क्रूरषष्ठ्यंश में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष दाल दूध घी इत्यादि से रहित अन्न भोजन करने वाला होता है।

वाणिज्य योगः—

वंशस्य सम्बन्धिनि बोधनाख्ये वाणिज्यशीलोऽथ लवे घटे वा
कर्केऽथ वा हेम्न उतारचान्द्रियोगे स वाणिज्यसमन्वितोऽङ्गी ॥ २३० ॥

दशम भाव में बुध का सम्बन्ध हो तो वाणिज्यशील होता है। कारकांश लग्न में तुला राशि हो वा कर्क राशि हो या बुध हो अथवा जन्म कुण्डली के किसी भी स्थान में मङ्गल तथा बुध का योग हो तो उक्तयोगों में उत्पन्न पुरुष वाणिज्य करने वाला होता है।

सप्तम गत रविफलः—

भार्यागृहे भास्वति पाणिपीडने विलम्बनं स्यात्परसुन्दरीरतः।
द्वेषी वधूनां द्विकलत्रवान्परदेशे प्रवेशः शरवर्गवत्सरे ॥ २३१ ॥

अभक्ष्यभक्षी च विनोदशीलभाङ् नाशान्तबुद्धिश्च कलत्रशात्रवः।
नीचारिभे पापयुतेक्षिते बहुभार्यो बलिष्ठे स्वभ एकदारवान् ॥ २३२ ॥

सप्तम में सूर्य हो तो विवाह में विलम्ब, पर स्त्री में लीन, स्त्रियों का द्वेषी, दो स्त्री वाला, २५ वें वर्ष में परदेश वास, अभक्ष्य भक्षण करने वाला, विनोदी स्वभाव, नाशान्तमति एवं स्त्री शत्रु वाला होता है। यदि वह सूर्य नीच राशि वा शत्रु राशि में हो या पाप ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो बहुत स्त्री वाला होता है। यदि वह सूर्य बली हो और स्वराशि में हो तो एक स्त्री वाला होता है।

सप्तम गत चन्द्र फलः—

चन्द्रोऽस्तगः कोमलभाषिणं नृपप्रसादलाभं रदतुल्यवत्सरे।
कलत्रवन्तं च कलत्रमूलतो ग्रन्थ्यस्त्रपीडायुजमङ्गनासु च ॥ २३३ ॥

लोलं तथा पार्श्वदृशं करोत्यथो स्वोच्चेऽखिलेन्दौ जन एकदारवान्।
स्याद्रोगवान् क्षीणविधौ वधूक्षयः पत्नीद्वयं भात्रपतौ बलान्विते ॥ २३४ ॥

सप्तम में चन्द्रमा हो तो कोमल वचन बोलने वाला, राज कृपा को पाने वाला, ३२ वें वर्ष में स्त्री युक्त स्त्री के कारण ग्रन्थी तथा शस्त्र जन्य पीड़ा युक्त, स्त्रियों के मध्य में चञ्चल एवं पार्श्व दृष्टि वाला करता है। यदि

वह चन्द्रमा पूर्ण हो और स्वोच्च राशि में हो तो एक स्त्री वाला और भोगों को भोगने वाला होता है। यदि वह क्षीण हो तो स्त्री का नाश होता है। एवं भावेश बली हो तो दो स्त्रियां होती हैं।

सप्तम गत भौम फल:—

क्रान्ताव्यथाऽसृजि मदे खलभे सपङ्के
नात्मीयमन्दिरगते यदि दारहानिः।
सौम्यद्युसद्युजि धवे सति जीवतीह
योषाजनस्य मरणं परदेशवासः॥ २३५॥

तथोच्चमित्रस्वगृहे ससौम्येऽथोग्रालये गर्हितदृग्वशाच्च।
कलत्रनाशो व्यभिचारचोरमूलेन योषान्तरभाक् छरीरी॥ २३६॥

तुर्याङ्घ्रिमैथुनयुतः कुवधूप्रसङ्गो
मद्यप्रियश्च भगचुम्बनभाक् समेते।
दृष्टे यमेन किमु मेहनचुम्बनाढ्यः
केत्वन्विते तु मलिनीमहिलाप्रसङ्गः॥ २३७॥

तत्र शात्रवसंयुक्ते विनाशो बहुयोषिताम्।
अहङ्कारी तथाऽवीरः शुभदृष्टे न दोषभाक्॥ २३८॥

सप्तम में भौम हो तो मनुष्य को स्त्री का कष्ट होता है। यदि वह पापराशि में हो वा पाप युक्त हो और स्वराशि में न होतो स्त्री की हानि होती है। यदि वह शुभ युक्त हो तो पति के जीवित रहने में स्त्री का मरण और परदेश वास होता है। एवं वह मङ्गल स्वोच्च राशि में स्वराशि में वा शुभ ग्रह से युक्त हो तो भी स्त्री की मृत्यु और पति जीवित रहे। यदि वह पापराशि में हो तथा पाप दृष्ट हो तो स्त्री की मृत्यु और व्यभिचार तथा चोर के कारण अन्य की स्त्री से सहवास करने वाला, चतुष्पद मैथुन वाला, निन्दित स्त्री के प्रसंग वाला मद्य पीने वाला एवं भगचुम्बन करने वाला होता है। यदि वह शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो मेहन चुम्बन वाला होता है। यदि वह केतु से युक्त हो तो रजोवती स्त्री से प्रसंग करने वाला होता है। यदि वह शत्रु ग्रह से युक्त हो तो बहुत स्त्रियों का नाश होता है। और वह अहंकार वाला एवं वीरत्व से रहित होता है। यदि वह शुभ दृष्ट हो तो उक्त दोष नहीं होता है।

सप्तम गत बुध फल:—

ज्ञेऽस्तेऽम्बिकासौख्ययुतो हयादिकारूढस्तथोदारमतिश्च धर्म्मवित्।
दिगन्तविश्रान्तयशा महीपतिपूज्यश्च तस्मिच्छुभखेचरान्विते॥ २३९॥

आन्दोलिकाप्तिर्जिनतुल्यवत्सरे कलत्रबुद्धिर्नुरभक्ष्यभक्षणः।
भावप्रभौ प्राणसमन्विते यदैकदारवान् दारगृहेशि दुर्बले॥ २४०॥

अघेऽघराशौ रुधिरादिसंयुते योषाजनानां प्रभवेद्विनाशनम्।
अरूपवत्कुष्ठयुतं कलत्रकं स्त्रीजातके भर्तृविनाश उच्यते॥ २४१॥

सप्तम में बुध हो तो मातृसुख से युक्त, अश्वादि वाहनों की सवारी, उदार बुद्धि, धर्मात्मा, चारों दिशाओं में फैली हुई कीर्ति वाला एवं राजा से सम्मानित होता है। यदि वह बुध शुभ ग्रह से युक्त हो तो २४ वें वर्ष में आन्दोलिका की प्राप्ति, स्त्री वृद्धि तथा अभक्ष्य भक्षण होता है। सप्तमेश बली हो तो एक स्त्री वाला होता है। यदि सप्तमेश पाप ग्रह हो, दुर्बल हो, पापराशि में हो तथा भौमादि यों से युक्त हों तो स्त्रियों का नाश अथवा रूपरहित कुष्ठ रोग युक्त स्त्री होती है। यदि उक्त योग स्त्री की जन्मकुण्डली में हो तो पति की मृत्यु कहे।

सप्तम गत गुरुफलः—

घुन इज्ये विद्यावान् पातिव्रत्यभक्तियुतकलत्रश्च।
स्मृत्यधिको ऽतिलाभदो विद्यार्थेड् भेप ऽबले युतदृष्टे ॥ २४२ ॥
कुजकोणकेतुभुजगैः स्त्र्यन्तरं सशुभे स्वभोच्चे स्त्रीतः।
अत्यर्थ्यैकदारवान् सुखी प्रतिष्ठाप्तिर्युगगुणवर्षे ॥ २४३ ॥

सप्तम में गुरु हो तो विद्यावान्, पतिव्रता स्त्री वाला, अधिकचिन्ता वाला, अतीव लाभ दायक एवं विद्या धन का स्वामी होता है। यदि भावेश निर्बल हो, मङ्गल शनि केतु वा राहु से युक्त वा दृष्ट हो तो अन्य स्त्री होती है। यदि वह भावेश शुभ युक्त हो स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो तो स्त्री के कारण बहुत धन वाला, एक स्त्री वाला सुखी एवं ३४ वें वर्ष में प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है।

सप्तम गत शुक्र फलः—

धिष्ण्ये ऽस्ते मुखचुम्बकः परवधूसक्तो ऽतिकामी धनी
स्त्रीद्वेषीह समग्रकार्यनिपुणः सद्दारबन्धुप्रभाक्।
सक्रूरे ऽशुभभे ऽरिनीचभवने भार्याद्वयं स्त्रीक्षयो
युक्ते चेद्बहुलैः खलैर्वितनयश्चानेकदारान्तरम् ॥ २४४ ॥
स्वर्क्षोच्चे सद्युते जूके दारदेशे ऽतिवित्तवान्।
योषागोष्ठी वधूमूलाद्बहुप्राबल्ययोगवान् ॥ २४५ ॥

सप्तम में शुक्र हो तो मुख को चूमने वाला, पराई स्त्री में लीन, अत्यन्तकामी, धनवान् स्त्रीजनों का द्वेषी समस्त कार्य में प्रवीण; उत्तम स्त्री बन्धु तथा प्रधान होता है। यदि वह शुक्र पाप युक्त हो पाप राशि में हो शत्रुराशि में हो वा नीचराशि में हो तो स्त्री का नाश और दो स्त्रियां होती हैं। यदि वह शुक्र बहुत पापों से युक्त हो तो पुत्र रहित एवं बहुत कलत्रान्तर होता है। यदि वह शुक्र स्वराशि में वा स्वोच्च राशि में हो वा तुला में हो और वह शुभ युक्त हो तो स्त्री के देश में अति धनी, स्त्रियों की सभा वाला एवं स्त्री के कारण बहुत प्रबल योग वाला होता है।

सप्तम गत शनि फलः—

यमे ऽस्ते कृशकलत्रस्तनुदोषकृद् गणिकासम्भोगी च।
अतिदुःखी स्वभोच्चगे ऽनेककान्तासम्भोगभाङ् मर्त्यः ॥ २४६ ॥

शिखियुते वधूभोगी सासृजि मेहनचुम्बनपरो भवेत्।
ससिते भगचुम्बनभाक् तथा परदारसम्भोगी जातः॥ २४७॥

सप्तम में शनि हो तो दुर्बल स्त्री वाला, शरीर दोष वाला, वेश्यागामी एवं अतीव दुःखी होता है। यदि वह शनि स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो तो अनेक स्त्रियों के सम्भोग वाला होता है। यदि वह केतु से युक्त हो तो वधू जनों का सम्भोग वाला भौम से युक्त हो तो लिङ्ग चुम्बन वाला, शुक्र से युक्त हो तो योनि चुम्बन वाला तथा पर स्त्री गामी होता है।

सप्तम गत राहु फलः—

मारे राहा आद्यपत्नीक्षयो द्वे भार्य्ये गुल्मव्याधियुक्ता द्वितीया।
गण्डोत्पात्तिः पापयुक्ते न सौम्ययुक्ते चेत्सद्युक्त एकं कलत्रम्॥ २४८॥

सप्तम में राहु हो तो दो स्त्रियां प्रथम स्त्री की मृत्यु और द्वितीय स्त्री गुल्मरोग युक्त होती है। यदि वह पाप युक्त हो और शुभ युक्त न हो तो स्त्री के लिये अरिष्टप्रद होता है। यदि वह शुभ हो तो एक स्त्री वाला होता है।

सप्तम गत केतु फलः—

गुदे द्युने दुष्टकलत्रयुक्तस्तत्सौख्यहीनो विधनो विशीलः।
चिन्ताऽध्वनोऽज्ञो यदि कीटभस्थे तत्रार्थकारी यदितो ग्रहज्ञैः॥ २४९॥

सप्तम में केतु हो तो दुष्ट स्त्री से युक्त तथा स्त्री के सौख्य से रहित; निर्धन, शील रहित, मार्ग की चिन्ता तथा मूर्ख होता है। यदि वह केतु वृश्चिक राशि में हो तो धन दायक होता है।

प्रकारान्तर से सप्तम गत राहु तथा केतु फलः—

सागुध्वजे स्त्रीभवने न्यसक्तोग्रालोकिते पङ्करता कुशीला।
क्रूरांशके स्वामिविषप्रदा स्त्री जनापवादान्वितकर्कशा स्यात्॥ २५०॥

सप्तम में राहु वा केतु हो तो स्त्री पर पुरुष में आसक्त होती है। यदि वह पाप दृष्ट हो तो पाप परायण तथा दुष्ट शील वाली स्त्री होती है। एवं वह क्रूरांशक में हो तो स्वामी को विष देने वाली, जनापवाद से युक्त एवं कर्कशा होती है।

सप्तम गत रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

वामाभगो विद् घनहायनेऽङ्गनालब्धिं करोतीन्द्रगुरुर्भगोन्मिते।
जातिप्रमे वा प्रददाति योषितं वामासुखं वासववत्सरे भृगुः॥ २५१॥

राजाऽतिदुःखं दिनहायने रविः स्त्रीहृद् वृषाब्देऽब्धिगुणप्रमेऽथ वा।
स्त्रीहानिदा द्यूतगताः शिखीनजभूभुजङ्गा नगरामवत्सरे॥ २५२॥

सप्तम में बुध हो तो १७ वें वर्ष में स्त्री की प्राप्ति, गुरु हो तो १२ वें वर्ष में अथवा २२ वें वर्ष में स्त्री को देता है। शुक्र हो तो १४ वें वर्ष में स्त्री का सुख चन्द्रमा हो तो १५ वें वर्ष में अत्यन्त दुःख, सूर्य हो तो १४ वें वर्ष में वा ३४ वें वर्ष में स्त्री की हानि एवं केतु, शनि, भौम तथा राहु हों तो ३७ वें वर्ष में स्त्री की हानि को करते है।

रवि दृष्ट सप्तम भाव फलः—

पश्येत्त्विषीः पतिगृहं वनिताविनाशं
वैरिव्यथां प्रकुरुते यदि पाण्डुराङ्गम्।
कामक्षयं समददन्तितुरङ्गयुक्तं
जातं स्वबान्धवजनैश्च विराजमानम्॥ २५३॥

सप्तम स्थान को सूर्य देखता हो तो स्त्री का नाश, शत्रु ओं से पीडा, पाण्डुर (पीतवर्णयुक्त श्वेतवर्ण) देह, काम का नाश, मद युक्त हाथी तथा घोडों से युक्त एवं बान्धवजनों से सुशोभित करता है।

चन्द्र दृष्ट सप्तम भाव फलः—

पीयूषद्युतिरीक्षते रतिपतिं पुंसो विधत्ते वधूं
दुःशीलां गुणशालिनीं सुनिपुणामन्यापवादान्विताम्।
लौल्येन द्विपगामिनीं यदि भवे सौन्दर्य्यभाग्यौ धन—
पुञ्जाढ्यः कमनीयमूर्त्तिरथवा वक्ता विवादे स ना॥ २५४॥

सप्तम भाव को चन्द्रमा देखता हो तो उस पुरुष की स्त्री कुत्सित स्वभाव वाली, गुणवती, प्रवीण, चञ्चलता के कारण पराये अपवाद से युक्त, हाथी के समान गति वाली तथा स्त्री को सुन्दर रूपवती करता है। एवं वह पुरुष धन के समूह से युक्त मनोहर शरीर और विवाद में बोलने वाला होता है।

भौम दृष्ट सप्तम भाव फलः—

जायाहीनः कुबुद्धिः कुटिलतनुजनुर्नीतिमार्गेण हीनो
दृष्ट्या क्रूरश्च पङ्गुः पवनगदयुतः पापभूयस्त्वधीरः।
सव्याधिर्बस्तिदेशे प्रभवति गमने प्राज्यभीतिर्विवादः
स्त्रीतश्चौरोऽतिलुब्धोऽस्य परजनरतिर्भूकुमारेक्षितेऽस्ते॥ २५५॥

सप्तम भाव यदि भौम से दृष्ट हो तो स्त्री से रहित, निन्दित बुद्धि, दुष्ट पुत्र, नीति हीन, दृष्टि से क्रूर, पङ्गु वात रोगी, अतिपापी, धैर्यरहित, बस्तिप्रदेश में रोग युक्त, यात्रा में भय स्त्री से विवाद, चौर, अति लोभी और अन्य लोगों से प्रीति करने वाला होता है।

बुध दृष्ट सप्तम भाव फलः—

श्रीमानहृद्युवतिसौख्ययुगद्भुताङ्गो
धान्यार्थभोगसहितश्च कलाधिशाली।

जीवेन्नरश्चिरतरं मतिमद्धुरेण्यो-
ऽस्ते ज्ञेक्षिते बुधसमश्च महानुभावः ॥ २५६ ॥

सप्तम भाव यदि बुध से दृष्ट हो तो स्त्रीजनों के मान का हरण करने वाला, युवतियों के सुख से युक्त, अद्भुत शरीर; धान्य, द्रव्य तथा भोग युक्त, कलावान् दीर्घजीवी, बुद्धिमानों में अग्रगण्य, बुध ग्रह के समान कान्ति वाला एवं महानुभाव होता है।

गुरु दृष्ट सप्तम भाव फलः—

आचार्य्येणेक्षितेऽस्ते युवतिसुखयुतोऽर्थेन धर्म्मेण युक्तो
व्यापारेणैव लाभोऽस्य तदनु महती स्यात्प्रतिष्ठा नरस्य ।
मर्त्त्यश्रेष्ठो वरेण्यस्तनुजसुखयुतो धन्य उर्वीतले स
वीरो मानी च दानी विभुरिह जननेऽन्योपकारी विनोदी ॥ २५७ ॥

सप्तम भाव यदि गुरु से दृष्ट हो तो स्त्रीसुख से युक्त, धन तथा धर्म से युक्त, व्यापार से लाभ, महती प्रतिष्ठा, मनुष्यों में श्रेष्ठ, प्रधान, पुत्र सुख से युक्त, भूतल में भाग्यवान्, शूर वीर, सम्मानित, दाता, शक्तिमान् पराया उपकार करने वाला एवं विनोद शील होता है।

शुक्र दृष्ट सप्तम भाव फलः—

भेनेक्षितेऽस्तभवने नरनाथमान्यो
जातः कलत्रसुतसौख्ययुतो मनोज्ञः ।
शुक्रोपमो लघुबली सशुभे सशातो
व्यापारतो बहुसुखं विमला मनीषा ॥ २५८ ॥

सप्तम भाव यदि शुक्र से दृष्ट हो तो राजा से सम्मानित, स्त्री तथा पुत्रों के सौख्य से युक्त, सुन्दर शरीर, शुक्र के समान कान्ति एवं अल्प बली होता है। यदि वह शुभ युक्त हो तो सुख से युक्त एवं व्यापार से बहुत सुख तथा निर्मल बुद्धि होती है।

शनि दृष्ट सप्तम भाव फलः—

आदित्यात्मजलोकिते मनसिजे पाण्डुव्यथा विग्रहे
स्त्रीनाशो ग्रहणीविकारयुगिहातीसारजूर्त्यर्दितः ।
क्रूरः स्यान्मनुजः कठोरहृदयो भार्य्याविरोधी दया-
हीनः स्वीयजनानुरोधसहितो नीचाश्रयो दीप्तिमान् ॥ २५९ ॥

सप्तम भाव यदि शनि से दृष्ट हो तो शरीर में पाण्डु रोग, स्त्री का नाश, संग्रहणी रोग से युक्त, अतिसार तथा ज्वर से पीडित, क्रूर स्वभाव, कठोर हृदय, स्त्री का विरोधी, दया रहित, परिजनों के अनुरोध वाला, नीचजनों के आश्रयवाला एवं कान्तिमान् होता है।

राहु दृष्ट सप्तम भावफलः—

साधयेन्मनुभवो निजवाचं भर्तृभे भुजगनायकदृष्टे ।
मानवस्य मदवृद्धिरिहास्य मृत्युमेति महिलाऽहिदशायाम् ॥ २६० ॥

सप्तम भाव राहु से दृष्ट हो तो अपनी वाणी को अपने अधिकार में रखने वाला, मद की वृद्धि एवं राहु की दशा में उस की स्त्री मृत्यु को प्राप्त होती है ।

सप्तमेश रविफलः—

अर्केऽस्तपेऽङ्गपहिते सबले सदंश-
राशौ सदीक्षितयुते धवभक्तियुक्ता ।
तस्मिन् खलाम्बरचरेक्षितसंयुते ऽस-
द्राश्यंशके भवति पापपरायणा स्त्री ॥ २६१ ॥

सप्तमेश सूर्य यदि लग्नेश का मित्र हो, बलवान् हो, शुभ ग्रहों के नवांश में वा राशि में हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की स्त्री पति भक्ति से युक्त होती है । यदि वह पाप ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तथा पाप राशि में वा पापांश में हो तो उस पुरुष की स्त्री पापपरायणा होती है ।

सप्तमेश चन्द्र फलः—

स्त्रीशे विधौ मृदुलवे हिततुङ्गभे सद्-
भांशे वधूः सुकृतशीलचरित्रयुक्ता ।
तस्मिन्नघेक्षितयुते खलमध्यगेऽसद्-
भागे कुमार्गनिरता कठिनापराधा ॥ २६२ ॥

सप्तमेश चन्द्रमा यदि मृदुषष्ठ्यंश में हो मित्र राशि उच्च राशि शुभ ग्रह की राशि वा नवांश में हो उस पुरुष की स्त्री पुण्यशील एवं चारित्र युक्त होती है । यदि सप्तमेश चन्द्र पाप युक्त दृष्ट हो पाप ग्रहों के अन्तराल में हो वा पापांश में हो तो उस की स्त्री निन्दित मार्ग में तत्पर तथा कठोर अपराध वाली होती है ।

सबल सप्तमेश भौम फलः—

अङ्गारकेऽनङ्गपतौ सवीर्ये पारावतादौ हिततुङ्गवर्गे ।
सद्दृष्टयुक्ते प्रमदाऽपि दुष्टा स्वस्वामिनो मार्गगुणान्विता स्यात् ॥ २६३ ॥

सप्तमेश भौम यदि बली हो, पारावतादि शुभ वर्ग में हो मित्र वा उच्च राशि के वर्ग में हो तथा शुभ ग्रह से दृष्ट युक्त हो तो दुष्ट स्त्री भी अपनी पति के मार्ग तथा गुण से युक्त होती है ।

निर्बल सप्तमेश भौम फलः—

अनङ्गनाथे कुटिले बलोने क्रूराभ्रषड्भागगतेऽरिराशौ ।
नीचे विमूढे रिपुरन्ध्रभेऽन्यरता च दुष्टा धवकर्कशा स्त्री ॥ २६४ ॥

सप्तमेश भौम यदि निर्बल हो क्रूरषष्ठ्यंश में हो, शत्रु राशि में हो, नीच राशि में हो, अस्तंगत हो एवं षष्ठ वा अष्टम में हों तो उस की स्त्री अन्यपुरुष में निरत, दुष्टा एवं पति के लिए कर्कश, स्वभाव वाली होती है।

सबल सप्तमेश बुध फलः—

जामित्रपे ज्ञे सखितुङ्गवर्गे सहःसमेते यदि गोपुरांशे ।
सुशीलधर्म्मात्मजसौख्ययुक्ता व्रतादिभिः शुद्धतनुर्वधूः स्यात् ॥ २६५ ॥

सप्तमेश बुध यदि मित्र वा उच्च राशि के वर्ग मे हो, बल से युक्त हो एवं गोपुरांश में हो तो मनुष्य की स्त्री सुशील, धर्म, पुत्र तथा सौख्य युक्त और व्रतादि से शुद्ध शरीर वाली होती है।

निर्बल सप्तमेश बुध फलः—

नितम्बिनीशे विदि मूढनीचप्रत्यर्थिभे किल्बिषयुक्तदृष्टे ।
क्रूरान्तरे वैरिणि नैधने वा स्याद्वंशहंत्री वनिता धवघ्नी ॥ २६६ ॥

सप्तमेश बुध यदि अस्तंगत हो नीच राशि में वा शत्रु राशि में हो पाप ग्रह से युक्त दृष्ट हो वा पाप ग्रहों के अन्तराल में हो एवं षष्ठ वा अष्टम में हो तो मनुष्य की स्त्री वंश तथा पति का नाश करने वाली होती है।

सबल सप्तमेश शुक्र फलः—

सिते स्मरेशे सबले सदंशे सख्युच्चवर्गे सशुभे स्वगेहे ।
मृद्वंशके पुत्रगुणैरुपेता वाचालिका स्याज्जनितस्य जाया ॥ २६७ ॥

सप्तमेश शुक्र यदि बली हो शुभांशक में हों मित्र वर्ग वा उच्च वर्ग में हो शुभ ग्रह से युक्त हो स्वराशि में हों वा मृद्वंशक में हो तो मनुष्य की स्त्री पुत्र तथा गुणों से युक्त एवं बहुत बोलने वाली होती है।

निर्बल सप्तमेश शुक्र फलः—

मनोभवेशे सित उग्रयुक्ते नीचान्विते नीचगृहे विमूढे ।
असौम्यषष्ठ्यंशगतेऽस्य कान्ता वेश्यासमाना कठिना च चौरा ॥ २६८ ॥

सप्तमेश शुक्र यदि पाप युक्त हो नीच राशि गत ग्रह से युक्त हो नीच राशि में हो अस्तंगत हो वा क्रूर-षष्ठ्यंश में हो तो उस मनुष्य की स्त्री वेश्या के समान, कठोर स्वभाववाली तथा चोर होती है।

सबल सप्तमेश शनि फलः—

कृष्णेऽस्तपे प्राणिनि शोभनेक्षिते भार्या भवेद्धर्म्मसुशीलसंयुता ।
दृष्टे सुरेज्येन परोपकारिणी स्याद् ब्रह्मवादद्विजदेवसेविका ॥ २६९ ॥

सप्तामेश शनि यदि बली हो तथा शुभ दृष्ट हों तो मनुष्य की स्त्री धर्म तथा उत्तम स्वभाव से युक्त होती है। यदि गुरु से दृष्ट हो तो परोपकार वाली, ब्रह्मवादिनी, ब्राह्मण तथा देवताओं की सेवा करने वाली होती है।

निर्बल सप्तमेश शनि फलः—

अनन्यजागारपतौ शनैश्चरे निरीक्ष्यमाणे सहिते यदैनसा ।
नीचारिभे नीचखलांशके जरातिक्रूरभावा कुलदूषणाऽबला ॥ २७० ॥

सप्तमेश शनि यदि पाप ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो नीच राशि में हों शत्रु राशि में हो नीचांश में वा पापांश में हो तो उस मनुष्य की स्त्री वृद्धा, अति क्रूर स्वभाव वाली एवं अपने कुलपर कलङ्क लगाने वाली होती है ।

लग्नगत सप्तमेश फलः—

द्यूनाधीशे देहगे रूपयुक्तस्तोकस्नेहान्यस्त्रियां भोगभुक्ता ।
जातः स्त्रीषूत्कण्ठितो वैरिजित्कोऽदभ्रस्त्रीतो नो सुखी विव्ययः स्यात् ॥ २७१ ॥
भूपो घृणी प्रतापी च मानार्थात्मजसौख्यभाक् ।
जितेन्द्रियो दृढाङ्गश्च कान्तादलितमानसः ॥ २७२ ॥

लग्न में सप्तमेश हो तो रूप युक्त, अल्पस्नेह वाला, पराई स्त्री में भोग भोगनेवाला, स्त्रियों के मध्य में कामादि से उत्पन्न स्त्री वाला, शत्रु के जीतनेवाला, बहुत स्त्रियों से सुख रहित, विशेष व्यय वाला, भूमिका स्वामी, दयावान्, प्रतापी, मान, धन तथा पुत्रों के सौख्य वाला, इन्द्रियों का दमन करनेवाला, दृढशरीर एवं स्त्री जनों से दलित हृदय वाला होता है ।

मूर्त्तौ मदे मदपतौ परकामिनीषु
स्याल्लम्पटः परुषवाग् भयनाशकर्त्ता ।
दुष्टः समीरगदयुग् हृदि कापि वार्त्ता
न स्थीयते परिवृढो नगरस्य विद्वान् ॥ २७३ ॥

लग्न वा सप्तम में सप्तमेश हो तो परस्त्रियों में व्यभिचारी, निष्ठुर वचन वाला, भयनाश करनेवाला, दुष्ट-स्वभाव, वात रोगी और उस के हृदय में किसी की बात स्थिर न रहे। एवं पुर का स्वामी और पण्डित होता है ।

धनगत सप्तमेश फलः—

भामिनीभवनाधीशे भुक्तिभावमुपाश्रिते ।
परहृज्ज्ञो वितीर्णार्थोद्यमचञ्चलमानसः ॥ २७४ ॥

क्षोणीप्राप्तधनः स्वतातसहितः सून्वङ्गनासौख्यभाक्
कीर्त्याढ्यः द्रविणं वधूजनकृतं कान्ताविसङ्गः खले ।
दुष्टा पुत्रविवर्जिताऽस्य गृहिणी वित्तान्विता दर्पतः
स्वेद्वाचं नहि मन्यते मतिमती सौख्यच्युता सा स्वयम् ॥ २७५ ॥

धन में सप्तमेश हो तो अन्यों के हृदय का वेत्ता, धन देनेवाला, उद्यम से चञ्चल हृदय, भूमि से धन लाभ वाला, पिता से युक्त, पुत्र तथा स्त्री सुख वाला, कीर्त्तिमान्, स्त्री से धन लाभ एवं स्त्री के सङ्ग से रहित

होता है। यदि भावेश पाप हो तो उस की स्त्री दुष्ट, पुत्र रहित, धन से युक्त, अहङ्कार से पति के वचन को न मानने वाली, बुद्धिमती और वह स्वयं सौख्य रहित होती है।

सहज गत सप्तमेश फलः—

शौर्य्येऽस्तपे गौरवपुश्चिरायुर्विवेकयुग् दीनजनोपकर्त्ता।
स्याच्छून्यवादी हृदयो विलोलः शुचिः सकामो युवतिप्रियश्च ॥ २७६ ॥

दुःखी स्वयं चात्मबलः स्वबन्धुप्रियोऽथ पापे खचरेऽस्य कान्ता।
सुरूपयुक्ता निजदेवरस्य गृहङ्गता वा सखिसद्मयाता ॥ २७७ ॥

तृतीय में सप्तमेश हो तो गौर शरीर, दीर्घायु, विवेकी, दीन मनुष्यों का उपकार करने वाला, शून्य वादी, चञ्चल हृदय, पवित्र, कामी, स्त्रीजनों का प्रिय, दुःखी, स्वयं आत्मबल वाला एवं अपने बंधु जनों का प्रिय होता है। यदि सप्तमेश पाप ग्रह हो तो उस की स्त्री रूपवती, अपने देवर के घर में वा अपने मित्र के घर में वास करने वाली होती है।

श्रवोनिशान्ते किमवाप्तिवेश्मनि नारीगृहेशे मृतनन्दनो जनः।
जीवेत्कदाचित्तनया किमन्यजः सुतः सुताप्तिः किमुतौषधादितः ॥ २७८ ॥

तृतीय वा लाभ में सप्तमेश हो तो वह मनुष्य मृतपुत्र वाला होता है। कदाचित् (सायद) पुत्री जीवित रहे। अथवा जार से पुत्र प्राप्ति वा औषधादि से पुत्र की प्राप्ति होती है।

सुख गत सप्तमेश फलः—

सौख्ये सप्तमपे विवेकसहितो मित्रप्रियो युग्ययुक्
कृष्यादेर्विगतार्थवान्निजवधूसम्पालितश्चालसः।
अम्बासौख्ययुतस्तथातिबलवाञ्जातः सुभीरुर्नरः
केचिद्धीरजना वदन्ति पिशुनः स्नेहीति वा चञ्चलः ॥ २७९ ॥

दुर्वाक्यो जनकस्तस्य तद्वधूं पालयेच्च सः।
तातवैरकरोऽवीर्य्यः पतिवाक्ययुताऽङ्गना ॥ २८० ॥

सुख में सप्तमेश हो तो विवेकी, मित्रजनों का प्रिय, वाहन वाला, कृषि प्रभृति से धन हानि वाला, स्त्रीजन से पालन किया जानेवाला, आलसी, माता के सुख से युक्त, अति बली तथा अति कायर होता है। एवं दुर्जन, स्नेह वाला और चञ्चल हृदय वाला होता है। इस प्रकार कोई आचार्य कहते हैं। उस का पिता दुष्टवचन वाला और वह उस की स्त्री का पालन करने वाला होता है। एवं वह पिता से वैर करने वाला, निर्बल और उस की स्त्री पति के वचन को मानने वाली होती है।

यामित्रनाथे हिबुकेऽम्बरेऽथ वा धीमान् रदव्याधियुतश्च केवलम्।
स्यात्सत्यवादी निजधर्म्मपालकः पतिव्रता तस्य कुरङ्गलोचना ॥ २८१ ॥

सुख वा दशम में सप्तमेश हो तो बुद्धिमान्, केवल दन्तरोग से युक्त, सत्य बोलने वाला अपने धर्म का पालन करने वाला और उस की स्त्री पतिव्रता होती है।

सुत गत सप्तमेश फलः—

मतौ मदेशे परकामिनीजनगताभिलाषश्च दयार्द्रमानसः।
पुष्टा प्रतिष्ठा मनुजैरिहोत्तमैर्मानी मनस्वी शुभदैवसंयुतः॥ २८२॥

सत्प्रीतिसत्पुत्रविभूतिमान् समैर्गुणैः समेतो निजनायकान्वितः।
सर्वार्थनाथः प्रियसाहसः सुखयुक् तत्सुतस्तद्रमणीं च पालयेत्॥ २८३॥

सौभाग्यसौख्यसहितो दुष्टधीः प्रियया सह।
खलैर्दुष्टवधः पुत्रैर्युक्तः स्त्रीपालको भवेत्॥ २८४॥

पञ्चम में सप्तमेश हो तो पराई स्त्रियों से अभिलाषा रहित, दया से आर्द्र हृदय, उत्तम मनुष्यों से अधिक प्रतिष्ठा वाला, सम्मानित, मन माने कार्य करने वाला, ऊत्तम भाग्य युक्त, उत्तम प्रीति, उत्तम पुत्र तथा ऐश्वर्य वाला, समस्त गुणों से युक्त, अपनी नायिका से युक्त समस्त अर्थों का स्वामी, साहसी, सुखी और उस का पुत्र उस की स्त्री का पालन करता है। एवं सौभाग्य तथा सौख्य से युक्त और स्त्री के साथ दुष्ट बुद्धि होती है। यदि सप्तम में पाप सम्बन्ध हो तो दुष्ट तथा हिंसा करने वाला, पुत्रों से युक्त और स्त्री का पालन करने वाला होता है।

षष्ठ गत सप्तमेश फलः—

प्रद्युम्नपेऽरौ निजदार वैरो मन्दानलः साध्वसतप्तचेताः।
अनिष्टकर्म्मा शुभभोगहीनः परोपकृन्निर्विभवः प्रजातः॥ २८५॥

सरोगयोषो निजकामिनीजनसङ्गात्क्षयी ना विपदां निषेवकः।
चिरं वपू रम्यतरं वधूप्रियो गतायुरुग्रैः क्षयरोगभाक् तथा॥ २८६॥

षष्ठ में सप्तमेश हो तो अपनी स्त्री से वैर, मन्दाग्नि वाला भय से सन्तप्त हृदयवाला अनिष्ट कर्म वाला, उत्तम भोग रहित, पराया उपकार करने वाला, ऐश्वर्य रहित, रोग युक्त स्त्री वाला, अपनी स्त्री के प्रसङ्ग से क्षय रोग वाला, चिरकाल पर्यन्त विपत्तियों का भोगने वाला, अति सुन्दरशरीरवाला, स्त्री का प्रिय एवं अल्पायु वाला होता है। यदि सप्तमेश पाप हो तो क्षय रोग वाला होता है।

निमीलनेऽरौ मकरध्वजाधिपे रुग्णः सदा रोषयुतः स्मरार्त्तकः।
वित्तक्षयो वारवधूजनैः क्वचित्स्वप्नेऽपि सौख्यं लभते न मानुषः॥ २८७॥

अष्टम वा षष्ठ में सप्तमेश होतो नित्य रोगी, क्रोध युक्त, कामपीडित, वेश्याओं से धन हानि एवं वह मनुष्य कभी स्वप्न में भी सुख नहीं पाता है।

सप्तम गत सप्तमेश फलः—

कन्दर्पपेऽस्ते रिपुयुङ् महौजाः प्राप्तीश आनन्दयुतो मनीषी।
सौभाग्ययुग् वीतसपत्नसंघः कामीतकामः सुभगः सुखाढ्यः॥ २८८॥

तथा परद्रव्ययुतः पराङ्गनागामी समज्ञासहितोऽतिशीलवान् ।
महोयुतो निष्ठुरवाग्विवर्जितो सुहृत्सलो निर्मलशीलयुग्विरुक् ॥ २८९ ॥

सप्तम में सप्तमेश हो तो शत्रु युक्त, महाबली लब्धि का स्वामी, आनन्द से युक्त, पण्डित, सौभाग्य युक्त, शत्रुगण रहित, कामी इच्छा रहित, सज्जन, सुखी, परधन से युक्त, परस्त्री गमन करने वाला, यशस्वी, अतिशीलवान, तेजस्वी, मधुर वचन भाषी, प्रीतिवत्सल, निर्मल शील एवं आरोग्य होता है।

अष्टम गत सप्तमेश फल:—

मारेशे मरणे सदा स्मृतियुतो भूप प्रियः सद्वचा
दारिद्रोपहतार्थवान्निविडरुक्सन्तप्तदेहो रणे ।
शूरोऽसौ विगताभिलाष इह ना सच्छीलसत्कीर्तियुग्
वेश्यासक्तमनाः करग्रहवियुक् स्त्रीणां न सेवाकरः ॥ २९० ॥

किं वा मृताङ्गनो दुःखी कलिकृत्स्त्रीसुखोज्झितः ।
आम्नायद्वितयासक्तः स्वस्त्रिया न समागमः ॥ २९१ ॥

अष्टम में सप्तमेश हो तो नित्य चिन्ता युक्त, राजा का प्रिय, उत्तम वचन वाला, दरिद्रसे धन हानि वाला, निबिड (सान्द्र घन वा बहुत) रोगोंसे सन्तप्त शरीर, सङ्ग्राम में शूर वीर अभिलाष रहित, उत्तम शील, उत्तम कीर्ति युक्त, वेश्या में लीन, विवाह रहित, स्त्रियों की सेवा न करने वाला अथवा मृतभार्य दुःखी, कलह करने वाला, स्त्रीसुख से रहित, वेदाभ्यास वाला अन्य स्त्री में आसक्त और अपनी स्त्री से सहवास न करने वाला होता है।

भाग्य गत सप्तमेश फल:—

शस्तेऽस्तपे वामविलोचनारताभिलाषहीनो जितशात्रवव्रजः ।
सत्तीर्थयात्रागमनोत्सुकोऽलसो दीनो मनस्वी सुधनः सुपुण्यकृत् ॥ २९२ ॥
तेजःप्रयुक्तः सति शीलवान्नरः पाप्मग्रहेन्द्रे प्रभवेन्नपुंसकः ।
विरोधकृत्स्वाङ्गनया समं पुराधिराजदृष्टे प्रबलो नये सदा ॥ २९३ ॥

नवम में सप्तमेश हो तो स्त्री सम्भोग की अभिलाषासे रहित, शत्रुसमूह को जीतने वाला, उत्तम तीर्थयात्रा करने में तत्पर, आलसी, दीन स्वभाव, मनमाने कार्य करनेवाला, अति धनी, उत्तम पुण्य करने वाला एवं तेजस्वी होता है। यदि सप्तमेश शुभ ग्रह हो तो शीलवाला और सप्तमेश पाप ग्रह हो तो नपुंसक तथा अपनी स्त्री के साथ विरोध करने वाला होता है। यदि सप्तमेश लग्नेश से दृष्ट हो तो न्याय में प्रबल होता है।

दशम गत सप्तमेश फल:—

मानेऽस्तपे कपटयुग् हृदयाभिरामो
लोलः खलः कुवचनो नृपलब्धवित्तः ।

उद्यानतः कृषिकृतेरतिवित्तयुक्तो
गोवाहपूर्वसुखितो नरनाथदोषी ॥ २९४ ॥

क्रूरस्तथा लम्पट उग्रखेटे दुष्टः प्रसिद्धः श्वशुरो वधूस्तु ।
श्वश्रूवशे ऽरेर्वशगः सदुःखो नो हर्षकृद्दारजनेषु जातः ॥ २९५ ॥

दशम मे सप्तमेश हो तो कपटी हृदय के लिए आनन्ददायक, चञ्चल, दुर्जन, निन्दित वचनवाला, राजा से धन पानेवाला, उद्यान तथा कृषि क्रिया से अति धनी, गौ तथा घोडे इत्यादि से सुखी, राजा का दोषी, क्रूरस्वभाव एवं व्यभिचारी होता है। सप्तमेश पाप ग्रह हो तो उसका श्वशुर दुष्ट तथा प्रसिद्ध और बहू सास के वश में होती है। एवं वह मनुष्य शत्रुओं का वशीभूत, दुःखित और स्त्रीजनों से प्रीति न करने वाला होता है।

लाभ गत सप्तमेश फलः—

अन्यन्यजेशे भवगे विवेकी कलाप्रवीणः सुकवित्वबुद्धिः ।
सद्धीः सुवृत्तः सुकृते मनीषः सद्रत्नवासोऽङ्गजपूरितः स्यात् ॥ २९६ ॥

विवाहिता तद्दयिता सुशीलिनी भक्ता प्रियस्यानुचरी सुरूपिणी ।
तुर्य्यांघ्रिबुद्धिः कलया सती पितृसन्देहयुक्ता प्रसवे मृतिं लभेत् ॥ २९६ ॥

लाभ में सप्तमेश हो तो विवेकवाला, कला ओं में चतुर, सुन्दर कवित्व बुद्धि, उत्तमबुद्धि, सुन्दर चरित्र, पुण्य कार्य में बुद्धिमान् एवं उत्तम रत्न, वस्त्र तथा पुत्रों से परिपूर्ण और उसकी स्त्री विवाहिता, सुशीलिनी, पति-भक्ता पति की अनुगामिनी, रुपवती, कला से पशु बुद्धि, पतिव्रता, पिता में सन्देह करने वाली एवं प्रसव काल में मृत्यु को प्राप्त होती है।

व्यय गत सप्तमेश फलः—

दाराधिपे द्वादशधाम्नि नीचधीर्बहुव्ययः सद्विषयान्तरार्थभाक् ।
अपारिवर्गोऽरिजितार्थकोंऽशुकवृत्तिर्दरिद्रः कृपणोऽस्य सद्वधूः ॥ २९८ ॥

नम्रा खले चौरसुता तथा गृहबन्धूज्झिता लौल्यवती बहुव्यया ।
दरिद्रयुक्ता कटुभाषिणी सदा दुष्टाऽस्य पुंसः प्रचलेद्धि दूरतः ॥ २९९ ॥

व्यय में सप्तमेश हो तो नीच बुद्धि बहुत व्यय वाला, उत्तम देशान्तर में धनवाला, शत्रु वर्ग का नाश करने वाला, शत्रु से विजित धन वाला, वस्त्र का व्यवसाय करने वाला, दरिद्र, कृपण और उसकी स्त्री उत्तम तथा विनम्र स्वभाव वाली होती है। यदि सप्तमेश पाप ग्रह हो तो उसकी स्त्री चोर की कन्या; गृह तथा बान्धव रहित चञ्चल स्वभाववाली बहुत व्ययवाली दरिद्र युक्त, नित्य कटुवचन बोलनेवाली, दुष्ट एवं उस पुरुष से दूर चले जाने वाली होती हैं।

सप्तम गत मेष फलः—

पत्नीनिशान्ते प्रथमाभिधाने जनुष्मतो वामविलोचना स्यात् ।
धनप्रिया स्वार्थपरा नृशंसा क्रूरा च लोला कठिनाऽघरक्ता ॥ ३०० ॥

सप्तम में मेष हो तो उस पुरुष की स्त्री धन में प्रीति रखने वाली, स्वार्थपरायणा, घातक, क्रूरस्वभाव, चञ्चल प्रकृति, कठोर हृदय एवं पाप में आसक्त होती है।

सप्तम गत वृष फल:--

अनन्यजस्थे वृषभे सुदन्ता जाया प्रशान्ता प्रणता सुरूपा ।
पतिव्रताऽऽचारगुणैरुपेता ह्रीसंयुता निर्जरविप्रभक्ता ॥ ३०१ ॥

सप्तम में वृष हो तो उस मनुष्य की स्त्री सुन्दर दांत वाली, शान्त, विनम्र रूपवती पतिव्रता आचार तथा गुणों से युक्त, लज्जावती एवं देवता तथा ब्राह्मणों की भक्त होती है।

सप्तम गत मिथुन फल:--

नारीनिकेते नरयुग्मराशौ नरस्य कान्ता सधना सुवृत्ता ।
गुणैः समस्तैः सहिता समूहहीना सुरूपा च नवीनवेषा ॥ ३०२ ॥

सप्तम में मिथुन हो तो मनुष्य की स्त्री धनवती, उत्तम चरित्र वाली समस्त गुणवती, संघरहित रूपवती एवं नवीन वेष वाली होती।

सप्तम गत कर्क फल:--

कुलीरराशौ मकराङ्कितस्थे भवन्ति कान्ताश्च कलङ्कहीनाः ।
सौम्या गुणाढ्याः सुभगाः सुरम्याः सुसम्मता देहभृतां सदैव ॥ ३०३ ॥

सप्तम में कर्क हो तो मनुष्यों की स्त्रियां नित्य कलङ्क रहित, सौम्य स्वभाव, गुणवती सौभाग्यवती, अतीव सुन्दर शरीर वाली एवं अत्यन्त सम्मत होती है।

सप्तम गत सिंह फल:--

मृगेन्द्रभेऽस्ते चपला कृशार्थप्रिया सुदुष्टा परगेहरक्ता ।
स्वल्पात्मजा बह्वशना विहीनवेषाऽङ्गना वक्ररवा सुतीव्रा ॥ ३०४ ॥

सप्तम में सिंह हो तो मनुष्य की स्त्री चञ्चल, दुर्बल, धनप्रिय अति दुष्ट, पराये घर में वास करने वाली, अल्प पुत्र वाली बहुत खाने वाली हीनवेष वाली, टेढे शब्द वाली एवं अतितीक्ष्ण स्वभाव वाली होती है।

सप्तम गत कन्या फल:--

कन्यात्मके कामभवे सुतोज्झिताः सौभाग्ययुक्ताः सनयाः प्रियंवदाः ।
भोगार्थयुक्ताः शुभरूपविग्रहाः कान्ताः प्रगल्भा इह सत्यसंयुताः ॥ ३०५ ॥

सप्तम में कन्या हो तो मनुष्यों की स्त्रियां पुत्र रहित, सौभाग्य तथा नीति युक्त, प्रियवचन बोलने वाली, भोग तथा अर्थ से युक्त, उत्तम रूप शरीर वाली, धृष्ट एवं सत्य युक्त होती है।

सप्तम गत तुला राशि फल:—

पुंसो जनौ तौलिनि मीनकेतने ख्याता विनीता बहुनन्दनैर्युता ।
पुण्यान्विता गर्वितविग्रहा गुणैर्वधूः सुदन्ता बहुपण्यवल्लभा ॥ ३०६ ॥

सप्तम में तुला हो तो उस पुरुष की स्त्री प्रसिद्ध, नम्र, बहुत पुत्रों से युक्त पुण्य से युक्त, गुणों से गर्वित शरीर वाली, सुन्दर दांत वाली एवं बहुत व्यापार प्रिय होती है।

सप्तम गत वृश्चिक फल:—

सरीसृपे नीरजलोचनागृहे नार्यो नराणां प्रणयोज्झिता युताः ।
दौर्भाग्यदोषैर्बहुभिः सुकुत्सितदेहाः कदर्थ्याश्च कलाभिरन्विता ॥ ३०७ ॥

सप्तम में वृश्चिक हो तो मनुष्यों की स्त्रियां स्नेह रहित, बहुत दुर्भाग्य दोषों से युक्त, निन्दित शरीर वाली, कृपण स्वभाव एवं कलाओं से युक्त होती है।

सप्तम गत धनु फल:—

कोदण्डराशौ वर वर्णिनीगृहे यदा नराणां जनने सुनिष्ठुरा ।
प्रशान्तसौख्या पुरुषाकृतिस्तथा नयेन भक्त्या रहिता सुवासिनी ॥ ३०८ ॥

सप्तम में धनु हो तो मनुष्यों की स्त्री अति कठोर स्वभाव वाली, अति शान्त सौख्य वाली, पुरुष के सदृश आकार वाली एवं नीति तथा भक्ति से रहित होती है।

सप्तम गत मकर फल:—

कुम्भीरराशौ कुसुमेषुभावे त्यक्तत्रपा दम्भयुता सुदुष्टा ।
नरस्य नारी विगतस्वभावा रणप्रिया स्यात्परलोकरक्ता ॥ ३०९ ॥

सप्तम में मकर हो तो मनुष्य की स्त्री लज्जा रहित, दम्भ युक्त, अतीव दुष्ट, अभिप्राय रहित, कलह में प्रीति रखने वाली एवं पर पुरुष में आसक्त होती है।

सप्तम गत कुम्भ फल:—

पयोधरे पञ्चपृषत्कगेहे पुण्यस्त्रजा स्त्री धवकर्मरक्ता ।
सुखैः समग्रैः सहिता प्रकृष्टा तथाऽगभावाऽमरविप्रभक्ता ॥ ३१० ॥

सप्तम में कुम्भ हो तो मनुष्य की स्त्री पुण्यवती, पति के कर्म में निरत, समस्त सुखों से युक्त, प्रकृष्ट (उत्कर्ष युक्त), स्थिर स्वभाव एवं देवता तथा ब्राह्मणों की भक्ति होती है।

सप्तम गत मीन फलः—

मीनाभिधाने यदि मीनकेतनभावोपयाते प्रणयोज्झिताऽबला ।
विपुण्यशीला कुसुता कुशेमुषी विकारयुक्ता जनितस्य भामिनी ॥ ३११ ॥

सप्तम में मीन हो तो मनुष्य की स्त्री स्नेह रहित, दुर्बल, अधर्मस्वभाव वाली, दुष्ट पुत्र वाली, दुष्ट बुद्धि वाली एवं विकार से युक्त होती है ।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते जायाभावचिन्तनप्रकरणमेकोनत्रिंशमवसितम् ।

———

अथ आयुर्भावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते ।

अष्टम भाव में विचारणीय पदार्थ परिज्ञानः—

आयुर्मृत्युरथान्तकारणमथो मृत्युप्रदेशो गति-
मोक्षाद्यं गुदगुह्यदेशसमितो दुर्गादिरोधादिकम् ।
स्तैन्यं व्याधिभवो भृतिः परिभवर्णादानदानानि च
नद्युत्तारकवस्तुनाशविवराद्यं बन्धनं नौमुखम् ॥ १ ॥

जीवनाङ्कुरदंशान्नसुखारिभ्यस्त्रसङ्कटम् ।
मार्गवैषम्यमखिलं नैधने ऽद्यो विचिन्तयेत् ॥ २ ॥

आयु, मृत्यु, मृत्युकारण, मरणदेश, गति, मोक्षादि, गुदा, गुह्यदेश (लिङ्ग वा योनि), युद्ध, दुर्गादि (किला इत्यादि) का अवरोध, स्तैन्य (चौरकृत्य) रोगोत्पत्ति, भृति (नौकरी), परिभव (अनादर), ऋण आदान (ऋण लेना), ऋणदान (ऋण देना) नदीपारकरना, वस्तु नाश, विवरादि (छिद्रादि), बन्धन, नौ इत्यादि, जीवन, अंकुर, दंश, अन्नसुख, शत्रुभय, अस्त्र संकट एवं मार्ग की विषमता इत्यादि ये सब पदार्थ अष्टम भाव में विचारने चाहिए।

आयुर्दाय परिज्ञानः—

होरालेखेशेन नादाधिपेन दिष्टान्ताधीशेन भास्वद्भुवा च ।
आयुर्दायं नेष्टहेतुं समस्तं पुंसां प्राज्ञाश्चिन्तयेयुः प्रवीणाः ॥ ३ ॥

लग्नेश, दशमेश, अष्टमेश तथा शनि इन चारों से आयुर्दाय तथा समस्त अनिष्ट के कारणों का चतुरपण्डितजन विचार करें।

स्यादादन्तशरत्पूर्वमल्पायुः प्राक् चतुर्घनात् ।
मध्यायुर्दीर्घमायुः स्यात्प्राक्पूर्णमतः परम् ॥ ४ ॥

मनुष्य के जन्म समय से लेकर बत्तीस वर्ष से पूर्व 'अल्पायु' बत्तीस से लेकर चौसठ वर्ष से पूर्व 'मध्यायु' एवं चौसठ वर्ष से लेकर छियानवे वर्ष से पूर्व 'दीर्घायु' और उस से परे 'पूर्णायु' होती है।

अनायु योगः—

काव्याचार्यौ कादगौ पापकारौ पुत्रस्थौ वा ऽभ्युद्गमे दीप्तरश्मौ ।
जन्माधीशे शोभनाशेयखेटैर्युक्ते दृष्टे ऽनायुरुक्तं मुनीन्द्रैः ॥ ५ ॥

लग्न में शुक्र तथा गुरु हों एवं पञ्चम में पाप ग्रह तथा भौम हों तो (१) लग्न में सूर्य और जन्म चन्द्र राशि का स्वामी यदि शुभाशुभ ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की मुनिजनों ने अनायु कही है।

अल्पायु योगः—

आपोक्लिमे सदितरेऽथ सपापखेट-
पञ्चत्वपे पतितगेऽथ पुरायुरीशौ।
ध्वान्तारिगावुत फले खलकालपेऽल्प-
मायुर्भवेदुदयपे युधि तद्वदेव ॥ ६ ॥

आपोक्लिम (३।६।९।१२) स्थान में बहुत पाप ग्रह हों तो (१) व्यय वा षष्ठ में पाप युक्त अष्टमेश हो तो (२) व्यय वा षष्ठ में लग्नेश तथा अष्टमेश हों तो (३) लाभ में अष्टमेश पाप ग्रह हो तो उक्त योगों में 'अल्पायु' होती है। अष्टम में लग्नेश हो तो भी 'अल्पायु' होती है।

विभवभवनपालः पुण्यगः प्राप्तियाता-
वसुरसुरनमस्यौ मन्दगे मन्मथे वा।
रुधिरमिहिरसूनू शीर्षगौ ग्लौर्लयस्थो
गणपतिगणकेऽरौ वा त्रिके प्राणमुक्ते ॥ ७ ॥

उदयशिखरिपेऽघे वोग्रषष्ठ्यंशकस्थौ
मरणरमणमन्दौ पङ्क्युक्तेक्षितौ वा।
मलिनखसदि केन्द्रे कायनाथे विवीर्ये
सुकृतखगादृशोनेऽल्पायुरेतेषु पुंसाम् ॥ ८ ॥

नवम में द्वितीयेश, लाभ में शुक्र तथा गुरु एवं सप्तम में शनि हो तो (१) लग्न में मङ्गल तथा शनि हो, अष्टम में चन्द्रमा हो और षष्ठ में गुरु हो तो (२) त्रिक में पाप लग्नेश हो और वह निर्बल हो तो (३) क्रूरषष्ठ्यंश में अष्टमेश तथा शनि हो और वे पाप युक्त दृष्ट हो तो (४) केन्द्र में पाप ग्रह हो और निर्बल लग्नेश शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुषों की अल्पायु होती है।

मध्यायु योगः—

पापैः पयःपणफरानुचरालयस्थै-
र्वेन्दोरथैर्बहुगतैर्दिवसेऽथ केन्द्रे।
कोणेऽन्विते हरिजपो विबलोऽवखेटैः
शान्तान्त्यशात्रवगतैर्यदि मध्यमायुः ॥ ९ ॥

चतुर्थ, पणफर (२।५।८।११) स्थान तथा तृतीय में पाप ग्रह हों तो (१) चन्द्रमा से अष्टम में बहुत पाप ग्रह हो एवं दिन का जन्म हो तो (२) केन्द्र वा त्रिकोण में गुरु, लग्नेश निर्बल और अष्टम, व्यय तथा षष्ठ में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में 'मध्यायु' होती है।

मिश्रैश्चतुष्टयतपस्तनयालयस्थैः
किं वा शुभाम्बरचरे गुरुमंत्रकेन्द्रे ।
षष्ठाष्टमे बलिनि पापवियच्चरे वा
वैवस्वते भवति जन्मनि मध्यमायुः ॥ १० ॥

केन्द्र, नवम तथा पञ्चम में शुभाशुभ ग्रह हों अथवा नवम पञ्चम वा केन्द्र में शुभ ग्रह हो, षष्ठ वा अष्टम में बली पाप ग्रह अथवा शनि हो तो उक्त योगों में 'मध्यायु' होती है ।

दीर्घायु योगः—

दीर्घायुः प्रलयेशि वाऽच्युतपतौ स्वर्क्षोच्चमित्रर्क्षगे
वाऽन्त्येऽरौ हरिजेश्वरे सहरपे वाऽन्त्यारिपेऽङ्केऽमलैः ।
संदृष्टे किमु केन्द्रगे हरिजपे भार्यान्वयेक्षावति
किं रम्याश्चतुरस्रगा गुरुदृशा युक्तेऽङ्गपे सद्युते ॥ ११ ॥

यद्वा केन्द्रगतैस्त्रिभिर्दिविचरैर्मूलत्रिकोणादिगै-
र्वान्तेशे शुभवीक्षणान्वयवति ध्वस्ते शुभर्क्षेऽथ वा ।
मूर्तीशे मृतिपेऽथ वा बलवति स्वोच्चे त्रिकोणे ससत्
खेटे कण्टकगेऽथ कालगृहपे काले विलग्नेऽङ्गपे ॥ १२ ॥

वाकेशे सबले स्वभेऽथ पुरपे प्राणान्विते शोभनो-
पेतेऽङ्केऽथ निषेकलग्नभवनाद्यत्पञ्चतामन्दिरम् ।
तस्मात्खं जनिभं गिरीशशशिभूदृग्योगवद्वाङ्गपा-
त्कालेशोऽतिबली चतुष्टयलयान्त्येऽघैश्चिरायुर्नृणाम् ॥ १३ ॥

स्वराशि स्वोच्च राशि वा मित्र राशि में अष्टमेश वा दशमेश हो तो (१) व्यय वा षष्ठ में अष्टमेश युक्त लग्नेश हो तो (२) लग्न में व्ययेश तथा षष्ठेश हों और वे शुभ दृष्ट हों तो (३) केन्द्र में लग्नेश हो और वह शुक्र गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो (४) चतुरस्र (४।८) में शुभ ग्रह हों और लग्नेश शुभ युक्त हो तथा गुरु से दृष्ट हो तो (५) केन्द्र में मूल त्रिकोणादि राशि गत तीन ग्रह हों तो (६) अष्टम में शुभ राशिगत अष्टमेश हो और वह शुभ दृष्ट युक्त हो तो (७) केन्द्र में स्वोच्च राशि गत मूल त्रिकोण राशि गत बली लग्नेश वा बली अष्टमेश हो और वह शुभ युक्त हो तो (८) अष्टम में अष्टमेश हो और लग्न में लग्नेश हो तो (९) व्यय में बली व्ययेश हो तो (१०) लग्न में शुभ युक्त बली लग्नेश हो तो (११) आधान कालीन लग्न (जन्म चन्द्र राशि) से जो अष्टम स्थान हो उस से दशम स्थान और जन्म चन्द्र राशि ये दोनों यदि गुरु बुध से दृष्ट युक्त हों तो (१२) लग्नेश की अपेक्षा अष्टमेश बली हो और केन्द्र, अष्टम तथा व्यय में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में मनुष्यों की दीर्घायु होती है ।

केन्द्रत्रिकोणभवगैर्मृतिमूर्त्तिखेटै-
र्दीर्घं दिवि क्षितिसुतो धिषणास्त्रिकोणे ।

सोमे सुतेऽथ मृतिपे विमले भवे वा
याम्ये यमेऽथ निजभे क्षयपे चिरायुः ॥ १४ ॥

केन्द्र त्रिकोण वा लाभ में अष्टमेश, लग्नेश तथा दशमेश हों तो दीर्घायु होती है। दशम में मङ्गल, त्रिकोण में गुरु और पञ्चम में चन्द्रमा हो तो (१) लाभ में अष्टमेश शुभ ग्रह होतो (२) अष्टम में शनि होतो (३) अष्टम में अष्टमेश हो तो उक्त योगों में दीर्घायु होती है।

वीर्य्याम्बुयाम्येषु खगैः समग्रैर्दीर्घायुरोजःसहितो घनेशः।
विलोकितः कण्टकगैरपापैर्नुर्दीर्घमायुः सरमं विधत्ते ॥ १५ ॥

तृतीय, चतुर्थ तथा अष्टम में समस्त ग्रह होंतो दीर्घायु होती है। लग्नेश यदि बली हो और केन्द्र गत शुभ ग्रहों से दृष्ट होतो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य की धन के सहित दीर्घायु को करता है।

वैरोचनावुपचये स्वभतुङ्गगे वा
मंत्रे मृदौ मरणपेऽथ रणोदयेशौ।
याम्ये किमायभवनेऽथ गदान्त्यपत्योः
पौरस्थयोः किमु चतुष्टयगे खपे वा ॥ १६ ॥

पौराधिपेऽथ पदपे तनये निजोच्चे
वा सत्खगेषु चतुरस्र उतायुरीशे।
केन्द्रेऽथ खाङ्गमृतिपैः सघटेशकेन्द्रै–
र्वाघैस्त्रिलाभभयगैः शुभकेन्द्रधीस्थाः ॥ १७ ॥

भव्याः किमुत्तमखगाः स्मररुग्रणेषु
त्र्यायारिगैरघखगैः किमयैर्नभोगैः
पारावते शुभकराः पथिकेन्द्रपुत्रे
दीर्घायुरायुरधिपे भृगुगौरदृष्टे ॥ १८ ॥

अङ्के चतुष्टयगते तनुपेऽथ रंध्रे
व्युग्रे तनौ निधनपे त्रिखगाः स्वतुङ्गे।
यद्वोदयेशि बलिनि त्रिखगैः क्षयस्थैः
स्वर्क्षोच्चमित्रगृहगैर्यदि दीर्घमायुः ॥ १९ ॥

उपचय (३।६।१०।११) स्थान में स्वराशि गत वा स्वोच्च राशि गत शनि हो तो (१) पञ्चम में अष्टमेश शनि हो तो (२) अष्टम वा लाभ में अष्टमेश तथा लग्नेश हो तो (३) लग्न में षष्ठेश तथा व्ययेश हों तो (४) केन्द्र में दशमेश वा लग्नेश होतो (५) पञ्चम में स्वोच्चराशिगत दशमेश हो तो (६) चतुर्थ तथा अष्टम में शुभ ग्रह हों तो (७) केन्द्र में अष्टमेश हो तो (८) केन्द्र में दशमेश, लग्नेश, अष्टमेश तथा शनि हों तो (९) तृतीय, लाभ तथा षष्ठ में पाप ग्रह हों एवं नवम, केन्द्र तथा पञ्चम में शुभ ग्रह हों तो (१०) सप्तम षष्ठ

वा अष्टम में शुभ ग्रह हों एवं तृतीय एकादश वा षष्ठ में पाप ग्रह हों तो (११) पारावत वर्ग में पाप ग्रह हों एवं नवम केन्द्र वा पञ्चम में शुभ ग्रह हों तो उक्त योगों में मनुष्य की दीर्घायु होती है। लग्न में अष्टमेश हो और वह शुक्र गुरु से दृष्ट हो एवं केन्द्र में लग्नेश हो तो (१) अष्टम में पाप ग्रह न हो. लग्न में अष्टमेश हो और स्वोच्च राशि में तीन ग्रह हों तो (२) लग्नेश बली हो और अष्टम में स्वराशिगत स्वोच्च राशिगत वा मित्रराशि गत तीन ग्रह हो तो उक्त योगों में दीर्घायु होती है।

पूर्णायु योगः—

लग्नाद् ग्लौवः कालगा नो नगोगाः काव्याचार्य्यौ वीर्य्यभाजौ स्त आहो।
चापान्त्यार्द्धं मूर्त्तिगं सर्वखेटाः स्वोच्चं प्राप्ता ज्ञे वृषे सिद्धभागैः॥ २०॥

वाप्ताविन्दौ भार्ग्यययोः कण्टकेऽथ सद्धे सन्तोऽसद्गृहेऽसद्विहङ्गाः।
वीर्य्योपेते विग्रहेशेऽथ देवे सर्वराहो कण्टके कल्पपार्य्यौ॥ २१॥

आग्नेया नो केन्द्रधीध्वस्तधर्म्मे किं वा सौम्याः कण्टकस्था असौम्यैः।
सद्भागस्थैः कातरैर्द्धियातैः पूर्णायुः स्याल्लग्नान्तगौ पौरपारौ॥ २२॥

लग्न तथा चन्द्रमा से अष्टम में पाप ग्रह न हो एवं शुक्र तथा गुरु बली हों तो (१) लग्न में धनू राशि का उत्तरार्द्ध हो, स्वोच्च राशि मे सब ग्रह हों एवं वृष राशि के चौवीस अंश में बुध हो तो (२) लाभ में चन्द्रमा और केन्द्र में गुरु शुक्र हों तो (३) शुभ ग्रहों की राशि में शुभ ग्रह हों, पाप ग्रहों की राशि में पाप ग्रह हों और लग्नेश बलवान् हो तो (४) केन्द्र में लग्नेश तथा गुरु हो केन्द्र, अष्टम तथा त्रिकोण में पाप ग्रह न हो तो उक्त योगों में मनुष्य की पूर्णायु होती है। उपचय में शुभ नवांश गत पराजित पाप ग्रह हों, केन्द्र में शुभ ग्रह हों और अष्टम में लग्नेश तथा मङ्गल न हो तो उक्त योग में 'पूर्णायु' होती है।

बालारिष्ट योगः—

चन्द्रादित्यौ धनभवनगौ गौरकाव्यौ गदस्थौ
मोगापुत्रे समदनगे वोदये दानवेन्द्रे।
चन्द्रे केन्द्रे तदनु धिषणेऽङ्गेश आर्कौ विनाशे
वाङ्गेऽङ्गेशे मलिनसहितालोकिते कष्टमुक्तम्॥ २३॥

लग्न में चन्द्रमा तथा सूर्य हो, षष्ठ में गुरु शुक्र हों और सप्तम में समराशिगत भौम हो तो (१) लग्न में राहु और केन्द्र में चन्द्रमा हो तो (२) लग्नेश गुरु हो और अष्टम में शनि हो तो (३) लग्न में लग्नेश हो और वह पाप ग्रह से युक्त दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न बालक को कष्ट कहे।

शीघ्र मृत्यु के योगः—

भुजङ्गमे विलग्नगे विभावरीविभौ यदा।
रुजायुषोस्तदा शिशुः समेति तत्क्षणे मृतिम्॥ २४॥

लग्न में राहु और षष्ठ वा अष्टम में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में उत्पन्न बालक सद्य (शीघ्र) मृत्यु को प्राप्त होता है।

धर्म्मे धाम्नि द्युकृति धिषणे नैधने ऽन्त्ये विधौवा
भार्य्ये केन्द्रे फणिनि निधने किं कुजे ऽङ्गे न सौम्यैः।
दृष्टे वारे रुजि रणगृहे शौरिदृष्टे ऽथमारे
नो सद्दृष्टावसितकुटिलौ वा शुभा दुष्टयाताः॥ २५॥

केन्द्रे कोणे खलदिविषदो ऽर्कोदये यः प्रसूतो
वेन्दौ ग्रस्ते परिधिसहिते वाघदृष्टे ऽथ याम्ये॥
पापैः खेटैर्जनुषि बहुलैः क्रूरषष्ठ्यंशयातै-
र्भूभूर्भांशे किमखिलशुभा निर्जिता वैरिराशौ॥ २६॥

नीचे मूढे कलुषलवगाः कल्मषैः संयुता वा
मन्दाहीना मृतिभवनपालोकिता मूढयुक्ताः।
सर्वे ऽघांशे तदनु घनपे धर्म्मरोचिःसमेते
नीचे नाशे किमु मद इने ऽङ्गे यमे ऽस्ते विनाशे॥ २७॥

वेने माने मृदुकुजभगे पाप्मदृष्टे किमुग्र-
मात्रैर्युक्तेक्षित उरगपे कण्टके किं त्रिकोणे।
क्रूराश्चन्द्रश्चरमलवगो नोत्तमावेक्षितो वा-
ऽस्ते ऽघा देहे शशभृति शिशुःपञ्चतामेति सद्यः॥ २८॥

नवम वा चतुर्थ में सूर्य, अष्टम में गुरु और व्यय में चन्द्रमा हो तो (१) केन्द्र में चन्द्रमा और अष्टम में राहु हो तो (२) लग्न में मङ्गल हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (३) षष्ठ वा अष्टम में मङ्गल हो और वह शनि से दृष्ट हो तो (४) सप्तम में शनि तथा मङ्गल ये दोनों हों और शुभ ग्रहों से दृष्ट न हों तो (५) त्रिक में शुभग्रह हों, केन्द्र वा त्रिकोण में पाप ग्रह हों और सूर्योदयकाल में जन्म हो तो (६) परिवेष युक्त चन्द्रमा यदि राहु से ग्रस्त हो वा पाप दृष्ट हो तो (७) यदि जन्म काल में मङ्गल की राशि वा नवांश में बहुत पाप ग्रह हों और वे क्रूर षष्ठ्यंश में हों तो (८) युद्ध में समस्त शुभ ग्रह पराजित हों और वे शत्रुराशि नीचराशि अस्तगत वा पापांश में हो और पाप ग्रहों से युक्त हों तो (९) शनि, राहु तथा सूर्य ये तीनों अष्टमेश से दृष्ट हों, अस्तगत ग्रह से युक्त हों और सब ग्रह पापांश में हों तो (१०) अष्टम में वा नीचराशि में लग्नेश हो और वह सूर्य से युक्त हो तो (११) सप्तम में सूर्य, लग्न में शनि और अष्टम में मङ्गल हो तो (१२) दशम में शनि राशिगत वा मङ्गल राशिगत सूर्य हो और वह पाप दृष्ट हो तो (१३) केन्द्र में राहु हो और वह केवल पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो (१४) त्रिकोण में पाप ग्रह हो, राशि के अन्त्य (३०) अंश में चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (१५) सप्तम में पाप ग्रह और लग्न में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न बालक की शीघ्र मृत्यु होती है।

ध्वान्ताङ्काङ्गाष्टमसदनगाः प्राणिनः स्युः क्रमेण
गौरादृष्टा यमरविशशीलाभवाः किं परिज्ञे ।।
सोग्रे कोणव्ययधनमदच्छिद्रगे नो सवीर्य्यैः
पुण्यैर्दृष्टे किमिनतनयान्नैधने ऽघैः सवीर्य्यैः ।। २९ ।।

किं क्षीणेन्दौ वपुषि कलुषाः कण्टकायुर्गता वा
पूर्वार्द्धे ऽघाः परदलगता निर्मलाः सालिकर्के ।
गात्रे ऽथान्त्योदयलयमदे सावसोमे न सौम्यै-
र्दृष्टे ऽस्ताभ्राम्बुतनुषु शुभैर्नान्वितेषूत चन्द्रे ।। ३० ।।

मिश्रैर्दृष्टे स्मरहरिजगौ पामरौ वोग्रमध्ये
नेमौ पाथःप्रलयमदने वा ऽवसाने कृशेन्दौ ।
पङ्क्तिःखेटैः समरपुरगैः सत्सु केन्द्रेतरेषु
किं होरायां जलनिधिभुवो भान्त्ययाता अभव्याः ।। ३१ ।।

सन्ध्यायां वा स्मरमरणगौ पापमात्रप्रदृष्टौ
पापौ यद्वा मृदुगतिकुजादित्यचन्द्रैः क्रमेण ।
ज्ञानान्त्यायुर्हरिजगृहगैर्वारभानू धनस्थौ
षष्ठ्यां जन्माथ विधुदुरिताढ्येषु केन्द्राभिधेषु ।। ३२ ।।

सर्वेष्वन्तं सपदि निगदेज्जातकज्ञो ऽर्भकाणां
देवाचार्य्यो ऽप्युदयगिरिगः प्रौढपाथोधिपुत्रे ।
दुष्टस्थाने स्थितवति यदा वीक्ष्यमाणे खलेन
व्यादित्येनार्भकजन उपैत्यत्ययं सद्य एव ।। ३३ ।।

व्यय, नवम, लग्न तथा अष्टम इन चारों स्थानों में क्रम से शनि, सूर्य, तथा मङ्गल ये चारों ग्रह स्थित हों और ये बली हों एवं गुरु से दृष्ट न हों तो (१) त्रिकोण व्यय सप्तम लग्न वा अष्टम में पाप युक्त चन्द्रमा हों और वह बली शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो (२) शनि से अष्टम में बलवान् पाप ग्रह हों तो (३) लग्न में क्षीण चन्द्रमा और केन्द्र तथा अष्टम में पाप ग्रह हों तो (४) पूर्वार्द्ध (दशम के भोग्यांश से चतुर्थ के भुक्तांश पर्यन्त) में पाप ग्रह हों और परार्द्ध (चतुर्थ के भोग्यांश दशम के भुक्तांश पर्यन्त) में शुभ ग्रह हों एवं लग्न में वृश्चिक वा कर्क राशि हो तो (५) व्यय लग्न अष्टम वा सप्तम में पाप युक्त चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट न हो एवं सप्तम, दशम, चतुर्थ तथा लग्न में शुभ ग्रह न हों तो (६) चन्द्रमा यदि शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट हो और लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हों तो (७) अष्टम, सप्तम वा चतुर्थ में चन्द्रमा हो और वह पापान्तराल में हो तो (८) व्यय में क्षीण चन्द्रमा, अष्टम तथा लग्न में पाप ग्रह और केन्द्रों को छोडकर शेष स्थान में शुभ ग्रह हो तो (९) सन्ध्याकाल का जन्म हो, जन्म कालीन लग्न में चन्द्रमा की होरा हो एवं राशि के अन्त्य में पाप ग्रह हों तो (१०) सप्तम तथा अष्टम में दो पाप ग्रह हों और वे केवल पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो (११) नवम, व्यय, अष्टम और लग्न में

क्रम से शनि, मङ्गल, सूर्य तथा चन्द्रमा हों तो (१२) षष्ठी तिथि में जन्म हो और लग्न में मङ्गल सूर्य हों तो (१३) चारों केन्द्र यदि चन्द्रमा यथा पाप ग्रहों से युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न बालक की शीघ्र मृत्यु होती है। दुष्ट (६।८।१२) स्थान में चन्द्रमा हो और वह सूर्य रहित पाप ग्रह से दृष्ट हो एवं लग्न में गुरु हो तो भी बालक मृत्यु को शीघ्र प्राप्त होता है।

ज्ञातौ प्रान्त्ये कलुषकलिते ऽथोग्रवर्गाश्रिते ऽब्जे
रन्ध्रारिस्थे पयसि फणिपे ऽथार्च्चिते मंत्रिमृत्योः।
सङ्ग्रामे ऽस्त्रे हिमरुचि घने वा रणे द्वित्रिपूर्वै-
रुग्रैर्दृष्टे समृगकलशालिक्रिये ऽर्के ऽथ रिःफे ॥ ३४ ॥

भव्ये ऽघे ऽङ्के ऽथ निखिलखला लग्नगा रिःफ इज्ये
षष्ठो ज्ञो वाऽऽयुषि कुतमये द्वादशे ऽनुष्णभानौ
पापे पङ्गौ पतिनिलयगे वा खलैर्वीक्ष्यमाणः
प्रक्षीणो मा उदयगिरिगो गो ऽजकर्कान्विहाय ॥ ३५ ॥

लग्नं सार्घं धन उत खलान्तर्गतो ऽनङ्गगो ऽघो
लग्नाद्वार्कः समलिनखगः पापमध्यस्थितो वा
पथ्यः पङ्कः पतिसदनगो ऽथाब्ज उग्रद्वयान्त-
र्याते याम्यास्तभयजलगे मृत्युमाप्नोति बालः ॥ ३६ ॥

षष्ठ तथा व्यय में बहुत पाप ग्रह हों तो (१) अष्टम वा षष्ठ में पाप वर्ग गत चन्द्रमा हो और चतुर्थ में राहु हो तो (२) अष्टम वा व्यय में गुरु हो, अष्टम में भौम हो एवं लग्न में चन्द्रमा हो तो (३) अष्टम में मकर, कुम्भ, वृश्चिक वा मेष राशि गत सूर्य हो और वह दो तीन पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो (४) व्यय में शुभ ग्रह और लग्न में पाप ग्रह हो तो (५) लग्न में समस्त पाप ग्रह हों, व्यय में गुरु हो और षष्ठ में बुध हो तो (६) अष्टम में मङ्गल, व्यय में चन्द्रमा और सप्तम में पाप ग्रह वा शनि हो तो (७) लग्न में वृष, मेष तथा कर्क राशि को छोडकर शेष राशि गत अति क्षीण चन्द्रमा हो और वह पाप दृष्ट हो एवं लग्न पाप युक्त हो वा पाप ग्रहों के अन्तराल में हो और लग्न से सप्तम में पाप ग्रह हो तो (८) 'सूर्य' यदि पाप ग्रहों से युक्त वा पाप ग्रहों के अन्तराल में हो एवं सूर्य से सप्तम में पाप ग्रह हो तो (९) सप्तम, अष्टम वा चतुर्थ में पापान्तर्गत चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न बालक मृत्यु को प्राप्त होता है।

सात, दश तथा ग्यारह दिन की आयु योगः—

कामे सोमेऽहियमरवितः सप्तमेऽह्यन्तमेति
नेमेः कामे तरणिरुधिरौ पञ्चता स्याद् दशाहे।
शक्रामात्ये सकलशमृगे क्रूरदृष्टे कलिस्थ
ईशानाहे शमनभवनं बालकोऽवश्यमेति ॥ ३७ ॥

राहु, शनि तथा सूर्य इन तीनों से सप्तम में चन्द्रमा हो तो सातवें दिन बालक की मृत्यु होती है। चन्द्रमा से सप्तम में सूर्य मङ्गल हो तो दशवें दिन बालक की मृत्यु होती है। अष्टम में कुम्भ वा मकरराशिगत गुरु हो और वह पाप दृष्ट हो तो ग्यारहवें दिन बालक मृत्यु को प्राप्त होता है।

सोलह दिन तथा एक मास की आयु के योगः—

सञ्ज्ञासूनुः प्रथमगृहगो दृश्यते पापमात्र-
बालस्यान्तं गदति गणकः षोडशाहेऽरियाते।
कायांशेशेऽरिभमितदिने पञ्चतामेति बालो
द्वेयाष्युःस्थाः सुकृतखचरा वक्रगोप्रेक्षिता वा ॥ ३८ ॥
द्यूनेऽङ्गेशे दुरितसहितेऽथोदयेऽस्त्रे शुभेऽरौ
पूज्येऽपायेऽथ सखलजनुर्नायके जीविते वा।
कल्पेशेऽस्ते कलुषविजिते वोरगादित्यमन्दा
याम्ये वारौ शिशुजनमृतिः कोविदैर्मासि वेद्या ॥ ३९ ॥

लग्न में शनि हो और वह केवल पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो सोलहवें दिन बालक की मृत्यु होती है। षष्ठ में लग्न गत नवांश का स्वामी हो तो षष्ठ भाव गत राशि की संख्या के समान दिनों में बालक की मृत्यु होती है। षष्ठ तथा अष्टम में शुभ ग्रह हो और वे वक्र गति वाले पाप ग्रह से दृष्ट हों तो (१) सप्तम में पाप युक्त लग्नेश हो तो (२) लग्न में मङ्गल, षष्ठ में शुभ ग्रह और व्यय में गुरु हों तो (३) अष्टम में पाप युक्त जन्म चन्द्र राशि का स्वामी हो तो (४) सप्तम में लग्नेश हो और वह युद्ध में पाप ग्रह से पराजित हो तो (५) अष्टम वा षष्ठ में राहु, सूर्य तथा शनि हों तो उक्त योगों में बालक की एक मास में मृत्यु होती है।

षष्ठेऽस्रसौरी प्रथमे परिज्ञो विदि व्यये वा हिमगौ सकाव्ये।
जायारुजोर्मन्दगतौ कुलस्थे मासे शिशूनां निधनं वदन्ति ॥ ४० ॥

षष्ठ में मङ्गल तथा शनि हों, लग्न में चन्द्रमा हो और व्यय में बुध हो तो (१) सप्तम वा षष्ठ में शुक्र युक्त चन्द्रमा हो और दशम में शनि हो तो उक्त योगों में एक मास में बालकों की मृत्यु को कहते हैं।

तीन पक्ष, तीन मास तथा चार मास की आयु के योगः—

सोग्रेऽबलेऽङ्गेशि जनिर्ग्रहे चेत्पक्षत्रयं जीवति बालकोऽस्मिन्।
मासत्रयं वाऽऽयुषि कायपेऽघेक्षितान्विते मासि तुरीयकेऽन्तः ॥ ४१ ॥

ग्रहण के समय का जन्म हो एवं निर्बल लग्नेश पाप युक्त हो तो तीन पक्ष वा तीन मास बालक जीवित रहे। म में लग्नेश हो और वह पाप दृष्ट युक्त हो तो चौथे मास में बालक की मृत्यु होती है।

तीन तथा पाँच मास की आयु के योगः—

प्राप्तौ भपूज्यो नियताविनोऽस्ते श्यामे त्रिमासाद्यमगेहमेति।
सेनो भ आर्किर्घनगोऽमरज्येऽन्त्ये नो शिशुर्जीवतु पञ्चमासम् ॥ ४२ ॥

लाभ में शुक्र तथा गुरु हों, नवम में सूर्य हो और सप्तम में शनि हो तो तीन मास में मृत्यु को प्राप्त होता है। 'शुक्र' यदि सूर्य से युक्त हो और लग्न में शनि हो एवं व्यय में गुरु हो तो उक्त योग में उत्पन्न बालक पाँच मास न जीवे।

छः मास की आयु के योगः—

आपोक्लिमस्था विबलाः समस्ताः किं वा कुमारे कुटिलेनचन्द्राः
असाधुभस्था मरणं शिशूनां कुर्वन्ति मासे समयप्रमाणे ॥ ४३ ॥

समस्त शुभाशुभ ग्रह बल रहित हों अथवा पञ्चम में पाप राशि गत मङ्गल, सूर्य तथा चन्द्रमा हों तो उक्त योगों में छः मास में बालकों की मृत्यु को करते हैं।

छः मास तथा आठ मास की आयु के योगः—

कल्याणसंसर्गविवर्जिताः खला रन्ध्रारिगा वा मृतिमङ्गलोपगाः।
व्ययारिगाः स्वान्तिमगाः प्रकुर्व्वते षष्ठेऽष्टमे मासि शिशोर्मृतिं तदा ॥ ४४ ॥

अष्टम षष्ठ में अष्टम नवम में द्वादश षष्ठ में वा द्वितीय द्वादश में शुभ सम्बन्ध रहित पाप ग्रह हों तो छठे वा आठ वें महीने में बालक की मृत्यु को करते हैं।

आठ मास तथा राशि तुल्य मास की आयु के योगः—

अन्त्येऽन्तको मूर्ध्नि कुजः कगेऽगो शिशुर्न जीवेज्जनितोऽष्टमासात्।
लग्नत्रिभागाधिपतावरातौ मासे भतुल्ये मृतिमेति बालः ॥ ४५ ॥

व्यय में शनि, लग्न में भौम और सुख में राहु हो तो उक्त योग में उत्पन्न बालक आठ मास न जीवे। लग्न में जिस राशि का द्रेष्काण हो उस का स्वामी यदि षष्ठभाव में हो तो उस की राशि के तुल्यमास में बालक मृत्यु को प्राप्त होता है।

एक वर्ष के अन्तराल की आयु के योगः—

षष्ठेऽष्टमेऽसितपतङ्गकुजाः किमिन्दु—
ज्ञौ कण्टकेऽस्तगयमारानिरीक्षितौ वा।
आग्नेययोर्मलिनलोकितयोर्विनाश—
वैरिस्थयोर्यदि शिशोः शरदन्तरेऽन्तः ॥ ४६ ॥

षष्ठ तथा अष्टम में शनि, सूर्य तथा भौम हों तो (१) केन्द्र में चन्द्र तथा बुध हों और सप्तमगत शनि मङ्गल से दृष्ट हों तो (२) अष्टम वा षष्ठ में दो पाप ग्रह हों और वे पाप दृष्ट हों तो उक्त योगों में एक वर्ष के अन्तराल में बालक का मरण होता है।

असन्नभश्वरे यदा विनाशवेश्मसङ्गते।
भपे भये विवीर्य्ययोर्द्विजाभ्रचारिणोस्तथा ॥ ४७ ॥

अष्टम में पाप ग्रह, षष्ठ में चन्द्रमा और गुरु तथा शुक्र निर्बल हों तो भी एक वर्ष के अन्तराल में बालक का मरण होता है।

राशितुल्य वर्ष में बाल मृत्यु के योगः—

काव्येक्षिते खगवरे पुरपे सपङ्गौ
याम्येऽथ मूर्त्तिजनिपौ मिहिरांशुयातौ।
दुःस्थौ शिशोर्मृतिकरौ भवनोन्मिताब्दै-
स्तद्वद्विलग्नरमणो मृतिकृद्रदस्थः॥ ४८॥

अष्टम में लग्नेश सूर्य हो और वह शुक्र से दृष्ट तथा शनि से युक्त हो तो (१) जन्म लग्नेश तथा जन्म चन्द्र राशीश ये दोनों अस्तगत हों और त्रिक में हों तो राशितुल्य वर्ष में बालक की मृत्यु को करते हैं। एवं षष्ठ में लग्नेश हो तो भी राशि तुल्य वर्ष में बालक की मृत्यु को करता है।

माता के साथ बाल मृत्यु के योगः—

ग्रस्ते विधौ यमयुतेऽसृजि संयुगेऽङ्गे
यद्वाऽऽयुरस्तपुरवैरिगतैः खलैर्वा।
ग्रस्तेऽरुणे यमबुधान्यतमान्वितेऽस्रे
याम्याङ्गयोः शिशुजनस्य सहाम्बयान्तः॥ ४९॥

राहु ग्रस्त चन्द्रमा यदि शनि से युक्त हो और अष्टम वा लग्न में मङ्गल हो तो (१) अष्टम, सप्तम, लग्न और षष्ठ में पाप ग्रह हों तो (२) राहु ग्रस्त सूर्य यदि केवल शनि बुध से युक्त हो और अष्टम वा लग्न में मङ्गल हो तो उक्त योगों में माता के साथ बालक की मृत्यु होती है।

श्यामासृजोश्चिच्छगयोः स्मरे विधौ विसृज्यते बालजनोऽम्बया तदा।
पुरन्दरामात्यविलोकनाद्भवः सुखी च सत्क्राद्विपुलायुरेति ना॥ ५०॥

पञ्चम वा नवम में शनि तथा मङ्गल हों और सप्तम में चन्द्रमा हो तो बालक की माता बालक को त्याग देती है अर्थात् बाल की मृत्यु हो जाती है। यदि उक्त योग कारक ग्रह गुरु से दृष्ट हों तो उत्पन्न बालक सुखी, सत्कर्म करने वाला और दीर्घायु को प्राप्त होता है।

द्यूनेऽङ्गारेऽङ्गे विधौ पापदृष्टे त्यक्तो नश्येद् मङ्गलार्क्योस्तथाऽऽये।
सद्भिर्दृष्टे तद्विधस्यैति हस्तं क्रूरैर्दृष्टेऽनायुरप्यन्यदोर्गः॥ ५१॥

सप्तम में मङ्गल और लग्न में पाप दृष्ट चन्द्रमा हो तो त्यक्त बालक मर जाता है। एवं लाभ में मङ्गल तथा शनि हों तो भी त्यक्त बालक की मृत्यु होती है। यदि लाभ स्थान शुभ दृष्ट हो तो त्यक्त बालक अन्य के हाथ में दिया जाता है। एवं लाभ स्थान पाप दृष्ट हो तो अन्य के हाथ में दिया गया बालक भी अनायु (अल्पायु) वाला होता है।

बालारिष्ट भङ्ग के योगः—

दिवा ष्कृष्णे पक्षे निशि धवलपक्षे यदि जनु-
रसत्सत्संदृष्टे शशिनि रुजि वापि प्रलयभे।
क्रमेणाथो स्वोच्चे शशिनि निजभे वा निजगणे
गणे सन्मित्राणां सुकृतखगदृष्टेऽखिलतनौ ॥ ५२ ॥

न दृष्टाढ्येऽर्य्युग्रैः किमखिलतनौ सद्गृहलवे
त्रिकोणे केन्द्रेऽब्जे भृगुतनयदृष्टे किमु विधौ।
सतां भे सम्पूर्णे किमु सुकृतवर्गेऽरिमृतिगे
विधौ यद्वा केन्द्रे शशिनि शुभदृष्टे सकुलिरे ॥ ५३ ॥

समेषे वाथेन्दोर्नभसि धिषणेऽन्त्ये भविबुधौ
भवेऽथैर्वा केन्द्रे जननगृहपे वा शुभकरे।
अथाङ्गेन्दू दृष्टौ सकलखचरैः किं सुरगुरौ
स्वभोच्चस्थे केन्द्रे सुबलसहितेऽदभ्रकिरणे ॥ ५४ ॥

ततोऽङ्गस्थेऽगौ साविकुलिरवृषे वा त्र्यरिभवे
यदा पाते दृष्टे शुभखचरमात्रैः किमु शुभाः।
सतां राश्यंशस्थाः किमखिलखगाः क्वोदयगता-
स्तथा केन्द्रस्थाश्चेत्पणफरगताः सर्वखचराः ॥ ५५ ॥

शिशोः सर्वारिष्टं व्रजतु विलयं लब्धिग इनो
बली सौम्यः केन्द्रे किमुदयविभौ वीर्य्यसहिते।
प्रदृष्टे सन्मात्रैरथ सदितरे सद्गणगताः
सतां दृष्टचैवाढ्याः किमखिलविहङ्गा बलयुताः ॥ ५६ ॥

नृराशिस्था यद्वा सखिसदनगाः सद्गणगा
भपेऽङ्गे सद्दृष्टे दनुजगुरुदृष्टे हिमकरे।
निजोच्चेऽथाङ्गेशो नियतिमतिकेन्द्रेषु सबलो
ह्यरिष्टं बालानां शमयति समग्रं जनिमताम् ॥ ५७ ॥

कृष्णपक्ष में दिन का जन्म तथा शुक्ल पक्ष में रात्रि का जन्म हो एवं कृष्णपक्ष में पाप दृष्ट चन्द्रमा यदि षष्ठ वा अष्टम में हो और शुक्लपक्ष में शुभ दृष्ट चन्द्रमा यदि षष्ठ वा अष्टम में हो तो (१) स्वोच्चराशि स्वराशि स्ववर्ग शुभ वर्ग वा मित्र वर्ग में चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट हो वा सम्पूर्ण शरीर हो एवं शत्रु ग्रह तथा पाप ग्रह से दृष्ट युक्त न हो तो (२) त्रिकोण वा केन्द्र में सम्पूर्ण चन्द्रमा हो और वह शुभ ग्रह की राशि वा नवांश में हो और शुक्र से दृष्ट हो तो (३) शुभ ग्रहों की राशि में सम्पूर्ण चन्द्रमा हो तो (४) षष्ठ वा अष्टम में शुभवर्ग

गत चन्द्रमा हो तो (५) केन्द्र में मेष राशि गत वा कर्क राशि गत चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट हो तो (६) चन्द्रमा से दशम में गुरु हो एवं चन्द्रमा से ही व्यय में बुध, शुक्र और लाभ में पाप ग्रह हों तो (७) केन्द्र में जन्म चन्द्र राशि का स्वामी हो वा शुभ ग्रह हो तो (८) लग्न में चन्द्रमा हो और वह सब ग्रहों से दृष्ट हो तो (९) केन्द्र में स्वराशि वा स्वोच्च राशि गत बली गुरु हो और वह बहुत रश्मियों से युक्त हो तो (१०) लग्न में मेष, कर्क वा वृष का राहु हो तो (११) तृतीय, षष्ठ वा लाभ में राहु हो और वह केवल शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो (१२) शुभ राशि तथा शुभ नवांश में शुभ ग्रह हों तो (१३) शीर्षोदय राशि समस्त ग्रह हों तो (१४) केन्द्र वा पणफर में समस्त ग्रह हों तो उक्त योगों में बालक का समस्त अरिष्ट नाश को प्राप्त होता है। लाभ में सूर्य और केन्द्र में बली शुभ ग्रह हो तो (१) बली लग्नेश यदि केवल शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो (२) शुभ ग्रहों के वर्ग में पाप ग्रह हों और वे शुभ ग्रहों से ही दृष्ट हों तो (३) मनुष्य राशि वा पुरुष राशि में वा मित्रग्रह में वा शुभ ग्रहों के वर्ग में बल युक्त समस्त ग्रह हों एवं चन्द्रमा तथा लग्नेश यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट हों अथवा स्वोच्च राशि गत चन्द्रमा यदि शुक्र से दृष्ट हो तो (४) नवम, पञ्चम वा केन्द्र में बली लग्नेश हो तो उक्त योगों में बालक का सर्वारिष्ट नाश को प्राप्त होता है।

दो तथा तीन वर्ष की आयु के योगः—

अंशे लग्नपतेर्विधौ वधगतेऽसन्मात्रदृष्टे ततो
मूढासृग्यमवीक्षिते सविबुधेऽब्जे कण्टकेऽब्दद्वयम् ।
अर्केन्द्वार्किविलोकिते न कविना दृष्टे गुरौ सङ्करे
कौजे किं भपभास्करौ खलखगैर्दृष्टौ खलांशेऽनुजे ॥ ५८ ॥
यद्वाऽऽचार्य्ये कण्टके द्वादशे वा सोग्राङ्केशे शानुजारातिगे वा ।
कर्काङ्के ग्लौमङ्गलौ कालकेन्द्रं खेटैरूनं रामवर्षायुरुक्तम् ॥ ५९ ॥

कारकांश कुण्डली में (१) जन्म लग्न का स्वामी जिस स्थान में हो उस से अष्टम में चन्द्रमा हो और वह केवल पाप दृष्ट हो तो (२) केन्द्र में बुध युक्त चन्द्रमा हो और वह अस्तंगत मङ्गल शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न बालक की दो वर्ष की आयु होती है। अष्टम में मङ्गलराशि गत गुरु हो और वह सूर्य, चन्द्र तथा शनि से दृष्ट हो एवं शुक्र से दृष्ट न हो तो (१) सहज में पापांशगत चन्द्र, सूर्य हों और वे पाप दृष्ट हों तो (२) केन्द्र वा व्यय में गुरु और नवम, तृतीय वा षष्ठ में पाप युक्त लग्नेश हो तो (३) लग्न में राशि हो और उस में चन्द्र मङ्गल हो एवं केन्द्र तथा अष्टम में कोई ग्रह न हो तो उक्त योगों में बालक की तीन वर्ष की आयु होती है।

चार, पाँच तथा छः वर्ष की आयु के योगः—

बुधे सकर्के विधुवीक्षिते वधे भये किमु क्षीणविधौ यमारयोः
दृशा युते कण्टकगेऽब्धिवत्सरं गुह्येऽङ्गपेऽङ्गे मृतिपेऽथ सत्खगैः ॥ ६० ॥
दृश्यार्द्धयातैरशुभैरदृश्यगैर्देहेऽहिरुग्राम्बरगेक्षितस्ततः ।
कुजेन्द्विनेज्यै रुधिरेन्द्विनार्किभिर्जीवार्क्यसृग्ग्लौभिरिहैकभास्थितैः ॥ ६१ ॥
पञ्चाब्दमायुर्यमभे भगेऽर्कभे मैत्रेऽथ पङ्कैः पुरखाम्बुगैः शुभे ।
खेऽथो त्रिकस्थाखिलशोभनेक्षिते भगेन्दुभे भेऽङ्गसमायुरीरितम् ॥ ६२ ॥

अष्टम वा षष्ठ में कर्क राशि गत बुध हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट हो तो (१) केन्द्र में क्षीण चन्द्रमा हो और वह शनि मङ्गल से दृष्ट हो उक्त योगों में बालक की चार वर्ष की आयु होती है। अष्टम में लग्नेश और लग्न में अष्टमेश हो तो (१) दृश्य भाग में शुभ ग्रह और अदृश्य भाग में पाप ग्रह हो एवं लग्न में राहु हो और वह पाप दृष्ट हो तो (२) एक राशि में मङ्गल, चन्द्र, सूर्य तथा गुरु ये चारों हो अथवा मङ्गल, चन्द्र सूर्य तथा शनि ये चारों हों अथवा गुरु, शनि, मङ्गल तथा चन्द्रमा ये चारों हो तो उक्त योगों में बालक की पाँच वर्ष की आयु होती है। शनि की (१०।११) राशि में सूर्य हो और सूर्य की (५) राशि में शनि हो तो (१) लग्न, दशम तथा चतुर्थ में पाप ग्रह हों और द्वितीय में शुभ ग्रह हों तो (२) कर्क वा सिंह में शुक्र हो और वह त्रिक गत समस्त शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योगों में बालक की छः वर्ष की आयु होती है।

सात, आठ, नौ और दश वर्ष की आयु के योग:—

क्षीणेन्दौ मदनेऽङ्गगैः सितयमासृग्भिर्न गौरीक्षितै-
र्वाङ्गेशेऽस्तमिते गुरौ दुरितभे स्यात्सप्तमेऽब्देऽत्ययः।
देहेऽब्जे गलिते गृहाहवगतैः क्रूरैरुतारौ क्षये
ऽसद्दृष्टाः शुभदाः खला श्विति गुरौ नो सद्भिरालोकिताः ॥ ६३ ॥

अष्टाब्दं बुधभे विधौ रविकुजोपेते न सद्वीक्षिते
यद्वाऽच्छे भगभाग्यभे न गुरुणा दृष्टे नवाब्दैर्मृतिः।
धीस्थेऽस्रे क्षतिगे विधौ तमसि के खे वा भुजङ्गे जले
नेमौ कण्टकमृत्युमातुलगृहे दिग्वत्सरे पञ्चता ॥ ६४ ॥

सप्तम में क्षीण चन्द्रमा और लग्न में शुक्र, शनि तथा मङ्गल हों और वे गुरु से दृष्ट न हों तो (१) जन्म लग्नेश यदि अस्तगत हो और पाप ग्रह की राशि में गुरु हो तो उक्त योगों में बालक की सातवें वर्ष में मृत्यु होती है। लग्न में क्षीण चन्द्रमा और चतुर्थ तथा अष्टम में पाप ग्रह हों तो (१) षष्ठ तथा अष्टम में शुभ ग्रह हों और वे पाप दृष्ट हों एवं पञ्चम तथा नवम में पाप ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट न हो तो उक्त योगों में बालक की आठवें वर्ष में मृत्यु होती है। बुध की (३।६) राशि में चन्द्रमा हो और वह रविमङ्गल से युक्त हो एवं शुभ दृष्ट न हो तो (१) सूर्य की (५) राशि में वा शनि की (१०।११) राशि में शुक्र हो और वह गुरु से दृष्ट न हो तो उक्त योगों में बालक की नौ वर्ष की आयु होती है। पञ्चम में मङ्गल, व्यय में चन्द्रमा और चतुर्थ वा दशम में राहु हो तो (१) चतुर्थ में राहु और केन्द्र अष्टम वा षष्ठ में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में बालक की दश वर्ष की आयु होती है।

ग्यारह तथा बारह वर्ष की आयु के योग:—

सार्के ज्ञे विमलेक्षितेऽथ सभगाब्जे ज्ञे शुभैर्नेक्षिते
ऽथान्योन्यर्क्षगयोस्त्रिकेऽस्ततपसोरन्तः शिवाब्दैः शिशोः।
जन्माङ्गाधिपती त्रिके सतपनौ नो सद्युतालोकिता
किं जीवे कुजभे कुजे गुरुगृहेऽन्तो द्वादशे हायने ॥ ६५ ॥

'बुध' यदि सूर्य से युक्त हो और दृष्ट हो तो (१) एवं 'बुध' यदि सूर्य तथा चन्द्रमा से युक्त हो और शुभ दृष्ट न हो तो (२) भौम की (१।८) राशि में गुरु और गुरु की (९।१२) राशि में भौम हो और वे दोनों त्रिकस्थान में हों तो उक्त योगों में बालक की ग्यारह वर्ष की आयु होती है। त्रिक में जन्मराशी तथा लग्नेश हों और वे सूर्य से युक्त हों एवं शुभ युक्त दृष्ट न हों तो (१) मङ्गल की राशि में गुरु और गुरु की राशी में मङ्गल हो तो उक्त योगों में बारह वर्ष की आयु होती है।

तेरह तथा चौदह वर्ष की आयु के योगः —

वक्री ऋक्षभवस्तमोऽन्त्यभवनेऽथेज्येक्षितः श्यामल-
स्तौलयंशे मृतिरग्निभूशरदि वाऽपाये सभौमे तमे।
सार्कौ वा भगजं वधूलवगतं भव्यग्रहो वीक्षते
वास्ते वृश्चिकपे गले खतिलके सुत्रामवर्षेऽत्ययः॥ ६६॥

वक्री शनि तथा राहु व्यय में हो तो (१) तुलांश में शनि हो और वह गुरु से दृष्ट हो तो उक्त योगों में बालक की तेरह वर्ष की आयु होती है। व्यय में राहु हो और वह मंगल वा शनि से युक्त हो तो (१) कन्यांश में शनि हो और उस को शुभ ग्रह देखता है तो (२) सप्तम में भौम और तृतीय में सूर्य हो तो उक्त योगों में चौदह वर्ष की आयु होती है।

पन्दरह तथा सोलह वर्ष की आयु के योगः—

मित्रे रात्रिकरे दरे रुचिविभौ किं भानवेऽहीक्षिते
सिंहांशे मरणं शिशोस्तिथिमितेऽब्देऽथो ध्वजेनेक्षित।
कोणे कर्कनवांशके किमसिते व्याये रविः कोणगः
केन्द्रे नार्यसितौ तदा नृपसमाब्दे देहिनामत्ययः॥ ६७॥

सुख में चन्द्रमा और षष्ठ में सूर्य हो तो (१) सिंहांश में शनि हो और वह राहु से दृष्ट हो तो उक्त योगों में बालक की पन्दरह वर्ष की आयु होती है। कर्कांश में शनि हो और वह केतु से दृष्ट हो तो (१) तृतीय वा लाभ में शनि, त्रिकोण में सूर्य और केन्द्र में गुरु शुक्र न हों तो सोहलवें वर्ष में मनुष्य की मृत्यु होती है।

सत्रह, अठारह तथा उन्नीस वर्ष की आयु के योगः—

दृष्टेऽधेन तमे सलेयकलशाल्यंशे न सूरीक्षित-
युक्तेऽथेनजनौ निजांशकगतेऽङ्गेशेक्षिते हायने।
अत्यष्टिप्रमितेऽन्त उग्रखचरः सङ्ग्रामगात्रास्तगैः
सत्खेटैर्विबलैरथाङ्गमृतिपावन्योन्यभस्थौ शुभैः॥ ६८॥
नाढ्यौ वा निजनीचभे निधनपे केन्द्रे विदीनांशुगे
ध्वस्तस्थे धृतिवत्सरे जनिमतो मृत्युः सकर्के कुजे।
सेणेऽर्केऽस्तमिते बुधे समृदुगे काव्येऽथ कोणे गुरो-
र्भागे भो यमलोकिते घनविभौ गोरूपवर्षे मृतिः॥ ६९॥

सिंहांश कुम्भांश वा वृश्चिकांश में राहु हो और वह पाप दृष्ट हो एवं गुरु दृष्ट न हो तो (१) स्वनवांश (१०।११) में शनि हो और लग्नेश से दृष्ट हो तो सत्रहवें वर्ष में मृत्यु होती है। अष्टम लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हों और शुभ ग्रह निर्बल हों तो (१) अष्टमेश की राशि में लग्नेश हो और लग्नेश की राशि में अष्टमेश हो और वे शुभ युक्त न हों तो (२) केन्द्र में नीच राशि गत अष्टमेश हो और अष्टम में अस्तंगत बुध हो तो उक्त योगों में अट्ठारह वर्ष की आयु होती है। कर्क में मङ्गल, मकर में सूर्य, अस्तंगत बुध हो और 'शुक्र' यदि शनि से युक्त हो तो (१) गुरु के नवांश में शनि हो और लग्नेश यदि राहु से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उन्नीस वर्ष की आयु होती है।

बीस तथा इक्कीस वर्ष की आयु के योगः—

आद्याधीशे सद्युते ऽङ्गे ऽन्तकेशे नाशे नान्यैर्लोकिते वा हिमांशौ।
क्षीणे पङ्के छिद्रगे छिद्रनाथे केन्द्रे वीर्योनाङ्गपे वेनशन्योः॥ ७०॥

केन्द्रे ऽङ्गे ऽस्त्रे पौरपे प्राणहीने वाधैर्वीन्दुव्यालपैः स्वान्त्यरन्ध्रे।
वा ऽब्जे ऽन्तार्य्योः पावकैः सदृशोनैः केन्द्रे वास्ते ऽङ्गारके रायि सूरौ॥ ७१॥

भूमौ भाग्ये भोगिराजीन्दुभान्वोः संव्ये द्योदृग्वर्षमायुर्गभस्तौ।
पङ्क्तान्तःस्थे पापभे ऽङ्गे ऽथ केन्द्रे भार्य्यौ सन्ध्यानेहसि क्रूरयुक्ते॥ ७२॥

कायेशे शान्त्यारिशौर्य्येऽथवा सकुम्भस्त्रीगोभे भगे ज्ञे सगोपे।
क्रूरैः खेटैर्दीर्घनिद्रालयस्थैः साजे मैत्रे स्वर्गतुल्यायुरेषु॥ ७३॥

लग्न में शुभ युक्त लग्नेश हो तथा अष्टम में अष्टमेश हो और वह अन्य ग्रहों से दृष्ट न हो तो (१) चन्द्रमा क्षीण हो, अष्टम में पाप ग्रह हो, केन्द्र में अष्टमेश हो और लग्नेश निर्बल हो तो (२) केन्द्र में शनि तथ सूर्य हों, लग्न में मङ्गल हो और लग्नेश निर्बल हो तो (३) द्वितीय, व्यय तथा अष्ट में चन्द्रमा राहु न हों और अन्य पाप ग्रह हों तो (४) अष्टम वा षष्ठ में चन्द्रमा हों, केन्द्र में पाप ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो (५) सप्तम में भौम, द्वितीय में गुरु, सुख वा भाग्य में राहु और अष्टम में सूर्य चन्द्रमा हों तो उक्त योगों में बीस वर्ष की आयु होती है। पाप ग्रहों के अन्तराल में सूर्य हो और लग्न में पाप ग्रह की राशि हो तो (१) सन्ध्याकाल का जन्म हो, केन्द्र में शुक्र गुरु हों और नवम व्यय षष्ठ वा तृतीय में पाप युक्त लग्नेश हो तो (२) कुम्भ कन्या वा वृष में सूर्य हों, वृष में बुध हो, अष्टम में क्रूर ग्रह हो और मेष में शनि हो तो उक्त योगों में २१ वर्ष की आयु होती है।

बाईस तथा त्याईस वर्ष की आयु के योगः—

कस्मिंश्चिन्निधने ऽङ्गगा खलगुरू ग्लौलोकितौ वा खले
पञ्चत्वे ऽघभगः क्षीणेन्दुरशुभत्र्यंशे परे खेचराः।
आकृत्युन्मितवर्षमायुररिगे पूज्ये फणीशे रणे
पातङ्गौ पतिभे पयस्युडुपतौ पुःपाणिवर्षे ऽत्ययः॥ ७४॥

अष्टम में कोई एक ग्रह हो और लग्न में चन्द्र दृष्ट पाप ग्रह तथा गुरु हों तो (१) अष्टम में पाप ग्रह हो पाप ग्रह की राशि में क्षीण चन्द्रमा हो और अशुभ द्रेष्काण में अन्य ग्रह हों तो उक्त योगों में २२ वर्ष की आयु होती है। षष्ठ में गुरु, अष्टम में राहु, सप्तम में शनि और चतुर्थ में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में २३ वर्ष की आयु होती है।

चौवीस तथा पच्चीस वर्ष की आयु के योगः—

रोके ऽङ्गेशे क्रूरदृष्टे हरे ऽङ्गे संस्थानेशे सिद्धवर्षं तदायुः।
युद्धान्त्येशौ वीतवीर्यौ द्विदेहमूर्तौ मन्दे पञ्चवर्गाब्दमायुः॥ ७५॥

अष्टम में पाप दृष्ट लग्नेश हो और अष्टम वा लग्न में अष्टमेश हो तो उक्त योग में २४ वर्ष की आयु होती है। अष्टमेश तथा लग्नेश ये दोनों निर्बल हों और द्विस्वभाव राशि के लग्न में शनि हो तो उक्त योग में २५ वर्ष की आयु होती है।

छब्बीस वर्ष की आयु के योगः—

तमीपतौ तन्वतनुत्रिकेष्वसद्युक्तदृष्टे ऽथ कुजे कुले ऽङ्गे
गौरे ऽम्बरे भे ऽन्त्यभवे भुजङ्गे भाग्यायुषोरङ्गकरोन्मितायुः॥ ७६॥

लग्न सप्तम वा त्रिक में चन्द्रमा हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो तो (१) दशम वा लग्न में मङ्गल हो, दशम में गुरु हो, व्यय वा लाभ में शुक्र हो और नवम वा अष्टम में राहु हो तो युक्त योगों में २६ वर्ष की आयु होती है।

सत्ताईस तथा अट्ठाईस वर्ष की आयु के योगः —

सूरौ स्वभे स्वत्रिलवे ऽथ जन्ये जन्योदयेशावुडुवर्षमायुः।
तनोस्तमीशात्प्रविदारगेशे केन्द्रे ऽन्तिमे ऽन्तः करिदोःप्रमे ऽब्दे॥ ७७॥

स्वद्रेष्काण में स्वराशि गत गुरु हो तो (१) अष्टम में अष्टमेश तथा लग्नेश हो तो उक्त योगों में २७ वर्ष की आयु होती है। लग्न तथा चन्द्रमा से जो अष्टम स्थान हों उन के स्वामी यदि केन्द्र वा व्यय में हों तो उक्त योग में २८ वर्ष की आयु होती है।

उनतीस वर्ष की आयु के योगः —

दुरोदरस्थौ हरिनामधेयौ सम्बन्धिनौ सूरसुतस्य यद्वा।
खगे खगे ऽनूनकपङ्कदृष्टे गोदोर्मिते ऽब्दे कुलिशेन मृत्युः॥ ७८॥

अष्टम में सूर्य तथा चन्द्रमा हों और उन दोनों का शनि से सम्बन्ध हो तो उक्त योग में २९ वर्ष की आयु होती है। दशम में सूर्य हो और वह समस्त पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योग में २९ वें वर्ष में वज्र से मृत्यु होती है।

तीस वर्ष की आयु के योगः—

केन्द्रस्थाने ज्ञेऽतिवीर्य्ये ग्रहोनं गुह्यं वाथो केन्द्रगौ वीतशक्ती ।
शान्ताङ्गेशौ किं शुभाः सद्भभागे त्रिंशद्वर्षं सूरिभिर्गीतमायुः ॥ ७९ ॥

केन्द्र में अति बली बुध हो और अष्टम में ग्रह न हो तो (१) केन्द्र में निर्बल अष्टमेश तथा निर्बल लग्नेश हों तो (२) शुभ राशि तथा शुभांश में शुभ ग्रह हों तो उक्त योगों में ३० वर्ष की आयु होती है।

इकतीस वर्ष की आयु के योगः—

अहर्पतौ पापखगान्तराले पौराश्रिते वा गलितामृतांशुः ।
प्रान्त्यालये नोत्तमवीक्षितोऽङ्गे जन्ये खलैः कश्रिसमासु जीवेत् ॥ ८० ॥

लग्न में सूर्य हो और वह पापान्तराल में हो तो (१) व्यय में क्षीण चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट न हो एवं लग्न तथा अष्टम में पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में ३१ वर्ष की आयु होती है।

बत्तीस वर्ष की आयु के योगः—

षट्त्र्यङ्कान्त्ये चन्द्रमाः क्रूरदृष्टः प्राणोनेऽङ्गाधीश्वरेऽथोदयेशे ।
सारेणोने गर्हितोपेतदृष्टे सङ्गामेशे कण्टके दन्तवर्षम् ॥ ८१ ॥

षष्ठ तृतीय नवम वा व्यय में पाप दृष्ट चन्द्रमा हो और लग्नेश निर्बल हो तो (१) लग्नेश निर्बल हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो एवं केन्द्र में अष्टमेश हो तो उक्त योग में ३२ वर्ष की आयु होती है।

तैंतीस वर्ष की आयु के योगः—

देहालयो दुष्टखगेन दृष्टः केन्द्रस्थलं भव्यविहङ्गमुक्तम् ।
द्विजाधिराजे समहीजराशौ मर्त्यस्य मृत्युर्जगदग्निवर्षे ॥ ८२ ॥

'लग्न' यदि पाप दृष्ट हो, केन्द्र में शुभ ग्रह न हो और मङ्गल की (१।८) राशि में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में ३३ वें वर्ष में मनुष्य की मृत्यु होती है।

चौंतिस, पैंतीस तथा छत्तीस वर्ष की आयु के योगः—

दुश्चिक्यास्तमयारिनिर्व्यथनगैर्दैतेयचन्द्रार्य्यविद्-
भूपुत्रैः क्रमशोऽथ पापविवरेऽस्रेऽस्ते जलेऽब्जे मृतिः ।
वर्षे वेदगुणोन्मितेऽन्त्यमृतिगे निम्ने कुजेऽह्नौ सुते
ऽथान्त्येऽर्थेऽरिभगो भगो व्ययवधे पूज्ये कुजे हायने ॥ ८३ ॥

नाराचाग्निमितेऽङ्गपे सकलुषे चापोक्तिमोपाश्रिते
सन्ध्यायामिह केन्द्रगौ कविगुरू किं कालकेन्द्रोपगैः ।
नो पुण्यैः प्रथमेऽब्जभौमगुलिकैर्वा नो खलः कश्चना-
ऽभ्रेऽन्त्येऽङ्गेऽथ भवेऽङ्गपे भवधवे खेऽङ्गाग्निवर्षे वधः ॥ ८४ ॥

तृतीय में शुक्र, सप्तम में गुरु, षष्ठ में बुध और अष्टम में मङ्गल हो तो (१) सप्तम में पापान्तर्गत मङ्गल हो और सुख में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में ३४ वर्ष की आयु होती है। व्यय वा अष्टम में नीचराशि गत मङ्गल और पञ्चम में राहु हो तो (१) व्यय वा द्वितीय में शत्रु राशि गत सूर्य और व्यय वा अष्टम में गुरु वा मङ्गल हो तो उक्त योगों में ३५ वर्ष की आयु होती है। आपोक्लिम (३।६।९।१२) स्थान में पाप युक्त लग्नेश हो, सन्ध्याकाल का जन्म हो एवं केन्द्र में शुक्र तथा गुरु हों तो (१) अष्टम तथा केन्द्र में शुभ ग्रह न हों और लग्न में चन्द्र, भौम तथा गुलिक हों तो (२) दशम, व्यय, तथा लग्न में कोई पाप ग्रह न हो तो (३) लाभ में लग्नेश और दशम में लाभेश हो तो उक्त योगों में ३६ वर्ष की आयु होती है।

सैंतीस वर्ष की आयु के योगः—

गौरे दर्शेऽहोविवरे कलेवरे तदीश्वरे वैणिकराशिशालिनि।
वाङ्गारकेऽनङ्गगृहेऽसदन्तरे मूर्तौ मृतिः स्यान्मुनिलोकहायने ॥ ८५ ॥

षष्ठ में गुरु, पापान्तराल में लग्न और मिथुन में लग्नेश हो तो (१) सप्तम में मङ्गल और पापान्तराल में लग्न हो तो उक्त योगों में ३७ वर्ष में मरण होता है।

अडतीस तथा उनतालीस वर्ष की आयु के योगः—

तमस्तनौ कुजः कुले स्वराशिगार्चितेऽन्तगे
ऽथ वाऽन्तिमे भवे भृगौ करित्रिवत्सरेऽत्ययः।
विलोकितेऽखिलैः खलैः सतिग्मदीधितौ यदा
भुजङ्गमेऽग्निशल्ततो वधोऽङ्कवह्निवत्सरे ॥ ८६ ॥

लग्न में राहु, दशम में भौम और अष्टम वा नवम में स्वराशिगत गुरु हो अथवा व्यय वा लाभ में शुक्र हो तो उक्त योग में ३८ वर्ष की आयु होती है। 'राहु' यदि सूर्य से युक्त हो और समस्त पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योग में ३९ वर्ष की आयु होती है।

चालीस वर्ष की आयु के योगः—

सद्भिर्दृष्टं शान्तभं ज्ञे ससारे केन्द्रे वाङ्गे शान्तपे सद्विहीनम्।
शान्तं वा सन्मुक्तकेन्द्रे पुरेशे पापोपेते पञ्चता खाब्धिवर्षे ॥ ८७ ॥

अष्टम स्थान यदि शुभ दृष्ट हो और केन्द्र में बली बुध हो तो (१) लग्न में अष्टमेश हो और अष्टम स्थान यदि शुभ युक्त न हो तो (२) केन्द्र में शुभ ग्रह न हो और लग्नेश पाप युक्त हो तो उक्त योगों में ४० वर्ष की आयु होती है।

इकतालीस तथा बयालीस का आयु के योगः—

पङ्कान्तःस्थेऽङ्केऽमलैः प्रान्त्यपारप्राप्ते रूपाम्भोधिवर्षे नुरन्तः।
केन्द्रायुःस्थ कल्मषैः क्षीणचन्द्रे कल्पं प्राप्ते वा ससिंहांशकेऽह्नि ॥ ८८ ॥
पीयूषांशौ पापकैरीक्ष्यमाणे केन्द्रं मुक्तं चारुभिर्वा पुरीशे।
सारेऽङ्के वा सस्थिरेऽस्तेऽन्त्यमृत्योः पुंसां मृत्युः पक्षवेदोन्मितेऽब्दे ॥ ८९ ॥

पापान्तराल में लग्न हो और व्यय तथा लग्न में शुभ ग्रह हों तो उक्त योग में ४१ वर्ष में मनुष्य की मृत्यु होती है। केन्द्र तथा अष्टम में पाप ग्रह हो और लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो तो (१) सिंहांश में राहु हो, चन्द्रमा पाप दृष्ट हो और केन्द्र में शुभ ग्रह न हों तो (२) लग्न में मङ्गल युक्त अष्टमेश हो तो (३) व्यय वा अष्टम में स्थिर राशि गत मङ्गल हो तो उक्त योगों में ४२ में वर्ष की आयु होती है।

तेतालीस वर्ष की आयु का योगः—

देहे हेलावार्ये काले काव्य जूके वालौ पुंसाम्।
आज्याशोदन्वत्तुल्याब्दे पञ्चत्वं प्रोक्तं प्राचीनैः ॥ ९० ॥

लग्न में सूर्य, अष्टम में गुरु और तुला वा वृश्चिक में शुक्र हो तो उक्त योग में पुरुषों का ४३ वर्ष में मरण कहा है।

चवालीस वर्ष की आयु के योगः—

भगयुतभगपुत्रे सैणभे वैरिदोषो—
मृतिप उदयकाम्रास्तेषु वा ऽस्ते सतुङ्गे।
वपुषि मदन इज्ये खे मृदौ वा चरे ऽङ्गे
नभासि रविज इज्ये कण्टके ऽब्ध्यब्धिवर्षम् ॥ ९१ ॥

षष्ठ वा तृतीय में मकरराशिगत तथा सूर्य युक्त शनि हो और लग्न चतुर्थ दशम वा सप्तम में अष्टमेश हो तो (१) लग्न में उच्चराशिगत भौम, सप्तम में गुरु और दशम में शनि हो तो (२) लग्न में चर राशि, दशम में शनि और केन्द्र में गुरु हो तो उक्त योगों में ४४ वर्ष की आयु होती है।

पैंतालीस तथा छियालीस वर्ष की आयु के योगः—

महिमिहिरतनूजौ मंत्रिगौ मित्र आद्ये
धवलरुचि वधे ऽक्षाम्भोधिवर्षे ऽन्त उक्तः।
असित उदयगे ऽस्ते ऽस्यागमे केन्द्र उग्रे
हिमरुचि चरमे ऽन्तस्तर्कवेदोन्मिते ऽब्दे ॥ ९२ ॥

व्यय में मङ्गल तथा शनि हों, लग्न में सूर्य हो और अष्टम में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में ४५ वें वर्ष में मरण होता है। लग्न में शनि, अष्टम में मङ्गल, केन्द्र में पाप ग्रह और व्यय में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में ४६ वें वर्ष में मरण होता है।

सैंतालीस तथा अडतालीस वर्ष की आयु के योगः—

निखिलखलनभोगैः केन्द्रगैः सौम्र इन्दु—
मृतिरगयुगवर्षे पामरानीक्ष्यमाणम्।
विमलगगनगेहालोकितं गात्रगेहं
गतवति निखिलाब्जे साजभे ऽष्टाब्धिवर्षम् ॥ ९३ ॥

केन्द्र में समस्त पाप ग्रह हों और चन्द्रमा पाप युक्त हो तो उक्त योग में ४७ वर्ष की आयु होती है। 'लग्न' यदि पाप ग्रह से दृष्ट न हो और शुभ दृष्ट हो एवं उस में मेष राशि गत पूर्ण चन्द्रमा हो तो उक्त योग में ४८ वर्ष की आयु होती है।

उनचास वर्ष की आयु के योगः—

दैत्यामात्येनान्विते दैवतेज्ये बन्धौ वक्रे सोक्षमे ब्राध्रियुक्ते ।
पुत्रागारे लक्ष्मणे लाभकीर्त्योर्मृत्युर्वर्षे तानतुल्ये नरस्य ॥ ९४ ॥

सुख में शुक्र युक्त गुरु हो, पञ्चम में वृष राशि गत मङ्गल हो और वह शनि से युक्त हो एवं लाभ वा दशम में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में ४९ वर्ष में मनुष्य की मृत्यु होती है।

पञ्चाश वर्ष की आयु के योगः—

कव्योम्नोर्विदि चरमाङ्गगुह्यगेऽब्ज
एकर्क्षे द्विजखगयोरुतास्पदे खे
आचार्ये सुखसदने फलागमेऽब्जे
भाग्यस्थो भृगुतनयः खबाणवर्षम् ॥ ९५ ॥

सुख वा दशम में बुध, व्यय लग्न वा अष्टम में चन्द्रमा और एक राशि में गुरु शुक्र हों तो (१) दशम में सूर्य, सुख में गुरु, लाभ में चन्द्रमा और नवम में शुक्र हो तो उक्त योगों में ५० वर्ष की आयु होती है।

इक्यावन, बावन, तिरेपन तथा चौपन वर्ष की आयु के योगः—

कल्याणैर्हरिजहिरण्यहृद्गृहस्थै-
रन्तः स्यात्कुविषयवत्सरेऽभ्रमूर्त्योः
सेनेऽहौ रुजि रुधिरे यमेऽन्तिमे वा
सव्यङ्गे यम उदये विधौ वधेऽन्त्ये ॥ ९६ ॥

पञ्चत्वं करशरवत्सरे समेषे
मार्त्तण्डे वपुषि गुरौ सपुङ्गवेऽब्जे ।
त्र्यक्षाब्दं तिमिसितरुग्भयुक्तवंशे
कर्कार्य्ये मृतिरुदधीषुसम्मितेऽब्दे ॥ ९७ ॥

लग्न द्वितीय तथा चतुर्थ में शुभ ग्रह हों तो उक्त योग में ५१ वें वर्ष में मरण होता है। दशम वा लग्न में सूर्य युक्त राहु हो, षष्ठ में मंगल हो और व्यय में शनि हो तो (१) लग्न में द्विस्वभाव (३।६।९।१२) राशि गत शनि हो और अष्टम वा व्यय में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में ५२ वें वर्ष में मृत्यु होती है। मेष में सूर्य, लग्न में गुरु और वृष में चन्द्रमा हो तो उक्त योग में ५३ वर्ष की आयु होती है। दशम में मीन राशि गत चन्द्र शुक्र हों और कर्क में गुरु हो तो उक्त योग में ५४ वें वर्ष मृत्यु होती है।

पचपन वर्ष की आयु के योगः—

कर्काङ्के सवितरि खे विधुः सपापः
केन्द्रस्थो गुरुरुत सोग्रभास्करोऽङ्के ।
नादेन्दौ सरपतिवन्दिते सकेन्द्रे
नाराचाशुगमितवत्सरे ऽ त्ययो नुः ॥ ९८ ॥

(१) कर्क लग्न में सूर्य, दशम में पाप युक्त चन्द्रमा और केन्द्र में गुरु हो तो (२) लग्न में पाप युक्त सूर्य, दशम में चन्द्रमा और केन्द्र में गुरु हो तो उक्त योगों में ५५ वें वर्ष मनुष्य का मरण होता है।

छप्पन, सतावन, अट्ठावन तथा उनसठ वर्ष की आयु के योगः—

तारेये तनुगे सभे बलयुते सद्वीक्षिते ऽ न्तं व्रजेत्
षड्बाणाब्द इलाभवे परिभवे साहौ सचापोदये ।
गौरे वा ऽ मललोकिते घनविभौ केन्द्रे ऽ द्रिवायून्मिते
वर्षेऽन्तस्त्रिकगे सकायपभपे कोणांशके कायपे ॥ ९९ ॥
वास्ते शान्तपतौ सपापशशिनि द्वेष्ये वधे स्याद्वधो
व्यालाक्षप्रमितेऽब्द आत्मकुलयोः शान्ते प्रशान्तेऽन्तभे ।
चन्द्राचार्य्यसितैर्व्ययोदवसितेऽथेने हरे सोरगे
मर्त्त्यानां मरणं मतं बुधवरैर्गोबाणसँव्वत्सरे ॥ १०० ॥

लग्न में शुक्र युक्त बली बुध हो और वह शुभ दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य ५६ वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है। अष्टम में राहु युक्त मङ्गल हो और लग्नगत धनू राशि में गुरु हो अथवा केन्द्र में शुभ दृष्ट लग्नेश हो तो उक्त योगों में ५७ वर्ष में मृत्यु होती है। त्रिक में लग्नेश युक्त चन्द्रमा हो और शनि के नवांश में लग्नेश हो अथवा सप्तम में अष्टमेश हो और षष्ठ वा अष्टम में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में ५८ वें वर्ष में मरण होता है। पञ्चम वा दशम में बुध अष्टम में गुरु और व्यय में चन्द्र, गुरु तथा शुक्र हों तो उक्त योग में ५९ वें वर्ष में मरण होता है।

साठ वर्ष की आयु के योगः—

कर्के वाङ्केऽब्जोऽमले मारगे वा केन्द्रे सौम्यः स्वोच्चगोऽब्जः सशौर्ये ।
शीर्षेऽङ्केशे वा स्वभे सन्नभोगाः सस्वोच्चेऽब्जेऽङ्केऽथ वा सद्विहङ्गाः ॥ १०१ ॥
व्यायुर्याताः क्रूरयुक्ते त्रिकस्थे होरालेखेशेऽथ गौरे न केन्द्रे ।
राश्यङ्केशौ सोष्णगू शान्तगौ वा सर्वैश्चिद्वैरायुरभ्राङ्गवर्षम् ॥ १०२ ॥

कर्क में वा लग्न में चन्द्रमा हो और सप्तम में शुभ ग्रह हो तो (१) केन्द्र में शुभ ग्रह, स्वोच्च राशिमें चन्द्रमा और लग्न में बली लग्नेश हो तो (२) स्वराशि में शुभ ग्रह हो और लग्न मे उच्च राशिगत चन्द्रमा हो तो (३) अष्टम स्थान के अतिरिक्त स्थान में शुभ ग्रह हों और त्रिक में पाप युक्त हो तो (४) केन्द्र

में गुरु न हो और अष्टम में राशीश तथा लग्नेश हों और वे सूर्य युक्त हो तो (५) पञ्चम में सब ग्रह हो तो उक्त योगों में ६० वर्ष की आयु होती है।

इकसठ तथा बासठ वर्ष की आयु के योगः—

खेटैश्चतुः प्रभृतिभिः क्रमशः शरीर–
वाग्वीर्य्यबन्धुभवनेऽन्त इलाङ्गवर्षे।
सकर्किकार्मुकझषे धिषणे घनस्थे
दोर्गैर्भमैत्रमिहिरे द्विरसाब्दमायुः॥ १०३॥

लग्न द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ में क्रम से चार प्रभृति ग्रह हो तो उक्त योग में ६१ वें वर्ष में मृत्यु होती है। लग्न में कर्क धनु वा मीन राशि का गुरु हो और तृतीय में शुक्र, शनि तथा सूर्य हो तो उक्त योग में ६२ वर्ष की आयु होती है॥

तिरेसठ, चौसठ तथा पैंसठ वर्ष की आयु के योगः—

सेन्दौ रवावलिगते सहये सिते स–
ज्ञूके बुधे तिमिगुरौ गुणतर्कवर्षम्।
पङ्गौ पथि प्रथम आस्फुजितीन्द्रपूज्ये
केन्द्रेऽथ मंत्रिणि कवौ विबुधे समत्स्ये॥ १०४॥

काये कपौ सितरुचौ नयनेऽनुजेऽस्रे
रत्नाकराङ्गशरदायुरिनांशुलुप्तौ।
जन्माङ्गपौ जनिभगावपतुर्य्यकेन्द्रे
जीवे मृतिं व्रजति सायकशास्त्रवर्षे॥ १०५॥

वृश्चिक में चन्द्र युक्त सूर्य, धनु में शुक्र तुला में बुध और मीन में गुरु हो तो ६३ वर्ष की आयु होती है। नवम में शनि, लग्न में शुक्र और केन्द्र में गुरु हो अथवा व्यय में शुक्र, मीन में बुध, लग्न में सूर्य, धन में चन्द्रमा और सहज में भौम हो तो उक्त योगों में ६४ वर्ष की आयु होती है। जन्म राशि में जन्म राशीश तथा लग्नेश हों और वे अस्तगत हों एवं चतुर्थ रहित केन्द्र में गुरु हो तो उक्त योग में ६५ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

छियासठ, सड़सठ, अड़सठ तथा उनत्तर वर्ष की आयु के योगः—

सज्ञार्के सितगौ व्यये तपनजे मीने धने वाक्पतौ
किं सर्वैः खचरैः कुलीरलवगैः किं कालहोरापतिः।
मूर्तीशश्च विनाशगौ मृतिपतौ केन्द्रेऽङ्गषड्वत्सरं
पौरस्था बुधगौरभास्तदितरैः सर्वैः खगैर्वीक्षितः॥ १०६॥

अन्तोऽगाङ्कमिताब्द आस्पद इने कायेऽब्ज आर्को सुखे
जीवे वा त्रिकगैः समैः किमसृजा दृष्टं स्वभस्थेन खम् ।
विद्दैत्येज्ययुतौ भुजङ्गमरसाब्देऽन्तो नभः स्थानगै-
श्चान्द्रीज्येन्दुसितैर्नरस्य मरणं गोऽङ्गप्रमे हायने ।। १०७ ।।

व्यय में चन्द्रमा हो और वह बुध तथा सूर्य से युक्त हो, मीन में शनि हो और लग्न में गुरु हो तो (१) कर्क राशि के नवांश में सब ग्रह हों तो (२) अष्टम में काल हारेश तथा लग्नेश हों और केन्द्र में अष्टमेश हो तो उक्त योगों मे ६६ वर्ष की आयु होती है । लग्न में बुध, गुरु तथा शुक्र हों और वे सब अन्य ग्रहों से दृष्ट हों तो उक्त योग में ६७ वें वर्ष मरण होता है । दशम में सूर्य लग्न में शनि और सुख में गुरु हो तो (१) त्रिक में सब ग्रह हों तो (२) दशम स्थान यदि स्वराशि गत मङ्गल से दृष्ट हो और किसी स्थान में भी बुध शुक्र का योग हो तो उक्त योगों में ६८ वें वर्ष मरण होता है । दशम में बुध, गुरु, चन्द्र तथा [illegible] उक्त योग में ६९ वें वर्ष मनुष्य का मरण होता है ।

सत्तर वर्ष की आयु के योगः—

देहेन्दुभ्यां याम्यभं नेक्षिताढ्यं खेटैः केन्द्रे सन्त आर्ये पुरे वा ।
सन्तः केन्द्रे पावकोनौ पुरेन्दू धीमान् देहे खेचरोने बिले वा ।। १०८ ।।
पुत्रेऽन्त्येऽब्जेऽस्तारियुग्भास्करोऽङ्ग ओजोमुक्तोऽच्याऽथ वा मन्दगामी ।
निम्ने भौमे चिद्गृहे चण्डभानौ भार्यागारेऽनन्तशैलोन्मितायुः ।। १०९ ।।

लग्न तथा चन्द्रमा से जो अष्टम स्थान हों यदि वे ग्रह दृष्ट युक्त न हों केन्द्र में शुभ हो लग्न में गुरु हों तो (१) केन्द्र में शुभ ग्रह हों, लग्न तथा चन्द्रमा पाप युक्त न हों, लग्न में गुरु हों और अष्टम में ग्रह न हो तो (२) पञ्चम वा व्यय में चन्द्रमा, लग्न में सूर्य हों और वह भौम तथा शत्रु ग्रह से युक्त हो एवं गुरु बल रहित हो तो (३) नीच राशि में शनि, पञ्चम में भौम और सप्तम में सूर्य हो तो उक्त योगों में ७९ वर्ष की आयु होती है ।

इकत्तर तथा बत्तर वर्ष की आयु के योगः—

मारे रक्तो लोकिते लग्न उग्रैर्ग्लौशैलाब्दे कालधर्म्मो नरस्य ।
काये केतौ कोणभागाञ्चिते चेन्मर्त्यो मृत्युं याति युग्मागवर्षे ।। ११० ।।

सप्तम में मङ्गल और लग्न यदि पाप दृष्ट हो तो उक्त योगो में ७१ वर्ष में मनुष्य का मरण होता है । लग्न में शनिनवांश गत केतु हो तो उक्त योग में ७२ वर्ष में मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है ।

तेत्तर वर्ष की आयु के योगः—

उग्रैर्दृष्टे पौरपे प्राणिनश्चेत्पुण्याः सोमः सद्गणे वा शशाङ्के ।
संयुक्तेऽघाकाशगेनेन्दुपुत्रे शत्रुक्षेत्रे ग्रामवाहाब्दमायुः ।। १११ ।।

'लग्नेश' यदि पाप दृष्ट हो, शुभ ग्रह बली हों और शुभ वर्ग में चन्द्रमा हो तो (१) 'चन्द्रमा' यदि पाप युक्त हो और शत्रु क्षेत्र में बुध हो तो उक्त योगों में ७३ वर्ष की आयु होती है ।

चौहत्तर, पचहत्तर तथा छहत्तर वर्ष की आयु के योगः—

स्वर्भानौ भपतीक्षिते मृतिरुजोः पङ्क्तेऽधराय्यशके
वर्षेऽन्तोऽब्धिनगोन्मितेऽमलदृशा युक्तः प्रपूर्णाङ्गवान् ।
चन्द्रोऽङ्केऽक्षनगाब्दमायुरुदयाधीशे तनौ कण्टके
यद्वाङ्गं स्वपतीक्षितं रसहयाब्दे पञ्चता प्राणिनाम् ॥ ११२ ॥

'राहु' यदि चन्द्रमा से दृष्ट हो और अष्टम तथा षष्ठ में नीच वा शत्रु नवांशगत पाप ग्रह हो तो उक्त योग में ७४ वें वर्ष मरण होता है। लग्न में पूर्ण चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट हो तो ७५ वर्ष की आयु होती है। लग्न वा केन्द्र में लग्नेश हो अथवा लग्न अपने स्वामी से दृष्ट हो तो उक्त योग में ७६ वर्ष में मृत्यु होती है।

सतहत्तर, अठहत्तर तथा उनासी वर्ष की आयु के योगः—

कोणेऽच्छे धिषणे मदे विदि पदे पाथस्यगागाब्दकं
द्वन्द्वर्क्षे स्थिरभे समैर्दिविचरैरायुर्गजागोन्मितम् ।
वर्षे स्वोच्चगतैश्चतुःप्रभृतिभिः खेटैः सकेन्द्रैर्नृणां
पञ्चत्वं कथयन्ति होरिकवरा वर्षे नवागोन्मिते ॥ ११३ ॥

त्रिकोण में शुक्र, सप्तम में गुरु और दशम वा सुख में बुध हो तो उक्त योग में ७७ वर्ष की आयु होती है। द्विस्वभाव राशि तथा स्थिर राशि में समस्त ग्रह हों तो उक्त योग में ७८ वर्ष की आयु होती है। केन्द्र में स्वोच्च राशिगत चार वा चार से अधिक ग्रह हों तो उक्त योग में ७९ वर्ष में मनुष्यों की मृत्यु को कहते हैं।

अस्सी वर्ष की आयु के योगः—

तुङ्गे गौरे गात्रपोऽतीववीर्य्यः सत्खौकाभिः स्वस्वमूलत्रिकोणे ।
किं वा कोणे संस्थिताः साधुखेटा गीर्वाणेज्ये षोडशांश्युद्गमे वा ॥ ११४ ॥
पापांशस्थैः केन्द्रगैः सर्वखेटैर्यद्वा भार्यागामिना भार्गवेण ।
पङ्गुः प्राप्तो गीरथे गात्रयात आयुः प्रोक्तं हायनानामशीतिः ॥ ११५ ॥

स्वोच्च राशि में गुरु, लग्नेश अति बली हो और अपनी अपनी मूल त्रिकोण राशि में शुभ ग्रह हो तो (१) पञ्चम तथा नवम में शुभ ग्रह हो और कर्कलग्न में गुरु हो तो (२) केन्द्र में पापांशगत सब ग्रह हो तो (३) सप्तम में शुक्र, लाभ में शनि और लग्न में गुरु हो तो उक्त योगों में ८० वर्ष की आयु होती है।

पिचासी वर्ष की आयु का योगः—

गौरस्य गोभागगतैः पतङ्गपापीनजैः पारगतः पुरोधाः ।
पञ्चत्वमुक्तेभ्वितराभ्रसत्तु पञ्चत्वमेतीषुगजोन्मितेऽब्दे ॥ ११६ ॥

गुरु के नवांश में सूर्य, भौम तथा शनि हो, लग्न में गुरु हो एवं अष्टम रहित स्थान में अन्य ग्रह हो तो उक्त योग में मनुष्य ८५ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

छियासी तथा नव्वे वर्ष की आयु के योगः—

द्वन्द्वद्वयङ्गांशे समस्तैः खगैर्वा सेज्ये चन्द्रे केन्द्रगे चारुदृष्टे ।
लाभान्त्यस्थैरन्यखेटैरुतेन्दुर्द्वेष्ये क्रूरैः कालधर्म्मोयनयातैः ॥ ११७ ॥
सद्भिः खेटैः कण्टकागारसंस्थैर्वर्षे रागव्यालतुल्येऽत्ययः स्यात् ।
सर्वैः खेटैर्वाजिनो द्वादशांशं प्राप्तैर्जीवेदम्बराङ्कोन्मितेऽब्दे ॥ ११८ ॥

मिथुन राशि में तथा द्विस्वभाव राशि के नवांश में सब ग्रह हो तो (१) केन्द्र में गुरु युक्त चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट हो एवं लाभ तथा व्यय में अन्य ग्रह हों तो (२) षष्ठ में चन्द्रमा और अष्टमस्थान के अतिरिक्त स्थान में पापग्रह हों एवं केन्द्र में शुभ ग्रह हों तो उक्त योगों में ८६ वर्ष में मरण होता है । धनू राशि के द्वादशांश में सब ग्रह हो तो उक्त योग में ९० वर्ष जीवे ।

सौ वर्ष की आयु के योगः--

अनिमिषानिमिषद्विषदर्च्चितौ मनसिजोदयमानसमानगौ ।
रचयतः शरदां शतमाङ्गिनः सकुलिरे शिरसीन्द्रपुरोधसि ॥ ११९ ॥

दनुजराजगुरौ सति केन्द्रगे किमुडुपोऽन्त्यशगोऽङ्गशयोः शनौ ।
उत चतुष्टयकोणरणेषु नो सदितरे धिषणः किमु भार्गवः ॥ १२० ॥

यदि चतुष्टयगो गुरुभोदये लयशयोः शुभलोकितयोः किमु ।
हरिजपो हरगो हिमगुर्हरौ श इतरे सबले धिषणेऽ थ वा ॥ १२१ ॥

उशनसि झषलग्ने केन्द्रवर्त्ती गिरीशः
समिति सकृतदृष्टः पक्षजन्माऽथ वाघाः ।
निजनिलयगता नाङ्गाष्टवैरीन्दुयुक्ता
बलकलितखगौ द्वौ खे तदाऽऽयुः शताब्दम् ॥ १२२ ॥

सप्तम लग्न चतुर्थ वा दशम में गुरु तथा शुक्र हो तो उक्त योग में मनुष्य की सौ वर्ष की आयु करते हैं। लग्न में कर्क राशि गत गुरु और केन्द्र में शुक्र हो तो (१) व्यय वा नवम में चन्द्रमा हो और लग्न वा नवम में शनि हो (२) केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम में पाप ग्रह न हों, केन्द्र में गुरु वा शुक्र हो, लग्न में गुरु की राशि हो और अष्टम तथा नवम शुभ दृष्ट हों तो (३) अष्टम में लग्नेश हो, दशम में चन्द्रमा हो, गुरु बली हो और अन्य ग्रह नवम में हो तो (४) लग्न में मीन राशि गत शुक्र, केन्द्र में गुरु और अष्टम में शुभ दृष्ट चन्द्रमा हो तो (५) स्वराशि में पाप ग्रह हों किन्तु वे लग्न अष्टम तथा षष्ठ में न हो और चन्द्रमा से युक्त न हों एवं दशम में दो बली ग्रह हों तो उक्त योगों में १०० वर्ष की आयु होती है।

पुण्याम्बुगाः पङ्कखगाः सुखेचराः सूर्य्यंशसंस्थाः समभांशगाः किमु ।
प्रान्त्यार्थगाः पूर्णनिशाकरे पुर आयुः शतं स्याच्छरदां रमान्वितम् ॥ १२३ ॥

नवम तथा चतुर्थ में पापग्रह हों, गुरु के नवांश में वा सम राशि में वा समांश में शुभ ग्रह हो और वे व्यय तथा द्वितीय स्थान में हों एवं लग्न में पूर्ण चन्द्रमा हो तो उक्त योग में धनी पुरुष की १०० वर्ष की आयु होती है।

कार्मुकस्यान्तिमेऽशेऽङ्गे केन्द्रस्थेभाद्यगोलवे ।
सदाकाशचरोपेत आयुः स्याच्छरदां शतम् ॥ १२४ ॥

लग्न में धनु का अन्त्य नवांश हो और केन्द्र गत राशि के प्रथम नवांश में शुभ ग्रह हों तो उक्त योग में सौ वर्ष की आयु होती है।

मारकेश परिज्ञानः—

आयुः स्थाने कालधर्मोऽङ्गगेहे दारद्रव्ये मारकस्थानके द्वे ।
अल्पं मध्यं पूर्णमायुर्नराणां विज्ञायाद्यं हौरिकेन्द्रैः प्रवीणैः ॥ १२५ ॥
पश्चात्कार्यं चिन्तनं मारकस्य मान्दिः केतुर्मारकौ द्वावतीव ।
जातार्थायुर्भृत्यपा मारकाख्याः पापाधिक्ये षष्ठभावे तदानीम् ॥ १२६ ॥
ज्ञेयो मुख्यो मारको मातुलेशो मृत्युं ब्रूयान्मारकेशस्य दाये ।
किं पापानां मारकस्थानगानां दाये मृत्युं निर्दिशेन्मानवानाम् ॥ १२७ ॥

अष्टम तथा तृतीय ये दो आयु के स्थान हैं। सप्तम तथा द्वितीय ये मारकस्थान हैं। प्रथम मनुष्यों की अल्प, मध्य तथा पूर्णायु के विचार को जानकर पिछे मारक का विचार करे। इस प्रकार चतुर जातक शास्त्रवेत्ताओंने कहा है। मान्दि (गुलिक) तथा केतु ये दो अत्यन्त मारक होते हैं। सप्तम, द्वितीय, अष्टम तथा तृतीय इन चार स्थानों के स्वामी मारक होते हैं। षष्ठ स्थान में यदि बहुत पाप ग्रह हों तो षष्ठ स्थान का स्वामी मुख्य मारक होते है। मारकेश की दशा में मनुष्यों की मृत्यु को कहे। अथवा उक्त मारकस्थान में स्थित पाप ग्रहों की दशा में मृत्यु को कहे।

पापस्य दाये दुरितस्य भुक्तौ पञ्चत्वमाहुर्मनुजस्य तेषाम् ।
असम्भवेऽन्त्याधिपदायकाले तस्याप्यभावे मृतिपस्य दाये ॥ १२८ ॥
मृतिर्मता पापकृदर्कनन्दनः सम्बन्धतो मारकखेचरैः सह ।
तदा तिरस्कृत्य समस्तखेचरान्पराग्निहन्ता प्रभवेन्न संशयः ॥ १२९ ॥

पाप ग्रह की दशा के परिपाक काल में पाप ग्रह की अन्तर्दशा आनेपर मनुष्य की मृत्यु को कहे। पूर्व निश्चित अल्प, मध्य तथा पूर्णायु काल उक्त मारकेशो की दशाओं के अभाव होने पर व्ययश की दशा में मरण कहे। यदि उक्त काल में व्ययेश की दशा का भी अभाव हो तो अष्टमेश की दशा में मरण कहे। यदि पाप कर्ता (तृतीय, षष्ठ, अष्टम वा लाभ इन स्थानोंके स्वामी) शनि का मारकेशों के साथ सम्बन्ध हो तो अन्य सब मारकेशों को उल्लंघ कर शनि ही मारक होता है। इस में सन्देह न करना चाहिए।

दुष्टेन्दुपाकेऽपि मृतिर्निरुक्ता स्वान्त्यास्तशान्तारिसहोत्थपानाम् ।
मध्ये बली यः स तु मारकाख्यो मुख्योऽरिपस्तेष्वपि मारकः स्यात् ॥ १३० ॥

दुष्ट चन्द्रमा की दशा में मरण कहना चाहिये। द्वितीय, व्यय, सप्तम, अष्टम, षष्ठ तथा तृतीय इन छः स्थान के स्वामियों के मध्य में जो अधिक बली हो वह मुख्य मारक होता है। उन में भी षष्ठेश ही मुख्य मारक होता है।

चेन्मारका व्योमचरा अदभ्रा वीर्य्यैरुपेता गदकष्टपूर्वम् ।
तत्तद्दशाभुक्तिषु कल्पनीयं षष्ठेशदाये ध्रुवमत्ययः स्यात् ॥ १३१ ॥

यदि बहुत ग्रह बली होकर मारकेश हों तो उन उन की दशा तथा अन्तर्दशा ओं के परिपाक काल में रोग तथा कष्टादि की कल्पना करनी चाहिये। षष्ठेश की दशा में तो निश्चय ही मृत्यु होती है।

विहङ्गमस्य प्रबलस्य दाये महामयो मृत्युवदेव गीतः ।
शोकादिभिः साध्वसमाग्निभीतिर्वाच्या व्यथा तस्करपूर्वकैर्वा ॥ १३२ ॥

अतीव बली मारकेश की दशा में मृत्यु के समान ही महान् रोग को कहे। एवं शोकादि से भय वा अग्नि से भय वा चोर प्रभृति यों से पीडा कहनी चाहिए।

त्रिकस्थलाधीशदशापहारे मृत्युर्विचिन्त्यो हृतिनायका ये ।
तेषां तु तन्मध्य इहाधिवीर्य्यस्तदीयभुक्तौ निधनं ध्रुवं स्यात् ॥ १३३ ॥

त्रिकेशों की दशा के परिपाक काल में मृत्यु का विचार करना चाहिए। उन त्रिकेशों की दशा ओं में जो अन्तर्दशा के स्वामी हों उन सब के मध्य में जो अधिक बली ग्रह हो उस की अन्तर्दशा में निश्चय से मृत्यु होती है।

राहु तथा केतु के मारकत्व का परिज्ञानः—

ध्वान्तो ध्वजो वान्त्वलयास्तलग्ने किं मारकेशान्मदमन्दिरस्थः ।
किं मारकाकाशचरेण युक्तः स मारकः स्यान्निजदायपूर्वे ॥ १३४ ॥

व्यय अष्टम, सप्तम वा लग्न में यदि राहु वा केतु हो अथवा वह मारकेश ग्रह से सप्तम स्थान में हो अथवा वह मारकेश ग्रह से युक्त हो तो वह (राहु वा केतु) अपनी दशा प्रभृति में मारक होता है।

मृगानने ऽलौ जननं नरस्य तत्रोरगश्चेद्धविनो ऽन्तदान्ता ।
विधुन्तुदो वैरिवधव्ययस्थः कष्टप्रदः स्यान्निजदायकाले ॥ १३५ ॥

मकर वा वृश्चिक (राशि वा लग्न) में मनुष्य का जन्म हो और उस में राहु हो तो वह मनुष्य को मृत्यु दायक होता है। षष्ठ, अष्टम वा व्यय में राहु हो तो अपनी दशा के परिपाक काल में कष्टदायक होता है।

मारकत्व में बली ग्रह का परिज्ञानः—

स्युर्मारकत्वे बलिनः क्रमेणार्कास्त्रार्किपाता बलवान् ग्रहो यः ।
भौमार्किभास्वत्तमसां नुरन्तो योगानुसारेण तदीयदोषात् ॥ १३६ ॥

सूर्य, भौम, शनि तथा राहु ये चारों मारकत्व में क्रमसे बली होते हैं। भौम, शनि, सूर्य तथा राहु इन चारों के मध्य में योग के अनुसार जो अधिक बली ग्रह हो उस के दोष (पित्तप्रभृति) से मनुष्य का मरण होता है।

मृत्यु कारिणी दशा परिज्ञानः—

आयुर्नाथे दुष्टगे तस्य दाय भुक्तौ वाऽऽर्किक्रान्तराशीशदाये।
रन्ध्रेड्भुक्तौ वायुरीशस्य दाये तत्क्रान्तर्क्षाधीशदायेऽथवाऽन्तः॥ १३७॥

त्रिक में अष्टमेश हो तो उस की दशा वा अन्तर्दशा में मृत्यु होती है। अथवा शनि की अधिष्ठित राशि के स्वामी की दशा में अष्टमेश की अन्तर्दशा आनेपर मृत्यु होती है। अथवा अष्टमेश की दशा में वा अष्टमेश की अधिष्ठित राशि के स्वामी की दशा में मनुष्य का मरण होता है।

बलाबलत्वं द्युसदां समग्रं सञ्चिन्त्य यत्तत्कथयेन्मृतिं नुः।
साहौ सकेता त्रिकगेऽङ्गपे वा नाशाङ्गनाथान्वितनाकगानाम्॥ १३८॥

दायेऽथ वा तद्ग्रहयुग्मपत्योर्दायेऽत्ययोऽनन्तमदां क्रमेण।
पूर्वोदितानां प्रथमागतायां भुक्तौ दशायां तमसोऽन्तमाहुः॥ १३९॥

ग्रहों के समस्त बलाबल का विचार कर के मनुष्य की मृत्यु को कहे। अथवा त्रिक में लग्नेश हो और वह राहु वा केतु से युक्त हो तो उस की दशा में मृत्यु को कहे। अथवा अष्टमेश तथा लग्नेश से युक्त ग्रहों की दशा में मृत्यु को कहे। अथवा अष्टमेश तथा लग्नेश की अधिष्ठित राशियों के स्वामियों की दशा में मृत्यु को कहे अथवा पूर्वोक्त मारक ग्रहों से मध्यम में क्रम से पूर्वागत राहु की दशा वा अन्तर्दशा में मनुष्य की मृत्यु को कहते हैं।

मध्ये मन्दाङ्गायुरभ्राधिपानां यः सव्यालो वीर्य्यहीनो विहङ्गः।
पुंसां मृत्युस्तद्दशाभुक्तिकाले किं तद्दृश्याढ्याभ्रगानां दशादौ॥ १४०॥

शनि लग्नेश, अष्टमेश तथा दशमेश इन चारों के मध्य में जो निर्बल हो और राहु से युक्त हो उस की दशा में तथा अन्तर्दशा में पुरुषों की मृत्यु होती है। अथवा राहु युक्त निर्बल ग्रह जिन ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो उन की दशादि में पुरुषों की मृत्यु होती है।

यदाऽऽयुरीशे क्षयगे तदीयदाये हृतावामयमेति मर्त्यः।
कलेवरार्तिः परिकीर्त्यतेऽङ्गे देहाधिपे तस्य हृतौ दशायाम्॥ १४१॥

जब अष्टम में अष्टमेश हो तो उस की दशा तथा अन्तर्दशा में मनुष्य रोग को प्राप्त होता है। एवं लग्न में लग्नेश हो तो उस की दशा तथा अन्तर्दशा में शरीर में पीडा कहे।

पश्चाद्भदस्यक्षयकोऽङ्गसौख्यं प्रजायते देहभृतां च मोदः।
विनाशनाथे सहसा समेते देहेशदाये मरणं जनस्य॥ १४२॥

देह कष्ट के पश्चात् मनुष्यों के कष्ट का नाश एवं शरीर सौख्य और हर्ष होता है। यदि अष्टमेश बली हो तो लग्नेश की दशा में मनुष्य का मरण होता है।

घने गतोऽर्ज्जे जनजन्मकाले कष्टं भवेन्मूर्त्तिमृतीशदाये ।
लभेत पश्चात्सुखमुद्गतेशे यदां ऽ सले ऽ न्तो ऽ न्तविभोर्दशायाम् ॥ १४३ ॥

मनुष्य के जन्म समय में यदि लग्न निर्बल हो तो लग्नेश तथा अष्टमेश की दशा में कष्ट और पश्चात् सुख होता है। यदि लग्नेश बली हो तो अष्टमेश की दशा में मरण होता है।

सवीर्य्ययोर्विग्रहगुह्यपत्योः केन्द्रत्रिकोणाश्रितयोश्च ताभ्याम् ।
ये संयुतास्तध्द्रुतिदायकाले रोगापवादादिफलं प्रदिष्टम् ॥ १४४ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में बली लग्नेश तथा बली अष्टमेश हो तो जो ग्रह उन से युक्त हो उन की अन्तर्द्दशा दशा में रोग तथा अपवाद इत्यादि फल कहा है।

कायायुरीशौ द्युचरेण युक्तौ चतुष्टयस्थौ मतिमार्गगौ वा ।
तदा ऽ ऽ युरागारगतग्रहस्य दाये शरीरी ध्रुवमेति मृत्युम् ॥ १४५ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में ग्रह युक्त लग्नेश तथा ग्रह युक्त अष्टमेश हो तो अष्टमगतग्रह की दशा में निश्चय से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

यदा जनौ नाभ्रचरो ऽ ष्टमस्थो ऽ न्तं चिन्तयेन्मूर्तिगतग्रहेण ।
कलेवरे वा कलहे कृशाङ्गे तद्भुक्तिदायावसरे ऽ त्ययः स्यात् ॥ १४६ ॥

जब जन्मकाल में कोई ग्रह अष्टम स्थान में न हो तब लग्न गत ग्रह से मृत्यु का विचार करे। यदि लग्न वा अष्टम में शनि हो तो उस की अन्तर्द्दशा वा दशा के परिपाक काल में मनुष्य का मरण होता है।

दिष्टान्तदेहेशयुताभ्रगनां मध्ये विहङ्गो बलवर्जितो यः ।
द्युचारिणस्तस्य दशाविपाके ऽ थ वा हृतौ ना निधनं समेति ॥ १४७ ॥

अष्टमेश तथा लग्नेश से युक्त ग्रहों के मध्य में जो ग्रह सब से निर्बल हो उस की दशा में वा अन्तर्द्दशा में मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

यो वर्ष्मरैपतमसां चरभादिकेषु
मूर्द्धोदयेषु मृतिरस्य दशापहारे ।
पृष्टोदयेषु यदि तत्रिलवाधिपस्य
तद्युदक्तशिखचरस्य दशासु मृत्युः ॥ १४८ ॥

लग्नेश, धनेश तथा राहु इन तीनों के मध्य में जो ग्रह चरराशि में वा शीर्षोदय राशि में हो उस की दशा के परिपाक समय में मनुष्य की मृत्यु होती है। यदि उक्त तीनों के मध्य में जो ग्रह पृष्ठोदय राशि में हो उस के

द्रेष्काणेश की दशा में अथवा वह ग्रह जिस से युक्त वा दृष्ट हो उस की दशाओं के परिपाक काल में मनुष्य की मृत्यु होती है।

गोचरादि से मृत्यु समय परिज्ञानः—

चण्डांशुपुत्रे यदि चारगत्या तत्तद्गृहान्मृत्युपतिस्थभागे।
सत्कोणयाते किमुतान्त्यपस्थमांशे विनाशो भवनस्य तस्य ॥ १४९ ॥

तन्वादि द्वादश भावों के मध्य में जिस जिस भावका विचार करना हो उस उस से जो अष्टम स्थान हो उस स्थान के स्वामी की नवांश राशि में वा उस नवांश राशि से जो पंचम वा नवम राशि हो उस में गोचर से जब शनि आवे तब उस भाव का नाश होता है। अथवा उस (विचारणीय) भाव से जो द्वादश स्थान हो उस के स्वामी की आक्रांत राशि में वा नवांश राशि में गोचर से जब शनि आवे तब उस भाव का नाश होता है।

मान्दिर्मृतीशो मृदुगोऽथ वा खरात्रिभागपस्तिष्ठति यद्गृहे यमे।
तद्भांशकोणे मनुजस्य पञ्चतां वदेत्तथोद्यास्त्रिलवेश्वरस्य च ॥ १५० ॥

नाशाधिनाथस्य च मृत्युमन्दिरत्रिभागपस्यापि भभागकोणगे।
जीवेऽन्त्ययः स्वस्फुटभास्करांशके यद्वा वधागारपतिस्थगोंऽशके ॥ १५१ ॥

मूर्तीशगांशे किमु तास्त्रिकोणभेऽप्यन्तो विधो रन्ध्रपते र वेः किमु।
राश्यांशभाग्यात्मजभं गते मृतिर्ग्लौलग्नतः सर्वमिदं विचिन्तयेत् ॥ १५२ ॥

मान्दि (गुलिक) अष्टमेश शनि अथवा खरत्रिभागेश (बाईस वें द्रेष्काण का स्वामी) जिस राशि में हो उस राशि में वा नवांश राशि में वा उस राशि से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मनुष्य की मृत्यु को कहे। उद्यद्द्रेष्काणेश अष्टमेश वा अष्टम भाव गत द्रेष्काणेश की राशि में वा नवांश राशि में वा उस राशि से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब मनुष्य की मृत्यु होती है। अथवा जन्म समय में जिस राशि के द्वादशांश में गुरु हो उस राशि में वा अष्टमेश की नवांश राशि में वा लग्नेश की नवांश राशि में वा उस से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब मृत्यु को कहे। अष्टमेश की वा सूर्य की राशि में वा नवांश राशि में अथवा उस से नवम वा पञ्चम राशि में गोचर से जब चन्द्रमा आवे तब मृत्यु होती है। यह सब विचार चन्द्रमा तथा लग्न से भी करना चाहिए।

सौरोनषोडशिभभागगतेऽमरेड्ये
किं मूर्तिपोनयमकण्टकभांशगे वा।
कोणं गते निजमृतिर्गदितार्कमूर्ति-
मान्दिस्फुटैक्यभांवेशुस्थभगे गिरीशे ॥ १५३ ॥

किं तास्त्रिकोणगृहगेऽथ यमं विशोध्य
मान्दिस्फुटे भलवकोणमिते मृदौ वा।
धूमादिपञ्चखचरस्फुटयोगराशि-
द्रेष्काणगेऽर्कतनयेऽन्तमुपैति जन्तुः ॥ १५४ ॥

स्पष्ट चन्द्रमा में स्पष्ट शनि को शोधन करे तब जो शेष राशि बचे उस में तथा शेष की नवांश राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब मृत्यु होती है। अथवा यमकण्टक में लग्नेश को शोधन करे तब जो शेष राशि बचे उस में वा उस के नवांश में वा उस से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब निज मरण कहे। सूर्य, लग्न तथा गुलिक इन तीनों के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो राशि हो उस में वा उस से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब मृत्यु होती है। अथवा स्पष्ट गुलिक में स्पष्ट शनि को शोधन करे तब जो शेष राशि बचे उस में वा उसकी नवांश राशि में वा उस से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मृत्यु होती है। अथवा धूमादि (धूम, परिधि, कोदण्ड, व्यतीपीत तथा ध्वज इन) पाँच उपग्रहों के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो योग राशि हो उस में वा उस योग की द्रेष्काण राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

—: उदाहरण :—

स्पष्ट चन्द्र ४। २९। ३४। ४६ में स्पष्ट शनि ७। १। ५९। ३३ को हीन किया तो ९। २७। ३५। १३ शेष राश्यादि बचे। यहां वर्तमान राशि मकर है। और उस में कन्या का नवांश है अतः मकर वा कन्या में गुरु के आने पर मरण होगा।

यमकण्टक ०। २। ४। ३२ में लग्नेश गुरु ४। १४। १३। २० को हीन किया तो ७। १७। ५१। १२ शेष राश्यादि बचे। यहां वर्तमान राशि मकर है और उसमें कर्कका नवांश है। एवं मकरसे वृष तथा कन्या त्रिकोण राशि है और कर्क से वृश्चिक तथा मीन त्रिकोण राशि हैं अतः वृष कर्क कन्या वृश्चिक मकर वा मीन में गुरु के आने पर मरण होगा।

स्पष्ट सूर्य २। २१। ३४। २५ स्पष्ट लग्न ११। १९। ४५। ४५ और स्पष्ट गुलिक १०। ४। ४७। २ है। इस तीनों का योग किया तो ०। १६। ७। ११। राश्यादि हुए। यहां वर्तमान मेष राशि है इससे सिंह तथा धनु त्रिकोण राशि हैं अतः मेष सिंह वा गुरु के आनेपर मरण होगा।

स्पष्ट गुलिक १०। ४। ४७। २ में स्पष्ट शनि ७। १। ५९। ३३ को हीन किया तो ३। २। ४७। २९ शेष राश्यादि बचे। यहां वर्तमान राशि कर्क है और उसमें कर्कांश है इस से वृश्चिक तथा मीन त्रिकोण राशि हैं अतः कर्क वृश्चिक वा मीन में शनि के आने पर मृत्यु होगी।

स्पष्ट धूम ७। ४। ५४। २५ व्यतीपात ४। २५। ५। ३५ परिधि १०। २५। ५। ३५ इन्द्र धनु १। ४। ५४। २५ उप केतु (ध्वज) १। २१। ३४। २५ इन पाँचों उपग्रहों का योग किया तो १। २१। ३४।४५ योग राश्यादि हुए। यहाँ वर्तमान वृष राशि है और इस में मकर का द्रेष्काण अतः वृष वा मकर में शनि के आने पर मृत्यु होगा।

मान्दिं मृदुं चाङ्कमितैर्गुणित्वा तदैक्यराश्यंशगते घटेशे।
नुः पञ्चता स्याद्यमकण्टकाख्यं संशोध्य लग्नाधिपतिस्फुटाख्ये ॥ १५५ ॥

तद्भांशगे देवनुतेऽथ मेचके यदा त्रिकेशस्फुटयोगभं गते।
किं तत्रिकोणोपगतेऽथ दीदिवावुद्यत्रिभागाधिपभं गतेऽथ वा ॥ १५६ ॥

तस्मात्रिकोणर्क्षमिते ऽथ हंसजे याम्यत्रिभागेशगृहं गते किमु ।
याते त्रिकोणे किमु जन्मभोदयायुर्नाथयोर्जातिदृगाणनाथयोः ॥ १५७ ॥

तयोरथो मान्दिमृगाङ्कयोरपि महाग्रहे दुर्बलभागकोणगे ।
स्यान्मृत्युरङ्गेशनवांशभोन्मितं याम्येशभं यात इनात्मजे मृतिः ॥ १५८ ॥

गुलिक तथा शनि के स्पष्ट राश्यादि को पृथक् पृथक् ९ से गुणकर तब जो गुणन फल हों ऊन का योग करे तब जो राशि वा नवांश राशि हो उस में गोचर से जब शनि आवे तब मनुष्य का मरण होता है। लग्नेश के स्पष्ट राश्यादि में यम कण्टक के स्पष्ट राश्यादि को शोधन करे तब जो शेष राशि वचे उसमें वा उसकी नवांश राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब मृत्यु होती है। षष्ठेश, अष्टमेश तथा व्ययेश इन तीनों के स्पष्ट राश्यादिका योग करे तब जो राशि हो उसमें वा उससे त्रिकोण (५।९) राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मृत्यु होती है। उग्रद् (लग्नगत) द्रेष्काण का स्वामी जिस राशि में हो उस में वा उस से त्रिकोण राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब मृत्यु होती है। अष्टम स्थान में जिस राशि का द्रेष्काण हो उसका स्वामी जिस राशि में हो उस में वा उस से त्रिकोण राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मृत्यु होती है। जन्म चन्द्र राशि से तथा जन्म लग्न राशि से जो अष्टम राशि हों उन के स्वामी एवं जन्म चन्द्र राशि से तथा जन्म लग्न राशि से बाईसवें द्रेष्काण राशि के स्वामी तथा चन्द्र और गुलिक इन छःओं के मध्य में जो दुर्बल हो उसकी नवांश राशि में वा उस से त्रिकोण राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मृत्यु होती है। अथवा लग्नेश की नवांश राशि में तथा अष्टमेश की राशि में गोचर से जब शनि आवे तब मृत्यु होती है।

—: उदाहरण :—

स्पष्ट गुलिक १०।४।४७।२ को ९ से गुणातो ९१।१३।३।१८ राश्यादि हुए। एवं स्पष्ट शनि ७।१।५९।३३ को ९ से गुणातो ६३।१७।५५।५७ राश्यादि हुए। इन दोनों का योग किया तो १५५।०।५९।१५ राश्यादि हुए। राशि १५५ को १२ से तष्ट किया तो ११।०।५९।१५ शेष राश्यादि वचे। यहां वर्तमान मीन राशि है और उस में कर्कका नवांश है अतः मीन वा कर्क के शनि में मृत्यु होगी।

लग्नेश गुरु ४।१४।१३।२० में यमकण्ट ०।२।४।३२ को शोधन किया तो ४।१२।८।४८ शेष राश्यादि वचे। यहां वर्तमान सिंह राशि है और उस में कर्कांश है अतः सिंह वा कर्क के गुरु में मृत्यु होगी।

षष्ठेश सूर्य २।२१।३४।२५ अष्टमेश शुक्र १।५।२५।३८ व्ययेश शनि ७।१।५९।३३ है। इन तीनों का योग किया तो १०।२८।५९।३६ राश्यादि हुए। यहां वर्तमान कुम्भ राशि है। इस से मिथुन तथा तुला त्रिकोण राशि हैं। अतः मिथुन तुला वा कुम्भ मे शनि के आने पर मृत्यु होगी।

चन्द्रत्रिभागमुथतो ऽथ खरत्रिभागे-
शर्क्ष गते नवमपञ्चमगे ऽपि वान्तः ।
चन्द्रे ऽन्त्यमूर्तिमृतिगे ऽथ रवौ मृतीश-
स्थर्क्षे विधौ रविगभे मृतिपस्य धिष्ण्ये ॥ १५९ ॥

मृत्युं वदेद्गुलिकभात्मजभाग्यराशौ
याते पपोशुवि मृतिर्निशि सम्भवानाम् ।

तस्माद् द्युने द्युनि भुवां सचिवोरगेश-
स्पष्टैक्यभं गत उताङ्कसुते सुरेये ॥ १६० ॥

आयुस्त्रिभागलवपस्थगृहं तदीश-
भांशं गते भगसुते भविनां मृतिः स्यात् ।
मन्देश्वरस्य जनने जननायुरीश-
भांशत्रिकोणभवने भगसम्भवे ऽन्तः ॥ १६१ ॥

जन्म कालीन चन्द्रमा जिस द्रेष्काण वा जिस नवांश में हो उस राशि में अथवा बाईस से वें द्रेष्काण का स्वामी जिस राशि में हो उसमें वा उस से नवम वा पञ्चम राशि में गोचर से जब शनि आवे तथा व्यय लग्न वा अष्टम भाव गत राशि में चन्द्रमा के आनेपर मरण होता है। अष्टमेश जिस राशि में हो उस में गोचर से सूर्य के आनेपर तथा जन्म में जिस राशि में सूर्य हो उस में गोचर से चन्द्रमा के आनेपर एवं अष्टमेश जिस नक्षत्र में हो उस में मृत्यु को कहे। जिस राशि में गुलिक हो उस में वा उस से पञ्चम वा नवम राशि में गोचर से जब शनि आवे तब रात्रि के जन्म वाले मनुष्यों का मरण होता है। एवं गुलिक की आक्रान्त राशि से जो सप्तम राशि हो उस में शनि के आनेपर दिन के जन्म वाले मनुष्यों का मरण होता है। राहु तथा गुरु के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो राशि हो उस में वा उस से नवम वा पञ्चम राशि में गुरु के आने पर मृत्यु होती है। जन्म लग्न से अष्टम स्थान में जिस राशि का द्रेष्काण वा नवांश हो उस का स्वामी जिस राशि में हो उस में शनि के आने पर मृत्यु होती है। अथवा अष्टमस्थ द्रेष्काण राशि का वा नवांश राशि का स्वामी जिस राशि में हो उस के स्वामी की राशि में वा नवांश राशि में गोचर से शनि के आने पर मनुष्यों का मरण होता है। जन्म समय में जिस राशि में शनि हो उस के स्वामी की राशि से वा नवांश राशि से जो पञ्चम वा नवम राशि हो उस में वा जन्म लग्न से अष्टम स्थान के स्वामी की राशि से वा नवांश राशि से जो पञ्चम वा नवम राशि हो उस में गोचर से शनि के आने पर मृत्यु होती है।

मृगाङ्कभे मान्दिगृहे ऽङ्कभे निशि दिवा ऽर्कभे तद्द्युनकोणगे ऽसिते ।
मृतिर्मतायुर्गृहपातु यावति भे मन्दजस्तावति भे ततः शनिः ॥ १६२ ॥

चेन्मृत्युमाहुर्विबुधा यदा जनुःकालीनकाव्यात्तरणौ स्मरे रिपौ ।
व्यये ऽथ वा निश्चितमेव पञ्चतां ब्रुवन्ति धीरा इति सद्गुरूदितम् ॥ १६३ ॥

रात्रि का जन्म हो तो जन्म चन्द्र राशि गुलिक राशि वा लग्न राशि में शनि के आने पर मृत्यु होती है। यदि दिन का जन्म हो तो सूर्य राशि से सप्तम राशि वा त्रिकोण राशि में शनि के आनेपर मृत्यु जाननी चाहिए। अष्टमेश से जितनी संख्या की राशि में गुलिक हो उससे उतनी संख्या की राशि में शनि के आनेपर मृत्यु कहे। जन्म समय में शुक्र जिस राशि में हो उस से सप्तम षष्ठ वा व्यय भाव गत राशि में सूर्य के आने पर पण्डितजन मृत्यु को कहते है। इस प्रकार सद्गुरु जनों ने कहा है।

तिष्ठन्ति दुष्टालयपा विनाशत्र्यंशाधिपो मन्दजनिश्च येषु ।
गृहेषु तेष्वेव यदा शनीज्यसूर्येन्दवश्चारवशात्प्रयान्ति ॥ १६४ ॥

तदा नराणां मरणं प्रदिष्टं वदन्ति तद्भावत्रशात्तथैव ।
तत्तात्रिकोणे ऽप्यथवो वानां विनिश्चितं मृत्युमुदीरयन्ति ।। १६५ ।।

षष्ठेश, अष्टमेश तथा व्ययेश ये तीनों जिस जिस राशि में हो उन में तथा अष्टम भावगत द्रेष्काण का स्वामी जिस राशि में हो उस में एवं गुलिक जिस राशि में हो उस में अर्थात् उक्त पाँचों राशियों में गोचर से जब शनि गुरु, सूर्य तथा चन्द्रमा आवें तब मनुष्यों की मृत्यु कही है । अथवा उन की नवांश राशि के वश से मृत्यु को कहते हैं। अथवा उक्त राशियों से जो त्रिकोण (५।९) राशि हों उन में गोचर से जब उक्त ग्रह आवें तब प्राणियों की मृत्यु को कहते हैं ।

निर्याणमासादियों का परिज्ञान : —

निर्याणमासं कथयन्ति कायमान्दिस्फुटैक्यर्क्षलवं कवीन्द्राः ।
निर्माणशीतद्युतिरिन्दुमान्दियोगो ऽङ्गमङ्गार्किजचन्द्रयोगः ।। १६६ ।।

लग्न तथा गुलिक के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो राशि वा उस में जो नवांश राशि हो उसे निर्याण (मौत का) मास कहते हैं अर्थात् योग राशि वा उस योग की नवांश राशि में गोचर से जब सूर्य आवे तब मृत्यु होती है । स्पष्ट चन्द्र तथा स्पष्ट गुलिक का योग करे तब जो राश्यादि योग हो वह निर्याण समय का स्पष्ट चन्द्र होता है । एवं लग्न, गुलिक तथा चन्द्रमा के स्पष्ट राश्यादि का योग करे तब जो राश्यादि हो वह निर्याण काल का स्पष्ट लग्न होता है ।

—: उदाहरण :—

स्पष्ट लग्न ११।१९।४५।४४ स्पष्ट गुलिक १०।४।४७।२ है । इन दोनों का योग किया तो ९।२४।३२।४६ निर्याण समय (मास) का 'स्पष्ट सूर्य' हुआ ।

स्पष्ट चन्द्र ४।२९।३४।४६ स्पष्ट गुलिक १०।४।४७।२ है इन दोनों का योग किया तो ३।४।२१।४८ निर्याण काल काल का 'स्पष्ट चन्द्र' हुआ ।

लग्न ११।१९।४५।४४ गुलिक १०।४।४७।२ और चन्द्र ४।२९।३४।४६ है। इन तीनों का योग किया तो २।२४।७।३२ निर्याण काल का 'स्पष्ट लग्न' हुआ ।

महामतौ मान्द्युदितांशकं गते तद्द्वादशांशे रविनन्दने रवौ ।
त्र्यंशत्रिकोणर्क्षमिते ऽस्य पञ्चता मूर्त्तीन्दुमान्द्यैक्यभपास्थितोदये ।। १६६ ।।

गुलिक की वर्तमान नवांश राशि में गोचर से गुरु के आनेपर तथा गुलिक के वर्तमान द्वादशांश राशि में गोचर से शनि के आनेपर एवं गुलिक की द्रेष्काण राशि में वा उस से त्रिकोण (५।९) राशि में गोचर से सूर्य के आनेपर और लग्न, चन्द्र तथा गुलिक के स्पष्ट राश्यादियों के योग करने से जो राशि हो उस का स्वामी जिस राशि में हो उस राशि के लग्न में मनुष्य का मरण होता है ।

—: उदाहरण :—

स्पष्ट गुलिक १०।४।४७।२ है । यहां वृश्चिक राशि का नवांश है अतः वृश्चिक के गुरु में, और मीन का द्वादशांश है अतः मीन के शनि में एवं कुम्भ का द्रेष्काण है और इस से पञ्चम नवम मिथुन तुला त्रिकोण राशि हैं अतः कुम्भ मिथुन वा तुला के सूर्य में मरण होगा ।

स्पष्ट लग्न ११।१९।४५।४४ स्पष्ट चन्द्र ४।२९।३४।४६ और १०।४।४७।२ स्पष्ट गुलिक है। इन तीनों का योग किया तो २।२४।७।३२ राश्यादि त्र्यैक्य हुआ। यहां त्र्यैक्य करने पर मिथुन राशि मिली इस का स्वामी बुध है वह जन्म काल में मिथुन में है अतः मिथुन लग्न में मरण होगा।

ग्रहों की धातु ओं का परिज्ञान :—

पित्तं र वेर्वातकफौ हिमांशोर्मायुर्महीजस्य विदस्त्रिदोषः।
गुरोः कफो वायुकफौ सितस्य शनेर्नभस्वान् ग्रहधातवो ऽमी ॥ १६८ ॥

सूर्य की पित्त, चन्द्रमा की वात कफ, मङ्गल की पित्त, बुध की त्रिदोष, गुरु की कफ, शुक्र की वात कफ एवं शनि की वात ये ग्रहों की धातु कहीं हैं।

मरण कारण परिज्ञान :—

ना येन केनान्तमुपैति हेतुना तत्कारणं शास्त्रत एव वच्म्यहम्।
मध्ये मृतिस्थेक्षकखौकसां खगो यो वीर्य्यवांस्तत्कथितामयैर्मृतिः ॥ १६९ ॥

जिस किसी कारण से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है। उस को शास्त्र से कहताहूं। अष्टम स्थान में स्थित ग्रह तथा अष्टम स्थान को देखने वाले जो ग्रह हों उन सब में जो ग्रह अधिक बली हो उस के पूर्वोक्त रोगों से मनुष्य की मृत्यु होती है।

यद्वा विनाशालयराशिरोगतो विनाशनाथस्थभदोषतो ऽथ वा।
निमीलनागारपदोषतः खरत्रिभागनाथेन मृतिं वदेद्बुधे ॥ १७० ॥

सखेचरे तद्गदतस्तदीक्षकदोषाद्विनाशे न खगान्वितोक्षिते।
आयुर्भदोषेण मृतीशभांशकदोषात्खरत्र्यंशभदोषतो ऽत्यय ॥ १७१ ॥

अथवा अष्टमस्थ राशि के रोगों से वा अष्टमेश जिस राशि में हो उस के दोष से वा अष्टमेश के दोष से वा बाईस वें द्रेष्काण के स्वामी के दोष से मृत्यु को कहे। यदि अष्टम स्थान में ग्रह हो तो उस के रोग से वा अष्टम दर्शी ग्रह के दोष से मृत्यु को कहे। यदि अष्टम स्थान ग्रह से युक्त तथा दृष्ट न हो तो अष्टमस्थ राशि के दोष से वा अष्टमेश की नवांश राशि के दोष से वा बाईस वें द्रेष्काण की राशि के दोष से मरण होता है।

राशिर्मृतौ कालनरस्य यः स यस्मिन्प्रदेशे निवसेन्नभोगः।
यस्तत्र संतिष्ठति तस्य धातुवशेन मर्च्यो निधनं समेति ॥ १७२ ॥

अष्टम स्थान में जो राशि हो वह कालपुरुष के शीर्षादि जिस अवयव में हो उस के हेतु से और उस राशि में जो ग्रह स्थित हो उस की धातु के वश से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

मध्ये बहूनां वलवद्ग्रहस्य धातोर्वशेनात्ययमेति जन्मी।
चेद्वीर्य्यवन्तो बहवो ऽत्रवासास्तद्धातुदोषैर्मनुजो ऽन्तमेति ॥ १७३ ॥

यदि अष्टम स्थान में बहुत ग्रह हों तो उन सब के मध्य में जो अधिक बली ग्रह हो उस की धातु के वश से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है। यदि अष्टम गत बहुत ग्रह बली हो तो उन सब की मिश्रित धातुओं के दोष से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

अष्टमस्थ रव्यदियों के मृत्यु के कारण परिज्ञान :—

मृत्यूपगश्चे निशाहिरा ऽग्निना ऽब्जस्तत्राम्बुना चन्द्रजानिर्ज्वरेण।
धीमानविज्ञातरुजा क्षुधा भो ऽसृक्छस्त्रतौ नैति यमो तृषा ऽन्तम् ॥ १७४ ॥

अष्टम स्थान में सूर्य हो तो अग्नि से, चन्द्रमा हो तो जल से, बुध हो तो ज्वर से, गुरु हो तो अविज्ञात रोग से, शुक्र हो तो क्षुधा से मङ्गल हो तो शस्त्र से एव शनि हो तो तृषा से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

अष्टम गत तथा अष्टम दर्शी रव्यादि ग्रहों के विशेष मृत्युकारण परिज्ञान :—

शस्त्रोष्णवन्हिज्वरपित्तजं पपीर्यक्ष्माविपूचीकजमन्तमेणभृत्।
क्षुद्राभिचारायुधवह्निरक्तजं रक्तो बुधः पाण्डुमुखभ्रमोद्भवम् ॥ १७५ ॥

करोत्यनायासत इज्य आस्फुजित्कफाङ्गनासङ्गमजां मृतिं मृदुः।
सुसन्निपातैर्मरुता ऽथ कुष्ठतो मसूरिकाकृत्रिमभक्षणादितः ॥ १७६ ॥

विषात्तमो ऽन्तगस्तदक्षिको गुदो दुरत्यम्।
करोति कीटकादिभी रिपोर्विरोधतो ऽपि वा ॥ १७७ ॥

अष्टम स्थान यदि सूर्य से युक्त वा दृष्ट वा हो तो शस्त्र, उष्ण, अग्नि, ज्वर पित्तजन्य मृत्यु, चन्द्रमा हो तो यक्ष्मा (तपेदिक), विषूची (हैजा), तथा जल जन्य मृत्यु, भौम हो तो क्षुद्राभिचार (क्षुद्रकृत्य) शस्त्र, अग्नि तथा रुधिर जनित कारण से मृत्यु, बुध हो तो पाण्डु प्रभृति रोगों से वा भ्रमजनित कारण से मृत्यु, गुरु हो तो अनायास जन्य मृत्यु, शुक्र हो तो कफ तथा स्त्रीसङ्गजनित रोगों से मृत्यु, शनि हो तो सन्निपातों से वा वातजन्य मृत्यु, राहु हो तो कुष्ठ, मसूरिका, कृत्रिम पदार्थों के भक्षण से तथा विषजन्य मृत्यु एवं केतु हो तो कीटादि से या शत्रुजनों के विरोध से मनुष्य की दुर्मृत्यु को करता है।

मेषादि राशियों के मृत्युकारण परिज्ञान :—

मेषे ऽन्तगे जठरजूर्त्यनलोष्णपैत्त्यै-
मृत्युर्वृषे त्रिमिलपावकशस्त्रतो ऽन्तः।
कासोष्णशूलपर्वैर्निमिथुने कुलीर
उन्मादतः पवनतो ऽरुचितो मृगेन्द्रे ॥ १७८ ॥

स्फोटारिजं किमु भ्रमज्वरजं कुमार्यां
स्त्रीगुह्यरोगजनितं पतनात्तुलायाम्।
धीसान्निपातजमुत ज्वरजं द्विरेफे
प्लीहालिपाण्डुभवसङ्ग्रहणीगदौघैः ॥ १७९ ॥

काष्ठाऽऽयुधाम्बुतरुजं हयभे कुरङ्गे
प्रज्ञाभ्रमाद्यरुचिशूलभवं घटाख्ये ।
यक्ष्मामयेन मरणं ज्वरकासतो वा
वैसारिणेऽम्बुनि विपज्जलरोगतोऽन्तः ॥ १८० ॥

अष्टम स्थान में यदि मेषराशि हो वा मेषराशि से पूर्वोक्त मृत्युकारक ग्रहों का सम्बन्ध हो तो उदर रोग ज्वर अग्नि उष्ण वा पित्तजनित कारण से मृत्यु, वृष में त्रिदोष अग्नि वा शस्त्रजन्य मृत्यु, मिथुन में कास उष्ण शूल वा वातजन्य मृत्यु, कर्क में उन्माद वात वा मन्दाग्निजन्य मृत्यु, सिंह में विस्फोटक शत्रुजनित मृग वा ज्वर-जन्य मृत्यु, कन्या में स्त्री गुप्तरोगजनित वा पतन से मृत्यु, तुला में बुद्धि सन्निपातजन्य वा ज्वरजन्य मृत्यु, वृश्चिक में प्लीह (तिल्ली) अलि (बिच्छू) पाण्डुजन्य वा सङ्ग्रहणी प्रभृति रोगजन्य मृत्यु, धनु में काष्ठ शस्त्र जल वा वृक्षजन्य मृत्यु, मकर में बुद्धि भ्रम अरुचि (मन्दाग्नि) शूलजन्य मृत्यु, कुम्भ में यक्ष्मा रोग ज्वर वा कास-जन्य मृत्यु एवं मीन में जल में गिरने से वा जल रोग से मृत्यु होती है ।

सुख दुःख जनक मृत्यु परिज्ञानः—

सद्भे मृतौ तद्भमणेऽपि वा सतां सम्बन्धिनीहोत्तमभागमाश्रिते ।
मृतिं नराणां सुखसम्भवां वदेत्क्रूरात्ययो व्यत्ययतः समीरितः ॥ १८१ ॥

अष्टम स्थान में शुभ ग्रहकी राशि वा शुभ ग्रह का सम्बन्ध हो वा शुभ ग्रह का नवांश हो एवं अष्टमेश शुभ राशि में हो वा उसका शुभ ग्रह से सम्बन्ध हो वा शुभ नवांश में होतो मनुष्यों की सुखजन्य मृत्युको कहे । यदि उक्त प्रकारसे विपरीत होतो क्रूर (दुःख जनक) मृत्यु को कहे ।

व्याघ्रादि जनित पीडा योगः--

निमीलने पापगृहे सपावके व्याघ्राग्निशस्त्रोरगसम्भवा व्यथा ।
मिथः प्रदृष्टौ द्विखलौ सकण्टकौ स्वामिप्रकोपाद्विषशस्त्रवह्निजः ॥ १८२ ॥

अष्टम में पाप ग्रह की राशि हो और वह पाप युक्त हो तो व्याघ्र अग्नि शस्त्र वा सर्पजन्य पीडा होती है । एवं केन्द्र में दो पाप ग्रह हों और वे परस्पर देखते हों तो स्वामी के क्रोध विष शस्त्र वा अग्नि से पीडा होती है ।

पित्तादि रोग से मरण योगः—

मृतिगत इनेऽस्रे वीर्योने स्वगैः खलखेचरै-
र्वदति मरणं पित्ताद्रोगाद्विधौ जलराशिगे ।
अमरसचिवे दृष्टेऽघेन क्षये क्षयरोगतः
शशिनि जलभादन्यस्थेऽघेक्षिते धिषणे मृतौ ॥ १८३ ॥

पवनगदतो मृत्युं प्राहुः सिते कलुषेक्षिते
मरणभवने मेहाद्वातात्किमु क्षयतोऽन्यथा

द्विषति कुसुते दृष्टेऽर्केणातिसारकफान्मृति—
निधननिलये योगेऽर्कार्क्योर्विभूतिगदान्मृतिः ॥ १८४ ॥

अष्टम में सूर्य, मङ्गल निर्बल और द्वितीय में पापग्रह हों तो पित्तरोग से मरण कहे। जल राशि में चन्द्रमा और अष्टम में पापदृष्ट गुरु हो तो क्षय रोग से मरण होता है। जलराशि को छोडकर यदि अन्यराशि में चन्द्रमा हो और अष्टम में पापदृष्ट गुरु हो तो वात रोग से मृत्यु को कहते हैं। अष्टम में पापदृष्ट शुक्र हो तो प्रमेह वात वा क्षय से मरण होता है। षष्ठ में सूर्य दृष्ट मङ्गल हो तो अतिसार वा कफ से मृत्यु होती है। यदि अष्टम में सूर्य तथा शनि का योग हो तो विभूति रोग से मृत्यु होती है।

याम्ये हेम्नेऽघेक्षिते मानसस्य भ्रंशान्मृत्युर्वा मसूर्यादिरोगैः।
मूर्त्तेर्नाथे पाथनाथेन युक्त आचार्य्येणाप्यन्विते ऽथोदयेशे ॥ १८५ ॥
पातालार्थेशान्विते ध्वस्तनाथयोगाद्दाये वाऽथ भुक्तावजीर्णात्।
मृत्युः साच्यौ पादपौरेश्वरौ वा गौराङ्गेशौ रोगयातौ तथा स्यात् ॥ १८६ ॥

अष्टम में बुध हो और वह पाप दृष्ट हो तो चित्तभ्रंश वा मसूर्यादि रोगों से मृत्यु होती है। 'लग्नेश' यदि चतुर्थेश से तथा गुरु से भी युक्त हो तो (१) 'लग्नेश' यदि सुखेश तथा धनेश से युक्त हो एवं अष्टमेश के योग से उस की दशा वा अन्तर्द्दशा में अजीर्ण रोग से मृत्यु होती है। व्ययेश तथा लग्नेश ये दोनों गुरु से युक्त हो अथवा गुरु तथा लग्नेश ये दोनों षष्ठ स्थान में हों तो भी अजीर्ण से मृत्यु होती है।

हिमकरे मकरे कुलिरे यमे मरणमेति जलोदररोगतः।
तुहिनगौ वनितोदयशालिनि दुरितयोर्विवरेऽस्रजशोषतः ॥ १८७ ॥

मकर में चन्द्रमा और कर्क में शनि हो तो जलोदर रोग से मृत्यु को प्राप्त होता है। पापान्तराल में कन्यालग्नगत चन्द्रमा हो तो रक्तजन्य शोष से मरण होता है।

राजन्ययोः के कुलगेऽसिते वा कोणाङ्गगैर्मूढमृगाङ्कयुक्तैः।
पङ्क्तिरथो के यदि के कुपुत्रे कृशेन्दुदृष्टे दिवि शूलतोऽन्तः ॥ १८८ ॥

सुख में सूर्य तथा भौम हों और दशम में शनि हो तो (१) त्रिकोण तथा लग्न में क्षीण चन्द्र युक्त पाप ग्रह हों तो (२) सुख में सूर्य और दशम में क्षीण चन्द्र दृष्ट भौम हो तो उक्त योगों में शूल रोग से मरण होता है।

हरी हरेऽरौ हरिवैरितो मृतिर्व्याघ्रान्मृतिर्ज्ञे गुरुभेऽस्र आर्किभे।
वृषेण मृत्युर्गुरुभावलोकिते मूर्त्तौ महोराशिमहीजलोकिते ॥ १८९ ॥

अष्टम वा षष्ठ में सूर्य चन्द्रमा हों तो हाथी से मृत्यु होती है। गुरु की (९।१२) राशि में वा शनि की (१०।११) राशि में भौम हो तो वाघ से मृत्यु होती है। यदि 'जन्म लग्न' गुरु शुक्र से दृष्ट न हो और सूर्य भौम से दृष्ट हो तो बैल से मृत्यु होती है।

पापेक्षितौ पक्षजपद्मिनीश्वरावालिङ्गिताङ्गौ सुतया स्वलोकतः ।
निहन्यते चौरगृहे तमःकपौ चौरान्मृतिः साहियमध्वजौ रिपौ ॥ १९० ॥
मूर्त्यन्तपौ मोषकशस्त्रघाततो मृत्युर्भवेत्सासति शुभ्रशोचिषि ।
कामे कवौ कल्प इने सतुम्बुरे नितम्बिनीकारणतोऽन्तमादिशेत् ॥ १९१ ॥

कन्या में सूर्य चन्द्रमा हों और वे पाप दृष्ट हों तो निजजन से मृत्यु होती है। षष्ठ में राहु तथा षष्ठेश हों तो चौर से मृत्यु होती है। षष्ठ में लग्नेश तथा अष्टमेश हो और वे राहु शनि वा केतु से युक्त हों तो चोर व शस्त्र के प्रहार से मृत्यु होती है। 'चन्द्रमा' यदि पाप युक्त हो, सप्तम में शनि हो और लग्न में मेष राशि गत सूर्य हो तो स्त्री के कारण से मृत्यु को कहे।

के वा कुलेऽहस्करभूमिभूवति शिलाप्रपातान्निगदन्ति पञ्चताम् ।
क्रमाद्यमासृग्विधुभिः पयःकुलास्तचारिभिः कूपनिपाततोऽत्ययः ॥ १९२ ॥

सुख वा दशम में सूर्य मङ्गल हों तो शिलाप्रपात (पत्थर) से मृत्यु होती है। चतुर्थ में शनि, दशम में मङ्गल और सप्तम में चन्द्रमा हो तो कूप में गिरकर मृत्यु होती है।

आलिङ्गिताङ्गौ तिमिना तमोदिपू तदा नृणां नीरनिमज्जनान्मृतिः ।
चेद्यामिनीशे यमधामगामिनि खलान्तरेऽन्तोऽनलरज्जुपाततः ॥ १९३ ॥

मीन में सूर्य चन्द्रमा हों तो जल में डूब जाने से मृत्यु होती है। पाप ग्रहों के अन्तराल में मकर वा कुम्भ राशि गत चन्द्रमा हो तो अग्नि रस्सी वा पतन से मृत्यु होती है।

दरे हरे वा हरिणाङ्कतत्सुतौ यद्वा सपङ्ग्वू पुरपोष्यपौ त्रिके ।
विषेण मृत्युर्दुरितैर्दयाश्रितैर्न चारुदृष्टैरिषुणाऽत्ययो भवेत् ॥ १९४ ॥

षष्ठ वा अष्टम में चन्द्रमा तथा बुध हों अथवा त्रिक में शनि युक्त लग्नेश धनेश हों तो उक्त योगों में विष से मृत्यु होती है। नवम में बहुत पाप हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो बाण से मरण होता है।

पातेन दृष्टौ पुरगौ पयीयमौ पञ्चत्वमाहुस्तरुपाततः क्रमात् ।
मार्त्तण्डिमाहेयकृशेन्दुभिः स्वखाम्बुगैर्व्रणपायां कृमिपाततोऽत्ययः ॥ १९५ ॥

लग्न में सूर्य शनि हों और वे राहु से दृष्ट हों तो वृक्ष से गिरकर मृत्यु होती है। द्वितिय में शनि, दशम में मङ्गल और चतुर्थ में क्षीणचन्द्रमा हो तो छिद्र (घाव) में कीड़े पड़ जाने से मरण होता है।

रोके वारौ सवितृशशिनौ किं यमे ख सुखेऽस्ते
सिंहान्मृत्युर्भुजगभृगुजौ खेऽथ मन्देऽष्टमेऽस्ते ।
के के खेऽथो मनसिज इनाब्जकेजेषूत भागे
पङ्कैर्दृष्टावुरगतरणी पञ्चता स्यात्पृदाकोः ॥ १९६ ॥

अष्टम वा षष्ठ में सूर्य चन्द्रमा हों तो (१) दशम में शनि तथा सुख में भौम हो तो उक्त योगों में सिंह से मृत्यु होती है। दशम में राहु शुक्र हों तो (१) अष्टम में शनि, सुख में भौम और दशम में सूर्य हो तो (२) सप्तम में सूर्य, राहु तथा शनि हों तो (३) कारकांश लग्न में राहु सूर्य हों और वे पाप दृष्ट हों तो उक्त योगों में साँप के काटने से मृत्यु होती है।

राज्येऽस्त्रेज्यौ दिनकृति मदे मृत्युमेति श्वदंशा-
दैलेयार्की वपुषि निधनेऽब्जेऽथ साही यमारौ।
याम्यस्थौ वा भृगुजभवनेऽब्जार्कजौ वा ध्वजाम्बु-
नेतारौ चेद्रुजि जनिमतां पञ्चता शस्त्रतः स्यात् ॥ १९७

दशम में मङ्गल गुरु हों और सप्तम में सूर्य हो तो कुत्ते के काटने से मरण होता है। लग्न में मङ्गल शनि हों और अष्टम म चन्द्रमा हो तो (१) अष्टम में राहु युक्त शनि तथा मङ्गल हों तो (२) शुक्र की (२।७) राशि में चन्द्रमा शनि हों तो (३) षष्ठ में केतु तथा सुखेश हों तो उक्त योगों में शस्त्र से मनुष्यों का मरण होता है।

अन्तोऽसतोः शोणितगे सुधाकरे शस्त्रेण किंवा शिखिना मृतिर्नृणाम्।
चेद् द्वादशांशेऽर्णसि खे दिनप्रणीः करोति मृत्युं नरराजमन्दिरे ॥ १९८ ॥

मङ्गल की (१।८) राशि में चन्द्रमा हो और वह पाप ग्रहों के अन्तराल में हो तो शस्त्र से वा अग्नि से मनुष्यों की मृत्यु होती है। द्वादशांश कुण्डली में चतुर्थ वा दशम में सूर्य हो तो राजद्वार में मनुष्य की मृत्यु को करता है।

यमे याम्येऽन्त्येऽस्त्रे कथयति कुमृत्युं रुजि कुज-
ऽथ वा दुष्टे चन्द्रेऽहिगुलिकयमाढ्येऽङ्गपतिना।
प्रदृष्टेऽथो क्रूराम्बररसलवे सोग्र इनजे
स्वनिम्नास्तार्य्यंशे गद बुध दुरन्तं जनिमताम् ॥ १९९ ॥

अष्टम में शनि और व्यय में मङ्गल हो तो कुमृत (निन्दित मौत) को कहे। षष्ठ में मङ्गल हो तो (१) त्रिक में चन्द्रमा हो और वह राहु, गुलिक तथा शनि से युक्त हो एवं लग्नेश से दृष्ट हो तो (२) क्रूर षष्ठ्यंश में नीच में अस्तगत वा शत्रु नवांश में पाप युक्त शनि हो तो दुर्मृत्यु (दुःख जनक मृत्यु) होती है।

शान्तेऽस्त्रसौरी मृतिरूर्ध्वबन्धनात्साहिध्वजौ स्वाङ्गपती त्रिकङ्गतौ।
किं कालपस्थत्रिलवाधिपे यदा स्वर्भाणुमान्द्यार्कियुतेऽथ वा यमे ॥ २०० ॥
तथा विधेऽथोरगपाशसंज्ञके विनाशपस्थत्रिलवे यदात्ययः।
उद्बन्धनान्मैत्रिगृहे समूर्त्तिपे मित्रग्रहेऽन्तश्चपलाप्रपाततः ॥ २०१ ॥

अष्टम में मङ्गल तथा शनि हों तो ऊर्ध्व (ऊंचे) बन्धन से मृत्यु होती है। त्रिक में धनेश तथा लग्नेश हों और वे राहु वा केतु से युक्त हों तो (१) जिस राशि के द्रेष्काण में अष्टमेश हो उसका स्वामी यदि राहु, गुलिक तथा शनि से युक्त हो तो (२) अथवा शनि के द्रेष्काण का स्वामी यदि राहु तथा गुलिकसे युक्त हो तो (३) सर्प

वा पापसंज्ञक द्रेष्काण में अष्टमेश हो तो उद्बन्धन (फांसी) से मृत्यु होती है। शनि की (१०।११) राशि में लग्नेश युक्त सूर्य हो तो बिजली के गिरने से मरण होता है।

युग्मान्त्यकोदण्डतुलागताः खलाः कुचेष्टितोऽन्तं स्वरुणोत कुर्वते।
छायाजनौ छिद्रगृहाश्रिते जनौ तदा शरीरी शकटान्मृतिं व्रजेत् ॥ २०२ ॥

मिथुन, मीन, धनु तथा तुला में पापग्रह हों तो कुचेष्टा से वा वज्र से मृत्यु को करते हैं। अष्टम में शनि हो तो शकट (गाडी) से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

रन्ध्रागारे रौहिणेये सकोणे कारागारे पञ्चता शूलतो वा।
ध्वस्तस्थाने धिष्ण्यपाङ्गोत्थधिष्ण्यौ शय्यायां किं वान्तरालेऽन्तमेति ॥ २०३ ॥

अष्टम में शनि युक्त बुध हो तो कारागार (कैद) में वा शूल से मृत्यु होती है। अष्टम में बुध शुक्र हों ते शय्या (बिछौने) में वा अन्तराल (दोमंजिल) में मृत्यु होती है।

पातालेशे पङ्गुयुक्ते परस्थे यद्वा पौरच्छिद्रपौ पाथपेन।
यक्तौ यानान्मृत्युरस्रे मनःस्थे मध्ये मित्रे यानपातान्मृतिः स्यात् ॥ २०४ ॥

षष्ठ में शनि युक्त सुखेश हो अथवा लग्नेश तथा अष्टमेश ये दोनों सुखेश से युक्त हों तो उक्त योगों में वाहन से मृत्यु होती है। सुख में भौम और दशम में सूर्य हो तो वाहन से गिरकर मृत्यु होती है।

कृत्ये कुजे धाम्नि निदाघदीधितौ नीलेक्षिते दार्वभिघाततोऽत्ययः।
कृशेन्दुपापीनयमैः क्रमात्कलिखाङ्गाम्बिकागैर्लगुडाभिघाततः ॥ २०५ ॥

मृत्युः क्रमात्क्षीणमृगाङ्कमङ्गलमन्दारुणैः खाङ्कभवात्मचारिभिः।
काष्ठादिघातान्मृतिरग्निधूमतः किं बन्धनान्वा समुपैति पञ्चताम् ॥ २०६ ॥

दशम में मङ्गल और चतुर्थ में शनिदृष्ट सूर्य हो तो काष्ठ के प्रहार से मृत्यु होती है। अष्टम में क्षीण चन्द्रमा, दशम में मङ्गल, लग्न में सूर्य और चतुर्थ में शनि हो तो लगुड के प्रहार (लठ की चोट) से मरण होता है। दशम में क्षीण चन्द्रमा, नवम में मङ्गल, एकादश में शनि और पञ्चम में सूर्य हो तो काष्ठप्रहार अग्नि धूम वा बन्धन से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

खास्ताम्बुगैः पङ्गुपतङ्गपापिभिः क्रमेण मृत्युर्नृपवाह्निशस्त्रतः।
द्यूनेऽसृजीनात्मजपर्वरी पुर नरोऽत्यय गच्छतु यंत्रपीडनात् ॥ २०७ ॥

दशम में शनि, सप्तम में सूर्य और सुख में भौम हो तो राजा अग्नि वा शस्त्र से मृत्यु होती है। सप्तम में भौम और लग्न में शनि चन्द्र हों तो यंत्र (मोटर प्रभृति) में दब जाने से वा कट जाने से मृत्यु होती है।

क्रमात्तुलाजार्किभगैः कुजार्कजचन्द्रैस्ततः पाथवधूखगैः क्रमात्।
गौत्रेयभास्वद्दलितेन्दुभिस्तदा पुरीषमध्ये पतितस्य पञ्चता ॥ २०८ ॥

तुला में मङ्गल, मेष में शनि और शनि की (१०।११) राशि में चन्द्रमा हो अथवा चतुर्थ में मङ्गल, सप्तम में सूर्य और दशम में क्षीण चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में विष्ठा में पतित पुरुष की मृत्यु होती है।

हेलीनजेलाजभपैः क्रमात्पुरपश्चत्वपुत्रोरुभगैरथौजसा।
मुक्तौ वपाविग्रहपौ सवैरिपास्तौ शैलकुड्याशनिपाततोऽत्ययः॥ २०९॥

लग्न में सूर्य, अष्टम में शनि, पञ्चम में भौम और नवम में चन्द्रमा हो तो (१) अष्टमेश तथा लग्नेश ये दोनों निर्बल हों और षष्ठेश तथा मङ्गल से युक्त हों तो उक्त योगों में पर्वत से वा दीवाल के गिरने से वा वज्र गिरने से मरण होता है।

शान्ते शयानः किमु निद्रितः खगः सना विनाशो रिपुकोपतो यमे।
कलौ कृशेन्दौ कमले द्युनेऽरुणारौ भक्ष्यते प्रेत इहाण्डजैस्तदा॥ २१०॥

अष्टम में शयनावस्थागत वा निद्रावस्थागत ग्रह हो और वह पाप युक्त हो तो शत्रु के कोप से मरण होता है। अष्टम में शनि, चतुर्थ में क्षीण चन्द्रमा और सप्तम में सूर्य मंगल हों तो उक्त योग में मनुष्य के शव को पक्षी भक्षण करते हैं। अर्थात् उस का अग्नि दाह नहीं होता है।

तृतीय गत तथा तृतीयदर्शी ग्रहों के मृत्यु कारण का परिज्ञानः—

वीर्यालये वीर्ययुतप्रभाकरान्विते भूपतिकारणान्मृतिः।
तत्रेन्दुना दृष्टयुते तु यक्ष्मणाऽन्तोऽस्रेण दाहव्रणशस्त्रवह्नित ः॥ २११॥
भवेन्मृतिस्तत्र यमाहिलोकियुक्ते विषार्त्या जलतोऽग्निपीडनात्।
उदग्रपातावटबन्धनैर्मृतिस्तत्रेन्दुमान्दीक्षितसंयुते यदा॥ २१२॥
द्रुतं नुरन्तं कृमिकुष्ठतो वदेत्पूज्येन युक्ते परिलोकिते भुजे।
शोफादिनान्तो भृगुणेक्षितान्विते प्रमेहरोगेण जनोऽत्ययं व्रजेत्॥ २१३॥

तृतीय स्थान यदि बली सूर्य से युक्त वा दृष्ट हो तो राजा के कारण से मृत्यु, चन्द्रमा से यक्ष्मा (तपेदिक) रोग के कारण मृत्यु, मङ्गल से दाह व्रण शस्त्र वा अग्नि के कारण से मृत्यु, शनि तथा राहु से विषजन्य पीडा जल अग्निजन्य पीडा उच्च स्थान से पतन गर्त पतन वा बन्धन के कारण मृत्यु, चन्द्रमा तथा गुलिक से कृमि रोग वा कुष्ठ के कारण शीघ्र मृत्यु, गुरु से शोफादि के कारण मृत्यु एवं शुक्र से प्रमेह रोग के कारण मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

विक्रान्तभावे बहुलाभ्रसद्याति नरस्य मृत्युर्बहुलैर्गदैर्भवेत्।
तत्रेन्दुयुक्ते किमु सद्युतेक्षिते तत्तद्गदैर्देहभृतां भवेन्मृतिः॥ २१४॥

तृतीय स्थान बहुत ग्रहों से युक्त हो तो बहुत रोगों से मनुष्य की मृत्यु होती है। यदि तृतीय भाव चन्द्रमा से युक्त हो वा शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो उस उस ग्रह के उक्त रोग से मनुष्यों की मृत्यु होती है।

मरण देश परिज्ञानः—

मृत्युः स्वदेशे सचरे पुरेऽध्वनि सागे विदेशे यदि सद्विरात्मके ।
कालेशकालौ चरपूर्वभांशगौ दूरे स्वगेहे पथि पञ्चता क्रमात् ॥ २१५ ॥

लग्न में चर राशि हो तो स्वदेश में मृत्यु, स्थिर राशि हो तो मार्ग में मरण एवं द्विस्वभाव राशि हो तो परदेश में मरण होता है । चर राशि वा चरांश में अष्टमेश तथा शनि हों तो दूरदेश में मृत्यु, स्थिर राशि वा स्थिरांश में वे दोनों हों तो स्वदेश में मृत्यु एवं द्विस्वभाव राशि वा द्विस्वभावांश में वे दोनों हों तो मार्ग में मरण होता है ।

तीर्थ में मरण के योगः—

शान्ते शान्ते शोभनैर्वीक्ष्यमाणे किं कल्याणेशेऽमलेऽथ प्रशान्ते ।
कल्याणे वा पुण्यपे पौरयाते तीर्थे मृत्युर्भानुस्वर्भानुयोगे ॥ २१६ ॥
तीर्थे वाद्रौ पञ्चता पिङ्गलज्ञौ मार्गे मार्गे वेशगेहेऽन्तमेति ।
शान्ते शस्तस्वामिसोमौ सदन्तो द्वारावत्यामत्ययः शे ज्ञकव्योः ॥ २१७ ॥

अष्टम में बुध हो और वह शुभ दृष्ट हो वा शुभ ग्रह धर्मेश हो वा नवम में गुरु हो वा लग्न में नवमेश हो तो तीर्थ में मृत्यु होती है । एक राशि में यदि राहु सूर्य का योग हो तो तीर्थ वा पर्वत में मरण होता है । नवम में सूर्य बुध हों तो मार्ग वा शिवालय में मरण होता है । अष्टम में नवमेश तथा चन्द्रमा हों तो सन्मरण होता है । एवं नवम में बुध तथा शुक्र हों तो द्वारिका में मरण होता है ।

युद्ध में मरण के योगः—

सारारीशौ प्राणमुक्तौ पुरायुःपालौ युद्धे शस्त्रतोऽन्तो विशेषात् ।
भूजे किं वा नैधनारातिनाथे सप्राणेशे मन्दगे मान्दियुक्ते ॥ २१८ ॥
क्रूरांशेऽथो क्रोडगत्र्यंशनाथे भौमर्क्षांशे युक्तदृष्टे कुजेन ।
सङ्ग्रामेऽन्तो नैधने निर्मलोऽपि दृष्टोऽथ्युग्रैराहवे पञ्चताकृत् ॥ २१९ ॥

लग्नेश तथा अष्टमेश ये दोनों निर्बल हों और मङ्गल तथा षष्ठेश से युक्त हों तो युद्ध में प्रायः शस्त्र से मरण होता है । मङ्गल वा अष्टमेश षष्ठेश यदि तृतीयेश से युक्त हों और क्रूरांश में मान्दियुक्त शनि हो तो (१) मंगल की राशि वा नवांश में शनि का द्रेष्काणेश हो और वह मङ्गल से युक्त वा दृष्ट हो तो संग्राम में मरण होता है । यदि अष्टम में शुभ ग्रह हो और वह शत्रु ग्रह तथा पाप ग्रह से दृष्ट हो तो भी युद्ध में मरण होता है ।

अन्योन्यभांशोपगतौ क्षमासुतस्त्विषां पतिश्चोत परस्परेक्षितौ ।
किं रौहिणेये यदि रायि दुर्बले द्वन्द्वाहवे नुर्मरणं प्रजल्पितम् ॥ २२० ॥

मङ्गल की (१।८) राशि वा नवांश में सूर्य हो और सूर्य की (५) राशि वा नवांश में मङ्गल हो तो (१) अथवा मङ्गल सूर्य ये दोनों परस्पर देखते हों तो (२) अथवा धन में दुर्बल बुध हो तो द्वन्द्व (मल्ल) युद्ध में मनुष्य का मरण कहा है ।

ब्रह्म सायुज्य योगः—

दिष्टान्तदैवोदयपा निजालयान् पश्यन्ति वा पुण्यगृहं सशोभनम् ।
पाप्मोज्झितं वा दिवि साण्डजे सता वा वासुधेयेन युते स मुक्तिभाक् ॥ २२१ ॥

अष्टमेश, नवमेश तथा लग्नेश ये तीनों अपने अपने स्थान को देखते हों तो (१) नवम स्थान यदि शुभ युक्त हो और पापरहित हो तो (२) दशम स्थान में मीन राशि हो और वह शुभ ग्रह वा मङ्गल से युक्त हो तो उक्त योगों में जो मनुष्य उत्पन्न हो वह मुक्ति को प्राप्त होता है ।

अंशाच्छरीराद्यदि वाऽष्टमेऽमले सल्लोकमाप्नोति लवादकेऽनिले ।
ततोंऽश ...न्त्ये सुकृते क्रियाश्वगे किं दीक्षणे केवलशोभनद्वये ॥ २२२ ॥

वैरावतांशे भृगुजे तमीपतौ सिंहासनांशे सुरनाथयाजके ।
चेत्पारिजाते किमु निद्रितेऽम्बुनि छिद्राधिपे वा सुखगेक्षितान्विते ॥ २२२ ॥

यद्वा यदान्तं प्रविदारणेश्वरो धर्म्माधिनाथो यदि धर्म्ममन्दिरम् ।
पश्येज्जनौ यस्य तनुं तनूपतिः स ब्रह्मसायुज्यमुपैति पूरुषः ॥ २२४ ॥

कारकांशलग्न से वा जन्म लग्न से अष्टम में शुभ ग्रह हो तो शुभ लोक की प्राप्ति होती है । कारकांशलग्न से व्यय में केतु हो वा कारकांश लग्न से व्यय में मेष वा धनू राशिगत शुभ ग्रह हो वा नवम में केवल दो शुभ ग्रह हों अथवा ऐरावतांश में शुक्र, सिंहासनांश में चन्द्रमा और पारिजातांश में गुरु हो अथवा चतुर्थभावगत अष्टमेश निद्रावस्था में हो वा शुभ दृष्ट युक्त हो अथवा अष्टम को अष्टमेश, नवम को नवमेश और लग्न को लग्नेश देखता हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य ब्रह्मसायुज्य (मुक्ति) को प्राप्त होता है ।

चत्वार आकाशचरा यदैकराशा तदाक्रान्तगृहाधिपे शे ।
केन्द्रेऽङ्गजे जन्मनि यस्य पुंसः स ब्रह्मसायुज्यमुपैति नूनम् ॥ २२५ ॥

।जिस पुरुष के जन्म समय में चार ग्रह एक राशि में हों यदि उनकी आक्रान्त राशि का नवम केन्द्र वा पञ्चम में हो तो वह निश्चय से ब्रह्मसायुज्यु (मुक्ति) को प्राप्त होता है ।

मोक्षस्थान परिज्ञानः—

कैलासमादित्यविधू सितः स्वः सद्ब्रह्मलोकं सचिवः कुमारः ।
वैकुण्ठमार्किर्यमवेश्म भूमिं भूमीतनूजो निरयं शिखावान् ॥ २२६ ॥
द्वीपानि पातो जनितस्तदानीं सम्प्रापयेद् द्वादशभावपस्य ।
सम्बन्धतो दैवविदो वदन्ति तत्कान्तराश्यंशमुखादपीत्थम् ॥ २२७ ॥

व्यय भावी का स्वामी यदि सूर्य वा चन्द्रमा हो तो मरने के पश्चात् मनुष्य कैलास को प्राप्त होता है । एवं शुक्र हो तो स्वर्ग, गुरु हो तो उत्तम ब्रह्मलोक, बुध हो तो वैकुण्ठ, शनि हो तो यमपुरी, मङ्गल हो तो पृथ्वी, केतु हो तो नरक एवं राहु हो तो द्विपान्तर को प्राप्त होता है। व्ययेश के सम्बन्ध से पंडितजन लोकान्तर वास को कहते हैं । इस प्रकार व्ययेश की राशी का नवांश प्रभृति सेभी लोकांतर बास को कहते हैं ।

प्राग्जन्मवृत्तादि परिज्ञानः—

प्राग्जन्मवृत्तं विधिभावपेन धीशाद् भविष्यज्जननं वदन्ति ।
जातिं च देशं रमणस्य तस्य तद्युक्तभाशां निगदन्ति तज्ज्ञाः ॥ २२८ ॥

नवमेश से पूर्वजन्म का वृत्तान्त, पञ्चमेश से भविष्य (आगामी) जन्म का वृत्तांत एवं उक्त स्थान के स्वामी की जाति तथा देश और उक्त स्थान के स्वामी की आक्रान्त राशि की दिशा को कहते हैं ।

तन्नाथे निजतुङ्गभे सुरधरां द्वीपान्तरं नीचभे
शत्रुक्षेत्रगतेऽथ मित्रसदने स्वर्क्षे समर्क्षे स्थिते ।
गच्छेद्भारतवर्षमृक्षपजनैः पुण्यस्थलं दीदिवे-
रार्यावर्त्तमथो सितस्य शशिनः पुण्यापगा गच्छतु ॥ २२९ ॥

नवमेश वा पञ्चमेश यदि स्वोच्च राशि में हो तो सुरधरा (देवभूमि वा आर्यावर्त्त), नीच राशि वा शत्रु राशि में हो तो द्विपांतर (युरोप वा अमेरिका प्रभृति), मित्र राशि स्वराशि वा सम राशि में हो तो भारतवर्ष (हिंदुस्थान) में जन्म कहे । नवम वा पञ्चम का स्वामी यदि बुध हो तो तीर्थ स्थान, गुरु हो तो पुण्यभुमि (आर्यावर्त्त) शुक्र तथा चन्द्रमा हों तो पुण्य नदियों के तट में जन्म होता है ।

शैलारण्यं द्युनाथस्य भूकुमारस्य कीकटम् ।
म्लेच्छभूमिस्तथा निन्द्या गदिता मन्दगामिनः ॥ २३० ॥

नवमेश वा पञ्चमेश सूर्य हो तो पर्वत वा वन, भौम हो तो कीकट (मगध देश) एवं शनि हो तो म्लेच्छ-भूमि (अफगाण इराण इराक वा टर्की) वा निन्दित (मलिन) स्थान में जन्म होता है ।

तदीश्वरोऽधोमुखभे च पृष्ठोदये स्थितो गर्हितखेटयुक्तः ।
स्थिरे स्थिरांशे च लतातरूणां जन्मान्यथा देहधरः सजीवः ॥ २३१ ॥

नवमेश तथा पञ्चमेश यदि अधोमुख राशि वा पृष्ठोदय राशि में हों वा पापयुक्त हों वा स्थिर राशि वा स्थिरांश में हों तो लता (वेल) तरु (वृक्ष) इत्यादि के जन्म को कहे । यदि उक्त प्रकारसे विपरीत हो तो जीवयुक्त देहधारी का जन्म कहे ।

गच्छेत्तदीशस्तनुपस्य तुङ्ग सुहृत्स्वराशौ जननं नरस्य ।
मृगाः समर्क्षे परभे पतङ्गाः सञ्चिन्तयेद्वा त्रिलवस्वरूपैः ॥ २३२ ॥

नवमेश वा पञ्चमेश यदि लग्नेश की उच्च राशि, मित्र राशि तथा स्वराशि में प्राप्त हो तो मनुष्य का जन्म होता है । एवं लग्नेश की सम राशी में हो तो मृगजन्म और शत्रु राशि में हो तो पक्षियों का जन्म कहे अथवा द्रेष्काणों के स्वरुपों से भी उक्त विषय का चिन्तवन करे ।

स्वदेशे जनिरेकर्क्षे उभौ तुल्यबलान्वितौ ।
तुल्यजातौ गुणो वर्णस्तस्याकाशसदः समः ॥ २३३ ॥

एक राशि में नवमेश तथा पञ्चमेश हों तो स्वदेश में जन्म होता है। यदि वे दोनों समान बली हों तो समान जाति में जन्म होता है। नवमेश वा पञ्चमेश के समान गुण वा वर्ण होता है।

विषादिसे घात (मरणासन्न कष्ट) योगः—

बधे व्रगे वा विधुबोधनौ यदा विषेण घातो रविरोधनौ वधे।
विषाग्निघातो रुधिरारुणौ भवे घातस्तदा शस्त्रविषानलैर्भवेत् ॥ २३४ ॥

अष्टम वा षष्ठ में चन्द्र तथा बुध हों तो विशेष से घात (मरणासन्न कष्ट) होता है। अष्टम में सूर्य बुध हों तो विष वा अग्नि से घात होता है। एवं लाभ में मङ्गल सूर्य हो तो शस्त्र विष वा अग्नि से घात होता है।

पाषाण घात योगः—

भूभूमिजे खगखगेऽथ सभूजमित्रे
मित्रे ततो जनकपे कपयुक्तदृष्टे।
वासेक्षिते क्षितिपतौ समपीजपाते
पाषाणघात उदितो निखिलागमज्ञैः॥ २३५ ॥

चतुर्थ में मङ्गल तथा दशम में सूर्य हो तो (१) चतुर्थ में मङ्गल युक्त सूर्य हो तो (२) दशमेश यदि चतुर्थेश से युक्त वा दृष्ट हो तो (३) चतुर्थेश यदि मङ्गल से दृष्ट और शनि राहु से युक्त हो तो उक्त योगों में पाषाण घात कहा है।

पत्नीस्थले प्राप्तिगृहे पृदाकौ काष्ठेन घातः किमुतोपलेन।
विनाशभावे वसुधातनूजे घातो निरुक्तो दहनेन धीरैः॥ २३६ ॥

सप्तम वा लाभ में राहु हो तो काष्ठ वा पाषाण से घात होता है। एवं अष्टम में भौम हो तो अग्नि से घात होता है।

उपप्लवक्ष्मासून्वो रन्ध्रागारगयोः सतोः।
शृङ्गिणा नखिना किंवा दंष्ट्रिणा घात ईर्य्यते॥ २३७ ॥

अष्टम में राहु तथा मङ्गल हों तो सींगवाले नखवाले अथवा दाँतवाले पशु से घात होता है।

जलघात योगः—

क्षीणे शीतकरे क्षयेऽथ जलभे मूढे नतारातिभे
वीर्य्योने वनपे वनारिभवनेऽथोग्रग्रहे गेहगे।
वारीशे विबले किमूद्गमविभौ वा वारिवेश्मेश्वरे
केन्द्रे कल्मषखेचरेण कलिते ना पाथघातं व्रजेत् ॥ २३८ ॥

अष्टम में क्षीण चन्द्रमा हो तो (१) सुख वा षष्ठ में निर्बल सुखेश हो और वह जल राशि में हो वा अस्तगत हो वा नीच वा शत्रु राशि में हो तो (२) चतुर्थ में पाप ग्रह हो और चतुर्थेश निर्बल हो तो (३)

केन्द्र में लग्नेश वा सुखेश हो और वह पाप युक्त हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य जलघात को प्राप्त होता है

आज्ञेशदृष्टौ पुरपाथनाथौ पानीययातौ किमु पाथनाथे।
कीलालपस्थर्क्षपदृष्टयुक्ते कीलालघातं समुपैति जातः॥ २३९॥

सुख में लग्नेश तथा सुखेश हों और वे दशमेश से दृष्ट हों तो (१) चतुर्थेश यदि निजाक्रान्त राशि के स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योगों में जलघात को प्राप्त होता है।

गुद रोग योगः—

वने व्यये वोदयपे बलाजनिविद्भ्यामुपेते किमु तेऽरिमन्दिरम्।
आलोक्य कुर्वन्ति गुदोपतापिनं यद्वाऽपवित्रामयभाजमङ्गिनम्॥ २४०॥

सुख वा व्यय में लग्नेश हो और वह भौम तथा बुध से युक्त हो अथवा वे षष्ठ भाव को देखते हों तो मनुष्य को गुदा रोगवाला वा अपवित्र रोग वाला करते हैं।

सारीश उग्रे मरणे गुदार्त्तः केऽन्त्ये ससिंहैः कुजविद्घनेशैः।
गुदामयो विद्भवने ज्ञदृष्टयुक्तेऽङ्गपेऽरुर्निगदन्ति गुह्ये॥ २४१॥

अष्टम में षष्ठेश युक्त पाप ग्रह हो तो गुदा रोग से पीडीत होता है। सुख वा व्यय में सिंह राशि गत भौम, बुध तथा लग्नेश हों तो गुद रोग होता है। बुध की (३।६) राशि में लग्नेश हो और वह बुध से दृष्ट वा युक्त हो तो गुह्य प्रदेश में व्रण को कहते हैं।

गुह्यरोगादि योगः—

कर्कालिभागे कलुषान्विते विधौ गुप्तो गदः क्रूरखगैः कलिस्थितैः।
स्याद्गुह्यरोगो बुधरोगनाथयोः सरक्तयोर्लिङ्गरुजा प्रपीडितः॥ २४२॥

कर्कांश वा वृश्चिकांश में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो उक्त योग में गुप्त रोग होता है। अष्टम में पाप ग्रह हों तो गुप्त रोग होता है। बुध तथा रोगेश यदि भौम से युक्त हों तो लिङ्ग रोग से पीडित होता है।

स्याल्लिङ्गरोगः क्षितिजेन युक्ते क्षताधिनाथे सुखगैरदृष्टे।
व्रणेन शिश्नामय उद्गमेशयुक्तेऽवनीजे व्रणवेश्मयाते॥ २४३॥

षष्ठेश यदि मङ्गल से युक्त हो और शुभ दृष्ट न हो तो लिङ्ग रोग होता है। षष्ठ में लग्नेश युक्त मङ्गल हो तो व्रण से लिङ्ग रोग होता है।

लिङ्गच्छेद योगः—

शनेस्तुरीये तरणौ सितज्ञदृष्टे विवस्वद्ग्रहणेऽथ वक्रे
निरीक्षिते प्रान्त्यफलाश्रिताभ्यां ग्लाभार्गवाभ्यां किमुतैकराशौ॥ २४४॥

नार्च्येक्षिते वित्तसितसौरसूरैर्यद्वा दिवा देहगेऽसुरेज्ये।
सरोजिनीशे मृगराजयाते स्याच्छिन्नमेढ्रोऽल्परतिर्मनुष्यः॥ २४५॥

शनि से चतुर्थ में सूर्य हो और वह शुक्र बुध से दृष्ट हो एवं सूर्य ग्रहण के दिनका जन्म हो तो (१) व्यय वा लाभ में चन्द्र शुक्र हों और वे मङ्गल को देखते हों तो (२) एक राशि में बुध, शुक्र, शनि तथा सूर्य हों और वे गुरु से दृष्ट न हों तो (३) दिनका जन्म हो, लग्न में शुक्र हो और सिंह राशि में सूर्य हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य लिङ्गच्छेदवाला तथा अल्प संभोगवाला होता है ।

कवेर्विधोरग्रगतं गभस्तिजं गात्रोपगौ गौरगुभौ प्रपश्यतः ।
तथारिपेऽङ्गे सभुजङ्गबोधने छिनत्ति लिङ्गं स्वयमेव चेतनः ॥ २४६ ॥

शुक्र तथा चन्द्रमा से यदि 'शनि' अग्रगामी हो और उसको चन्द्र शुक्र देखते हों तो भी लिङ्गच्छेद वाला होता है । लग्न में षष्ठेश हो और वह राहु तथा बुध से युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष स्वयं लिङ्ग का छेदन करता है ।

अण्ड वृद्धि योगः—

सारे काव्ये कालगे वातकोपात्कौजे सारे भार्गवे मुष्कवृद्धिः ।
गोत्राजाता कौज आर्कीज्यदृष्टौ शुक्रग्लावौ शुक्ररक्तोद्भवा सा ॥ २४७ ॥

अष्टम में शुक्र हो और वह मंगल से युक्त हो तो वात कोप से अण्डवृद्धि, मंगल की (१।८) राशि में यदि मङ्गल युक्त शुक्र हो तो पार्थिव दोष से अण्ड वृद्धि एवं मङ्गलकी (१।८) राशि में शुक्र चन्द्रमा हों और वे शनि गुरु से दृष्ट हों तो वीर्य तथा रक्त के दोष से अण्ड वृद्धि होती है ।

सार्कौ सारे ऽकेपु भुजगपेऽङ्गेऽथ गुह्ये सपङ्गु-
पातेऽङ्गेशेऽथ सयमकुजे गुह्यगेऽङ्गे फणीशे ।
मान्दौ कोणे किमुदयपगांशेशि सारार्किमान्दि-
नागेऽथाहौ मृतिपतिगभांशेशयुक्तेऽण्डवृद्धिः ॥ २४८ ॥

लग्न में राहु हो और वह शनि वा मङ्गल से युक्त हो तो (१) अष्टम में लग्नेश हो और वह शनि राहु से युक्त हो तो (२) अष्टम में शनि युक्त भौम हो, लग्न में राहु हो और त्रिकोण में मान्दि हो तो (३) लग्नेश के नवांश का स्वामी यदि भौम, शनि, गुलिक तथा राहु से युक्त हो तो (४) 'राहु' यदि अष्टमेश के नवांशेश से युक्त योगों में अण्ड वृद्धि होती है ।

सकीटभैः काव्यकलेशवक्रैः कालांशगैर्वा मलिने ससारे ।
वधे विशेषात्तनुगेऽण्डवृद्धिर्वाच्याऽधिका नु बहुमूत्ररोगात् ॥ २४९ ॥

अष्टभाव गत नवांश में वृश्चिक राशिगत शुक्र, चन्द्र तथा मङ्गल हों अथवा अष्टम में विशेषतः लग्न में बली पापग्रह हो तो उक्त योगों में बहुमूत्र रोग से अधिक अण्ड वृद्धि कहनी चाहिये ।

निदेक्षितेऽशे गुलिके तथा तमोऽसृजोः किमूष्णांशुजसिंहिकासुवोः ।
योगे बृहद्बीजमिलाजनौ तना स्यान्नाभिगुल्फाण्डकवृद्धिरङ्गिनः ॥ २५० ॥

कारकांश लग्न में गुलिक हो और वह बुध से दृष्ट हो तो अण्ड वृद्धि होती है। राहु मङ्गल का अथवा शनि राहु का किसी स्थान में भी योग हो तो उक्त योगों में बृहद्बीज (मोटे अण्ड) होते हैं। लग्न में मङ्गल हो तो नाभि, गुल्फ तथा अण्ड वृद्धि होती है।

संग्राम विजय के योगः—

रन्ध्रारिपौ रुजि रणे बलिनौ भवेतां।
युद्धे जयी गतबलौ प्रलयः कपोऽङ्के।
साङ्केड्विधुः सधिषणः सकविः क्रमेण
दन्तावलाश्वनरवाहनतो जयः स्यात् ॥ २५१ ॥

षष्ठ वा अष्टम में बली अष्टमेश तथा बली षष्ठेश हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष युद्ध में विजयी होता है। यदि उक्त स्थानगत उक्त निर्बल भावेश निर्बल हों तो युद्ध में मृत्यु होती है। लग्न में सुखेश हो और वह लग्नेश तथा चन्द्रमा से युक्त हो तो युद्ध में हाथियों से विजय, लग्न में गुरू युक्त सुखेश लग्नेश हों तो युद्ध में घोडों से विजय एवं लग्न में शुक्र युक्त सुखेश लग्नेश हों तो युद्ध में नर वाहन (पालकी) से विजय होती है।

सारोने यदि सोत्थकारकखगेऽसद्व्योमतर्कांशके
नाथे विक्रमवेश्मनः सुकृतदृग्योगादिसम्बन्धिनि।
सञ्जातो विजयी रणेऽनुचरगो वक्रश्च वक्षोविभुः
सोर्ज्जाः स्युर्यदि ते त्रयो मनुभवः शूरो भवेदाहवे ॥ २५२ ॥

क्रूर षष्ठ्यंश में निर्बल सहज कारक हो और तृतीयेश का यदि शुभ ग्रहों के साथ सम्बन्ध हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य संग्राम में विजयी होता है। तृतीय गत ग्रह, भौम तथा तृतीयेश ये तीनों बली हों तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य संग्राम में शूर वीर होता है।

युद्ध चातुर्य योगः—

सोदर्य्यमन्दिरविभौ यदि गोपुरे वा
पारावते शुभसमेतविलोकिते वा
सिंहासने मृदुलवे समरप्रवीण-
श्चित्तोत्सवो भवति देहधरस्तदानीम् ॥ २५३ ॥

तृतीयेश यदि गोपुरांश में वा पारावतांश में वा शुभ युक्त दृष्ट वा सिंहासनांश में वा मृदु षष्ठ्यंश में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य संग्राम में चतुर तथा हृदय में उत्सव माननेवाला होता है।

युद्धाभिलाषी योगः—

सहोदरस्थानपतौ ससौम्ये स्वतुङ्गयाते समराभिलाषी।
वैशेषिके वीर्य्ययुतेऽनुजेशे किं कोमलांशे प्रथमे तथैव ॥ २५४ ॥

स्वोच्च राशि में शुभ युक्त तृतीयेश हो तो उक्त योग में युद्धाभिलाषी होता है। वैशेषिकांश में बली तृतीयेश हो अथवा लग्न में मृदुषष्ठ्यंश हो तो भी युद्धाभिलाषी होता है।

सेनापति योगः—

सदैवपे सद्भवने वनेशे पुंसस्तदा भूरिवरूथिनी स्यात्।
षट्सु ग्रहेषु स्वहितालयेषु वा ऽऽरे ससारेऽधिपतिर्ध्वजिन्याः ॥ २५५ ॥

शुभ ग्रह की राशि में नवमेश युक्त सुखेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की बहुत सेना होती है। यदि जन्म समय में मित्र राशि में छः ग्रह हों अथवा मङ्गल बली हो तो सेनापति होता है।

शान्ते पापे सास्थरक्षांश उच्चे सोत्थेशेऽथो सावभेऽघे सहोत्थे
एवं भूते सोदरागारनाथे युद्धारम्भात्प्राग्भवेद् धृष्ट एषः ॥ २५६ ॥

अष्टम में चर राशि गत वा चरांशगत पाप ग्रह हो और स्वोच्च में सोत्थेश हो तो (१) तृतीय में पाप राशि गत पाप ग्रह हो एवं पाप राशि में पाप युक्त तृतीयेश हो तो उक्त योगों मे उत्पन्न पुरुष संग्राम के आरम्भ से पूर्व दृष्ट होता है।

युद्धे जाड्यमघैर्निरीक्षितयुते क्रूराभ्रतर्कांशके।
नीचे सोत्थपतावथानुजपतौ तुङ्गेऽरिनाथान्विते।
सङ्ग्रामेऽत्र पराजयो निगदितोऽसव्योमरागांशके।
सोर्जे सोदरकारकाम्बरचरे भङ्गो भवेत्सङ्गरे ॥ २५७ ॥

क्रूरषष्ठ्यंश में तथा नीचराशि में पाप दृष्ट युक्त तृतीयेश हो तो (१) स्वोच्च राशि में षष्ठेश युक्त तृतीयेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष की संग्राम में पराजय (हार) होती है। क्रूरषष्ठ्यंश में बली भ्रातृ कारक ग्रह हो तो भी संग्राम में पराजय होती है।

अनादर योगः—

जनौ यस्य जन्ये तदीशेऽथवाऽघान्वितालोकिते पावकागारयाते।
असद्व्योमवासान्तरे वा मनुष्यः परीभावभाक् सोऽन्यथा तद्विहीनः ॥ २५८ ॥

जिस के जन्म समय में अष्टमस्थान वा अष्टमेश यदि पाप युक्त पाप दृष्ट पाप राशि में वा पापान्तराल में हो तो वह मनुष्य अनादरवाला होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो आदर पाने वाला होता है।

ब्रह्महत्यादि योगः—

पश्येतां कुजपिङ्गलौ खलभ नक्षत्रनाथं ततो
योगेऽर्कार्यसृजां किमिन्द्रमहितेऽर्कास्रग्वति ब्रह्मणः।
हत्या दुष्कृतभे भपे मृदुगतीलानन्दनालोकिते
गोहत्यैकलो कुजोदयवती चेत्क्रूरहत्या भवेत् ॥ २५९ ॥

पाप राशि गत चन्द्रमा को यदि भौम सूर्य देखते हों तो (१) सूर्य, शनि तथा भौम का योग हो तो (२) 'गुरु' यदि सूर्य भौम से युक्त हो तो उक्त योगों में ब्रह्महत्यावाला होता है। पाप राशि में चन्द्रमा हो

और वह शनि भौम से दृष्ट हो तो उक्त योग में गोहत्यावाला होता है। एक नवांश में मङ्गल तथा लग्नेश हों तो उक्त योग में क्रूर हत्यावाला होता है।

हेलौ किमर्च्ये सखले स्वनीचे स्याद्बालहत्याऽसति कीचकस्थे।
कवौ कलौ कल्मषखेचरेण निरीक्षिते गोमृगजातिहत्या ॥ २६० ॥

अपनी नीच राशि में पाप युक्त सूर्य वा पाप युक्त गुरु हो तो उक्त योग में बालहत्यावाला होता है। केन्द्र में पाप और अष्टम में शुक्र हो और वह पाप दृष्ट हो तो गौ तथा मृग जाति की हत्यावाला होता है।

मेषूरणे रोधनरोहिणीशावसद्भिर्हङ्गैः परिवीक्ष्यमाणौ।
निम्नांशगौ वा विमलेक्षणोनौ विहङ्गहत्याऽविरतं निरुक्ता ॥ २६१ ॥

दशम में पाप दृष्ट बुध चन्द्र हों अथवा वे दोनों नीचांश में हों और शुभ दृष्ट न हों तो नित्य पक्षियों की हत्यावाला होता है।

अष्टम गत रवि फलः—

पञ्चत्वस्थे पद्मिनीप्राणपाले चक्षूरोगी पुङ्गलः स्वल्पपुत्रः।
काष्ठावर्षेऽस्योत्तमाङ्गे व्रणः स्यात्सद्भिर्दृष्टे संयुते नैव दोषः ॥ २६२ ॥
काये व्याधिः ख्यातिमान् गौलुलाय नाशोऽल्पार्थी भावपे वीर्ययुक्ते।
इष्टक्षेत्रोपेत उच्चे स्वराशौ यद्वा तस्मिन् दीर्घमायुर्नरस्य ॥ २६३ ॥

अष्टम में सूर्य हो तो वह मनुष्य नेत्र रोगी, अल्प पुत्रवाला और दशवें वर्ष उस के शिर में व्रण होता है। यदि वह सूर्य शुभ युक्त दृष्ट हो तो उक्त दोष नहीं होता है। एवं उस मनुष्य के शरीर में रोग, गौ महिष की हानि और वह विख्यात तथा अल्प धनवाला होता है। यदि भावेश (अष्टमेश) बली हो मित्र राशि स्वोच्चराशि वा स्वराशि में हो तो मनुष्य की दीर्घायु होती है।

अष्टम गत चन्द्र फलः—

कलानिधौ नैधनगेऽल्पयानभाक् तटाकनद्यादिषु गण्डकः स्त्रियाः।
हेतोस्त्यजेद्बान्धवमुच्चभे स्वभेऽस्मिन्दीर्घमायुः सबले कृशे तथा ॥ २६४ ॥

अष्टम में चन्द्रमा हो तो अल्प वाहन वाला, तलाव तथा नद्यादि में कष्ट एवं स्त्री के कारण बान्धवों का परित्याग करता है। यदि अष्टम गत चन्द्रमा उच्च राशि वा स्वराशि में हो तो दीर्घायु एवं क्षीण चन्द्रमा बली हो तो भी दीर्घायु होती है।

अष्टम गत भौम फलः—

याम्ये भौमे मूत्रकृच्छ्रामयो रुङ् नेत्रेऽद्धायुर्वातशूलादिरोगः।
पत्न्याः सौख्यं पित्ररिष्टं तथाल्पपुत्रः सौम्याढ्ये विरुङ्नात्रादिवृद्धिः ॥ २६५ ॥

स्याद्दीर्घायुः पङ्कभे ऽवेक्षिताढ्ये ऽर्द्धायू रुग्भ्यां युक् क्षयस्पर्शनाभ्याम् ।
किं प्राबल्यं मूत्रकृच्छ्रामयस्य पूर्णायुश्चेद् प्राणयुक्ते गृहेशे ॥ २६६ ॥

अष्टम में भौम हो तो मूत्र कृच्छ्र रोग, नेत्र में रोग, मध्यमायु, वातशूलादि रोग, स्त्रीका सुख, पिता के लिए कष्ट तथा अल्प पुत्रवाला होता है। यदि वह शुभ युक्त हो तो रोग से रहित, मनुष्यादि की वृद्धि तथा दीर्घायु होती है। यदि वह पाप राशि में पाप दृष्ट या पाप युक्त हो तो मध्यमायु, क्षय तथा वात रोग से युक्त अथवा मूत्र कृच्छ्र रोग की प्रबलता होती है। यदि भावेश (अष्टमेश) बली हो तो दीर्घायु होती है।

अष्टम गत बुध फलः—

आयुःकर्त्ता कोविदः कालभस्थो युक्तः पुत्रैः सप्तभिर्भूरिविप्रैः ।
वर्षे बाणाक्ष्युन्मिते ऽतिप्रतिष्ठासिद्धिर्वाच्या स्यात्समज्ञाप्रसिद्धः ॥ २६७ ॥
भावाधीशे मांसले मानवस्य सम्पूर्णायुर्निम्नदुर्हृद्गृहस्थे ।
सोग्रे ऽल्पायुस्तत्र तुङ्गे स्वराशौ युक्ते साद्भिः पूर्णमायुः प्रदिष्टम् ॥ २६८ ॥

अष्टम में बुध हो तो आयुकारक, सात पुत्र तथा बहुत क्षेत्रों से युक्त, पच्चीसवें वर्ष में महती प्रतिष्ठा की प्राप्ती एवं कीर्ति से प्रसिद्ध होता है। यदि भावेश बली हो तो 'पूर्णायु' और वह नीच राशि वा शत्रु राशि में हो वा पापयुक्त हो तो 'अल्पायु' यदि वह स्वोच्चराशि वा स्वराशि में हो वा शुभ युक्त हो तो 'पूर्णायु' होती है।

अष्टम गत गुरु फलः—

मरुन्नमस्ये युधि नीचकृत्यकारी तथा ऽल्पायुरघाश्रवासैः ।
समन्विते चेत्पतितो गृहेशे शुद्धे सपुण्ये विपुलायुरुक्तम् ॥ २६९ ॥

ऊर्जोने स्वल्पमायुः सखलदिविचरे वारिदाब्दात्परे ऽत्र ।
विश्वस्तासङ्गमः स्याद्यदि निजभवने स्वोच्चराशौ तदानीम् ।
दीर्घायुर्वीर्यहीनो भवति गतगदः पूरुषो योगसञ्ज्ञो ।
विद्वाञ्छास्त्रश्रुतीनां विबुधवर इति प्रोक्तमार्यैः पुराणैः ॥ २७० ॥

अष्टम में गुरु हो तो नीच कर्म करने वाला तथा उसकी अल्पायु होती है। यदि वह पापयुक्त हो तो जाति वा धर्म से पतित होता है। यदि भावेश (अष्टमेश) अष्टम में हो और शुभ युक्त हो तो 'दीर्घायु' निर्बल हो तो 'अल्पायु' यदि पापयुक्त हो तो सत्रह वर्ष से परे विधवा से सहवास होता है। यदि वह गुरु स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो तो दीर्घायु, वीर्यहीन, रोग रहित, योगी पुरुष, विद्वान्, शास्त्र तथा वेदों का उत्तम पण्डित होता है इस प्रकार प्राचीन महर्षियों ने कहा है।

अष्टम गत शुक्र फलः—

सव्याधिर्हितदारवान् कृतमिते वर्षे प्रसूगण्डको—
ऽसन्तुष्टः प्रविदारणे भृगुभवे ऽर्द्धायुर्भवेज्जन्मिनः ।

पूर्णायुर्यदि पुण्यखेचरयुते पुण्याभ्रसन्मन्दिरे
तत्रासद्गगनौकसा च कलिते स्वल्पायुरुक्तं बुधैः २७१ ॥

अष्टम में शुक्र हो तो रोग युक्त, मित्र स्त्री वाला, चौथे वर्ष मातृकष्ट असन्तुष्ट हृदय एवं मध्यमायु होती है। यदि वह शुभ युक्त हो तथा शुभ राशि में हो तो 'दीर्घायु' एवं पाप युक्त हो तो 'अल्पायु' होती है।

अष्टम गत शनि फलः—

सौरौ शान्ते शूद्रयोषारतस्त्रिपादायुः स्यात्सेवको ऽसौ दरिद्री।
उच्चे स्वर्क्षे दीर्घमायुर्गृहेशे द्विड्नीचे ऽल्पायुश्च कष्टान्नभोगी ॥ २७२ ॥

अष्टम में शनि हो तो शूद्र की स्त्री से सहवास, चतुर्थांश हीन आयु, सेवक तथा निर्धन होता है। यदि वह स्वोच्च राशि वा स्वराशि में हो तो दीर्घायु होती है। शत्रुराशि वा नीच राशि में भावेश हो तो अल्पायु तथा कष्ट से अन्न भोग वाला होता है।

अष्टम गत राहु फलः—

नाशे नागे ना ऽतिरोगी रदाब्दायुष्मान्सौम्यैः संयुते ऽब्धिवर्षम्।
आयुर्भावाधीश्वरे वीर्य्ययुक्ते स्वोच्चे यद्वा षष्ठिवर्षायुरुक्तम् ॥ २७३ ॥

अष्टम में राहु हो तो वह मनुष्य अति रोगी और उसकी ३२ वर्ष की आयु एवं शुभ युक्त हो तो ४० वर्ष की आयु होती है। यदि भावेश बली हो वा स्वोच्च राशि में हो तो ६० वर्ष की आयु होती है।

अष्टम गत केतु फलः—

यदा नैधने वैजयन्ते परार्थकलत्राभिलाषी सरोगो ऽतिलुब्धः।
दुराचारवाञ्छोभनैर्वीक्ष्यमाणे चिरायुर्हिरण्यं नरो विन्दते सः ॥ २७४ ॥

अष्टम में केतु हो तो पराये धन तथा स्त्री की अभिलाषा वाला, रोग युक्त, अति लोभी एवं दुराचारी होता है। यदि वह शुभ दृष्ट हो तो वह मनुष्य दीर्घायु तथा धन को प्राप्त होता है।

अष्टमस्थ रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

वेदाग्निवर्षे मनुवत्सरे कपिः कान्तां हरेज्ज्ञो नृपहायने हरेत्।
कोशं कलिस्थो ऽम्बरकून्मिते कविः सौख्यव्यथे रिष्टकरः कलाधरः ॥ २७५ ॥
षष्ठे ऽष्टमे ऽब्दे गदकृद्गुरुर्धराराभोन्मिते ऽब्दे शरयुग्मवत्सरे।
मृत्युं प्रकुर्वन्ति विनाशभावगाः शिखावदर्कात्मजराहुमङ्गलाः ॥ २७६ ॥

अष्टमस्थ सूर्य ३४ वें वर्ष १४ वें वर्ष स्त्री को मारता है। बुध हो तो १४ वें वर्ष कोश (खजाने) को नष्ट करता है। शुक्र हो तो १० वें वर्ष सौख्य तथा पीडा, चन्द्रमा हो तो छठे वा आठ वें वर्ष अरिष्ट, गुरु हो तो ३१ वें वर्ष रोग एवं केतु, शनि राहु तथा मङ्गल २५ वें वर्ष में मृत्यु को करते हैं।

अष्टम स्थान यदि राहु से दृष्ट हो तो वंश की हानि तथा बहु दुःख एवं रोग से उत्पन्न दुःख से पीडित और वह पुरुष नित्य कुकर्म करता है।

लग्न गत अष्टमेश फलः—

सङ्गामपे शिरसि जन्मनि यस्य पुंसः
पाटच्चरो भवति वारिवधूविहारी।
दीर्घामयी प्रतिदिनं त्वपकारकारी
भूरिव्यथः परचतुष्पदवित्तहारी॥ २८५॥

स्याद्दुर्विनीतोऽशुभकर्म्मसक्तो विवादकारी परदेशचारी।
बह्वन्तरायस्त्वतिसाररोगसमन्वितो भूपतिलब्धवित्तः॥ २८६॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में लग्न में अष्टमेश हो तो वह मनुष्य चोर; जल तथा स्त्रीजनों के विहार वाला दीर्घ रोगी, प्रतिदिन अपकार करने वाला, बहुत पीडित, पराये पशु तथा धन हरण करने वाला, दुर्विनीत (विनय) रहित) अशुभ कर्म में लीन, विवाद करने वाला, परदेश में भ्रमण करने वाला, बहुत विघ्न वाला, अतिसार रोग, से युक्त एवं राजा से धन लाभ वाला होता है।

कृतान्तगेहाधिपतौ कलेवरे सुवासिनीगेहगतेऽथ वा यदा।
नरो द्विभार्य्योऽच्युतभक्तिवर्ज्जितो व्रणामयेनास्य तनुर्निपीडिता॥ २८७॥

लग्न में वा सप्तम में अष्टमेश हो तो वह मनुष्य दो स्त्रीवाला, विष्णु की भक्ति से विमुख और उस का शरीर व्रण रोग से पीडित होता है।

धन गत अष्टमेश फलः—

ध्वस्तेशेऽर्थे विनीतो धनवसनयुतः स्वीयवंशे कुलीनः
श्रेयःकीलालमीनः कुमतिजनवियुग्विप्रगीर्वाणभक्तः।
सर्वेषां दुर्विधानां भवति मनुभवः पालकः क्रूरकर्म्मा
कार्पण्योऽघेऽल्पजीवी रिपुजनसहितो मोषको रोगयुक्तः॥ २८८॥

नो शुभं नो धनप्राप्तिः शोभनेऽतिशुभं भवेत्।
मरणं भूपतेः किन्तु पापखेटैः सुनिश्चितम्॥ २८९॥

धन में अष्टमेश हो तो नम्र; धन तथा वस्त्र युक्त, अपने वंश में प्रधान, पुण्यात्मा, दुर्जनों से रहित, ब्राह्मण तथा देवता ओंका भक्त, समस्तदीनजनों का पालक, क्रुर कर्म करने वाला तथा कृपण होता है। यदि अष्टमेश पाप ग्रह हो तो अल्पायु, शत्रुयुक्त, चोर, रोगी एवं न शुभ फल, न धन की प्राप्ति होती है। शुभ ग्रह अष्टमेश हो तो अतीव शुभ फल परन्तु राजा से मृत्यु होती है। पाप ग्रहों से अवश्य राजा के द्वारा मृत्यु होती है।

दिष्टान्तनाथे द्रविणालयाश्रिते दुश्चिक्यगे वा नहि लभ्यते गतम्।
धनं कदाचिद्बलपौरुषान्वितात्स्वल्पं धनं तस्य तनूभृतो भवेत्॥ २९०॥

धन वा तृतीय में अष्टमेश हो तो उस मनुष्य को गत (नष्ट) धन कदापि न मिले। बल तथा पुरुषार्थ हीन होने से उस मनुष्य का स्वल्प धन होता है।

सहज गत अष्टमेश फलः—

बले लयेशे गलसक्तयोषितः सङ्ग्रामभूमौ विकराल आत्मजैः।
सोत्थैर्युतः पुण्यजनेषु हंसको विशालगेही वृषकर्म्मपालकः ॥ २९१ ॥

खले विहङ्गे हितबान्धवानां विरोधकृद्दुर्वचनः खलश्च।
व्यङ्गः सहोत्थै रहितश्च लोलो यस्याङ्गिनो जन्मनि मानुषः सः ॥ २९२ ॥

तृतीय में अष्टमेश हों तो स्त्रियों को प्रिय मानने वाला, संग्राम मे भयङ्कर आकृति वाला, पुत्र तथा भ्राता ओं से युक्त पुण्यात्मा मनुष्यों के मध्य में हंस के समान, विशाल गृह वाला एवं पुण्य कर्म का पालन करने वाला होता है। यदि पाप ग्रह अष्टमेश हो तो मित्र तथा बान्धवों का विरोध करने वाला, दुष्टवचन बोलने वाला, अधम, अङ्गभङ्ग भ्राता ओं से रहित और चञ्चल होता है।

सुख गत अष्टमेश फलः—

कीलाले कलिनायके जितरिपुर्गङ्गाम्बुसेवी तथा
गङ्गाकूलसमाश्रितोऽमलतनुर्धीरः समीके गिरि।
शास्त्राणां पठनाधिकारसहितो वैरं जनित्रा सम-
न्यायाद् द्रविणं लभेज्जनकतस्तातोऽस्य रोगी भवेत् ॥ २९३

सुख में अष्टमेश हो तो शत्रुजनों को जीतने वाला, गङ्गाजल का सेवन करने वाला, गंगा के तट का आश्रय वाला, निर्मल शरीर, वचन तथा संग्राम में धैर्य शाली, शास्त्र पढने का अधिकारी, पिता के साथ वैर, अन्याय से पिता का धन पावे और उस का पिता रोगी होता है।

आयुर्विभौ बान्धववेश्मसंस्थे व्यापारगे वा पिशुनः कुबुद्धिः।
ईत्या विभीत्या सहितो विनाशः स्वल्पेन कालेन पितुर्जनन्याः ॥ २९४ ॥

सुख में वा दशम में अष्टमेश हो तो पिशुन (चुगलखोर) दुर्बुद्धि, गमनागम वा कष्ट तथा विशेष भय से युक्त एवं अल्प काल मे पिता माता का मरण होता है।

पञ्चम गत अष्टमेश फलः—

विनाशपे बुद्धिनिकेतनस्थे प्रसिद्धकीर्त्तिर्मृतसोत्थपुत्रः।
तथा नरो दिव्यविलासलील उदाहृतो मान्यजनेषु मानी ॥ २९५ ॥

भवति संवादशीलः श्रोतृषु शुभ सुतयुक् खले विसुतः।
सम्भवोऽपि नो जीवति जीवेच्चेच्छालिषु मुख्यः स्यात् ॥ २९६ ॥

पञ्चम में अष्टमेश हो तो विख्यात कीर्ति वाला, मृतभ्राता तथा मृत पुत्र वाला, धनविलास की लीला वाला, मान्यवरों के मध्य में श्रेष्ठ एवं श्रोता ओं में संवाद शील होता है। अष्टमेश शुभ ग्रह हो तो पुत्र युक्त यदि वह पाप हो तो पुत्र रहित; पुत्र उत्पन्न हो भी तो जीवित न रहे यदि जीवित रहे तो छलियों में प्रधान होता है

मतौ भवे वा बिलपे न शेमुषी न स्थीयते मा निलये ऽस्य जन्मिनः ।
कृते ऽपि सत्कर्म्मणि याप्यता ऽस्थिर बोधो मनीषा कुलटा भवेत्तदा ॥ २९७ ॥

पञ्चम वा लाभ में अष्टमेश हो तो उस में बुद्धि नहीं, उस के घर में लक्ष्मी का वास नहीं, शुभ कर्म करने पर भी फल की प्राप्ति नहीं एवं चञ्चल बोध तथा व्यभिचारिणी बुद्धि होती है।

रिपु गत अष्टमेश फलः——

श्वभ्रेशे ऽरौ मृत्युतुल्यो विकारै रक्तैर्म्मणामात्मजन्यप्रकोपः ।
धीरैः सत्रा स्याद्विपादो नरस्य बाधा वाच्या मातुलैर्दैववविद्भिः ॥ २९८ ॥

यानान्वितो ऽरिजितवाहनवित्ततुर्य-
पादस्तु तत्र तपने क्षितिभृद्विरोधः ।
काव्ये ऽक्षिरुग्भवति सीदति देह इज्ये
ईर्ष्या बलाभुवि रुजा क्षणदाधिनाथे ॥ २९९ ॥

तारात्मजे भुजगभीरुदरार्त्तिरेवं
नीलाम्बरे तमसि कष्टमुपेशविद्भ्याम् ।
दृष्टे न कष्टमिनसूनुसितावदभ्र-
रोगप्रदौ कुज इनश्च विरोधदौ स्तः ॥ ३०० ॥

षष्ठ में अष्टमेश हो तो रक्त तथा व्रण विकार से मृत्यु समान, शारीरिक जन्य प्रकोप, पण्डितजनों के साथ वैर, मामा ओं से पीडा, वाहन से युक्त एवं शत्रु से वाहन, धन तथा पशु मिले यदि षष्ठ में अष्टमेश सूर्य हो तो राजा से विरोध, शुक्र हो तो नेत्र में रोग, गुरु हो तो देह में दुःख, भौम हो तो ईर्ष्या (डाह), चन्द्र हो तो रोग, बुध हो तो सर्प से भय तथा उदर पीडा एवं शनि वा राहु हो तो कष्ट होता है। यदि वह चन्द्र बुध से दृष्ट हो तो कष्ट नहीं होता है। एवं शनि शुक्र हों तो बहुत रोग दायक और मंगल रवि हों तो वैर करने वाले होते हैं।

स्यात्सङ्गरेशे ऽपचयोपगे ऽथ वा विपक्ष्याते सततं गदार्दितः ।
जातस्तदा तस्य नरस्य शैशवे भुजङ्गमाम्भोहतिजा ऽमिता व्यथा ॥ ३०१ ॥

व्यय वा षष्ठ में अष्टमेष हो तो नित्य रोग से पीडित एवं उस मनुष्य के बाल्य काल में सर्प तथा जल से अतीव पीडा होती है।

सप्तम गत अष्टमेश फलः——

नारीगृहे निधनपे नगरादिनेता
प्राणी विशालबलयुङ् नरपश्चिरायुः ।

सर्वेषु कर्म्मसु कृती जनवित्तवाजि-
हेषाप्रकीर्णकुतुको गुदरोगयुक्त ॥ ३०२ ॥

कुस्त्रीप्रियो दुष्टजनोऽघखेचरे स्त्रीवैरकृत्स्त्रीजनदोषतो मृतिम् ।
लभेत्कदर्य्यश्च कुशीलवल्लभो गुह्यामयी भूर्य्यघवैरकारकः ॥३०३ ॥

सप्तम में अष्टमेश हो तो वह मनुष्य नगरादि का नेता, बहुत बल से युक्त, राजा दीर्घायु सब, कर्मों में पंडित मनुष्य, धन तथा घोडों के शब्द से प्रकीर्ण कौतुक वाला, गुद रोग से युक्त, कुत्सित स्त्री प्रिय तथा दुष्टजन होता है । यदि पापग्रह अष्टमेश हो तो स्त्री से वैर करने वाला और स्त्री के दोष से मृत्यु को प्राप्त होता है । एवं कृपण निन्दित शील प्रिय, गुह्य रोगी और बहुत पाप तथा वैर करने वाला होता है ।

अष्टम गत अष्टमेश फलः—

मृत्यौ मृत्यीशे वमनज्वरार्त्तिः कफार्त्तिरग्न्यम्बुमुखाप्तदोषः ।
भार्य्याऽन्यगा सद्वचसां विवेकः शुचिः सगर्वः करपादपीडः ॥ ३०४ ॥

धूर्त्तोऽन्यथा वादरतो निषिद्धद्यूतस्य कर्त्ता व्यवसायकृच्च ।
चौरो विरुक् छ्रेष्टवचाः स्ववंशे ख्यातः सदम्भो गुरुनिन्दकः स्यात् ॥ ३०५ ॥

अष्टम में अष्टमेश हो तो वमन, ज्वर तथा कफ से पिडित, अग्नि तथा जल से लब्ध दोष वाला, परगामिनि स्त्री वाला, वचनों का विवेकी, पवित्र, अभिमानी, हाथ पाँव में पीडावाला, धूर्त, व्यर्थ के विवाद में लीन, निषिद्ध द्यूत कर्म वाला, व्यवसाय करने वाला, चोर, नीरोग, उत्तम वचन भाषी, अपने कुल में प्रसिद्ध, कपटी और गुरु-जनों की निन्दा करने वाला होता है ।

नवम गत अष्टमेष फलः—

तीर्थस्थाने ध्वस्तनाथो विषादं मूर्खैः साकं म्लेच्छसङ्गं विधत्ते ।
भङ्गं नूनं तीर्थयात्रादिकानां पुंसामेवं कामिनीसङ्गमं च ॥ ३०६ ॥

व्यङ्गो मुखेऽर्च्ये विमुखश्च नास्तिको विबान्धवस्नेहहितश्च हिंसकः ।
पापी विसङ्गी परवित्तकामिनीरुचिः सुताढ्याऽस्य वधूर्वशाऽथ वा ॥ ३०७ ॥

नवम में अष्टमेश हो तो मूर्खों के साथ विवाद, म्लेच्छजनों का सङ्ग, तीर्थयात्रादिका भङ्ग, मुख में व्यङ्ग अर्थात वक्रमुख, पूज्य चरणों (देवता तथा ब्राह्मणों) से विमुख, नास्तिक (अनीश्वरवादी), बंधु स्नेह तथा मित्रों से रहित, हिंसावाला, पापी, सङ्ग रहित पराये धन तथा स्त्री में रुचि और उसकी स्त्री कन्याप्रजावाली अथवा वन्ध्या होती है ।

दशम गत अष्टमेश फलः—

मध्ये मृत्येशेऽनृतवाग् जनन्या सम्प्राप्तपञ्चः पितृसौख्यहीनः ।
नरेशकर्मा नयसक्तचित्तो नीचे रतः कर्म्मणि पापखेटे ॥ ३०८ ॥

जीवेन्न माता तनयोऽथ वाऽलसः सदा नरो दुर्जनतुल्यकर्म्मकृत् ।
दुःखार्दितो वल्लभलोकवर्जितः क्रूरोऽन्यजातेन सुतेन संयुत ।। ३०९ ।।

दशम में अष्टमेश हो तो मिथ्या भाषी, माता से धनलाभ वाला, पिता के सौख्य से रहित, राजकार्य करने वाला, नीति में दत्त चित्त तथा नीचकर्म में तत्पर रहता है । यदि पापग्रह अष्टमेश हो तो माता वा पुत्र न जीवे और वह मनुष्य स्वयं आलसी, दुर्जनों के समान कर्म करने वाला, दुःख से पीडित, प्रिय मनुष्यों से वर्जित, क्रूर स्वभाव एवं जारपुत्र वाला होता है ।

लाभ गत अष्टमेश फलः—

लब्धिस्थिते वधविभौ विदितः समस्त–
वन्द्यस्तथा सकलवन्दितपूज्यपादः ।
सम्भूषितो मणिमयूखसुवर्णपूर्वैः
सम्पत्तिमान्नृपसमो महसा समेतः ।। ३१० ।।

दुःखी बाल्ये सुखी पश्चाद्बलिष्ठैस्तनुजैर्युतः ।
दीर्घायुः सद्ग्रहे पापेऽल्पायुर्नीचजनान्वितः ।। ३११ ।।

लाभ में अष्टमेश हो तो प्रसिद्ध, समस्तजनों से वन्दित, सकलवन्दितजनों का पूज्यचरण, मणियों की रश्मि यों से तथा सुवर्णादि से विभूषित, सम्पत्ति युक्त, राजा के समान गुणवाला, तेजस्वी, बाल्यकाल में दुःखी, पश्चा सुखी तथा बलिष्ठ पुत्रों से युक्त होता है । शुभ ग्रह अष्टमेश हो तो दीर्घायु और पाप ग्रह अष्टमेश हो तो अल्पायु तथा नीचजनों से युक्त होता है ।

व्यय गत अष्टमेश फलः—

क्षतौ क्षयेशे रिपुहाऽपवादभाग्खलः शठश्चात्मगतिर्मलिम्लुचः ।
भक्ष्यो मृतः काकमुखैः कठोरवाक् स्याद् व्यङ्गदेहो जडधीर्निकृष्टकः ।। ३१२ ।।

व्यय अष्टमेश हो तो शत्रुहन्ता तथा अपवाद वाला होता है । एवं अधम, धूर्त्त, मन की चाल वाला चोर ,मरने पर काकादि यों का भक्ष्य, कठोर वचन वाला, व्यङ्ग शरीर जडबुद्धि एवं निकृष्ट (आचारादि से निन्दित) होता है ।

अष्टम गत मेष फलः—

काले क्रिये कंसरिपोः कथानुस्मृत्यां स्थितानां भजनाश्रितानाम् ।
महाधमानां दुरितान्वितानां गीतो गतिर्ज्ञैर्विषयान्तरेऽन्तः ।। ३१३ ।।

अष्टम में मेष हो तो श्रीकृष्णचन्द्रजी के स्मरण में दत्तचित्त वालों की, भजनाश्रितों की, महा अधर्मों की एवं पापीजनों की विदेश में मृत्यु होती है ।

अष्टम गत वृष फलः—

पराभवस्थे गवि मानुषाणां महाशनाद्वा कफजन्यरोगात् ।
तुर्य्याश्रितो दुर्जनसङ्गतो वा स्याद्यामवत्यां स्वनिकेतनेऽन्तः ॥ ३१४ ॥

अष्टम में वृष हो तो बहुत भोजन से कफजन्य रोग से चतुष्पदों से वा दुर्जन सङ्गति से अपने घर में रात्रि के समय मृत्यु होती है।

अष्टम गत मिथुन फलः—

वपालये वैणिकसञ्ज्ञराशौ गुदामयात्प्लीहसमुद्भवाद्वा ।
अनिष्टसङ्गाद्रसजात्प्रमेहात्स्नेहात्प्रमादान्मरणं च लाभात् ॥ ३१५ ॥

अष्टम में मिथुन हो तो गुदरोग से प्लीहजन्य रोग से अनिष्टसङ्ग से रस से प्रमेह से स्नेह से प्रमाद से अथवा लाभ से मरण होता है।

अष्टम गत कर्क फलः—

कुलीरराशौ कलहोपयाते नाशो भवेदन्यकराज्जनस्य ।
विदेशयातस्य पयोदपुष्पाश्रयाच्च किं भीषणकीटकेन ॥ ३१६ ॥

अष्टम में कर्क हो तो विदेशस्थित मनुष्य की अन्यजन के हाथ से, जलाश्रय से अथवा भयानक कीडे से मृत्यु होती है।

अष्टम गत सिंह फलः—

मृगाधिराजे मृधमन्दिरोपगे भवेद्विनाशो विपिनाश्रितस्य च ।
शरीरिणश्चौरजनात्सरीसृपात्तुर्याश्रितो वा पवनाशनात्किमु ॥ ३१७ ॥

अष्टम में सिंह हो तो वनाश्रित मनुष्य की चौर से वृश्चिकादि से चतुष्पद से अथवा सर्प से मरण होता है।

अष्टम गत कन्या फलः—

यदा कुमारी कलहालयस्था तदा नराणां निजवेश्मगानाम् ।
विषादनात्स्त्रीजनहिंसतोऽन्तः स्वकीयवित्ताद्वनितावशाद्वा ॥ ३१८ ॥

अष्टम में कन्या हो तो अपने घर में स्थित मनुष्यों की विषभक्षण से, स्त्रियों की हिंसा से अपने द्रव्य के कारण अथवा स्त्रियों के कारण मृत्यु होती है।

अष्टम गत तुला फलः—

आयोधने तौलिनि जन्मकाले मर्त्यस्य यस्य द्विपदोद्भवोऽन्तः ।
विषौषधाद्रात्रिगमे प्रसङ्गकृतोपवासाच्च निपातरुड्भ्याम् ॥ ३१९ ॥

अष्टम में तुला हो तो रात्रि में द्विपद से औषध से प्रसङ्ग से उपवास से प्रपात से अथवा क्रोध से मरण होता है

अष्टम गत वृश्चिक फलः—

आस्कन्दनागारगते सरीसृपराशौ यदा जन्मनि जन्मिनोऽत्ययः।
स्वसद्मसंस्थस्य मुखोत्थरोगतः कीटादितो वा गरलोत्थितोऽथ वा ॥ ३२० ॥

अष्टम में वृश्चिक हो तो अपने घर में स्थित मनुष्य का मुख रोग से कीटादि से अथवा विषजन्य कारण से मरण होता है।

अष्टम गत धनु फलः—

यदा समाघातगते हयाङ्गराशौ स्वगेहे निधनं नरस्य।
चतुष्पदाद् गुल्मगदेन गुह्यामयादिषोर्वा जलसम्भवेन ॥ ३२१ ॥

अष्टम में धनु हो तो पशु से गुल्मरोग से गुह्य रोग से वा जल से अपने घर में स्थित मनुष्य का मरण होता है

अष्टम गत मकर फलः—

नक्रेऽत्ययाते मतिमाननङ्गयुक्छास्त्रार्थवेत्ता विततोदरो गुणी।
मानी सविद्योऽथ कलासु पेशलः शूरोऽस्य जन्तोर्जलजन्तुतोऽत्ययः ॥ ३२२ ॥

जिस के जन्म समय में अष्टम में मकर हो तो वह मनुष्य बुद्धिमान्, कामी, शास्त्रों के अर्थ का ज्ञाता विस्तृत उदर वाला, गुणवान्, सम्मानित, विद्यावान् कलाओं में चतुर तथा शूर वीर और उस मनुष्य का जल के जीव से मरण होता है।

अष्टम गत बुध फलः—

कुम्भे पराभूतिगते शरीरिणोऽनेकव्रणैस्तोयभवैर्विकारतः।
श्रमैः कृतैर्लोहितसप्तितः किमु पराश्रयाद् ग्रामगतस्य पञ्चता ॥ ३२३ ॥

अष्टम में कुम्भ हो तो ग्रामगत मनुष्य की अनेक व्रणों से जलजन्य विकार से परिश्रम करने से अग्नि से अथवा पराश्रय से मृत्यु होती है।

अष्टम गत मीन फलः—

मत्स्यद्वये मृत्युनिकेतनस्थे स्यात्कालधर्म्मो रुधिरप्रकोपात्।
मायुज्वराच्छस्त्रकृतात्सुकष्टाद्वाऽतिसारामयतो जनस्य ॥ ३२४ ॥

अष्टम में मीन हो तो रक्त प्रकोप से पित्तज्वर से शस्त्र से अतिकष्ट से अथवा अतिसार रोग से मनुष्य का मरण होता है।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते आयुर्भावचिन्तनप्रकरणं त्रिंशमवसितम्।

———

अथ

भाग्यभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते ।

नवम भावजन्य वस्तु ओं का परिज्ञान:—

भाग्यं भक्तिगुरू वृषोऽथ दुरितं प्रस्थानधर्म्मक्रिये
दानं यज्ञतपःप्रभावविमलस्वान्तान्धुहर्म्यारवः ।
तीर्थाप्तिः सहजाङ्गनाऽनुजफलं तातस्य पौत्रोदयः
स्नेहो देवगृहं स्वग्रामचरणं चिन्त्यं समस्तं शुभे ॥ १ ॥

भाग्य, भक्ति, गुरु, पुण्य. पाप, यात्रा, धर्म्मक्रिया, दान, यज्ञ, तप, प्रभाव निर्मलहृदय, कूप, उत्तम गृह, उच्चस्थान तीर्थ प्राप्ति, भ्रातृ स्त्री, भ्रातृ फल, पिता के पौत्र का जन्म, स्नेह, देवमन्दिर तथा अपना ग्रामपाद इत्यादि सब उक्त वस्तु ओं का नवम भाव में विचार करे ।

नवम में विशेष विचार:—

स्वामी गुरुर्मातुलभाग्यताता धर्म्मे विचिन्त्या नवमाङ्गिरोभ्याम् ।
विचिन्तयेद्भाग्यतपःशुभानि गुरुप्रभावौ सुकृतं विपश्चित् ॥ २ ॥

स्वामी, गुरु, मातुल, भाग्य तथा पिता ये सब पदार्थ धर्म भाव में विचारने चाहिएँ। भाग्य, तप, शुभ, गुरु प्रभाव (शक्ति) तथा पुण्य इन छः वस्तु ओं का नवमभाव और गुरु से विचार करे ।

भाग्य भाव की विशेषता:—

भाग्यं विचिन्त्यं सकलं विहाय जन्तोर्विशेषेण बुधैः प्रयत्नात् ।
आयुश्च वंशो जनको जनित्री भवन्ति धन्या विधिना युतेन ॥ ३ ॥

मनुष्य के समस्त भावों को छोडकर केवल यत्नपूर्वक विशेषतया भाग्य भाव का विचार करना चाहिए। क्यों कि भाग्य युक्त पुरुष से आयु, कुल, पिता तथा माता ये सब धन्य (श्लाघ्य) होते हैं ।

भाग्य स्थान का विशेष निर्णय:—

तनूगृहाद्वा तुहिनांशुराशेर्निकेतनं यन्नवमं तदेव ।
विधेर्गृहं वा बलवांस्तयोर्यस्तस्मान्नियत्या भवनं विचिन्त्यम् ॥ ४ ॥

जन्म लग्न राशि से वा जन्म चन्द्र राशि से जो नवम स्थान हो वही भाग्यस्थान होता है । अथवा जन्म लग्न और जन्म चन्द्र इन दोनों में जो अधिक बली हो उस से भाग्य स्थान का विचार करना चाहिये ।

भाग्येश प्रभृतियों के विशेष बलाबल का परिज्ञानः—

कस्मिन् गृहे तिष्ठति भाग्यनायकः को व्योमवासो विधिमन्दिरे स्थितः ।
बलान्वितो वाऽल्पबलस्तदीक्षकश्चिन्त्यास्तदीशश्च तदीयकारकः ॥ ५ ॥

भाग्येश उच्च नीच स्वगृह मित्र वा शत्रु किस की राशि में है । एवं भाग्य भाव में शुभ पाप मित्र शत्रु उच्चगत वा नीचगत कौन ग्रह स्थित है और उक्त ग्रह बली है वा निर्बल है इस प्रकार विचार करना चाहिये । एवं भाग्य दर्शी, भाग्येश और भाग्यकारक इन तीनों के बलाबल का भी विचार करना चाहिये ।

श्रेष्ठ पुरुष जन्म योगः——

पराक्रमस्थः प्रतिभालयस्थः पौरोपगः प्राणयुतः खपान्थः ।
येषां जनौ पुण्यगृहं प्रपश्येच्छ्रेष्ठा नरास्ते कथिताः कवीन्द्रैः ॥ ६ ॥

जिन मनुष्यों के जन्म समय में तृतीय गत पञ्चम वा लग्नगत ग्रह बली हो और वह नवम स्थान को देखता हो तो वे श्रेष्ठ कहे है ।

तपः स्थितौदीक्षणदेहपौ वा को मांसलः पुष्करगः सहोत्थे ।
स्वोच्चस्थितो वा स्वभगोऽपि येषां श्रेष्ठा मनुष्याः परिकीर्त्तितास्ते ॥ ७ ॥

जिन मनुष्यों के जन्म समय में यदि नवम में नवमेश तथा लग्नेश हों अथवा तृतीय में कोई बली ग्रह स्वोच्च राशिगत वा स्वराशि गत हो तो वे श्रेष्ठ मनुष्य कहे हैं ।

भाग्यकारक ग्रह के वश से स्वदेशादि में भाग्योदय योगः——

तपः शुभेशान्वितलोकितं नृणां भाग्यप्रदं तद्भपयुक्तभाधिपः ।
भाग्यस्य कर्त्ता परिपाचकोऽङ्कपः स्याद्बोधकस्तत्तनयालयाधिपः ॥ ८ ॥

नवम स्थान यदि शुभग्रह से तथा अपने स्वामी से दृष्ट तथा युक्त हो तो मनुष्य के लिए भाग्यप्रद होता है । नवमेश की आक्रान्त राशि का स्वामी ' भाग्यकर्ता ' (भाग्योत्पादक), नवमेश ' परिपाचक ' (भाग्यका उपभोक्ता) एवं नवम से पञ्चम स्थान (लग्न) का स्वामी ' बोधक ' (भाग्योत्पादक) होता है ।

कुर्वन्ति भाग्यं चिरमुच्चराशिगास्ते वा स्वभस्था अथ पञ्चके शुभे ।
उपैति भाग्यं विपुलां श्रियं नृपस्तत्पाढ्यदृष्टेऽथ चतुर्नभश्चराः ॥ ९ ॥
दैवाश्रितास्ते वितरन्ति दैवं स्वदेशदैवं स्वभतुङ्गयाताः ।
अन्यांशगाश्चेद्विभवं विदेशे मिश्रग्रहैर्मिश्रमुपैति दैवम् ॥ १० ॥

यदि उच्च राशि में वा भाग्यकर्ता प्रभृति ग्रह हों तो चिरकाल पर्यंत भाग्यको करते हैं । यदि भाग्य में स्वोच्चादि राशिगत पाँच ग्रह हों और वे अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट हों तो भाग्य तथा बहुत लक्ष्मी की प्राप्ति एवं राजा होता है । नवम में चार ग्रह हों तो मनुष्य को भाग्य देते है । यदि वे भाग्यगत चारों ग्रह स्वराशि वा स्वोच्च राशि में होंतो स्वदेश में भाग्य को करते है । यदि वे स्व राशि प्रभृति गत ग्रह अन्य ग्रहों नवांश में हों तो विदेश में भाग्योदय को करते हैं । नवम में मिश्र ग्रह हो तो मनुष्य मिश्र भाग्य को प्राप्त होताहै ।

प्रकारन्तर से स्वदेशादि में भाग्योदय के योगः—

भाग्यालयं स्वाधिपलोकितान्वितं देशे स्वकीये नियतिं लभेत सः ।
अन्यैर्विहङ्गैर्यदि तद्युतेक्षितं विन्देत जातो विषयान्तरे विधिम् ॥ ११ ॥

यदि नवम स्थान अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य अपने देश में भाग्यको प्राप्त होता है । एवं नवमस्थान अन्यग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो परदेश में भाग्य को प्राप्त होता है ।

यद्युद्गमेऽगभवनेऽगविहङ्गदृष्टे
तत्पे स्थिरे प्रचुरभाग्ययुतः स्वदेशे ।
होरागते चरगृहे चरखेचरेण
दृष्टे चरे तदधिपे परदेशभाग्यम् ॥ १२ ॥

यदि जन्म लग्न में स्थिर राशि हो और स्थिर ग्रह से दृष्ट हो एवं स्थिर राशि में लग्नेश भी हो तो मनुष्य स्वदेश में भाग्य से युक्त होता है । एवं जन्म लग्न में चरराशि हो और वह चरग्रह से दृष्ट हो एवं उस (लग्न) का स्वामी चर राशि में हो तो विदेश में भाग्य से युक्त होता है ।

यद्यन्यथा स्यादुपवर्त्तनेषु सर्वेषु पुंसामुदयो नियत्याः ।
दृशां बहुत्वेऽध्वनि शोभनानां सर्वत्र दैवोदयमाहुराद्याः ॥ १३ ॥

यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो सर्वत्र भाग्योदय होता है । एवं भाग्य स्थान में शुभ ग्रहों की अधिक दृष्टि हो तो भी मनुष्य का सर्वत्र भाग्योदय होता है ।

भाग्यवान् योगः—

भाग्येशे निजभे धने तनयभे केन्द्रेऽथ वा दीक्षणे
स्वर्क्षोच्चस्थखगेऽथ वा मतिसखेऽथेन्दोः क्षयास्तारिगैः
सत्खेटैरथ जीवजन्मतनुपैः केन्द्राश्रितैर्मानवः
सद्भाग्यो नवमे हितोच्चगृहगः पापोऽपि भाग्यप्रदः ॥ १४ ॥

नवम पञ्चम द्वितीय वा केन्द्र में भाग्येश हो तो (१) नवम में स्वराशिगत वा स्वोच्च राशिगत ग्रह हो अथवा गुरु हो तो (२) चन्द्रमा से अष्टम, सप्तम तथा षष्ठ में शुभ ग्रह हों तो (३) केन्द्र में गुरु, जन्म राशि का स्वामी तथा जन्म लग्नेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष उत्तम भाग्य वाला होता है । यदि नवम में मित्र राशि गत वा स्वोच्च राशि गत पाप ग्रह भी हो तो भाग्य फल को देने वाला होता है ।

प्राणैरुपेते पथिपस्त्यपाले पारावतांशादिगत शुभांशे ।
त्रिकोणकेन्द्रे शुभदृष्टयुक्ते युक्तः प्रजातोऽधिकभाग्यवित्तैः ॥ १५ ॥

त्रिकोण वा केन्द्र में षड्बल युक्त नवमेश हो और वह पारावतांशादि में हो वा शुभांश में हो वा शुभ दृष्ट युक्त हो तो अधिक भाग्य तथा धन से युक्त होता है ।

स्वपे फले तद्रमणे गुरुस्थिते तद्व्ययपेऽर्थे पदपेन वीक्षिते ।
युक्ते महाभाग्ययुतः कलेवरी भाग्याधिको विक्रमवेश्मनीनजे ॥ १६ ॥

लाभ में द्वितीयेश हो, नवम में लाभेश हो, द्वितीय में नवमेश हो और वह दशमेश से दृष्ट वा युक्त हो तो मनुष्य महाभाग्य से युक्त होता है। यदि तृतीय में शनि हो तो अधिक भाग्य वाला होता है।

केन्द्रेशाढ्येऽङ्गेश्वरे वा बलिष्ठे स्वोच्चेऽङ्गेशे सौम्यवर्गे स्वभागे ।
मित्रर्क्षे वा देवलोकांशकेऽर्केऽङ्केशे स्वोच्चे वीर्ययुक्तेऽङ्गपे वा ॥ १७ ॥
सद्भिर्दृष्टे सोत्तमे भाग्यभावे सत्सम्बन्धे तत्पतौ वोदयेशे ।
स्वोच्चांशस्थे सद्युते केन्द्रकोणे सदृग्युक्ते साम्बरेशे स्वभे वा ॥ १८ ॥
सद्भाग्यः स्यात्सद्गणस्थौ सुरेज्यकल्याणेशौ सोत्तमे क्षेमगेहे ।
जातो भाग्यं प्राप्नुयात्पुण्यराशौ तत्पे सद्भिर्दृष्टयुक्ते तथा स्यात् ॥ १९ ॥

लग्नेश यदि केन्द्रेश से युक्त हो तो (१) स्वोच्च राशि शुभ वर्ग स्वनवांश वा मित्र राशि में बली लग्नेश हो तो (२) देवलोकांश में सूर्य, स्वोच्च राशि में नवमेश और लग्नेश बली हो तो (३) नवम स्थान यदि शुभ दृष्ट युक्त हो और नवमेश का शुभ ग्रहों से सम्बन्ध हो तो (४) केन्द्र वा त्रिकोण में स्वोच्चांशगत लग्नेश हो शुभ युक्त दृष्ट हो अथवा दशमेश से युक्त होकर लग्न में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य उत्तम भाग्य वाला होता है। शुभ ग्रहों के वर्ग में गुरु तथा नवमेश हों और नवम में शुभ ग्रह हो तो उक्त योग में भाग्य को प्राप्त होता है। भाग्य स्थान तथा भाग्येश यदि शुभ दृष्ट वा युक्त हो तो भी भाग्यवान् होता है।

काव्याचार्य्ययुतेक्षिते विधिविभौ किं भाग्यभेऽथात्मजे
स्वाङ्गेशौ किमु पुण्यपे पुरगते पुण्येऽङ्गपे वा भवे
वाऽर्थेऽङ्केश उतायभाग्यभपयोर्योगेऽथ दैवाधिपो
दैत्येज्यो विधिकारकोऽपि गुरुचित्केन्द्रायगो भाग्यवान् ॥ २० ॥

यदि नवमेश वा नवम भाव शुक्र तथा गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो (१) पञ्चम में धनेश तथा लग्नेश हों तो (२) लग्न में भाग्येश और भाग्य में लग्नेश हो तो (३) लाभ वा धन में भाग्येश हो तो (४) लाभेश तथा भाग्येश का योग हो तो (५) नवम पञ्चम वा केन्द्र में नवमेश, शुक्र तथा भाग्य कारक हों तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य भाग्यवान् होता है।

सदभ्रगामिभिः सहःसमन्वितैः शुभाश्रितैः ।
त्रिकोणकेन्द्रभावगैर्लभेत भागधेयकम् ॥ २१ ॥

नवम में बली शुभ ग्रह हों अथवा त्रिकोण वा केन्द्र में बली शुभ ग्रह हों तो उक्त योग में भाग्य को प्राप्त होता है।

धर्म्माङ्गेशौ धर्म्महोरागतौ वा पुण्याङ्गस्थौ पौरपुण्याधिपालौ ।
आचार्य्येणालोकितौ संयुतौ वा यस्योत्पत्तावेति भाग्यं चिरं सः ॥ २२ ॥

धर्म में धर्मेश और लग्न में लग्नेश हो अथवा नवम में लग्नेश और लग्न में नवमेश हो, और वे गुरु से दृष्ट वा युक्त हों तो उक्त योगों में चिरकाल पर्यन्त भाग्य को प्राप्त होता है।

होरानाथेऽदृश्ययाते विशेषाद्दानाधीशे वाऽङ्कपेऽदृश्यभागे।
ग्लौराशीशे वा तपस्यालयस्थे यावज्जीवं भाग्यवानेषु जातः॥ २३

अदृश्य भाग में लग्नेश हो विशेषतया नवमेश भी अदृश्य भाग में हो अथवा अदृश्य भाग में लग्नेश वा चन्द्रराशीश हो वा नवम भाव में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य जीवन पर्य्यन्त भाग्यवान् होता है।

केन्द्रोपयातः पद्वीगृहेशः किं नन्दनस्थो नवमोपगो वा।
प्रभुः पुरस्योच्चगतः समृद्धिसौख्यान्वितः स्यान्मरणान्तकोऽसौ॥ २४॥

केन्द्र पञ्चम वा नवम में नवमेश हो और स्वोच्च राशि में लग्नेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष मरणकाल पर्यन्त सौख्य तथा समृद्धि से युक्त होता है।

कण्टकालयगते विधेर्विभावादिमे वयसि भाग्यमेति सः।
कोणगः किमु निजोच्चराशिगो मध्य एव वयसः फलप्रदः॥ २२५॥

केन्द्र में भाग्येश हो तो मनुष्य प्रथमावस्था में भाग्य को प्राप्त होता है। एवं त्रिकोण में (५।९) में वा स्वोच्च राशि में भाग्येश हो तो मध्यावस्था में भाग्य को प्राप्त होता है।

मङ्गलेशि निजभे हितालये वेक्षिते शुभखगेन संयुते।
भाग्यमेति वयसोऽन्तिमे नरो हौरिका इति गदन्ति नैपुणाः॥ २६॥

स्वराशि वा मित्र राशि में नवमेश हो अथवा वह शुभ ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो मनुष्य अन्तिमावस्था में भाग्य को प्राप्त होता है। इस प्रकार चतुर होराशास्त्र वेत्ता कहते हैं।

भ्राता प्रभृति से भाग्य प्राप्ति के योगः—

भाग्येशे सभुजाधिपे शुभदृशा युक्ते शुभेनान्विते
सद्भागे निजसोदरस्य वसुतो विन्देत दैवं ध्रुवम्।
योगे शस्तसुतेशयोः सुखचरैर्दृष्टाढ्ययोर्वा शुभे-
शेनाढ्ये परिलोकिते धियि विधौ दैवं लभेतात्मजात्॥ २७॥

शुभांशक में नवमेश हो और वह तृतीयेश से युक्त हो एवं शुभ दृष्ट युक्त हो तो भ्राता के धन से भाग्य को प्राप्त होता है। नवमेश तथा पञ्चमेश का योग हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट युक्त हों अथवा पञ्चम वा नवम भाव यदि नवमेश से दृष्ट वा युक्त हो तो पुत्र से भाग्यवान् होता है।

सन्ताने यदि भाग्यकारकखगे किं सन्ततीशे शुभे
क्षेमेशेन युतेक्षिते तनयतो ना भागधेयं लभेत्।

ज्ञातेः कारकसंयुते सरणिपे ज्ञातौ शुभे ज्ञातिपे
ज्ञातेर्भाग्यमुपैति नेति मदपात्स्त्रीकारकाद्वा तथा ॥ २८ ॥

पञ्चम में भाग्यकारक ग्रह हो अथवा नवम में पञ्चमेश हो और वह नवमेश से युक्त वा दृष्ट हो तो पुत्र से भाग्यवान् होता है। ज्ञाति (षष्ठ) स्थान में ज्ञातिकारक युक्त नवमेश हो और नवम में ज्ञाति (षष्ठ) स्थान का स्वामी हो तो ज्ञातिजन से भाग्य को प्राप्त होता है। इस प्रकार सप्तमेश तथा सप्तमकारक ग्रह से भी स्त्री से भाग्यवान् होने का विचार करे अर्थात् सप्तम में स्त्रीकारक ग्रह युक्त नवमेश हो और नवम में सप्तमेश हो तो स्त्री से भाग्यवान् होता है।

यदा प्रसूतौ पथिभावपस्य प्रत्यर्थिपोऽरातिखगस्तदीशे।
भाग्यस्य सम्बन्धिनि वाङ्कनाथे सदुष्टनाथे रिपुभाग्यमेति ॥ २९ ॥

जब मनुष्य के जन्म समय में षष्ठ भाव का स्वामी यदि नवमेश का शत्रु हो और उस का नवम स्थान से सम्बन्ध हो अथवा नवमेश यदि त्रिकेश से युक्त हो तो शत्रु के भाग्य को प्राप्त होता है।

भाग्यहीन योगः—

मित्रेशे मृतिभवनेऽथ निम्न इज्ये-
ऽब्जे वाऽच्छेऽथ मलिनसंयुतास्त्रिकस्थाः।
पद्येशो भृगुतनयश्च भाग्यकर्त्ता
किं नीचारिभवनगे त्रिके दयेशे ॥ ३० ॥

दृष्टाढ्ये दहनखगैः स भाग्यहीनो
भद्रेशे भयसदनेऽरिनीचदृष्टे।
योग्रांशे गुरुरमणे स्वनिम्नभांशे
किं क्रूरास्तपसि शिवेश्वरेऽबले वा ॥ ३१ ॥

लेखेशे बलरहितेऽथ नेज्यचन्द्र-
संदृष्टेऽर्कभुवि चतुष्टये विभाग्यः।
कल्याणे बहुदुरितान्विते तदर्य्ये
वाङ्केशे विबल उताङ्गपेक्षितेऽङ्के ॥ ३२ ॥

भाग्येशेऽघभलवे इज्यधिष्ण्यदृष्टे
तद्वत्स्वाङ्गमदपदारकारकाख्याः।
नीचास्तारिलवगता असाधुयुक्ता
उद्वाहादिह परतोऽस्य भाग्यनाशः ॥ ३३ ॥

अष्टम में सुखेश होतो (१) नीच राशि में गुरु चन्द्र वा शुक्र हो तो (२) त्रिक में पापयुक्त नवमश शुक्र तथा भाग्यकारक ग्रह हों तो (३) त्रिक में नीच राशि गत वा शत्रुराशिगत नवमेश हो और वह पापदृष्ट युक्त हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य भाग्यहीन होता है । षष्ठ में नवमेश हो और वह शत्रुग्रह वा नीचगत ग्रह से दृष्ट हो तो (१) क्रूरांश नीच राशि वा नीचांश में नवमेश हो तो (२) नवम में पापग्रह हो तो नवमेश निर्बल हो अथवा लग्नेश निर्बल हो तो (३) केन्द्र में शनि हो और वह गुरु चन्द्र से दृष्ट हो तो उक्त योगों में भाग्यरहित होता है । भाग्य में बहुत पापग्रह हों और भाग्येश वा लग्नेश निर्बल हो तो (१) नवमस्थान यदि यदि लग्नेश से दृष्ट हो और पाप राशि वा पापांश में भाग्येश हो और वह वह गुरु शुक्र से दृष्ट हो तो भी भाग्य हीन होता है । द्वितीयेश, लग्नेश, सप्तमेश तथा स्त्रीकारक ग्रह यदि नीचांश में हों अस्तगत हों वा शत्रु नवांश में हों और वे पापग्रहों से युक्त हो तो विवाह के अनन्तर भाग्यका नाश होता है ।

पुनर्भाग्य प्राप्ति योगः—

स्वपेऽस्तपे वाथ कलत्रकारके यदोग्रषष्ठ्यंशगतेऽपि शोभनः ।
दृष्टे समेते नियतेर्विनाशतः परं स भाग्यं लभते ध्रुवं नरः ॥ ३४ ॥

क्रूर षष्ठ्यंश में धनेश सप्तमेश वा स्त्रीकारक ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट युक्त हो तो भाग्य नाश के अनन्तर निश्चय से फिर भाग्य को प्राप्त होता है ।

काव्येज्यदृष्टसहिते नवमे तदीशे
किं स्वाङ्गपे बलयुतेऽथ शुभे तनूपे ।
भाग्याधिपे वपुषि वा भवभेऽथ भाग्ये-
शेऽथ धनायपयुते पुनरेतिभाग्यम् ॥ ३५ ॥

नवमस्थान तथा नवमेश ये दोनों यदि शुक्र गुरु से दृष्ट वा युक्त हो तो (१) द्वितीयेश तथा लग्नेश बल युक्त हो तो (२) नवम में लग्नेश और लग्न वा एकादश में भाग्येश हो तो (३) धनमें धनेश तथा लाभेश से युक्त भाग्येश हो तो फिर भाग्यको प्राप्त होता है ।

भाग्योदय काल परिज्ञानः—

काव्येऽर्थपे शम्बरवैरिपे वा पत्नीगृहे वोपचयोपयाते ।
दृष्ट्या समेते शुभनाकगानां विन्देत दैवं परतो विवाहात् ॥ ३६ ॥

सप्तम में वा उपचय मे शुक्र द्वितीयेश वा सप्तमेष हो और वह शुभ दृष्ट हो तो विवाह से परे भाग्यको प्राप्त होता है ।

आचार्य्ये नियतिं गते तदधिपे केन्द्रे नखाब्दात्परं
मर्त्यो भाग्यमुपैति भाग्यरमणेऽर्थे दैवगे द्रव्यपे ।
दन्ताब्दात्परतो विदि स्वपरमोच्चांशे तपोभर्त्तरि
पद्मास्थे बहुभाग्यमेति जनिमान् षट्त्रिंशदब्दात्परम् ॥ ३७ ॥

नवम में गुरु हो और केन्द्र में नवमेश हो तो २० वर्ष से परे भाग्योदय होता है। द्वितीय में भाग्येश और भाग्य में द्वितीयेश हो तो ३२ वर्ष से परे भाग्योदय होता है। परमोच्चांश में बुध हो और नवम मे नवमेश हो तो ३६ वर्ष से परे बहुत भाग्य को प्राप्त होता है।

भाग्यस्थभाग्येश्वरभाग्यकारकास्ते मांसला अभ्रचराः स्वभोच्चगाः।
भांशे सखीनामुदिताः सुताङ्कगाः केन्द्राश्रिता वाथ तदीश्वरैः सह ॥ ३८॥

सम्बन्ध एषामतिभाग्यकारकास्तद्दायभुक्तावुदयो विधेर्भवेत्।
मध्ये तु तेषामधिवीर्य्यवान् खगो यस्तस्य दाये किमु तद्धृतौ तथा ॥ ३९॥

भाग्यस्थान मे जो ग्रह हों भाग्येश तथा भाग्यकारक वे सब ग्रह बली हों स्वराशि वा स्वोच्चराशि में हों मित्रराशि वा मित्रांश में हों वा उदयी हों वा पञ्चम नवम वा केन्द्रमें हों अथवा पञ्चम नवम वा केन्द्र के स्वामियो से उन के सम्बन्ध हों तो वे अत्यन्त भाग्यकारक होते है। उनकी दशा वा अन्तर्दशामें भाग्योदय होता है। अथवा भाग्यस्थ प्रभृतियो के मध्यमें जो ग्रह अधिक बलवान् हो उसकी दशा वा अन्तर्दशा में मनुष्य का भाग्योदय होता है।

शुक्रे शुभे सशुभदे शुभनाथदाये
  भाग्योदयः ससुकृतः सुखपः सतोऽस्य।
दाये स पापसहितो यदि तद्दशायां
  प्रोक्तो बुधैर्जनिमतामुदयो नियत्याः ॥ ४०॥

नवम में शुभ युक्त शुक्र हो तो नवमेश की दशा में भाग्योदय होता है। एवं सुखेश यदि शुभग्रह से युक्त होतो उस शुभग्रह की दशा में भाग्योदय होता है। यदि सुखेश पाप युक्त हो तो सुखेश की दशा में पण्डितजनों ने भाग्योदय कहा है।

गोचर से भाग्योदय काल परिज्ञानः—

लग्नाज्जनेः शशभृतो यदि गोचरेण
  मार्त्तण्डभूरुपचयास्तशधीगृहेषु
सस्त्रीनृयुग्घटतुलातिमिगोतुरङ्गः
  कुर्य्याद्विधेरुदयमङ्गभृतां तदानीम् ॥ ४१॥

जन्म लग्न तथा जन्म चन्द्र राशि से गोचर में उपचय स्थान (३। ६।१०।११) सप्तम नवम वा पञ्चम में कन्या मिथुन कुम्भ तुला मीन वृष वा धनू राशि गत शनि हो तो मनुष्यों के भाग्य को उदय करता है।

कायुर्व्ययैकवसुवेश्मसु नीलवासाः
  सैणाजपञ्चनखवृश्चिककर्किराशिः
आपत्तिसङ्कटदरिद्रमुखानि भाग्य-
  हानिं व्यथां तनुभृतां विदधाति नित्यम् ॥ ४२॥

लग्न वा चन्द्र से गोचर में चतुर्थ अष्टम व्यय प्रथम वा द्वितीयस्थान में मकर मेष सिंह वृश्चिक वा कर्क राशिगत शनि होतो आपत्ति सङ्कट दरिद्र प्रभृति भाग्य हानि वा शरीर पीडा को करता है।

गौरोऽङ्गभाद्धिमकराद्गुरुधीफलेषु
साश्वाजकर्किघटयुग्ममृगेन्द्रमीनः।
दैवोदयोऽस्तपदगः शुभदस्त्रिकाम्बु-
यातः स गोचरवशाद्यदि भाग्यहानिः॥ ४३॥

लग्न वा चन्द्र से गोचर में नवम पञ्चम वा एकादश में धनु मेष कर्क कुम्भ मिथुन सिंह वा मीन राशि गत गुरु हो तो भाग्योदय होता है। एवं गोचर से सप्तम वा दशम गत गुरु शुभफलप्रद होता है। त्रिक वा चतुर्थगत गुरु हो तो भाग्य हानि होती है।

गच्छन्तु गोचर वशात्पुरपुण्यखेशाः
स्वस्वालयान्यदि नियत्युदयं विदध्युः।
जन्मेन्दुभान्नियतिचिन्नृपगो हिमांशु-
र्दिष्टोदयोऽस्तु दिवसे मनुजस्य तस्मिन्॥ ४४॥

जब गोचर में जन्म लग्नेश, भाग्येश तथा दशमेश ये तीनों अपनी अपनी राशियों में जाँय तब मनुष्य के भाग्योदय को करते हैं। जिस दिन जन्म राशि से नवम पञ्चम वा दशम में चन्द्रमा जावे उस दिन मनुष्य का भाग्योदय होता है।

भाग्योदय के वर्षः—

द्व्योष्ठा जिना इभयमा रदषोडशार्का-
स्तत्वानि तर्कदहना द्वियुगाः समा यः।
स्वोच्चे स्वभेऽम्बरचरो दशवर्गशुद्धो
भाग्योदयो भवतु तद्द्युसदः शरत्सु॥ ४५॥

२२ सूर्य के, २४ चन्द्रमा के, २८ भौम के, ३२ बुध के, १६ गुरु के, २५ शुक्र के, ३६ शनि के ४२ राहु के भाग्योदय के वर्ष हैं। जन्म समय में जो ग्रह गृहादि दशवर्गों में शुद्ध होकर स्वोच्चराशि वा स्वराशि में हों उस ग्रह के पूर्वोक्त वर्षों में मनुष्य का भाग्योदय होता है।

शङ्करादि भक्ति योगः—

कारकांशकतनाविनानिलौ तत्र गीरथशिखाभृतौ किमु।
शम्भुभक्त इनयुक्तवीक्षिते सन्ततौ सवितृशम्भुभक्तिमान्॥ ४६॥

कारकांश लग्न में सूर्य केतु अथवा गुरु केतु हों तो श्री शिवजी का भक्त होता है। जन्म लग्न से जो पञ्चम स्थान हो यदि वह सूर्य से युक्त वा दृष्ट हो तो श्रीसूर्यनारायणजी तथा श्री शिवजी की भक्ति वाला होता है।

गौर्य्यादि भक्ति योगः—

गौरीभक्तोऽशेऽब्जकेतू किम च्छसम्बन्धे धीमन्दिरे भक्तमाहुः।
चामुण्डायाः शारदाभक्त इज्यसम्बन्धे स्यान्नन्दनागार आहो॥ ४७॥

पञ्चाभक्तः केतुकाव्यौ लवस्थौ सम्पर्के चेत्सन्ततौ सोमकव्योः ।
योषादेवोपासना शोभना स्यादेवं होराशास्त्रनिष्णात आह ॥ ४८ ॥

कारकांश लग्न में चन्द्र केतु हों तो गौरी का भक्त, पञ्चम स्थान में शुक्र का सम्बन्ध हो तो चामुण्डा का भक्त और गुरु का सम्बन्ध हो तो शारदा का भक्त होता है। कारकांश लग्न में केतु शुक्र हो तो लक्ष्मी का भक्त होता है। यदि पञ्चम मे चन्द्र शुक्र का सम्बन्ध हो तो स्त्री देवता की उपासना उत्तम होती है। इस प्रकार प्रवीण होराशास्त्र वेत्ता कहता है।

सम्बन्ध आत्मोत्थगृहे क्रमात्कुजपुंखेटशीतांशुसुवां गुहस्य च ।
पुंदेवताया निखिलस्य भक्तिमान् भागे गुदारौ शरजन्मभक्तिभाक् ॥ ४९ ॥

पञ्चम स्थान में मङ्गल का सम्बन्ध हो तो स्कन्द का भक्त, पुरुषग्रहों (रवि भौम गुरु) का सम्बन्ध हो तो पुरुष देवता का भक्त एवं बुध का सम्बन्ध हो तो सब देवता ओं का भक्त होता है। यदि कारकांश लग्न में केतु मङ्गल हो तो स्कन्द का भक्त होता है।

सुतेशसम्बन्धिनि रिःफपेऽर्थे रन्ध्रेऽथ वा सात्त्विकदेवभक्तः ।
सखीश्वरे सन्ततिभेऽथवांशे ज्ञार्की स नारायणभक्तियुक्तः ॥ ५० ॥

द्वितीय वा अष्टम में व्ययेश हो और उसका पञ्चमेश से सम्बन्ध हो तो सात्विक देवता का भक्त होता है। पञ्चम में चतुर्थेश हो अथवा कारकांश लग्न में बुध शनि हों तो नारायण की भक्ति से युक्त होता है।

पातचूडाकृशाङ्गानां सम्बन्धे नन्दने क्रमात् ।
परपीडकयक्षिण्योः प्रेताशन्याः स सेवकः ॥ ५१ ॥

पञ्चम स्थान में राहु का सम्बन्ध हो तो परपीडक देवता का भक्त, चन्द्रमा का सम्बन्ध हो तो यक्षिणी का भक्त एवं शनिका सम्बन्ध हो तो प्रेताशनि का भक्त होता है।

गुरु भक्ति योगः—

गौरस्थभेशलवपे भृगुगौरदृष्टे
दा सद्युते धिषणबन्धगणे विधौ वा ।
तत्पे तपोमृदुलवे किमु मार्गगे सद्-
दृष्टेऽशप किमु गुरा गुरुभक्तियुक्तः ॥ ५२ ॥

जिस राशि में गुरु हो उस के स्वामी के नवांश का स्वामी यदि शुक्र गुरु से दृष्ट हो तो (१) नवम स्थान यदि शुभयुक्त हो अथवा उस में गुरु का सम्बन्ध वा वर्ग होतो (२) गुरु के नवांश में वा मृदु षष्ठ्यंश में भाग्येश हो तो (३) कारकांश लग्नेश वा लग्न गत नवांशेष वा गुरु यदि शुभ दृष्ट हो तो गुरु भक्ति से युक्त होता है।

गुरु दार गामी योगः—

भाग्ये सपापे भृगुजेऽथवन्दा क साधभाग्याधिपतौ सभेशे ।
यद्वा सभेऽथास्तमय यमेऽम्बुरन्ध्राङ्करिःफेषु कुजे भुजङ्गे ॥ ५३ ॥

किं शस्तपस्थांशपतौ सपङ्के सितेन वाऽब्जेन युतेऽथ निम्ने ।
निम्नांशके पुण्यपतौ सितेन समन्वितेऽसौ गुरुदारगामी ॥ ५४ ॥

नवम में पापयुक्त शुक्र वा पापयुक्त चन्द्रमा हो तो (१) पापयुक्त नवमेश यदि चन्द्रमा वा शुक्र से युक्त हो तो (२) सप्तम में शनि और सुख अष्टम नवम वा व्यय में भौम वा राहु हो तो (३) नवमेश के नवांश का स्वामी यदि पापयुक्त हो और वह शुक्र वा चन्द्रमा से भी हो तो (४) नीच राशि वा नीचांश में शुक्र युक्त नवमेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष गुरुदार गामी (अगम्यागमन करने वाला) होता है ।

कृशे कलानिधौ किं वा तदंशेऽच्छे तथाङ्कपे ।
नीचभे गुरुसम्बन्धिदारगामी नरो भवेत् ॥ ५५ ॥

चन्द्रमा क्षीण हो वा क्षीण चन्द्रमा के नवांश में शुक्र हो तो भी गुरुदार गामी होता है । नीच राशि में नवमेश होतो गुरुसम्बन्धी स्त्री गामी होता है ।

गुरु द्रोही योगः—

भागाद्भाग्यगृहस्थौ भोगीशेनतनूजौ ।
जातस्योद्भवकाले द्रोही स्वीयगुरोः स्यात् ॥ ५६ ॥

कारकांश लग्न से नवम में राहु तथा शनि होतो गुरु द्रोही होता है ।

पुण्यवान् योगः—

केन्द्रेऽर्थपो ज्ञ उदये सबले तनौ वा
चार्वन्तरे हृदि किमिन्दुजनीक्षिते वा
जीवांशभेऽथमनसि ज्ञसितौ किमर्च्ये
मृद्वंशकेऽथ नवमे यदि भोजनेऽर्के ॥ ५७ ॥

किं गोपुरादिलवगेऽनिमिषारिपूज्ये
किं निद्रिते फणिपतौ पदवौ स्मरे वा ।
श्वःश्रेयसे प्रचुरपुण्यनभश्चरेन्द्रै-
रालोकिते जनुषि पञ्चजनः सपुण्यः ॥ ५८ ॥

केन्द्र में धनेश, लग्न म बुध और लग्न बली हो तो (१) शुभ ग्रहों के अन्तराल में सुख भाव हो अथवा सुख भाव बुध से दृष्ट हो अथवा सुख भाव में गुरु की राशि वा नवांश हो तो (२) सुख में बुध शुक्र हों तो (३) मृदुषष्ठ्यंश में गुरु हो तो (४) भोजनावस्था में नवम गत सूर्य हो तो (५) गोपुरादि भाग में शुक्र हो तो (६) नवम वा सप्तम में निद्रावस्थागत राहु हो तो (७) नवम स्थान यदि बहुत शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष होता है ।

धिष्ण्यज्ञगौरलवगे शिवपे शुभाना-
मन्तःस्थिते शुभदृशा सहितेऽथ सौम्यैः

दृष्टान्विते शुभलवे शुभभागतत्प-
तत्कारके शुचिमनाः सुकृतान्वितोऽयम् ॥ ५९ ॥

शुक्र बुध वा गुरु के नवांश में नवमेश हो और वह शुभ ग्रहों के अन्तराल में हो एवं शुभ दृष्ट हो तो (१) नवम स्थान नवम गत नवांशराशि नवमेश वा नवमकारक यदि शुभांश में हो और शुभ दृष्ट युक्त हो तो शुद्धचित्त तथा पुण्य से युक्त होता है ।

पापी योगः—

पङ्के पयःस्थेऽथ तपोगृहेऽघे किं क्रूरषष्ठ्यंशगते पथीशे ।
पाप्मान्तरे पाप्मयुतेऽथ मान्दियुक्तेऽर्थपे वा दुरिताधिकत्वे ॥ ६० ॥
क्रूरेक्षिताढ्ये हृदयेऽघमध्ये तत्पे गतोर्जेऽशुभषष्टिभागे ।
सोग्रेऽरिनीचास्तगते समान्दौ सद्वीक्षणोने जननेऽघभाक्सः ॥ ६१ ॥

सुख में पाप ग्रह हो तो (१) नवम में पाप ग्रह हो तो (२) क्रूरषष्ठ्यंश में नवमेश हो और वह पाप ग्रहों के मध्य में हो वा पाप युक्त हो तो (३) द्वितीयेश यदि गुलिक से युक्त हो तो (४) सुख में बहुत पाप हों और पाप दृष्ट युक्त हों एवं सुखेश पापान्तराल में हो निर्बल हो अशुभ षष्ठ्यंश में हो पाप युक्त हो शत्रु वा नीच राशि में हो अस्तगत हो गुलिक से युक्त हो वा शुभ दृष्ट न हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पापी होता है ।

सोग्राङ्गं च विशेषतो नवमभं सोग्रं विशेषात्तनो-
र्नाथे साघखगेऽथ नीचभवने खेशेऽङ्गमुग्रान्वितम् ।
किं सोग्रे घनपेऽथ विग्रहगृहे वक्रेनिसत्संयुते-
ऽङ्गेशे निम्नपदानुगे गगनपेऽघाढ्येक्षिते पापकृत् ॥ ६२ ॥

लग्न यदि पाप युक्त हो विशेषतः नवम स्थान पाप युक्त हो और लग्नेश भी पापयुक्त हो तो (१) नीच राशि में दशमेश, लग्न पाप युक्त और लग्नेश भी पाप युक्त हो तो (२) लग्न में मङ्गल, शनि तथा शुभ ग्रह हों, नीच राशि में लग्नेश हो और दशमेश यदि पाप युक्त हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पाप कर्म करने वाल होता है ।

पूज्ये पुरेऽन्त्ये फणिपे धने यमे पापी भवेद्विप्रकुलोत्थितोऽपि यः ।
स्वे भागुवक्रैर्हरभावगौ हरी दारालये दानवयाजके तथा ॥ ६३ ॥

लग्न में गुरु, व्यय में राहु और धन में शनि हो तो ब्राह्मण वंश में उत्पन्न पुरुष भी पापी होता है । द्वितीय में शुक्र, राहु तथा मङ्गल हों अष्टम में सूर्य चन्द्र हों और सप्तम में शुक्र हो तो भी पापी होता है ।

पानीयभे पामर उच्चनीचपदानुगौ पौरगतौ यमार्कौ ।
यद्वोद्गतेशे नतभे सदूने चतुष्टये पापयुते सपापः ॥ ६४ ॥

सुख में पाप ग्रह हो एवं लग्न में उच्च वा नीच राशि गत शनि तथा सूर्य हों अथवा नीच राशि में लग्नेश हो और वह शुभ युक्त न हो एवं केन्द्र पाप युक्त हो तो उक्त योगों में पाप युक्त होता है ।

क्रूरा विहङ्गाः पथिभे पराक्रमे न शोभनाकाशसदां दृशा युताः ।
अनारतं पङ्करतः समुद्भवः स्वप्ने ऽपि पुंसः सुकृतं सुदुर्लभम् ॥ ६५ ॥

नवम तथा तृतीय में पाप ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष नित्य पापपरायण होता है और उस पुरुष के लिए स्वप्न में भी पुण्य अति दुर्लभ होता है ।

पातकी योगः—

आद्ये चन्द्रकुजौ शनौ स्मरगते वा मृत्युपे मार्गभे
ऽथाङ्गेशे सकुजे सपापशशिनि द्वेष्ये ऽथ वैकांशगौ ।
चन्द्रेनौ सखलौ किमर्करुधिरावेकत्र वा ऽहीनजौ
क्रूरांशे गुलिकेक्षितौ पदव्रिगौ क्रूरांशभे तत्पतौ ॥ ६६ ॥

यद्वा ऽब्जे तमसा युते सदुरितेज्येनेक्षिते ऽथार्थपे
सोग्रे मान्दियुते किमु क्षितिसुतक्षीणेन्दुयोगे ततः ।
आर्य्ये ऽङ्गे स्मरभे ऽसिते ऽथ सितगौ घाते सपापे कुजे
वा पीतू मृदुलोकितौ मदनगौ स्यात्पातकी देहभृत् ॥ ६७ ॥

लग्न में चन्द्र भौम हों और सप्तम में शनि हो तो (१) नवम में अष्टमेश हो तो (२) लग्नेश यदि मङ्गल से युक्त हो और षष्ठ में पापयुक्त चन्द्रमा हो तो (३) एकनवांश में पापयुक्त सूर्य चन्द्र हों अथवा एक राशि में सूर्य भौम हों तो (४) नवम में क्रूरांश गत राहु शनि हो और वे गुलिक से दृष्ट हों एवं क्रूरांश में नवमेश हो तो (५) चन्द्रमा यदि राहु से युक्त हो और पापयुक्त गुरु से दृष्ट होतो (६) पापयुक्त द्वितीयेश यदि गुलिक से युक्त हो तो (७) मङ्गल तथा क्षीण चन्द्रमा का योग होतो (८) लग्न में गुरु और सप्तम में शनि हो तो (९) षष्ठ में चन्द्रमा और मङ्गल पापयुक्त हो तो (१०) सप्तम में सूर्य चन्द्र हों और वे शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पातकी होता है ।

छायेयदृष्टे गतपर्वनाथे कृशे विधौ वाऽथ विधौ रुवक्रे ।
आद्ये यमेऽस्तेऽथ स नीचभे ज्ञेऽङ्गेऽब्जासृजोर्मन्मथभेऽथ केन्द्रे ॥ ६८ ॥

मूर्त्तीश्वरे मूसरिफे सहेन्दुक्षोणीसुताभ्यामथ सोदयेशौ ।
पापेसराफौ हरिणाङ्कजन्मविभावरीशौ यदि पातकी स्यात् ॥ ६९ ॥

गत पर्वेश (जन्म दिन से पूर्व की पूर्णिमा के वा आमावास्या के अवसान काल के लग्नका स्वामी) यदि शनि से दृष्ट हो और चन्द्रमा क्षीण हो तो (१) लग्न में मङ्गल युक्त चन्द्रमा हो और सप्तम में शनि हो तो (२) लग्न में नीच राशि गत बुध हो और सप्तम में चन्द्र भौम हों तो (३) केन्द्र में लग्नेश हो और उसका

क्षीण चन्द्रमा तथा लग्नेश के साथ ईसराफ हो तो (४) बुध तथा चन्द्रमा यदि लग्नेश से युक्त हों और उनका पाप ग्रह के साथ ईसराफ हो तो उक्त योगों में पातकी होता है।

कुदृष्टिदृष्टे खलहद्दगेऽङ्गपभगे न गौरेक्षित उग्रपीडिते।
इने घने तद्वद्घग्रहेक्षिते पापे व्यये साघगृहेऽतिपातकी ॥ ७० ॥

पापग्रहकी हद्दा में लग्नेश सूर्य हो और वह पाप दृष्ट हो एवं गुरु दृष्ट नहो अथवा लग्न में पापक्रान्त सूर्य हो तो भी पातकी होता है। व्ययभाव में पापराशि हो तथा उस में पाप ग्रह हों और वह पापदृष्ट हो तो उक्त योग में महापातकी होता है।

यात्रा स्थान परिज्ञानः—

यात्रां त्रिधीस्वखपदाङ्गनवान्तिमेभ्यो
दूराटनं रविजरिःफतदीशतः खात्।
लग्नात्प्रवासमिह तीर्थगमं पद्व्याः
सञ्चिन्तयेन्मनसिजाद्गमनागमं वित् ॥ ७१ ॥

तृतीय, पञ्चम, द्वितीय, दशम सप्तम, लग्न, नवम तथा व्यय इन उक्त आठ स्थानों से यात्रा का विचार करे। शनि, व्ययभाव तथा व्ययेश इन तीनों से दूर देशकी यात्रा का विचार करे। दशम तथा लग्नसे प्रवास का विचार करे। नवम से तीर्थ यात्रा का विचार करे। एवं सप्तम से सामान्य यात्रा (साधारण आने जाने) का विचार करे।

महायात्रां योगे पदपदविपत्योः किमु विधोः
शुभेशे केन्द्रे वा बहुविमलदृष्टे ससुकृते।
उताङ्केशे केन्द्रे चिति पथि भवे दीक्षणगृहे
यदा दृष्ट्याधिक्ये सुकृतखसदां नुर्विनिगदेत् ॥ ७२ ॥

दशमेश तथा नवमेश का योग हो तो (१) चन्द्रमा से जो नवम स्थान हो उसका स्वामी यदि केन्द्र में हो वा बहुत शुभ ग्रहों से दृष्ट हो वा शुभ युक्त हो तो (२) केन्द्र पञ्चम नवम वा लाभ में नवमेश हो और नवम स्थान में बहुत शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो उक्त योगों में महायात्रा को कहते है।

यदा मार्गनिकेतेशः सपत्ने सङ्करे क्षतौ।
विकर्त्तनकरच्छन्नः चेतनो नाचरेद्गमम् ॥ ७३ ॥

यदि षष्ठ अष्टम वा व्यय में नवमेश हो और वह अस्तगत हो तो उक्त योग में प्राणी यात्रा को न करे।

स्वधर्म्म सिद्धि योगः—

शस्तस्थिताः शोभनखेचरेन्द्राः कुर्वन्ति धर्म्मस्य निजस्य सिद्धिम्।
कर्म्मांशगाः कर्म्मणि सद्विहङ्गा जातो जनः पुण्यरतस्तदानीम् ॥ ७४ ॥

नवम में शुभ ग्रह हों तो अपने धर्म्म की सिद्धि को करते है । एवं दशम में शुभ ग्रह हों और वे दशम गत नवांश राशि में हों अर्थात् दशम भाव में वर्गोत्तमांश हो और उस में शुभ ग्रह हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पुण्य में तत्पर रहता है।

धर्म में दृढ बुद्धि योगः—

शस्तेशे सौम्यषष्ठ्यंशे वैशेषिकांशके शुभैः ।
समन्विते सतां भागे स्वधर्म्मे दृढबुद्धिभाक् ॥ ७५ ॥

शुभ षष्ठ्यंश में वैशेषिकांश में नवमेश हो और वह शुभ युक्त हो एवं शुभांश में हो तो उक्त योग में धर्म्म में दृढ बुद्धि होती है।

धर्म्मे शुभैर्धार्म्मिक उत्तमो भवेच्छस्तं विपक्षान्वितवीक्षितं यदा ।
तत्पे सपत्नान्तरगे परस्य च धर्म्मे रतः सत्खचरैः स्वके वृषे ॥ ७६ ॥

नवम में शुभ ग्रह हों तो उत्तम धार्मिक होता है। नवम स्थान यदि शत्रु ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और नवमेश शत्रु ग्रहों के अन्तराल में हो तो मनुष्य परधर्म में निरत होता है। एवं शुभ ग्रहों से अपने धर्म में तत्पर रहता है।

धर्म्माध्यक्ष योगः—

ज्ञांशे भार्ग्यौ वा शपे युक्तदृष्टे भव्यैः किं वा भव्यनाथे ससत्त्वे ।
काव्ये वार्य्ये सद्गणस्वोच्चगे शे धर्म्माध्यक्षः सम्भवो मानवः स्यात् ॥ ७७ ॥

बुध के नवांश में शुक्र तथा गुरु हों तो (१) नवमेश यदि शुभ युक्त दृष्ट हो तो (२) नवमेश बली हो और नवम में शुभ वर्ग गत स्वोच्चराशिगत शुक्र वा गुरु हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य धर्म्माध्यक्ष होता है।

त्यागी योग तथा दम्भ से धर्म्म परिग्रह योगः—

त्यागी भवेन्मीनलवेऽथ भद्रपे खलांशकेऽसत्खरसांशसंयुते ।
श्वःश्रेयसे वीतमलग्रहान्विते तदोपधेर्धर्म्मपरिग्रहो नृणाम् ॥ ७८ ॥

कारकांश लग्न में मीनराशि हो तो त्यागी होता है। पापांश में तथा क्रूरषष्ठ्यंश में नवमेश हो और नवम भाव शुभ युक्त हो तो उक्त योग में दम्भ (कपट) से धर्म्म का ग्रहण करने वाला होता है।

दान शील योगः—

दानाधिपे मानधनेशलोकिते सिंहासनांशेऽथ तपःस्तौ हिते ।
केन्द्रेऽम्बरेशेऽन्त्यप इज्यवीक्षिते किं ज्ञे स्वतुङ्गे प्रथमाधिपेक्षिते ॥ ७९ ॥

आयाधिपे कीचकगेऽथ दानपे स्वतुङ्गगे सद्द्युगतीक्षिते सता ।
समन्विते भावुकभे किमास्फुजिद्दृष्टे धनेशे गुरुदृष्टिसंयुते ॥ ८० ॥

पारावतादौ पथिपेऽथ विग्रहे पद्येशदृष्टे पुरपे त्रिकोणगे ।
केन्द्रेऽथ भव्यद्युचरेक्षितान्विते मार्गे महादानकरः कलेवरी ॥ ८१ ॥

सिंहासनांश में नवमेश हो और वह दशमेश तथा लग्नेश से दृष्ट हो तो (१) सुख में नवमेश, केन्द्र में दशमेश और व्ययेश यदि गुरु से दृष्ट हो तो (२) उच्च राशि गतं बुध यदि लग्नेश से दृष्ट हो और केन्द्र में लाभेश हो तो (३) स्वोच्च राशि में नवमेश हो और वह शुभ दृष्ट हो एवं नवम स्थान शुभ युक्त हो तो (४) लग्नेश यदि शुक्र से दृष्ट हो तथा पारावतादि भाग में नवमेश हो और वह गुरु से दृष्ट हो तो (५) लग्न यदि नवमेश से दृष्ट हो और त्रिकोण वा केन्द्र में नवमेश हो तो (६) नवम स्थान यदि शुभ दृष्ट युक्त हो तो उक्त योगों में महादान करने वाला होता है ।

अन्न दाता योगः—

पोष्ये पूज्यसितान्विते तदधिभूर्विद्युक्तदृष्टोऽथ वा
सप्राणोच्चमलोकितोऽथ वसुपे वैशेषिकांशान्विते ।
चान्द्याचार्य्ययुतेक्षिते मृदुलवेऽथो शक्तियुक्तेऽर्थपे
केन्द्रे वोपचये ससारसुकृतैर्दृष्टेऽथ सारे बुधे ॥ ८२ ॥

केन्द्रे साधुलवे सुताधिप उतार्थेशेऽमलैर्लोकिते
चेद्वैशेषिकभागगे भृगुसुताचार्य्यान्वितेऽथो शुभैः ।
संयुक्ते प्रतिभाधिपे पदविगे पोष्यालयाधीश्वरे
कल्याणाश्रनिकेतनेन सहिते स्यादन्नदाता जनः ॥ ८३ ॥

धन स्थान यदि गुरु शुक्र से युक्त हो और धनेश यदि बुध से युक्त वा दृष्ट हो अथवा बली शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो (१) मृदु षष्ठ्यंश में तथा वैशेषिकांश में धनेश हो और वह बुध गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो (२) केन्द्र वा उपचय में बली धनेश हो और वह बली शुभग्रहों से दृष्ट हो तो (३) केन्द्र में मङ्गल युक्त बुध हो और शुभांश में पञ्चमेश हो तो (४) वैशेषिकांश में शुभदृष्ट धनेश हो और वह शुक्र गुरु से युक्त हो तो (५) नवम में शुभयुक्त पञ्चमेश हो और द्वितीयेश शुभयुक्त हों तो उक्त योगों में अन्न देने वाला होता है ।

दान प्राप्ति योगः—

दानप्राप्तिः फल उदयपे कर्मपेऽङ्गेशदृष्टे
सोर्ज्जे किं वा सपदपथिपेऽङ्गेशदृष्टेऽङ्गजेशे ।
श्रेयःस्थाने तदनु परमोच्चांशके केन्द्रकोणे
धर्म्माधीशे गगनपतिना लोकिते पूरुषाणाम् ॥ ८४ ॥

लाभ में लग्नेश हो और बली दशमेश यदि लग्नेश से दृष्ट हो तो (१) नवम में पञ्चमेश हो और वह दशमेश नवमेश से युक्त एवं लग्नेश से दृष्ट हो तो (२) केन्द्र वा त्रिकोण में परमोच्चांशगत नवमेश हो और वह दशमेश से दृष्ट हो तो उक्त योगों में पुरुषों को दान की प्राप्ति होती है ।

कृपण योगः—

सभांशे सहजे सूरौ स्वभस्थे कृपणो जनः ।
पराक्रमे सिते सार्य्यभागे स्वर्क्षगते तथा ॥ ८५ ॥

सहज में शुक्रांश गत तथा स्वराशि गत गुरु हो तो उक्त योग में कृपण होता है । एवं सहज में गुरु नवांश गत तथा स्वराशि गत शुक्र हो तो भी कृपण होता है ।

तीर्थाटन योगः—

द्यूनाधिपे शे सरणीश्वरेऽस्ते जातो विधत्ते बहुतीर्थयात्राम् ।
कायेऽङ्कपेऽङ्के हरिजेशि तीर्थाटनस्य योगं बहुयानयोगम् ॥ ८६ ॥
शान्ते शशिसूनौ सद्वीक्षणभाजि ।
तीर्थानि बहूनि वीक्षेत जनुष्मान् ॥ ८७ ॥

नवम में सप्तमेश हो और सप्तम में नवमेश हो तो उक्त योग में बहुत तीर्थ यात्रा को करते है । लग्नमें नवमेश हो और नवम में लग्नेश होतो तीर्थ योग तथा बहुत यात्रा के योग को करता है । अष्टम में शुभ दृष्ट बुध होतो बहुत तीर्थों को देखता है ।

भ्राताओं के शुभाशुभ फल तथा समृद्ध योगः—

भ्रातुर्गृहे भ्रातृफलं यदुक्तं वाच्यं तदत्रापि तदर्य्ययुक्ते ।
धर्म्मेऽखिलं शं विधिमान् स यावज्जीवं तनूपेऽनुदिते मभेशे ॥ ८८ ॥

सहज स्थान में भ्राता के लिये जो शुभाशुभ फल कहा हुआ है वह यहां भी कहना चाहिये । यदि नवम स्थान तृतीयेश से युक्त हो तो सम्पूर्ण शुभफल होता है । अनुदित (अदृश्यार्द्ध) मे लग्नेश वा चन्द्राक्रान्त राशीश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष जीवन पर्यन्त भाग्यवान् होता है ।

पुंसद्ग्रहैः पद्धतिगैः ससोदरो योषाग्रहाभ्यां भगिनीसमन्वितः ।
तत्रार्कसूनुक्षितिनन्दनावुभौ सहोदराणां भवतो विनाशकौ ॥ ८९ ॥

नवम में पुरुषग्रह तथा शुभग्रह हो तो भाई से युक्त और स्त्रीग्रह हो तो भगिनी से युक्त होता है । यदि नवम में शनि मङ्गल होतो भाइयों का नाश करने वाले होते हैं ।

भाग्यभाव के प्रकीर्ण योगः—

कोणार्थखाङ्गाम्बुफलेऽङ्कपो न सन्धौ ननिम्ने हिततुङ्गभस्थः ।
तदेन्दिरा तस्य गृहे वसेत्स दासान्वयेऽपि क्षितिनायकः स्यात् ॥ ९० ॥

त्रिकोण धन दशम लग्न सुख वा लाभ में मित्र राशि गत वा उच्च राशि गत नवमेश हो और बहसन्धि में न हो तथा नीच राशि में न होतो उस के घर में लक्ष्मी का वास और वह दासवंश में उत्पन्न होकर
का स्वामी होता है ।

पद्येश्वरे प्राणिनि कीचकोपगे किं कोणगे स्वीयपतीक्षिते पुरे।
शुभं शतं नैति गुरोर्नवांशकत्रिंशांशकत्र्यंशगते नृपाधिपे ॥ ९१ ॥

नरस्तपस्वी च सुभोगवर्जितो शस्ते समस्ता द्युचरा निजोच्चगाः।
श्रेष्ठं मनुष्यं जनयन्ति हाटकवित्ताधिकार्द्धिं किमु तत्र शोभनैः ॥ ९२ ॥

दृष्टे सुकीर्त्तिर्हितशत्रुपक्षको दिव्याङ्गभाक् स्यात्सरणौ शरीरपे।
देहे शिवेशे धिषणे वधूभगे लब्धिर्भवेद्धोरणवित्तयोर्नृणाम् ॥ ९३ ॥

त्रिकोण वा केन्द्र में बली नवमेश हो और 'लग्न' यदि लग्नेश से दृष्ट हो तो सौ मङ्गल कार्य को प्राप्त होता है। गुरु के नवांश त्रिंशांश वा द्रेष्काण में दशमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष तपस्वी तथा उत्तम भोगों से रहित होता है। नवम में स्वोच्चराशिगत समस्त ग्रह हों तो सुवर्ण तथा धन से समृद्ध श्रेष्ठ मनुष्य को उत्पन्न करते हैं। नवम स्थान यदि शुभ दृष्ट हो तो उत्तम कीर्ति वाला, शत्रु पक्ष को नाश करने वाला तथा उत्तम शरीर वाला होता है। नवम में लग्नेश और लग्न में नवमेश हो एवं सप्तम में गुरु हो तो वाहन तथा धन की प्राप्ति होती है।

उपान्त्यभेशप्रभुणा सनाथे धर्मी चिरायुर्नरराजवन्द्यः।
स्वगैः शुभैर्धान्यचितिः समस्तायुरर्थसौभाग्यचितिर्जनस्य ॥ ९४ ॥

लाभ में नवमेश हो तो धर्मात्मा, दीर्घायु तथा राजमान्य होता है। धन में शुभ ग्रह हों तो धान्य की वृद्धि, पूर्णायु, धन तथा सौभाग्य की वृद्धि होती हैं।

कल्याणगामी खचरः स्वभस्थः सल्लोकितः स्वीयकुले वरिष्ठः।
सुखोपपन्नः सुकृतस्वभावः श्रेयाँश्रितः स्याद्बहुभाग्ययुक्तः ॥ ९५ ॥

नवम में स्वराशिगत ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट हो तो अपने वंश में श्रेष्ठ, सुखयुक्त, धर्म शील, बुद्धि से श्रेष्ठ एवं बहुत भाग्य से युक्त होता है।

नभश्चरो मङ्गलगो निजोच्चे योगं प्रकुर्य्यादधिनायकाद्यैः।
कल्याणदृष्टः सविलासशीलो नृनायकत्वं सुतरामुदारः ॥ ९६ ॥

नवम में उच्च राशि गत ग्रह हो और वह अपने स्वामी प्रभृतियों से योग करे एवं शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो उक्त योग में जो मनुष्य उत्पन्न हो वह विलास स्वभाव वाला, मनुष्यों का स्वामी और अत्यन्त उदार होता है।

शेऽत्युच्चगः शुभकरः शुभदृक्समेतः
स्यात्तुर्य्यपाद उदितो नरनाथयोगः।
अर्द्धस्तथाऽऽर्किकुसुवोः समपञ्चकेन
हानिस्तथाऽस्य चितिरुच्चभपञ्चकेन ॥ ९७ ॥

नवम में परमोच्च गत शुभ ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट हो तो पूर्वोक्त राजयोग चार पाद अर्थात् परिपूर्ण होता है। यदि नवम में परमोच्चगत शनि वा भौम हो और वह शुभ हो तो अर्द्ध (दो पाद राज योग होता है)

एवं नवम गत ग्रह सम प्रभृति पाँच (सम, शत्रु, अधिशत्रु, अस्तगत तथा नीच) राशि में हो तो पूर्वोक्त राजयोग की हानि होती है। यदि नवम गत ग्रह उच्च प्रभृति पाँच (उच्च,मूलत्रिकोण, स्वगृह, अधिमित्र तथा मित्र) राशि में हों तो उक्त राज योग की वृद्धि होती है।

हिमद्युतौ हितांशगेऽह्नीन्द्रपूजितेक्षिते ।
तथा सितेक्षिते निशीन्दिरासमन्वितो जनः ॥ ९८ ॥

दिन का जन्म हो, मित्रांश में चन्द्रमा हो और वह गुरु से दृष्ट हो तो (१) रात्रि का जन्म हो मित्रांश में चन्द्रमा हो और वह शुक्र से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य लक्ष्मी से युक्त होता है।

भगेक्षिते भाग्यगते गुरौ नृपो मंत्री कुजेनेन्दुसुतेन वित्तवान् ।
गन्धर्वभर्त्ता भृगुसूनुनेक्षिते ग्लावा सुखी भानुभुवा महाङ्गभाक् ॥ ९९ ॥

नवम में गुरु हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो राजा, मङ्गल से दृष्ट हो तो मंत्री, बुध से दृष्ट हो तो धनवान्, शुक्र से दृष्ट हो तो घोडों का स्वामी, चन्द्र से दृष्ट हो तो सुखी एवं शनि से दृष्ट हो तो ऊंटों का स्वामी होता है।

महाविधिः सर्वविलोकितेऽर्च्ये शगे गतोर्ज्जेऽप्यथ भाग्य इज्ये ।
वेर्ज्येऽसले नन्दनपेन युक्ते चेद्गोपुरादौ नरराजमंत्री ॥ १०० ॥
दाताऽथ वित्ते भृगुनन्दनेन विलोकिते शीतलगौ प्रदाता ।
सद्दृष्टपापैर्नियतौ स्वभस्थैः ख्यातो नरः सौख्यगुणैरुपेतः ॥ १०१ ॥

नवम में समस्त ग्रह दृष्ट गुरु हो और वह निर्बल भी हो तो मनुष्य विपुल भाग्य वाला होता है। नवम में गुरु हो अथवा गोपुरादि भाग में बली गुरु हो और वह पञ्चमेश से युक्त हो तो राजमंत्री तथा दाता होता है। धन में शुक्र दृष्ट चन्द्रमा हो तो भी दाता होता है। नवम में स्वराशिगत पाप ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष विख्यात तथा सौख्य और गुणों से युक्त होता है।

नीचारिमूढोग्रखगा गुरूपगा यशोऽर्थधर्म्मैर्वियुतान् दयोपगाः ।
ज्ञेज्योनखेटा जनयन्ति बन्धनार्त्ताक्रान्तदीनामयसंयुतान्नरान् ॥ १०२ ॥

नवम में नीच राशि गत शत्रु राशि गत वा अस्तगत पापग्रह हो तो कीर्ति धन तथा धर्म से रहित मनुष्यों को उत्पन्न करते हैं। एवं बुध गुरू को छोडकर अन्यग्रह नवम में होतो बन्धन युक्त, दुःखित शोभारहित दिन और रोगी मनुष्य को उत्पन्न करते है।

निम्नारिराश्यंशगता असौम्याः क्षेमाश्रिताः सत्खचरैर्न दृष्टाः ।
दीनं सरोगं मलिनं च वामपादे व्रणाढ्यं जनयन्ति जन्तुम् ॥ १०३ ॥

नवम में नीच राशि गत नीचांशगत वा शत्रु राशि गत शत्रुनवांश गत पापग्रह हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो दीन, रोग युक्त मलिन तथा वामपाद में व्रणयुक्त प्राणी को उत्पन्न करते है।

तत्रोरगे दुर्नखरोऽस्थिपीडा यदि क्षमाजे विषपावकार्त्तिः ।
सूरे सुधाङ्गे दृषदायुधेन काष्ठेन किं वा परिपीडितश्च ॥ १०४ ॥
आयुः कृशं तत्र मृगाङ्कभौमौ मातृक्षयोऽब्जार्ककुजा विचित्रः ।
मृत्युर्निरुक्तः परमन्यथोपलब्धिर्गतोर्ज्जैर्दुरितैर्दयास्थैः ॥ १०५ ॥

नवम में राहु होतो कुत्सित नख तथा अस्थि (हड्डी) में पीडा, भौम हो तो विष तथा अग्नि से पीडा, सूर्य वा चन्द्र हो तो पत्थर शस्त्र वा काष्ठ स पीडा एवं अल्पायु होती है। यदि नवम में चन्द्र मङ्गल हों तो माता की मृत्यु, चन्द्र, सूर्य तथा मङ्गल होतो विचित्र मृत्यु एवं नवम में निर्बल पापग्रह होतो अतीव पीडा होती है ।

भाग्य गत सूर्य फलः—

भानौ भाग्येऽर्कादिगीर्वाणभक्तस्तातद्वेषी धार्म्मिकः स्वल्पभाग्यः ।
पत्नीपुत्रैः संयुतः स्वोच्चराशौ स्वक्षेत्रे वा तत्पितुर्दीर्घमायुः ॥ १०६ ॥
बह्वर्थाढ्यः स्यात्तपोध्यानशील आचार्य्याणां देवतानां च भक्तः ।
नीचोग्रारिक्षेत्र उग्राढ्यदृष्टे नो सद्युक्ते प्रोच्यते तातनाशः ॥ १०७ ॥

नवम में सूर्य होतो सुर्यादि देवता ओंका भक्त, पिता का शत्रु, धर्मात्मा, अल्पभाग्यवाला एवं स्त्री पुत्रों से युक्त होता है। यदि वह सूर्य स्वोच्च राशि वा स्वराशि में होतो पिताकी दीर्घायु और वह बहुत धन से युक्त, तपोध्यान शील एवं आचार्य तथा देवता ओंका भक्त होता है। यदि वह भाग्यगत सूर्य नीच, क्रूर तथा शत्रु राशि हो एवं पाप युक्त दृष्ट हो और शुभयुक्त न होतो पिताका मरण होता है ।

भाग्य गत चन्द्र फलः—

उरूपगे ग्लावि तटाकगोपुरनिर्माणपुण्यादिकरो बहुश्रुतः ।
स्यात्पुण्यवान्नन्दनभाग्यवान्बलान्विते च तस्मिन्निखिलेऽतिभाग्यवान् ।
तातस्य तस्य प्रभवेच्चिरायुस्तस्मिन्नसत्पुष्करचारियुक्ते ।
असौम्यखौकोभगते विनष्टतातम्बिकोऽसौ विधिना विहीनः ॥ १०९ ॥

नवम में चन्द्रमा हो तो तलाव, गोशाला निर्माण तथा पुण्यादि कार्य करने वाला, प्रसिद्ध, पुण्यवान् एवं पुत्रभाग्य वाला होता है। यदि वह चन्द्र बली हो तथा सम्पूर्ण बिम्ब हो तो अति भाग्यशाली और उसके पिताकी र्घायु होती है। एवं वह चन्द्र यदि पापयुक्त हो तथा पाप राशि में होतो मातापिता का नाश तथा भाग्य से रहित होता है ।

भाग्य गत भौम फलः—

रक्तद्युतौ देशिकभावयाते स्यात्पित्ररिष्टं रहितो नियत्या ।
तस्मिन्स्वगेहे निजतुङ्गराशौ भवी तदानीं गुरुदारगामी ॥ ११० ॥

नवम में भौम होतो पिता के लिए कष्ट तथा भाग्य से रहित होता है। यदि वह भौम स्व राशि वा स्वोच्च राशि में होतो गुरु स्त्री गामी होता है।

भाग्य गत बुध फलः—

प्रहर्षणे मङ्गलमन्दिरस्थे बहुप्रजासिद्धिरथो प्रतापी।
सङ्गीतवेत्ताऽस्य पितुश्चिरायुः शास्त्रश्रुतीनां स विशारदः स्यात्॥ १११॥

दाक्षिण्ययुक्तो बहुलाभभाक् च स्याद् धार्मिकस्तत्र खलाढ्यदृष्टे।
असद्गृहे तातजनस्य नाशो भवेदुत क्लेशकरोऽम्बकस्य॥ ११२॥

आचार्य्याणां भवेद् द्वेषी भावपे पीवरे यदा।
तस्य तातस्य दीर्घायुः स तपोध्यानशीलवान्॥ ११३॥

नवम में बुध होतो बहुत प्रजा लाभ, प्रतापशाली, सङ्गीत विद्या का ज्ञाता और उस के पिताकी दीर्घायु एवं वह वेदशास्त्र का ज्ञाता, दाक्षिण्य, बहुत लाभ युक्त और धर्मात्मा होता है यदि वह पापयुक्त दृष्ट हो तथा पाप-राशि में हो तो पिताका नाश वा पिता को कष्ट एवं वह गुरु जनों का शत्रु होता है। यदि भावेश बली हो तो उसके पिता की दीर्घायु और वह तपोध्यान शील वाला होता है।

भाग्य गत गुरु फलः—

सत्कर्म्मसिद्धिर्बहुलोकपालको धर्म्मप्रतिष्ठार्थतपोयुतः क्रतुम्।
कुर्यान्मरुद्रामसमासु साधुतारूढश्चिरायुः सवितुर्गुरौ गुरौ॥ ११४॥

नवम में गुरु हो तो सत्कर्म की सिद्धि, बहुत मनुष्यों का पालक; धर्म प्रतिष्ठा, धन तथा तपसे युक्त और ३५ वें यज्ञको करता है। एवं साधुता से युक्त और उसके पिताकी दीर्घायु होती है।

भाग्य गत शुक्र फलः—

तपस्व्यनुष्ठानपरोऽस्य पादे बहूत्तमाङ्कोऽङ्गजदारयुक्तः।
सम्भोगवृद्धिः सवृषोऽम्बकस्य दीर्घायुरच्छे कुशले सपापे॥ ११५॥

तस्मिन्प्रजातो जनयित्ररिष्टवान् सोग्रेऽसतो भे रिपुनिम्नराशिगे।
वित्तक्षयः स्याद् गुरुदारगस्ततो भव्येन युक्ते विधिवृद्धिभाक् जनः॥ ११६॥

महाराजस्य योगः सास्ताम्बुनाथेऽतिभाग्यवान्।
अश्वान्दोल्यादियानाढ्यो वसनाभरणप्रियः॥ ११७॥

नवम में शुक्र होतो तपस्वी, अनुष्ठान में तत्पर, पैरों में अत्युत्तम चिन्ह, पुत्र स्त्री युक्त, भोग वृद्धि युक्त, धर्मात्मा और उस के पिता की दीर्घायु होती है। यदि वह नवम गत शुक्र पापयुक्त होतो पिताके लिए कष्टकारक होता है। पापराशि शत्रु राशि वा नीच राशि में वह पापयुक्त शुक्र हो तो धनका नाश तथा गुरु स्त्री से सहवास होता है। नवम गत शुक्र यदि शुभ युक्त हो तो भाग्य वृद्धिवाला और राजयोग होता है। यदि वह शुक्र सप्तमेश

तथा सुखेश से युक्त हो तो अति भाग्यवान्, अश्व तथा आन्दोल्यादि वाहन युक्त, वस्त्र और भूषणों को प्रिय मानने वाला होता है ।

नवम गत शनि फलः—

भाग्ये भारविनन्दने प्रपतितो जातो मनुष्यस्तथा
जीर्णोद्धारकरः खगानलमिते वर्षे तटाकादिकृत् ।
तस्मिन् स्वोच्चगतेऽथ वा निजगृहे जन्तोश्चिरायुः पितु-
स्तातारिष्टकरो बलेन रहिते किं कल्मषेणान्विते ॥ ११८ ॥

नवम में शनि होतो पतित, जीर्णोद्धार कर्ता और ३९ वें वर्ष में तलाव आदि को करता है । यदि वह शनि स्वोच्च राशि वा स्वराशि में हो तो उस के पिताकी दीर्घायु होती है । यदि वह निर्बल हो वा पापयुक्त हो तो पिता के लिए अरिष्ट करने वाला होता है ।

नवम गत राहु फलः—

शिरोविहङ्गे शिवसद्मयाते शूद्राङ्गनाभोगयुतः शरीरी ।
श्रेयोविवर्ज्यस्तनुसम्भवेन विवर्जितो जन्मनि सेवकोऽयम् ॥ ११९ ॥

नवम में राहु हो तो शूद्रकी स्त्री से संभोग युक्त, धर्म तथा पुत्र रहित एवं सेवक होता है ।

नवम गत केतु फलः—

कबन्धखेटे कुशलालयस्थे चेच्छैशवे नाऽम्बककष्टकृत्स्यात् ।
हीनो नियत्या परधर्म्मरक्तो भाग्योदयो म्लेच्छजनाज्जनस्य ॥ १२० ॥

नवम में केतु हो तो बाल्यकाल में पिता के लिए कष्टदायक, भाग्य से रहित, परधर्म्म में तत्पर और म्लेच्छजन से भाग्योदय होता है ।

भाग्य भावगत रव्यदि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

पाथे तीर्थे तीर्थयात्रां प्रकुर्य्यान्नन्दाब्दे नाऽब्जे नखाब्दे तथाऽऽरे ।
तत्रेन्द्राब्दे मारुतासृग्भयं ज्ञे गोनेत्राब्दे मातृमृत्युर्गिरीशे ॥ १२१ ॥
तातस्यान्तः पञ्चचन्द्रप्रमेऽब्दे चेत्तत्राच्छे भार्गवीप्राप्तिरुक्ता ।
बाणैकाब्दे तत्र मार्त्तण्डजाते त्रिंशत्तुल्येऽब्देऽस्य भाग्योदयःस्यात् ॥ १२२ ॥

नवम में सूर्य हो तो ९ वें वर्ष तीर्थ यात्रा, चन्द्रमा होतो २० वें वर्ष तीर्थ यात्रा, मङ्गल होतो १४ वें वर्ष वात रक्तभय, बुध होतो २९ वें वर्ष माताकी मृत्यु गुरु होतो १५ वें वर्ष पिताकी मृत्यु, शुक्र होतो १५ वें वर्ष लक्ष्मी की प्राप्ति एवं शनि होतो ३० वें वर्ष भाग्योदय होता है ।

रवि दृष्ट नवम फलः—

श्वःश्रेयसे सति विरोचनवीक्ष्यमाणे
मानी गुणव्रजयुतो सदयो विलासी ।

कान्तासुखेन तपसा रहितोऽघयुक्तो
युक्तः सुखन निखिलेन स वृद्धगात्रे ॥ १२३ ॥
रम्यो धन्यः सुप्रतापी च दानी शक्तो लुब्धो मानवो मानदाता ।
सौख्योपेतः कारितक्रूरकर्मा धर्म्मे दक्षो यज्ञकर्त्ता धुरेण्यः ॥ १२४ ॥

नवम स्थान यदि सूर्य दृष्ट हो तो मानी, गुणगण युक्त, दयालु, विलास वाला, स्त्री के सुख से तथा तप से रहित, पाप युक्त, वृद्धावस्था में समस्त सुख:युक्त, मनोहर देह, भाग्यवान् अतिप्रतापी, दाता, शक्तिमान्, लोभी, मानदाता, सौख्य युक्त, क्रूरकर्मकर्त्ता, धर्म में प्रवीण, यज्ञ करने वाला तथा अग्रगण्य होता है।

चन्द्र दृष्ट नवम फलः—

राजक्षिते पथि दयार्थवियुक्त स्वबन्धु-
सौख्यान्वितोऽन्यविषयोपगराजपूज्यः ।
धर्म्मान्वितो महिमयुक सुयशाश्चिरायु-
मान्यो जन निखिलमस्य विचिन्तितं स्यात् ॥ १२५ ॥

नवम स्थान यदि चन्द्र दृष्ट हो तो दया तथा धन से रहित बान्धवों के सुख से युक्त, परदेश भ्रमण में राजा से सम्मान लाभ, धर्म तथा महत्त्व से युक्त, अतियशस्वी, दीर्घायु, मनुष्यों का मान्य और उस के समस्त चिन्तित कार्य सफल होते हैं।

भौम दृष्ट नवम फलः—

दृष्टे भतनयेन मङ्गलगृहे गीर्वाणविप्रार्चको
धन्यो द्रव्यसमन्वितः क्षितिभृतां मान्यः स्वधर्मान्वितः ।
सौख्योग्रत्वयुतस्तथापि युवति भ्रात्रा समं सर्वदा
पुसः सत्यविनाशनं विधिचयः पृथ्वीधुरीणो भवी ॥ १२६ ॥

नवम स्थान यदि भौम से दृष्ट हो तो देवता तथा ब्राह्मणों का पूजने वाला, श्लाघ्य, धन से युक्त, राजाओं का मान्य, स्वधर्मावलम्बी, सौख्य तथा उग्रत्व से युक्त, शाले के साथ सत्य का नाश, भाग्यवान् एवं पृथ्वी में अग्रगण्य होता है।

बुध दृष्ट नवम फलः—

योषासज्जनसङ्गमी यदि पथे पश्चार्चिषा लोकिते
धर्म्मज्ञानरतः कुमारसुखयुक शश्वत्सुखी जातकः ।
दक्षोऽतीव स सद्विवेकविनयाद्येष्वन्यदेशं गतः
पृथ्वीशार्चितपात्तथोदवसितस्वामी नियत्या युतः ॥ १२७ ॥

नवम स्थान यदि बुध से दृष्ट हो तो स्त्री तथा सज्जनों के सङ्ग वाला धर्म्म और ज्ञान में तत्पर, पुत्र सुख से युक्त, नित्य सुखी, उत्तम विवेक विनयादि में अति चतुर, विदेशाटन में राजा से सम्मानित, ग्रहों का स्वामी एवं भाग्य से युक्त होता है।

गुरु दृष्ट नवम फलः—

राजीवहस्तः सकलोऽब्जवक्त्रोल्लासे सुदक्षो ललनः सुरङ्गी।
लास्ये च हास्ये सुरनिम्नगायाः सङ्गी चिरायुः कुसुमेषुकान्तः ॥ १२८ ॥
विद्याविनोदी भुवने प्रदीप्तः कामी विभूतिस्थपतौ वरिष्ठः।
शास्त्रेषु दक्षो नृपवित्तयुक्तो जीवेक्षितेऽङ्के सुगुणी वृषाढ्यः ॥ १२९ ॥

नवम स्थान यदि गुरु दृष्ट हो तो कमल के सदृश हाथ वाला, कला युक्त, चन्द्रमा के सदृश मुख के उल्लास (आल्हाद) में अति चतुर, स्त्रीस्वभाव वाला, नाचने तथा हंसने में सुन्दर रङ्गवाला, गङ्गा का सेवन करने वाला, दीर्घायु काम से शोभित, विद्या का विनोदी लोक में कान्ति युक्त, कामी, ऐश्वर्य तथा बृहस्पतियज्ञ करने में अतिश्रेष्ठ, शास्त्रों में प्रवीण, राज धन से युक्त, गुणवान् एवं बहुत पुण्य वाला होता है।

शुक्र दृष्ट नवम फलः—

भाग्यस्य वृद्धिं कुरुते विदेशे भूपाद्भयं भूषणभूषितं च।
धर्म्मावहं कामरमासुरम्यं धुरन्धरं धीरवरं च मान्यम् ॥ १३० ॥
सूक्तिं च शूरं परदेशयातवृत्त्यन्वितं जन्मनि जन्मवन्तम्।
सद्धर्म्मपालं सुकलाधिनाथं मघाभवः पश्यति पुण्यभावम् ॥ १३१ ॥

नवम स्थान को यदि शुक्र देखता हो तो विदेश में भाग्य की वृद्धि, राजा से भय, आभरणों से अलङ्कृत धर्मात्मा, काम तथा लक्ष्मी से मनोहर शरीर, अग्रगण्य, धीरों में श्रेष्ठ, उत्तम वचन बोलने वाला, शूर वीर, विदेशाटन करने पर वृत्ति से युक्त, उत्तम धर्म्म को पालने वाला एवं उत्तम कला का ज्ञाता करता है।

शनि दृष्ट नवम फलः—

पातङ्गिः परिलोकयेत्पथिगृहं पुण्यक्रियायां सदा
नपुण्यः शुभतीर्थयानकरणे जातो विवेकी भवेत्।
नृणां सोऽतिशयः प्रभूतविधियुक् तद्धेतुना स्याद्यशो-
बन्धूनो विषयान्तरे सुखयुतो धर्म्मोज्झितो विक्रमी ॥ १३२ ॥

नवम स्थान को शनि देखता हो तो नित्य धर्म क्रिया में निपुण, उत्तम तीर्थों की यात्रा करने में विवेक वाला, मनुष्यों के मध्य में बड़े आशय वाला, उस के कारण बहुत भाग्य से युक्त, यश तथा बान्धवों से रहित, परदेश में सुखी, धर्म रहित, एवं पराक्रमी होता है।

राहु दृष्ट नवम फलः—

संवीक्ष्य भाग्यभवनं यदि भोगिनाथा
नव्याङ्गनासु कुरुते सुविलासयुक्तम्।

जातं जनं सुतसुतद्रविणादियुक्त-
मात्मीयसोदरजनादतिपीडनं च ॥ १३३ ॥

नवम स्थान को यदि राहु देखता है तो नवीन स्त्रियों में उत्तम विलास से युक्त, पौत्र तथा धनादि से युक्त और अपने अनुजों से पीडित करता है।

लग्न गत भाग्येश फलः—

देहे देशिकपे शुचिः सुकृतवान् युद्धे जयी सन्मति-
भूभृत्कर्मकरस्तथा स्मृतियुतः शूरः कदर्थ्यो बली ।
धीमान् विघ्नपपूजकः प्रमितभुक् ख्यातिश्रुतो मन्यते
गीर्वाणान् स्वगुरून् कठोरवचनो जातो जनो जायते ॥ १३४ ॥

लग्न में भाग्येश हो तो पवित्र हृदय, पुण्यात्मा, युद्ध में विजयी, सद्‌बुद्धि, राजकार्य करने वाला, चिन्ता युक्त, शूर वीर कृपण, बलवान्, बुद्धिमान्, गणेश पूजक, अल्पभोजन करने वाला, प्रसिद्ध देवता तथा गुरुजनों को मानने वाला एवं कठोर वचन वाला होता है।

कल्याणपे कल्पगतेऽथ वा पतिभावोपगे यस्य नरस्य सम्भवे ।
यत्कार्यमङ्गी यदि कर्तुमिच्छति सिद्धिः कदाचिद् गुणवांश्च कीर्तिमान् ॥ १३५ ॥

जिस के जन्म समय में लग्न वा सप्तम में नवमेश हो तो वह जिस कार्य को करने की इच्छा करे उस में कभी सिद्धि होती है। एवं वह मनुष्य गुणवान् तथा यशस्वी होता है।

धन गत भाग्येश फलः—

द्रव्येऽङ्कपे व्यययुतः सुकृती सुशील-
वात्सल्यवान् गतियुतो वृषलो व्रती च ।
ख्यातश्चतुष्पदभवव्यथयाऽर्दिताङ्गो
द्विड्हा धनी श्रुतिकफामयपीडितः स्यात् ॥ १३६ ॥

धन में नवमेश हो तो व्यय से युक्त, पुण्यात्मा, सुशील, वात्सल्य गुण वाला, गति से युक्त शूद्र, व्रत वाला, विख्यात, चतुष्पदजन्य पीडा से पीडित शरीर वाला, शत्रु हन्ता, धनवान् एवं कर्ण रोग तथा कफ रोग से पीडित होता है।

शस्तेश्वरे शौर्य्यगृहं गतेऽथ वा सरस्वतीस्थे जनवल्लभस्तथा ।
विधेर्विधाने निरतः सदा नरः कामी धनी सद्गुणवांश्च कोविदः ॥ १३७ ॥

तृतीय वा द्वितीय में नवमेश हो तो लोगों का प्रिय, विधि के विधान में तत्पर, कामी, धनवान्, गुणवान् एवं पण्डित होता है।

सहज गत नवमेश फलः—

सोत्थे शुपे सोदरवर्गसौख्यभाग् बन्ध्वङ्गनारक्षणकृत्सुरूपवान् ।
जनप्रियो विश्रुतकर्म्मकृद्बुधो जनस्य बन्धोः प्रतिपालकोऽलसः ॥ १३८ ॥

तृतीय में नवमेश हो तो भाइयों के सुख वाला, बान्धवों की स्त्रियों की रक्षा करने वाला, सुन्दर रूपवान्, लोगों का प्रिय, प्रसिद्ध कर्म करने वाला, मनुष्य तथा बान्धवों का प्रतिपालक और आलसी होता है ।

सुख गत नवमेश फलः—

पातालस्थः पथिगृहपतिः पुण्यवन्तं धनेशं
कुर्य्याज्जातं पितृबुधसुहृत्पूजकं देवभक्तम् ।
पृथ्वीपालं स्वजनकगमे विश्रुतं वाग्मिनं वा
एधावन्तं बहुजनपदप्राटनं प्राणिनं तम् ॥ १३९ ॥

सुख में भाग्येश हो तो पुण्यात्मा, धन का स्वामी; पिता, पण्डित तथा मित्र पूजक, देवताओं का भक्त, भूमि का स्वामी, पिता के जाने पर विख्यात, शास्त्र सम्मत वचन बोलने वाला, बुद्धि वाला एवं देश विदेश में भ्रमण करने वाला होता है ।

मानाथभे मातृनिकेतनेऽथ वा मार्गाधिनाथे सुकृती च साहसी ।
क्रोधोज्झितः कीर्त्तियुतश्चमूपतिर्वाग्मी प्रजातः सचिवः कलेवरी ॥ १४० ॥

दशम वा चतुर्थ में नवमेश हो तो पुण्यात्मा, साहसी, क्रोध रहित, यशस्वी, सेनापति, शास्त्र सम्मत बोलने वाला एवं मंत्री होता है ।

सुत गत नवमेश फलः—

तीर्थस्थानपतौ तनूजसदने प्रज्ञायुतः संयमी
देवेलासुरपूजकः सुनयनः स्यात्सुन्दराङ्गस्तथा ।
पुण्यात्मा गुरुभक्तियुङ् मधुरवाग् सत्त्वान्वितः कोविदो
जातोऽसौ प्रमिताशनस्तनुभवैर्युक्तस्तदा जायते ॥ १४१ ॥

पञ्चम में नवमेश हो तो बुद्धि से युक्त, संयम वाला, देवता तथा ब्राह्मण पूजक, सुन्दर नेत्र शरीर, पुण्यात्मा गुरु भक्ति वाला, मीठे वचन बोलने वाला, शक्ति वाला, पण्डित, पुत्रों से युक्त एवं यथोचित भोजन करने वाला होता है ।

सन्तानगे वाऽऽगमगे विधीश्वरे लोकप्रियो मानयुतः सुपुण्यवान् ।
श्रीमान् सभाग्यः सुभगो गुणी गुरुभक्तौ रतः सद्धिषणासमन्वितः ॥ १४२ ॥

पञ्चम वा लाभ में नवमेश हो तो लोगों का प्रिय, मानी, पुण्यात्मा, लक्ष्मीवाला, सुन्दर भाग्य शाली, ऐश्वर्यवान्, गुणवान्, गुरु भक्ति में तत्पर एवं उत्तम बुद्धि युक्त होता है ।

रिपुगत नवमेश फलः—

द्वेष्ये ऽङ्कप ऽरिनतिकज्जननिन्दकश्च
लोकाग्रणीर्विनयवान्विकलो व्ययी च ।
सारिश्च दुष्कृतियुतः प्रणयी खलश्च
धर्म्मोज्झितो विकतदर्शनभाक छुचिः स्यात् ॥ १४३ ॥

षष्ठ में नवमेश हो तो शत्रुजनों की अवानति करने वाला, लेगों का निन्दक, लोगों में अग्रगण्य, विनय वाला, विकल शरीर, व्यय करने वाला, शत्रु तथा दुष्कर्म से युक्त, प्रेम करने वाला, अधम, विधर्मी, विकृत मुख वाला तथा पवित्र होता है।

सङ्करे ऽरौ व्यये शेशे विधिना रहितो भवी ।
मातुलस्य निजज्येष्ठभ्रातुः सौख्यं न जायत ॥ १४४ ॥

अष्टम षष्ठ वा व्यय में नवमेश हो तो भाग्य रहित, मामा तथा ज्येष्ठ भ्राता का सुख नहीं होता है।

सप्तम गत नवमेश फलः—

सीमन्तिनीप्रणतकेलिविलासभाक् स्याद्
रोगान्वितो ऽस्य दयिता बहुशालिनी च ।
श्रीरूपरागधनसत्ययुता सुरम्या
पुण्यान्विता सुवचना चतुरा शुपे ऽस्ते ॥ १४५ ॥

सप्तम में नवमेश हो तो स्त्रीजनों की विनम्रक्रीडाविलास वाला, और रोग युक्त होता है। एवं उस की, स्त्री बहुत शीलवती; शोभा, रूप, राग, धन तथा सत्य से युक्त, मनोहर शरीर वाली, धर्मिष्ठा, सुन्दर वचन वाली तथा चतुर होती है।

अष्टम गत नवमेश फलः—

भाग्येश्यायुषि गद्यपद्यवचनो वड्रोद्यमैः पीडितो
वातश्लेष्मसुखामयैर्मनुजनिर्दुष्टो विपुण्यो बुधः ।
न्याय्यात्स्वादिह सद्यशोधवलितो जन्तोर्विघाती गृह-
बन्धूनो मलिने शठो विटसखो धूर्त्तो नपुंसः खलः ॥ १४६ ॥

अष्टम में नवमेश होतो गद्यपद्य वचन वाला, बडे उद्योग के करने से वात श्लेष्मादि रोग से पीडित, दुष्ट स्वभाव धर्म रहित, पण्डित, न्यायोपार्जित धनसे उत्तम यशवाला, जीवों को मारनेवाला एवं गृह तथा बन्धुजनों से रहित होता है। यदि नवमेश पापग्रह होतो शरारत वाला, व्यभिचारियों का मित्र, धूर्त, नपुंसक तथा नीच होता है।

नवम गत नवमेश फलः—

आचार्य्यभे शुभभवे ऽतिबलश्च दाता
योषागुरुस्वजनदेवगणेषु भक्तः ।

प्रीतिः स्वबान्धवजनैररुचेर्विवाद-
कारी सदा द्रविणधान्यसमेतगेहः ॥ १४७ ॥

प्रभूतसोदर्य्यसुखैस्तपोगुणसौन्दर्य्यशोभावृषकर्म्मभिर्युतः ।
बालोक्तधीर्विक्रमवांस्तुतोष नो स्वबान्धवैः साधनभाक् च सन्मतिः ॥ १४८ ॥

नवम में नवमेश हो तो अतिबलवान, दानी; स्त्री, गुरुजन, स्वजन तथा देवगणों में भक्ति वाला, अपने बंधु-जनों से प्रीति, अरुचि से विवाद करने वाला, धन धान्य युक्त गृह वाला, बहुत भाइयों के सुख से युक्त, तप गुण, सौंदर्य, शोभा, धर्म तथा कर्म से युक्त, बाल बुद्धि वाला अति पराक्रमी, बन्धुजनों से सन्तुष्ट न हो एवं साधन-वाला तथा सद्बुद्धि वाला होता है।

दशम गत नवमेश फलः—

शेशे ऽन्वये सुकृतकर्म्मकरो नृपस्व-
भुग् भूपकर्म्मकरणोद्यत एष शूरः ।
सत्कीर्त्तिमान् सुविदितः पुरुषः सुशास्त्र-
विन्मातृवर्गविजयी पितृमातृभक्तः ॥ १४९ ॥

दशम में नवमेश होतो पुण्यकर्म करने वाला राजधन का उपभोग करने वाला, राजकार्य करने में उद्यत, शूरवीर उत्तम कीर्ति वाला, प्रसिद्ध, शास्त्र वेत्ता, मातृ वर्ग में विजय पाने वाला एवं माता पिताका भक्त होता है।

लाभगत नवमेश फलः—

स्नेही स्वपो नृपतिलब्धधनश्चिरायुः
ख्यातो वृषे सुकृतवान् सुसुतो यशस्वी ।
भूरीश्वरो वृषपरः शुभकर्म्मकृच्च
स्याद् व्यापको गुरुप आगमगे सुदाता ॥ १५० ॥

लाभ में नवमेश होतो स्नेह वाला, धनका स्वामी, राजा से लब्धधन वाला, दीर्घायु पुण्य में प्रसिद्ध, पुण्यात्मा उत्तम पुत्रवाला यशस्वी बहुतों का स्वामी, धर्म में तत्पर शुभकर्म करने वाला, व्यापक (बहुतस्थान में रहनेवाला) एवं अतिदानी होता है।

व्ययगत नवमेश फलः—

सत्कीर्त्तिरूपधनवाहनजीवधीयुक्
पादे शपे जितरिपुः समरे विदेशे ।
मानी महोद्यमयुतो बहुलव्ययश्चो-
ग्रे वञ्चकः कुमतिरुत्तमके सविद्यः ॥ १५१ ॥

व्यय में नवमेश हो तो उत्तम कीर्ति, रूप, धन, वाहन, जीव तथा बुद्धि से युक्त, संग्राम में शत्रु को जीतने वाला, विदेश में मान पाने वाला, बड़े उद्योग वाला तथा बहुत व्यय वाला होता है। नवमेश पाप हो तो वञ्चक (ठगने वाला) तथा दुष्ट बुद्धि वाला होता है। यदि नवमेश शुभ ग्रह हो तो विद्या से युक्त होता है।

नवम गत मेष फलः—

आचार्य्यभावोपगतेऽजराशौ तुर्य्यांघ्रिजातं सुकृतं विधत्ते।
दानेन तेषां शुभपालनेन कृपाविवेकेन च पोषणेन॥ १५२॥

नवम में मेष हो तो पशुओं के दान, उत्तम पालन, कृपा, विवेक और उन के पोषण से उत्पन्न पुण्य को करता है।

नवम गत वृष फलः—

वृषोपयाते वृषभाभिधानके करोति पुण्यं जनने धनोद्भवम्।
आच्छादनैर्भूषणभोजनैर्बहुगोदानतो वाथ विचित्रदानतः॥ १५३॥

नवम में वृष हो तो धनजन्य, वस्त्र, भूषण, भोजन, बहुत गोदान तथा विचित्र दान से उत्पन्न पुण्य को करता है।

नवम गत मिथुन फलः—

वीणाधरे भव्यगृहोपगे वृषं कुर्य्याच्चदाभ्यागतजं वृषाकृतिम्।
द्विजाशनात्सौम्यकृतं च दुर्गतकृपाश्रयस्वान्तत उद्भवो जनः॥ १५४॥

नवम में मिथुन हो तो अभ्यागतों (अतिथियों) से उत्पन्न धर्म, पुण्यरूप धर्म, ब्राह्मणभोजन से सौम्य कर्म रूप धर्म एवं दीनजनों की कृपाश्रय हृदय से उत्पन्न धर्म को करता है।

नवम गत कर्क फलः—

जम्बालनीडे कुशलालयस्थे करोति धर्म्मं व्रतसेवनेन।
तथोपवासैर्विषयैर्विचित्रैस्तीर्थाश्रयेण व्रतपूर्वकैर्वा॥ १५५॥

नवम में कर्क हो तो व्रतसेवन, उपवास, विचित्र विषय, तीर्थाश्रय तथा व्रतादि से धर्म को करता है।

नवम गत सिंह फलः—

पुण्याश्रिते पञ्चनखाभिधाने जातः परेषां सुकृतं विधत्ते।
क्रियाभिरात्मीयवृषोज्झितोऽपि तीर्थस्वरूपं विनयेन हीनम्॥ १५६॥

जिस के जन्म समय में नवम में सिंह हो वह मनुष्य पराये धर्म को करता है। एवं स्वधर्म च्युत होनेपर भी तीर्थ स्वरूप तथा विनय रहित करता है।

नवम गत कन्या फलः—

कुमारिकाभे कुशलोपगे वधूधर्म्मस्य सेवां कुरुते मनूद्भवः ।
आश्रित्य पाषण्डमनेकजन्मतोऽन्यधर्म्मरक्तं विभुभक्तिवर्जितम् ॥ १५७ ॥

नवम में कन्या हों तो स्त्रीजनों के धर्म की सेवा, अनेक जन्म से पाषण्ड का आश्रय करके अन्य धर्म में लीन एवं ईश्वर की भक्ति से विमुख करता है।

नवम गत तुला फलः—

तुलाधरे भावुकभावयाते धर्म्मं प्रकुर्य्याद्विदितं मनुष्यः ।
सर्वसहादेवसुराद्भुतानां तोषेण लोकातिमुदा सदैव ॥ १५८ ॥

नवम में तुला हो तो ब्राह्मण, देवता तथा अद्भुतों के सन्तुष्ट करने से एवं लोगों की अति प्रीति से प्रसिद्ध धर्म को करता है।

नवम गत वृश्चिक फलः—

सरीसृपे पद्धतिमन्दिरस्थे करोति पाषण्डवृषं जनुष्मान् ।
भक्त्युज्झितो दम्भयुतश्च धर्म्मविनिर्मुखः क्लेशकरः सतां च ॥ १५९ ॥

जिस के जन्म समय में नवम में वृश्चिक हो तो वह पाषण्ड धर्म को करता है। एवं भक्ति रहित, दम्भ से युक्त, धर्म से विमुख और सज्जनों के लिए क्लेश करने वाला होता है।

नवम गत धनु फलः—

धर्माश्रिते धन्विनि सम्भवस्थ काले विधत्ते सुकृतं नृलोके ।
ख्यातं निजेच्छासहितं च शास्त्रसुसम्मतं वाडवभूरितोषम् ॥ १६९ ॥

जिस के जन्म समय में नवम में धनु हो तो वह पुरुष मनुष्य लोक में विख्यात, अपनी इच्छा से युक्त शास्त्र से अतिसम्मत एवं ब्राह्मणों को बहुत सन्तुष्ट करने वाले धर्म को करता है।

नवम गत मकर फलः—

मृगानने मङ्गलमन्दिरस्थे शरासनोत्थं सुकृतं प्रतापत् ।
कुर्य्यात्समाश्रित्य स कौलपक्षं विडम्बनाभिर्विरतः परस्तात् ॥ १६१ ॥

नवम में मकर हो तो धनुष से उत्पन्न धर्म तथा प्रताप को करता है। एवं युवावस्था में कौल पक्ष का आश्रय लेकर पीछे विडम्बनाओं से पृथक हो जाता है।

नवम गत कुम्भ फलः—

कुम्भाभिधानेऽध्वविराजमाने पुण्यं विदध्याद्धुतभुग्भवं सः ।
वाप्युत्थमारामभवं दिवौकःसमूहजं पादपसम्भवं च ॥ १६२ ॥

नवम में कुम्भ हो तो अग्नि से उत्पन्न धर्म एवं बावड़ी, उद्यान, देवगणोत्पन्न तथा वृक्षजन्य धर्म को करता है।

नवम गत मीन फलः—

ज्ञानाश्रिते नीरनिकेतराशौ मनुष्यलोके विदधीत भूरि।
पुण्यं प्रपारामतडागसत्रैर्मखैर्विचित्रैरुत तीर्थजातम् ॥ १६३ ॥

नवम में मीन हो तो मनुष्य लोक में प्रपा (प्याऊ), आराम (बगीचा), तडाग (तलाव), सत्र (यज्ञ विशेष), विचित्र यज्ञों से तथा तीर्थजन्य धर्म को करता है।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते भाग्यभावचिन्तनप्रकरणमेकत्रिंशमवसितम्।

अथ

कर्म्मभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते ।

दशम भावमें विचारणीय पदार्थ परिज्ञानः—

कर्म्माज्ञाकृषितातजीवनयशोव्यापारसिंहासन-
राज्यप्राप्तिमहत्पदाप्तिशयनालङ्कारमानान्वयाः ।
प्रव्रज्याऽऽगमखे प्रवासकमृणं विज्ञानविद्यांऽशुके
वृष्ट्यवृष्टिनरेशमानभृतका जान्वम्बराच्चिन्तयेत् ॥ १ ॥

कर्म (शुभाशुभरुप), आज्ञा, कृषि (खेती) पिता, आजीविका, यश, व्यापार, सिंहासनप्राप्ति, राज्य प्राप्ति, महत्पदाप्ति, निद्रा, भूषण, मान, वंश, प्रव्रज्या, (संन्यास), आगम (वेदान्त) आकाश, प्रवास, ऋण, विज्ञान, विद्या, वस्त्र, अवर्षण, वर्षण, राजसम्मान, दास एवं जानु इन, सब वस्तुओं का दशम, भाव में विचार करे ।

दशम में विशेष विचारः—

विज्ञानविद्यागमकर्म्मजीवनव्यापारसंन्यासयशांसि भूषणम् ॥ २ ॥
आज्ञां च मानं शयनांशुके कृषिं विचिन्तयेज्ज्ञेज्यशनीनखेशतः ॥ २ ॥

विज्ञान (शिल्प), विद्या, आगम (वेदान्त), कर्म, जीवन, व्यापार, संन्यास, यश, भूषण, आज्ञा, मान, शयन, वस्त्र, तथा कृषि इन सब उक्त वस्तुओं को बुध, गुरु, शनि, रवि तथा दशमेश से भी विचारे ।

दशम तथा दशमेश के वशसे पर्याप्त शुभ फल प्राप्ति योगः—

शुभः खपः सदूर्ज्जवान् सदन्वितः किमम्बरे ।
शुभास्त इष्टलोकिता अलं शुभं तनूभृताम् ॥ ३ ॥

दशम स्थान का स्वामी शुभ ग्रह हो और वह उत्तम बल वाला हो एवं शुभ ग्रहों से युक्त हो। अथवा दशम में शुभ ग्रह हों और वे शुभ दृष्ट हों तो प्राणियों के लिए पर्य्याप्त शुभ फल होता है ।

स्वल्प कर्म्मफलप्रद योगः—

सितेन्दुसूनुसंयुते स्वराशिगे रसात्मजे ।
तदीक्षिते नभःस्थले स्वकर्म्मण फलाल्पता ॥ ४ ॥

स्वराशि (१।८) में मङ्गल हो और वह शुक्र बुध से युक्त हो एवं दशमस्थान उस मङ्गल से दृष्ट हो तो अपने कर्म फल की स्वल्पता कहनी चाहिए ।

कर्म नाश योगः—

प्रत्यर्थिरिःफरन्ध्रगा भज्ञार्चिताः खलेक्षिताः ।
किं तद्गृहांशनायकाः शान्ते स्वकर्म्मणां क्षयः ॥ ५ ॥

षष्ठ व्यय वा अष्टम में शुक्र, बुध तथा गुरु हों और वे पाप दृष्ट हों तो (१) अथवा शुक्र, बुध तथा गुरु के नवांश स्वामी अष्टम में हो तो उक्त योगों में निज कर्मों का नाश होता है ।

कर्म्म वैकल्य योगः——

सोग्रेऽबले खेश उताभ्रेप त्रिके यद्वा बहुत्वेऽघदृशां पदे किमु ।
दुःस्थे स्वगेहोच्चपदं विनाऽधरे मानेशि वैकल्यमुशन्ति कर्म्मणाम् ॥ ६ ॥

निर्बल दशमेश यदि पाप युक्त हो तो (१) त्रिक में दशमेश हो तो (२) दशम में पाप दृष्टि की अधिकता हो तो (३) त्रिक में स्वराशि वा स्वोच्च राशि को छोडकर अन्य राशि गत दशमेश हो अथवा नीच राशि में दशमेश हो तो उक्त योगों में कर्मों की विकलता अर्थात् व्यापार प्रभृति कामों में व्यग्रता (असफलता) होती है ।

विकर्मप्रद योगः——

यदोर्ज्जवर्ज्जिता जनौ बुधार्किपूज्यपिङ्गलाः ।
अरात्ययाययाम्यगा किर्म्मदा उदाहृताः ॥ ७ ॥

षष्ठ व्यय वा अष्टम में निर्बल बुध, शनि, गुरु तथा सूर्य हों तो विकर्म फल प्रद होते हैं अर्थात् दुष्कर्म करने वाला होता है ।

कठिन कर्म कर्त्ता योगः——

यदोद्भवेऽमरार्चितशशाङ्कसूनुभार्गवाः ।
लये स्थिता उतागभे कठोरकर्म्मकारकः ॥ ८ ॥

अष्टम में वा स्थिर राशि में गुरु, बुध तथा शुक्र हों तो उक्त योग में कठिन कर्मों का करने वाला होता है ।

नीच कर्म योगः——

शनेर्दृगाणे तनुगे चतुष्टयस्थितेन्दुदृष्टे यदि नीचकर्म्मकृत् ।
कुजेऽनुजाङ्केऽस्त इने तनौ शनौ नीचाध्वगामी द्विजवंशजोऽपि सः ॥ ९ ॥

लग्न में शनि का द्रेष्काण हो और वह केन्द्रगत चन्द्रमा से दृष्ट हो तो नीच कर्म करने वाला होता है । तृतीय वा नवम में मङ्गल हो, सप्तम में शनि हो तो ब्राह्मणवंश में उत्पन्न पुरुष भी नीचमार्ग गामी होता है ।

कामस्थयोर्हेलिकलेशयोः शनिसंदृष्टयोर्वाडवजोऽपि नैच्यकृत् ।
वाचामधीशे विधुवैरिणान्विते निरीक्षिते दुर्बलखौकसा तथा ॥ १० ॥

सप्तम में सूर्य चन्द्रमा हों और वे शनि से दृष्ट होतो ब्राह्मण कुल में उत्पन्न पुरुष भी नीचकर्म करने वाला होता है। यदि बृहस्पति राहु से युक्त हो और दुर्बल ग्रह से दृष्ट होतो भी नीचकर्म करने वाला होता है।

चण्डालता योगः—

सौवस्तिको यज्ञभुजां सकाव्यः संवीक्ष्यतेऽघाभ्रसदा विधत्ते ।
चण्डालतां देहभृतां गिरीशो नीचांशगो नीचभगस्तथैव ॥ ११ ॥

'गुरु' यदि शुक्र से युक्त हो और पापदृष्ट होतो चण्डालत्व को करता है। एवं नीचांश तथा नीचराशि में गुरु होतो भी चण्डालत्व को करता है।

म्लेच्छत्व योगः—

भास्वद्यमावेकगृहे दृगाणे त्रिंशांशके खेचरभागके वा ।
म्लेच्छत्वमाप्नोतु भवो जनुष्मान्नीचाबलासङ्गमतस्तदानीम् ॥ १२ ॥

एक राशि एक द्रेष्काण एकत्रिंशांशक वा एक नवांश में सूर्य तथा शनि होंतो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष नीच स्त्री के प्रसङ्ग से म्लेच्छत्व को प्राप्त होता है।

यज्ञ कर्त्ता योगः—

सञ्चिन्तयेत्क्रतुफलं गुरुचान्द्रिखेश-
स्ते संयुता रसबलैर्यदि यज्ञकर्त्ता ।
ते सौम्यदृष्टसहिताः सहसा समेता-
स्तद्वद्बुधे दिवि तदीयविभौ विपापे ॥ १३ ॥

शस्ताश्रिते सशुभभे शुभदृष्टियुक्ते
किं ज्ञे विकेतनतमे निजतुङ्गमाप्ते ।
किं दानवेश्मनि तथाऽम्बरपेऽङ्गगे वा
राज्यालयेशि निजतुङ्गगते सराज्ये ॥ १४ ॥

किं स्वोच्चगे रतिपतौ विदि यज्ञकर्त्ता
तुङ्गाचिते समलिनेऽन्वयभावनाथे ।
नीचांशगे त्रिकगृहेऽशुभषष्ठिभागे
विघ्नोऽध्वरे निगदितो मनुजस्य तस्य ॥ १५ ॥

बुध, गुरु तथा दशमेश इन तीनों से यज्ञफल का विचार करे। यदि वे तीनों षड्बल से युक्त होतो मनुष्य यज्ञ करने वाला होता है। यदि उक्त तीनों शुभ युक्त दृष्ट हो तथा बलयुक्त हों तो भी यज्ञ करने वाला होता है।

दशम में बुध हो और वह नवम में शुभ राशि गत दशमेश हो और वह पाप युक्त न हो एवं शुभ दृष्ट हो तो (१) स्वोच्च राशि में बुध हो और वह केतु वा राहु से युक्त न हो तो (२) नवम में स्वोच्च राशि गत बुध हो तो (३) नवम में दशमेश हो तो (४) स्वोच्च राशि में बुध युक्त दशमेश हो तो (५) सप्तम में स्वोच्च राशि गत बुध हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष यज्ञ करने वाला होता है। स्वोच्च में पाप युक्त दशमेश हो अथवा नीचांश में त्रिक में वा क्रूरषष्ट्यंश में दशमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य के यज्ञ में विघ्न होता है।

ज्ञाचाभ्रपात्खे दनुजेऽध्वरस्य ध्वंसो भवेद्दुर्बलशालिनश्चेत्।
दुष्टेतरा दुष्टगृहोपगा वा सत्कर्म्मविध्वंसकरा भवेयुः ॥ १६ ॥

बुध तथा दशमेश से यदि दशम स्थान में राहु होतो यज्ञका नाश होता है। यदि शुभ ग्रह दुर्बल हों अथवा दुष्ट भावों (६।८।१२) में होंतो सत्कर्म को नाश करने वाले होते हैं।

कर्म्माधीशे केन्द्रकल्याणधीस्थे ज्योतिष्टोमाद्यस्य यज्ञस्य कर्त्ता।
भाग्यागारे मानवे स्वीयराशौ माहेशाख्ययैव यज्ञस्य कर्त्ता ॥ १७ ॥

केन्द्र नवम वा पञ्चम में दशमेश होतो ज्योतिष्टोमादि यज्ञ को करने वाला होता है। नवम में स्वराशि गत शनि होतो महेशयज्ञ को करने वाला होता है।

हेम्न्र खगे सवनकृद्दिवि साहिकेतौ
ज्ञे कर्म्महाऽऽस्पदगृहेशि निजोच्चगेऽपि।
दुःस्थे तथा व्ययविनाशगदे पदेशे
कर्मविरोधकृदथो सुकृतैः समेते ॥ १८ ॥

तारापथे पथि तदीयविभूदयेश--
जीवा अनूनकबलाः समये जनेश्चेत्।
आचारवान्स गुणकर्म्मविधानपुण्य--
श्रद्धान्वितो द्विजकुले धुरि कीर्त्तनीयः ॥ १९ ॥

दशम में बुध होतो यज्ञ करने वाला होता है। दशम गत बुध यदि राहु वा केतु से युक्त होतो कर्म नाश करने वाला होता है। त्रिक में दशमेश हो और वह स्वोच्चगत भी हो तो कर्म नाश करने वाला होता है। व्यय अष्टम वा षष्ठ में दशमेश होतो सत्कर्मों का अवरोध करता है। दशम तथा नवम ये दोनों स्थान शुभ युक्त हों और इन दोनों स्थानों के स्वामी, लग्नेश तथा गुरु ये चारों परिपूर्ण बली होतो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य आचार वाला, गुण कर्म विधान पुण्य तथा श्रद्धा से युक्त एवं ब्राह्मण कुल में अग्रगण्य होता है।

नादाङ्गपावेकभगौ तयोश्चेदेकाधिपत्यं किमु सद्धनेन।
निजार्ज्जितेनोत्सवयज्ञकर्म्म कुर्यात्सकोणेऽम्बरपेऽग्रिजानाम् ॥ २० ॥

धनेन सेज्ये नरपैः सपाते क्षुद्रैः सकेतौ तु तथार्कमुख्यैः।
समन्विते कर्म्मगृहेशि चेत्तत्तत्कारकार्थेन मखं विधत्ते ॥ २१ ॥

एक राशि में लग्नेश तथा धनेश हों अथवा लग्न तथा धन का एकाधिपत्य हो तो अपने उपार्जन किए हुए उत्तम धन से उत्सव तथा यज्ञ को करता है। दशमेश यदि शनि से युक्त हो तो शूद्रों के धन से, गुरु से युक्त हो तो राजाओं के धन से, राहु वा केतु से युक्त हो तो क्षुद्र (नीच) जनों के धन से यज्ञादि कर्म को करता है। एवं दशमेश सूर्यादि ग्रहों से युक्त हो तो उस उस कारक ग्रह के द्रव्य से यज्ञ को करता है।

प्रभूतपुण्यैः कलिते क्रतोर्गृहे चेद्वाजपेयादिकसिद्धिरङ्गिनः।
भविद्भपौ दुर्बलशालिनौ क्रतोः फलं न विन्देत जनोऽसुरोपमः॥ २२॥

दशम स्थान यदि बहुत शुभ ग्रहों से युक्त हो तो प्राणी को वाजपेयादि यज्ञ की सिद्धि होती है। शुक्र तथ बुध की अधिष्ठित राशियों के स्वामी यदि दुर्बल हों तो उक्त योग में उत्पन्न जन दैत्यतुल्य हो और यज्ञ के फल को नहीं पाता है।

यज्वा पदे पातपताकवर्जिते कर्माधिनाथे सकलानिधौ विधौ।
ततो विधोः खे सुखगे सहायुते स्वोच्चादिवर्गोपगते युतेक्षिते॥ २३॥
पूज्येन यज्वा यशसा युतः क्षयं गता सितज्ञार्य्यगभाधिपाः कताम्।
कर्म्मश्रियं पञ्चजनो न विन्दते जातस्तदा सत्फलकर्मवानपि॥ २४॥

दशम में राहु वा केतु न हो और नवम में चन्द्र युक्त दशमेश हो तो यज्वा (यज्ञ करनेवाला) होता है। चन्द्रमा से दशम में बली स्वोच्चादि वर्गगत शुभ ग्रह हो और वह गुरु से युक्त वा दृष्ट हो तो उक्त योग में यशस्वी तथा यज्वा होता है। शुक्र, बुध तथा गुरु इन तीनों की आक्रान्त राशियों के स्वामी यदि अष्टम स्थान में हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष यदि सत्फलप्रद कर्म करने वाला हो तो भी किई हुई कर्मश्री को नहीं पाता है।

विज्ञार्यखेशैः सबलैः सवादिकसत्कर्म्मभाक् तैः शुभयुक्तलोकितैः।
ना वाजपेयादिकभाक् च गोपुरारामाख्यजीर्णोद्धरणादिपुण्यभाक्॥ २५॥

बुध, गुरु, तथा दशमेश ये तीनों बली हों तो यज्ञाद सत्कर्म करने वाला होता है। यदि वे तीनों शुभ युक्त दृष्ट हों तो वाजपेयादि यज्ञ करने वाला एवं गोपुर (गोशाला) आराम (बगीचा) तथा जीर्णोद्धारादि पुण्य कार्य करने वाला होता है।

सद्भिस्त्रिकोणापककण्टकैर्युतेक्षितैस्तदीशैर्यदि शौर्य्यसंयुतैः।
विद्यासमेतोऽखिलतत्त्ववित्क्रतोः कर्त्ता प्रसिद्धः सकलैर्गुणैर्जनः॥ २६॥

त्रिकोण (५।९) स्थान तथा चतुर्थ रहित केन्द्र (लग्न, सप्तम तथा दशम) स्थान यदि शुभ युक्त दृष्ट हों और उक्त स्थानों के स्वामी यदि बली हों तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य विद्यावान्, समस्त तत्वों का ज्ञाता, यज्ञ करने वाला एवं समस्त गुणों से विख्यात होता है।

धीस्वाम्बुखस्थैर्द्युचरैर्गुरूदयमध्याधिपैः षड्बलशालिभिर्यदा।
षट्छास्त्रवेत्ताऽखिलतत्त्वविद्यदा ज्ञानस्य दीक्षां जनितः समाप्नुयात्॥ २७॥

पञ्चम, द्वितीय, चतुर्थ तथा दशम में नवमेश, लग्नेश तथा दशमेश हों और वे षड्बलों से युक्त हों तो षट् शास्त्र तथा समस्त वेदों का ज्ञाता एवं ज्ञान की दीक्षा को प्राप्त होता है।

व्यापारदैवोदयभावपानां दशापहारे बुधजीवयोश्च ।
आचारसत्कर्म्मसमस्तयागफलश्रुतिज्ञानमुखान्युपैति ॥ २८ ॥

दशमेश, नवमेश तथा लग्नेश की दशा वा अन्तर्दशा में एवं बुध तथा गुरु की दशा वा अन्तर्दशा में आचार, सत्कर्म, समस्त यज्ञफल वेद तथा ज्ञान प्रभृति को प्राप्त होता है।

जीर्णोद्धारादि कर्ता योगः—

खे ज्ञे सखेशे किमु खेऽम्बुपेऽथ वा सोमे सहोत्थे सलिलर्क्षसंश्रिते ।
करोतु जीर्णोद्धरणादि गोपुरे सवाक्पतौ वा सकुजे कलेशजे ॥ २९ ॥

प्रकारकं गोपुरमण्डपादिकं कुर्याच्छुभेशे शुभलोकिते यदि ।
मृदंशके वाऽभ्रगृहेशि गोपुरेऽन्धकृद् घटांशे स तडागकारकः ॥ ३० ॥

दशम में दशमेश युक्त बुध हो तो (१) दशम में सुखेश हो तो (२) सहज में जलराशिगत चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में जीर्णोद्धारादि करने वाला होता है। गोपुरांश में गुरु वा मङ्गल से युक्त बुध हो तो प्राकार (यष्टिका कण्टकादि रचित वेष्टन) का बनाने वाला गोपुर वा मण्डप का बनाने वाला होता है। मृदुषष्ठ्यंश में शुभ युक्त नवमेश हो अथवा गोपुरांश में दशमेश हो तो कूप (कूआ) बनाने वाला होता है। कारकांश में कुम्भ लग्न हो तो तडाग (तलाव) बनाने वाला होता है।

गङ्गास्नान योगः—

व्योम्नि भानुवति किं तपोवति किं तमोवति ततो यशोगृहे ।
पूर्णचन्द्रवति वाम्बरेऽखिलग्लौवतीन्द्रमहिते ततोऽनुगे ॥ ३१ ॥

तोयराशिवति सोच्चमोडुपेऽथो तपोवति सिते चतुष्टये ।
किं स्वतुङ्गगृहवत्सु भार्गवजीवरैविसुषु वेन्दुभूवति ॥ ३२ ॥

प्रान्त्यसद्मनि तदीयभर्त्तरि स्वीयतुङ्गवति वा सदीक्षिते ।
शेश्वरे जलभगे चतुष्टयेऽथाम्बरालयप आस्फुजिद्वति ॥ ३३ ॥

कण्टके यदि निजोच्चराशिगे वाऽध्वनीन्द्रमहितेन लोकिते ।
यस्य जन्मनि स जाह्नवीजले मज्जनं मनुज एति सन्ततम् ॥ ३४ ॥

दशम में सूर्य गुरु वा राहु हो तो (१) दशम में पूर्ण चन्द्रमा हो तो (२) दशम में पूर्ण चन्द्र युक्त गुरु हो तो (३) सहज में जलराशि गत चन्द्रमा हो और वह शुभ युक्त हो तो (४) केन्द्र में गुरु युक्त शुक्र हो तो (५) स्वोच्च राशि में शुक्र गुरु तथा धनेश हों तो (६) व्यय में बुध हो और व्ययेश स्वोच्च राशि में हो तो (७) केन्द्र में जलराशि गत नवमेश हो और वह शुभ दृष्ट हो तो (८) केन्द्र में स्वोच्च राशि गत दशमेश हो

और वह शुक्र युक्त हो तो (९) नवम स्थान यदि गुरु दृष्ट हो तो युक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य नित्य गङ्गास्नान को प्राप्त होता है।

आज्ञा कर्ता योगः—

शोभने दिविचरेऽम्बरनाथे सद्विहङ्गकृतदर्शनयोगे।
किं खपे बलयुते मृदुभागे सल्लवे यदि चतुष्टयगेऽथो ॥ ३५ ॥

व्योम्नि भौम उत भास्वति कर्त्ता शासनस्य पदपे यदि केन्द्रे।
सद्विहङ्गयुतिलोकनसत्त्वे सत्खतर्कलवगे विदधाति ॥ ३६ ॥

साम्याशिष्टिमथ निम्नभगेऽङ्केशेऽथ वाऽऽयुषि तमोवति किं वा।
केतुवत्यथ यमान्तपभाजि क्रूरभाग इह खेशि सकेन्द्रे ॥ ३७॥

यद्वाऽऽहवगेहे युक्ते गुलिकेन।
पातेन च शिष्टिं क्रूरां विदधीत ॥ ३८ ॥

दशमेश यदि शुभ ग्रह हो और वह शुभ ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो (१) केन्द्र में बली दशमेश हो और वह मृदु षष्ठ्यंश में तथा शुभांश में हो तो (२) दशम में भौम वा सूर्य हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष शासन करने वाला होता है। केन्द्र में शुभ युक्त दृष्ट दशमेश हो और वह शुभ षष्ठ्यंश में हो तो उक्त योग में सौम्य आज्ञा को करना है। नीच राशि में नवमेश हो तो (१) अष्टम में राहु वा केतु हो तो (२) केन्द्र में क्रूरांश गत दशमेश हो और वह शनि तथा अष्टमेश से युक्त हो तो (३) अष्टम में गुलिक तथा राहु हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष क्रूर आज्ञा को करता है।

कृषि कर्त्ता प्रभृति योगः—

भागाद् गुरौ सुरगुरा किमघौ गदेऽशा—
त्कर्त्ता कृषेर्यदि लवात्पथि गोपती स्तः।
विश्वासहीन इनवाक्पतिमात्रदृष्टे
मानेऽशतो भवति गोपरिपालकोऽयम् ॥ ३९ ॥

कारकांश लग्न से नवम में गुरु हो अथवा कारकांश लग्न से षष्ठ में दो पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में कृषि खेती) करने वाला होता है। कारकांश लग्न से नवम में सूर्य तथा गुरु हों तो विश्वास हीन होता है एवं कारकांश लग्न से जो दशम स्थान हो यदि वह केवल सूर्य तथा गुरु से दृष्ट हो तो गौ ओं का पालक होता है।

कौतुकी योगः—

भवेऽमलेऽथवोदये भवाधिपेऽथ वाऽऽयपे।
शुभग्रहेऽथवौजसा समन्विते कुतूहली ॥ ४० ॥

लाभ में शुभ ग्रह हो अथवा लग्न में लाभेश हो अथवा लाभेश शुभ ग्रह हो अथवा लाभेश बली हो तो उक्त योगों में कौतुकी होता है।

पितृचिन्ता परिज्ञानः—

जनेस्तनोः खे तपनात्तपोगृहे वेनाङ्कधीभिर्जनकं विचिन्तयेत् ।
दिवा रविर्नक्तमिनात्मजः पिता सौख्यं पितुस्तद्बलसन्निभं मतम् ॥ ४१ ॥

जन्म लग्न से दशम स्थान में, सूर्य से नवम स्थान में तथा सूर्य, नवम स्थान और पञ्चम स्थान से पिता का विचार करे। दिन में सूर्य पिता तथा रात्रि में शनि पिता होता है। पितृ ग्रह के बल के समान पिता का सुख जानना चाहिए।

पितृ कष्ट योगः—

विग्रहे कमलिनीशसनाथे मानसे मलिनखेचरानिष्ठे ।
नोत्तमेक्षणसमागमसत्त्वे खेऽघभाज्यथ रवेः पदपाले ॥ ४२ ॥
दुष्कृतैः सहितवीक्षित आहो भास्करेऽघविवरेऽन्त्यमृतिस्थे ।
किं खपे समलिनेऽथ पतङ्गे द्वादशांशक इतौजसि यद्वा ॥ ४३ ॥
आयुर्निकेते यदि कर्म्मसाक्षिणःखपेऽहसा दृष्टयुतेऽथ पाप्मनः ।
सम्बन्धिनि व्योमपतावशोभनग्रहान्तरे स्याज्जनकोऽस्य दुःखभाक् ॥ ४४ ॥

लग्न में सूर्य हो, चतुर्थ में पाप ग्रह हो और वह शुभ दृष्ट युक्त न हो एवं दशम में पाप ग्रह हो तो (१) सूर्य की अधिष्ठित राशि से जो दशम राशि हो उस का स्वामी यदि पाप युक्त दृष्ट हो तो (२) व्यय वा अष्टम में पापान्तराल वर्त्ती सूर्य हो तो (३) दशमेश पाप युक्त हो तो (४) द्वादशांश में निर्बल सूर्य हो तो (५) सूर्याक्रान्त राशि से जो दशम राशि हो उस का स्वामी यदि अष्टम में हो और वह पाप दृष्ट युक्त हो तो (६) दशमेश का पाप ग्रह के साथ सम्बन्ध हो और वह पापान्तराल में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता दुःखित होता है।

उपान्त्यभे तपोगृहे वसुन्धरासुतासितौ
तमोगुणेन संयुतावपायमेति नुः पिता ।
तपोऽम्बुभावगा खलौ लयावसानगौ किमु
यदा जनौ शिशोः पिता व्यथासमन्वितो भवेत् ॥ ४५ ॥

लाभ वा नवम में मङ्गल तथा शनि हों और वे राहु से युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष का पिता दुःखित होता है। नवम वा चतुर्थ में पाप ग्रह हों अथवा अष्टम वा व्यय में दो पाप ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न बालक का पिता कष्ट युक्त होता है।

नीचोग्रांशे भावपे कारके च युक्ते मान्द्यादित्यजव्यालपालैः ।
किं तन्नाथे शोभनेऽप्युग्रषष्ठिभागे निम्नास्तारिगेहे तथा स्यात् ॥ ४६ ॥

नीचांश में वा पापांश में दशमेश तथा दशम कारक हो और वे गुलिक शनि तथा राहु से युक्त हों अथवा दशमेश तथा दशम कारक इन की अधिष्ठित राशियों के स्वामी यदि शुभ ग्रह भी हों किन्तु वे क्रूरषष्ठ्यंश में नीच राशि में अस्तगत वा पाप राशि में हों तो उक्त योगों में मनुष्य का पिता दुःखित होता है।

खे खासृजौ तातनना किमम्बाङ्गे वह्निदाहो व्रणशस्त्रघातः।
वंशप्रदेशे किमु जानुमूलेऽह्यार्कौ खगौ वृक्षजलादिघातः ॥ ४७ ॥

दशम में सूर्य मङ्गल होंतो पिता के शरीर में वा माता के शरीर में अग्निदाह एवं वंश प्रदेश (पीठ के अवयव) में अथवा जानुमूल में व्रण तथा शस्त्र घात होता है। दशम में राहु शनि होंतो वृक्ष जल प्रभृति से घात (मरणान्त कष्ट) होता है।

पितृ सौख्य योगः—

साधौ खपे कारक उत्तमान्विते भावेऽथ वा रम्ययुतेऽथ कारके।
नाथेऽपि वा स्वोच्चसुहृल्लवे किमु पारावतादावथ शोभनान्तरे ॥ ४८ ॥
ताताधिपे वाडवयोर्यदृग्वति ततः पितुः कारकखेचरे यदा।
तातेशदृष्टे न खलान्विताक्षिते चेद्गोपुरादौ पितृसौख्यमीर्य्यते ॥ ४९ ॥

दशमेश यदि शुभग्रह हो दशम कारक शुभ युक्त हो अथवा दशम भाव शुभ युक्त होतो (१) स्वोच्चांश में वा मित्रांश में वा पारावतांशादि में दशम कारक वा दशमेश हो तो (२) दशमेश शुभ ग्रहों के अन्तराल में हो एवं गुरु शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो (३) गोपुरादि भाग में पितृकारक ग्रह हो और वह दशमेश से दृष्ट हो एवं पापयुक्त दृष्ट न होतो उक्त योगों में पिता का सुख होता हैं।

उक्ता योगाः पित्ररिष्टप्रदा ये ते सद्युक्तास्तातसौख्यप्रदाः स्युः।
पातालेशे द्वादशारिक्षयस्थे तातस्याल्पं सौख्यमेवं वदन्ति ॥ ५० ॥

ये पूर्वोक्त पितृकष्टप्रद योग यदि शुभ युक्त होतो पितृसौख्यप्रद होते है। व्यय षष्ठ वा अष्टम में सुखेश हो तो पिता का अल्प सुख होता है। इस प्रकार पण्डितजन कहते है।

पितृ दीर्घायु योगः—

पारावतादौ पदपे तथा विधे तत्कारके तुङ्गहितांशगेऽथ वा।
केन्द्रेऽच्छ इज्येऽङ्कलवे परोच्चगेऽङ्केशे चिरायुर्जनकस्य जन्मिनाम् ॥ ५१ ॥

पारावतादि शुभवर्गों में दशमेश हो तथा पितृकारक ग्रह उच्चांश वा मित्रांश में स्थित होकर पारावतादि वर्ग में हो अथवा केन्द्र में शुक्र, नवमभाव गत नवांश राशि में गुरु और परमोच्च में नवमेश हो तो पिताकी दीर्घायु होती है।

यशस्वी पिताते योगः—

विलग्ननाथे तनयाधिभूवति धीमन्दिरेऽथो सुकृताधिभूवति।
होराधिनाथे हरिजे दयालये पिताऽस्य जन्तोर्यशसा समन्विताः ॥ ५२ ॥

पञ्चमेश में पञ्चमेश से युक्त लग्नेश हो अथवा लग्न में वा नवम में नवमेश से युक्त लग्नेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता यशस्वी होता है।

तपःपतौ पदोपगे पदाधिपे तपःस्थिते।
पिताऽस्य कीर्तिमान्भवेद्धनेन पूरितो विशः ॥ ५३ ॥

दशम में नवमेश और नवम में दशमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष का पिता धन से युक्त एवं कीर्ति वाला होता है।

वाहनदि युक्त पिता के योगः—

तपोऽधिपे चतुष्टये महामतीक्षिते जनौ।
पिता नरस्य यानभाङ् महीश्वरोऽत्र सत्समः ॥ ५४ ॥

केन्द्र में गुरु दृष्ट नवमेश होतो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष का पिता वाहनवाला भूमिपति वा उसके समान होता है।

निर्धन पिता के योगः—

दयालयाद्रसातले धनालये धराजनौ।
शिवाधिपे स्वनिम्नभे भवेत्पिताऽस्य निर्धनः ॥ ५५ ॥

नवम से चतुर्थ वा द्वितीय में मङ्गल हो और नीचराशि में नवमेश होतो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष क पिता निर्धन होता है।

व्यभिचारी पिता के योगः—

पदारिनाथौ पदगौ पराबलागामी पिता तस्य धनङ्गतेऽङ्गपे।
सगर्हिते वास्तधनारिपा धने सापाः पिता सज्जनसुन्दरीरतः ॥ ५६ ॥

दशम में दशमेश तथा षष्ठेश हों तो उस का पिता परस्त्रीगामी होता है। धन में पाप युक्त लग्नेश हो अथवा धन मे पाप युक्त सप्तमेश, धनेश तथा षष्ठेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता सज्जन की स्त्री में निरत होता है।

धूर्त पिता के योगः—

सपत्नसौख्यसद्मपौ तपोगृहेऽथ वारिणि।
तुरीयभागधेयपा विशोऽम्बको विटो भवेत् ॥ ५७ ॥

नवम में षष्ठेश तथा चतुर्थेश हों अथवा चतुर्थ में चतुर्थेश तथा नवमेश हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता व्यभिचारी होता है।

तात पुण्य नृपप्रिय योग:—

भगे परोच्चभागगे भवालये तपः प्रभौ ।
भवेत्स तातपुण्यको महीपवत्सलो नरः ॥ ५८ ॥

परमोच्चांश में सूर्य हो और एकादश मे नवमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पिता के पुण्य वाला तथा राजा का प्रिय होता है ।

पितृ भाग्य युक्त योग:—

शिवे सितेन संयुते बलान्विते विधीश्वरे ।
तनोश्चतुष्टये गुरौ पितुर्विधिं व्रजेज्जनः ॥ ५९ ॥

नवम में शुक्र हो, नवमेश बली हो और लग्न से केन्द्र में गुरु हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पिता के भाग्य को प्राप्त होता हैं ।

पितृ भक्ति योग:—

कलेवरात्रिकोणगे भगेऽङ्कपे वधूगृहे ।
सुरेड्यसंयुतेक्षिते स्वतातभक्तिमान्भवेत् ॥ ६० ॥

लग्न से पञ्चम वा नवम में सूर्य हो एवं सप्तम में नवमेश हो और वह गुरु से युक्त तथा दृष्ट हो तो अपनी पिता की भक्ति वाला होता हैं ।

पितृ दूषक योग:—

दुःस्थानयाते तनयालयेश्वरे विलोक्यमाने प्रभुणा पुरस्य वा
कुजाहिदृष्टे प्रतिभेश्वरे त्रिके भवेत्प्रजातो जनकस्य दूषकः ॥ ६१ ॥

दुष्ट स्थान (६।८।१२) में पञ्चमेश हो और वह लग्नेश से दृष्ट हो तो (१) त्रिक में पञ्चमेश हो और वह भौम तथा राहु से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पिता का दूषक होता है ।

तनोः प्रभोररिर्भगोऽधरारिभस्थ उज्झितः ।
बलेन रोगभे युतः स तातवर्गवैरिणा ॥ ६२ ॥

'सूर्य' यदि लग्नेश का शत्रु हो और वह नीच वा शत्रु राशि में हो एवं निर्बल हो तथा षष्ठ स्थान में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पितृवर्ग के शत्रु से युक्त होता है ।

पितृ, शत्रु, पितृ श्रेष्ठ तथा पितृवशानुग योग:—

स्वाङ्गेशयोश्चेत्सति शात्रवे मिथस्ततो विलग्नादुत पौरपालतः ।
व्यापारगेहाधिपतौ गदाश्रिते गच्छेदरित्वं जनकोऽस्य देहिनः ॥ ६३ ॥

दशमेश तथा लग्नेश की यदि परस्पर शत्रुता हो तो (१) लग्न से अथवा लग्नेश से जो दशम स्थान हो उस का स्वामी यदि षष्ठ स्थान में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता शत्रुता को प्राप्त होता है।

तातस्य जन्मोदयतोऽष्टषण्मिते राशौ जनुर्यस्य स ना पितू रिपुः।
तद्भावनाथे यदि मूर्तिमाश्रिते श्रेष्ठः सुतः स्याज्जनकादितीर्य्यते ॥ ६४ ॥

पिता की जन्म लग्न राशि से जो अष्टम राशि वा षष्ठ राशि हो उस में जिस का जन्म हो वह पिता का शत्रु होता है। यदि उक्त भावेश अर्थात् अष्टमेश वा षष्ठेश लग्न में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पिता से श्रेष्ठ होता है।

यस्योद्भवस्ताततनोर्वियद्गृहे स स्यात्पितुस्तुल्यगुणान्वितः सुतः।
पितुर्जनुर्लग्नगृहात्तृतीयभे स्यात्सम्भवो यस्य वशानुगः पितुः ॥ ६५ ॥

पिता की जन्म लग्न राशि से दशम राशि में जिस का जन्म हो वह पुत्र अपने पिता के तुल्य गुणों से युक्त होता है। एवं पिता की जन्म लग्न राशि से तृतीय राशि मे जिस का जन्म हो वह पिता के वश में तथा पिता क अनुगामी होता है।

रुग्ण पितृ योगः—

दृष्टे पतङ्गेन पतङ्गनन्दने पतङ्गभागे यदि सम्भवे ततः।
खलौ लयेऽन्त्ये बलवर्जितेऽङ्गपे पाथस्तपःस्थे जनकोऽतिरोगभाक् ॥ ६६ ॥

सूर्य के नवांश में शनि हो और वह सूर्य दृष्ट हो तो (१) अष्टम वा व्यय में दो पाप ग्रह हो और चतुर्थ वा नवम में निर्बल लग्नेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता अति रोगी होता है।

जन्म से पूर्व पिताकी मृत्यु के योगः—

हरेर्झषस्य भानुभागके सरोजिनीपता-
वरातिनैधनान्तिमेष्वथो सहंसमङ्गले
स्वमेषभे नभःस्थले त्रिमेकराशिसंस्थयो-
स्त्रिकस्थयोः कवीनयोर्वसुन्धराभुवा यदा ॥ ६७ ॥
सन्दृष्टयोः क्रूरदृशाऽथ भास्करे दुःस्थे क्षयेशे नवमेऽन्त्यपे तनौ।
सन्तानयातेऽरिलवेऽथ वा यमदृष्टे कुभूहेलिलवे शिशोर्जनेः ॥ ६८ ॥
प्राक् तातमृत्युर्दिवि भानुभौमयोस्तथा चरर्क्षे तपनार्कनासृजाम्।
योगे पितुर्मृत्युरहीनविद्यमाच्छाः स्वे व्यतीते जनकेऽम्बिकाक्षयः ॥ ६९ ॥

द्वादशांश कुण्डली के लग्न से षष्ठ अष्टम वा व्यय में सिंह राशि गत वा मीन राशि गत सूर्य होतो (१) दशम में मेष राशि गत सूर्य तथा मङ्गल हो तो (२) त्रिक स्थान में एक राशि गत सूर्य हों और वे मङ्गल की क्रूरदृष्टी से दृष्ट हों तो (३) त्रिक में सूर्य, नवम में अष्टमेश, लग्न में व्ययेश एवं पञ्चम में षष्ठ भावगत नवांश

राशि हो तो (४) अथवा पञ्चम में मङ्गल वा सूर्य का नवांश हो और वह शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के जन्म से प्रथमही पिताकी मृत्यु होती है । दशम में सूर्य मङ्गल हों तो भी पुरुष के जन्म से पूर्व पिताकी मृत्यु होती हैं । चर राशि में सूर्य, शनि तथा मङ्गल का योग होतो पिताकी मृत्यु होती है । द्वितीय में राहु सूर्य, बुध, शनि तथा शुक्र हों तो पिताकी मृत्यु के पश्चात् माताकी मृत्यु होती है ।

विवाह समय में पिताकी मृत्युका योग।—

इलेशहेलिभुकुजैः कुटुम्बगैर्धनेऽर्चिते ।
करग्रहस्य दीष्टके शरीरिणः पितुर्मृतिः ॥ ७० ॥

धन में बुध, शनि तथा मङ्गल हों और लग्न में गुरु हो तो उक्त योगों में विवाह के समय पिताकी मृत्यु होती है ।

परदेश में पिताकी मृत्यु के योगः—

कुजेक्षिताढ्ये चरगे सभे भगे तदाऽन्यदेशे जनकस्य पञ्चता ।
असेक्षितेऽर्के चरगे दिवा ततो रात्रौ कृशाङ्गे चरभस्थ आत्मना ॥ ७१ ॥
दृष्टेऽथ वा सार्किकुजे चरर्क्षगे नक्तं विदेशस्थिततातपञ्चता ।
आज्ञागृहे दानवभानुभानवैरैलेयदृष्टे विषयान्तरे पितुः ॥ ७२ ॥
मृत्युर्मृतौ तातभपे चरेऽथ वा तातोऽस्य दूरस्थ उपैति पञ्चताम् ।
सद्व्यङ्गभे साचलभे खपेऽत्यये समीपसंस्थोऽस्य पिताऽत्ययं व्रजेत् ॥ ७३ ॥

चर राशि में शुक्र युक्त सूर्य हो और वह भौम से दृष्ट वा युक्त हो तो परदेश में पिताका मरण होता है । दिन का जन्म हो और चर राशि गत सूर्य यदि भौम से दृष्ट हो तो (१) रात्रि का जन्म हो और चरराशिगत शनि यदि सुर्य से दृष्ट हो तो (२) रात्रि का जन्म हो और चरराशि में शनि युक्त भौम हो तो युक्त योगों में विदेश में स्थित पिताकी मृत्यु होती हैं । दशम में राहु, सुर्य तथा शनि हो और वे भौम दृष्ट हों तो परदेश में पिताका मरण होता है । अष्टम में वा चरराशि में दशमेश हो तो दूरदेश स्थित पिता मृत्यु को प्राप्त होता है । अष्टम में द्विस्वभाव राशि गत वा स्थिरराशि गत दशमेश हो तो समीपस्थ पिता मृत्युको प्राप्त होता है ।

जल में पिताकी मृत्यु के योगः—

यदा हरी मीनगतौ खलेक्षितौ यद्वा भगौ भावुकभावगा तथा ।
हृदीनजे वा सकुजासुरे शनौ वेन्दौ शुभे व्योम्न्यमृते मृतिः पितुः ॥ ७४ ॥

मीन में सुर्य चन्द्रमा हों और वे पापदृष्ट हों तो (१) नवम में सुर्य चन्द्रमा हो तो (२) चतुर्थ में शनि हो तो (३) 'शनि' यदि भौम राहु से युक्त हो तो (४) नवम दशम वा सुख में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के पिताकी मृत्यु होती है ।

राज कोप से पितृमरण योग तथा धनहानि योगः—

विरोचने सनीचेभे व्रणे वधेऽशुभेक्षिते ।
इलापकोपतः पितुर्मृतिर्धनक्षयं भवेत् ॥ ७५ ॥

षष्ठ वा अष्टम में नीच राशि गत सूर्य हो और वह पाप दृष्ट हो तो राजा के कोप से पिता की मृत्यु और धन का नाश होता है।

मातृ पितृ मरण योगः—

> खान्त्याम्बुषूग्रैः पितरौ निहत्य ना गच्छेत्स्वदेशाद्विषयान्तरं भवः।
> पित्रोःक्षयोऽस्ते दुरितैरथेन्दुतः सैवैरस्म्यैर्मदमृत्युमार्गगः॥ ७६॥
> क्षतौ क्षितीशे क्षयभे सपामरान्वयेक्षणे पूर्णबले पुराधिपे।
> प्राणोनयोर्याम्यगयोः कशेशयोर्नुर्जन्मकाले पितृमातृपञ्चता॥ ७७॥

दशम, व्यय तथा चतुर्थ में पाप ग्रह हों तो उक्त योग में उत्पन्न बालक माता पिता को मार कर अर्थात् माता के मरने के पश्चात् स्वदेश को छोडकर परदेश में चला जावे। सप्तम में पाप ग्रह हो तो भी माता पिता का मरण होता है। चन्द्रमा से सप्तम, अष्टम तथा नवम में समस्त पाप ग्रह हों तो माता पिता की मृत्यु होती है। व्यय में सुखेश हो, अष्टम स्थान पाप युक्त दृष्ट हो, लग्नेश पूर्ण बली हो एवं अष्टम में निर्बल सुखेश नवमेश हों तो उक्त योग में उत्पन्न बालक के जन्म समय में पिता माता की मृत्यु होती है

> तमोऽङ्गिरोऽरविजै रिपूदयधीषु स्वपित्रोरशुभाय शीर्षपे।
> विवीर्य्य ईम्मन्त्यिमदे सखाम्बुपे पित्रोर्विनाशो निजविग्रहात्ययः॥ ७८॥

षष्ठ, लग्न तथा पञ्चम में राहु, गुरु, रवि तथा शनि हों तो माता पिता के लिए अनिष्टकर होते है। षष्ठ व्यय वा सप्तम में निर्बल लग्नेश हो और वह दशमेश सुखेश से युक्त हो तो माता पिता की मृत्यु के साथ ही बालक की मृत्यु होती हैं।

> सर्वे सुहृद्वीक्षणदेहनाथाश्चतुष्टयस्था यदि चित्पथिस्थाः।
> तेषां दशायां किमु भुक्तिकाले पित्रैव सत्राऽनुमृतिर्जनन्याः॥ ७९॥

सुखेश, नवमेश तथा लग्नेश ये सब केन्द्र में पञ्चम में वा नवम में हों तो उन की दशा में वा अन्तर्दशा में पिता के साथ माता का अनुमरण होता है।

माता के साथ तथा पश्चात् पितृमरण योगः—

> त्रिकेऽम्बुखेशौ सबलेऽङ्गपाले पित्रोर्मृतिस्तातखपे त्रिकस्थे।
> आद्याधिपे सारवति स्वपित्रोरनिष्टकारी जनितो भवेद्वा॥ ८०॥
> सीमन्तहानः कनभोघनेशास्त्रिकोणकेन्द्रालयगा नरस्य।
> मात्रा सहैव म्रियतेऽस्य तातो घनाम्बुपालौ स्वभतोऽङ्कधीस्थौ॥ ८१॥
> तदीश्वरौ गात्रगतौ किमभ्रे हेलौ हितेऽब्जेऽथ तदीश्वराभ्याम्।
> संवीक्षिते वा सहिते पतङ्गे नरस्य पित्रोरनुपञ्चतोक्ता॥ ८२॥

त्रिक में सुखेश तथा दशमेश हों और लग्नेश बली हो तो माता पिता की मृत्यु होती है। दशम से जो दशम हैं उसका स्वामी अर्थात् सप्तमेश यदि त्रिक में हो और लग्नेश बली हो तो उक्त योग में उत्पन्न बालक माता पिता

के लिए अनिष्ट फल करने वाला वा सीमन्त कर्मरहित होता है। त्रिकोण वा केन्द्र में सुखेश, दशमेश तथा लग्नेश हों तो माता के साथ पिता की मृत्यु होती हैं। लग्नेश तथा सुखेश ये दोनों अपनी अपनी राशि से नवम वा पञ्चम मे हो और लग्नेश सुखेश की राशियों के स्वामी यदि लग्न में हो अथवा दशम में सूर्य तथा चतुर्थ में चन्द्रमा हो अथवा 'सूर्य' यदि दशमेश और सुखेश से दृष्ट वा युक्त होतो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के माता पिता का अनुमरण होता है।

पिता के शीघ्र मरण योगः—

मार्तण्डान्मरणास्थितौ मृदुकुजौ यस्याङ्गिनः सम्भवे
रम्याणां यदि गोचरे न पतितौ तातात्ययं तत्क्षणे।
कुर्य्यातामथ संस्थितिः शखगृहे प्रद्योतनेलायजो-
स्तातान्तं रचयत्यरं रतिपतौ वासः सपापारुषः॥ ८३॥
कुर्वीताम्बकमृत्युमाशु खबिभौ सारारुणेऽथ स्मरे
भास्वद्भाजि यदा कुजे पदवति व्यालेशभाजि व्यये।
किं वेने सयमे व्यये क्षयिविधौ कामाश्रितेऽरं पितुः।
पञ्चत्वं प्रवदेद यदीह शुभदैर्दृष्टे त्रिभिर्हायने॥ ८४॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में सूर्याधिष्ठित राशि से अष्टम में मङ्गल तथा शनि हों और वे शुभ दृष्ट न होंतो पिता की शीघ्र मृत्यु करते है। नवम वा दशम मे सूर्य तथा मङ्गल होंतो पिता की शीघ्र मृत्यु करते है। सप्तम में पाप युक्त सूर्य हों तो पिता की शीघ्र मृत्यु करता है। दशमेश यदि भौम तथा सूर्य से युक्त हो तो (१) सप्तम में सूर्य, दशम में मङ्गल और व्यय में राहु हो तो (२) व्यय में शनि युक्त सूर्य हो और सप्तम में क्षीण चन्द्रमा होतो उक्त योगों में पिता की शीघ्र मृत्यु को कहे। यदि उक्त योग में शुभ दृष्टि हो तो तीसरे वर्ष में पिता की मृत्यु को कहे।

पिता की मृत्यु के योग।

खे सारिराशौ रुधिरे न जीवति पितोदयादायतपोगृहं गताः।
कुजाहिकृष्णा जनकस्य मृत्युदा मृत्युप्रदोऽर्को मतिमानसंश्रितः॥ ८५॥

दशम में शत्रु राशि गत भौम हो तो पिता न जीवे। लग्न से लाभ तथा नवम में भौम, राहु तथा शनि हों तो पिता के लिए मृत्यु प्रद होते है। एवं पञ्चम वा दशम में सूर्य हो तो पिता के लिए मृत्यु प्रद होता हैं।

भाग्यालयान्निधनवेश्मनायकस्तपोगृहाज्जातिदृगाणपोऽथ वा।
वेधेषु यः क्रूरखगः शनेश्वरः स मृत्युदो तातजनस्य जन्मिनः॥ ८६॥

नवम से अष्टमस्थान का स्वामी यदि शनि हो अथवा नवम से बाईस वे द्रेष्काण का स्वामी शनि हो और वह क्रूर ग्रह से वेधित हो तो वह पिता के लिए मृत्यु प्रद होता है।

दैतेयेज्याच्चानयभवने वा पथे नीलत्रासः-
पृथ्वीपुत्रौ गुरुभृगुदृशां गोचरं न प्रयातौ।

यद्वाऽऽदित्योऽहनि समलिनः पापिपातङ्गिदृष्टः
कुर्य्यान्नृणां सवितृमरणं कीर्त्तितं सद्भिरेवम् ॥ ८७ ॥

शुक्र से पञ्चम वा नवम में शनि तथा भौम हों और वे गुरु शुक्र से दृष्ट न हों अथवा 'सूर्य' पापयुक्त हो और मङ्गल शनि से दृष्ट होतो पिता की मृत्यु को करता है। इस प्रकार पण्डित जनों ने कहा है।

दिवाऽर्य्यमाऽघाम्बरगामिमध्यगः साघस्तथा वासरपश्चरर्क्षगः।
एनोऽन्वितः शस्त्रविषाम्बुतोऽत्ययं करोतु तातं जननेऽल्पमायुषम् ॥ ८८ ॥

दिनका जन्म हो एवं पाप युक्त सूर्य यदि पापग्रहों के मध्य में होतो पिता की मृत्यु को करता है। चर राशि में पाप युक्त सूर्य होतो शस्त्र विष वा जल से मृत्यु को करता है। और पिताकी अल्पायु को करता है।

भानौ शखास्तेष्वघयुक्तवीक्षिते तथा विवस्वद्रुधिरेननन्दनैः।
तपोऽवसानात्मजवित्तधामगैर्जातस्य तातः समुपैति पञ्चताम् ॥ ८९ ॥

नवम दशम वा सप्तम में सूर्य हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो अथवा नवम, व्यय, पञ्चम तथ धन में सूर्य, भौम तथा शनि होंतो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष का पिता मृत्यु को प्राप्त होता है।

मिहिरान्मदनेऽर्कभूकुजाध्युषिते वा विवरे तयो रवौ।
किमुतायुषि मन्दभास्वतोः स्मर आरे न शुभेक्षितेऽथ वा ॥ ९० ॥
कुजतः कलहे सकल्मषक्षणदेशाध्युषितेऽथ राज्यभे।
महिजे मृदुगे तमेऽथ वा रविदृष्टे किमु पिङ्गलात्पदे ॥ ९१ ॥
मलिनाध्युषिते प्रपीडितौ भगभेशाम्बरपौ यदांऽहसा।
जनकस्य तनौ व्यथाऽथ वा मरणं तस्य बुधैरुदीरितम् ॥ ९२ ॥

सूर्य से सप्तम में शनि मङ्गल होंतो (१) अथवा शनि मङ्गल के अन्तराल में सूर्य होतो (२) अष्टम में शनि सूर्य हों तथा तथा सप्तम में भौम हो और वह शुभ दृष्ट न हो तो (३) मङ्गल से अष्टम में पाप युक्त चन्द्रमा होतो (४) दशम में भौम शनि वा राहु हो और वह सूर्य से दृष्ट हो तो (५) सूर्य से दशम में पाप ग्रह हो और सूर्याक्रान्त राशि का स्वामी तथा दशमेश पापाक्रान्त होंतो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के पिता के लिए कष्ट अथवा पिता की मृत्यु होती है।

खलत्रयेक्षिते रवौ न शोभनेक्षितेऽथ वा
रवावसद्गृहे खगे विधुन्तुदार्किलोकिते।
पितुर्मृतिर्विरोचनः खलग्रहैर्विलोकितो
युतोऽथ पापमध्यगः करोति तातपञ्चताम् ॥ ९३ ॥

यदि 'सूर्य, तीन पाप ग्रहों से दृष्ट हो और शुभ दृष्ट न हो तो (१) दशम में पापराशिगत सूर्य हो और वह राहु शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में पिता की मृत्यु होती है। यदि 'सूर्य, पाप दृष्ट युक्त हो अथवा पापान्तराल में हो तो पिता की मृत्यु को करता है।

खलेऽर्कतोऽस्ते किमिनात्क्षयारिगैर्वायुर्हितस्थः शुभवर्जितैरघैः।
ततोऽसितेऽङ्गे रजनीकरे दरे कामे कुजे वा विदि पित्ररिष्टकम् ॥ ९४ ॥

सूर्य से सप्तम में पाप ग्रह हो अथवा सूर्य से अष्टम तथा षष्ठ में वा अष्टम तथा चतुर्थ में पाप ग्रह हों और वे शुभ युक्त न हों तो (१) लग्न में शनि, षष्ठ में चन्द्रमा और सप्तम में भौम वा बुध हो तो उक्त योगों में पिता को अरिष्ट कहना चाहिए।

नीचे खपे वा पदपाच्चतुष्टये भाग्ये खलैर्वेन्द्विनलग्नतो दिवि।
पुण्येऽशुभैर्मूलभमाश्रितैस्तथा मूलस्थयार्भाधिपभास्वतोस्ततः ॥ ९५ ॥

शुभ्रांशुतन्वोर्मृदुमङ्गलागवो वंशाङ्कगा वा हरिभेऽहिहेलिजौ।
वार्के स्वनीचे किं गर्हितान्विते किमर्कतः कण्टकमार्गगैः खलैः ॥ ९६ ॥

नरस्य जन्मावसरे जडच्छवौ सिंहे शनौ स्त्रीकुलिरेभवैरिषु।
वाङ्गात्कुले शे शशभृत्ततोऽसितेऽन्त्यैकार्थभेषु प्रलयः पितुर्भवेत् ॥ ९७ ॥

नीचराशि में दशमेश हो तो (१) दशमेश से केन्द्र वा भाग्य में पाप ग्रह हों तो (२) चन्द्र, सूर्य तथा लग्न से दशम वा नवम में मूलनक्षत्र गत पाप ग्रह हों तो (३) मूलनक्षत्र में चन्द्र सूर्य हों तो (४) चन्द्रमा वा लग्न से दशम तथा नवम में शनि, मङ्गल तथा राहु हों तो (५) सिंह में राहु शनि हों तो (६) अपनी नीच राशि में सूर्य हो तो (७) सूर्य यदि पाप युक्त हो तो (८) सूर्य से केन्द्र तथा नवम में पाप ग्रह हों तो (९) मनुष्य के जन्म समय में यदि सिंह में चन्द्रमा हो और कन्या कर्क वा सिंह में शनि हो तो (१०) लग्न से दशम वा नवम में चन्द्रमा हो और उस से द्वादश प्रथम वा द्वितीय राशि में शनि हो तो उक्त योगों में पिता की मृत्यु होती है।

पितृ मरण वर्ष योगः—

सपावके सिन्धुसुते ककर्म्मणोर्मृत्युः पितुः पावकतुल्यहायने।
दुश्चिक्यपातालगुणप्रवृत्तिषु बलैर्विहीनेषु तथा फलं भवेत् ॥ ९८ ॥

चतुर्थ वा दशम में पाप युक्त चन्द्रमा हो तो तीसरे वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। एवं तृतीय, चतुर्थ तथा दशम ये तीनों स्थान निर्बल हों तो भी उक्त फल होता है अर्थात् तीसरे वर्ष पिता की मृत्यु होती है।

रन्ध्राधीशे धर्म्मवाम्नि द्युनाथे दिष्टान्तस्थे तातमृत्युं ब्रुवन्ति।
आद्येऽब्देऽथो प्रान्त्यपे पुण्यगेहे नीचांशस्थे पुण्यपे तातनाशः ॥ ९९ ॥
रामैर्वर्षैः षोडशे वत्सरे वा भास्वद्युक्ते मृत्युपे मूर्त्तिनाथे।
मृत्यौ वर्षे दोर्मिते द्वादशे वा मूर्त्तेर्मन्त्रेऽह्वस्करेऽहौ हितस्थे ॥ १०० ॥

तातान्तोऽब्दे षोडशेऽष्टादशे वा सोमान्मार्गे मन्दगे चित्रभानौ।
सस्वर्भाणौ सप्तमेऽङ्केन्दुवर्षे प्रान्त्ये पुण्यस्थानपे प्रान्त्यनाथे ॥ १०१ ॥
पुण्यस्थेऽब्दे वेदवेदोन्मितेऽन्तो नक्षत्रेशे भानुभागेऽङ्गनाथे।
छिद्रे बाणत्र्युन्मिते कब्धिवर्षे मानेशेऽक मन्दमाहेययुक्ते ॥ १०२ ॥
वर्षे व्योमाक्षोन्मितेऽन्तोऽम्बकस्य मार्गान्मारे भास्वरे भ्रातृभावात्।
द्यूनस्थाने दानवे तर्कतुल्ये वर्षे किं वा पञ्चवर्गप्रमेऽन्तः ॥ १०३ ॥

नवम में अष्टमेश हो और अष्टम में सूर्य हो तो प्रथम वर्ष में पिता की मृत्यु को कहते हैं। नवम में व्ययेश और नीचांश में नवमेश हो तो तीसरे वा सोलह वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। अष्टमेश यदि सूर्य से युक्त हो और अष्टम में लग्नेश हो तो दूसरे वा बारह वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। लग्न से पञ्चम में सूर्य और चतुर्थ में राहु हो तो सोलह वें वा अठारह वें वर्ष में पिता का मरण होता है। चन्द्रमा से नवम में शनि और सूर्य यदि राहु से युक्त हो तो सात वें वा उन्नीस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। व्यय में नवमेश और नवम में व्ययेश हो तो चवालीस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। सूर्य के नवांश में चन्द्रमा हो और अष्टम में लग्नेश हो तो पैंतीस वें वा इकतालीस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। 'सूर्य' यदि दशमेश हो शनि मङ्गल से युक्त हो तो पचास वें वर्ष में पिता का नाश होता है। नवमस्थान से सप्तम में अर्थात् तृतीय में सूर्य हो और तृतीय से सप्तम में अर्थात् नवम में राहु हो तो छठे वा पच्चीस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।

के वाङ्गे कलितेऽगुना मतिमति प्रत्यर्थिगे वत्सरे
रामाष्टप्रमिते मृदौ दृशि ततोऽस्तेऽर्के प्रकृत्युन्मिते।
वाब्दे षड्द्विमिते नभोगुणमिते नीचे शपे तद्रूपे
शे तर्काक्षिमितेऽथ वाऽमरमितेऽब्देऽन्तः पितुर्जन्मिनाम् ॥ १०४ ॥

चतुर्थ वा लग्न में राहु हो और षष्ठ में गुरु हो तो त्याईस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। द्वितीय में शनि और उस से सप्तम में सूर्य हो तो इक्कीस वें छब्बीस वें वा तीस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। नीच राशि में नवमेश हो और नवम में नवमेश की नीच राशि का स्वामी हो तो छत्तीस वें वा तैंतीस वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है।

पितृ मारक दशा परिज्ञानः—

प्रायः सुखायात्मजनाथदाये किं वा पदाङ्काधिपयोर्दशायाम्।
यद्वा तपोमध्यगयोस्तदीशयुक्तर्क्षपत्योः किमु दायकाले ॥ १०५ ॥
दायेऽम्बुपस्थर्क्षपतेः किमर्थतोयेशयोर्यः सुकृतोऽसितेन।
संवेधितो वीक्षितसंयुतोऽस्य दायस्य काले जनकस्य मृत्युः ॥ १०६ ॥

सुखेश लाभेश वा पञ्चमेश प्रायः इन की दशाओं में पिता की मृत्यु होती है। अथवा दशमेश वा नवमेश की दशा में अथवा नवमगत वा दशमगत ग्रह की दशा में अथवा नवमेश वा दशमेश की आक्रान्त राशि

के स्वामी की दशा में अथवा चतुर्थेश की आक्रान्त राशि के स्वामी की दशा में अथवा द्वितीयेश तथा चतुर्थेश इन दोनों के मध्य में जो शुभ ग्रह हो और जो ग्रह शनि से वेधित दृष्ट वा युक्त हो उसकी दशाके परिपाक काल में पिता की मृत्यु होती है।

गोचर द्वारा पितृ मरण समय परिज्ञानः—

पूषस्थराश्यंशकयोर्बली यस्तत्त्रिकोणे यदि गोचरेण ।
विकर्त्तनस्तातविनाशकर्मदशासु तातस्य विनाश उक्तः ॥ १०७ ॥

जन्म समय में जिस राशि में तथा जिस राशि के नवांश में सूर्य हो उन दोनों (राशि तथा नवांश) में जो अधिकबली हो उससे जो त्रिकोण राशि हो उस में गोचर से जब सूर्य आवे तब पितृनाशकारक ग्रहों की दशाओं में पिता का नाश कहा है।

रविस्थितांशनायकनवारुणांशराशिगे ।
विभावरीविभौ यदा तदाऽत्ययं पितुर्वदेत् ॥ १०८ ॥

सूर्य जिस राशि के नवांश में हो उस के स्वामी की नवांश राशि में वा द्वादशांश राशि में जब चन्द्रमा आवे तब पिता की मृत्यु को कहे।

यदेनजो गोचर उद्भवाङ्गतो वेन्दोर्व्ययाष्टाद्यतुरीयवित्तगः।
निम्नारिगः पापयुतेक्षितस्तदा करोतु पित्रोर्मरणं जनुष्मताम् ॥ १०९ ॥

जन्म लग्न राशि से वा जन्मचन्द्र राशि से जब गोचर में द्वादश अष्टम प्रथम चतुर्थ वा द्वितीय में नीच राशि गत वा शत्रु राशि गत शनि हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो तो प्राणियों के माता पिता की मृत्यु को करता है।

व्योमस्थलं तदधिपं तपन खरांशोः
खेशं प्रपश्यति शनी रिपुनीचभस्थः।
वाऽसद्विलोकितयुतो धिषणोऽन्त्यशान्त—
सौख्येऽपि गोचरवशात्पितुरत्ययः स्यात् ॥ ११० ॥

दशमस्थान, दशमेश सूर्य तथा सूर्य से दशम स्थानका स्वामी इन चारों को यदि शत्रु राशि गत वा नीच राशि गत अथवा पाप दृष्ट युक्त शनि देखता हो एवं गोचर से द्वादश अष्टम वा चतुर्थ राशि में गुरु भी हो तो पिता की मृत्यु होती है।

मान्दिस्फुटादपहृते त्रिजगन्नमस्ये
राशित्रिकोण इनजेऽस्य पितुः शरीरे।
रोगं तदंशकगते मरुताममात्ये—
ऽन्तं गोचरस्य वशतः समुदीरयन्ति ॥ १११ ॥

स्पष्ट गुलिक में स्पष्ट सूर्य को हीन करे तब जो शेष राशि हो उससे जो त्रिकोण (५।९) राशि हो उस में गोचर से जब शनि आवे तब पिताके शरीर में रोग को कहे। एवं पूर्वागत शेष राश्यादि में जो नवांश राशि हो उस में गोचर से जब गुरु आवे तब पिताकी मृत्यु को कहते हैं।

—: उदाहरण :—

स्पष्ट गुलिक १०।४।४७।२ में स्पष्ट सूर्य २।२१।३४।२५ को हीन किया तो ७।१३।१२।३७ शेष राश्यादि बचे। यहां वृश्चिक वर्तमान राशि है इससे पञ्चम मीन और नवम कर्क राशि है अतः मीन वा कर्क में शनि के आनेपर पिताके शरीर में रोग होगा।

एवं पूर्वागत शेष राश्यादि ७।१३।१२।३७ में तुलानवांश वर्तमान है अतः तुला के गुरु में पिताकी मृत्यु होगी।

स्फुटयमकण्टकेन सहितेऽर्के सुरसचिवे तदीयगृहकोणे।
गदमिह तद्गृहांशगत इज्ये जनकमृतिं वदन्ति विबुधेन्द्राः ॥ ११२ ॥

स्पष्ट सूर्य में स्पष्ट यमकण्टक को युक्त करे तब जो राशि हो उससे त्रिकोण राशि में गोचर से जब गुरु आवे तब पिता के शरीर में रोग को कहते है। एवं पूर्वागत योग राश्यादि में जो नवांश राशि हो उस में गुरु के आनेपर पिताकी मृत्यु को कहते हैं।

—: उदाहरण :—

स्पष्ट सूर्य २।२१।३४।२५ में स्पष्ट यमकण्टक ०।२।४।३२ को युक्त किया तो २।२३।३८।५७ योग राश्यादि हुए। यहां मिथुन राशि वर्तमान है। इस से पञ्चम तुला और नवम धनु है अतः सिंह वा धनु के गुरु में पिता के शरीर में रोग होगा।

एवं पूर्वागत योग राश्यादि २।२३।३८।५७ में वृष नवांश वर्तमान है अतः वृष के गुरु में पिताकी मृत्यु होगी।

दिन वा रात्रि में पिताकी मृत्युका परिज्ञानः—

सत्त्वान्विता गदगता हितपेन्दुकाव्याः
सारीश्वरा विदधते मरणं रजन्याम्।
तातस्य भूतलपभार्गवयोः क्षतश-
संयुक्तयोरहनि तातजनस्य मृत्युः ॥ ११३ ॥

षष्ठ में बली सुखेश, चन्द्रमा तथा शुक्र हों और वे षष्ठेश से युक्त हों तो रात्रि में पिता की मृत्यु को करते हैं। सुखेश और शुक्र ये दोनों षष्ठेश से युक्त हों तो दिन में पिता की मृत्यु होती है।

पुत्र के द्वारा माता पिता के शवदाह संस्काराभाव योगः—

चतुष्टयस्थे सचरे रवौ किमु पञ्चासहोत्थे जनकं च मातरम्।
दहेन्न सूनुर्द्वितनूगयोस्तयोः केन्द्रेऽन्तदाहौ गदितौ द्विकालगौ ॥ ११४ ॥

केन्द्र में चरराशियुक्त सूर्य हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष अपने पिता का दाह संस्कार न करे। अथवा केन्द्र में चर राशि गत चन्द्रमा हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष माता का शव दाह संस्कार न करे। एवं केन्द्र में द्विस्वभाव राशि गत सूर्य चन्द्रमा हों तो मृत्यु तथा अग्नि दाह संस्कार एक ही समय में नहीं होता है अर्थात् मृत्यु के पश्चात् कालान्तर में शव दाह संस्कार होता है।

माता पिता के मरण समय में पुत्रमुखदर्शनाभाव योगः—

अदृश्यभावस्थितयोः पदाम्बुनोः पत्योर्नपित्रोर्लपनस्य दर्शनम्।
तदाऽन्त्यकाले तनयाधिपे यदाऽदृश्यार्द्धगे नात्मजवक्त्रदर्शनम्॥ ११५॥

अदृश्यार्द्ध में दशमेश तथा चतुर्थेश हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष को माता पिता के मरण काल में उनके मुख का दर्शन नहीं होता है। एवं जिस मनुष्य का पञ्चमेश अदृश्य भाग में हो उसको मरण समय में पुत्र के मुख का दर्शन नहीं होता है।

जीविका परिज्ञानः—

लग्नाब्जयोर्बलवशात्पदसद्म कर्म्म
यत्तत्स्वभावजनितं तदधीशवृद्ध्या।
वृद्धिर्भवेदितरथाऽपचितिर्निरुक्ता
कर्म्म स्वनाथशुभखेचरयुक्तदृष्टम्॥ ११६॥

तत्सौख्यजीवनदमुग्रयुतेक्षितं चे-
त्प्रोक्तं प्रयासभववृत्तिकरं बुधेन्द्रैः।
होरेन्दुतो दशमगेऽम्बरपेऽथ वाऽभ्रा-
ङ्कांशाधिपे स्वभलवे निजतुङ्गभागे॥ ११७॥

स्यात्सौख्यवृत्तिररिनीचगृहांशकेऽल्पं
सौख्यं च पुण्यमुपचारकदासभृत्यः।
मानेऽमलेष्वखिलकर्म्मण एव सिद्धि-
र्भूनाथलब्धविभवो जनितो मनुष्यः॥ ११८॥

लग्न तथा चन्द्रमा इन दोनों के मध्य में जो अधिक बली हो उससे जो दशम स्थान हो वह कर्म स्थान होता है। उसी के स्वभाव के समान मनुष्य कर्म करता है। उस कर्म स्थान के स्वामी की वृद्धि से कर्म की वृद्धि और हानि से कर्म की हानि होती है। यदि कर्म स्थान अपने स्वामी तथा शुभग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो उस मनुष्य की सुखजनक जीविका होती है। एवं उक्त स्थान पापग्रह से युक्त वा दृष्ट होतो कष्ट जन्य जीविका होती है यदि लग्न वा चन्द्रमा से दशम में दशमेश हो अथवा दशम भाव के नवांश राशि का स्वामी यदि अपनी राशि अपने नवांश वा अपने उच्चांश में होतो सुख से जीविका होती है। यदि वह दशम भाव के नवांश का स्वामी शत्रुराशि वा नवांश में हो अथवा नीचराशि वा नीचांश में हो तो अल्पसुख, तथा अल्प पुण्य एवं उपचारक दास वा भृत्य होता है। यदि दशम में शुभग्रह होतो समस्त कर्मों की सिद्धि तथा राजा से ऐश्वर्य को प्राप्त होता है।

सादभ्रपङ्क्ते दुरितेक्षिते दृशि तत्पे गतोर्जे सखलेऽङ्गपे त्रिके ।
तज्जीवनं केन भवेन्न तुङ्गभे स्वपेऽशुभेऽसाधुयुतेक्षितेऽङ्गपे ॥ ११९ ॥

विप्राणिनि क्रूरयुतेऽस्य जीवनोपायेऽपरो नास्ति सहायकस्तदा ।
व्ययेऽरिपे राहुयुतेऽथ वा रवियुक्ते कुवृत्तिर्वसतिः परालये ॥ १२० ॥

धन स्थान में बहुत पापग्रह हो और वे पापदृष्ट हों, धनेश निर्बल हो और त्रिक में पापयुक्त लग्नेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष की जीविका सुख से नहीं होती है । द्वितियेश पापग्रह हों और वह स्वोच्च राशि में हो तथा पापयुक्त दृष्ट हो एवं निर्बल लग्नेश यदि पापयुक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष के जीवनोपायमें अन्य सहायक नहीं होता है । व्यय में राहु युक्त वा रवि युक्त षष्ठेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष निन्दितवृत्ति वाला तथा पराये घरमें वास करने वाला होता है ।

प्रसिद्ध तथा नीच कर्म से जीविका योगः—

छायासूनौ कारकांशे प्रसिद्धकर्माजीवी धिष्ण्यपाद् धीनिधाने ।
गीर्वाणेड्ये कालधर्म्मेऽमले वाऽसत्याजीवि नीचकर्मादितो ना ॥ १२१ ॥

कारकांश लग्न में शनि होतो प्रसिद्ध कर्म से जीविका वाला होता है । चन्द्रमा से पञ्चम वा द्वितीय में गुरु हो और अष्टम में शुभग्रह वा पापग्रह हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष नीच कर्मादि से जीविका वाला होता है।

चेदेकस्मिन्खेचरे मित्रराशौ जातो जन्मी चान्यजीवी प्रसूतौ ।
कोणः कोणेऽर्थेऽङ्गपे खे क्षयेऽघैः स्यादाजीवी पूरुषो नीचवृत्त्या ॥ १२२ ॥

जिस के जन्म समय में मित्रराशि में एकही ग्रह हो तो उक्त योग में उत्पन्न प्राणी अन्य से जीविका वाला होता है । त्रिकोण वा धन में शनि, दशम में लग्नेश और अष्टम में पापग्रह हो तो उक्त योग में उत्पन्नपुरुष नीचवृत्ति से जीविका करने वाला होता है ।

काष्ठ पाषाणादि विक्रेता योगः—

क्लेशोदवसितेशेन कलिते कण्ठमन्दिरे ।
विक्रेता दृषदादीनां काष्ठानां जनितो जनः ॥ १२३ ॥

तृतीय में षष्ठेश होतो पाषाण प्रभृति का तथा काष्ठों का विक्रेता (बेचने वाला) होता है ।

यद्दोलवे पदपतिः परिवर्त्ततेऽस्य
तत्तुल्यकर्म्मवशतो जनितस्य वृत्तिः ।
पौरेन्दुपाथपदगांशकपालवृत्त्या
किं मासहोत्थघनतो गगने बली यः ॥ १२४ ॥

तत्खेटवृत्त्या मनुजस्य जीवनं किं वीर्य्ययुक्ताद् गणपाद् द्युचारिणः ।
दाये हृतौ तस्य खगस्य जीवनं भवेन्नराणां जनके जडद्युतौ ॥ १२५ ॥

वृत्तिर्विलासैर्वचनस्य चोद्यमैः सर्वैः कलाकौशलसाहसादिभिः ।
खे सस्वभेऽहौ भविदारवीक्षितयुक्ते क्षणस्वर्द्धिधनक्षयं भवेत् ॥ १२६ ॥

जिस ग्रह के नवांश में दशमेश हो उसके समान कर्म से मनुष्य की वृत्ति होती है । अथवा लग्न, चन्द्र तथा सूर्य इन तीनों के मध्यम में जो अधिक बली हो उससे दशम स्थान में जिस राशि का नवांश हो उसके स्वामी की वक्ष्यमाण वृत्ति से धन लाभ होता है । अथवा चन्द्रमा और लग्न के मध्य में जो अधिक बली हो उससे दशम स्थान में जो अधिक बली ग्रह हो उसकी वक्ष्यमाण वृत्ति से मनुष्य की वृत्ति होती है । अथवा बलवान् ग्रह के वर्ग का स्वामी जो ग्रह हो उसकी दशा तथा अन्तर्दशा में मनुष्यों की उक्त ग्रह के तुल्य जीविका होती है । यदि दशम स्थान में चन्द्रमा हो तो वाणी के विलासों से, उद्यमों से तथा सब कला कौशलादि साहसादियों से मनुष्य की जीविका होती है । दशम में स्वराशि गत राहु हो और वह शुक्र, बुध तथा भौम से दृष्ट वा युक्त होतो, क्षण में धन वृद्धि तथा धन नाश होता है ।

धनलाभ परिज्ञानः —

कायेन्दुतः कपिमुखैः कुलगैर्धनाप्ति-
स्तातप्रसूरिपुसुहृत्सहजाङ्गनाभ्यः ।
भृत्यात् क्रमेण कथिता तनुतारकेश-
तिग्मांशुतातपगगोलवपालवृत्त्या ॥ १२७ ॥

लग्न वा चन्द्रमा से दशम में सूर्यादि ग्रह हों तो क्रम से पिता प्रभृतियों से धनकी प्राप्ति होती है । अर्थात् दशम में सूर्य होतो पिता से, चन्द्रमा होतो माता से भौम हो तो शत्रु से बुध हो तो मित्र से गुरु हो तो भ्राता से शुक्र होतो स्त्री से एवं शनि होतो भृतक (नौकर) से द्रव्यकी प्राप्ति होती है । लग्न चन्द्र तथा सूर्य इन तीनों के मध्य जो अधिक बली हो उस से दशम में जो राशि हो उसका स्वामी जिस ग्रह के नवांश में हो उसकी वक्ष्यमाण वृत्ति से धनका लाभ होता है ।

सूर्य की वृत्तिः—

भैषज्यवादोर्णतृणाम्बुधान्यहिरण्यमुक्ताक्रयविक्रयेण ।
मंत्रोपदेशेन रसैर्विनोदमार्गैरसौ जीवति भास्करांशे ॥ १२८ ॥

यदि उक्त दशमेश के नवांश राशि का स्वामी सूर्य हो तो भैषज्य (चिकित्सा), वाद (झगडा), ऊर्ण (ऊन), तृण, जल, धान्य हिरण्य (सुवर्ण) तथा मुक्ता (मोती) इन वस्तुओं के क्रय विक्रय (खरीदने बेचने) से जीविका होती है अथवा मंत्रोपदेश करने से, रसों से तथा विनोद के मार्गों से जीविका होती है ।

चन्द्रमा की वृत्तिः—

वस्त्रक्रयाद्वारिसमुद्भवानां व्यापारतो राजवधूश्रयेण ।
विनोदमृद्वादकृषिक्रियादेर्वार्मण्डलांशे कथयन्ति वृत्तिम् ॥ १२९ ॥

चन्द्रमा होतो वस्त्र खरीदने से, जलजन्य वस्तुओंके व्यापार से, राजा तथा स्त्रियों के आश्रय से, विनोद से मृद्वाद (मिट्टी के काम) से, कृषि क्रियादि (खेती के कार्य) से जीविका को कहते हैं ।

मङ्गल की वृत्तिः—

व्योमोल्मुकांशे समरप्रहाराद्वह्निर्भुजा साहसधातुमूलात् ।
विवादतः स्तब्धकलिप्रवृत्त्या जीवेदसौ मोषकवृत्तितो वा ॥ १३० ॥

मङ्गल के नवांश में युद्ध तथा प्रहार से, अग्निसे साहस तथा धातुके मूल से, स्तब्ध तथा कलहकी वृत्ति से अथवा चोर वृत्ति से जीविका होती है ।

बुध की वृत्तिः—

नवांशके चान्द्रमसस्य काव्यज्ञानेन शास्त्रागममार्गरूपात् ।
पुरोहितत्वेन जपात्प्रवृत्तिः पाठाच्छ्रुतेः शिल्पकलादिभिः स्यात् ॥ १३१ ॥

बुध के नवांश में काव्यज्ञान से, शास्त्र तथा वेदान्त मार्ग से पुरोहिताई से, जपसे, वेदपाठ से एवं शिल्पकलादियों से जीविका होती है ।

गुरु की वृत्तिः—

महामतेर्नन्दलवे पुराणशास्त्रागमानां पठनात्स जीवेत् ।
देवद्विजोपासकनीतिधर्म्मोपदेशतोऽध्यापकमार्गरूपात् ॥ १३२ ॥

गुरु के नवांश में पुराण, शास्त्र तथा वेदान्त के पाठ से, देवता तथा ब्राह्मणोंकी सेवा से, नीति तथा धर्मोपदेश से एवं अध्यापक मार्ग से जीविका होती है ।

शुक्र की वृत्तिः—

माणिक्यनागाश्वसुवर्णमूलात्तक्रौदनक्षारगुडक्रयेण ।
लोभेन वध्वाः सुरभिक्रयेण जातो जनो जीवति भार्गवांशे ॥ १३३ ॥

शुक्र के नवांश में माणिक्य (रत्न), हस्ती, अश्व तथा सुवर्ण के कारण से; तक्र (छाछ), ओदन (भात) क्षार (नमक) तथा गुड के खरीदने से, स्त्री के प्रलोभन से एवं गौओं के खरीदने से जीविका होती है ।

शनि की वृत्तिः—

मन्दांशके मार्गगमादिकेन मिथो विरोधोद्भवहेतुतोऽस्य ।
वधादिकैः काष्ठमयैः सुनीचशिल्पैः प्रवृत्तिः श्रमभारवाहात् ॥ १३४ ॥

शनि के नवांश में मार्ग के गमनागमन से, परस्पर विरोधजन्य कारण से, वधादि से, काष्ठ से अतिनीच शिल्पसे एवं परिश्रम तथा भार वहन से जीविका होती है ।

धन लाभ हेतु परिज्ञानः—

स्वराशिमित्रारिभगैर्धनप्रदैर्ग्रहैस्ततो द्रव्यमुपैति भारवौ ।
तुङ्गे ससारे स्वबलाद्बलान्वितैः स्वाङ्गायगैः सद्भिरनेकधा धनम् ॥ १३५ ॥

स्वराशि मित्रराशि वा शत्रु राशि में धन दायक ग्रहमें हों तो उस उस से धन का लाभ होता है अर्थात् धनदायक ग्रह स्वराशि में हों तो अपने पराक्रम से, मित्र राशि में हों तो मित्र से एवं शत्रु राशि में हों तो शत्रु से धन की प्राप्ति होती है। यदि स्वोच्च राशि में बली सूर्य हो तो अपने बाहुबल से धन का लाभ होता है। एवं द्वितीय, लग्न तथा लाभ में बली शुभ ग्रह हों तो अनेक प्रकार के धन का लाभ होता है।

सोमः सन् वा गच्छत्वर्थं स्वेशोऽङ्गेशो वोदेत्येव।
यस्मिन्काले तस्मिन्स्वस्य प्राप्तिर्वाच्या सूरिश्रेष्ठैः॥ १३६॥

जन्म लग्न से द्वितीय भाव में जो राशि हो उस में गोचर से जब चन्द्रमा अथवा शुभ ग्रह आवे तब धन की प्राप्ति कहनी चाहिए। एवं द्वितीयेश वा जन्म लग्नेश उदय हो उस समय धन की प्राप्ति कहनी चाहिए।

चारक्रमेणोदयतोऽन्वयाधिपो यस्मिन्नवांशे परिवर्त्तते यदा।
या जीविका प्राक् कथिता तदीशितुर्विचक्षणस्तां प्रतिवासरं वदेत्॥ १३७॥

जो ग्रह, जन्मलग्न से दशम स्थान का स्वामी हो वह गोचर के क्रम से जब जिस राशि के नवांश में वर्तमान हो उस के स्वामी की जो पूर्वोक्त वृत्ति हो पण्डितजन उस वृत्ति को प्रतिदिन कहे।

कीर्ति के योगः—

यस्य प्रसूतौ पुरपे पुरस्थे जातः स्वयं कीर्त्तियुतः पुमान् सः।
स्वोच्चादिवर्गोपगतेऽङ्गपेऽर्थे विशेषकीर्त्त्या सहितस्तदानीम्॥ १३८॥

जिस के जन्म समय में लग्न में लग्नेश हो वह पुरुष स्वयं कीर्तिवाला होता है। धन में स्वोच्चादि वर्ग गत लग्नेश हो तो उक्त योग में विशेष कीर्ति से युक्त होता है।

सद्दृष्टसंयुत इने धनगेऽङ्गपे खे
किं स्वोच्चगे किमु विलग्नपतौ ससत्त्वे।
सिंहासने सुकृतपे सुरलोकभाग
आकाशपे भवति सद्यशसा समेतः॥ १३९॥

लग्न में शुभ दृष्ट युक्त सूर्य हो और दशम में वा स्वोच्च राशि में लग्नेश हो तो (१) लग्नेश बली हो, सिंहासनांश में नवमेश हो और देवलोकांश में दशमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष उत्तम कीर्ति से युक्त होता है।

कीर्त्तीश्वरे सौम्ययुते शुभांशके पारावतादौ किमु पुण्यलोकिते।
शुभान्तरेऽथो हिमगौ कुलीरगे पारावते पूज्यकवीक्षिते तथा॥ १४०॥

शुभांश में तथा पारावतादि भाग में शुभयुक्त दशमेश हो तो (१) दशमेश यदि शुभ दृष्ट हो अथवा शुभ ग्रहों के अन्तराल में हो तो (२) पारावतांश में कर्क राशि गत चन्द्रमा हो और वह गुरु शुक्र से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्तम कीर्ति से युक्त होता है।

सौम्यग्रहे कीर्त्तिपतौ सुहृल्लवे सत्षष्ठिभागे निजतुङ्गमाश्रिते ।
स्वकीयवर्गोपगतेऽथ वा यदुद्भवे स सत्कीर्त्तिसमन्वितो भवः ॥ १४१ ॥

जिस के जन्म समय में दशमेश शुभग्रह हो और वह मित्रांश में शुभषष्ठ्यंश में स्वोच्च राशि में वा स्ववर्ग में हो तो वह मनुष्य उत्तम कीर्ति से युक्त होता है ।

पुण्येक्षिते प्राक्कुजपे चतुष्टये कोणे ससारे सशुभे ससद्गृहे ।
सिन्ध्वन्तकीर्तिं समुपैति शोभनसंयुक्तयोर्दीक्षणदेहनाथयोः ॥ १४२ ॥
आरोहवीर्य्यान्वितयोः समाप्नुयाद्विख्यातकीर्त्तिं न खलेक्षिते तनौ ।
मित्रे मतीशे विदि वा बलान्विते सकायपे कीर्तिमुपैति विद्यया ॥ १४३ ॥

केन्द्र वा त्रिकोण में शुभ राशि गत बली लग्नेश हो और वह शुभदृष्ट तथा शुभयुक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष समुद्रपर्यंत कीर्ति को प्राप्त होता है । भाग्येश तथा लग्नेश ये दोनों शुभ युक्त हों और वे आरोहबली हों तो उक्त योग में विख्यात कीर्ति को प्राप्त होता है । लग्न वा सुख में पञ्चमेश वा बुध हो और वह पापदृष्ट न हो एवं लग्नेश बली हो तो उक्त योग में विद्या से कीर्ति को प्राप्त होता है ।

अपकीर्ति के योगः—

अशोभनाप्राङ्गलवे खलद्युसत्संसर्गिणि व्योमपतौ क्षयौजसि ।
किं खेऽर्कभौमौ किमु खे खलान्तरेऽघांशेऽथ खेशेऽघगणेऽथ वा त्रिके ॥ १४४ ॥
साग्वभ्रपे वा भवखे खले किमु नीचग्रहेऽङ्गे मिहिरेक्षिते खले ।
खे लग्नपेऽघे सतमे चतुष्टये तदाऽपकीर्त्या सहितः समुद्भवः ॥ १४५ ॥

क्रूर षष्ठ्यंश में निर्बल दशमेश हो और उसका पापग्रह से सम्बन्ध हो तो (१) दशम में सूर्य मङ्गल हो तो (२) दशम स्थान में पापांश हो और वह पापन्तराल में हो तो (३) पापवर्ग में दशमेश हो तो (४) त्रिक में राहु युक्त दशमेश हो तो (५) लाभ तथा दशम में पापग्रह हो तो (६) लग्न में नीच राशि गत पापग्रह हो और वह सूर्य से दृष्ट हो, दशम में पापग्रह हो एवं लग्नेश पापग्रह हो और वह राहु से युक्त होकर केन्द्र में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष दुष्कीर्ति वाला होता है ।

अयशस्वी योगः—

यदौषधीशाद् भृगुनन्दनाद् धने त्रिमूर्त्तिपुत्राध्युषितेऽथ दृष्टयोः ।
सुवर्चलाजानिसुवाऽङ्गयातयोर्निहारदीप्त्यास्फुजितोस्तदाऽयशाः ॥ १४६ ॥

चन्द्रमा वा शुक्र से द्वितीय में शनि हो अथवा लग्न में शुक्र तथा चन्द्रमा हो और वे शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगो में यश हीन (अपयश वाला) होता है ।

अपवादी प्रभृति योगः—

विहायसे दुष्कृतदृष्टयुक्ते तारापथाधीश्वर ओजसोने ।
जातोऽपवादी निजकर्म्मकीर्त्यभिमानतेजोबलवार्जितः स्यात् ॥ १४७ ॥

दशम स्थान यदि पापग्रहों से दृष्ट युक्त हो और दशमेश निर्बल हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष अपवादी निजकर्म, कीर्ति, अभिमान, तेज तथा बल से रहित होता है।

अप्रकाश योगः—

कलेवरेश्वरे त्रिके शुभेतरान्वितेक्षिते।
किमूग्रराशिमाश्रितेऽप्रकाशकः पुमान्भवेत् ॥ १४८ ॥

त्रिक में लग्नेश हो और वह पाप युक्त दृष्ट हो अथवा पाप ग्रह की राशि में लग्नेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष अप्रकाश (अप्रसिद्ध) होता है।

व्यापारी योगः—

व्यापारी खे मृगधरजनौ वाथ राज्ये शुभानां
दृष्ट्याधिक्येऽथ दिवि तनुपेऽथोदयाभ्रेशयोगे।
किं कृत्येशे मतिगुरुफले कण्टके चारुदृष्टे
तद्वत्खेशे नभसि सशुभे मानशीलस्तथा स्यात् ॥ १४९ ॥

दशम में लग्नेश में बुध हो तो व्यापारी होता है। दशम में बहुत शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो (१) दशम में लग्नेश हो तो (२) लग्नेश तथा दशमेश का योग हो तो (३) पञ्चम नवम लाभ वा केन्द्र में दशमेश हो और वह शुभ दृष्ट हो तो उक्त योगों में व्यापारी होता है। दशम में शुभ युक्त दशमेश हो तो मानशील तथा व्यापारी होता है।

सिंहासनप्राप्ति योगः—

दैवोदयाम्बुदयिता यदि मूढनीच—
मुक्ताः खगा वपुषि खेश उतेक्षितेऽङ्गम्।
किं खाङ्गबान्धवधवा दिवि कृत्यपेऽङ्ग—
सम्बन्धिनीह किमु सौख्यपतौ सितेज्यौ ॥ १५० ॥

धर्म्मेऽम्बुपे तनुजकेन्द्रपथेऽङ्कपे वा
स्वर्क्षेषु कार्थधनपेषु शपे पुरे वा।
दाने घने बलयुते शुभदे धनेशे
केन्द्रे सतुङ्गभवने किमु सार्थनाथैः ॥ १५१ ॥

पुण्यैश्चतुष्टयगतैः पथि पुण्यदृष्ट
उच्चग्रहोऽर्थ उत कण्टक उत्तमाख्यैः।
क्रूरैस्त्रिलाभरिपुगैः किमु कायकेन्द्रे
चारुग्रहे तपसि तुङ्गखगेऽर्थनाथे ॥ १५२ ॥

केन्द्रेऽथ खेऽङ्गशकपा बलिना खपेन
युक्ताः किमम्बुपखगौ शपयुक्तदृष्टौ ।
प्राणान्वितौ किमु परस्परराशियातौ
सिंहासनस्य समवाप्तिमुदीरयन्ति ॥ १५३ ॥

दशम में भाग्येश, लग्नेश तथा सुखेश हों और वे अस्तगत तथा नीच राशि में न हों एवं लग्न में दशमेश हो अथवा वह लग्न को देखता हो तो (१) दशम में दशमेश, लग्नेश तथा सुखेश हों और लग्न से दशमेश का सम्बन्ध हो तो (२) सुख में शुक्र गुरु हों, नवम में सुखेश हो और पञ्चम केन्द्र वा नवम में नवमेश हो तो (३) अपनी अपनी राशि में सुखेश, धनेश तथा लग्नेश हों और लग्न में नवमेश हो तो (४) नवम तथा लग्न में बली शुभ ग्रह हो और केन्द्र में उच्च राशि गत धनेश हो तो (५) केन्द्र में धनेश युक्त शुभ ग्रह हो, नवम स्थान शुभ दृष्ट हो और धन में उच्च राशि गत ग्रह हो तो (६) केन्द्र में शुभ ग्रह हो और तृतीय, षष्ठ तथा एकादश में पाप ग्रह हों तो (७) लग्न वा केन्द्र में शुभ ग्रह हो, लग्न में उच्च राशि गत ग्रह हो और केन्द्र में धनेश हो तो (८) दशम में सुखेश, लग्नेश तथा नवमेश हों और वे बली दशमेश से युक्त हों तो (९) चतुर्थेश तथा दशमगत ग्रह ये दोनों बली तथा नवमेश से युक्त दृष्ट हों अथवा चतुर्थेश तथा दशमस्थ ग्रह परस्पर एक दूसरे की राशि में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य को सिंहासन की प्राप्ति को कहते हैं।

सिंहासन प्राप्ति समय परिज्ञानः—

दाये हृतौ हृदीशस्य दशायां तद्भपस्य वा ।
तदीयान्तर्दशां प्राप्ते सिंहासनमवाप्नुयात् ॥ १५४ ॥

चतुर्थेश की दशा तथा अन्तर्दशा में वा चतुर्थेश की अधिष्ठित राशि के स्वामीकी दशा में दशमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा के आनेपर मनुष्य सिंहासन को पाता है।

राजाधिराज योगः—

षट्खेटैर्निजतुङ्गगैरथ खपे नीरे कपे कर्म्मणि
कोणाधीशनिरीक्षितेऽथ धिषणाकल्याणगेहाधिपौ ।
साङ्गेशावपकामकण्टकगतौ किं चन्द्रतो विक्रमे
कृष्णेनाध्युषिते जले बुधकवी आये गिरीशोऽथ वा ॥ १५५ ॥

गौरः पौरगतो भगः स्मरकयोर्वक्रङ्गते भे मतौ
किं खेऽस्त्रेऽर्च्यरवी अजे पथि भविद्ग्लावां समाजोऽथ वा ।
भीर्वङ्गे सबुधे गुरौ सशफरे कौर्प्ये सनाथे कुजा-
र्काभ्यां मे सहये यमे फलगते राजाधिराजो भवेत् ॥ १५६ ॥

यदि जन्म समय में स्वोच्च राशि में छः ग्रह हों तो (१) सुख में दशमेश, दशम में सुखेश हों और वह त्रिकोणेश से दृष्ट हो तो (२) सप्तम रहित केन्द्र में पञ्चमेश तथा नवमेश हों और वे लग्नेश से युक्त हों तो (३) चन्द्रमा से तृतीय में शनि तथा सूर्य हों, सुख में बुध शुक्र हों और लाभ में गुरु हो तो (४) लग्न में

गुरु, सप्तम वा सुख में सूर्य और पञ्चममें वक्री शुक्र हों तो (५) दशम में मङ्गल, मेष में गुरु सूर्य और नवम में शुक्र, बुध तथा चन्द्र हों तो (६) कन्या लग्न में बुध हो, मीन में गुरु हो, वृश्चिक में मङ्गल सूर्य हों, धनु में शुक्र हो और लाभ में शनि हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजाधिराज (सम्राट्) होता है ।

दिनकराश्रिततुङ्गपदोऽङ्कगो रिपुगतो रुधिरोऽनुजगः शनिः ।
कविजनिः कुलगः किमुतेनजः पथि निजोच्चगतेऽसृजि सूनुगैः ॥ १५७ ॥

भृगुजविद्धिषणैर्यदि वाऽखिलैर्गगनगैश्चरराशिगतैः किमु ।
मतिपतिः सबलोऽत्र समन्वये शखपयोः सति कण्टकभे तथा ॥ १५८ ॥

नवम में उच्च राशि गत सूर्य, षष्ठ में भौम, तृतीय में शनि और दशम में शुक्र हो तो (१) नवम में शनि, स्वोच्च राशि में मङ्गल और पञ्चम में शुक्र, बुध तथा गुरु हों तो (२) चर राशियों में समस्त ग्रह हों तो (३) पञ्चमेश बली हो और केन्द्र में नवमेश दशमेश का योग हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजाधिराज (सम्राट्) होता है ।

मनोरथेशे यदि गोपुरेऽप्ये गीर्वाणलोके धनदीक्षणेनयोः ।
पारावते किं सकला झपालिगोस्त्रीषूत पञ्चास्यघटाश्वयुग्मगैः ॥ १५९ ॥

सर्वग्रहैर्वैणघटाङ्गनाधनुः सिंहेषु वा ज्ञेनकुजेज्यभेषु च ।
कुम्भेऽखिला वेज्यबुधेन्दुभेषु ते राजाधिराजो जन एषु जायते ॥ १६० ॥

गोपुरांशमें लाभेश, देवलोकांश में दशमेश और पारावतांश में धनेश नवमेश हों तो (१) मीन, वृश्चिक, वृष तथा कन्या में समस्त ग्रह हों तो (२) सिंह, कुम्भ, धनु तथा मिथुन में समस्त ग्रह हों तो (३) मकर, तुला, कन्या, धनु, तथा सिंह में समस्त ग्रह हों तो (४) बुध की (३।६) राशि, रवि की (५) राशि मंगल की (१।८) राशि, गुरु की (९।१२) राशि में और कुम्भ में सब ग्रह हो तो (५) गुरु की (९।१२) राशि बुध की (३।६) राशि और चन्द्र की (४) राशि में समस्त ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजाधिराज (सम्राट्) होता है ।

राजयोगः—

उपचयगृहयातैः शोभनाङ्गाधिपैर्वा
तिमिररुधिरचन्द्रैश्छिद्रतैर्वा चराङ्गे ।
जनुषि सपथनाथे यस्य सिंहासनांशे
द्युनधनवनमाने नैषु योगेषु राजा ॥ १६१ ॥

उपचय (३।६।१०।११) में शुभ ग्रह तथा लग्नेश हों तो (१) पञ्चम में राहु, भौम तथा चन्द्रमा हों तो (२) सप्तम लग्न सुख वा दशम में नवमेश हो और वह सिंहासनांश में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजा होता है ।

स्थिरोद्गमाधिपेऽम्बरे चतुष्टयेऽमरार्चिते ।
किमात्मजे क्षमातले विधीशभागपे स राट् ॥ १६२ ॥

लग्न में स्थिर राशि हो और उस का स्वामी दशम में हो एवं केन्द्र में गुरु हो अथवा पञ्चम में वा चतुर्थ में नवमेश का नवांश का स्वामी हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजा होता है।

मतान्तर से राज योग:—

सर्वैः खगैर्वृषभकार्मुककामकुम्भ–
कन्याहरीत्थसिगतैर्नृपतिर्यशस्वी ।
गोतौल्यजेत्थसिभगैर्निखिलाचलेशः
केन्द्रेऽखिलैः सतिमिगोतुरगैः क्षितीशः ॥ १६३ ॥

वृष, धनु, मिथुन, कुम्भ, कन्या, सिंह तथा मीन में समस्त ग्रह हों तो यशस्वी राजा होता है। वृष, तुला, मेष तथा मीन में समस्त ग्रह हों तो समस्त पृथ्वीका स्वामी होता है। केन्द्र में मीन वृष तथा धनु राशि गत समस्त ग्रह हों तो पृथ्वीका स्वामी (राजा) होता है।

कन्याजतौलिकुटकेसरिगैः समै राड्
बह्वर्थदेशपतिरम्बुसहोत्थधीस्थैः ।
राजा भवेत्सुकृतवान् घनकामगौ द्वौ
द्वौ शस्वगौ त्रिमतिकेष्वितरैर्विहङ्गैः ॥ १६४ ॥

कन्या, मेष, तुला कुम्भ तथा सिंह में समस्त ग्रह हों तो राजा होता है। सुख, सहज तथा सुत में समस्त ग्रह हों तो बहुत धन तथा देशका स्वामी होता है। लग्न तथा सप्तम में दो ग्रह हों, नवम तथा द्वितीय में दो ग्रह हों एवं तृतीय, पञ्चम तथा चतुर्थ में अन्य तीन ग्रह होंतो पुण्यात्मा राजा होता है।

भूपो यशस्वी सकलैस्तनूविधुयुक्तैर्नरेशो भवभाग्यवर्त्तिनः ।
भव्या अभव्यैर्गगनारिगामिभिरथाङ्गमानानुगगामिनोऽमलाः ॥ १६५ ॥

सोर्ज्जाः कुजार्क्योर्भवभावुकस्थयोर्गुणाभिरामो मनुजाधिनायकः
वर्गोत्तमांशे वपुषि क्षपाप्रभौ महाबिलानन्यजनीरयायिभिः ॥ १६६ ॥

मृगाङ्कमुक्तैर्द्युचरैर्निरीक्षिते नृपोऽथ दास्रे सभ उद्गमोपगे ।
निरीक्ष्यमाणे निखिलैर्नभश्वरैः सपत्नहा राजकुलाग्रजो भवः ॥१६७॥

लग्न में तथा चन्द्रमा के साथ समस्त ग्रह हों तो यशस्वी राजा होता है। लाभ तथा नवम में शुभग्रह हों एवं दशम तथा षष्ठ में पापग्रह हों तो राजा होता है। लग्न, दशम तथा तृतीय में बली शुभग्रह हों एवं लाभ तथा नवम में मङ्गल शनि हो तो सर्वगुण सम्पन्न राजा होता है। वर्गोत्तमांश में लग्न वा चन्द्रमा हो और वह दशम, सप्तम तथा चतुर्थगत चन्द्ररहित ग्रहों से दृष्ट हो तो राजा होता है। लग्न में अश्विनी नक्षत्रगत शुक्र हो और वह सब ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष राजवंश में श्रेष्ठ तथा शत्रुजनों का नाश करने वाला राजा होता है।

त्र्याद्यैर्नभोगैर्निजभागमाश्रितैर्विहाय नीचांशकमेकखेचरः ।
कल्पोपगो भूपइहार्थसंयुतः पञ्चादिकैः स्वांशगतैः खगैस्तथा ॥ १६८ ॥

स्वांश में तीन प्रभृति ग्रह हों एवं लग्न में एक ग्रह हो और वह नीचांशक में न हों तो सम्पत्तिमान् राजा होता है। यदि स्वांश में पाँच प्रभृति ग्रह हों तो भी सम्पत्तिमान् राजा होता है।

पोष्ये ऽपनीचारिगृहङ्गते भृगौ कलेवरेशे सबले क्षमाधिपः ।
लक्ष्मीसहोत्थे कविमात्रवीक्षिते निशि स्वभागे किमधीष्टमे नृपः ॥ १६९ ॥

नीचराशि तथा शत्रु राशि को छोड़कर शेष राशि गत शुक्र यदि धन में हो और लग्नेश बली हो तो राजा होता है। रात्रि का जन्म हो, स्वांश में वा अधिमित्र राशि में चन्द्रमा हो और वह केवल शुक्र से दृष्ट हो तो राजा होता है।

सस्वांशके मीनधने कवौ कुपः स्वोच्चेऽब्जदृष्टे सबलेऽङ्गपे नृपः ।
विहाय नीचारिलवं निजोच्चगे केन्द्रे धनेशे विखगे महीपतिः ॥ १७० ॥

मीन लग्न में वर्गोत्तमांश हो और उस में शुक्र हो तो राजा होता है। स्वोच्च राशि में बली लग्नेश हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट हो तो राजा होता है। केन्द्र में उच्च राशि गत लग्नेश हो और वह नीचांश वा शत्रु नवांश में न हो एवं ग्रह से रहित हो तो राजा होता है।

पुण्ये सतुङ्गहितभे ऽखिलगात्रचन्द्रे-
ऽस्वक्रोडयोः स्वखगयोः कुपतिः सवीर्ये ।
पूर्णे विधौ तनुमृते यदि कण्टकस्थे
दृष्टे सितेन गुरुणा च भवेन्महीपः ॥१७१॥

नवम में उच्च राशि गत वा मित्र राशि गत पूर्ण चन्द्रमा हो, द्वितीय में भौम और दशम में शनि हो तो राजा होता है। लग्न को छोड़कर अन्य केन्द्र स्थान में पूर्ण चन्द्रमा हो और वह शुक्र तथा गुरु से दृष्ट हो तो राजा होता है।

एकः खगः परमतुङ्गगतोऽधिमित्र-
दृष्टस्तथाऽकफलयोः सबले सितेऽथो ।
द्वित्रिद्युचारिषु निजोच्चगतेषु सोर्ज्जे
सोभे सकार्कीणि तनौ क्षितिपश्च पूज्यः ॥१७२॥

यदि जन्मसमय में परमोच्च में एक ग्रह हो और वह अधिमित्र ग्रह से दृष्ट हो तो राजा होता है। व्यय वा लाभ में बली शुक्र हो तो राजा होता है। स्वोच्च राशि में दो वा तीन ग्रह हों और कर्क लग्न में बली चन्द्रमा हो तो मान्य राजा होता है।

सर्वे ऽमलाश्रितिगृहेषु खलैः खलग्न-
संस्थैर्नृपो मुहिरगे मिहिरे सनेमौ ।

तुङ्गादिवर्गसहितेऽमलपङ्कदृष्टे
ऽनन्तेशिताऽतिचपलः किमु तत्समानः ॥ १७३ ॥

उपचय में सब शुभ ग्रह हों और दशम तथा लग्न में पाप ग्रह हों तो राजा होता है। सप्तममें स्वोच्चादि वर्ग गत सूर्य हो और वह चन्द्रमा से युक्त हो एवं शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो अति चञ्चल राजा वा उस के समान होता है।

मित्रेक्षिते प्राक्कुजगे कुजे साजाश्विणपे राज्यकरः स्ववीर्यात्।
सूरीन्दुसूर्यैः सहजाङ्कधीस्थैः सोऽर्जैर्नरैडैलविलोपमः सः ॥ १७४ ॥

लग्न में मेष, धनु वा मकरराशिगत मङ्गल हो और वह मित्र दृष्ट हो तो अपने बल से राज्य करने वाला होता है। तृतीय, नवम तथा पञ्चम में गुरु, चन्द्र तथा सूर्य हों और वे बली हों तो कुबेर के समान राजा होता है।

यः खेचरो नीचगतो जनौ तद्भेशोऽपि तत्तुङ्गपतिः स पौरात्।
तुषारभासः किमु कीचकस्थः स्याच्चक्रवर्त्ती नृपतिः सपुण्यः ॥ १७५ ॥

जन्म समय में जो ग्रह नीच राशि में हो उस का स्वामी वा नीच राशि गत ग्रह की उच्च राशि का स्वामी यदि लग्न से वा चन्द्रमा से केंद्र में हो तो पुण्यात्मा चक्रवर्त्ती राजा (सम्राट्) होता है।

निम्नस्थखेटांशकपे चतुष्टये चिद्दीक्षणे वा सचरे जनुस्तनौ।
तस्याधिनाथे चरभांशगे यदा धराधिनाथः सुबलोऽथ वा भवेत् ॥१७६॥

केंन्द्र पञ्चम वा नवम में नीच राशि गत ग्रह के नवांश का स्वामी हो, जन्म लग्न में चरराशि हो और उस का स्वामी चरराशि के नवांश में हो तो राजा अथवा अतिबली होता है।

पारावतांशकगते कुलपे कलौ वा
स्वर्क्षोच्चमित्रनवभागगतेऽथ पौरे।
यूपध्वजे सनतभे सखले विनाशे
तद्भांशके सति भवेन्नरनाथनाथः ॥ १७७ ॥

अष्टम में पारावतांश गत दशमेश हो अथवा स्वांश उच्चांश वा मित्रांश में दशमेश हो तो (१) लग्न में नीचराशि गत गुरु हो और अष्टम गत राशि तथा उस की नवांश राशि अर्थात् ६४ वां नवांश यदि पाप युक्त हो तो राजाधिराज (सम्राट्) होता है।

गुरोर्व्यये मन्दगतौ सहोत्थपे भवेऽथ वाऽर्के व्ययगे वपुर्विभौ।
आर्ये नृपेन्द्रो नवमेशगांशपे सुते हिते भूपतिरिन्दुनन्दने ॥ १७८ ॥

जीवेन दृष्टे सहिते नृपप्रियो ज्ञेऽङ्कशदृष्टे यदि कीचकङ्गते ।
यूपध्वजेऽङ्गे किमुकेन्द्रकोणगे मूलत्रिकोणोच्चगते बलान्विते ॥ १७९ ॥
दृष्टे भवेशेन यमे कुभृत्समः क्रमात्सितेज्येन्दुषु खाम्बुमूर्त्तिषु ।
सौरौ स्वभोच्चे किमु सत्सु कर्म्मतः षड्भेषु भूपः किमु सत्समो भवेत् ॥ १८० ॥

व्यय में लग्नेश गुरु हो और गुरु से व्यय में अर्थात् लाभ में सहजेश शनि हो अथवा लग्नेश गुरु से व्यय में अर्थात् लाभ में सूर्य हो तो राजाधिराज होता है । पञ्चम वा चतुर्थ में नवमेश के नवांश का स्वामी हो तो राजा होता है । 'बुध' यदि गुरु से दृष्ट वा युक्त हो तो राजप्रिय होता है । केन्द्र में बुध हो और वह नवमेश से दृष्ट हो एवं लग्न में गुरु हो अथवा केन्द्र वा त्रिकोण में मूलत्रिकोण राशि गत वा उच्च राशिगत बली शनि हो और वह लाभेश से दृष्ट हो तो राजा के समान होता है । दशम में शुक्र, सुख में गुरु, लग्न में चन्द्रमा और स्वराशि वा स्वोच्च राशि में शनि हो अथवा दशम से छः स्थान (दशम, एकादश, द्वादश, लग्न, धन, तथा सहज) में शुभ ग्रह हों तो राजा वा उस के समान होता है ।

वर्गोत्तमांशे बलिनीननन्दने निम्नांशमुक्ते धिषणे वियन्मणौ ।
सद्दृष्टिनन्दांशयुते नृपप्रियः खेऽहौ यमे भव्यपवीक्षिते भवे ॥ १८१ ॥
नाथे तनोर्नीचखगोनिते नृपो निम्नं गतैर्द्वित्रिचतुर्विहङ्गमैः ।
सत्षष्ठिभागस्वलवोच्चभागगैः स्याच्चक्रवर्त्ती वृषकृन्नराधिपः ॥ १८२ ॥

वर्गोत्तमांश में बली शनि हो, नीचांश में गुरु न हो और शुभांश में शुभ दृष्ट सूर्य हो तो राजप्रिय होता है । दशम में राहु और लाभ में नवमेश दृष्ट शनि हो एवं लग्नेश नीच राशिगत ग्रह से युक्त न हो तो राजा होता है । अपनी अपनी नीचराशि में दो तीन वा चार ग्रह हों और वे शुभषष्ठ्यंश में स्वांश में वा स्वोच्चांश में हों तो धर्म करने वाला चक्रवर्ती राजा होता है ।

खाङ्कोदयेभ्यः शुभशिष्टिपौ युतौ सम्बन्धिनौ वित्तगृहाधिपस्य तौ ।
अन्योन्यभस्थौ च परस्परेक्षणचतुष्टयागारगतौ भवोऽर्थभाक् ॥ १८३ ॥
तौ वाहनागारपकारकेक्षितयुक्तौ तदाङ्गी प्रचुरार्थयानभाक् ।
राजाधिराजः सकलक्षितीश्वरः षड्भिः खगैरुच्चगतैर्यदा जनौ ॥ १८४ ॥

दशम, नवम तथा लग्न इन तीन स्थानों से जो कर्मेश तथा भाग्येश हो यदि वे द्वितीयेश के सम्बन्धी हों परस्पर एक दूसरे की राशि में हों परस्पर देखते हों वा परस्पर केन्द्र में हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष धनवान् होता है । यदि वे (कर्मेश भाग्येश) दोनों चतुर्थेश तथा चतुर्थ कारक से दृष्ट युक्त हों तो बहुत धन तथा वाहन वाला होता है । यदि जन्म समय में स्वोच्च राशि में छः ग्रह हों तो राजाधिराज तथा सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी होता है ।

तुङ्गङ्गतैः पञ्चभिरग्रगैर्गुरौ गात्रङ्गते सर्वजनावनीपतिः ।
मेषोदये ज्ञे निजतुङ्गगेऽर्चिते नृपो यमे कुम्भतनौ चतुर्ग्रहैः ॥ १८५ ॥

तुङ्गोपयातैः सकलावनीपतिर्गोलग्नगेन्दुः परिदृश्यते परैः ।
षड्भिः खगैर्बाल्यवयोधराधिपः स्यादेकखेटे निजतुङ्गगेऽन्यकैः ॥ १८६ ॥
स्वमित्रभस्थैर्नृपतुल्यभाग्यवान् सपूज्यचन्द्रासृजि पुष्करांशके ।
वर्गोत्तमे वा नृपतिः शुभेक्षिते चन्द्रेऽम्बरे पूर्णतनौ स्थिरापतिः ॥ १८७ ॥

जिस के जन्म समय में स्वोच्च राशि में पांच ग्रह हों और लग्न में गुरु हो तो वह समस्त मनुष्यों का स्वामी तथा पृथ्वी का स्वामी होता है। मेष लग्न में बुध और स्वोच्च राशि में गुरु हो तो राजा होता है। कुम्भ लग्न में शनि और स्वोच्च राशि में चार ग्रह हो तो सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी होता है। लग्न में वृष राशिगत चन्द्रमा हो और शेष छः ग्रहों से दृष्ट हो तो बाल्य काल में राजा होता है। स्वोच्च में एक ग्रह हो और स्वराशि वा मित्र राशि में अन्य छः ग्रह हों तो राजा के समान भाग्यवान् होता है। पुष्करांश वा वर्गोत्तमांश में गुरु चन्द्र से युक्त भौम हो तो राजा होता है। दशम में शुभ दृष्ट पूर्ण चन्द्रमा हो तो पृथ्वी का स्वामी होता है।

धिषणधिष्ण्यपधिष्ण्यवहं धनुः समकरो रविजोऽम्बुनि सासृजा ।
मृगदृशा हरिजे सहिमांशुजेऽखिलनरेड्महितो बलवान्नृपः ॥ १८८ ॥

धनु में गुरु, चन्द्र तथा शुक्र हों सुख में मकरराशिगत शनि हो, कन्या में मङ्गल हो और लग्न में बुध हो तो समस्त राजाओं का मान्य बलवान् राजा होता है।

विधुयुता वनिताहरिणास्त्रिणः सरुधिरे मिथुने सविधौ तिमौ ।
नरपतिर्निजतुङ्गगतेऽसृजि कलशभे सयमे शफरोदये ॥ १८९ ॥
बलवताऽखिलचन्द्रमसाऽन्विते नरप एणधने सकुजे स्वभे ।
मृगधरेऽथ सभानुकुजार्चितैरविकुरङ्गघटैः क्रमतः कुपः ॥ १९० ॥

कन्या में बुध, मकर मे शनि, धनु में गुरु, मिथुन में मङ्गल और मीन में चन्द्रमा हो तो राजा होता है। स्वोच्च में भौम, कुम्भ में शनि और मीन लग्न में बली पूर्ण चन्द्रमा हो तो राजा होता है। मकर लग्न में मङ्गल और कर्क में चन्द्रमा हो अथवा मेष में सूर्य, मकर में मङ्गल और कुम्भ में गुरु हो तो पृथ्वी का स्वामी होता है।

पुण्यदृष्टियुजि पूर्णपरिज्ञे पौरपेतरयुते क्षितिपालः ।
कर्कटे ससितगौ शुभखेटालोकगे दिविचरैर्यदि सर्वैः ॥ १९१ ॥
मस्तकोदयगतैर्नरनाथः कायपे कुलशयोर्धन इन्दौ ।
भूपतिः खरकरे सपरिज्ञे प्राग्दलेऽश्वजघनस्य महीजे ॥ १९२ ॥
स्वोच्चगे वपुषि सोर्ज्जकुशाङ्गे भूमिपो जितरिपुर्मलिनैर्नो ।
केन्द्रगैरिह गणोत्तमभागेऽर्च्यारभा विदधते महिपालम् ॥ १९३ ॥

यदि पूर्ण चन्द्रमा शुभ दृष्ट हो और लग्नेश को छोडकर अन्यग्रह से युक्त हो तो भूमि का स्वामी होता है। कर्क में चन्द्रमा हो और वह शुभ दृष्ट हो एवं अन्य सब ग्रह शीर्षोदय राशि में हो तो राजा होता है। दशम वा

नवम में लग्नेश हो और लग्नमें चन्द्रमा हो तो भूमि का स्वामी होता है। धनु के पूर्वार्द्ध में चन्द्रयुक्त सूर्य हो, स्वोच्च राशि में मङ्गल हो और लग्नमें बली शनि हो तो शत्रु को जीतने वाला भूमिका स्वामी होता है। केन्द्र में पापग्रह न हो और वर्गोत्तमांश में गुरु, भौम तथा शुक्र हों तो भूमिपति होता है।

भव्याश्चतुष्टयगताः शुभभांशयाता
राकाधिपादुपचये यदि विग्रहेशे।
सम्पूर्णवीर्य्यरहितैर्मलिनैर्बलेन
गीर्वाणनायकसमो मनुजाधिनाथः ॥ १९४ ॥

केन्द्र में शुभ राश्यंशगत शुभग्रह हो और चन्द्रमा से उपचय में लग्नेश हो एवं समस्त पापग्रह निर्बल हों तो उक्तयोग में उत्पन्न मनुष्य बल से इन्द्र के समान राजा होता है।

जम्बालनीड उडुपार्च्चितसम्मितिश्चे–
तुङ्गाभिलाषिणि सहस्रकरे त्रिकोणे।
उर्वीं प्रशास्ति मनुजस्तरणौ निजोच्चे
मूलत्रिकोणभ उतैन्दवकालसूत्रैः ॥ १९५ ॥

स्वस्वांशगैः शशभृतो मृतिदोर्दरस्थै–
र्गोपालकोऽपि धरणीपतिरम्बरस्थैः।
मित्रांशगैर्न रिपुराशिगतैर्न नीचै–
र्नादृश्यगैर्ज्ञभगभेश्वरभैर्बलेशः ॥ १९६ ॥

कर्क में चन्द्र तथा गुरु हों और त्रिकोण में उच्चाभिलाषी अर्थात् मीन राशिगत सूर्य हो तो पृथ्वी को शासन करने वाला (राजा) होता है। स्वोच्चराशि वा मूलत्रिकोण राशि में सूर्य हो और चन्द्रमा से अष्टम, तृतीय तथा षष्ठ में बुध, सूर्य और शुक्र हों एवं वे अपने अपने नवांश में हो तो उक्त योग में ग्वाल वंश में उत्पन्न मनुष्य भी पृथ्वी का स्वामी होता है। यदि दशम में बुध, सूर्य, चन्द्र तथा शुक्र हों और वे मित्रांशक में हों एवं शत्रुराशि में न हों, नीचराशि में न हों तथा अदृश्य भाग में न हों तो भूमिका स्वामी होता है।

सोर्जे भौमे गतवति निजं तुङ्गमर्केन्दुगौरै–
र्दृष्टे भूपो भवति मनुजः कुत्सितोऽप्यम्बरेऽच्छे।
आर्य्येऽनङ्गे सकुलिरगृहे नीरगे निर्मलेन्दौ
मूर्त्तौ चान्द्रौ गदविरहितो रत्नगर्भां प्रशास्ति ॥ १९७ ॥

स्वोच्च राशि में बली भौम हो और वह सूर्य, चन्द्र तथा गुरु से दृष्ट हो तो निन्दित मनुष्य भी पृथ्वी का स्वामी होता है। दशम में शुक्र, सप्तम में गुरु, चतुर्थ में कर्क राशि गत पूर्ण चन्द्रमा और लग्न में बुध हो तो उक्तयोग में उत्पन्न पुरुष रोगरहित तथा पृथ्वी का शासक होता है।

पोष्ये पूज्ये सभृगुतनये भूपतिर्निर्जितारिः
केन्द्रेऽङ्गेशे गगनगृहपे बान्धवस्थे विधीशे ।
लाभे भूपो ज्ञ इनकरगे स्वर्क्षमूलत्रिकोणे
राजेनज्ञौ हितभवनगौ खे शनीन्दू कुजेऽङ्गे ॥ १९८ ॥

भूपो हेलौ हरिहरिजगे व्यच्छभागे स्त्रियां ज्ञे
नीचोऽपीलापतिरुदयधीतारकामार्गयातौ ।
सौरीलाजौ निखिलहिमगौ गौरभस्थे क्षितीशो-
ऽङ्गेशे केन्द्रे बलवति नृपो मित्रदृष्टे नृपेज्ञः ॥ १९९ ॥

धनु में शुक्र युक्त गुरु हो तो शत्रु को जीतने वाला पृथ्वी का स्वामी होता है । केन्द्र में लग्नेश, सुख में दशमेश और लाभ में नवमेश हो तो भूमिका स्वामी होता है। स्वराशि वा मूलत्रिकोण राशि में अस्तंगत बुध हो तो राजा होता है । सुख में सूर्य, बुध हों दशम में शनि, चन्द्र हों और लग्न में भौम हो तो भूमिका स्वामी होता है। सिंह लग्न में सूर्य हो और वह वृषांश वा तुलांश में न हो एवं कन्या में बुध हो तो नीच कुल में उत्पन्न पुरुष भी पृथ्वी का स्वामी होता है। लग्न पञ्चम वा दशम में शनि तथा मङ्गल हों एवं गुरु की (९।१२) राशि में पूर्ण चन्द्रमा हो तो भूमिका स्वामी होता है। केन्द्र में बली लग्नेश हो तो राजा और वह लग्नेश मित्र दृष्ट हो तो राजमान्य होता है ।

एकोऽप्यब्जः पूर्णगात्रः प्रधानवीर्य्योपेतो मानवेन्द्रं विदध्यात् ।
पश्येत्स्वोच्चस्थोऽङ्गपोऽब्जं किमूग्रैस्त्र्यायारिस्थैः पौरपे पुण्यदृष्टे ॥ २०० ॥
राजा सोर्जेऽस्त्रे कुरङ्गोदयस्थेः पुण्येऽपाये पैङ्गलौ पिङ्गलेऽस्ते ।
सेन्दौ भूपश्चञ्चलस्वान्त इन्दौ कृष्णोपेते खायकस्थे नृपालः ॥ २०१ ॥

यदि जन्म समय में एक पूर्ण चन्द्रमा भी प्रधान बलों से युक्त हो तो मनुष्य को राजा करता है। स्वोच्च राशि में लग्नेश हो और वह चन्द्रमा को देखता हो अथवा तृतीय, लाभ तथा षष्ठ में पाप ग्रह हों और लग्नेश यदि शुभ दृष्ट हो तो राजा होता है। मकर लग्न में बली मङ्गल हो, नवम वा व्यय में शनि हो और सप्तम में चन्द्र युक्त सूर्य हो तो चञ्चल हृदय वाला तथा भूमिका स्वामी होता है। दशम लाभ वा सुख में शनि युक्त चन्द्रमा हो तो राजा होता है।

भार्गवेण कलिते व्ययलाभे प्राणिनि द्युदयितेऽश्विपुरस्थे ।
सोडुपे कुभुवि जानुगृहस्थे गोत्रभित्सम इलापतिरङ्गी ॥ २०२ ॥

व्यय वा लाभ में शुक्र हो, धनु लग्न में बली सूर्य हो और दशम में चन्द्र युक्त भौम हो तो इन्द्र के समान भूमिका स्वामी राजा होता है।

केन्द्रगैर्बलयुतैः सुकृतैः सद्वर्गगैरुपचये पुरपाले ।
यज्ञनौ तपसि राजनि राजाऽर्च्येक्षिते वपुषि शेशि नृपालः ॥ २०३ ॥

केन्द्र में शुभवर्गगत बली शुभ ग्रह हों, उपचय में लग्नेश हो और नवम में चन्द्रमा हो तो राजा होता है। लग्न में नवमेश हो और वह गुरु से दृष्ट हो तो राजा होता है।

खोच्चोदये कृतपदो दशसप्तिरर्के
मीनाश्रिते सति कुपो निजतुङ्गयातः।
एकोऽपि पुष्करचरः सखिभिः प्रदृष्टो
भूनायकं गुणयुतं विदधीत जातम् ॥ २०४ ॥

लग्न में स्वोच्च राशि गत चन्द्रमा हो और मीन में सूर्य हो तो पृथ्वी का स्वामी होता है। स्वोच्च राशि में एक ग्रह भी हो और वह मित्र दृष्ट हो तो गुणवान् तथा पृथ्वीका स्वामी होता है।

ग्लौधीमतोर्गवि पुरेशि कुसूनुकाल-
दृग्वर्जिते बलिनि कोणगतेऽवनीशः।
गोरेक्षिते वपुषि केश उताङ्कस्थे-
ऽङ्केशे सजीवभृगुजे सधनो नृपालः ॥ २०५ ॥

वृषराशि में चन्द्र तथा गुरु हो त्रिकोणमें बली लग्नेश हो और वह भौम शनिसे दृष्ट न हो तो पृथ्वी का स्वामी होता है। लग्न में सुखेश हो और वह गुरुदृष्ट हो अथवा नवम वा सुख में भाग्येश हो और वह गुरु शुक्र से युक्त हो तो धनी राजा होता है।

निधानगो विधीश्वरः स्वकीयमन्दिरं यदा।
समीक्ष्य मानवेश्वरं करोति वित्तसंयुतम् ॥ २०६ ॥

द्वितीय में नवमेश हो और वह नवम स्थान को देखता हो तो धनी राजा करता है।

नृपतुल्य योगः—

प्रान्त्यस्थाने प्रवसति गुरौ विक्रमेशे दिनेशे
प्राप्तौ पङ्गुर्यदि नृपसमः षट्खगैः स्वीयभस्थैः।
वेने सौम्याम्बररसलवे वाथ वर्गोत्तमांशे
सूनौ किं वा गुरुशशभृतोर्जायते राजतुल्यः ॥ २०७ ॥

व्यय में गुरु हो, तृतीयस्थान का स्वामी सूर्य हो और लाभ में शनि हो तो राजा के समान होता है। स्वराशि में छः ग्रह हों अथवा शुभ षष्ठ्यंश में सूर्य हो अथवा वर्गोत्तमांश में वा पञ्चम में गुरु चन्द्र हों तो उक्त योगों में राजा के समान होता है।

चारुग्रहांशमधिगम्य शपो विनाशे
नीचोदयेऽमरगुरौ किमु वीर्य्ययुक्ते
चन्द्रे पुरेतरचतुष्टय कोणयाते
वागीशभान्यतरवीक्षणभाजि तद्वत् ॥ २०८ ॥

अष्टम में शुभांश गत नवमेश हो और लग्न में नीच राशि गत गुरु हो अथवा लग्न के अतिरिक्त केन्द्र में वा त्रिकोण में बली चन्द्रमा हो और वह केवल गुरु शुक्र से दृष्ट हो तो राजा के समान होता है ।

स्वर्क्षे तुङ्गे स्थितवति शनौ शीतलांशौ शरीरे
सौख्ये सूरा उशनसि कुलेऽथो पुरेशे सशौर्य्ये ।
वर्त्तन्ते सद्गगनगतयः केन्द्रकोणेषु वैरि-
त्र्यायेषूग्रा यदि किमुऽघनेर्च्ये बुधे शेशदृष्टे ॥ २०९ ॥

केन्द्रस्थे वाऽधरगभविभूच्चेश्वरे कण्टके वा
नीचं प्राप्ता यदि दिविचराः स्वोच्चभागोपगा वा ।
खेशे पारावतलवमुखे स्वोच्चगे सेष्टभागे
किं मानादासहजगृहगैः शोभनै राज्यतुल्यः ॥ २१० ॥

स्वराशि वा स्वोच्च राशि में शनि, लग्न में चन्द्रमा, सुख में गुरु और दशम में शुक्र हो तो (१) लग्नेश बली हो, केन्द्र वा त्रिकोण में शुभ ग्रह हों एवं षष्ठ, तृतीय तथा लाभ में पाप ग्रह हों तो (२) लग्न में गुरु और केन्द्र में नवमेश दृष्ट बुध हो तो (३) केन्द्र में नीच राशि गत ग्रह की नीच राशि के स्वामी की उच्च राशि का स्वामी हो तो (४) स्वोच्चांश में नीचराशिगत ग्रह हों तो (५) पारावतांशादि में स्वोच्च राशि गत तथा मित्र नवांश गत दशमेश हो तो (६) दशम से तृतीयपर्यन्त शुभ ग्रह हों तो उक्त योगों में राजा के समान होता है ।

भूपति योगः—

धनमयोः कुलदीक्षणनाथयोर्यदि परस्परराशिगयोर्जनौ ।
किमुत सप्तखगैर्निजराशिगैरुत हितालयगैर्वसुधाधिपः ॥ २११ ॥

जिस के जन्म समय में लग्न वा चन्द्रमा से दशमेश तथा नवमेश ये दोनों परस्पर एक दुसरे की राशि में हों अथवा स्वराशि में वा मित्र राशि में सात ग्रह हों तो उक्त योगों में भूमिका स्वामी होता है ।

चरपुरे निजतुङ्गगतैर्यमगुरुपतङ्गकुजैरुत तुङ्गगैः ।
झखयमैरपनक्रचरोदये किमु निजोच्चगतैर्गुरुभौमकैः ॥ २१२ ॥

यदि जनावपजूकचरोदये किमपमेषचरोदय उच्चगैः ।
धिषणमन्दकुजैः किमुतोच्चगैर्हकयमै रपकर्कचरोदये ॥ २१३ ॥

अथ कलावति कर्कमुपेयुषि यदि निजोच्चगयो रविगौरयोः ।
किमिनभानवयोरुत कारयोरुत यमाङ्गिरसोरुत हेज्ययोः ॥ २१४ ॥

मृदुहयोर्यदि वाऽन्यतरे पुरे किमुत सिन्धुजयोः कुलिरोदये ।
अथ विधौ निजवेश्मनि साज इने हरिजगे स कुपो जनने यदि ॥ २१५ ॥

लग्न में चर राशि हो और स्वोच्च राशि में शनि, गुरु, सूर्य तथा भौम हो तो (१) लग्न में मकर के अतिरिक्त चर राशि हो और स्वोच्च राशि में गुरु, सूर्य तथा शनि हों तो (२) लग्न में तुला राशि के अतिरिक्त चर राशि हो और स्वोच्च राशि में गुरु, भौम तथा सूर्य हों तो (३) लग्न में मेष राशि के अतिरिक्त चर राशि हो और स्वोच्च राशि में गुरु, शनि तथा मङ्गल हों तो (४) लग्नमें कर्क राशि के अतिरिक्त चर राशि हो और स्वोच्च राशि में मङ्गल, सूर्य तथा शनि हों तो (५) कर्क में चन्द्रमा हो और कर्क वा मेष लग्न हो उस में स्वोच्चगतगुरु वा सूर्य हो तो (६) कर्क में चन्द्रमा हो, मेष वा तुला लग्न हो उस में स्वोच्च गत सूर्य वा शनि हो तो (७) कर्क में चन्द्रमा हो, मकर वा मेष लग्न हो उस में स्वोच्च गत भौम वा सूर्य हो तो (८) कर्क में चन्द्रमा हो, तुला वा कर्क लग्न हो उस में स्वोच्च गतशनि वा गुरु हो तो (९) कर्क में चन्द्रमा हो, मकर वा कर्क लग्न हो उस में स्वोच्च गत मङ्गल वा गुरु हो तो (१०) कर्क में चन्द्रमा हो, तुला वा मकर लग्न हो उस में स्वोच्च गत शनि वा मङ्गल हो तो (११) कर्क लग्न में चन्द्र तथा गुरु हों तो (१२) कर्क में चन्द्रमा हो और लग्न में मेष राशिगत सूर्य हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष भूमिका स्वामी होता है ।

जूकोदये समृदुगे सितगौ सकर्के
वैणोदये सकुटिले खगृहे विधौ वा ।
नक्रोदयेऽब्जशशिनोः सखौ हये वा—
हर्य्योर्हयेऽसृजिमृगे सयमे घने वा ॥ २१६ ॥
वर्गोत्तमेऽङ्गे हिमदीधितीतरैश्चतुर्मुखैरम्बरगैर्विलोकिते ।
किं शीतगा उत्तमवर्गमाश्रिते दृष्टे विहङ्गैश्चतुरादिभिः कुपः ॥ २१७ ॥

तुला लग्न में शनि हो और कर्क में चन्द्रमा हो तो (१) मकर लग्न में मङ्गल हो और कर्क में चन्द्रमा हो तो (२) मकर लग्न में भौम तथा चन्द्रमा हों, धनु में सूर्य हो तो (३) धनु में सूर्य चन्द्रमा हों, मकर में मङ्गल हो और लग्न में शनि हो तो (४) लग्न में वर्गोत्तमांश हो और वह चन्द्रमा के अतिरिक्त चार प्रभृति ग्रहों से दृष्ट हो तो (५) वर्गोत्तमांश में चन्द्रमा हो और वह चार प्रभृति ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष भूमि का स्वामी होता है ।

मेषोक्षकुम्भान्यतमोदयाद्रिषु क्रमेण भानूडुपपङ्गुवत्सु चेत् ।
सास्रेऽलिभे ज्ञे सयमे गुरौ हरात्रथाजलग्ने सकुजे सभे घटे ॥ २१८ ॥
सेज्ये कुलीरे सहिमांशुजोष्णगौ रोगे यमेन्द्वन्यतरे निजोच्चगे ।
वाश्वेऽर्च्चितेऽङ्गे तपनेऽब्जमन्दयोः कामेऽथ सेन्दौ वृषभोदये हरौ ॥ २१९ ॥
सेने स्मरेऽर्च्ये दिवि मन्दगेऽथवैणेसासृजीने हरिगे घटे यमे ।
झषोदयेऽब्जे किमु तुङ्गभोदये हेम्नासुरेज्यान्यतरे धनुर्द्धरे ॥ २२० ॥
सराजगौरे हरिणाद्यखण्डगे कुजेऽथ सेज्ये कुलिरे समङ्गले ।
अजे तयोरन्यतरे पुरेऽथवा सपूर्णसोमासितशोणिते शुभे ॥ २२१ ॥
वाजे सभानौ भवगेषु चन्द्रवित्सितेषु कर्कोदयगे गुरावुत ।
भीरूदये सेन्दुज इन्दुगौरयोः स्मरे सिते खे तनुजेऽर्कजासृजोः ॥ २२२ ॥

किं कर्किलग्ने सकुजेनऩन्दने वने खगैर्ज्ञेज्यपतङ्गभैस्ततः ।
चतुर्षु खेटेषु निजोच्चराशिषु कुम्भोदये सोशनासि क्षमाधिपः ॥ २२३ ॥

लग्न में मेष गत सूर्य वृषगत चन्द्रमा वा कुम्भ गत शनि हो, वृश्चिक में भौम हो मिथुन में बुध और सिंह में गुरु हो तो (१) मेष लग्न में मङ्गल, तुला में शुक्र, कर्क में गुरु, षष्ठ मे बुध युक्त सूर्य और स्वोच्चराशि में शनि वा चन्द्रमा हो तो (२) धनु में गुरु, लग्न में सूर्य और सप्तम में चन्द्र शनि हों तो (३) वृष लग्न में चन्द्रमा, सिंह में सूर्य, सप्तम में गुरु और दशम में शनि हो तो (४) मकर में मंगल, सिंह में सूर्य, कुम्भ में शनि और मीन लग्न में चन्द्रमा हो तो (५) लग्न में स्वोच्चराशिगत बुध वा स्वोच्च राशि गत शुक्र हो, धनु में चन्द्र युक्त गुरु हो और मकर के पूर्वार्द्ध में भौम हो तो (६) लग्न में कर्क गत गुरु वा मेष गत भौम हो तो (७) नवम में पूर्ण चन्द्रमा तथा शनि युक्त भौम हो तो (८) मेष में सूर्य, लाभ में चन्द्र, बुध तथा शुक्र हों और कर्क लग्न में गुरु हो तो (९) कन्या लग्न में बुध, सप्तम में चन्द्र तथा गुरु, दशम में शुक्र और पञ्चम में शनि भौम हों तो (१०) लग्न मे कर्क राशि, चतुर्थ में मङ्गल युक्त शनि और दशम में बुध, गुरु, रवि तथा शुक्र हों तो (११) स्वोच्च राशि में चार ग्रह हों और कुम्भ लग्न में शुक्र हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष भूमिका स्वामी होता है ।

यदाऽऽत्मकारकाद् ग्रहात् सुखे मुखे सुते सति ।
किमात्मकारकात्खलौ भुजारिगौ भुवः पतिः ॥ २२४ ॥

आत्मकारक ग्रह से सुख, धन तथा सुख में शुक्र ग्रह हों अथवा आत्मकारक ग्रह से तृतीय तथा षष्ठ में दो पापग्रह हो तो भूमिका स्वामी होता है ।

स्वोच्चस्थास्त्रिमुखाः खगा विदधते भूपालजं भूपतिं
पञ्चाद्यैर्द्युचरैर्निजोन्नतभगैर्भूपोऽन्यवंशोद्भवः ।
सत्सूदग्रगतेषु सौम्यमतिमान् क्रूरः कुपः पाप्मसु
मिश्रव्योमचरेषु मिश्रधिषणः प्रोक्तो महीपालकः ॥ २२५ ॥

तीन प्रभृति ग्रह यदि उच्च राशि में हो तो भूपति वंश में उत्पन्न पुरुष को भूपति करते हैं । पाँचप्रभृति ग्रह यदि स्वोच्च राशि में हो तो अन्यवंश में उत्पन्न हुआ पुरुष भी भूपति होता है । यदि शुभ ग्रह उच्चगत हों तो शुभमतिवाला भूपति और पापग्रह उच्चगत हों तो पापबुद्धि वाला भूपति होता है । एवं मिश्र ग्रहों से मिश्र बुद्धि वाला भूपति होता है ।

उदयगा वनिता विधुभूवहा सकुजहेलिसुते सुतसद्मगे ।
वनगतैर्विधुवाक्यतिभार्गवैर्जनुषि यस्य कुपः स गुणी भवेत् ॥ २२६ ॥

कन्या लग्न में बुध, पंचम में मङ्गल युक्त शनि और सुख में चन्द्र, गुरु तथा शुक्र हों तो उक्त योग में गुणवान् भूपति होता है ।

रोहिणीरमणसाङ्गिनि शौर्य्ये भानु जन्मनि मृगोदयभाजि ।
मेदिनीतनययोगिनि युग्मेऽन्त्ये गिरीशयुजि विद्युजि भाग्ये ॥ २२७ ॥

भूपतिः स पृथुकीर्त्तिगुणाढ्यः पौरपूर्वदलगा बलयुक्ताः ।
स्वोच्चगा दिविचराः कुप आयुः प्राग्दले त्वितरथा परभागे ॥ २२८ ॥

तृतीय चंद्रमा, मकरलग्न में शनि, मिथुन में भौम, व्यय में गुरु और भाग्य में बुध हो तो विस्तीर्ण कीर्ति वाला तथा गुणवान् भूपति होता है। यदि लग्नके पूर्वार्ध में स्वोच्चगत बली ग्रह हो आयु के पूर्वार्द्ध में भूपति और उक्त प्रकार से विपरीत हो तो आयु के उत्तरार्ध में भूपति होता है।

भूपति तथा मंत्री योगः—

यदि विशां जनने शितिवाससि वणिजवर्त्तिनि जैवघनेऽथ वा ।
रुधिरराहुवति द्विषि कर्म्मणि ज्ञरविभाज्यथ लेखगुरौ गले ॥ २२९ ॥

समिति भेऽथ तमे मिथुनाश्रिते सरुधिरे हरिभेऽथ पदे पुरे ।
सविधुभूमिजभाज्यथ भास्करे भवचतुष्टयकोणगृहङ्गते ॥ २३० ॥

शुभखतर्कलवेऽथ शपे चिति पथिगृहे मतिपेऽथ विधोः खपे ।
बलवति स्वशकण्टकगामिनि क्षितिपजः क्षितिपः सचिवोऽन्यजः ॥ २३१ ॥

मीन वा धनु लग्न हो और तुला में शनि हो तो (१) षष्ठ में भौम तथा राहु हों और कर्म में बुध तथा सूर्य हों तो (२) तृतीय में गुरु और अष्टम में शुक्र हो तो (३) मिथुन में राहु और सिंह में भौम हो तो (४) दशम वा लग्न में चन्द्रयुक्त मङ्गल हो तो (५) लाभ केंद्र वा त्रिकोण में शुभ षष्ठ्यंश गत सूर्य हो तो (६) पञ्चम में नवमेश और नवम में पञ्चमेश हो तो (७) चन्द्रमा से दशम स्थान का स्वामी बली हो और द्वितीय नवम वा केन्द्र में हो तो उक्त योगों में भूपतिकुल में उत्पन्न पुरुष भूपति और अन्य कुल में उत्पन्न पुरुष मंत्री होता है।

जीवभे नियतिनायकसक्ते धीपदृष्टिघटिते सभखे वा ।
तुङ्गमन्दिरगतः खग एकोऽपीष्टदृष्टिघटितो यदि तद्वत् ॥ २३२ ॥

गुरु की (९।१२) राशि में नवमेश हो और दशम में शुक्र हो और वह पञ्चमेश से दृष्ट हो अथवा स्वोच्च राशि में एक ग्रह भी हो और वह मित्र ग्रह से दृष्ट हो तो भी उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष भूपति कुल में भूपति और अन्य कुल में मंत्री होता है।

अपमनोभवकण्टकाचित्तपःपतय एकगृहेऽथ धरातले ।
सकविनिर्जरराजपुरोहिते किमु सगौरकलावति कर्कगे ॥ २३३ ॥

अथ वशाभ उषेश्वरविद्वति किमुत कोणचतुष्टययायिनोः ।
दनुजराजपुरोहितवाग्मिनोः क्षितिपभूः क्षितिपः सचिवोऽन्यभूः ॥ २३४ ॥

एकराशि में सप्तम के अतिरिक्त केन्द्र के स्वामी, पञ्चमेश तथा नवमेश हों तो (१) सुख में शुक्रयुक्त गुरु हो तो (२) कर्क में गुरु युक्त चन्द्रमा हो तो (३) कन्या में चन्द्रमा तथा बुध हो तो (४) त्रिकोण वा केन्द्र में शुक्र तथा गुरु हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजकुल में राजा और अन्यकुल में मंत्री होता है।

प्रभौ प्रभाणां निजतुङ्गमाश्रिते मन्देन सम्प्राप्तबलेन संयुते।
यद्वाऽखिलाः स्वान्त्यतनूसुमेषुषु तिष्ठेयुराकाशचरास्तदा तथा॥ २३५॥

स्वोच्च राशि में सूर्य हो और वह बली शनि से युक्त हो अथवा द्वितीय, द्वादश, लग्न तथा सप्तम में समस्त ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजकुल में राजा और अन्य कुल में मंत्री होता है।

साश्वः सूरिर्नियतिगृहगो वासराणां विधाता
शीतांशुश्चोदयभवनगौ मङ्गलेनाभ्रगेन।
पङ्गौ प्राप्तावुत हृदि गुरुः खे हरी देह आर्कौ
भासृग्विद्भिर्भवभवनगैर्भूपतिर्वाथ मंत्री॥ २३६॥

नवम में धनुगत गुरु हो, लग्न में सूर्य तथा चन्द्रमा हों, दशम में मङ्गल हो और लाभ में शनि हो अथवा सुख में गुरु, दशम में सूर्य, चन्द्र, लग्न में शनि और लाभ में शुक्र, भौम तथा बुध हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजकुल में राजा और अन्य कुल में मंत्री होता है।

राज्ये सुधासूतिरिनोत्थ आये स्वे सज्ञभौमेऽम्भसि साच्छभानौ।
लग्नेऽर्चिते वाम्बुनि भे मृगाङ्के सकर्कटे पुण्यगते तथैव॥ २३७॥

दशम में चन्द्रमा, लाभ में शनि, धन में बुधयुक्त मङ्गल, सुख में शुक्रयुक्त सूर्य और लग्न में गुरु हो अथवा सुख में शुक्र और नवम में कर्कगत चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजकुल में राजा और अन्य कुल में मंत्री होता है।

गोपुराननगते बलिगौरे पञ्चमेशकलिते किमु पुण्ये।
पौरपे शिरसि खेशि महीपो भूपभूरितरजो यदि मंत्री॥ २३८॥

गोपुरादि वर्ग में बली गुरु हो और वह पञ्चमेश से युक्त हो अथवा नवम में लग्नेश और लग्न में कर्मेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजकुल में राजा और अन्य कुलमें मंत्री होता है।

तनयभवननाथो धन्विनाऽऽलिङ्गिताङ्गः
सुकृतखचरशाली कर्म्मभावाधिकारी।
चिति कुपज इलेशोऽमात्य उक्तोऽन्यजातो-
ऽपकुसुमशरकेन्द्रे कोणभे केशि तद्वत्॥ २३९॥

धनूराशि में पञ्चमेश हो और पञ्चम में शुभ युक्त कर्मेश हो तो राजवंश में उत्पन्न पुरुष राजा और अन्य वंश में मंत्री होता है। सप्तम रहित केन्द्र वा त्रिकोण में सुखेश हो तो भी पूर्वोक्त फल होता है।

दशभवनपाली सत्वसद्दृष्टदेहो
वचसि पथि कुमारे कण्टके वर्त्तते चेत् ।
क्षितिपतितनुजातं काश्यपीशं विधत्त
उशनसि दिवि केन्द्रे स्वोच्चगेऽर्च्ये तथैव ।। २४० ।।

द्वितीय, नवम, पञ्चम वा केन्द्र में शुभ दृष्ट दशमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष यदि राजकुल में हो तो राजा और अन्य कुल में हो तो मंत्री होता है । दशम में शुक्र और केन्द्र में स्वोच्च गत गुरु हो तो भी पूर्वोक्त फल होता है ।

पारावतांशे परिवारभर्त्तरि चेत्स्वीक्षिते दक्षसुतेशतः शपे ।
निलिम्पलोकांशगते धराधिपो धराधिपोत्थः सचिवोऽन्यवंशजः।। २४१ ।।

पारावतांश में शुभ दृष्ट द्वितीयेश हो और चन्द्रमा से जो नवमस्थान हो उस का स्वामी यदि देवलोकांश में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष राजकुल में राजा और अन्य कुल में मंत्री होता है ।

राज्य प्राप्ति समय परिज्ञान:—

राज्यस्य लब्धिः कथिताऽभ्रगस्य ग्रहस्य किं कायगतस्य दाये ।
तयोरभावेऽधिबलस्य दाये सद्राजयोगोऽस्तु नरोद्भवे चेत् ।। २४२ ।।

यदि मनुष्य के जन्म समय में वक्ष्यमाण भङ्गरहित उत्तम राजयोग हो तो दशमभावगत ग्रह की दशा में अथवा लग्न गत ग्रह की दशा में राज्यप्राप्ति कही है । यदि दशम और लग्न में कोई ग्रह न हो तो सब राजयोग कारक ग्रहों के मध्य में जो अधिक बली हो उस की दशा के परिपाक काल में राज्यप्राप्ति कही है ।

राजयोग भङ्गपरिज्ञान:—

ये खेचरा नृपतियोगकराः समस्ता
नीचारिखेचरदृशा सहिता यदा ते ।
भूपालयोगजफलं न दिशन्ति काव्य—
पूज्येन्द्विनाः परमनीचलवेषु तद्वत् ।। २४३ ।।

जन्म समय में समस्त राजयोगप्रद ग्रह यदि नीच राशि गत ग्रह से वा शत्रु ग्रह से दृष्ट हों तो राजयोग जनित शुभ फल को नहीं देते हैं । एवं परम नीचांशों में शुक्र, गुरु, चन्द्रमा तथा सूर्य हों तो राजयोगजन्य फल का नाश करते हैं ।

राज्यप्रदैर्मलिनजर्जरदेहरूक्ष—
युद्धाभिलाषिरिपुनीचगृहास्तयातैः ।
किं निम्नगैश्च विकलैः शुभखायपैर्वा
नीचग्रहे नभसि वा हरिजेऽहिनाथे ।। २४४ ।।

ग्लौलोकिते खलखगैस्त्रिभवक्षतस्थै-
रर्कांशुगैः सुखचरैः शुभशून्यकेन्द्रैः ।
वाऽऽर्य्योऽस्तनीचगृहगस्त्रिखगाः स्वनीचे
कुम्भोदये दिवि खला यदि नैक उच्चे ॥ २४५॥

किं पञ्चभिर्दिविचरैरधिवैरिगेहं
प्राप्तैः स्वनिम्नगृहगैः किमुतास्तगैः किम् ।
नीचांशगा गगनगा निजतुङ्गगा वा
नीचे सिते हरिलवे किमुतात्मभागे ॥ २४६ ॥

किं वा चतुर्गगनगैररिराशियातै-
र्नीचांशगैरुत विधौ यदि नो स्वगेहे ।
नक्रोदये परमनीचमितेऽर्चिते वा
वर्गोत्तमो न उदये द्युचरैर्न दृष्टे ॥ २४७॥

वेने स्वभागे सितगौ विनष्टे सद्दर्शनोने वृजिनेक्षिते वा ।
नीचारिगा नोत्तमदृष्टयुक्ताः खलाः समग्राः शुभदास्त्रिके वा ॥ २४८ ॥
नीचैः कुजेज्यार्किभगैस्त्रिभिर्वा द्वाभ्यां तनावेकतमे विहङ्गे ।
अलिङ्गते कैरविणीवनेशे नश्यन्ति सर्वे वसुधेशयोगाः ॥ २४९ ॥

यदि राज्यप्रद ग्रह मलिन, जर्जर शरीर, रूक्षकान्ति, युद्धाकांक्षी, नीचराशिगत, शत्रुराशिगत तथा अस्तगत हों तो (१) नवमेश, दशमेश तथा लाभेश ये तीनों नीचराशि में हों तथा विकल हों तो (२) दशम में नीच राशिगत ग्रह हों तो (३) लग्न में चन्द्र दृष्ट राहु हो एवं तृतीय, एकादश तथा षष्ठ में पाप ग्रह हों, शुभ ग्रह अस्तंगत हो तथा केन्द्र में शुभ ग्रह न हो तो (४) यदि 'गुरु' अस्तंगत वा नीच राशि गत हो, स्वनीच राशि में तीन ग्रह हों; कुम्भ लग्न में जन्म हो, दशम में पाप ग्रह हों और स्वोच्च में एक ग्रह भी न हो तो (५) अधिशत्रुराशि वा नीचराशि में पाँच ग्रह हों अथवा पाँच ग्रह अस्तंगत हों तो (६) नीच नवांश में उच्च गत ग्रह हों तो (७) सिंहांश में वा स्वांश (२।७) में नीचराशि गत शुक्र हो तो (८) शत्रु राशि में वा नीचांश में चार ग्रह हों तो (९) मकर लग्न में परम नीचगत गुरु हो और स्वराशि में चन्द्रमा न हो तो (१०) यदि जन्म लग्न में वर्गोत्तमांश न हो और वह ग्रह दृष्ट न हो तो (११) सिंहांश में सूर्य हो, क्षीण चन्द्रमा पापदृष्ट हो शुभ दृष्ट न हो तो (१२) नीच राशि वा शत्रु राशि में सब पाप ग्रह हो और वे शुभदृष्ट युक्त न हो एवं त्रिक में शुभ ग्रह हों तो (१३) स्वनीच राशि में मङ्गल, गुरु, शनि तथा सूर्य वे चारों हों अथवा उक्त ग्रहों के मध्य में तीन वा दो वा एक ग्रह स्वनीच राशि में स्थित हो अथवा उक्त ग्रहों के मध्य में कोई एक ग्रह लग्न में नीच राशि गत हो एवं चन्द्रमा वृश्चिक में हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष के सब राजयोग नष्ट होते हैं।

अन्त्याष्टमादिभागस्थश्चरराश्यादिगः शशी ।
क्षीणो नैकेन खेटेन दृश्यते वा निशाकरः ॥ २५० ॥

ग्रहेणैकेन नो दृष्टो योगे केमद्रुमाभिधे ।
वाखिलैर्वैरिगेहस्थैर्बहुभिर्नीचगैरपि ॥ २५१ ॥

उल्कायाः पतने विष्ट्यां निर्घातव्यतिपातयोः ।
क्रूरोत्पातैस्त्रिशङ्कूनां केतूनां दर्शनेऽथ वा ॥ २५२ ॥

केमद्रुमादियोगेषु जननं यस्य जायते ।
तस्याखिला राजयोगाः प्रयान्ति प्रलयं ध्रुवम् ॥ २५३ ॥

तृतीय, षष्ठ वा नवम नवांश में चर राशिगत क्षीण चन्द्रमा हो, द्वितीय, पञ्चम वा अष्टम नवांश में स्थिर राशिगत क्षीण चन्द्रमा हो एवं प्रथम, चतुर्थ वा सप्तम नवांश में द्विस्वभाव राशि गत क्षीण चन्द्रमा हो और वह एक ग्रह से भी दृष्ट न हो तो (१) केमद्रुम योग हो और चन्द्रमा एक ग्रह से भी दृष्ट न हो तो (२) शत्रु राशि में समस्त ग्रह हों अथवा नीचराशि में बहुत ग्रह हों तो (३) उल्कापात में भद्रा में निर्घात में व्यतीपात में क्रूरोत्पात में त्रिशङ्कु ताराओं के उदय में केतु ताराओं के उदयमें केमद्रुम रेका प्रेष्य, दरिद्र वा भिक्षुक योग में जिसका जन्म हो, उस के समस्त राजयोग निश्चय से नाश को प्राप्त होते हैं ।

सामन्त योग तथा राजपूज्य योगः—

स्वर्क्षेम्बेशे भव्यभाग्येशयुक्ते सामन्तोऽथाचार्य्यदृष्टे दृकेशे ।
आचार्य्येशे वोदये राजपूज्यस्तद्वल्लाभस्थानगे भाग्यनाथे ॥ २५४ ॥

सुख में सुखेश हो और वह शुभ ग्रह तथा नवमेश से युक्त हो तो सामन्त (जागिरदार) होता है । सुखेश यदि गुरु से दृष्ट हो अथवा लग्न में भाग्येश हो तो राजमान्य होता है । लाभ में भाग्येश हो तो भी राजमान्य होता है ।

राज कार्य कर्ता योगः—

अंशे सहंसे किमु कण्टकेऽर्के वेन्दौ तपःकेन्द्रसुतेऽथवाऽऽये ।
केन्द्रे खपे वा पुरुहूतपूज्ये पानीयपौरे नृपकार्य्यकर्त्ता ॥ २५५ ॥

कारकांश लग्न में सूर्य हो तो (१) केन्द्र में सूर्य हो तो (२) नवम केन्द्र वा पञ्चम में चन्द्रमा हो तो (३) लाभ वा केन्द्र में दशमेश हो तो (४) सुख में वा लग्न में गुरु हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष राजकार्य करने वाला होता है ।

मानी योगः—

रम्यान्तरे राज्यगृहे किमुत्तमसम्पर्क आकाशपतौ किमभ्रपे ।
विशेषितांशे किमु नाकनायके सद्वर्गगे स्वोन्नतगे स मानभाक् ॥ २५६ ॥

दशम स्थान शुभ ग्रहों के अन्तराल में हो वा दशमेश का शुभ ग्रहों के साथ सम्बन्ध हो, वा वैशेषिकांश में दशमेश हो वा शुभ वर्ग में वा स्वोच्च राशि में दशमेश हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष मानी होता है ।

राजमान्यादि योग:—

पूज्यज्ञयोगे किमु पूज्यदृष्टे पुण्याधिपेऽङ्गे यदि राजमान्यः ।
पारावतादौ पथिपेऽथ लाभे भद्रेश्वरे किं शुभवर्गयाते ॥ २५७ ॥
गात्रेश्वरे गोपुरभागगे वा स्याद्राजवन्द्योऽमरवर्त्मनाथे ।
असौम्यसंसर्ग उतोग्रवर्गे किं क्रूरशून्याङ्गलवे विमानः ॥ २५८ ॥

गुरु तथा बुध का योग हो तो (१) अथवा लग्न में भाग्येश हो और वह गुरु दृष्ट हो तो उक्त योगों में राजमान्य होता है। पारावतादि शुभ वर्ग में नवमेश हो तो (१) लाभ में वा शुभ वर्ग में नवमेश हो तो (२) अथवा गोपुरांश में लग्नेश हो तो उक्त योगों में राजवन्द्य होता है। पाप ग्रहों के साथ दशमेश का सम्बन्ध हो अथवा अशुभ वर्ग में वा अशुभ षष्ठयंश में दशमेश हो तो उक्त योगों में विमान (मानहीन) होता है।

कुलमुख्यादि योग:—

ग्रहद्वयेंऽशे निजवंशमुख्य एकः स्वराशौ निजवंशतुल्यः ।
द्वौ व्योमवासौ निजराशियातौ यदा जनौ स्यादधिकः स्ववंशात् ॥ २५९ ॥

कारकांश लग्न में शुभ वा पाप कोई भी दो ग्रह हों तो अपने वंश में मुख्य होता है। यदि जन्म समय में स्वराशि में एक ग्रह हो तो अपने कुल में समान और स्वराशि में दो ग्रह हों तो अपने कुल से अधिक होता है।

निदाघरुग्राशिकृताधिकारेऽसृज्यङ्गगेऽन्त्ये तिमिरे चितीन्दौ ।
किं सोदरस्पृश्यमरार्चितांघ्रौ सुधाङ्ग आये कुलदीपकः स्यात् ॥ २६० ॥

लग्न में सिंह गत मङ्गल हो, व्यय में राहु हो और पञ्चम में चन्द्रमा हो अथवा तृतीय में गुरु और लाभ में चन्द्रमा हो तो उक्त योगों में कुलदीपक होता है।

प्रतापी योग:—

अन्योन्यमस्थौ गदगुह्यनाथौ किं केन्द्रगौ वा सचिवेऽरिगेऽब्जे ।
आयेऽथवाऽयाधिप उत्तमानां राश्यंशयाते जनिमान् प्रतापी ॥ २६१ ॥

षष्ठेश तथा अष्टमेश ये दोनों परस्पर एक दूसरे की राशि में हों अथवा वे दोनों केन्द्र में हों अथवा षष्ठ में गुरु और लाभ में चन्द्रमा हो अथवा शुभ ग्रहों की राशि में तथा नवांश में लाभेश हो तो उक्त योगों में प्रतापी होता है।

श्रीमान् योग:—

सौम्येन सम्प्राप्तबलेन लोकिते किंवा सनाथे समवाप्तिसद्मनि ।
किं शीतलाभीशुभगीरथैः स्वगैः श्रिया समेतः पुरुषः प्रजायते ॥ २६२ ॥

यदि ' लाभस्थान ' बली शुभ ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो अथवा द्वितीय में चन्द्र, शुक्र तथा गुरु हों तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष लक्ष्मी से युक्त होता है।

प्रव्रज्या योगः—

यदा चतुःपञ्चवियच्चरैर्बलैः समन्वितैरेकभगैस्त्रिकोणगैः ।
केन्द्रस्थितैर्मुख्यबलिग्रहाश्रमस्थितो भवेज्जन्मनि यस्य जन्मिनः ॥ २६३ ॥

जब जन्मसमय में त्रिकोण वा केन्द्र में एक राशिगत चार पाँच प्रभृति ग्रह हों तो 'प्रव्रज्या योग' होता है। उन प्रव्रज्याकारक ग्रहों के मध्य में जो अधिक बली ग्रह हो पुरुष उस ग्रह के आश्रम की दीक्षावाला होता है !

आजीवी ज्ञे त्रिदण्डीज्ये तापसोऽर्केऽसृगंशुकः ।
कुजे नग्नो यमे चक्री सिते कापालिको विधौ ॥ २६४ ॥

यावन्तो बलिनः स्वस्वप्रव्रज्याकारकाः खगाः ।
तावन्तस्तेऽस्तगाश्चेत्तद्भक्तिमात्रं निगद्यते ॥ २६५ ॥

यदि प्रव्रज्या योग कारक ग्रहों के मध्य में सब से अधिक बली बुध हो तो आजीवी, गुरु हो तो त्रिदण्डी, सूर्य हो तो तापस, भौम हो तो रक्त पट, शनि हो तो नग्न, शुक्र हो तो चक्रधर और चन्द्रमा हो तो कापालिक होता है। प्रव्रज्या कारक ग्रहों के मध्य में जितने बली ग्रह हों उतने ही अपनी अपनी प्रव्रज्या करने वाले होते हैं। यदि वे अस्तगत हों तो उस आश्रम में केवल भक्ति रखने वाला होता है !

वीर्य्यवर्ज्यौ यमाङ्गेशौ सन्न्यासीन्द्विज्यमूर्त्तिषु ।
सौरीक्षितेषु जीवेऽङ्के राड्योगजः कणादवत् ॥ २६६ ॥

शनि तथा लग्नेश ये दोनों निर्बल हों तो सन्न्यासी होता है। चन्द्र, गुरु तथा लग्न ये तीनों यदि शनि से दृष्ट हों और नवम में गुरु हो तो राजयोग में उत्पन्न पुरुष महर्षि कणाद के समान प्रतिष्ठा वाला होता है।

चतुःखगैः कण्टककोणयातैस्तद्राशिनाथेन युतैः समुक्तः ।
चतुष्टयस्थैश्चतुरभ्रवासैः प्रव्रज्यतामेति नरस्तदानीम् ॥ २६७ ॥

यदि जन्म समय में केन्द्र वा त्रिकोण में भावेश युक्त चारग्रह हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष मुक्त होता है। एवं केन्द्रमें चारग्रह हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष प्रव्रज्या को प्राप्त होता है।

अन्यग्रहैर्नेक्षितमुद्गमेशः पतङ्गजं पश्यति पौरपं वा ।
प्राणैर्विहीनो यदि पङ्गुनामा सन्न्यासयोगो जनने प्रदिष्टः ॥ २६८ ॥

अन्य ग्रहों से अदृष्ट शनि को यदि लग्नेश देखता हो अथवा लग्नेश को निर्बल शनि देखता हो तो सन्न्यास योग कहा है।

दाक्षायणीशे मृदुगात्रिभागे संवीक्ष्यमाणे शनिना तथैव ।
नेमौ यमांशे किमु भूजभागे युक्तेक्षिते मन्दरयेण तद्वत् ॥ २६९ ॥

शनि के द्रेष्काण में चन्द्रमा हो और वह शनि से दृष्ट हो अथवा शनि के नवांश में वा भौम के नवांश में चन्द्रमा हो और वह शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो संन्यास योग होता है।

प्रव्रज्या योग भङ्ग परिज्ञानः—

सन्न्यासाभास आदित्यपुत्रमात्रेक्षिते ध्वजे।
अंशेऽथेज्येऽरिगे कस्थे खद्योते तपसोन्वितः॥ २७०॥

कारकांश लग्न में केतु हो और वह केवल शनि से दृष्ट हो अथवा षष्ठ में गुरु और चतुर्थ में सूर्य होतो तप-रहित संन्यासी होता है।

प्रव्रज्याकरखचरे पराजिते वा
जन्मेशे मृदुगतिमात्रवीक्षिते वा।
क्रूरांशे गुलिकतमोयुते तमीशे
प्रव्रज्याच्युत उदितः शुभग्रहोने॥ २७१॥

प्रवज्या कारक ग्रह यदि ग्रह युद्ध में पराजित (हारा हुवा) हो अथवा जन्म चन्द्र राशि का स्वामी केवल शनि से दृष्ट हो अथवा क्रूरांश मे चन्द्रमा हो और वह गुलिक तथा राहु से युक्त हो एवं शुभग्रह से युक्त न होतो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष प्रवज्या भ्रष्ट होता है।

जप ध्यान तथा समाधिमान् योगः—

खेशांशनाथांशविभौ ससत्वे खेशे शुभे वेज्यभृगुक्तदृष्टे।
दैवे खपे दैवधवे ससारे नित्यं जपध्यानसमाधिमाङ् ना॥ २७२॥

जिस ग्रह के नवांश में दशमेश हो उस ग्रह के नवांश का स्वामी यदि बली हो अथवा नवम में दशमेश हो और वह गुरु शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो एवं नवमेश बली हो तो वह मनुष्य जप, ध्यान तथा समाधि वाला होता है।

प्रकीर्ण योगः—

स्मारोऽसुरेन्द्रमहितः सहसा समेतः
कौलः कलाधरसुतो यदि जन्मकाले
कौशोऽत्रिजोऽखिलतनुः पदमन्दिरं स-
त्ताताम्बिकासहजभूमिसुखं समेति॥ २७३॥

सप्तम में बली शुक्र, दशम में बुध, सुख में पूर्ण चन्द्रमा और दशम स्थान शुभ हों तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष पिता माता, भ्राता तथा भूमिजन्य सुख को पाता है।

विभवलाभविलग्नखलेतरा विदधते सुखकोशयशोभुवः ।
बलिकुलेशि चतुष्टयकोणगे ज्ञगुरुदृष्ट इभांशुकवाजिभाक ॥ २७४ ॥

धन, लाभ तथा लग्न में शुभ ग्रह हों तो सुख, कोश कीर्ति तथा भूमि लाभ को करते हैं। केन्द्र वा त्रिकोण में बली दशमेश हो और वह बुध तथा गुरु से दृष्ट हो तो हाथी, कपडे तथा घोडे वाला होता है।

केन्द्रगौ सुतशगौ बलवन्तौ मङ्गलामृतपती जनकेशे ।
ग्लौभवीक्षणसमागमसत्त्वे दहभृत्स कृषिगोधनभाक् स्यात् ॥ २७५ ॥

केन्द्र पञ्चम वा नवम में बली मङ्गल तथा बली सुखेश हों और दशमेश यदि चन्द्र तथा शुक्र से दृष्ट वा युक्त हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष कृषि तथा गोधन वाला होता है।

दशम गत रवि फलः—

वंशे सहंसे धृतितुल्यवर्षे विद्याधिकारेण भवेत्प्रसिद्धः ।
उपार्जनेऽर्थस्य जनः समर्थो दृष्टित्रितो भूपतिवल्लभश्च ॥ २७६ ॥

सत्कर्म्मरक्तो विदितश्च राजशूरो निजोच्चे स्वगृहे बलिष्ठः ।
तटाककेदारकगोपुरादिविप्रप्रतिष्ठाप्तिरघग्रहेन्द्रैः ॥ २७७ ॥

समन्विते तैरवलोकितेऽथ वा सद्व्योमवासर्क्षगते च दुष्कृतिः ।
दुष्कर्म्मकृत्कर्म्मसु विघ्नकृत्तथाऽनाचारवान् दुष्कृतसक्तको मतः ॥ २७८ ॥

दशम में सूर्य हो तो अठारह वें वर्ष विद्या के अधिकार से प्रसिद्ध, द्रव्योपार्जन में समर्थ एवं वह तीन ग्रहों से दृष्ट हो तो राजा का प्रिय, सत्कर्म में आसक्त, विख्यात तथा राज कार्य में शूर वीर होता है। यदि वह स्वोच्चराशि वा स्वराशि म हो तो अतीव बली, तलाव, क्षेत्र तथा गोपुरादि का निर्माण एवं ब्राह्मणों से प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है। यदि वह पाप युक्त दृष्ट हो अथवा पापराशि में हो तो अवैदीक कर्म दुष्ट कर्म, कर्मों में विघ्न, अनाचार एवं पाप में निरत होता है।

दशम गत चन्द्र फलः—

राज्येऽब्ज सत्कर्म्मविद्यानुकम्पाकीर्त्याढ्यः स्यान्मेधया संयुतो ना ।
तस्मिन् सोग्रे भोन्मितेऽब्दे स लोकवैरी रण्डायोषितासङ्गमेन ॥ २७९ ॥

भावाधिनाथे बलसंयुते यदि सत्कर्म्मसिद्धिः प्रभवेद्विशेषतः ।
तस्मिन्नसाम्यैः कलिते विलोकिते किं दुष्कृतिः कर्म्मणि विघ्नकृत्तथा ॥ २८० ॥

दशम में चन्द्रमा होतो उत्तम कर्म, विद्या, कृपा तथा कीर्ति से युक्त एवं धारणावती बुद्धि से युक्त होता है। यदि वह पापयुक्त होतो सत्ताइस वें वर्ष रण्डा स्त्री के प्रसङ्ग से मनुष्यों का वैरी होता है। यदि भावेश बली होतो विशेषतः मनुष्य को शुभकार्य की सिद्धि और पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट होतो अवैदिक कर्म करने वाला एवं कर्म म विघ्न करने वाला होता है।

दशम गत भौम फल:—

लोकप्रियो राजि कुजे बलान्विते भावेश्वरे चेत्स विशेष भाग्यवान् ।
सध्यानशीलो गुरुभक्तिसंयुतः स्याद् दीर्घमायुः सहजस्य तस्य नुः ॥ २८१ ॥

पापैर्युते कर्म्मणि विघ्नवाञ्छुभगेहे ससौम्ये किमु कर्म्मसिद्धिभाक् ।
कीर्त्तिप्रतिष्ठः करिकाश्यपीमिते वर्षे समर्थो द्रविणार्जने जनः ॥ २८२ ॥

सर्वेषु कार्य्येषु च शक्तिमान् दृढकलेवरस्तस्करधीः खलालये ।
सपावके कर्म्मसु विघ्नकृत्तदा स्याद् दुष्कृती राज्यतपोऽधिपान्विते ॥ २८३ ॥

यौवराज्येऽथ वा जातो राज्ये पट्टाभिषेकवान् ।
साचार्य्ये यदि दन्त्यन्तभूतिभाग् भूसमृद्धिमान् ॥ २८४ ॥

जिस के जन्म समय में दशम स्थान में भौम हो वह लोगों का प्रिय होता है । यदि भावेश बली हो तो विशेष भाग्य वाला, ध्यान युक्त स्वभाव एवं गुरु भक्ति वाला और उस के भाइयों की दीर्घायु होती है । यदि वह पाप युक्त हो तो कर्म में विघ्न वाला और वह शुभ राशि में हो वा शुभ युक्त हो तो कर्म सिद्धि वाला, कीर्त्ति से प्रतिष्ठित. अठारह में वर्ष द्रव्योपार्जन में समर्थ, सब कार्यों में समर्थवान्, दृढ शरीर तथा चोर बुद्धि होती है । यदि वह पाप राशि में वा पाप युक्त हो तो कर्म में विघ्न करने वाला तथा अवैदिक कर्म वाला होता है । एवं वह नवमेश तथा दशमेश से युक्त हो तो यौवराज्य में वा राज्य में पट्टाभिषेक वाला होता है । यदि वह गुरु युक्त हो तो हस्ती पर्यन्त ऐश्वर्य वाला तथा भूमि से समृद्धिमान् होता है ।

दशम गत बुध फल:—

व्यापारभावे विदि धैर्य्यवाञ्जनः सत्कर्म्मसिद्धिर्बहुकीर्त्तिवित्तवान् ।
नागाश्विवर्षे नयनामयार्दितस्तत्रेज्ययुक्ते स्वगृहे निजोच्चभे ॥ २८५ ॥

धनञ्जयष्टोममुखातिकर्म्मवांस्तस्मिन्खलारातिविमूढसंयुते ।
कर्म्मान्तरायः किल दुष्कृतिस्तथाऽऽनाचारभागेवमुशान्ति पण्डिताः ॥ २८६ ॥

दशम में बुध हो तो धैर्य शाली, शुभ कर्मों की सिद्धि वाला, बहुत कीर्त्ति तथा धन वाला एवं अठारह वें वर्ष नेत्र रोग से पीडित होता है । यदि वह स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो और गुरु से युक्त हो तो अग्निष्टोमादि यज्ञ करने वाला और बहुत कर्म्म करने वाला होता है । यदि वह पाप राशि वा शत्रु राशि में हो वा अस्तगत हो तो कर्मों में विघ्नवाला, अवैदिक कर्मवाला तथा अनाचार वाला होता है । इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं ।

दशम गत गुरु फल:—

जीवेऽभ्रे सत्कर्म्मकृद्योग्यतावान् धर्मी गीतापाठकः प्रौढकीर्त्तिः ।
पूज्यो लोकैर्भावपे वीर्य्ययुक्ते पुंसां सिद्धिः सप्ततन्तोस्तदानीम् ॥ २८७ ॥

तस्मिन्सोग्रे सतां गेहे प्रत्यूहः स्यात्सकर्म्मणि ।
लाभेन रहितो याने दुष्कृतिर्जनितो भवेत् ॥ २८८ ॥

दशम में गुरु हो तो उत्तम कर्म करने वाला, योग्यता वाला, धर्मात्मा, गीता पढने वाला, बढती हुई कीर्त्ति वाला और लोगों से सम्मानित होता है। यदि भावेश बली हो तो पुरुषों को यज्ञ की सिद्धि होती है। एवं वह पाप युक्त वा पाप राशि में हो तो शुभ कर्म्मों में विघ्न, यात्रा में लाभ से रहित तथा अवैदिक कर्म करने वाला होता है।

दशम गत शुक्र फलः—

महाबिले भे बहुलप्रतापी सङ्कल्पसिद्धिः शुभकर्म्मकारी।
अनेकयानैः सहितोऽघयुक्ते प्रत्यूहकृत्कर्म्मणि सत्समेते ॥ २८९ ॥
दिगन्तविख्यातयशा अनेकमहीपयोगो बहुभाग्ययुक्तः।
वाचालकः स्याद्बहुयज्ञसिद्धिर्जातो मनुष्यो बहुयानरोही ॥ २९० ॥

दशम में शुक्र हो तो बहुत प्रताप वाला, सङ्कल्प सिद्धि वाला, शुभ कर्म करने वाला और अनेक वाहनों से युक्त होता है। यदि वह पाप युक्त हो तो कर्म में विघ्न और शुभ युक्त हो तो चारों दिशा ओं में विख्यात कीर्त्ति वाला, अनेक राज योग वाला, बहुत भाग्य शाली, वाचाल, बहुत यज्ञों की सिद्धि वाला तथा बहुत वाहना की सवारी वाला होता है।

दशम गत शनि फलः—

गोविन्दस्थे पद्मिनीबालपुत्रे गङ्गास्नायी तत्त्वबर्षेऽलिलुब्धः।
स्यात्पित्ताङ्गः कर्म्मसिद्धिः ससौम्ये पापैर्युक्ते विघ्नकृत्कर्म्मगेहे ॥ २९१ ॥

दशम में शनि हो तो पच्चीस वें वर्ष गङ्गा स्नान वाला, अति लोभ वाला तथा पित्त शरीर वाला होता है। यदि वह शुभ युक्त हो तो कर्म की सिद्धि और पापयुक्त होतो कर्म में विघ्न वाला होता है।

दशम गत राहु फलः—

मेघाध्वगे दानववृन्दनाथे स्यात्सम्प्रदायी जनितः स दास्याः।
दुर्ग्रामवासी च वितन्तुसङ्गयुक्तोऽस्तु काव्यव्यसनी मनुष्यः ॥ २९२ ॥

दशम में राहु होतो दासी सम्प्रदाय वाला, दुष्ग्र मग्रामवाला वितन्तु ओं का सङ्गवाला और काव्य-व्यसनी होता ह।

दशम गत केतु फलः—

यदोद्भवे चित्तसमुन्नतौ गुदे गुदोपतापी कफदोषसंयुतः।
पराङ्गनायां निरतो निरन्तरं स्याच्चेतनो म्लेच्छजनस्य कर्मकृत् ॥ २९३ ॥

दशम में केतु होतो गुद रोग वाला, कफ दोष से युक्त नित्य पराई स्त्री में लीन म्लेच्छजन के कर्म को करने-वाला होता है।

दशम गत रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फल:—

भगो वियोगं कुरुते खगः खगकब्द् धनाप्तिं गगनोपगो विधुः ।
त्रिवेदवर्षे भमिते बुधोऽम्बुदवर्षेऽर्थलाभं नृपगोऽर्कवत्सरे ॥ २९४ ॥

लब्धिं धनानां धिषणो युगे दिने वर्षेऽसुरेज्यो वसुसौख्यदस्तथा ।
शस्त्राद् भयं वेदसमीरवत्सरे कुर्युः खगाः पङ्गुतमोऽस्रकेतवः ॥ २९५ ॥

दशम में सूर्य हो तो १९ वें वर्ष वियोग, चन्द्रमा हो तो ४३ वें अथवा २७ वें वर्ष धन लाभ, बुध हो तो १७ वें वर्ष धन लाभ, गुरु हो तो १२ वें वर्ष धन लाभ, शुक्र हो तो ४ थे अथवा १५ वें वर्ष धन लाभ एवं शनि राहु, भौम तथा केतु हों तो ५४ वें वर्ष शस्त्र से भय को करते है ।

रवि दृष्ट दशम फल:—

राज्ये दृष्टे दिवसपतिना कर्म्मसिद्धिप्रताप-
युक्तश्चाद्ये वयसि जननीपञ्चता स्वीयगेहे ।
यद्वोच्चस्थे भवति सुखयुग् भूरिभोगार्थयुक्तो
दुर्हृद्धन्ता त्वतिवरवपुः कार्मुकाङ्गप्रयुक्तः ॥ २९६ ॥

दशम भाव सूर्य दृष्ट हो तो कर्म की सिद्धि, प्रताप से युक्त एवं बाल्यकाल में माता की मृत्यु होती है । यदि वह स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो तो सुखी, बहुत भोग तथा अर्थ से युक्त, शत्रु नाशक, अतीव सुन्दर शरीर एवं धनुषाकार शरीर वाला होता है ।

चन्द्र दृष्ट दशम फल:—

विद्वेषः स्ववरैर्वशी भृशमिह स्यादल्पकृन्नातिकृद्
बन्ध्वर्थात्मजताससौख्यसहितो जातो विनोदी गुरोः ।
तुर्य्याग्रिमजजीवको मनुभवोऽहङ्कारभाक् सर्वदा
श्रेयोवर्जित ईक्षिते जनजनुःकालेऽम्बरे नेमिना ॥ २९७ ॥

दशम स्थान यदि चन्द्रमा से दृष्ट हो तो अपने श्रेष्ठ जनों से वैर वाला, वारंवार वशीभूत, थोडा करने वाला न अधिक करने वाला बान्धव, धन, पुत्र तथा पिता के सौख्य से युक्त, गुरुजनों का विनोदपात्र, पशुओंके समूह की जीविका वाला, अभिमानी तथा अधर्म्मी होता है ।

भौम दृष्ट दशम फल:—

पश्येल्लोहितविग्रहोऽम्बरगृहं भूभृत्प्रसादं नरं
सूते कामबलाभिभूतमथ वा तेजःप्रभावान्वितम् ।
सिद्ध्याऽऽढ्यं परिपूर्णया परसुहृच्छोकं च पित्ताधिकं
सत्त्वोपेतमथोदयोऽस्य नियतेर्दायागमे जायते ॥ २९८ ॥

दशम स्थान को यदि मङ्गल देखता हो तो राजा की कृपा वाला, काम तथा बल से तिरस्कार पाने वाला, तेजस्वी प्रभाव शाली, समस्त सिद्धि से युक्त, परम मित्र के शोक वाला, पित्त दोष वाला और पराक्रमी मनुष्य को उत्पन्न करता है। एवं मङ्गल की दशा के आनेपर भाग्योदय होता है।

बुध दृष्ट दशम फलः—

द्विड्भीभाग् व्यवसायधैर्य्यसहितः सम्पद्विभोगी पर-
कृत्ये पेशल एष वीतदुरितः स्यात्कर्म्मजीवी जनः।
सौख्याढ्यः कविताकरः पितृधनाढ्यश्चोद्यमी भूमिभुङ्-
मान्यः पूजित इन्दुजेन जनके दृष्टेऽतिकामोऽर्थवान्॥ २९९॥

दशम स्थान बुध से दृष्ट हो तो शत्रुभय वाला, व्यवसाय (उपजीविका) तथा धैर्यशाली, सम्पत्ति का उप-भोग करने वाला, पराये कृत्य में चतुर, पाप रहित, कर्म जीविका वाला, सौख्य युक्त, कविता करने वाला, पिता के धन से युक्त, उद्यमी, राज मान्य तथा पूजित, अतिकामी एवं धनवान् होता है।

गुरु दृष्ट दशम फलः—

स्यात्कर्म्मसिद्धिर्नृपमन्दिरे सुखी कुमारदानद्रविणैर्विवर्जितः।
सुदिव्यहर्म्योत्थसुखस्वपूर्वजाधिकः प्रजातः परिवारसौख्ययुक्॥ ३००॥
स्वल्पाग्रजोऽनेकनरेट् सुखान्वितः प्रभूतभोगैस्तप आदिना युतः।
यस्याङ्गिनः सम्भवकाल ईक्षिते नभोनिकेते मरुतां पुरोधसा॥ ३०१॥

दशम स्थान यदि गुरु से दृष्ट हो तो कर्म सिद्धि वाला, राजद्वार में सुखी; पुत्र, दान, तथा धन से हीन, उत्तम गृह के कारण अपने पूर्वजों से अधिक सुखी, पारिवारिक सुख वाला अल्प ज्येष्ठ भ्राता वाला, अनेक मनुष्यों का स्वामी, बहुत भोगों से सुखी एवं तप प्रभृति से युक्त होता है।

शुक्र दृष्ट दशम फलः—

मूर्द्धार्त्तो यदि मध्यमे दनुजनुःसौवस्तिकेनेक्षिते
भूभृत्सद्मनि जीवको निजपुरे चान्तःप्रतप्तः सदा।
अन्येषां विभवादिनाऽद्भुतसुखं म्लेच्छैः सुतैर्बान्धवै-
र्नीचानामधिनायकोऽस्य धिषणाभ्रंशो भवेच्छक्तिमान्॥ ३०२॥

दशम स्थान यदि शुक्र दृष्ट हो तो शिर के रोग से दुःखित, राजद्वार तथा अपने घर में जीविका वाला; पराय ऐश्वर्य आदि से संतप्त हृदय वाला, म्लेच्छ, पुत्र तथा बान्धवों से अद्भुत सुख, नीचजनों का स्वामी, बुद्धि-भ्रंश तथा शक्ति शाली होता है।

शनि दृष्ट दशम फलः—

दृष्टे दिवीनजनुषाऽल्पसुखं जनन्या
नो जीवतीह यदि जीवति भाग्ययुक्तः।

तातस्य नाशकृदरातियुतोऽर्थखेदी
बाधी गुरोरधरयुङ् मितशिल्पवृत्तिः ॥ ३०३ ॥

जिस के जन्म समय में दशम स्थान शनि से दृष्ट हो उस को माता का अल्प सुख और वह स्वयं जीवित न रहे। यदि जीवित रहे तो भाग्य शाली, पिता का नाश करने वाला, शत्रु से युक्त, अर्थ के लिए खेद करने वाला, गुरुजनों को कष्ट देने वाला एवं स्वल्प वृत्ति वाला होता है।

राहु दृष्ट दशम फलः—

नादालयं पश्यति नागराजः कुर्य्यात्प्रभूतां निजकर्म्मसिद्धिम्।
पितुर्विनाशं जनितस्य बाल्ये काले सवित्र्या अपि तुच्छसौख्यम् ॥ ३०४ ॥

दशम स्थान यदि राहु से दृष्ट हो तो बहुत कर्मसिद्धि को करता है। एवं बाल्यकाल में पिता का नाश और माता का अल्प सुख करता है।

लग्न गत दशमेश फलः—

अम्बाम्बकैणनयनासुखभाक् खपेऽङ्गे
शूरो रणे निजकरार्जितवित्तभोक्ता।
बाल्ये सरुक् सुखयुतः परतोऽरिवर्ग-
हीनो भवेत्प्रतिदिनं धनसिद्धिभाक् सः ॥ ३०५ ॥

भक्तिः स्वताते रिपुताऽम्बिकायां पञ्चत्वमाप्ते जनकेऽन्यगाऽम्बा।
युक्तः स भृत्यैर्बहुलैरसौम्ये खलोऽतिदुःखी जनवञ्चकः स्यात् ॥ ३०६ ॥

लग्न में दशमेश हो तो माता, पिता तथा स्त्री का सुख वाला, संग्राम में शूर वीर, अपने हाथ से उपार्जित धन का उपभोग करने वाला, बाल्य काल में रोगी, पश्चात्सुखी, शत्रु वर्ग से रहित, प्रतिदिन धन लाभ वाला, पिता में भक्ति, माता में शत्रुता एवं पिता की मृत्यु के पश्चात् 'माता' परपुरुषगामिनी और वह बहुत दासों से युक्त होता है। यदि दशमेश पाप ग्रह हो तो अधम, अतिदुःखित तथा लोगों को ठगने वाला होता है।

धन गत दशमेश फलः—

स्वे तातपेऽतिथिरिपुः कठिनः सवित्र्या
पाल्यः सुतः कुवचनो मितभुक् जनन्याम्।
दुष्टः कुटुम्बधनयानयुतश्च लोभी
भव्येऽम्बिकाजनकसौख्ययुतः सुकर्म्मा ॥ ३०७ ॥

धन में दशमेश हो तो अतिथिवर्ग का शत्रु, कठोर हृदय, माता से पालित पुत्र वाला, निन्दित वचन बोलने वाला, थोडा खाने वाला, माता में वैर रखने वाला; कुटुम्ब, धन तथा वाहन से युक्त और लोभी होता है। यदि शुभ ग्रह दशमेश हो तो माता पिता के सौख्य से युक्त और उत्तम कर्म करने वाला होता है।

निधानसोदर्य्यमनोजमन्दिरे खेशे मनस्वी वृषसत्यसंयुतः ।
वाग्मी वरिष्ठो गुणवाञ्जनेषु स प्रसिद्धकीर्त्तिः करुणामहोदधिः ॥ ३०८ ॥

द्वितीय तृतीय वा सप्तम में दशमेश हो तो मनमाने करने वाला; पुण्य तथा सत्य युक्त, प्रशस्त वाक्य वक्ता अतिश्रेष्ठ, गुणवान्, विख्यात कीर्त्ति तथा दया का समुद्र होता है ।

सहज गत दशमेश फलः—

बाहौ नृपेशे निजबाहुवीर्य्यजसुखोज्झितः स्यात्कृतशत्रुदीपितः ।
वंशे स्वकीये महिमान्वितोऽनुजवर्गान्वितो मातुलपालितो भवी ॥ ३०९ ॥

स्वलोकाम्बाविरोधी नो समर्थः पृथुकर्म्मणि ।
सेवायां निरतः सूनुमातुलस्वल्पसौख्यभाक् ॥ ३१० ॥

तृतीय में दशमेश हो तो अपने बाहुबल से उत्पन्न सुख से रहित, शत्रु से पीडित, अपने कुल में श्रेष्ठ, भ्राताओं से युक्त, मामा से पालित, अपने लोगों का तथा माता का विरोधी, विस्तीर्ण कर्म में समर्थ रहित, सेवा में लीन एवं पुत्र तथा मामाओं के स्वल्प सुख वाला होता है ।

सुख गत दशमेश फलः—

हरिपतौ हितगे नृपमानयुङ् निखिललोकदृशां च सुधायते ।
बहुवधूः सबलः शुभमानसः स्वजननीसुखयुग् जनपालकः ॥ ३११ ॥

सन्सुखीकृतसापत्नः सदाचारोऽतिसौख्यभाक् ।
नृपतुल्यधनः पित्रोः पोषणे पूजने रतः ॥ ३१२ ॥

सुख में दशमेश हो तो राजा से सम्मानित, समस्त मनुष्यों के नेत्रों को आनन्द देने वाला, बहुत स्त्री वाला, बलवान्, उत्तम हृदय, माता के सुख से युक्त, लोगों को पालने वाला, शत्रुजनों को जीतने वाला, सदाचारी अत्यन्त सुखी, राजा के समान धनी एवं माता पिता के पालन पूजन में तत्पर रहता है ।

निदेशभे निष्कनिकेतनेऽथ वा निदेशपे यस्य पराक्रमी सुखी ।
ज्ञानी ससत्यो गुरुदेवतार्चने रतो गुणी स्यात्सुकृतेन संयुतः ॥ ३१३ ॥

दशम वा चतुर्थ में दशमेश होतो पराक्रम वाला, सुखी, ज्ञानवान्, सत्यवक्ता, गुरु तथा देवताओं के पूजन में तत्पर, गुणवान् एवं पुण्य से युक्त होता है ।

सुत गत दशमेश फलः—

खेशे मतौ मतियुतो जनपालकः स्याद्
　विद्यासुतायुवतिभोगयुतोऽध्वनीशः ।
पाल्योऽम्बया नृपतिलाभयुतो विडम्बी
　सत्कर्म्मकृद्विमलगानकलासु दक्षः ॥ ३१४ ॥

पञ्चम में दशमेश होतो बुद्धिमान्, लोगों को पालने वाला, विद्या, कन्या, स्त्री तथा भोग से युक्त, भूमिका स्वामी, मातासे पालित, राजा से धन लाभ वाला, अनुकरण (नकल) करने वाला, उत्तम कर्म करने वाला एवं उत्तम गान कला ओं में निपुण होता है।

फलागमे वा प्रतिमालयस्थे वाणिज्यवेश्माधिपता सवित्तः।
स्यात्सत्यवादी तनयैरुपेतः प्रसन्नचेताः प्रभवेज्जनुर्भृत् ॥ ३१५ ॥

लाभ में वा पञ्चम में दशमेश होतो धन से युक्त, सत्यवक्ता, पुत्र युक्त एवं प्रसन्न हृदय होता है।

रिपुगत दशमेश फलः—

कृत्येशे भियि भूपवरनिरतः शत्रोर्भयात्कातरः
सङ्ग्रामे हतशात्रवः क्षततनू रुग्युक् कदर्य्यः कलेः।
कर्त्ता विक्रमवान् दयाविरहितोऽघे शैशवे कष्टभाक्
पश्चादीश इहाम्बिकाऽन्यनरगा सौम्ये पितुर्द्रव्यभाक् ॥ ३१६ ॥

षष्ठ में दशमेश होतो राजा से वैर करने में तत्पर, शत्रु से भय भीत, संग्राम में शत्रुजनों से आहत, व्रण युक्त शरीर, रोगी कृपण, कलह करने वाला, पराक्रमी तथा निर्दयी होता है। यदि पापग्रह दशमेश होतो बाल्य अवस्था में कष्ट वाला, पश्चात् समर्थवान् और उसकी माता पर पुरुष गामिनी होता है। एवं शुभग्रह दशमेश होतो पिता के धनवाला होता है।

व्यापारपे वैरिगृहे व्यये वा विनाशभावेऽविरतं विपक्षैः।
प्रपीडितो वाऽऽमयतः स दाक्ष्यगुणैरुपेतो न सुखी कदाचित् ॥ ३१७ ॥

षष्ठ व्यय वा अष्टम में दशमेश होतो शत्रुजनों से अथवा रोग से निरन्तर दुःखित होता है। एवं दाक्ष गुणों से युक्त और कभी सुखी नहीं होता है।

सप्तम गत दशमेश फलः—

धर्मः पतौ योषिति कामिनीरतिकलायुतोऽस्त्रांशुकयानभूषणैः।
तस्याऽस्य कान्ता ससुता धवाम्बिकाभक्त्या युता रूपसमन्विता तथा ॥ ३१८ ॥

सप्तम में दशमेश हो तो स्त्रीयों की प्रेम कला से युक्त; अस्त्र, वस्त्र, वाहन तथा भूषण से युक्त और उस की स्त्री पुत्रवती, पति तथा माता की भक्ति से युक्त एवं रुपवती होती है।

अष्टम गत दशमेश फलः—

काले खपे विषयसौख्यवियुक् पुरारि-
जेताऽम्बुयाननिरतो दुरितेऽल्पजीवी।

दुष्टः खलोऽनृतवचा जननीव्यथाकृत्
पाटच्चरो गतकपः कपटी च शूरः ॥ ३१९ ॥

अष्टम में दशमेश हो तो विषय सुख से रहित, नगर तथा शत्रुजन को जीतने वाला एवं जल यान (नाव जहाज) में लीन होता है। यदि पाप ग्रह अष्टमेश हो तो अल्पायु वाला, दुष्ट, अधर्म, मिथ्याभाषी, माता को कष्ट दायक, चोर, निर्दयी, कपटी और शूर वीर होता है।

नवम गत दशमेश फलः—

मध्याधिपे तपसि सत्सखिबन्धुशीलो
मंत्री तथा स्वभगिनीसुतसौख्ययुक्तः ।
नीत्या युतः सकलतीर्थगतार्थ एष-
स्याल्लोलहृत्सततसत्यवचाः सवित्तः ॥ ३२० ॥

सौभाग्यसौजन्ययुतः पराक्रमी भाग्यान्वितो विध्युदये स्मृतिः क्वचित् ।
लोकस्य पालः सुभगोऽस्य नन्दनो माता सुशीलावृषसत्यवाग्युता ॥ ३२१ ॥

नवम में दशमेश हो तो मित्र तथा बान्धवों के मध्य में उत्तम स्वभाव, राज मंत्री, भागनेय (भानजे) के सुख से युक्त, नीतिमान्, समस्त तीर्थों में द्रव्य व्यय करने वाला, चञ्चल हृदय, नित्य सत्य वचन बोलने वाला, सौभाग्य तथा सुजनता से युक्त, पराक्रम वाला, भाग्य शाली, लोगों का पालने वाला एवं कभी भाग्योदय में चिन्ता और उस का पुत्र सज्जन ऐश्वर्य शाली तथा उस की माता सुशील पुण्यात्मा और सत्यवचन बोलने वाली होती है।

दशम गत दशमेश फलः—

यदाऽऽस्पदस्थेऽम्बरपेऽखिलक्ष्मातले यशःसेवितपादपद्मकः ।
नितम्बिनीदर्पविमर्दकृन्नययुक्सुन्दरो निर्मलमानसो भवेत् ॥ ३२२ ॥

सौम्येऽम्बिकासौख्यकृदस्तु वार्त्तालापेऽतिदक्षो जननीकुलेषु ।
रतः सुधीर्भूपतिमानवित्तसमन्वितः स्यात्प्रबलः शरीरी ॥ ३२३ ॥

दशम में दशमेश हो तो समस्त भूमण्डल में यश से सेवित चरणकमल वाला, स्त्रीजनों के अभिमान का मर्दन करने वाला, नीतिमान्, सुन्दर शरीर और निर्मल हृदय वाला होता है। यदि शुभ ग्रह दशमेश हो तो माता से सुखी, वार्त्तालाप में चतुर, मातृ कुल में लीन, पण्डित, राजा से मान तथा धन लाभ वाला एवं बलिष्ठ होता है।

लाभ गत दशमेश फलः—

प्राप्तौ खपे परपराजयतोऽर्थलाभी
योषायुतः सुतसुतानुगतः प्रभूतैः ।
भृत्यैर्युतो विजयलाभयुतश्चिरायु-
रम्बासुखी सहजसंघसुशोभितः स्यात् ॥ ३२४ ॥

हिरण्यदन्तावलवाजिरत्नप्रज्ञाविभूत्यात्मभवैः समेतः ।
स्थित्याऽस्य माता सुतरक्षणी च मानोर्ज्जितद्रव्ययुता ससौख्या ॥ ३२५ ॥

लाभ में दशमेश हो तो शत्रु की पराजय से धन लाभ वाला, स्त्री से युक्त, पुत्र पुत्री के अनुक्रम वाला, बहुत भृत्यों से युक्त, विजय के लाभ से युक्त, दीर्घायु, माता से सुखी, भ्रातृ गण से शोभायमान; सोना, हाथी, घोडे, रत्न, बुद्धि, ऐश्वर्य, पुत्र तथा स्थिति से युक्त और उस की माता पुत्र की रक्षा करने वाली; मान, बढते हुए धन तथा सौख्य से युक्त होती है।

व्यय गत दशमेश फलः—

हानौ खपे सविभवो विगदो हतारि-
युद्धे तथा व्ययपरः सुभगः स्वयं तु ।
मात्रोज्झितः कुटिलधीर्निजवीर्ययुक्तो
दाता धनस्य सुजनादरकृन्मनुष्यः ॥ ३२६ ॥
भूपकर्म्मरतस्वान्तः शुभकर्म्म करस्तथा ।
निर्गमी वृजिने खेटे विदेशानुरतो भवः ॥ ३२७ ॥

व्यय में दशमेश हो तो ऐश्वर्य शाली, आरोग्य, युद्ध में शत्रु से आहत, बहुत व्यय वाला, स्वयं सज्जन, माता से रहित, कुटिल बुद्धि, अपने वीर्य से युक्त, धन का दाता, सुजनों का आदर करने वाला, राज कार्य में दत्त चित्त, शुभ कर्म करने वाला एवं यात्रा न करने वाला होता है। यदि पाप ग्रह दशमेश हो तो विदेश में वास करने वाला होता है।

दशम गत मेष फलः—

महाविलेऽजे विनयच्युतं वाऽधर्म्मं विधत्ते पिशुनस्वभावम् ।
दुष्टं च कर्मप्रवरं च लोके सतां जनानामतिनिन्दितं च ॥ ३२८ ॥

दशम में मेष राशि हो तो विनय रहित, अधर्मी, दुर्जनस्वभाव, दुष्टकर्म से श्रेष्ठ एवं साधुजनों के मध्य में निन्दित करता है।

दशम गत वृष फलः—

गव्यम्बरे कर्म करोति पुङ्गवो व्ययात्मकं सज्जनमुत्करं तथा ।
ज्ञानस्वरूपं कुसुरामरातिथिप्रपूजकं सभ्यजनानुरूपकम् ॥ ३२९ ॥

दशम में वृष हो तो व्ययात्मक कर्म करने वाला, सज्जनों से प्रीति करने वाला, ज्ञानस्वरूप; ब्राह्मण, देवता तथा आतिथियों का भक्त एवं सज्जनों के अनुरूप कर्म्म को करता है।

दशम गत मिथुन फलः—

वीणाधरे व्योमनिकेतने यदि कर्म्म प्रधानं गुरुभिः समीरितम् ।
पृथ्वीसुरप्रीतिकरं करोति स यशःप्रभाढ्यं कृषिसम्भवं सदा ॥ ३३० ॥

दशम में मिथुन हो तो प्रधान कर्म करने वाला, गुरुजनोक्त कर्म करने वाला, ब्राह्मणों से प्रीति प्रद कर्म करने वाला कीर्ति तथा प्रभा युक्त कर्म करने वाला एवं काषजन्य कर्म करता है।

दशम गत कर्क फलः—

कर्काटके कर्मगते करोति वापीपलाश्योघभवं विचित्रम्।
प्रपातडागोपवनप्रजातं कर्माऽन्धुपूर्वं सततं विपापम् ॥ ३३१ ॥

दशम में कर्क हो तो बावडी, वृक्षसमूह जन्य, विचित्र; प्याऊ, तलाव तथा उपवनसम्भव कर्म, कूपादि कृत्य कर्म एवं नित्य पापरहित कर्म को करता है।

दशम गत सिंह फलः—

आकाशभावे सति पाणिजायुधे कर्म्म प्रकुर्याद्विकृतं वधात्मकम्।
साघं ज रौद्रं पुरुषार्थसंयुतं प्राणी सदा प्राणिवधं च निन्दितम् ॥ ३३२ ॥

दशम में सिंह हो तो विकृत, वधात्मक, पाप युक्त, भयानक, पुरुषार्थ युक्त, प्राणिवधरूप और निन्दित कर्म को करता है।

दशम गत कन्या फलः—

कन्या यदा पुष्करगा करोति कर्माऽङ्गभृल्लोकविरुद्धमेषः।
लोकेऽमितं निन्द्यतमं च योषामहीपभाजं मदनात्मकं च ॥ ३३३ ॥

दशम में कन्या हो तो लोक विरुद्ध कर्म, लोगों में अगणित, अत्यन्त निन्दितकर्म, स्त्री तथा राजानुरूप कर्म एवं कामात्मक कर्म को करता है।

दशम गत तुला फलः—

विहायसागारगते तुलाधरेऽभीष्टं सतां भूरिनयान्वितं सदा।
वाणिज्यकर्म्म प्रकरोति चेतनः पुण्यात्मकं चेतरसम्मतं भवः ॥ ३३४ ॥

दशम में तुला हो तो सज्जनों के प्रिय कर्म, बहुत नीतियुक्त कर्म, वाणिज्य कर्म, पुण्यात्मक तथा अन्य सम्मत कर्म को करता है।

दशम गत वृश्चिक फलः—

सरीसृपे चित्तसमुन्नतिङ्गते कर्माऽतिदुष्टं जनगर्हितं जनः।
करोति नीत्या रहितं सुनिंदय गुरुद्विजेन्द्रत्रिदशव्यथाकरम् ॥ ३३५ ॥

दशम में वृश्चिक हो तो अति दुष्ट, लोगों में निन्दित, नीति से रहित, अति निर्दय; गुरु, ब्राह्मण, तथा देवताओं को पीडा करनेवाला कर्म को करता है।

दशम गत धनु फलः—

कोदण्डभे विष्णुपदं गते चेत्सेवात्मकं भूरियशःसमेतम् ।
अन्योपकारात्मकमेष चौर्य्ययुतं नृपालात्मकमोजसाढ्यम् ॥ ३३६ ॥

दशम में धनु हो तो सेवात्मक, बहु कीर्ति युक्त, अन्योपकारात्मक, चौर्य्ययुक्त, राजात्मक और बल युक्त कर्म को करता है।

दशम गत मकर फलः—

यदा समज्ञालयगे कुरङ्गभे जातो विधत्ते प्रवरं सुनिर्दयम् ।
पुण्योज्झितं जन्मनि कर्म बान्धववधात्मकं दुर्जनसम्मतं सदा ॥ ३३७ ॥

दशम में मकर हो तो श्रेष्ठ कर्म, अति निर्दय कर्म, पुण्य रहित कर्म, बान्धव वधात्मक कर्म और दुर्जन सम्मत कर्म को करता है।

दशम गत कुम्भ फलः—

कुम्भे कुले लोकविरुद्धमङ्गभृत्प्रायेण पाषण्डकपुण्यसंयुतम् ।
अभीष्टलोभात्परवञ्चनार्थकं विश्वासहीनं विदधीत कर्म्म सः ॥ ३३८ ॥

दशम में कुम्भ हो तो लोक विरुद्ध कर्म्म, पाषण्ड धर्म युक्त कर्म, अभीष्ट कार्य के लोभ से परवञ्चनात्मक कर्म और विश्वास हीन कर्म को करता है।

दशम गत मीन फलः—

मत्स्ये वणिज्यालयगेऽन्वयोचितं कर्म्म प्रकुर्य्याद्यशसा समन्वितम् ।
गुरूपदिष्टं बहुविप्रपूजनसुसम्मतं सुस्थिरमादरान्वितम् ॥ ३३९ ॥

दशम में मीन हो तो कुलोचित कर्म, यशस्वी कर्म, गुरुजनों के उपदेश किए हुए कर्म, अनेक ब्राह्मण पूजन सम्मत कर्म, अति स्थिर कर्म एवं आदर युक्त कर्म को करता है।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत
भाषाटीकोदाहरणोपेते कर्म्मभावचिन्तनप्रकरणं द्वात्रिंशमवसितम् ।

———

अथ

लाभभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते ।

लाभ भाव जन्य पदार्थ परिज्ञान:—

द्रव्याप्तिर्जंघायुगले स्वदक्षांघ्र्यदक्षबाहू अनपत्यता च ।
प्राप्तिः सुतायास्तनयस्य वामा नाशो सुतानां शिविकारथादि ॥ १ ॥
आन्दोलिकावाहनवाजिभूषेभस्वर्णवस्त्राणि सदादिकानि ।
वामश्रुतिर्मङ्गलमण्डनादि विद्याप्तिराये निखिलं विचार्य्यम् ॥ २ ॥

धनप्राप्ति, जंघाद्वय, दक्षिण पाद, वामहस्त अनपत्यता (सन्तान हीनता), कन्याप्राप्ति, पुत्र भार्या (स्नुषा); पुत्र नाश, शिविका, रथादि, आन्दोलिका, वाहन, अश्व, भूषण, हस्ती, सुवर्ण, वस्त्र, शुभादि, वामकर्ण, मङ्गल, मण्डनादि और विद्या की प्राप्ति ये समस्त पदार्थ लाभ भाव में विचारने चाहिएँ ।

लाभ भाव की विशेषता:—

भावाः समग्रा भवभेऽधिवीर्य्ये शुभा भवेयुर्भवभावनाथे ।
षड्वीर्य्ययुक्ते सुशुभं ध्रुवं किं तत्रैकखेटे रसवर्गशुद्धे ॥ ३ ॥

यदि जन्म समय में सब भावों की अपेक्षा लाभ भाव अधिक बली होतो सब भाव शुभ होते है । यदि लाभेश षड्बलों से युक्त हो अथवा लाभ में एक भी षडवर्ग शुद्ध ग्रह होतो निश्चय से अति शुभ फल होता है ।

लाभालये सुग्रहनाथशुभस्वनाथै-
नीचारिमूढखलभेतरगैरुपेते ।
आलोकिते शुभगणे बहुवित्तलब्धि-
स्तत्रासतां गणयुतीक्षणतो न लब्धिः ॥ ४ ॥

नीच राशि शत्रु राशि अस्तगत वा पाप राशि में सुस्थान (१।४।५।७।९।१०) के स्वामी शुभग्रह और लाभेश न हों और लाभ स्थान उक्त लक्षणवाले सुस्थानेश शुभग्रह तथा लाभेश से युक्त वा दृष्ट हो एवं लाभ भाव में शुभग्रहों का वर्ग हो तो बहुत धनकी प्राप्ति होती है । यदि लाभ भाव में पापग्रहों का वर्ग हो वा पाप ग्रहों से युक्त वा दृष्ट होतो धन की प्राप्ति नहीं होती है ।

सर्वे भवेन निखिलार्थचयाप्तिमाहु-
रायोपगः सकलवीर्य्ययुतो ग्रहेन्द्रः ।
वित्तप्रदो यदि भवेत्तरणिः स्वबन्धु-
वर्गाद्विधुः स्वजनतीगणतो नवार्चिः ॥ ५ ॥

सोत्थाद्बुधो विबुधमातुलमित्रवर्गै-
र्द्याद्धनं मतिसखः श्रुतिशास्त्रयज्ञैः
पुत्रैरिभो युवतिकाव्यकलादिभिः स्व-
मेतीनजो भृतकवर्गकृषिक्रियाभिः ॥ ६ ॥

लाभ भाव से समस्त धन प्राप्ति को सब आचार्य कहते हैं। लाभ भाव गत ग्रह संपूर्ण बलों से युक्त हो तो धन देने वाला होता है। यदि लाभ भाव में बली सूर्य हो तो बधु वर्ग से धनलाभ चन्द्रमा हो तो मातृ वर्ग से धन लाभ भौम हो तो भ्रातृ वर्ग से धन लाभ बुध होतो पण्डित मातुल तथा मित्र वर्ग से धन लाभ, गुरु होतो वेद, शास्त्र यज्ञ तथा पुत्रों से धन लाभ, शुक्र होतो स्त्रीजन, काव्य तथा कलादियों से धन लाभ एवं शनि हो तो भृतक वर्ग तथा कृषि क्रिया से धन लाभ होता है।

लाभ सम्बन्धी सूर्य फलः—

उपान्त्यभावस्तपनेन युक्तो निरीक्षितस्तत्र गणोऽस्य यद्वा।
प्राप्तिर्धनानां बहुधा चतुष्पान्महीपतस्तस्कर वर्गतश्च ॥ ७ ॥

यदि लाभ स्थान सूर्य से युक्त वा दृष्ट वा लाभ में सूर्य का वर्ग हो तो चतुष्पद, राजवर्ग तथा चौर वर्ग से प्रायः धनों की प्राप्ति कहनी चाहिए।

लाभ सम्बन्धी चन्द्रफलः—

आयः समेतः शशिनेक्षितो वा तत्रेन्दुवर्गः करिकामिनीतः।
जलाशयाद्वित्तविवृद्धिरिन्दौ पूर्णे कृशे स्वस्य विनाशनं स्यात् ॥ ८ ॥

लाभ स्थान चन्द्रमा से युक्त वा दृष्ट हो अथवा लाभ में चन्द्रमा का वर्ग हो और चन्द्रमा पूर्ण हो तो हस्ती, स्त्रीजन तथा जलाशय से धन की वृद्धि और चन्द्रमा क्षीण हो तो धन का नाश होता है।

लाभ सम्बन्धी भौम फलः—

दृष्टे युते भूतनयेन लाभे तत्रारवर्गे किमु कष्टतोऽर्थः।
शस्त्रानलस्वर्णमणिप्रजातं कृष्युद्भवं मंत्रिसहोत्थजं स्वम् ॥ ९ ॥

लाभ स्थान भौम से दृष्ट वा युक्त हो अथवा लाभ में भौम का वर्ग हो तो कष्ट से धन का लाभ अथवा शस्त्र, अग्नि, सुवर्ण तथा मणिजन्य एवं कृषिजन्य, मंत्री वर्ग तथा सहजवर्गजन्य धन होता है।

लाभ सम्बन्धी बुध फलः—

भवे विदा युक्तविलोकितेतद्वर्गेऽत्र विद्याङ्गजबन्धुवर्गैः।
स्वाप्तिः कलाकौशलसप्तिकाव्यैः कांस्यादिभिर्वा मतियोगतः स्यात् ॥ १० ॥

लाभ स्थान बुध से युक्त वा दृष्ट हो वा लाभ में बुध का वर्ग हो तो विद्या, पुत्र तथा बान्धव वर्ग से एवं कला, कौशल्य, घोडा तथा काव्य से अथवा कांस्यादि से वा बुद्धि के योग से धन की प्राप्ति होती है।

लाभ सम्बन्धी गुरु फलः—

लब्धिस्थले लेखपुरोहितेन युक्तेक्षिते तत्र तदीयवर्गे ।
गोदन्तिगाङ्गेयतुरङ्गयज्ञक्रियादिभिर्भूपतितोऽर्थलाभः ॥ ११ ॥

लाभ स्थान गुरु से युक्त वा दृष्ट हो वा लाभ में गुरु का वर्ग हो तो गौ, हाथी, सुवर्ण, घोडा तथा यज्ञ क्रिया से एवं राजा से धन लाभ होता है ।

लाभ सम्बन्धी शुक्र फलः—

मनोरथे भार्गवनन्दनेनेक्षिते युतेऽत्रास्य गणे स्वलब्धिः ।
गमागमैर्वारवधूजनैर्वा मुक्ताफलै रौप्यकरत्नपूर्वैः ॥ १२ ॥

लाभ स्थान शुक्र से दृष्ट वा युक्त हो अथवा उस में शुक्र का वर्ग हो तो जाने आने के कार्य से वेश्याजनों से मोतियों से चान्दी से वा रत्नादियों से धन लाभ होता है ।

लाभ सम्बन्धी शनि फलः—

एकादशे सौरिसमेतदृष्टे गणोऽत्र तस्य द्विपगोलुलायैः ।
गन्धर्वशस्त्रैः कृषिलोहनीलैर्यद्वा पुरग्रामगणैर्धनाप्तिः ॥ १३ ॥

लाभ स्थान शनि से युक्त वा दृष्ट हो अथवा उस में शनि का वर्ग हो तो हाथी गौ भैंस घोडा शस्त्र, खेती, लोहा नील नगर वा ग्राम समूह से धन का लाभ होता है ।

ग्रहों के बलानुसार युक्त फलों के लाभालाभ का परिज्ञानः—

निम्नारिभांशे भवगो विहङ्गः फलं न दद्याद्बहुषु ग्रहेषु ।
उपान्त्यसम्बन्धिषु योऽधिवीर्य्यः स नाकचारी स्वफलं प्रयच्छेत् ॥ १४ ॥

नीच वा शत्रु की राशि तथा नवांश में लाभभावगत ग्रह हो तो वह अपने पूर्वोक्त फल को नहीं देता है। यदि लाभ स्थान में बहुत ग्रहों का सम्बन्ध हो तो उन सब में जो ग्रह अधिक बली हो वह अपने फल को देता है ।

यादृग्वर्णः खेचरो लाभगेहे तादृग्वर्णप्राप्तिरुक्ता सुधीन्द्रैः ।
किं तद्वर्णैर्मानुषैर्मित्रवर्गैर्वित्तं सौख्यं जायते चेतनानाम् ॥ १५ ॥

लाभ स्थान में जो ग्रह हो उस के वर्ण के पदार्थों से धन लाभ कहे । अथवा उस वर्ण के मनुष्य तथ मित्रवर्गों से मनुष्यों को धन का लाभ तथा सुख होता है ।

लाभागारे शोभनाकाशवासः सद्वित्तं स्यात्तत्र पापाभिधानः ।
वाच्यं पापोपार्जितं स्वापतेयं मिश्रैर्मिश्रं स्वापतेयं प्रदिष्टम् ॥ १६ ॥

लाभ में शुभ ग्रह होतो मनुष्य का उत्तम धन और पाप ग्रह होतो पाप कर्म से उपार्जित धन एवं मिश्रग्रहों से मिश्र धन कहा है।

गुणैः समस्तैः सहितो वियच्चर इष्टाधिको वीययुतो भवोपगः।
विद्याङ्गनाभोगविभूषणाम्बरयानादिकानां सुखमाप्नुयान्नरः॥ १७॥

लाभस्थान में समस्त गुण युक्त, अधिक इष्ट बल वाला तथा षड्बल युक्त ग्रह होतो विद्या, स्त्री, भोगविलास भूषण, वस्त्र तथा वाहनादियों के सुख को प्राप्त होता है।

द्रव्यायेशौ देहपस्येष्टखेटौ वित्तं ब्रूयाद्दानसत्कर्म्मयोग्यम्।
भिक्षाशी स्यादायगो वैरिनिम्नदुःस्थानेशो निर्जितो वीतवीर्य्यः॥ १८॥

धनेश तथा लाभेश के दोनों लग्नेश के मित्र होतो दान तथा सत्कर्म योग्य धन को कहे। यदि लाभ में शत्रु राशि गत नीच राशि गत दुष्ट स्थानेश पराजित वा निर्बल ग्रह हो तो भिक्षा का भोजन करने वाला होता है।

पौरालयात्पुत्रगृहाच्च पुण्यादाद्यं च मध्यं स्थविरं वयः स्यात्।
यस्मिन्नवस्थां प्रगताः शुभेटास्तस्मिन्नखण्डं सुखमङ्गिनां स्यात्॥ १९॥

लग्न से चारस्थान प्रथमावस्था, पञ्चम से चारस्थान मध्यमावस्था एवं नवम से चारस्थान वृद्धावस्था के होते हैं। जिस अवस्था के स्थानों में शुभ ग्रह हों उस अवस्था में मनुष्यों को अखण्ड सुख होता है।

खगाः प्रयाता मुदिताः स्वभस्थाः स्वीयोच्चगास्तथा वयसीह यस्मिन्।
राज्यस्य सौख्यं महः इन्दिरा च सुनिश्चितं तत्र तनूभृतां स्यात्॥ २०॥

जिस अवस्था में मुदित स्वराशिगत वा स्वोच्चगत ग्रह हों उस अवस्था में मनुष्यों के लिए राज्य का सुख तेज की वृद्धि तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

नीचङ्गता अस्तमिता नभोगा यत्रारिभस्था वृजिनेक्ष्यमाणाः।
तत्राऽऽमयं दुष्टजनागमं च पदच्युतिं वाऽपचितिं वदन्ति॥ २१॥

जिस अवस्था में नीच राशि गत अस्तगत शत्रु राशि गत वा पापदृष्ट ग्रह हों उस अवस्था में रोग दुर्जन का समागम पदभ्रष्ट वा हानि को कहते हैं।

धनी भवेऽघे यदि सोच्च भांशे मनोरथेशे पथिकेन्द्रचिद्रे।
विन्देत तत्कारकवर्गतोऽर्थं योगानुसारेण सहोवशेन॥ २२॥

लाभ में उच्च राशि गत तथा उच्चांश गत पापग्रह हो तो धनी होता है। यदि नवम केन्द्र वा पञ्चम में लाभेश होतो योगानुसार बल के वश से लाभकारक ग्रह के वर्ग से धन को प्राप्ति होती है।

वाचन्द्रौ षोडशिषोडशार्चिषौ द्रव्याप्तये सङ्गरसद्मगाः शुभाः ।
तथा लवे लाभगृहाधिपे सतां सम्बन्ध आत्माङ्कचतुष्टये तथा ॥ २३ ॥

द्वितीय में चन्द्र तथा शुक्र होंतो धन लाभ होता है । एवं अष्टम में शुभग्रह हों तो भी धन लाभ होता है । यदि कारकांश कुण्डली में लाभेश का शुभ ग्रहों के साथ सम्बन्ध हो और वह पञ्चम नवम वा केन्द्र में होतो भी धन की प्राप्ति होती है ।

धन प्रद स्थान परिज्ञानः—

धीस्वायपुण्यानि मदाम्बुमूर्तिखस्थानानि सन्मध्यमवित्तदानि च ।
एतानि सर्वाणि सदोत्तरोत्तरं क्रमात्स्मृतानि प्रबलानि पण्डितैः ॥ २४ ॥

पञ्चम, द्वितीय, लाभ तथा नवम ये धनप्रद उत्तम स्थान है । सप्तम, चतुर्थ, लग्न तथा दशम ये धनप्रद मध्यम स्थान है । ये पूर्वोक्त सब स्थान क्रम से उत्तरोत्तर प्रबल धनप्रद जानने चाहिएँ ।

धन लाभ दिक परिज्ञानः—

तत्तत्खेचरदाये वित्ताप्तिः कथितव्या ।
तत्तत्पुष्करगानामाशास्वेव धनाप्तिः ॥ २५ ॥

जन्म समय में जो जो ग्रह धन देने वाले हों उन उन ग्रहों की दिशाओं में धन की प्राप्ति कहनी चाहिएं एवं धन प्रद ग्रहों की दिशाओं में धन का लाभ कहे ।

धन लाभ समय परिज्ञानः—

द्रव्याप्तिरायेश्वर आयकारको लाभेक्षको लाभकरोऽर्थपोऽर्थगः ।
योऽर्थेक्षकश्चेष्वधिवीर्यवाञ्छुभसम्बन्धवानस्य दशासुभुक्तिषु ॥ २६ ॥

लाभेश, लाभकारक, लाभदर्शी, लाभप्रद, धनेश धनगत तथा धनदर्शी इन उक्त सातों में से जो अधिक बली हो और जिस का शुभ ग्रहों के साथ सम्बन्ध हो उस ग्रहकी दशा तथा अन्तर्दशा में धनकी प्राप्ति होती है ।

गोचर द्वारा धन लाभ समय परिज्ञानः—

यदा गोचरे जन्मनोऽङ्गाज्जडांशोः स्वदस्थानपा द्रव्यदागारकेषु ।
खगेन्द्राः स्थितास्तत्र यात्राः स्वभं चेद्युतान्योन्यभस्थाः स्वदस्थानपानाम् ॥ २७ ॥

स्वदागारके संयुतिर्गोचरेण स्वदस्थानमायाति पर्जन्यपूज्यः ।
धनाप्तिं वदेद्धानियोगानपीह बुधश्चिन्तयेत्तत्फलं तद्बलेन ॥ २८ ॥

जन्म लग्न से तथा जन्म चन्द्र राशि से धन प्रद स्थानों के स्वामी गोचर से जब धन प्रद स्थानों में आवे और वे धन प्रद स्थानों में स्थित ग्रह जब स्वराशि में प्राप्त हों वा अन्योन्य राशि में हों और धन प्रद स्थान के स्वामियों का धन प्रद स्थानों में योग हो एवं उन ही धनप्रद स्थानों में गोचर से जब गुरु आवे तब धन की

प्राप्ति को कहे। धन लाभ चिन्तन समय में धन हानि के योगों का भी विचार करे। धन हानि प्रद ग्रहों के बल से धन प्राप्ति तथा धन हानि के फल का विचार करे।

सुजंघ तथा जंघा वैकल्य योगः—

सदाढ्यदृष्टे लभने सुजंघः शाशुर्विभ कुम्भझषैणगौ वा।
सतिम्यजऽङ्कस्यकगेऽघदृष्टे किं यातपर्वान्ततनोस्तमीशे ॥ २९ ॥

भे मभौमे किमिलातनूजे स्वदृद्गेऽगे मझषाजभे वा।
एवं विधे ब्धमुतेऽतिबाधा जंघाक्षतिः स्यान्निशि जन्म पुंसाम् ॥ ३० ॥

लाभ स्थान यदि शुभ ग्रह से वा दृष्ट हो तो सुन्दर जंघा वाला होता है। कुम्भ, मीन तथा मकर राशि में नवमेश तथा दशमेश हो तो (१) व्यय में मीन गत वा मेष गत लग्नेश हो और वह पाप दृष्ट हो तो (२) गत पर्वान्त लग्न से षष्ठ स्थान में मङ्गल युक्त चन्द्रमा हो तो (३) रात्रि का जन्म हो, षष्ठ में मीन गत वा मेष गत भौम हो और वह अपनी दृष्टि में हो तो (४) एवं रात्रि का जन्म हो, षष्ठ में मीन गत वा मेष गत शनि हो और वह अपनी दृष्टि में हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुषों को अत्यन्त कष्ट तथा जंघा की हानि होती है।

मान्द्ये व्यये मन्ददृष्टौ विलग्नेऽहौ लोहिते वाऽऽस्यमान्वितेऽगौ।
अपादवस्थे दिवसांशे जंघावैकल्यवान् मनुजस्तदानीम् ॥ ३१ ॥

व्यय वा षष्ठ में शनि हो और 'लग्न' पाप ग्रह से दृष्ट हो तो (१) राहु यदि मङ्गल शनि से युक्त हो एवं षष्ठ में सूर्य हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य जांघ से विकल होता है।

जंघा में धातु पाषाणिका रोग योगः—

होरालग्नाङ्कते धिष्ण्य आक्रान्तो मृदुगामिना।
धातुपाषाणिकारोगो जघने जायते विशाम् ॥ ३२ ॥

लग्न में शनि से आक्रान्त शुक्र हो तो उक्त योग में पुरुषों की जंघा में धातु पाषाणिका रोग होता है।

लाभ गत रवि फलः—

भान्तो भवस्थो बहुधान्यवन्तं यानस्य सिद्धिं कुरुते नखाब्दे।
भृत्येषु हार्दं प्रभुपीडितं स्ववाग्जालवित्तार्जनशक्तिमुग्रैः ॥ ३३ ॥

युक्तो वियानं बहुधान्यकव्ययं ससौख्यनाथो द्रविणाधिकारिणम्।
प्रभूतवप्रे यदि यानयोगकं सुदैववन्तं स्वगृहादिगो बली ॥ ३४ ॥

लाभ में सूर्य हो तो बहुत धान्य (अन्न) वाला, बीस वें वर्ष वाहन की प्राप्ति, भृत्यों में स्नेह, स्वामी से पीड़ा एवं अपने वाक्‌जाल से धनोपार्जन शक्ति को करता है। यदि वह पाप युक्त हो तो वाहन से हीन तथा बहुत धान्य के व्यय को करता है। यदि वह सुखेश से युक्त हो तो बहुत क्षेत्र में द्रव्य के अधिकार को करता है; यदि वह स्वराशि प्रभृति में हो तो बलवान् होता है।

लाभ गत चन्द्र फल:—

ग्लाघ्याप्तिसद्मनि बहुश्रुतवान् खबाण-
वर्षे त्वतीव बलवांस्तनयर्णयोगः ।
निक्षेपलाभसहितः समुतोपकारी
युक्तो गुणैः सभृगुजे नरयानलब्धिः ॥ ३५ ॥

जातस्त्वनेकजनरक्षणभाग्यभाक् च
केदारवान्मनुभवो बहुविद्ययाऽऽढ्यः ।
वीर्य्यच्युते भवनपेऽतिधनव्ययश्चे-
त्तस्मिन्यदा बलयुते द्रविणस्य लाभी ॥ ३६ ॥

लाभ में चन्द्रमा होतो प्रसिद्धि वाला, पचास वें वर्ष अति बली पुत्र ऋण का योग, निक्षेप धन (धरोहर) के लाभ से युक्त, पुत्र सहित उपकार वाला तथा गुणों से युक्त होता है । यदि वह शुक्र से युक्त होतो मनुष्य-वाहन की प्राप्ति, अनक मनुष्यों का पालक, भाग्यवान्, क्षेत्र वाला तथा बहुत विद्या वाला होता है । यदि लाभेश निर्बल होतो धनका व्यय और लाभेश बली होतो धनलाभ वाला होता है ।

लाभ गत भौम फल:—

सम्प्राप्तौ चेदसृजि सधनो भूरिकृत्येन युक्तः
क्षिप्राप्त्याढ्यः स तु निजगुणैः संयुते सद्द्वयाभ्याम् ।
भ्रात्रर्थाढ्यो यदि मनुभवेद्भनाथयोगो नरस्य
राज्ञामीशो भवति जनने क्षेत्रनाथेन युक्ते ॥ ३७ ॥

लाभ में भौम होतो धनी, बहुत कर्तव्य वाला तथा अपने गुणों से शीघ्र प्राप्ति युक्त होता है । यदि वह दो शुभ ग्रहों से युक्त हो तो भ्राता के धन से युक्त और मनुष्य का महाराजयोग होता है । यदि वह सुखेश से युक्त होतो राजाओंका अधिपति (सम्राट्) होता है ।

लाभ गत बुध फल:—

एणाङ्कजे आये बहुमङ्गलप्रदोऽनेकप्रकारेण नरो धनी भवेत् ।
गोरूपवर्षादुपरि स्वनन्दनक्षेत्रैः समेतः कृपया समन्वितः ॥ ३८ ॥
तत्र सोग्रेऽघभे वित्तलोपः स्याद्धीनमूलतः ।
सद्युक्ते स्वगृहे स्वोच्चे शुभमूलेन वित्तवान् ॥ ३९ ॥

लाभ में बुध हो तो बहुत मङ्गल दायक, अनेक प्रकार से धनवान्, १९ वर्ष उपरान्त पुत्र, क्षेत्र तथा दया से युक्त होता है । यदि वह पाप युक्त वा पाप राशि में हो तो नीचजनों के कारण धन का नाश और वह शुभ युक्त हो स्वराशि में हो वा स्वोच्च राशि में हो तो उत्तम कारणों से धनवान् होता है ।

लाभ गत गुरु फलः—

अर्च्ये भवेऽर्थी हयवान् रदाब्दे बहुप्रतिष्ठो बहुलाभभाक् सन् ।
निक्षेपलाभः सविधौ शुभोग्रैर्युक्ते गजाप्तिर्नियतिप्रवृद्धिः ॥ ४० ॥

लाभ में गुरु हो तो धनवान् ३२ वें वर्ष में अश्वलाभ, महती प्रतिष्ठा, बहुत लाभ तथा विद्वान् होता है । यदि वह चन्द्रमा से युक्त हो तो निक्षेप (धरोहर) लाभ और शुभ पाप से युक्त हो तो हाथी का लाभ तथा भाग्य की वृद्धि होती है।

लाभ गत शुक्र फलः—

भावे भे क्षितिलाभवान् बहुधनैर्युक्तो दयावान्बुधः
सद्युक्ते बहुयानवान् खलयुतेऽहोमूलतोऽर्थान्वितः ।
सौम्याढ्ये शुभमूलतो द्रविणवान् यस्योद्भवे प्राणिनो
नीचर्क्षे खलरन्ध्रपादिसहिते तत्राप्तिकावर्जितः ॥ ४१ ॥

लाभ में शुक्र हो तो भूमि लाभ वाला, बहुत धन से युक्त, दयालु तथा पण्डित होता है। यदि वह शुभ युक्त हो तो बहुत वाहन वाला होता है। एवं पाप युक्त हो तो पापमूल से धनवान् और शुभ युक्त हो तो शुभमूल से धनवान् होता है। यदि वह नीचराशि में हो वा पाप ग्रह से वा अष्टमेशादि से युक्त हो तो लाभ रहित होता है।

लाभ गत शनि फलः—

भाग्ये भावे विघ्नकृद्राजपूज्यः पृथ्वीलाभोऽस्त्यर्थवान् स्वोच्चराशौ ।
स्वक्षेत्रे वा पण्डितोऽतीवभाग्ययोगोऽस्त्यर्थी वाहनानां च योगः ॥ ४२ ॥

लाभ में शनि हो तो विघ्न करने वाला, राजा से सम्मानित, भूमि लाभ वाला तथा बहुत धनी होता है। यदि वह स्वोच्च राशि वा स्वराशि में हो तो पण्डित, बहुत भाग्य योग, बहुत धनी तथा वाहनों का योग होता है।

लाभ गत राहु फलः—

फणीशे फलभावस्थे समृद्धो देहसम्भवैः ।
धनैर्धान्यैः सुसम्पन्नो मानवो जायते तदा ॥ ४३ ॥

लाभ में राहु हो तो पुत्रों से समृद्ध शाली एवं धन तथा धान्यों से परिपूर्ण होता है।

लाभ गत केतु फलः—

पताके फले स्वल्पभोगी सुभाषी सुविद्यायुतस्तुन्दपीडः प्रतापी ।
सुवासाः सुभोगी तथा दर्शनीयोऽखिलायो जनार्च्यः सुता दुर्भगाऽस्य ॥ ४४ ॥

लाभ में केतु हो तो अल्प भोग वाला, सुन्दर बोलने वाला, सुन्दर विद्यावान् उदर पीडा वाला, प्रताप वाला, सुन्दर वस्त्र भोग वाला, देखने योग्य समस्त लाभवाला, लोगों से सम्मानित और उस की कन्या दुर्भगा होती है।

लाभ गत रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

कुर्यात्सुताप्तिं जिनवत्सरे रविर्नखोन्मिते वाऽऽयग इन्दुमङ्गलौ ।
उद्यानसौख्यं कुरुतो जिने नखे वर्षेऽक्षिवेदेऽथ धनं बुधो दिशेत् ॥ ४५ ॥

अब्दे नृपेऽर्केऽथ भवाक्पती धनप्राप्तिं विधत्तो भवगौ युगप्रमे ।
वर्षेऽर्थसौख्यं त्वतुलं भवोपगा बाणाब्धिवर्षेऽहियमानिलासृजः ॥ ४६ ॥

लाभ में सूर्य हो तो २४ वें वर्ष वा २० वें वर्ष पुत्र लाभ, चन्द्र मङ्गल हों तो २४ वें वर्ष २० वें वर्ष वा ४५ वें वर्ष में उद्यान (बगीचे) के सौख्य को करते हैं। एवं लाभ में बुध हो तो १६ वें वर्ष वा १२ वें वर्ष में धन का लाभ, शुक्र गुरु हों तो चौथे वर्ष धन की प्राप्ति एवं राहु, शनि, केतु तथा भौम हों तो ४५ वें वर्ष में अमित धन सुख को करते हैं।

रवि दृष्ट लाभ फलः—

पश्येत्प्राप्तिगृहं पतीर्जलजनौ स्वाप्तिं प्रकृत्या भृशं
शत्रूणां निकरात्तनूजमरणं सत्तीर्थयात्रादिकम् ।
कुर्वीताधिकसाहसं सधिषणं चाधिप्रयुक्तं सम-
वस्त्वाप्तिं बहुधातुसम्भवसुखं वृत्तिं नृणां कर्म्मगः ॥ ४७ ॥

लाभस्थान को सूर्य देखता हो तो प्रकृति से बारंबार धन की प्राप्ति, शत्रु समूह से पुत्र की मृत्यु, उत्तम तीर्थों की यात्रादि, अधिक साहस, बुद्धिमत्ता, मानसिक रोग, सकल वस्तु ओंकी प्राप्ति, बहुत धातु ओं से उत्पन्न सुख एवं मनुष्यों की कर्म वृत्ति को करता है।

चन्द्र दृष्ट लाभ फलः—

राकेशेक्षा लभनभवने यस्य नुर्जन्मकाले
व्याधेर्नाशो बहुसुखचयैरुल्लसँल्लोकपूज्यः ।
सर्वत्राप्तिर्द्रविणसदनप्राप्तिकृत्संशयो नो
कान्तापुत्रैः सुखमतिशयं स्वर्णतुर्याङ्घ्रिवृद्धिः ॥ ४८ ॥

लाभस्थानपर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो रोग का नाश, बहुत सुख समूह से प्रफुल्लित, लोगों से सम्मानित, सर्वत्र लाभ, धन तथा गृह की प्राप्ति, स्त्री तथा पुत्रों से अतिशय सुख एवं सुवर्ण तथा चतुष्पद की वृद्धि होती है।

भौम दृष्ट लाभ फलः—

पृथ्वीपुत्रो मनुजजनने प्रेक्षते प्राप्तिगेह-
मायुर्वृद्धिं यदि वितनुते योषितां गर्भनाशम् ।
पुंसां वित्तं कनकसुखतो धातुकोशं महान्तं
क्वापि क्वापि क्षतिरिह मता कुप्यकाद्यैर्धनानाम् ॥ ४९ ॥

लाभस्थान को मङ्गल देखता हो तो आयु की वृद्धि, स्त्रियों का गर्भ नाश, सुवर्णादि से धनलाभ, धातुओं का बड़ा भारी कोश एवं ताम्रादि धातुओं से कभी कभी धन की हानि होती है।

बुध दृष्ट लाभ फलः—

वीक्षेतायं विधुतनुभवो दैववन्तं प्रसूते
प्रज्ञावन्तं सुपरिविदितं भूरिकन्यासमेतम्
शास्त्रेदक्षं खलु निखिलैसौख्यभाजं विलासैः
सम्पत्त्या वा नरमविरतं वन्द्यमानं च हृष्टम् ॥ ५० ॥

लाभ स्थान को बुध देखता हो तो भाग्यवान्, बुद्धिमान्, अतिप्रसिद्ध बहुत कन्या ओंसे युक्त शास्त्र में निपुण समस्त धनों के सुख वाला, विलास वा सम्पत्ति से निरन्तर वन्द्यमान एवं हृष्ट पुरुष को उत्पन्न करता है।

गुरु दृष्ट लाभ फलः—

लाभागारं जनुषि गुरुणा दृश्यते पूर्णमायु-
र्योषापुत्रद्रविणजसुखं सङ्गतिः सज्जनानाम्।
सौम्यप्रज्ञा दृढ उत विरुक् कान्तिमान्मोहचिन्ता-
युक्तो वक्ता प्रतिभवमतिः स्याज्जयी शूर एषः ॥ ५१ ॥

लाभ स्थान यदि गुरु से दृष्ट हो तो पूर्णायु; स्त्री, पुत्र, तथा धन से उत्पन्न सुख, सज्जनों की सङ्गति, सौम्य बुद्धि, दृढ शरीर, आरोग्य, तेजस्वी, मोह तथा चिन्ता से युक्त, वक्ता, प्रत्युत्पन्न बुद्धि, सङ्ग्राम में विजयी और शूर वीर होता है।

शुक्र दृष्ट लाभ फलः—

यानार्थवृद्धिसहितो विदितो यशस्वी
सीमन्तिनीगणसुखानुभवोर्जितः स्यात्।
ग्रामाधिपोऽरिजनहाऽच्छदृगायभे प्राग्-
वार्तारतो निजजनादिकपालकोऽयम् ॥ ५२ ॥

लाभ स्थान पर की दृष्टि हो तो वाहन तथा धन के वृद्धि से युक्त प्रसिद्ध, यशस्वी, स्त्रियों का अधिक सुख, ग्राम का स्वामी, शत्रु हन्ता, पूर्व वार्ता में लीन एवं अपने मनुष्यों को पालने वाला होता है।

शनि दृष्ट लाभ फलः—

ग्रामौघगौरवपुरैः प्रयुतस्तनून-
मित्रान्वितोऽय इभनीलतुरायलाभः।
धान्याप्तियुक् सुतजनात्सुखमल्पकं ज्ञो
लब्धिः खलाद्भवति दृग्रविजस्य लाभे ॥ ५३ ॥

लाभ स्थानपर शनि की दृष्टि हो तो ग्रामों के समूह से, गौरव से तथा पुर से युक्त। पुत्र तथा मित्रों से युक्त, लोहा, हाथी, नील तथा महिषी का लाभ, धान्य की प्राप्ति से युक्त, पुत्र से अल्प सुख, विद्वान् एवं नीच जन से लाभ होता है।

राहु दृष्ट लाभ फलः—

दानवाधिपतिनेक्षिते भवे स्यात्सुखं मनुजनाथवर्गतः।
दीर्घमायुरिह वृद्धिरङ्गिनो वर्ष्मणो द्रविणलाभ ईर्य्यते ॥ ५४ ॥

लाभ स्थान यदि राहु से दृष्ट हो तो राज वर्ग से सुख दीर्घायु, शरीर की वृद्धि एवं धन का लाभ कहा है।

लग्न गत लाभेश फलः—

प्राप्तीशे पुरगे महोद्यमयुतो वक्ता धनी कौतुकी
विख्यातः समदृक् प्रसन्नहृदयः शूरो महान् सात्त्विकः।
सेर्ष्यः स्वीयजनप्रियो गतखलो दाता नृपाप्तार्थभाक्
स्वल्पायुः सितधौतवस्त्रसहितः स्यान्निर्मलो वीर्य्ययुक् ॥ ५५ ॥

सुकर्मा च सुभागः कुत्सितात्मभवैर्युतः।
मृत्युं प्राप्नोति तृष्णाया दोषेण मानवस्तदा ॥ ५६ ॥

लग्न में लाभेश हो तो अतीव उद्योगी, वक्ता, धनवान्, कौतुकी, प्रसिद्ध, समान दृष्टि, प्रसन्न हृदय, शूरवीर अधिक सत्व गुणवाला, ईर्ष्या वाला, परिजनों का प्रिय, नीचजनों से रहित, दानी, राजा से धन लाभ वाला, अल्पायु, श्वेत धौतवस्त्र वाला, निर्मल शरीर, बलवान्, अतीव उत्तम कर्म कर्ता, सज्जन, निन्दित पुत्रों से युक्त एवं तृष्णा दोष से मृत्यु को प्राप्त होता है।

धन गत लाभेश फलः—

लब्धीशे विमलेऽर्थभेऽर्थबलयुग् लोकाग्रणीर्नीतिमान्
दीर्घायुः सुखितो वरायुधयुतो ज्ञः पालकश्चात्मनः
लोकानामशुभेऽतितस्करतया युक्तो ल्पजीवी सरुग्
जातः क्षुद्रकभोजनोऽल्पसुखवानुत्पन्नभुक् निर्धनः ॥ ५७ ॥

धन में लाभेश शुभग्रह हो तो धन तथा बल से युक्त, लोगों का अगुआ, नीतिवाला, दर्घायु, सुखी, उत्तम शस्त्र से युक्त, पण्डित एवं आत्मा तथा लोगों का पालक होता है। पाप ग्रह लाभेश होतो अतिचौर्य कर्म वाला, अल्पायु, रोगी, अल्प भोजन वाला, अल्प सुखी, उत्पन्न भोगी एवं धन से हीन होता है।

कोशे सहोत्थे समवाप्तिनेतरि तदा सुतीर्थेषु रतोऽतिलोलहृत्।
निःस्वापतेयः कुशलोऽखिलेषु च कार्येषु शूलामयभाग् जनोऽनिशम् ॥ ५८ ॥

धन वा सहज में लाभेश हो तो उत्तम तीर्थों में निरत, अतीव चञ्चल हृदय, निर्धन, सब कार्यों में चतुर एवं निरन्तर शूलरोग वाला होता है।

सहजगत लाभेश फल:—

भुजे भवेशे विषयी सुविक्रमी शुचिर्नरेशः सहजाधिकः स्वपः ।
प्रभूतविद्यो निजधर्म्मवत्सलः सुबान्धवो रत्नपरीक्षकः शुभे ॥ ५९ ॥
बन्धुश्रीपालकः स्वीयलोकमित्रातिलाभदः ।
सुभगोऽघे स्वबन्धूनां छेत्ता स्याद्रिपुवज्जनः ॥ ६० ॥

तृतीय में लाभेश होतो विषयवाला, अति पराक्रमी, पवित्र, मनुष्यों का स्वामी, अधिक भाईयों वाला, धनवान्, अधिक विद्यावाला, धर्म्म प्रिय, सुन्दर बान्धवों वाला एवं रत्नों का परीक्षण करनेवाला होता है। यदि शुभग्रह लाभेश होतो बान्धवों की लक्ष्मी को पालनेवाला, अपने लोग तथा मित्रों के लिए लाभदायक एवं ऐश्वर्यवान् होता है। यदि पापग्रह लाभेश होतो शत्रुजनों के समान अपने बान्धवोंका छेदन करनेवाला होता है।

सुखगत लाभेश फल:—

भावेशेऽम्बुनि मातृतातसुखभाङ् म्लेछप्रियो धर्म्मवान्
प्राबल्यः स तु तोलने यदि कृषेः कर्मान्वितोऽप्युद्भवी ।
दीर्घायुः समवाप्तिकारणरतः सत्कर्म्मतो लाभवान्
प्रीतिर्नन्दनकर्म्मणि स्वजनके भक्तिर्बली भूतिभाक् ॥ ६१ ॥

सुख में लाभेश हो तो माता पिता के सुखवाला, म्लेच्छजनों का प्रिय, धर्मात्मा, कृषि के कार्य में तत्पर होने पर भी तोलने में प्रबल, दीर्घायु, प्राप्ति के कारण में लीन, शुभ कर्म से लाभवाला, पुत्र के कर्म में प्रीति, पिता में भक्ति, बलवान् एवं ऐश्वर्यशाली होता है।

भावेश्वरे भूतलभावसंस्थे किं तन्तुयाते बहुसौख्ययुक्तः ।
युक्तः कुमारैश्च समस्तसिद्धिप्रदायकोऽनेकधनः सधर्म्मः ॥ ६२ ॥

सुख वा सुत में लाभेश हो तो बहुत सौख्य तथा पुत्र युक्त, समस्त सिद्धियों का दाता, अनेक प्रकार के धनवाला और धर्मात्मा होता है।

सुत गत लाभेश फल:—

अयानपेऽपत्यगते स्वलोकोपकारकर्त्ता स कविश्चिरायुः ।
प्रज्ञासमेतः सुतसौख्ययुक्तो गेहप्रियस्तातसुतौ तदानीम् ॥ ६३ ॥
परस्परं तुल्यगुणौ भवेतां तथा मिथः स्नेहयुतौ सदा तौ ।
शुभैः सुखाढ्यो मितभुग् विलोमात्फलं प्रदिष्टं वृजिनाभ्रगेहैः ॥ ६४ ॥

पञ्चम में लाभेश हो तो अपने लोगों का उपकार करनेवाला, कवि, दीर्घायु, बुद्धिमान्, पुत्रसुख से युक्त घर को प्रिय माननेवाला एवं पिता पुत्र दोनों परस्पर तुल्य गुणवाले और परस्पर स्नेह युक्त होते हैं। यदि पञ्चम तथा लाभ में शुभ ग्रहों का सम्बन्ध होतो सुख युक्त तथा अल्प भोजनवाला होता है। एवं पापग्रहों से विपरीत फल कहा है।

रिपुगत लाभेश फल:—

द्विष्याधिपेऽरिजननीतिनिजस्थितिः स्या-
त्सर्वं सुखं सुतविपद् बहुलाऽन्यदासः।
एडो गृही कृशतनुः परदेशचारी
नानोपतापसहितो हयसङ्ग्रही च ॥ ६५ ॥

सुवैरो दुरिते नित्यं कुशलैः सह सम्मतः।
परदेशगामिनोऽस्यान्तो भवेत्तस्करहस्ततः ॥ ६६ ॥

षष्ठ में लाभेश हो तो शत्रुजनों की नीति से अपनी स्थिति, सर्व प्रकार का सुख, पुत्र के लिए बहुत कष्ट पराया सेवक, बधिर, घरबारवाला, दुर्बल शरीर, परदेश वासी, अनेक रोग युक्त, घोड़ों का संग्रह करनेवाला एवं अतीव वैरवाला होता है। यदि पाप ग्रह लाभेश हो तो चतुर पुरुषों के साथ सम्मत, परदेश में वास करने के कारण चोर के हाथ से मृत्यु होती है।

सप्तम गत लाभेश फल:—

भार्यालये भवपवे कविरुग्रशीलः
पत्न्या सह प्रचुरतीर्थकरो व्रती च।
एकाङ्गनाजनपतिर्बहुसस्यसम्प-
द्युक्तो भवी पदयुतो नियतं चिरायुः ॥ ६७ ॥

तेजस्वी बहुशीलाढ्यो गर्हितैर्बहुभिर्गदैः।
उपेतः खेचरैः सौम्यैः प्रभूतसौख्यवान्भवेत् ॥ ६८ ॥

सप्तम में लाभेश हो तो कवि, उग्रस्वभाव, स्त्री के साथ बहुत तीर्थ करने वाला, व्रतधारी, एक स्त्री का स्वामी बहुत अन्न तथा सम्पत्ति से युक्त पदवीधारी, निश्चय से दीर्घायु, तेजस्वी तथा अधिक शील स्वभाव वाला होता है। सप्तम तथा लाभ में पाप सम्बन्ध हो तो बहुत रोगों से युक्त और शुभ सम्बन्ध हो तो बहुत सौख्य वाला होता है।

लयालये वा ललनालये वा लाभाधिपे तल्ललना न जीवेत्।
स्यादप्रबुद्धो धनवानुदारोऽत्यसद्व्ययी मन्मथयुक् च मूर्खः ६८ ॥

अष्टम वा सप्तम में लाभेश हो तो उसकी स्त्री न जीवे और वह अप्रबुद्ध धनी, उदार हृदय, अतीव अशुभ व्यय वाला, कामी तथा मूर्ख होता है।

अष्टम गत लाभेश फल:—

व्ययेऽधिकेशे गिरिदुर्गचारकोऽलसो दृढाङ्गोऽश्मजलोद्भवव्यथः।
दुष्टे सुदीर्घामयवान् सुदुःखभाङ् नित्यं शुभे वैरकरोऽरिहन्दतः ॥ ७० ॥

अष्टम में लाभेश हो तो पर्वत, दुर्गचारी, आलसी, दृढ शरीर एवं पत्थर तथा जल से उत्पन्न पीडा वाला होता है। यदि पाप ग्रह लाभेश हो तो अति दीर्घ रोगी, नित्य अतीव दुःखित और शुभ ग्रह लाभेश होतो शत्रु समूह से वैर करने वाला होता है।

नवम गत लाभेश फलः—

सम्प्राप्तिपे पथिगते सुजनः प्रसिद्धो
धर्मे नरस्तदनु शास्त्रविशारदश्च।
आचार्य्यदेवगणभक्तिरतोऽधखेटे
स्याद् बान्धवव्रजविहीनो बहुलश्रुतः सः॥ ७१॥

नवम में लाभेश हो तो उत्तम मनुष्य, धर्म में विख्यात, शास्त्र वेत्ता एवं आचार्य तथा देवता ओं की भक्ति में निरत होता है। पाप ग्रह लाभेश हो तो बन्धु गणों से रहित और बहुश्रुत होता है।

यदाऽऽगमेशे गगनेऽयने वा धनी प्रसिद्धो नृपपूजितांघ्रिः।
स सत्यवादी कुशलः स्वकार्ये परोपकर्त्ता निजधर्म्मयुक्तः॥ ७२॥

दशम वा नवम में लाभेश हो तो धनवान् विख्यात राजा ओं से सम्मानित, सत्य वक्ता, अपने कार्य में प्रवीण, पराया उपकार करने वाला एव स्वधर्म्मावलम्बी होता है।

दशम गत लाभेश फलः—

तातेऽयपे वैरकरः स्वताते भक्तिर्जनन्यां सुकृतेन युक्तः।
सुदीर्घजीवी स्वभुजार्जिताप्तधनः सुकीर्त्तिः सहितः सुखेन॥ ७३॥

दशम में लाभेश होतो पिता के साथ वैर करने वाला, माता में भक्ति रखने वाला, पुण्यात्मा, अतिदीर्घायु वाला अपने बाहुबल से उपार्जित धनवाला, उत्तम कीर्ति एवं सुख से युक्त होता है।

लाभ गत लाभेश फलः—

भावाधिपो भवगतः कुरुते जनेशं
दीर्घायुषं बहुलनन्दनपौत्रयुक्तम्।
सत्कर्म्मवाहनधनांशुकरूपशील-
पश्वन्वितं शुभतनुं विपुलं मनोज्ञम्॥ ७४॥

दिने दिने सुकाव्येन पाण्डित्येन विवर्द्धते।
सुपुष्टिर्नृवरो वाग्मी तेजस्वी चोन्नतः सुखी॥ ७५॥

लाभ में लाभेश हो तो मनुष्यों का स्वामी, दीर्घायु, बहुत पुत्र पौत्रों से युक्त; शुभ कर्म, वाहन, धन, वस्त्र, रूप, शील तथा पशु ओं से युक्त, विस्तीर्ण मनोहर उत्तम शरीर, उत्तम काव्य तथा पाण्डित्य से प्रति दिन बढ़ता है। पुष्टियुक्त, मनुष्यों में श्रेष्ठ, प्रशस्तवाक्यवक्ता, तेजस्वी उन्नत तथा सुखी होता है।

व्यय गत लाभेश फलः—

कामार्त्तः क्षणिकः सदेह यवनैः संसर्गयुग् लम्पटो
मानाढ्यस्तनुजीवितस्तनुधनः सूत्पन्नभुग् दुःखभाक ।
स्यादुत्पातरतः खलो व्यसनयुक कट्यामयेनार्द्दितो
दाता ना स्थिरभोगवान् स्थितधनः प्राप्तीश्वरे प्रान्त्यगे ॥ ७६ ॥

बह्वङ्गनायुग् बहुदुष्टशेमुषी वैतालिकाभिः परिबुद्ध्यते जनः ।
मदालसोऽय शयितोऽङ्गनाजनसङ्गेऽतिकष्टेन समन्वितो भवेत् ॥ ७७ ॥

व्यय में लाभेश हो तो काम से पीडित, नित्य क्षणिक स्वभाव वाला, यवनों (मुसलमानों) से समागम रखने वाला, व्यभिचारी, मानी, अल्पायु, अल्पधनी, अतीव उत्पन्नभोगी, दुःखित, उत्पात कार्य में तत्पर, अधम, व्यसनी, कमर के रोग से पीडित, दानी, स्थिरभोग वाला और सञ्चित धन वाला बहुत स्त्रियों से युक्त, बहुत दुष्ट बुद्धि, अतीव कष्टयुक्त एवं स्त्रीजनों के सङ्ग में मद के आलस से सोता हुआ वैतालिकाओं से जगाया जाता है ।

लाभ गत मेष फलः—

उपान्त्यगेहोपगतेऽजसञ्ज्ञिते पुंसां यदा जन्मनि लाभमादिशेत् ।
तुर्याङ्घ्रिजं मानवनाथसेवया जातं प्रभूतं परदेशसेवनात् ॥ ७८ ॥

लाभ में मेष हो तो चतुष्पदों से उत्पन्न लाभ, राज सेवा जन्य बहुत लाभ एवं परदेश के सेवन से धन का लाभ कहे ।

लाभ गत वृष फलः—

फलागमे यस्य जनौ वृषाह्वये धनस्य लाभं प्रवदेद्विशिष्टजम् ।
सदैव गोधर्म्मकृतेः कृषीवलात्तथा सकाशात्स्वकलत्रसाधुतः ॥ ७९ ॥

लाभ में वृष हो तो सज्जन जन्य धन का लाभ कहे । एवं गोपालन तथा धर्मकृत्य, कृषीवल (किसान), निजस्त्री तथा साधुजन के पास से धन के लाभ को कहे ।

लाभ गत मिथुन फलः—

मनोरथस्थो नरयुग्मसञ्ज्ञितस्तदा प्रकुर्यादतिलाभमङ्गिनाम् ।
बहुप्रसिद्धिं वसनार्थभोजनपानोद्भवं स्त्रीजनवल्लभं तथा ॥ ८० ॥

लाभ में मिथुन हो तो वस्त्र, द्रव्य, भोजन तथा पेयपदार्थ जन्य बहुलाभ एवं बहुत प्रसिद्धि तथा स्त्रियों का प्रिय करता है ।

लाभ गत कर्क फलः—

लब्धौ कुलीरे जनने जनानां लब्धिर्भवेत्सज्जनसङ्गमेन ।
कृषेश्च सेवाजनिता प्रभूता शास्त्राच्च भाण्डाद्वसनादपीह ॥ ८१ ॥

लाभ में कर्क हो तो सज्जनों के सङ्ग से, कृषि से, सेवा से, शास्त्र से, भाण्ड विद्या से तथा वस्त्र से भी बहुत धन का लाभ होता है।

लाभ गत सिंह फलः—

प्राप्तिङ्गते पञ्चनखे बहूनां सदा जनानां वधबन्धनाद्यैः।
व्यापारतो वा परदेशवासाद् भवेत्सुलाभो जनितस्य पुंसः ॥ ८२ ॥

लाभ में सिंह हो तो नित्य बहुत जनों के वध से बन्धन से, व्यापार से तथा परदेश के वास से धन का बहुत लाभ होता है।

लाभ गत कन्या फलः—

यदाऽधिकागारगताऽङ्गनाख्या लाभं विधत्ते विनयेन वेदात्।
शास्त्रादुपायैर्बहुभिश्च साधुनीत्याद्भुतेनोत विवेकतोऽपि ॥ ८३ ॥

लाभ में कन्या हो तो विनय से, वेद से, शास्त्र से, बहुत उपायों से, उत्तम नीति से, अद्भुत कार्य से तथा विवेक से धन के लाभ को करती है।

लाभ गत तुला फलः—

भवे वणिग्भे जनने विचित्रैररण्यजैः सज्जनसेवया च।
सदा स्तुतं श्रेष्ठतमं प्रभूतं लभेत लाभं विनयेन जन्मी ॥ ८४ ॥

लाभ में तुला हो तो विचित्र वस्तु से वनजन्य पदार्थ से, सज्जनों की सेवा से एवं विनय से प्रशंसनीय, अत्यन्तश्रेष्ठ तथा बहुत लाभ को प्राप्त होता है।

लाभ गत वृश्चिक फलः—

अयानयाते यदि भङ्गसङ्गो नरस्य लाभः प्रभवेत्परस्य।
पैशुन्यसञ्जातविकारतोऽघाच्छलेन यद्वोत्तमभाषणेन ॥ ८५ ॥

लाभ में वृश्चिक हो तो पराई भेद नीति जन्य विकार से पाप से छल से अथवा उत्तम भाषण से धन का लाभ होता है।

लाभगत धनु फलः—

तुरङ्गजंघेऽधिकधामयाते सुसेवया पौरुषतः क्षितीशैः।
पुष्पाम्बरैः शस्त्रभवैरुपायैः स्वाप्तिर्विलासान्भजते जनुष्मान् ॥ ८६ ॥

लाभ में धनु हो तो सुन्दर सेवा से, पुरुषार्थ से, राजा से पुष्प तथा वस्त्र से एवं शस्त्रजन्य उपायों से धन-का लाभ और वह विलासों के भोगता है।

लाभगत मकर फलः—

कुरङ्गवक्त्रे लभनालयङ्गते द्रव्यस्य लाभो जलयानसंश्रयात् ।
विदेशवासान्नरनाथसेवनाद् व्ययात्मकः प्राज्यतरः स मानुषः ॥ ८७ ॥

लाभ में मकर होतो जल यान (नाव वा जहाज) के सेवन से विदेश वास से वा राजसेवा से धनका लाभ और वह मनुष्य अत्यन्त व्ययात्मक (खर्चीला) होता है ।

लाभ गत कुम्भ फलः—

अवाप्तियाते घटरूपराशौ विद्यानयाभ्यां द्रविणस्य लाभः ।
कुकर्म्मसङ्गात्सुसमागमेन दानेन पुण्येन च विक्रमेण ॥ ८८ ॥

लाभ में कुम्भ होतो विद्या तथा नीति से कुकर्मीयों के सङ्ग से सुन्दर समागम से दान से पुण्य से वा पराक्रम से धनका लाभ होता है ।

लाभ गत मीन फलः—

मनोरथे नीरनिकेतभे यदाऽनेकाप्तिरुक्ता कुशलैर्विचक्षणैः ।
हितोद्भवा भूपतिमानसम्भवा स्नेहोद्भवा वाथ विचित्रवाक्यजा ॥ ८९ ॥

लाभ में मीन होतो मित्र जन्य राजसम्मान जन्य स्नेह जन्य अथवा विचित्र वाक्यजन्य अनेक प्रकारकी प्राप्ति चतुर पण्डितों ने कही है ।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते लाभभावचिन्तनप्रकरणं त्रयस्त्रिंशमवसितम् ।

———

अथ

व्ययभावचिन्तनप्रकरणं प्रारभ्यते ।

व्यय भाव में चिन्तनीय पदार्थ परिज्ञान:—

व्ययः समस्तो विभवस्य नाशो व्ययः सुयज्ञेषु धनस्य हानिः ।
ऋणांघ्रिदूराटनबन्धनादि स्वापादिसौख्यं विकलत्वदण्डौ ॥ १ ॥

कृषेः क्रिया दुर्गतिदानलब्धी दातृत्ववामाक्षिजलाशयादि ।
तातानुजो वैकृतभोगपूर्वं मंत्री विवाहः पतनं रिपूणाम् ॥ २ ॥

वृत्तान्तमप्युद्वहनं पितुः स्वं निर्बन्धबाधे सदसत्क्रियादि ।
सम्पूर्णमेतद् व्ययनामधेये गेहे नराणां परिचिन्तनीयम् ॥ ३ ॥

समस्त प्रकार का शुभाशुभ व्यय, विभव का नाश, उत्तम यज्ञों में व्यय, धनकी हानि, ऋण (कर्जा), चरण (पैर), दूराटन (दूरदेश यात्रा), बन्धन (कैद), शयनादि सुख, विकलता, दण्ड, कृषिक्रिया (खेती का कार्य), दुर्गति (नरक पतनादि), दान प्राप्ति, दातृत्व (दान देना), वामनेत्र, जलाशयादि (प्याऊ कुआ बावड़ी इत्यादि), पिता के भाई (ताऊ चाचा), विकार, भोगादि, मंत्री, विवाह, पतन, शत्रुओं का वृत्तान्त, उद्वहन (स्वीकारादि विशेष), पिता का धन, निर्बन्ध (हठ), बाधा (पीडा) और शुभाशुभ क्रियादि इन सबका व्यय भाव में विचार करना चाहिए।

व्यय भाव में विशेष विचार:—

विचिन्तयेज्ज्यौतिषिको जघन्यतस्तन्नायकेनारुणनन्दनेन च ।
दातृत्वदूराटनदुर्गतीः सदा स्वापादिसौख्यं विभवार्थसंक्षयम् ॥ ४ ॥

दातृत्व (दानशक्ति), दूराटन (दूरदेश की यात्रा), दुर्गति (नरक पतनादि), स्वापादिसौख्य (शयनादि सुख), विभव (ऐश्वर्य) तथा धन का नाश इन सब वस्तुओं का विचार व्ययभाव, व्ययेश तथा शनि इन तीनों से करे।

सदसद् व्यय योग:—

शोभनेश्वरसमीक्षिते व्यये वाथ तत्र शुभवर्गगे किमु ।
केन्द्रगैर्गतमलैः शुभव्ययो द्वादशे खलखगेऽशुभव्ययः ॥ ५ ॥

यदि व्ययस्थान शुभ ग्रह तथा व्ययेश से दृष्ट हो अथवा व्ययस्थान में शुभ ग्रहों का वर्ग हो अथवा केन्द्र में शुभ ग्रह हों तो शुभ (उत्तम कार्य में) व्यय होता है। यदि व्ययस्थान में पाप ग्रह हो तो अशुभ (पाप कार्य में) व्यय (खर्च) होता है।

शुभ व्यय योगः—

स्वोच्चे सुहृन्निजगणे शुभखेशदृष्ट-
युक्तेऽक्र्पेऽथ चरमेशगभागनाथे।
अन्तः सतोः शुभगणे सुकृताभ्रगांशे
रायां व्ययो जनिमतां सुकृतस्य मूलात् ॥ ६ ॥

स्वोच्चराशि में मित्रवर्ग में वा स्ववर्ग में व्ययेश हो और वह शुभदशमेश से दृष्ट वा युक्त हो तो (१) शुभ ग्रहों के अन्तराल में शुभ वर्ग में वा शुभांशक में व्ययेश के नवांश का स्वामी हो तो उक्त योगों में पुरुषों का धर्म के कारण धन व्यय होता है।

बुधौ द्वादशगौ यद्वोपाध्यायौ विमलेक्षितौ।
पारावतादिभागस्थौ धर्म्मंमूलाद्धनव्ययः ॥ ७ ॥

व्यय में चन्द्रमा तथा बुध हों अथवा व्यय में गुरु शुक्र हों और वे शुभ दृष्ट हों तथा पारावतादि शुभ वर्ग में हों तो धर्म के कारण धन व्यय होता है।

पाप व्यय योगः—

पङ्के व्यये तदधिपे दुरितेऽघदृष्टे
वाऽक्र्के तदर्य्य उत मान्द्यहिमन्दयुक्ते।
पापांशकेऽथ रिपुनीचमुखांशयाते
कष्टाधिपे कलुषकर्म्मपवीक्ष्यमाणे ॥ ८ ॥

किं वा केन्द्रत्रिकोणस्थे क्रूरषष्ठिलवेऽक्र्पे।
अथ वा वीक्षिते पापैः पापहेतोर्धनक्षयः ॥ ९ ॥

व्यय में पाप ग्रह हो, व्ययस्थान का स्वामी पाप ग्रह हो और वह पाप ग्रह से दृष्ट हो तो (१) व्यय भाव वा व्ययेश यदि गुलिक राहु तथा शनि से युक्त हो और पापांश में हो तो (२) शत्रु वा नीच प्रभृति नवांश में व्ययेश हो और वह पाप कर्मेश से दृष्ट हो तो (३) केन्द्र वा त्रिकोण में व्ययेश हो और वह क्रूर षष्ठ्यंश में हो अथवा पाप दृष्ट हो तो पाप मूल से धन व्यय होता है।

शत्रु हेतु धन व्यय योगः—

मान्द्यादियुक्ते विबलारिपेक्षितयुक्तेऽन्तिमेशेऽरिवशाद्धनव्ययः।
आयेऽरिपेऽरौ फलपे धरागुणे वर्षे कुवेदे रिपुमूलतो व्ययः ॥ १० ॥

'व्ययेश' यदि गुलिकादि से युक्त हो और निर्बल षष्ठेश से दृष्ट वा युक्त हो तो शत्रु के वश से धन व्यय होता है। लाभ में षष्ठेश तथा षष्ठ में लाभेश हो तो ३१ वें वर्ष में वा ४१ वें वर्ष में शत्रु के कारण धन व्यय होता है।

स्त्री तथा भ्राता के हेतु धनव्यय योगः--

विवीर्य्यवामेशयुतेक्षितेऽन्त्यपे क्रूरांशके स्त्रीवशतोऽर्थनाशनम् ।
बलोनवक्रानुजपान्वितेक्षितेऽकेशे खलांशेऽनुजकारणव्ययः ॥ ११ ॥

क्रूरांश में व्ययेश हो और वह निर्बल सप्तमेश से युक्त वा दृष्ट हो तो स्त्री के कारण धन का नाश होता है । एवं क्रूरांश में व्ययेश हो और वह निर्बल भौम तथा निर्बल सहजेश से युक्त वा दृष्ट हो तो भाई के कारण धन व्यय होता है ।

भ्राता, कर तथा पुत्र हेतु धनव्यय योगः--

तद्वद् व्यये कोलकुजावथान्त्यगे पूज्ये कर व्याजवशाद्धनव्ययः ।
वीतौजसा धीपतिना युतेक्षितेऽन्त्येशेऽघभागे सुतमूलतो व्ययः ॥ १२ ॥

व्यय में शनि तथा मङ्गल हों तो भी भाई के कारण धनव्यय होता है । व्यय में गुरु हो तो कर के कारण धन व्यय होता है । एवं क्रूरांश में व्ययेश हो और वह निर्बल पञ्चमेश से युक्त वा दृष्ट हो तो पुत्र के कारण धनव्यय होता है ।

माता तथा पिता के कारण धनव्यय योगः--

तातेशतत्कारकदृष्टसंयुतेऽवसानपे तातवशाद्वसुव्ययः ।
सोग्रेऽन्त्यपे मातृपलोकितान्विते क्रूरस्य भागे जननीवशाद् व्ययः ॥ १३ ॥

'व्ययेश' यदि दशमेश तथा पितृकारक ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो पिता के कारण धनव्यय होता है । एवं क्रूरांश में पापयुक्त व्ययेश हो और वह मातृभाव (चतुर्थ) पति से दृष्ट वा युक्त हो तो माता के कारण धन-व्यय होता है ।

व्ययगत ग्रह के सदृश व्यययोग तथा राजा के कारण धनव्यय योगः--

ग्रहा यादृशा द्वादशागारयाता व्ययं तादृशं नाऽऽचरेज्जन्मकाले ।
यदा द्वादशे दैत्यकाव्येनयोगस्तदा स्वव्ययो रत्नगर्भेशमूलात् ॥ १४ ॥

पुरुष के जन्म समय में जिस स्वभाव के ग्रह व्ययस्थान में हों वे उसी हेतु से धन के व्यय को करते हैं । जब व्ययस्थान में राहु, शुक्र तथा सूर्य का योग हो तब राजा के कारण धनव्यय होता है ।

बहुत प्रकार से धन व्यय के योगः--

कुजे द्वादशे चान्द्रिणा युक्तदृष्टे प्रभूतैः प्रकारैर्भवेद्वित्तनाशः ।
निधाने व्यये वाऽरुणे मङ्गले वा बुधे संयुते कामिनीखेचराभ्याम् ॥ १५ ॥
निषादैः सदा गानवेश्याजनैर्वा बुधा नृत्यतो द्रव्यनाशं वदन्ति ।
व्यये बोधने सोरगे सेनसूनौ विरोध्यादिभिर्म्लेच्छदुष्टैःस्वहानिः ॥ १६ ॥

व्यय में भौम हो और वह बुध से युक्त वा दृष्ट हो तो अनेक प्रकार से धन का नाश होता है। धन वा व्यय में सूर्य, मङ्गल वा बुध हों और वह स्त्री ग्रहों (चन्द्र तथा शुक्र) से युक्त हो तो निषादो (मल्लाहो) से गायन से वेश्या ओं से अथवा नृत्य (नाच) से द्रव्य के नाश को कहते हैं। व्यय में बुध हो और वह राहु वा शनि से युक्त हो तो विरोधिजनों से वा म्लेच्छों से वा दुष्टजनों से द्रव्य की हानि होती है।

यमाद्यैर्व्यये चन्द्रयुक्तैर्व्ययः स्याज्जलाद्वह्नितः सारसूरैः सकाव्यैः।
परस्त्रीजनात्सैन्दवैश्चेत्सपलाद्व्यये मङ्गले बाहुजाद्वित्तनाशः ॥ १७ ॥

यदि व्यय में चन्द्रयुक्त शन्यादि (शनि, राहु, केतु तथा गुलिक) हों तो जल से धनव्यय होता है। एवं व्ययगत शन्यादि भौम वा सूर्य से युक्त हों तो अग्नि से धन का नाश होता है। व्यय गत शन्यादि शुक्र से युक्त हों तो पराई स्त्री से धन का नाश होता है। व्ययगत शन्यादि बुध से युक्त हों तो शत्रुजन से धन का नाश होता है। एवं व्यय में भौम हो तो क्षत्रियजनसे धन का नाश होता है।

खगैर्द्विजाद्यैः सहितेऽवसाने भूदेवपूर्वैरबलासमेते।
स्त्रीवर्गतः पुंग्रुचरे जघन्येऽरिभिः समित्रे सखितोऽर्थनाशः ॥ १८ ॥

व्यय में ब्राह्मणादि वर्ण वाले ग्रह हो तो ब्राह्मणादि वर्णों से धनहानि होती है। व्यय में स्त्री ग्रह हो तो स्त्रीजन से धनहानि; पुरुष ग्रह हो तो शत्रु से धनहानि एवं व्ययस्थान मित्र ग्रह से युक्त हो तो मित्र के द्वारा धन की हानि होती है।

दुष्टव्ययो विबलखेचरयुक्तदृष्टे
दुःखालये बलविहीनदशापहारे।
तिष्ठेद्यदभ्रगगणे व्ययकारकाख्य-
स्तज्जातिवर्गजनतो विदधात्वनर्थम् ॥ १९ ॥

यदि 'व्ययस्थान' निर्बल ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो निर्बल ग्रह की दशा तथा अन्तर्दशा में दुष्ट (अशुभ) व्यय होता है। जिस जाति वाले ग्रह के वर्ग में व्ययकारक (शनि) ग्रह हो उस जाति के वर्ग के लोगों से अनर्थ (धनहानि) को करता है।

पुष्णन्त्यर्थं शोभना द्वादशे सद्दृष्टे पूर्णे ग्लावि तत्रारिदृष्टाः।
जीवेन्द्वच्छाः पोषणं स्वस्य कुर्युः पुष्टं स्वर्क्षादिस्थितैरन्यथाल्पम् ॥ २० ॥

व्यय में शुभ ग्रह हो तो द्रव्य की पुष्टी (वृद्धि) करते है। यदि व्यय में पूर्ण चन्द्रमा हो तोभी धन की पुष्टि करता है। एवं व्यय में गुरु, चन्द्र तथा शुक्र हों और वे भौम से दृष्ट हों तो धन का पोषण (पालन वा वृद्धि) करते हैं। व्यय में स्वराश्यादिगत ग्रह हों तो पुष्ट (बहुत) धन होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो अल्प धन होता है।

सद्युक्तदृष्टे विधिभे व्ययालये तत्से बलोनेऽधरवैरिराशिगे।
वित्तव्ययाभावमुपैति पादपः प्राणान्वितोऽके विबलो ग्रहोऽर्थहा ॥ २१ ॥

नवम स्थान वा व्ययस्थान यदि शुभ ग्रह से युक्त वा दृष्ट हो और उस का स्वामी शत्रु राशि वा नीचराशि में हो एवं निर्बल हो तो धन व्यय के अभाव को प्राप्त होता है। अर्थात् धन का रक्षण करने वाला होता है। 'व्ययेश' यदि बली हो और व्ययमें निर्बल ग्रह हो तो धनकी हानि करने वाला होता है।

धनहानि योगः—

स्यात्सर्वहानिर्हिमगौ गदे वधे वैरोचनौ चेद्वनितालये ततः।
आधिक्य उग्रद्युसदां दृशां व्यये पदे पदे स्वापचितिं विदुर्बुधाः॥ २२॥

षष्ठ वा अष्टम में चन्द्रमा हो और सप्तम में शनि हो तो सर्वस्व की हानि होती है। एवं व्ययस्थान में पापग्रहों की दृष्टि की अधिकता हो तो पद पद पर धन की हानि अर्थात् प्रत्येक कार्य में वारंवार धन की हानि होती है।

धनहानि समय परिज्ञानः—

दाये भुक्तौ वित्तपस्यार्थहानिः काये कष्टं राजभीतिर्जनीन्दोः।
किं गात्रात्स्वे गोचरेणोग्रखेटा वर्तन्ते चेद्वित्तहानिं विदध्युः॥ २३॥

धनेश की दशा तथा अन्तर्दशा में धनकी हानि, शरीर में कष्ट तथा राजभय होता है। जन्म राशि से वा जन्मलग्नराशि से द्वितीय स्थान में जब पापग्रह आवे तब धन की हानि को करते हैं।

स्वर्क्षस्थास्ते दद्युरर्थं तदानीमादित्ये साजालिकर्कैणजूके।
ऐलेये सेभारिकर्कैणचापे पङ्गौ साश्वाजालिपञ्चास्यकर्के॥ २४॥
सत्यन्त्येऽर्थे वोभयोर्गोचरेण हानिर्वाच्या नित्यमर्थस्य पुंसाम्।
वित्ते वान्त्ये जन्मकाले खगोयस्तस्यारातिस्तत्समीपङ्गतश्चेत्॥ २५॥
चाराद्यद्वातेन युक्तोऽस्तगोवा तज्ज्ञैर्वाच्या स्वापते यस्य हानिः।
स्वेऽन्त्ये कोऽप्याकाशगो वर्त्तते नो दुष्टस्थाने वीतवीर्यौ तदीशौ॥ २६॥
दृष्टौ युक्तौ चेद्यदा कल्मषाख्यैस्तस्मिन्काले नार्थलाभो नरस्य।
चेदुत्पत्तौ वित्तपो यत्रयातस्तस्माद्वित्ते द्वादशे गोचरेण॥ २७॥
पापेयाते प्राप्तिरर्थस्य नोक्ता नक्षत्रेशाद् द्वादशे वा कुटुम्बे।
याते क्रूराकाशवासे स्वलाभापेक्षातः स्यादर्थहानिः प्रभूता॥ २८॥

जन्म चन्द्र राशि से वा जन्मलग्न राशिसे यदि गोचर से द्वितीय में स्वराशिगत पापग्रह हों तो धनको देते हैं। एवं जन्म चन्द्र राशि से वा जन्म लग्न राशि से व्ययमें वा द्वितीय में वा दोनों में मेष, वृश्चिक, कर्क, मकर वा तुला राशि गत सूर्य जब गोचरसे आवे अथवा उक्त स्थानों में सिंह, कर्क, मकर वा धनुराशि गत भौम जब गोचर से आवे अथवा धनु, मेष, वृश्चिक, सिंह वा कर्क राशि गत शनि जब गोचर से उक्त स्थानों में आवे तब पुरुषों की नित्य धनहानि कहनी चाहिए। जन्म समय में जो ग्रह धन में वा व्यय में हो उसका जो शत्रु ग्रह हो वह जब गोचर से उस के समीप में आवे वा उस ग्रह से युक्त हो वा उस से सप्तम में हो तब धन की हानि होती है।

यदि जन्म समय में द्वितीय तथा व्यय में कोई भी ग्रह न हो तो उक्त दोनों स्थानों के स्वामी जब गोचर से दुष्टस्थान (४।८।१२) में निर्बल होकर आवें और जब पापग्रहसे दृष्ट वा युक्त हों उस समय मनुष्य को द्रव्य का लाभ नहीं होता है। जन्मसमय में जन्म लग्न से द्वितीय स्थान का स्वामी जिस राशि में हो उस से द्वितीय तथा द्वादश में जब गोचर से पापग्रह आवे तब धनकी प्राप्ति नहीं होती है। एवं जन्मचन्द्र राशि से द्वादश तथा द्वितीय में जब गोचर से पापग्रह आवे तब धनलाभ की अपेक्षा धनकी अधिक हानि होती है।

ऋण प्रद योगः—

मृद्वंशकादौ धिषणेक्षितेऽङ्गपांशेशेऽथ वित्तायपयोस्त्रिभागयोः।
पती लवेशौ च सुताङ्ककेन्द्रगा विशेषितांशे जनिमानृणप्रदः॥ २९॥

मृद्वंशादि में लग्नेश के नवांश का स्वामी हो और वह गुरु से दृष्ट हो अथवा धनेश तथा लाभेश के द्रेष्काणेश और नवांशेश पञ्चम नवम वा केन्द्र में स्थित होकर वैशेषिकांश में हो तो उक्त योगों मे उत्पन्न पुरुष ऋण देने वाला होता है।

ऋणग्रस्त योगः—

सपापाङ्गाधीशे त्रिकपयुतदृष्टेऽथ सुतपे
शुभादृष्टे देहे किमिनकरलुप्ते खलयुते।
धनेशे नाशेऽर्थेऽथ धनभवपौ निम्नगृहगा
असत्षष्ठ्यंशे वा भवपयुतदृष्टे जनकपे॥ ३०॥

व्ययेऽङ्गेशे पापे धननिलयगेऽथोत्तमयुते
भवेशर्क्षांशेशेऽशुभखरसभागे त्रिकमिते।
ऋणग्रस्तोऽङ्गेशे सधनमदपे द्विण्णतभगे
त्रिके मूढे नो सत्सुकृतपतिदृष्टे यदि तथा॥ ३१॥

'लग्नेश' यदि पाप ग्रह से युक्त हो और त्रिकेश से भी युक्त वा दृष्ट हो तो (१) लग्न में पञ्चमेश हो और वह शुभदृष्ट न हो तो (२) अष्टम वा धन में पाप युक्त धनेश हो और वह अस्तंगत हो तो (३) क्रूरषष्ठ्यंश में नीच राशि गत धनेश तथा लाभेश हो तो (४) 'दशमेश' यदि लाभेश से युक्त वा दृष्ट हो, व्यय में लग्नेश हो और धन में पाप ग्रह हो तो (५) क्रूरषठ्यंश में तथा त्रिक में लाभेश की राशि के तथा नवांश के स्वामी हों और वे शुभ युक्त हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष ऋणग्रस्त होता है। यदि 'लग्नेश' द्वितीय स्थान वा सप्तम स्थान के स्वामी से युक्त हो और वह नीचराशि में वा शत्रुराशि में वा त्रिकस्थान में वा अस्तंगत हो एवं शुभग्रह से तथा नवमेश से दृष्ट न हों तो भी ऋणग्रस्त होता है।

पाद हानि, पादच्छेद तथा पादरोग योगः—

न सद्वीक्षिते कर्कगे सेन्दुमन्दे विनाशेऽथ वा वक्रभाङ्गे सवक्रे।
तदा पादहानिः खगैर्ज्ञाहिमन्दैः पदच्छेद आर्कौ गदे पादरोगी॥ ३२॥

अष्टम में चन्द्र युक्त शनि हो और वह कर्क में हो अथवा लग्न में वक्री ग्रह की राशि हो और उस में वक्री ग्रह हो तो उक्त योगों में पाद हानि होती है। दशम में बुध, राहु तथा शनि हों तो पाद में छेद होता है। एवं षष्ठ में शनि हो तो पादरोगी होता है।

पङ्गु योगः—

अण्डजोदयागेरौ मृदुगेन्दुरक्तदीधितिविलोचनसत्त्वे।
किं शनीक्षितविधाविनहोरासङ्गते जननवानिह पङ्गुः॥ ३३॥

लग्न में मीन राशि हो और वह शनि, चन्द्र तथा भौम से दृष्ट हो अथवा सूर्य की होरा (सिंह) में चन्द्रमा हो और वह शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में उत्पन्न पुरुष पङ्गु (लंगडा) होता है।

सेन्दौ झशेऽङ्गे मलिनैर्मृगेन्द्राजान्त्याश्वगैर्वा गवि गौररश्मौ।
सल्लोकनोने वसुधाकुमारविरोचनेनात्मजलोकिते वा॥ ३४॥
द्युनाथसूनौ द्युनभावभर्त्तरि पङ्कैरुपेते यदि पङ्गुरुद्भवः।
अकाश्रितैः कोणकुपुत्रचान्दिरै यष्टिं गृहीत्वा प्रचलेन्मनूद्भवः॥ ३५॥

लग्न में मीन राशि गत चन्द्रमा हो और सिंह, मेष, मीन तथा धनु में पाप ग्रह हो तो (१) वृष में शुभ ग्रह से अदृष्ट चन्द्रमा हो और वह भौम, सूर्य तथा शनि से दृष्ट हो तो उक्त योगों में पङ्गु (लंगडा) होता है। व्यय में शनि, भौम तथा चन्द्रमा हों तो लकडी के सहारे चलने वाला होता है।

खञ्ज योगः—

सौरीनारैर्वैरिगैर्वाघदृष्टमार्त्तण्डोत्थद्विट्पयोर्द्वादशे वा।
कालग्लावोर्युक्तयोः पावकेन कीटैणाजापत्यशत्रुस्थयोर्वा॥ ३६॥
गुर्वागारे कर्किमत्स्यालिनक्राजप्राग्लग्ने जायते खञ्जजन्म।
ग्लौपङ्ग्वोः साग्नेययोः कर्कमीनकीटाजैणास्यस्थयोः शे सुते वा॥ ३७॥
खञ्जो भव्यावीक्षितौ भाग्यभेशौ कर्के वायुः पुण्यपालौ सपापौ।
पातालस्थौ वोशनोनीलवासो युक्तौ पुण्यैर्नेक्षितौ खञ्जजन्म॥ ३८॥

षष्ठ में शनि, सूर्य तथा मङ्गल हों तो (१) व्यय में पाप दृष्ट शनि षष्ठेश हों तो (२) वृश्चिक, मकर, मेष वा कर्क में पाप युक्त शनि चन्द्र हों तो (३) गुरु सद्म में कर्क, मीन, वृश्चिक, मकर वा मेष लग्न हो तो उक्त योगों में खञ्ज (लूला) मनुष्य का जन्म होता है। नवम वा पञ्चम में कर्क, मीन, वृश्चिक, मेष वा मकर राशि हो और उस में पापयुक्त चन्द्र, शनि हों तो खञ्ज जन्म होता है। कर्क में शनि, चन्द्र हों और वे शुभ दृष्ट न हों तो (१) सुख में पापयुक्त अष्टमेश नवमेश हों तो (२) अथवा अष्टमेश, नवमेश यदि शुक्र, शनि से युक्त हों और शुभ दृष्ट न हों तो उक्त योगों में खञ्ज (लूला) मनुष्य का जन्म होता है।

पर्य्यटनशील योगः—

नृजन्मकाले चरराशिसंश्रिते चराभ्रपान्थे चरमालये यदि।
देशाटवीपर्य्यटनं करोतु स त्रिकाधिपे श्यामयुतेक्षिते तथा॥ ३९॥

यदि मनुष्य के जन्मकाल में व्यय में चरराशि गत चरग्रह (चन्द्र, बुध वा शुक्र) हो तो वह मनुष्य देश, देशान्तर तथा वनों में पर्य्यटन (भ्रमण) करता है । एवं 'त्रिकेश' यदि शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो भी पर्य्यटनशील (घुमने-फिरने वाला) होता है ।

बन्धन योगः—

जघन्यवाचोर्नियतिप्रबन्धयोराप्त्यरात्योरनुगाप्तिभावयोः ।
निकेतनाकाशनिकेतयोर्यदा विहङ्गसाम्ये सति बन्धनं विशः ॥ ४० ॥

व्यय तथा द्वितीय में, नवम तथा पञ्चम में, व्यय तथा षष्ठ में, तृतीय तथा लाभ में एवं चतुर्थ तथा दशम में सम संख्यक ग्रह हों तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य को बन्धन (कारागार वा कैद) होता है ।

सिते स्वेऽङ्गे सोमे तमसि तनये भास्करविदो-
र्व्यये किं कोणेऽङ्गे भृगुतनयदृष्टे दिवि विधौ ।
किमुग्रैः कोणार्थव्ययथनगृहगैर्वाऽरिपुरपौ
मतौ मार्गे केन्द्रेऽनिलतिमिरयुक्तौ समृदुगौ ॥ ४१ ॥
अथो उत्पत्त्यङ्गे फणिमुखदृगाणैर्बलयुतै-
रसत्खेटैर्दृष्टैर्जनुषि भवतूद्दानमिह नुः ।
तुरङ्गोक्षाजाङ्गे व्ययतनयतीर्थद्रविणगैः
खलै रज्जूद्दानं प्रभवतु नराणामिति वदेत् ॥ ४२ ॥

धन में शुक्र, लग्न में चन्द्रमा, पञ्चम में राहु और व्यय में बुध सूर्य हों तो (१) लग्न में शनि तथा दशम में चन्द्रमा हो और वह शुक्र से दृष्ट हो तो (२) त्रिकोण, व्यय तथा धन में पापग्रह हों तो (३) त्रिकोण वा केन्द्र में षष्ठेश तथा लग्नेश हों और वे राहु वा केतु से युक्त हों अथवा शनि से युक्त हों तो (४) यदि जन्म लग्न में सर्पादि द्रेष्काण हों और वे बली पापग्रहों से दृष्ट हों तो उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य को बन्धन (कैद) होता है । धनु, वृष वा मेष लग्न हो और व्यय, पञ्चम, धर्म तथा धन में पापग्रह हों तो उक्तयोग में मनुष्यों को रज्जू (रस्सी) से बन्धन होता है ।

नृयुक्तुलास्त्रीकलशोदयेऽशुभैर्द्वयन्त्याङ्कधीस्थैर्निगडेन बन्धनम् ।
उग्रग्रहैः स्वान्त्यसुताङ्कगैर्हरीत्थसीन्दुभाङ्गे निगडोनबन्धनम् ॥ ४३ ॥

मिथुन, तुला, कन्या वा कुम्भ लग्न हो एवं द्वितीय, व्यय, नवम तथा पञ्चम में पापग्रह हों तो निगड (हथकड़ी वा बेडी) सहित बन्धन होता है । एवं सिंह मीन वा कर्क लग्न हो और द्वितीय, द्वादश, पञ्चम तथा नवम में पापग्रह हों तो निगडरहित बन्धन होता है ।

उद्दानदानां द्युसदां दशासु वा तद्भुक्तिषूद्दानमुपैति तद्युतैः ।
तातादितत्कारकभावभर्तृभिस्तातादिकानां निगदन्ति बन्धनम् ॥ ४४ ॥

बन्धन प्रद ग्रहों की दशा ओं में वा अन्तर्दशाओं में मनुष्य बन्धन को प्राप्त होता है । एवं पिता प्रभृतियों के कारक तथा भावेश यदि बन्धनप्रद ग्रहों से युक्त हों तो पिता प्रभृतियों को बन्धन कहते हैं ।

शयनसौख्य योगः—

आभीलपाले परमोन्नतस्थे विचित्रमञ्चे शयनं नरस्य।
तस्मिंस्तपोनाथनिरीक्ष्यमाणे शय्या तदा स्यान्मणिरत्नयुक्ता ॥ ४५ ॥

अपने परमोच्चांश में व्ययेश हो तो मनुष्य का विचित्रमञ्च में शयन होता है। परमोच्च गत व्ययेश यदि भाग्येश से दृष्ट हो तो मणिरत्नजडित शय्या होती है।

शय्यासुखं ज्ञेऽच्छयुतेक्षिते व्यये पर्य्यङ्कशायी निजतुङ्गगे सताम्।
सम्बन्धिनि प्रान्त्यपतौ सतां गणे निद्रासुखं सद्गणगेऽन्त्यपेऽप्यघे ॥ ४६ ॥

व्यय में बुध हो और वह शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो शय्या का सुख होता है। एवं व्ययेश का शुभ ग्रहों से सम्बन्ध हो तथा स्वोच्च राशि में वा शुभ ग्रहों के वर्ग में व्ययेश हो तो पर्य्यङ्कशायी (पलंग में सोनेवाला) होता है। यदि पापग्रह भी व्ययेश हो और वह शुभ ग्रहों के वर्ग में हो तो मनुष्य को शयनसुख होता है।

शयनसौख्याभाव योगः—

असौम्यसम्बन्धिनि दुःखपे खलांशकेऽथ देहाधिपतौ त्रिकेऽथ वा।
निम्नेऽथ वा सार्क्यगुमन्दजेऽरिपेक्षिते न निद्रासुखमाप्नुयाद्भवी ॥ ४७ ॥

क्रूरांशक में व्ययेश हो और उसका पापग्रह से सम्बन्ध हो अथवा त्रिक में लग्नेश हो अथवा वा नीचराशि में लग्नेश हो अथवा 'लग्नेश' यदि शनि, राहु वा गुलिक से युक्त हो और षष्ठेश से दृष्ट हो तो उक्त योगों में प्राणी को शयनसुख नहीं होता है

कौन्तिकादि योगः—

भागे भौमे कौन्तिको धातुवादी वन्ह्याजीवी गीष्पतौ कारकांशे।
कर्म्मज्ञानी वेदविद्दानकर्त्ताऽशे पूर्णेन्दुः सास्फुजिद् भोगभाक् च ॥ ४८ ॥
विद्याजीवी दैवभे कारकांशात्सद्भिर्दृष्टे संयुते सत्यवादी।
स्याद्धर्म्मात्माऽऽचार्य्यभक्तोऽन्यथा न भागे काव्ये राजसेवी च कामी ॥ ४९ ॥

कारकांश लग्न में भौम हो तो कौन्तिक (प्रास वा बरच्छा) धारण करने वाला, धातुवाद वाला तथा अग्नि से जीविका करने वाला होता है। कारकांश लग्न में गुरु होतो कर्मज्ञान वाला, वेद जानने वाला तथा दान करने वाला होता है। कारकांश लग्न में शुक्र युक्त पूर्ण चन्द्रमा हो तो भोगवाला तथा विद्या से जीविका वाला होता है। कारकांश लग्न से जो नवम स्थान हो वह शुभ ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो सत्यवक्ता, धर्मात्मा तथा गुरुभक्त होता है। यदि विपरीत हो तो उक्त फल नहीं होता है। एवं कारकांश लग्न में शुक्र हो तो राजा का सेवन करने वाला तथा कामातुर होता है।

धनुषधारी प्रभृति योगः—

अंशके फणिनि कार्मुकधारी तस्करः किमु लवात्तिमिरारौ।
मन्मथे व्रतयुता विकलाङ्गी भामिनी भवति तस्य नरस्य ॥ ५० ॥

कारकांश लग्न में राहु हो तो धनुष्यधारणकरने वाला तथा चोर होता है। कारकांश लग्न से सप्तम में सूर्य हो तो उस पुरुष की स्त्री पतिव्रता तथा विकल अङ्गवाली होती है।

स्त्रीनाश प्रभृति योगः—

द्यूनेऽङ्गनाथे दयिता न जीवेद्यद्वा विरक्तो मलिने विलग्ने।
नो निर्मलैर्युक्तनिरीक्षितेऽस्मिन्सन्न्यासभाग्वा प्रलयोऽबलायाः॥ ५१॥

सप्तम में लग्नेश हो तो स्त्री न जीवे अथवा वह पुरुष विरक्त होता है। लग्न में पाप ग्रह हो और वह शुभ ग्रह से युक्त वा दृष्ट न हो तो संन्यास वाला वा स्त्री की मृत्यु होती है।

स्त्री नाश तथा भ्रातृहीन योगः—

क्रमान्मदारिमृत्युगैस्तमोमहीजमन्दगैः।
न जीवतीह सुन्दरी सहोदरैः समुज्झितः॥ ५२॥

सप्तम में राहु, षष्ठ में भौम तथा अष्टम में शनि हो तो उक्त योग में स्त्री न जीवे और भ्राताओं से रहित होता है।

दया युक्तादि योगः—

विक्रान्तभे वैरिणि विग्रहेशे जातो दयाविक्रममानयुक्तः।
मानेऽमृते मूर्तिपतौ सुखी च कामी धनेशे चरमेऽर्थमुक्तः॥ ५३॥
मानी च सेज्ये सहजेशि धीरो जातो जनः शास्त्रविशारदश्च।
सारे सहोत्थेशि जडः प्रचण्डः कोपी च सोत्थाधिपतौ समान्दौ॥ ५४॥
धीरो दृढः स्याज्जनितो जडश्च दैवात्मकेन्द्रे पथिपे सुखेटैः।
प्रोद्वीक्षिताढ्ये धनभागधेयविद्यायुतः सौजसि तीर्थनाथे॥ ५५॥
पारावतादौ सुकृती धनी च मानी गुणी साधरभे ग्रहेशे।
उग्रेक्षिते मृत्युरुजोर्महीपकोपात्स्वनाशो जनकस्य मृत्युः॥ ५६॥

सहज वा षष्ठ में लग्नेश हो तो दयावान्, पराक्रमी तथा मान्य होता है। दशम वा चतुर्थ में लग्नेश हो तो सुखी तथा कामी होता है। व्यय में धनेश हो तो निर्धन तथा मानी होता है। सहजेश यदि गुरु से युक्त हो तो धैर्यवान् तथा शास्त्रवेत्ता होता है। तृतीयेश यदि भौम से युक्त हो तो जड (मूर्ख वा आलसी), तीक्ष्ण स्वभाव तथा क्रोधी होता है। तृतीयेश यदि गुलिक से युक्त हो तो धैर्यवान् दृढ विचार वाला तथा जड होता है। केन्द्र वा त्रिकोण में नवमेश हो और वह शुभग्रह से दृष्ट तथा युक्त हो तो धनी, भाग्यवान् तथा विद्यावान् होता है। पारावतादि शुभ वर्ग में बली नवमेश हो तो पुण्यवान्, धनवान्, मानी तथा गुणवान् होता है। अष्टम वा षष्ठ में नीचराशि गत सूर्य हो और वह पापदृष्ट हो तो राजा के क्रोध से धनका नाश तथा पिताकी मृत्यु होती है।

बहुस्त्री प्रभृति योगः—

प्रद्योतनेऽस्ते बहुकामिनीभाग् जातः कुटुम्बी कुसुते कलत्रे ।
प्राणी बहुस्त्रीनिरतोऽन्वयघ्नोऽपायाधिपेऽर्थे विधिपेऽवसाने ॥ ५७ ॥
दुश्चिक्यगेऽघेऽन्यरतः कुभोजी दुष्कर्मकृन्नीचभभाग इज्ये ।
आर्य्यांशकेऽर्के बहुदुःखभाक् स्त्रीपुत्रैर्विहीनोऽन्त्यतनूस्मरस्थैः ॥ ५८ ॥
उग्रैर्विहङ्गैः सुतदारनाशः सौरीक्षितेऽब्जेऽक्रियभे धनोनः ।
लोभी कुजेऽस्ते द्युमणौ व्ययेऽङ्गेऽब्जेऽरौ जनन्या जनकस्य घाती ॥ ५९ ॥

सप्तम में सूर्य हो तो बहुत स्त्री वाला तथा कुटुम्बी होता है। सप्तम में भौम हो तो बहुत स्त्रियों में लीन तथा वंश का नाश करने वाला होता है। धन में व्ययेश, व्यय में भाग्येश तथा सहज में पाप ग्रह हो तो पराई स्त्री में लीन, कुत्सित भोजन वाला और निन्दित कर्म करने वाला होता है। नीचराशि तथा नीचांश में गुरु हो और गुरु के नवांश में सूर्य हो तो बहुत दुःख वाला एवं स्त्री तथा पुत्र से रहित होता है। व्यय, लग्न तथा सप्तम में पापग्रह हों तो पुत्र तथा स्त्री का नाश होता है। मेष में शनिदृष्ट चन्द्रमा हो तो निर्धन तथा लोभी होता है। सप्तम में भौम, व्यय वा लग्न में सूर्य तथा षष्ठ में चन्द्रमा हो तो माता पिता का घात (नाश) करने वाला होता है।

सर्प जलादि भय योगः—

वक्रे विलग्ने यदि नेत्रपाणौ पृदाकुदन्तक्षतकाग्निभीतिः ।
साच्छे करेशे कलही च कामी शुजे ध्वजाब्जौ सधनोऽनुजोनः ॥ ६० ॥

लग्न में मङ्गल हो और वह नेत्रपाणि अवस्था में हो तो सर्प के दाँत से घाव, जल तथा अग्नि से भय होती है। तृतीयेश यदि शुक्र से युक्त हो तो कलह करने वाला तथा कामी होता है। तृतीय में केतु तथा चन्द्रमा हो तो धनवान् तथा भाई से रहित होता है।

मातृ पितृ मरणादि योगः—

कामेशयोर्दुष्टगयोर्गतौजसोर्लेखाधिनाथे सबले जनिक्षणे ।
मातुः पितुर्वा मरणं वदेत्स्वपे शाये भवेदुद्यमभाग् धनी गुणी ॥ ६१ ॥

त्रिक में निर्बल सुखेश दशमेश हों और लग्नेश बली हो तो पुरुष के जन्म समय में माता वा पिता के मरण को कहे। नवम वा लाभ में धनेश हो तो उद्यम वाला, धनवान् तथा गुणवान् होता है।

भ्रातृक्षेत्र धनादि प्राप्ति योगः—

केन्द्रे कपाललवपे सखिलोकिते कि-
मैलयलोकितयुते लभतेऽनुजस्य ।
क्षेत्रं धनं पदगयोर्विधिबन्धुपत्योः
सर्वार्थधोरणयुतो विधिना समेतः ॥ ६२ ॥

केन्द्र में सुखेश के नवांश का स्वामी हो और वह मित्र से दृष्ट हो अथवा मङ्गल से दृष्ट वा युक्त होतो भाई का क्षेत्र (खेत) तथा धन को पाता है । दशम में नवनेश तथा चतुर्थेश हों तो सर्व सम्पत्ति, वाहन तथा भाग्य से युक्त होता है ।

मानयुक्तादि योगः—

आज्ञाङ्गतेऽङ्गिरसि चेतन इङ्गितज्ञो
मानी किमर्थगतयोर्द्युमणीशचान्द्र्योः ।
सेवारतः स्थिरधनी मलिनेक्ष्यमाणे
कोशेश्वरे कपटतो विषभोजनं स्यात् ॥ ६३ ॥

दशम में गुरु हो तो इङ्गितज्ञ (इशारे पर से मन की बात जानने वाला) तथा मानी (अहङ्कारी) होता है। धन में सूर्य बुध हों तो सेवा में तत्पर तथा स्थिर धन वाला होता है। 'धनेश' यदि पाप दृष्ट हो तो कपटादि से विष भोजन वाला होता है ।

शूर वीर प्रभृति योगः—

सोदर्य्यकारकखगे शुभभे स शौर्य्य-
धैर्य्यान्वितोऽनुजपभागपभागनाथे ।
स्वर्क्षादिवर्गसहिते कलहप्रियश्च
मान्याहवे सुनिपुणो धिपणेऽर्थमूर्त्योः ॥ ६४ ॥

प्राणी भवो मधुरवाङ् मधुरप्रियश्च
स्यात्सत्यवादनिरतो भगभौमदृष्टे ।
प्राग्लग्नगे प्रथमपे कटुकप्रियोऽयं
क्रोधी तथा व्यसनभाङ् मिलनं तमैन्योः ॥ ६५ ॥

यद्यूर्जभे भवति दक्षकरे विघाती
वातामयी कुनखरी कुसुते किमर्के ।
शौर्य्योपगे विषभयं शिखिभूकलङ्कः
स्यादस्थिभङ्ग इननन्दनचान्द्रिचन्द्राः ॥ ६६ ॥

कुर्य्युर्विधिव्ययचतुष्टयगा विभूति-
ज्ञानोज्झितं शशिनि खे सचिवेऽङ्गसून्वोः ।
जातो जितेन्द्रियजनस्तपसा समेतो
दानी खलैः कलिगतैर्व्रणलक्ष्मयुक्तम् ॥ ६७ ॥

गुह्यं भगन्दरमुखामययभाक् खगेन्द्राः
सर्वे यदाऽधरसपत्नलवोपयाताः ।

तुङ्गस्थिता अपि तदा शुभकर्महीनं
भिक्षाशिनं च जनयन्ति जनं तदानीम् ॥ ६८ ॥

शुभ ग्रह की राशि में भ्रातृकारक ग्रह (भौम) हो तो बल तथा धैर्य से युक्त होता है। तृतीयेश जिस नवांश में हो उस के नवांश का स्वामी यदि स्वगृहादि वर्ग में हो तो कलह करने वाला मानी तथा युद्ध में चतुर होता है। धन वा लग्न में गुरु हो तो मीठा बोलने वाला, मीठा रस खाने वाला तथा सत्य वक्ता होता है। लग्नमें लग्नेश हो और वह सूर्य भौम से दृष्ट हो तो कटुक (कड़ुवा) रस को प्रिय मानने वाला, क्रोधी तथा व्यसनी होता है। सहज में राहु तथा शनि हो तो दहिने हाथ में प्रहार (चोट) वाला, वात रोग वाला तथा कुत्सित नख वाला होता है। सहज में भौम वा सूर्य हो तो विष से भय, अग्नि से चिन्ह तथा अस्थिभङ्ग(टूटा हुई हड्डी)वाला होता हैं नवम व्यय वा केन्द्र में शनि, बुध तथा चन्द्रमा हों तो ऐश्वर्य तथा ज्ञान से रहित करते हैं दशम में चन्द्रमा और लग्न वा पञ्चम में गुरु हो तो जितेन्द्रिय, तपस्वी तथा तथा दानी होता है। अष्टम में पाप ग्रह हों तो गुह्येन्द्रिय में व्रण वा चिन्ह एवं भगन्दरादि रोग वाला होता है। नीचांश वा शत्रु नवांश में स्थित ग्रह यदि स्वोच्च राशि गत भी हों तो शुभ कर्म रहित तथा भिक्षा वृत्ति वाले मनुष्य को उत्पन्न करते हैं।

मूत्र कृच्छ्रादि योगः—

कन्दर्पधाम्नि कुटिले कलिते प्रदृष्टे
ऽघैर्मूत्रकृच्छ्रगदभाग् जनितो नपुंसः।
सोग्रौ व्ययेऽहिहिमगू कलिवल्लभः स्या-
दुन्मादभाग् भपतिभौ मरणेऽथ वाऽरौ ॥ ६९ ॥

मन्दाग्निभाक् सजठरामय उद्गतेश
आग्नेयलोकितयुते मृतिभेऽग्निमान्द्यम्।
श्वित्री च दद्रुगदकण्डुनिपीडिताङ्गो
धीमत्स्वपौ पतितगौ यदि वीतवित्तः ॥ ७० ॥

सक्लेशभागसति खे प्रथमेश्यपाये
भौमान्वितामृतकरे परदेशवासी।
भिक्षाश्यकी विधुविदौ शुभभागहीनौ
केन्द्रे भ्रमी मनुभवौ किमु विस्मयालुः ॥ ७१ ॥

सप्तम में पाप युक्त दृष्ट भौम हो तो मूत्रकृच्छ्र रोगवाला तथा नपुंसक होता है। व्यय में पाप युक्त राहु चन्द्र हों तो कलह करने वाला तथा उन्मादरोगी (पागल) होता है अष्टम वा षष्ठ में चन्द्र शुक्र हों तो मन्दाग्नि रोगी तथा उदररोगी होता है। अष्टम में लग्नेश हो और वह पाप दृष्ट युक्त हो तो मन्दाग्नि रोगी, श्वेतकुष्ठी एवं दद्रु (दाद) रोग से वा कण्डु (खुजली) रोग से पीडित होता है। पतित (षष्ठ तथा व्यय) स्थान में गुरु तथा द्वितीयेश हों तो निर्धन और क्लेश वाला होता है। दशम में पाप ग्रह, व्यय में लग्नेश हो, चन्द्रमा यदि भौम से युक्त हो तो परदेश में वास करने वाला, भिक्षान्न भोजन करने वाला तथा दुःखी होता है। केन्द्र में चन्द्रमा तथा बुध हों और वे शुभांश में न हों तो भ्रम से युक्त तथा विस्मय रोग वाला है।

नीच वृत्ति योगः—

प्रान्त्ये तमेनान्यतरान्विते विभौ कव्याः कुवृत्तिर्वसतिः परालये ।
सौम्ये खले वाऽऽयुषि सोमतो गुरौ व्ययेऽस्य वृत्तिः सुजघन्यकर्मतः ॥ ७२ ॥

व्यय में षष्ठेश हो और वह राहु वा सूर्य से युक्त हो तो नीच वृत्ति वाला तथा पराये घर में वास करने वाला होता है। चन्द्रमा से अष्टम में शुभ वा पाप हो एवं चन्द्रमा से पञ्चम वा धन में गुरु हो तो अत्यन्त नीच कर्म से जीविका होती है।

सिद्धादि योगः—

एकस्मिन्नपि तुङ्गगे हितयुते सिद्धः प्रभूतार्थवान्
कोणे कण्टकगे खपे बलयुते चैत्यान्धयज्ञादिकृत् ।
गीर्वाणातिथिपूजकः शुभकरा राज्यार्थदा वक्रिणः
पापाकाशचरास्तथा व्यसनदा वित्तस्य हानिप्रदाः ॥ ७३ ॥

जिस के जन्म समय में स्वोच्च राशि में एक भी ग्रह हो और वह अपने मित्र से युक्त हो तो वह सिद्ध पुरुष तथा बहुत धन वाला होता है। त्रिकोण वा केन्द्र में बली दशमेश हो तो उक्त योग में उत्पन्न पुरुष यज्ञशाला तथा कूपादि जलाशय बनाने वाला, यज्ञादि करने वाला एवं देवता तथा अतिथियों का सम्मान करने वाला होता है। यदि शुभ ग्रह वक्री हों तो राज्य तथा सम्पत्ति दायक और पाप ग्रह वक्री हों तो विपत्ति तथा धन हानिप्रद होते हैं।

चन्द्राधि योगः—

प्रत्यर्थिपूर्वत्रयगाः परिज्ञातपुण्याश्रयान्याः बलतारतम्यात् ।
एषोऽधियोगो जनितो जनुष्मान् सेनाधिनाथः सचिवो महीपः ॥ ७४ ॥

चन्द्राधिष्ठित राशि से षष्ठादि तीन स्थानों में अर्थात् षष्ठ, सप्तम तथा अष्टम में शुभ ग्रह हों तो यह अधियोग होता है। ग्रहों के स्थानादि षड्बलों की न्यूनाधिकता के क्रम से उक्त योग में उत्पन्न पुरुष सेनापति मंत्री वा राजा होता है।

व्यय भाव सम्बन्धी प्रकीर्ण योगः—

आद्येऽवसानेशि सुवाक् सुरूपवान् स्वर्क्षे पशुग्रामयुतः कदर्थधीः ।
पुण्यस्थले पुण्यमतिश्च तीर्थकृत्समाघे तु पापी वितथे धनान्तकृत् ॥ ७५ ॥

लग्न में व्ययेश हो तो सुन्दर वचन बोलने वाला तथा सुन्दर रूपवान् होता है। व्यय में व्ययेश हो तो पशुओं से तथा ग्राम वा ग्रामाधिकार से युक्त और कृपण बुद्धि वाला होता है। नवम में व्ययेश हो तो धर्म्म बुद्धि वाला तथा तीर्थाटन करने वाला होता है। यदि व्ययेश पाप ग्रह से युक्त हो तो पापात्मा तथा मिथ्याकार्य में धन का नाश अर्थात् धन का दुरुपयोग करने वाला होता है।

लग्नान्त्यखण्डे विमलैरुपेते त्यागी च धर्म्मी कृषकः प्रजातः।
पङ्केऽवसाने नयनामयेनार्त्तश्चाटनश्चञ्चलमानसः स्यात् ॥ ७६ ॥

विवादशीलः पवनामयार्त्तः स्वर्क्षादियाते तु परोपकारी।
पाश्चात्ययातैः सबलैरसौम्यैर्विपत्प्रभूता परिपन्थिवर्गात् ॥ ७७ ॥

व्ययस्थान यदि शुभ ग्रहों से युक्त हो तो त्यागी (दानी), धर्मात्मा तथा कृषक (खेती करने वाला) होता है। व्यय में पाप ग्रह हो तो नेत्र रोग से पीडित, पर्य्यटन शील, चञ्चलचित्त, विवाद करने वाला तथा वात रोग से पीडित होता है। यदि व्यय में स्वराश्यादि गत पाप ग्रह हो तो परोपकारी होता है। एवं व्यय में बली पाप ग्रह हों तो शत्रुवर्ग से बहुत विपत्ति होती है।

व्यये गुरौ गोधनहेमसम्पदः पटोऽन्नदाता भृगुजेऽश्वयज्ञकृत्।
कृषिक्रियाकृद्यदि तत्र रोधने कुःशोभना तत्र विधौ तडागकृत् ॥ ७८ ॥

व्यय में गुरु हो तो गौ, धन, सुवर्ण, सम्पत्ति, तथा वस्त्र वाला एवं अन्न दाता होता है एवं व्यय में शुक्र हो तो अश्वयज्ञ करने वाला, बुध हो तो सुन्दर भूमि तथा कृषि क्रिया करने वाला होता है। यदि व्यय में चन्द्रमा हो तो तलाव बनाने वाला होता है।

तत्राखिलेन्दौ विपुला गृहाः स्युः प्रान्त्ये सचान्द्रौ द्युपतौ समस्तम्।
समर्पयेत्स्वं भृतकाय काव्ये सार्य्ये सुकर्म्मा सधनो महेशे ॥ ७९ ॥

साम्बे च कृष्णे निरतोऽथ तत्र साहौ कवावाधियुतश्च सेर्म्मः।
यमादिभिश्चान्द्रियुतैर्व्ययस्थैः काष्ठाश्मलोहानिलशृङ्गि पीडा ॥ ८० ॥

व्यय में पूर्ण चन्द्रमा हो तो बहुत घर होते हैं। व्यय में बुध युक्त सूर्य हो तो सेवक को अपना समस्त धन देदेता है। व्यय में गुरु युक्त शुक्र हो तो उत्तम कर्म करने वाला, धनी एवं पार्वती सहित श्रीशिवजी में तथा श्रीकृष्ण चन्द्रजी में भक्ति रखने वाला होता है। यदि व्यय में राहु युक्त शुक्र हो तो मानसिक रोग तथा व्रणों से युक्त होता है। एवं व्यय में बुध युक्त शनि राहु, तथा गुलिक हों तो काष्ठ पाषाण लोह वात अथवा सींगवाले पशु से पीडा होता है।

प्रान्त्ये साराদित्यपङ्गौ स्वपित्रोः सोदर्य्याणां संक्षयः स्यात्तदानीम्।
ज्ञेज्याच्छानासङ्गमस्तत्र सौख्ययुक्ताः सोत्थाः स्युस्तयोरेवमुक्तम् ॥ ८१ ॥

व्यय में भौम सूर्य युक्त शनि हो तो माता पिता के भाइयों का नाश होता है। यदि व्यय में बुध, गुरु तथा शुक्र का योग हो तो माता पिता के भाई सुखी होते हैं।

स्याद्गुप्तदोषी व्यसनी यमे व्यये तत्र क्षमाजे नयने श्रुतौ गदः।
अङ्गेऽस्य वामे किमु वामदक्षयोः कट्यां क्षतं नुर्ललनाधिकाङ्गता ॥ ८२ ॥

व्यय में शनि हो तो गुप्त दोष वाला तथा व्यसनी होता है। व्यय में भौम हो तो नेत्र तथा रमाङ्ग में वा वाम दक्षिण कटि में क्षत (घाव) और उसकी स्त्री अधिक अङ्ग वाली होती है।

सोऽर्ज्जे खलेऽन्त्येऽरिमृतीशयोर्वा कृष्यर्थनाशो द्विचतुष्पदर्क्षे ।
व्यये तदंघ्र्यभ्रचरेण युक्ते नाशोऽखिलानां पशुकिङ्कराणाम् ॥ ८३ ॥

व्यय में बली पाप ग्रह हो अथवा षष्ठेश अष्टमेश हों तो खेती तथा धन का नाश होता है । व्यय में द्विपद वा चतुष्पद राशि हो और वह अपने समान द्विपद वा चतुष्पद ग्रह से युक्त हो तो समस्त पशु तथा भृत्यों का नाश होता है।

व्यय गत रवि फलः—

प्रान्त्यस्थाने पतङ्गे प्रभवति पतितः सोऽन्यदेशे निवासी
हानी रायामपात्रव्ययकृदृतुगुणाब्दे नरो गुल्मरोगी ।
गोहत्यादोषकृच्चेद्बलिनि भवनपे देवतानां च सिद्धिः
शय्याखट्वाशरीरप्रभृतिसुखमिहोत्पत्तिकाले तु यस्य ॥ ८४ ॥

सोग्रे यदाऽपात्रजनव्ययङ्करः शय्यासुखोनोऽरिपुसंयुतेऽघवान् ।
रुग्वृद्धिमान् कुष्ठगदेन संयुतः स्यात्तन्निवृत्तिः शुभलोकितान्विते ॥ ८५ ॥

व्यय में सूर्य हो तो वह मनुष्य पतित, परदेशवासी, अपात्रजनों में व्यय करने से धन हानि, ३६ वें वर्ष में गुल्म रोगी एवं गोहत्या दोष वाला होता है । यदि भावेश बली हो तो देवताओं की सिद्धि और शय्या, खट्वा (खाट), तथा शरीर इत्यादि का सुख होता है । यदि वह पाप युक्त होतो अपात्रजनों में व्यय करने वाला तथा शय्या के सुख से रहित होता है । यदि वह षष्ठेश से युक्त हो तो पापात्मा, रोग वृद्धि वाला तथा कुष्ठरोग से युक्त और वह शुभ दृष्ट युक्त हो तो उक्त दोष की निवृत्ति होती है ।

व्यय गत चन्द्र फलः—

स्त्रीरुग्भाग् व्यसनसमृद्धिमान् व्ययेऽब्जे
कोपोपद्रव इह दुष्टभोजनः स्यात् ।
दुष्पात्रव्ययपतितोऽन्नसंविहीनः
सद्युक्ते भवति विचक्षणो दयावान् ॥ ८६ ॥

पापशात्रवसंयुक्ते तस्मिन् दुष्कृतलोकवान् ।
सौम्यमित्रयुते श्रेष्ठलोकवाञ्जायते जनः

व्यय में चन्द्रमा हो तो स्त्रीरोग वाला, व्यसनों की वृद्धिवाला, कोप तथा उपद्रव वाला, दुष्टभोजन वाला अपात्रों में व्यय तथा अन्न से रहित होता है । यदि वह शुभ युक्त होतो पण्डित तथा दयावान् होता है । यदि पाप शत्रु से युक्त होतो पाप लोक वाला और शुभ मित्र से युक्त होतो श्रेष्ठ लोकवाला होता है ।

व्यय गत भौम फलः—

आभीलभे कोकनदच्छवौ चेत्तदा मनुष्यो द्रविणैर्विहीनः ।
पित्तानिलोपेतकलेवरः स्यादचारुयुक्ते कपटी प्रजातः ॥ ८८ ॥

व्यय में भौम होतो धन से रहित एवं पित्त वात युक्त शरीर वाला होता हैं यदि वह पाप युक्त होतो कपटी होता है।

व्यय गत बुध फलः—

पाश्चात्यस्थे पण्डिते जन्मकाले दानी सोग्रे चञ्चलस्वान्त एषः।
भूपद्वेषी सद्युते स्वव्ययः स्याच्छ्रेयोमूलाद्विद्यया संविहीनः ॥ ८९ ॥

जिस के जन्म समय में व्यय में बुध हो वह दानी होता है। यदि वह पापयुक्त होतो चञ्चल हृदय तथा राजा का शत्रु होता है। यदि वह शुभ युक्त होतो धर्म के कारण धन व्यय तथा विद्या से रहित होता है।

व्यय गत गुरु फलः—

पूज्येऽन्के पठितोऽधनो गणितविद् ग्रन्थिव्रणी भोगवान्
स्यादल्पात्मजवान् स्वभोच्चभवने पुण्याभ्रयान्यान्विते।
स्वर्गाप्तिस्त्वघलोकभाक् समलिने वित्तव्ययो धर्म्मतः
सम्भोगी द्विजयोषितां किमु जनः स्याद् गर्भिणीसङ्गमी ॥ ९० ॥

व्यय में गुरु होतो शास्त्रों का पढाने वाला, निर्धन, गणितज्ञ, ग्रन्थि तथा व्रण रोग वाला, भोगी तथा अल्प पुत्रवाला होता है यदि वह स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो वा शुभ युक्त होतो स्वर्ग लोक की प्राप्ति और पाप युक्त होतो नरक की प्राप्ति एवं धर्म के कारण धनका व्यय ब्राह्मण स्त्रियों के संभोग वाला अथवा गर्भिणी स्त्री गमन करने वाला होता है।

व्यय गत शुक्र फलः—

काव्ये क्षतौ बहुदरिद्रयुतः स तस्मिन्
पापान्विते विषयलुब्धपरः ससौम्ये।
शय्यादिसौख्यसहितो बहुवित्तवान्स-
ल्लोकाप्तिरुग्रसहिते नरकस्य लब्धिः ॥ ९१ ॥

व्यय में शुक्र होतो बहुत दरिद्र युक्त होता है। यदि वह पापयुक्त होतो विषय वासना का लोभी और शुभयुक्त होतो शय्या प्रभृति के सुख स युक्त, बहुत धनवाला एवं उत्तम लोक की प्राप्ति होती है। यदि वह पाप युक्त होतो नरक की प्राप्ति होती है।

व्यय गत शनि फलः—

मन्देऽन्त्ये पतितस्तथा च विकलाङ्गस्तत्र पापान्विते
छेदः स्यान्नयने सशोभनखगे सल्लोकलब्धिस्तदा।
जातो रम्यविलोचनः सुखयुतस्तत्रैनसा संयुते
प्राप्तिः स्यान्नरकस्य विचारहितोऽपात्रव्ययी मानवः ॥ ९२ ॥

व्यय में शनि होतो पतित तथा विकलशरीर वाला होता है। यदि वह पापयुक्त होतो नेत्रों में छेद और शुभ युक्त होतो उत्तम लोक की प्राप्ति, सुन्दर नेत्र तथा सुखी होता है। यदि वह पापयुक्त होतो नरक की प्राप्ति धन रहित तथा कुपात्रों में व्यय करने वाला होता है।

व्यय गत राहु फलः—

अवसानेऽसुराधीशे संस्थिते स्वल्पपुत्रवान् ।
विलोचनामयी पापगतिभाञ्जायते भुवि ॥ ९३ ॥

व्यय में राहु होतो अल्प पुत्रवाला नेत्र रोगी तथा पाप गति वाला होता है।

व्यय गत केतु फलः—

पूर्वार्जितार्थक्षयकृन्महीपतुल्यः प्रभूतव्ययकृज्जनुष्मान् ।
दुष्टस्वभावः शिखिनि क्षतिस्थे हृत्सौख्यहीनो नयनांघ्रिबाधः ॥ ९४ ॥

व्यय में केतु होतो पूर्वसञ्चित द्रव्यका नाश करने वाला, राजा के समान धनी, बहुत व्यय करने वाला, दुष्ट स्वभाव हृदयसौख्य से हीन नेत्र तथा पाद पीडा वाला होता है।

व्यय गत रव्यादि ग्रहों का संक्षिप्त फलः—

नागानलाब्दे धनहानिमर्य्यमा करोति चन्द्रोऽपचितो त्रिवत्सरे ।
हानिं व्यथां हानिगतः प्रहर्षुलोऽब्देऽक्षाब्धितुल्ये युवतिव्यथां ततः ॥ ८५ ॥
हानिं गुरुर्हानिगतोऽक्षहायने सितेऽर्थसौख्यं शर वत्सरे दिशेत् ।
व्ययं प्रकुर्य्युर्व्ययगाः शरश्रुतिवर्षे कुजध्वान्तपतङ्गजध्वजाः ॥ ८६ ॥

व्यय में सूर्य होतो ३८ वें वर्ष में धन की हानि, चन्द्रमा होतो तीसरे वर्ष धन हानि तथा पीडा; बुध होतो ४५ वें वर्ष में स्त्रीपीडा गुरु होतो ५ वें वर्ष धन हानि तथा शुक्र होतो ५ वें वर्ष धन जन्य सुख को देता है एवं व्यय में मङ्गल, राहु, शनि तथा केतु होतो ४५ वें वर्ष में धन व्यय को करते हैं।

रवि दृष्ट व्यय फलः—

दृष्टे द्वादशसञ्ज्ञिते दिनकृता चेत्स्थानभङ्गः पर-
यानाप्तिः किल कष्टजीवितमिनाब्दे शृङ्गितो वाहनात् ।
त्रासं विक्रमसम्पदर्थसहितो विद्वत्सुहृद्भिः प्रिय-
कृत्ये तत्पर एष मित्रनिचये वंशाभिमानी भवी ॥ ९० ॥

व्यय स्थान यदि सूर्य से दृष्ट होतो स्थान से भ्रष्ट, पराये वाहन की प्राप्ति कष्ट जीवन, बारह वर्ष में सिंगवाले पशुओं से अथवा वाहन से भय, पण्डित तथा मित्रजनों से पराक्रम, सम्पत्ति तथा धन से युक्त, प्रिय कार्य में लीन और मित्र मण्डली में कुल का अभिमान रखने वाला होता है।

चन्द्रदृष्टव्ययफल:—

दृष्टे व्यये सितरुचा पटुताक्षिलौल्यं
वित्तव्ययः पितृसुखं न भवेच्चिरायुः ।
नव्याङ्गनासुखयुतोऽनृतभाषिकोऽसा-
वन्योपकारनिरतो जनुषीततन्द्रः ॥ ९८ ॥

व्ययस्थान चन्द्रमा से दृष्ट हो तो चतुरता, नेत्रों में चञ्चलता, धन का व्यय, पितृसुखभाव, दीर्घायु, नवीन स्त्री के सुख से युक्त, मिथ्या बोलने वाला, पराये उपकार में तत्पर और तन्द्रा (आलस्य) रहित होता है ।

भौमदृष्टव्ययफल:—

वक्रेक्षिते व्ययगृहेऽखिलवैरिनाशो
नित्यं तथाऽप्यरिजनाच्च सुखक्षयः स्यात् ।
मुख्यो तमोगुणिषु तातसुखं न जन्तोः
सत्कर्म्मसु व्यय उतास्य सुभोजनं च ॥ ९९ ॥

व्ययस्थान यदि भौम से दृष्ट हो तो समस्त शत्रुओं का नाश होने पर भी शत्रु जनों से सर्वदा सुख का नाश होता है । एवं वह पुरुष तमोगुणियों में प्रधान और उसको पिताका सुख न हो तथा सत्कर्मों में व्यय हो अथवा उसका अच्छा भोजन होता है ।

बुधदृष्टव्ययफल:—

नित्यं स्वबन्धुषु तथा स्वजनेषु वैरं
दुष्टामयो हृदि मरुद्व्रणजस्त्वनर्थात् ।
उद्वाहयानरिपुतो व्यय ईक्षितेऽन्त्ये
शीतांशुजेन गुणगौरवभागमात्यः ॥ १०० ॥

व्ययस्थान यदि बुध से दृष्ट हो तो बान्धवों में तथा कुटुम्बियों में वैर, हृदयमें वात वा व्रण से उत्पन्न दुष्ट रोग, अनर्थ, विवाह, वाहन तथा शत्रु से व्यय एवं गुण तथा गौरव वाला और मंत्री होता है ।

गुरुदृष्टव्ययफल:—

देवब्राह्मणकार्य्यकृद् व्ययकरः स्यात्सर्वकष्टान्वितः
सर्वस्वार्थपरो विपक्षगणतः सम्पीडितः काव्यवित् ।
शिल्पज्ञो धिषणायुतोऽतिनिपुणः सिद्धौ स्वकार्यस्य च
लुब्धश्चञ्चलचित्तवृत्तिसहितो दृष्टे व्यये सूरिणा ॥ १०१ ॥

व्ययस्थान यदि गुरु से दृष्ट हो तो देवता तथा ब्राह्मणों का कार्य करने वाला, व्यय करने वाला, समस्त कष्टों से युक्त, सब के स्वार्थों में तत्पर, शत्रुगण से दुःखित, काव्य तथा शिल्पशास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान्, अपने कार्य साधन में अति चतुर, लोभी तथा चञ्चलवृत्ति वाला होता है ।

शुक्रदृष्टव्ययफलः—

सभ्योत्तमो भूमिविभोः प्रशस्तधीः ससूनुविद्यो बहुसम्मतो भवेत् ।
विवेकयुक्तः पृतनाधिनायको लग्नान्त्यखण्डे भृगुणा निरीक्षिते ॥ १०२ ॥

व्ययस्थान यदि शुक्र से दृष्ट हो तो राजा के सभ्यों में प्रधान, उत्तम बुद्धि, पुत्र तथा विद्या से युक्त, बहुतों का मान्य, विवेकी एवं सेनापति होता है ।

शनिदृष्टव्ययफलः—

सङ्ग्रामे विजयो व्ययः कुमतितो वित्तस्य वित्तक्षयः
स्वल्पं सौख्यमिहाङ्गनासुतजनैः पित्तप्रकोपव्यथा ।
धीरोऽसौ मलिनस्तथाऽलसयुतो दर्पाभिभूतो यदु-
त्पत्तौ चेच्छितिवाससा व्ययभवे दृष्टेऽतिशूरो जनः ॥ १०३ ॥

व्ययस्थान यदि शनि से दृष्ट हो तो युद्ध में विजय, दुष्ट से धन का व्यय, धन का नाश, स्त्री तथा पुत्रों से अल्प सुख और पित्तप्रकोप से पीडा होती है। एवं वह पुरुष धैर्यशाली, मलिन, आलसी, अभिमान से वशीभूत और अति शूर वीर होता है ।

राहुदृष्टव्ययफलः—

प्रोद्वीक्षिते पश्चिममन्दिरेऽहिना व्ययेन दानेन विवर्जितो जनः ।
सङ्ग्रामभूमौ रिपुनाशकृत्तनूवैकल्यभाग् भूरिसुखेन संयुतः ॥ १०४ ॥

व्ययस्थान यदि राहु से दृष्ट हो तो व्यय तथा दान से रहित, रणभूमि में शत्रुजनों का नाश करने वाला, शरीर में विकलता वाला एवं बहुत सुख से युक्त होता है ।

लग्नगतव्ययेशफलः—

षण्ढोऽबलाढ्योऽपि विवादसक्तो विदेशवासी सुवचाः सुरूपः ।
वाग्मी विरोधी खललोकरक्तो रतिप्रियः पश्चिमपे पुरस्थे ॥ १०५ ॥

लग्न में व्ययेश हो तो स्त्रीयुक्त होनेपर भी नपुंसक, विवाद में लीन, विदेश में वास करने वाला सुन्दर वचन वाला, सुन्दर रूप वाला, प्रशस्त वाक्यवक्ता, विरोध वाला, नीच जनों का सङ्ग वाला और राग (क्रोध) प्रिय होता है ।

पौराश्रिते किं प्रमदालयाश्रिते पाश्चात्यपाले प्रमदासुखच्युतः ।
नित्यं कफव्याधियुतः सुदुर्बलो हिरण्यविद्याविधुरो यदोद्भवे ॥ १०६ ॥

लग्न में वा सप्तम में व्ययेश हो तो स्त्री सुख से वर्जित, नित्य कफरोग से युक्त, अति दुर्बल, धन तथा विद्या से रहित होता है ।

धनगतव्ययेशफलः—

स्वे कष्टपे नष्टधनो विनष्टधीः कुटुम्बरोषी विकलोऽतिदुष्टवाक् ।
जनः कदर्य्यः पशुलब्धदर्पकोऽस्ते चौरभूपानलतो धनक्षयः ॥ १०७ ॥

धन में व्ययेश हो तो नष्ट धन वाला, नष्ट बुद्धि वाला, कुटुम्बियों से रोष करने वाला, विकल शरीर, अतीव दुष्ट बचन वाला; कृपण एवं पशुओं से प्राप्त अभिमान वाला, होता है। यदि व्ययेश भौम हो तो चोर, राजा वा अग्निसे धन का नाश होता है।

कुटुम्बभावे किमु कालमन्दिरे मंत्रीश्वरे सर्वगुणैः समन्वितः।
भक्तिर्यशोदातनयेऽच्युता प्रियवादी तथा धर्म्मसमेत उद्भवी ॥ १०८ ॥

धन में वा अष्टम में व्ययेश हो तो समस्त गुणों से युक्त, प्रिय बोलने वाला धर्मात्मा और उसकी श्रीकृष्ण-चन्द्रजी के चरणों में निश्चल भक्ति होती है।

सहजगतव्ययेश फलः—

शौर्य्येऽन्त्यपे सुकृतविक्रमभाग्विनोद-
वादी व्ययाधिककरो विगतात्मकोऽसौ।
वस्त्रान्नसङ्ग्रहकरः समरे जयी सा-
र्थः साहसी खलखगे गतबान्धवः स्यात् ॥ १०९ ॥
खलार्चितो बन्धुजनेषु सर्वदा दूरे वसेत्सौम्यखगेऽल्पसोदरः।
अप्यर्थवान् स्यात्कृपणः कलेवरी जातो रतो बन्धुजनेषु सन्ततम् ॥ ११० ॥

सहज में व्ययेश हो तो पुण्य तथा पराक्रम वाला, क्रीडा करने वाला, अधिक व्ययशाली, आत्माहीनवस्त्र तथा अन्न का सङ्ग्रह करने वाला, रणभूमि में विजय पाने वाला, धनवान् तथा साहसी होता है। यदि पापग्रह व्ययेश हो तो बान्धवों से रहित नीचों से सम्मानित और नित्य बन्धुजनों से दूर वसता है। यदि शुभग्रह व्ययेश हो तो अल्प भ्राता वाला धनी होने पर भी कृपण एवं नित्य बन्धुजनों में लीन रहता है।

आचार्य्यवेश्मोपगतेऽथ वाऽनुजस्थानाश्रिते धीसचिवाधिनायके।
जातो नरः स्वीयशरीरपोषको द्वेषी तथा स्याद्गुरुसोत्थयोषिताम् ॥ १११ ॥

नवम वा तृतीय में व्ययेश हो तो अपने शरीर का पोषण करने वाला; गुरु, भाई तथा स्त्री जनों का शत्रु होता है।

सुखगतव्ययेशफलः—

केऽकाधिपे मानविवादतो व्रती सत्कर्म्मकृन्मातृसुखेन वर्जितः।
यानाश्रयी वाहनतुर्य्यपादतो धनाधिनाथो जनितो मनोहरः ॥ ११२ ॥
कृपणश्चोपकारी च महादुःखी च रोगभाक्।
कर्म्मणा कठिनेनाढ्यः सुतेभ्यो मृत्युमादिशेत् ॥ ११३ ॥

सुख में व्ययेश हो तो मान तथा विवाद से दूर रहने वाला, उत्तम कर्मकर्ता, माता के सुख से रहित, वाहनों का आश्रय करने वाला, वाहन तथा चतुष्पदों से धनवान्, मनोहर शरीर, कृपण स्वभाव, उपकार करने वाला, बड़ा दुःखी, रोगी, कठोर कर्म से युक्त और पुत्रों से उसकी मृत्यु को कहे।

अमात्यपे नीरनिकेतने वा क्रियाश्रिते सूनुसुखेन हीनः ।
माणिक्यमुक्तामणिभिर्लभेत किञ्चिद्धिरण्यं न सुखं स्वपित्रोः ॥ ११४ ॥

सुख वा दशम में व्ययेश हो तो पुत्रसुख से रहित, माणिक्य, मुक्ता तथा मणि से अल्पधन को पाता है और माता का सुख नहीं पाता है ।

पञ्चमगतव्ययेशफलः—

पुत्रे पीडनपे समर्पयतु ना स्वौघं द्विजेभ्यो धनं
भुङ्क्ते नो पितुरर्चितो मनुभवैः पृथ्वीपतेराप्तकः ।
जातः प्रौढयशा युतो धिषणया सामर्थ्यवान्पामरे
सूनूनस्तनयः खलः सुखचरे तातार्थभाक् पुत्रवान् ॥ ११५ ॥

पञ्चम में व्ययेश हो तो अपने सञ्चित धन को ब्राह्मणों को दे देवे और स्वयं पिता के धन का उपभोग न करने वाला, लोगों से सम्मानित राजासे लब्ध सुख वाला, प्रौढ कीर्ति वाला, बुद्धिमान् तथा सामर्थ्यवान् होता है । यदि पापग्रह व्ययेश हो तो पुत्ररहित वा अधम पुत्रवाला और शुभ ग्रह व्ययेश हो तो पिता के धनवाला तथा पुत्रवान् होता है ।

प्रसूतिजेशे प्रतिमानिकेतने वायालये सन्ततिसौख्यवर्जितः ।
क्रीतैश्च दत्तैस्तनयैश्च मौक्तिकैर्निर्वाहकः स्यान्मणिसञ्ज्ञितैस्तथा ॥ ११६ ॥

पंञ्चम वा लाभ में व्ययेश हो तो सन्तान के सुख से रहित, क्रीत (खरीदे हुए) वा दत्त (गोद लिए हुए) पुत्रों से, मोतियों से तथा माणियों से निर्वाह (जीविका वा गुजारा) वाला होता है ।

रिपुगतव्ययेशफल:—

क्लेशेऽक्लेशि महार्घगोहयधनो लोकाग्रणीः कीर्तिमा–
ञ्जातः पुण्यजनाभिवन्दित इलापालैः प्रपूज्यो जनः ।
लोकानामुपकारकृत्क्रतुकरो युक्तो विवेकेन स–
पापे लोचनदूषणश्च कृपणो मृत्युं नितान्तं व्रजेत् ॥ ११७ ॥
खलस्तथा परालयाश्रयी सिते सुतोज्झितः ।
विलोचनोनितः शुभोपलब्धिसंयुतः सदा ॥ ११८ ॥

षष्ठ में व्ययेश हो तो महार्घता (महंगाई) गौ तथा घोडे के धनवाला, लोगों का नेता, यशस्वी, पुण्यात्मा, जनों से तथा राजाओं से सम्मानित, लोगों का उपकार करने वाला, यज्ञ करने वाला एवं विवेकवान् होता है । यदि पाप ग्रह व्ययेश हो तो नेत्रदोषी, कृपण और नित्य मृत्युतुल्य कष्ट को पाता है । एवं वह मनुष्य अधम तथा परगृहवासी होता है । यदि व्ययेश शुक्र हो तो पुत्र तथा नेत्रहीन और उत्तम बुद्धि वाला होता है ।

आर्त्तीश्वरेऽरातिनिकेतनेऽथ वा व्ययेऽन्यजायासु स लम्पटो जनः ।
क्रोधी प्रजादुःखयुतोऽघकारको मातुर्विरोधी च तदन्तचिन्तकः ॥ ११९ ॥

षष्ठ वा व्यय में व्ययेश हो तो पराई स्त्रियों में व्यभिचार करनेवाला, क्रोधी, सन्तान के दुःख से युक्त, पाप करने वाला, माता का शत्रु वा माता की मृत्यु चाहनेवाला होता है।

सप्तमगतव्ययेशफलः—

द्यूनेऽन्त्यपे भोगयुतः प्रतिष्ठितो नतीकृतारिश्च विशाललोचनः।
मदालसो लोकविलोकनोचितो भीतारिको दुश्चरितो विशारदः ॥ १२० ॥
गृहाग्रणीर्दम्भयुतश्च दुष्टधीः सौम्ये क्षयं वारवधूजनाद् व्रजेत्।
एनो ग्रहे दारविवर्जितोऽथवा निजाङ्गनातो निधनं समेति सः ॥ १२१ ॥

सप्तम में व्ययेश हो तो भोग वाला, प्रतिष्ठा वाला, शत्रुजनों को नीचा दिखाने वाला, बडे नेत्र वाला, मद से आलसी, लोगोंकी दृष्टि में देखने योग्य, शत्रुजनों को भयदायक, निन्दित चरित वाला, चतुर, घर का मुखिया तथा दुष्ट बुद्धिवाला होता है। शुभग्रह व्ययेश हो तो वेश्या से मृत्यु को पाता है। यदि पापग्रह व्ययेश हो तो स्त्रीरहित अथवा अपनी स्त्री से मृत्यु को प्राप्त होता है।

अष्टमगत व्ययेश फलः—

स्यात्स्वार्थसक्तोऽष्टकपालकोऽलसो ऽतिनिन्दको वन्हिकफामयार्दितः।
द्रोही क्षयेऽन्त्येशि स कार्यसाधनहीनोऽनघाश्चौकासि सारसङ्ग्रही ॥ १२२ ॥

अष्टम में व्ययेश हो तो स्वार्थ में तत्पर, भिक्षुक, आलसी, अतीव निन्दक, अग्नि तथा कफरोग से पीडित, द्रोह वाला एवं कार्य साधन से रहित होता है। यदि शुभ ग्रह व्ययेश हो तो धन सङ्ग्रह करने वाला होता है।

नवमगतव्ययेशफलः—

पीडाधिनाथे पथिगे परार्थकभोक्ता गदोनस्तपसा महोज्ज्वलः।
सुपुण्यकृत्ये तु कृतार्थको महान्विस्तीर्णधीस्तीर्थचरो भवेदसौ ॥ १२३ ॥
तस्मिन्नसौम्यद्युचरे सदुष्कृतः प्रयाति तस्य द्रविणं निरर्थकम्।
वृत्तिर्व्यये तीर्थविलोकनाच्छुभे गोकासरद्रव्यसमान्वितः सुधीः ॥ १२४ ॥

नवम में व्ययेश हो तो पराये धन का भोगने वाला, आरोग्य, तपसे बड़ा उज्ज्वल, पुण्य कार्य में बड़ा कृतार्थ, विशाल बुद्धि वाला तथा तीर्थों में पर्य्यटन करने वाला होता है। यदि पापग्रह अष्टमेश हो तो पापात्मा तथा उस का धन निरर्थकता को प्राप्त होता है और तीर्थाटन करने से उसकी वृत्ति व्यय में होती है। एवं शुभ ग्रह अष्टमेश हो तो गौ, महिषी तथा धन से युक्त और विद्वान् होता है।

दशमगतव्ययेशफलः—

पादेशि शिष्टो ससुतो निधानगोयानभूषावसनैर्नवीनः।
द्वारे नृपाणां सुयशाः प्रतापी सुकर्म्मकारी परकार्य्यकृत्सः ॥ १२५ ॥

पवित्रगात्रः परकामिनीजने पराङ्मुखो नन्दनवित्तसङ्ग्रही ।
अम्बाखलो दुर्वचनानुरक्तकोऽस्याम्बापि दुर्वाक्यपरा तनूभृतः ॥ १२६ ॥

दशम में व्ययेश हो तो पुत्र युक्त निधान (शङ्खपद्मादि निधि), गौ, वाहनभूषण तथा वस्त्रों से नवीन, राजद्वार में यशस्वी, प्रतापी, सुन्दर कर्म करने वाला परोपकार करने वाला, पवित्र शरीर, पराई स्त्री से विमुख (मुंह मोडने वाला), पुत्र के धनका सङ्ग्रह करने वाला, माता के साथ नीच व्यवहार वाला, कटु वचन बोलने में आसक्त और उसकी माता भी कटु वचन बोलने वाली होती है।

लाभगतव्ययेशफलः—

एकादशे द्वादशपे विषादवान् विप्रार्चकः पुण्यपरो मदोद्धतः ।
अम्बासुखो भूपतिलब्धवैभवो लोकोपकारी प्रियवागुदारधीः ॥ १२७ ॥
वित्ताधिपः स्थानवरः सुकोमलो दाता प्रसिद्धो बहुजीवितान्वितः ।
समस्तकार्यस्य च कारको गतखलः सहर्षः स तु सत्यवाक्परः ॥ १२८ ॥

लाभ में व्ययेश हो तो खेदवाला ब्राह्मणों का भक्त, पुण्यात्मा, मद से उद्धत, माता से सुखी, राजा से धनलाभ वाला, लोगों का उपकार करने वाला, प्रिय वाणी वाला, उदार बुद्धि, धनका स्वामी, स्थानसे प्रधान, अति कोमल शरीर, दानी, विख्यात, दीर्घायु, समस्त कार्य करने वाला, नीच जनों से रहित, हर्ष युक्त और सत्य वक्ता होता है।

व्ययगतव्ययेशफलः—

व्यये व्ययेशेऽन्वयधर्मतत्परः खलः कुरूपः कृपणोऽलसोऽतिभीः ।
युतोऽतिवासोद्रविणैः सुभोजनः क्षयर्द्धिकः स्यात्स्थिरकार्य्यकृत्सदा ॥ १२९ ॥
ग्रामवासमना जीवेद्यदि कार्पण्यधीः खलः ।
पशूनां सङ्ग्रही धीमान् भूतिमान् परवासभाक् ॥ १३० ॥

व्यय में व्ययेश हो तो कुलधर्म में तत्पर, नीच, निन्दितरूप कृपण, आलसी, बहुत भयवाला, बहुत वस्त्र तथा धन से युक्त, उत्तम भोजनवाला, क्षय वृद्धि वाला तथा स्थिर कार्य करने वाला होता है। यदि जीवित रहे तो गांव में बसने की इच्छा वाला, कृपण बुद्धि, अधम, चतुष्पदों का संग्रह करने वाला, बुद्धिमान्, ऐश्वर्यवान् और पराये स्थान में रहने वाला होता है।

व्ययगतमेषफलः—

लग्नान्त्यखण्डोपगतेऽविराशौ व्ययोऽशनाच्छादनसौख्यजातः ।
लब्ध्या तथाऽनेकपराक्रमेण विवर्द्धनेनैव चतुष्पदानाम् ॥ १३१ ॥

व्यय में मेष हो तो भोजन तथा वस्त्र के सौख्य से उत्पन्न, लब्धि से, अनेक प्रकार से तथा चतुष्पदों के पालनपोषण से व्यय होता है।

व्ययगतवृषफलः—

संवित्सहाये यदि गोकुलाभिधे विचित्रवस्त्रप्रमदाप्तितो व्ययः ।
राज्येन नृणां किमु विक्रमेण च विचक्षणैः स्यादपि धातुवादतः ॥ १३२ ॥

व्यय में वृष हो तो विचित्र वस्त्र तथा स्त्रीकी प्राप्ति से, राज्य से, पराक्रम से, पण्डितों से और धातुवाद से व्यय होता है।

व्ययगतमिथुनफलः—

वीणाधरे बुद्धिसहायसंस्थिते प्राण्युद्भवो गर्हितशीलतो व्ययः ।
तथैव योषाव्यसनोत्थ आत्मजजातो भवेत्कल्मषलोकसङ्गतः ॥ १३३ ॥

व्यय में मिथुन हो तो जीवों से उत्पन्न, निन्दित शील से उत्पन्न, स्त्री के व्यसन से उत्पन्न, पुत्र से उत्पन्न और पापात्माओं के सहवास से उत्पन्न व्यय होता है।

व्ययगतकर्कफलः—

कष्टालये कर्कटभे व्ययो भवेद् गीर्वाणपृथ्वीसुरयज्ञसम्भवः ।
पुण्यात्मिकाभिर्बहुलक्रियादिभिः सदाऽऽर्य्यलोकैः स भुवि प्रशस्यते ॥ १३४ ॥

व्यय में कर्क हो तो देवता, ब्राह्मण तथा यज्ञों से व्यय उत्पन्न होता है। एवं वह पुरुष बहुत पुण्यात्मक क्रियाओं के कारण साधुजनों से प्रशंसित होता है।

व्ययगतसिंहफलः—

भवे नृणां मंत्रिणि चित्रकायभेऽशुभो व्ययः स्यात्प्रचुरो महीपतिः ।
चोरैः कुपात्राश्रयतश्च कर्म्मणा क्षेपेण निन्द्यो जनितः सतामसौ ॥ १३५ ॥

व्यय में सिंह हो तो राजा से, चोरों से, कुपात्रजनों के आश्रय से तथा निन्दित कर्म से बहुत अशुभ व्यय होता है और वह पुरुष सज्जनों के मध्य में निन्दनीय होता है।

व्ययगतकन्याफलः—

यदा ऽऽमनस्यालयगाऽबलाभिधा तदा व्ययः स्याद्बहुसाधुसङ्गतः ।
माङ्गल्ययज्ञैश्च करग्रहेण वा प्रभाभवो वा प्रमदाजनोद्भवः ॥ १३६ ॥

व्यय में कन्या हो तो बहुत साधुजनों की सङ्गति से मङ्गल कार्यों से, यज्ञोंसे विवाह से एवं कान्तिजन्य वा स्त्रीजन्य व्यय होता है।

व्ययगततुलाफलः—

तुलाधरे चित्सचिवोपगे यदि श्रुतेः स्मृतेर्बन्धुजनाद् द्विजात्सुरात् ।
कृतो व्ययो वा नियमैर्यमैरसौ भवेत्प्रसिद्धः किमु तीर्थसेवनात् ॥ १३७ ॥

व्यय में तुला हो तो वेद, स्मृति, बान्धव, ब्राह्मण तथा देवताओंके कारण किया हुआ व्यय एवं नियम तथा यम से अथवा तीर्थसेवन से व्यय और वह पुरुष विख्यात होता है।

पुष्पन्धये पश्चिमवेश्मयाते व्ययो भवेच्चौरकृताद्विकारात् ।
प्रमादतो वाथ विडम्बनाभिः कुशेमुषीतः कुसुहृज्जनोत्थः ॥ १३८ ॥

व्यय में वृश्चिक हो तो चोरकृत से, विकारसे, असावधानतासे, विडम्बना (अनुकरण) से, दुष्ट बुद्धि से तथा निन्दित मित्रजन से उत्पन्न व्यय होता है।

व्ययगतधनुफलः—

रोपासने रिःफगृहोपयाते सेवाकृतो वा परवञ्चनाभिः ।
हिरण्यमत्याऽघजनप्रसङ्गात्कृषिक्रियाभिर्व्यय उक्त आद्यैः ॥ १३९ ॥

व्ययमें धनु हो तो सेवाकृत व्यय एवं परवञ्चना से, धनोपार्जन बुद्धि से, पापियों के प्रसङ्ग से तथा कृषि क्रियाओंसे व्यय होता है ।

व्ययगतमकरफलः—

प्रज्ञासहाये हरिणास्यराशौ कृषिप्रसङ्गात्किमु सस्यजातः ।
पानासवोत्थो निजवर्गपूजाभवो व्ययो जन्मभृतामजस्रम् ॥ १४० ॥

व्यय में मकर हो तो कृषि के प्रसङ्ग से, अन्नसे उत्पन्न, पान (पेयपदार्थ) आसव (मद्यमात्र) जन्य एवं अपने बान्धवों की आवभक्त आदि से उत्पन्न व्यय होता है।

व्ययगतकुम्भफलः—

अलब्धिगेहे कलशाभिधाने तपस्विसिद्धामरवन्दिसंघात् ।
शास्त्रेषु गीतप्रथितश्च साधुलोकानुरोधाद्विपुलो व्ययोऽस्य ॥ १४१ ॥

व्यय में कुम्भ हो तो तपस्वी, सिद्ध, देवता तथा वन्दीसमूह से, शास्त्रोक्त प्रसिद्ध व्यय एवं उत्तमजनों के अनुरोधसे बहुत व्यय होता है।

व्ययगतमीनफलः—

पुरान्तिमार्द्धे पृथुरोमभे विशां कुसङ्गतो जीवनयानतो व्ययः ।
निरर्गलान्नन्दनसम्भवोऽथवा विवादतो वाऽशनपानसम्भवः ॥ १४२ ॥

व्यय में मीन हो तो कुसङ्ग से, जलयान से, निरर्गल (अबाध वा प्रतिबन्ध रहित विषय) से, पुत्रजन्य, विवाद से एवं अशन (भोजन) तथा पान (पेयपदार्थ) जन्य व्यय होता है।

इति श्रीमत्पण्डित मुकुन्दरायकृते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पण्डित चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते व्ययभावचिन्तनप्रकरणं चतुस्त्रिंशमवसितम् ।

अथ

भावसारांशप्रकरणं प्रारभ्यते ।

भाव वृद्धि योगः—

यो भावोऽसत्खेटयोगेक्षणोनो युक्तो दृष्टोऽस्तारिनिम्नर्क्षगोनैः ।
सुस्थानेशैः स्वामिसौम्यग्रहेन्द्रैर्वाच्या वृद्धिस्तस्य भावस्य नूनम् ॥ १ ॥

जो 'भाव' पाप ग्रहों के योग तथा दृष्टि से रहित हो एवं अस्त, शत्रुराशि तथा नीच राशि में जो प्राप्त न हों ऐसे सुस्थानों (१।२।३।४।५।७।९।१०।११) के स्वामी होकर अपने स्वामी और शुभ ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो अवश्य उस भाव की वृद्धि कहनी चाहिए।

यो भाव ईशेन शुभैश्च वीक्षितो भावाधिपोऽप्युत्तमसंयुतो युवा ।
जाग्रत्कुमारो यदि दीप्तगस्तदा तद्भावजन्यं सुखमाप्नुयाज्जनः ॥ २ ॥

जो 'भाव' अपने स्वामी तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो एवं भाव का स्वामी भी उत्तम ग्रहों से युक्त हो और युवा, जाग्रत्, कुमार तथा दीप्तावस्था में हो तो 'मनुष्य' उस भावजन्य सुख को प्राप्त होता है।

यन्मन्दिरेशो हरिजात्रिकोणगः केन्द्रोपगो वा सुकृतग्रहेक्षितः ।
सारैरुपेतो निजतुङ्गपूर्वगस्तद्धाम्नः सन् फलपुष्टिमादिशेत् ॥ ३ ॥

जिस भाव का स्वामी लग्न से त्रिकोण (५।९) स्थान अथवा केन्द्र (१।४।७।१०) स्थान में स्थित हो एवं षड्बलों से युक्त और अपनी उच्चादि राशि में प्राप्त हो तो पण्डित जन उस भाव के फल की पुष्टि को कहे।

यद्भावाधिस्वापतेयानुजस्था यद्भावेशेष्टास्तदुच्चाधिनाथाः ।
कुर्युस्ते तद्भावपुष्टयूर्ज्जकं चेन्नास्तं याता नारिनीचर्क्षयाताः ॥ ४ ॥

भावों के स्वामि यों के मित्रग्रह तथा भावेशों के उच्च राशि यों के स्वामी ये सब अस्तगत, नीचराशि गत तथा शत्रु राशि गत न हों एवं वे भाव से एकादश, द्वितीय तथा तृतीय स्थान में हों तो भावों की पुष्टि बल को करते हैं।

तन्वाद्येषु गृहेषु सत्खचरसोपेतेषु तत्स्वामिभि-
र्दृष्टाढ्येषु तदीयवृद्धिरुदिता नोपेतदृष्टेष्वघैः ।
कल्याणायकुटुम्बकर्मभवनान्येभिश्चतुर्भिर्बलैः
संयुक्तैर्मनुजस्य यस्य जनने सोऽनूनकार्थान्वितः ॥ ५ ॥

तन्वादि भावों के मध्य में जिन भावों में शुभ ग्रह की राशि हों और वे उन के स्वामियों से दृष्ट वा युक्त हों एवं पाप ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट न हों तो उन भावों की वृद्धि कही है। जिस मनुष्य के जन्म समय में नवम, एकादश, द्वितीय और दशम ये चारों स्थान बलों से युक्त हों तो वह समस्त धनों से युक्त होता है।

यद्भावयातो भववेश्मनायकः समन्वितो यद्भवनस्य जानिना।
अप्यायगैस्तत्समवस्तुनो भवेल्लाभो वदन्तीति पुराणविग्रहाः ॥ ६ ॥

लाभ भाव का स्वामी जिस भाव में हो अथवा लाभेश जिस भाव के स्वामी से युक्त हो तदनुरूप वस्तु की प्राप्ति होती है। एवं लाभगत ग्रहों से भी तदनुरूप वस्तु का लाभ होता है। इस प्रकार पण्डितजनों ने कहा है।

भाव की वृद्धि तथा हानि के योगः—

ये ये भावाः सौम्यवर्गाश्रिताः स्युस्ते निःशेषाः सौम्यतां प्राप्नुवन्ति।
नेष्टा ज्ञेया येऽघवर्गाश्रिता ये ते मिश्राः स्युर्मिश्रवर्गोपपन्नाः ॥ ७ ॥

जो जो भाव शुभ ग्रहों के सप्त वर्ग से युक्त हों वे सम्पूर्ण शुभता को प्राप्त होते हैं। जिस भाव में पाप ग्रहों के सप्तवर्गों की अधिकता हो पण्डितजन उस भाव की हानि को कहे।

यद्भावेभ्यः कामधीखाम्बुभाग्ये सत्स्वाम्याढ्ये पङ्क्योगेक्षणोने।
तद्भावानां पुष्टिरुक्ताऽन्यथा चेद्धानिर्मिश्रैः खेचरैर्मिश्रमुक्तम् ॥ ८ ॥

जिन भावों से सप्तम, पञ्चम, दशम, चतुर्थ और नवम ये छःभाव शुभ ग्रह और अपने अपने स्वामियों से युक्त और पाप ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट न हों तो उन भावों की पुष्टि कही है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हों तो उक्त भावों की हानि होती है। एवं मिश्र ग्रहों से मिश्र फल कहे।

भावात्सन्तः केन्द्रकोणेषु सोर्ज्जास्त्र्यायारिस्थाः पावका भावपस्य।
मित्राणि स्युर्भावसिद्धिप्रदाश्चेद् व्यस्तस्थास्ते नैव भावस्य सिद्धिः ॥ ९ ॥

जिस भाव से केन्द्र तथा त्रिकोण में बलवान् शुभ ग्रह हों एवं तृतीय, लाभ तथा षष्ठ स्थान में पापग्रह हों और वे भावेश के मित्र हों तो भावसिद्धि देने वाले होते हैं। यदि उक्त ग्रह विपरीत हों तो भाव की सिद्धि नहीं होती है।

स्वराशिगः पापखेचरोऽपि भावस्य वृद्धिं प्रकरोत्यलं सः।
नीचर्क्षयातो रिपुराशिगोऽपि करोत्यवश्यं भवनस्य नाशम् ॥ १० ॥

यदि पाप ग्रह भी स्वराशि में हो तो वह पर्याप्त भाव वृद्धि को करता है। नीच राशि गत वा शत्रु राशि गत पाप ग्रह भी अवश्य भाव का नाश करता है।

यच्छुभगोऽप्युत्तमखेचरस्त्रिकाधिपो विदध्याद्भवनस्य संक्षयम्।
भावानुकूल्यं विदधीत पावकः सुस्थाननाथो यदि तुङ्गसाश्रितः ॥ ११ ॥

त्रिकस्थान का स्वामी शुभ ग्रह यदि उच्चगत भी हो तो भाव का नाश करता है। एवं सुस्थानेश पापग्रह यदि उच्चगत हो तो भाव की अनुकूलता को करता है।

सोच्चे त्रिकेशे त्रिकभावमाश्रिते तद्भावपुष्टिं कथयन्ति सूरयः।
यत्रायुरीशो विबलः स तत्क्षयं करोतु शस्तं सुहृदृक्षगो यदि ॥ १२ ॥

यदि त्रिकस्थान का स्वामी बलवान् होकर त्रिकस्थान में ही हो तो पण्डितजन उस भाव की पुष्टि को करते हैं। निर्बल अष्टमेश जिस भाव में हो उस भाव का नाश करता है यदि वह अष्टमेश मित्र राशि में हो तो शुभ-फल को करता है।

भावाधिपाधिष्ठितराशिनायके दुःस्थानगे दुर्बलतां तदौकसः।
तस्मिन्सुहृत्स्वीयभतुङ्गराशिगे भावस्य पुष्टिं निगदेद्विचक्षणः ॥ १३ ॥

तन्वादि भाव का स्वामी जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी यदि (६।८।१२) स्थान में हो तो पण्डितजन भाव की दुर्बलता को कहे। एवं तन्वादि का स्वामी जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी यदि मित्र राशि स्वराशि वा स्वोच्च राशि में हो तो भाव की पुष्टि को कहे।

होरातदीशौ सबलौ चितिः स्यात्तयोः फलानां बलवर्जितौ तौ।
स्याद्धानिरेवं निखिलालयेषु ते भावनाथोर्जवशेन चिन्त्ये ॥ १४ ॥

यदि लग्न तथा लग्नेश ये दोनों बलवान् हों तो उन दोनों के फलों की वृद्धि होती है। यदि वे दोनों निर्बल हों तो दोनों के फलों की हानि होती है। इसी प्रकार अन्यभावों में भी भावेशों के बलाबलत्व से वृद्धि तथा हानि विचारनी चाहिए।

होरेशो यद्भावगो यद्गृहेशयुक्तो यच्छेत्तत्फलं प्राणयुक्ते।
भावे तत्पे तेन भावेन सौख्यं गीतं प्राज्ञैः प्राणमुक्ते व्यथोक्ता ॥ १५ ॥

लग्न का स्वामी जिस भाव में हो और जिस भावेश से युक्त हो उस के फल को देता है। यदि भाव और भावेश ये दोनों बली हों तो उस भाव से सुख कहा है। एवं भाव तथा भावेश ये दोनों बलरहित हों तो भाव-जन्य पीडा कहे।

भावस्य यस्य बलिना विभुनाऽन्वितोऽङ्गद्
यद्गेहगोऽधिफलयुग्भगतः स शस्तम्।
तन्मन्दिरानुगुणमातनुते विलोमं
वीर्योनगेहपयुतोऽल्पफलर्क्षगः सः ॥ १६ ॥

लग्न का स्वामी जिस बलवान् भावेश से युक्त होकर जिस भाव में हो अथवा लग्नेश जिस अधिक रेखा-वाली राशि में हो उस भाव के अनुरूप शुभ फल को करता है। 'लग्नेश' यदि निर्बल भाव के स्वामी से युक्त हो अथवा अल्प रेखा वाली राशि में हो तो विपरीत फल को करता है अर्थात् भाव की हानि को करता है।

यद्गेहे भवनपान्वितोऽङ्गपस्तस्य वृद्धिरुदिता विचक्षणैः ।
पञ्चतेशसहितः पुराधिपो यन्निकेत उदितस्तदत्ययः ॥ १७ ॥

लग्नेश जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी यदि लग्नेश के साथ हों तो पण्डितजनोंने उस भाव की वृद्धि कही है। एवं लग्न का स्वामी अष्टमेश से युक्त होकर जिस भाव में हो उस का नाश कहना चाहिए।

पौराधिपाश्रितगृहस्य शिवं पुरेशो
यस्य लग्नस्य विभुना सहितश्च तिष्ठेत् ।
तद्भावजातमखिलं फलमातनोति
दुःस्थान एतदुदितं विपरीतमेव ॥ १८ ॥
भावस्य जानौ यदि दुर्बले जनावतीवदोषः कथितः सहोयुते ।
दोषाल्पता यद्गृहगो घनाधिपोऽप्यशोभनस्तद्गृहवृद्धिमादिशेत् ॥ १९ ॥
स चेत्त्रिकेशस्तुतोऽन्यवेश्मनः प्राबल्यमुक्तं न हरौ झपेऽसृजि ।
धीस्थे सुताप्तिं शुभदृग्वेक्षिते सधस्तदाप्तिं निगदेदुदाहृतिः ॥ २० ॥

जिस भाव में 'लग्नेश' हो उस की कुशलता को कहे। लग्न का स्वामी जिस भाव के स्वामी से युक्त वा जिस भाव में हो उस भाव से उत्पन्न समस्त फल को करता है। यदि लग्नेश दुष्ट स्थान में हो तो उक्त फल विपरीत होता है। जिस दुष्ट स्थान में 'लग्नेश' हो उस का स्वामी निर्बल हो तो अत्यन्त दोष होता है। यदि भावेश बलवान् हो तो अल्प दोष होता है। एवं लग्न का स्वामी पाप ग्रह भी हो किन्तु वह जिस भाव में हो उस की वृद्धि को करता है। 'यदि लग्नेश' लग्न से त्रिकस्थान का भी स्वामी हो तो अन्य (त्रिक) स्थान की प्रबलता (प्रधानता) न कहे अर्थात् लग्न की ही प्रबलता को कहे। यहां यह उदाहरण है की सिंह राशि गत अथवा मीन राशि गत मङ्गल यदि पञ्चम स्थान में हो तो पुत्र की प्राप्ति को कहे। यदि वह पञ्चम भावगत मङ्गल शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो शीघ्र पुत्र की प्राप्ति को कहे।

नीचारिगो भावविनाशकृत्खगः समः समर्क्षे सखिभे त्रिकोणभे ।
स्वोच्चे स्वभे भावचयप्रदः शुभाशुभेषु दुःस्थेषु विपर्ययं फलम् ॥ २१ ॥

नीच राशि गत तथा शत्रु राशि गत ग्रह भाव का नाश करता है। सम राशि गत ग्रह का सम फल होता है। मित्र राशि गत, मूल त्रिकोण राशि गत, स्वोच्च राशि गत, तथा स्वराशि गत ग्रह भाव की वृद्धि को करता है। एवं त्रिकस्थान गत ग्रहों का विपरीत फल होता है। अर्थात् त्रिकस्थान गत शुभ ग्रह भाव की हानि को करते है। और त्रिकस्थान गत पापग्रह भाव की वृद्धि को करते हैं।

ऋणस्य वैरिणो रिपौ मृतौ विनाशरन्ध्रयोः ।
व्ययस्य रिःफवेश्मनि विलोमतो विचिन्तनम् ॥ २२ ॥

षष्ठ स्थान में ऋण तथा शत्रु का, अष्टम में मृत्यु तथा छिद्र (दोष) का एवं व्यय में व्यय (खर्च) का विपरीत विचार करना चाहिए। किन्तु उक्त भावों में, अन्य वस्तुओं का अन्य भावों के सदृश विचार करना चाहिए।

रोगावमानव्ययस्थितो मूलत्रिकोणस्वगृहोच्चराशिगः ।
आकाशवासी [illegible] दोषकारकः संस्त्वन्यथा तत्र गतोऽस्तु दोषकृत् ॥ २३ ॥

षष्ठ, द्वादश तथा अष्टम स्थान गत ग्रह यदि मूल त्रिकोण स्वराशि वा उच्चराशि में स्थित हो तो दोष कारक नहीं होता है। यदि त्रिकस्थान गत शुभ ग्रह मूल त्रिकोण स्वराशि वा स्वोच्चराशि में न हो तो दोष कारक होता है

नो भावघ्नोऽधः स्वगेहोच्चयातो भावाधीशः पामरः शोभनः स्यात् ।
स्वर्क्षोच्चस्थो दुःस्थोऽसन्न शस्तः सन्तः सर्वे मूढनीचारिभोनाः ॥ २४ ॥

स्वराशि गत तथा उच्च राशिगत पापग्रह भाव का नाश नहीं करता है। यदि पापग्रह भाव का स्वामी हो तो शुभ होता है। त्रिकस्थान में स्थित पापग्रह यदि स्वराशि में वा उच्चराशि में स्थित हो तो भी शुभ नहीं होता है। यदि सब शुभ तथा पापग्रह अस्तगत, नीचराशि गत तथा शत्रु राशि गत न हों तो शुभ होते है।

विहङ्गमो यस्त्रिकगेहगोऽपि वा यदाऽधरारातिलवोपगो यदि ।
पापः स मित्रोच्चभभागसंयुतो वा सौम्यदृष्टो यदि सत्फलप्रदः ॥ २५ ॥

यदि जो कोई ग्रह त्रिक (६।८।१२) स्थान में हो, नीचांश में वा शत्रु नवांश में हो तो वह अशुभ फल देता है। एवं जो कोई ग्रह मित्र की राशि में वा नवांश में वा स्वोच्चराशि में वा नवांश में हो वा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो शुभ फल देता है।

त्रिकोणकेन्द्रालयपाः शुभप्रदाः सोग्रा मिथोऽन्त्यार्थगता न शोभनाः ।
पौरप्रभुः सद्युतवीक्षितो बली यद्भेऽस्ति तत्पुष्टिरनीचशत्रुगः ॥ २६ ॥

त्रिकोणेश तथा केन्द्रेश ग्रह शुभ फल दायक होते हैं। यदि वे त्रिकोण तथा केन्द्र के स्वामी पाप ग्रहों से युक्त होकर परस्पर एक दूसरे से द्वितीय और द्वादश में हों तो शुभ नहीं होते हैं। यदि शत्रु राशि तथा नीच राशि रहित लग्नेश बलवान् हो एवं शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट होकर जिस भाव में हो उस भाव की पुष्टि कहनी चाहिए।

बन्धुत्रिकोणास्तवसुद्वयोपगा यद्भावतोऽघाः शुभदा यदाऽरिगाः ।
कुर्य्युस्तदा भावविपत्तिमन्यगास्ते स्युश्चिति तद्भवनस्य सर्वदा ॥ २७ ॥

जिस भाव से चतुर्थ, पञ्चम, नवम, सप्तम, द्वितीय तथा इष्टभाव में पापग्रह हों एवं जिस भाव से षष्ठस्थान में शुभग्रह हो उस भाव की हानि करते हैं। यदि उक्त ग्रह उक्त स्थानों के अतिरीक्त स्थान में हो तो नित्य उस भावकी वृद्धि को करते है।

त्रिकोणनाथाः सकलाः खगाः शुभाः शुभा न सर्वे भत्रयाम्यषट्त्रिपाः ।
केन्द्रेश्वराः सौम्यखगा न शोभनाः खलग्रहाः कण्टकपाः शुभाः स्मृताः ॥ २८ ॥

सब रव्यादि ग्रह यदि त्रिकोणेश हों तो शुभ होते है। एवं सब रव्यादि ग्रह लाभ, अष्टम, षष्ठ तथा तृतीय के स्वामी हों तो शुभ नहीं होते है। यदि शुभ ग्रह केन्द्र के स्वामी हों तो शुभ नहीं होते है और पापग्रह केन्द्र के स्वामी हो तो शुभ होते है।

रैरिःफनाथौ भवतः परेषां यौ साहचार्य्येण फलप्रदौ तौ ।
केन्द्रेषदोषो बलवान् क्रमेण ग्लौसौम्यशुक्रेन्द्रपुरोहितानाम् ॥ २९ ॥

जो ग्रह द्वितीयेश और द्वादशेश हों वे अन्य ग्रहों के सम्बन्ध से फलदायक होते हैं । चन्द्र, बुध शुक्र और गुरु का केन्द्रेश दोष क्रम से बलवान् होता है अर्थात् केन्द्रेश चन्द्रमा की अपेक्षा बुध का अधिक दोष, केन्द्रेश बुध की अपेक्षा केन्द्रेश शुक्र का अधिक दोष और केन्द्रेश शुक्र की अपेक्षा केन्द्रेश गुरु का अधिक दोष होता है ।

भाव हानि के योगः—

यो भावोऽधैरस्वराश्युच्चयातैर्वा नीचास्तद्विड्भगैर्दृष्टयुक्तः ।
सौम्याभ्रेटैः स्वामिना नाढ्यदृष्टो हानिर्गीता तस्य भावस्य तज्ज्ञैः ॥ ३० ॥

जो भाव स्वराशि तथा उच्च राशि रहित पापग्रहों से दृष्ट तथा युक्त हो अथवा नीचगत, अस्तगत तथा शत्रु राशि गत तथा ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो एवं शुभग्रहों से और अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट न होतो उस भाव की हानि कही है ।

यस्माद्भावाद्यत्फलं चिन्त्यमस्य नाथाच्चिन्त्यं तत्फलं भावगो नो ।
कर्तुं शक्ता भाववृद्धिं त्रिकेऽरिराशौ मूढे दुर्बले भावपे चेत् ॥ ३१ ॥

जिस भाव से जो फल विचारणीय है वही फल उस के स्वामी से भी विचारना चाहिए । यदि भाव का स्वामी त्रिक (६।८।१२) स्थान में शत्रु राशि में अस्तगत वा दुर्बल होतो भावगतग्रह भाव की वृद्धि करने में असमर्थ होता है ।

यद्भावेशो नाशगो मूढवैरिनीचर्क्षस्थो नोत्तमैर्युक्तदृष्टः ।
नाशं ब्रूयात्तस्य भावस्य तादृग् भावश्चेदप्यस्ति सन्नो तथोग्रः ॥ ३२ ॥

जिस भावका स्वामी अष्टमस्थान में ।अस्तगत े ातु राशि में हो वा नीच राशि में हो और शुभ ग्रह से युक्त वा दृष्ट न होतो उस भाव का नाश करता है नाव का स्वामी शुभग्रह होतो शुभ नही होता है । यदि भावेश पापग्रह होतो भाव का नाश करता है ।

यद्भावनाथस्त्रिकपादिभिर्युतो मृतश्च सुप्तः स्थविरः प्रपीडितः ।
भाव न सम्यग् यदि वीक्षते पुमान् सौख्यं न तद्भावभवं समाप्नुयात् ॥ ३३ ॥

जो भावेश त्रिकेशादियों से युक्त होकर मृत सुप्त वृद्ध वा प्रपीडित अवस्था में हो एवं अपने भावको उत्तम प्रकार से न देखता हो तो मनुष्य भावजन्य सुख को नहीं पाता है ।

यद्भावपो दुष्टगतस्त्रिकाधिपो यद्भावगो नोत्तमखेचरेक्षितः ।
भावस्य तस्य प्रलयास्त्रिके त्रिकेट् स्वराशिगः सन्नहि कैश्चिदीरितम् ॥ ३४ ॥

जिस भाव का स्वामी त्रिक स्थान में हो एवं त्रिकेश जिस भाव में स्थित हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट न होतो उस भावका नाश कहे। त्रिकस्थान का स्वामी स्वराशि में स्थित होकर त्रिकस्थान में होतो शुभ नही होता है। इस प्रकार कोई आचार्य्य कहते है।

पङ्क्तास्त्रिकस्थास्तनुपूर्वभावात्कुर्वन्ति ते तन्निलयस्य नाशम्।
कल्याणखेटा यदि तत्र याता नातीव कल्याणकरा निरुक्ताः॥ ३५॥

यदि लग्नादि भावों से त्रिकस्थान में पापग्रह होतो उस भाव का नाश करते है। एवं जिस भाव से त्रिकस्थान में शभग्रह हों वे अत्यन्त शुभफलदायक नहीं कहे हैं।

यो दुष्टयातः खल एष दोषतो भावस्य वृद्धिं विदधीत शोभनः।
तत्र स्थितस्तद्भवनक्षयस्ततोऽहितादिगेहात्थफलक्षयो भवेत्॥ ३६॥

त्रिकस्थान में पाप ग्रह होतो वह दोष से उस भाव की वृद्धि को करता है। एवं त्रिकस्थान में शुभ ग्रह होतो उस भाव का नाश होता है। इस लिए षष्ठादिभावा से उत्पन्न फल का नाश होता है।

यद्भावभर्त्ता सखलस्त्रिकस्थितो निम्नारिगस्तद्भवनस्य संक्षयः।
भावाद्यदा भावपतिर्गदक्षयान्त्यस्थो व्यथां भावभवामवाप्नुयात्॥ ३७॥

जिस भाव का स्वामी पाप युक्त होकर त्रिकस्थान में हो और नीच वा शत्रु राशि में होतो उस भाव का नाश होता है। यदि भाव से षष्ठ अष्टम वा व्यय में भाव का स्वामी होतो मनुष्य भाव जन्य पीडा को प्राप्त होता है।

भावे भावाधीश्वरे कारकेऽहःखेटान्तःस्थे वीतवीर्येऽरिपापैः।
युक्ते दृष्टे नान्यखेटैस्तदम्बुकोणान्त्यायुःस्थैः खलैस्तद्गृहस्य॥ ३८॥
हानिः स्पष्टं द्वित्रसंवादभावाद् जातित्र्यंशेड्नैधनास्तारियाताः।
भावात्तत्तद्भावतो नाशनाथस्ते भावघ्नाः शक्तियुक्ताः स्वदाये॥ ३९॥

भाव, भावेश तथा भाव कारक य तीनों निर्बल होकर पापग्रहों के अन्तराळ में शत्रु और पाप ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हों एवं अन्य ग्रहों से युक्त दृष्ट न हों और भाव से चतुर्थ, त्रिकोण, व्यय तथा अष्टम में पाप ग्रह हों तो उस भाव का नाश होता है। जहाँ दो वा तीन मत हों वहां यह स्पष्ट मत है। बाईस वें द्रेष्काण का स्वामी; भाव से अष्टम, सप्तम तथा षष्ठ गत ग्रह एवं प्रत्येक भाव से अष्टम स्थान का स्वामी ये सब पूर्वोक्त ग्रह निर्बल हों तो वे अपनी दशा में भाव का नाश करते हैं।

राश्योः क्षपेशोदययोः क्षयेशः क्षयर्क्षदर्शी क्षयभावसंस्थितः।
मान्दीश्वरः क्रूरदृगाणनाथो यमश्च तद्युक्तभभागनाथाः॥ ४०॥
स्वभाणुरेतेषु सुदुर्बलो यो जनो स भावादनभीष्टयातः।
युक्तः समेतो दहनैर्विहङ्गैः कुर्य्यात्स्वदाये भवनस्य हानिम्॥ ४१॥

चन्द्र राशि तथा लग्न राशि से अष्टम स्थान का स्वामी, अष्टम दर्शी, अष्टमस्थान गत, गुलिक राशि का स्वामी क्रूर द्रेष्काण (सर्पादि वा २२ वें द्रेष्काण) का स्वामी, शनि एवं उन से युक्त राशि नवांशों के स्वामी और राहु इन सब में जो अतिनिर्बल होकर अनभीष्ट (६।८।१२) भाव में स्थित हो एवं पापग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो वह अपनी दशा में भाव की हानि को करता है।

यद्भावपस्याध्यरिखेचरो यो रेखाविहीनर्क्षगतोऽथ वा यः।
तदीयदायेऽङ्गगृहादिकानां नाशं ध्रुवं दैववदो वदन्ति ॥ ४२ ॥

जिस भावेश का जो अधिशत्रु ग्रह हो उस की दशा में तथा जो भावेश रेखा रहित राशि में हो उस की दशा में निश्चय से तन्वादि भावों के नाश को कहते हैं।

तत्तद्भावान्नैधनेशस्थितांशे तस्माद् दैवे दारके पूषपुत्रे।
यद्वा वाधाभावपस्थर्क्षभागं प्राप्ते चारात्तस्य भावस्य नाशः ॥ ४३ ॥

विचारणीय भाव से जो अष्टम स्थान हो उस का स्वामी जिस राशि के नवांश में हो उस से नवम वा पञ्चम राशि में अथवा व्ययेश की अधिष्ठित राशि में वा उस की नवांश राशि में जब गोचर से शनि आवे तब उस भाव का नाश होता है।

छिद्राधिपच्छिद्रगयाम्यवीक्षकायुस्त्र्यंशनाथार्किजराशिनायकाः।
ते कष्टदाः स्युर्विबलोऽपि तेषु यः स्वकीयदाये स विनाशकारकः ॥ ४४ ॥

अष्टमेश, अष्टमस्थ, अष्टमदर्शी, अष्टम के द्रेष्काण का स्वामी और गुलिक राशि का स्वामी ये सब कष्टदायक होते है उन सबों में जो निर्बल हो वह अपनी दशा में मृत्युकारक होता है।

तत्तद्देहान्मंत्रिगस्याभ्रगस्य तस्माद् भावादामनस्याधिपस्य।
सारोनस्याकाशवासस्य दाये जातो जन्मी पञ्चतामाप्नुयात्सः ॥ ४५ ॥

प्रत्येक तन्वादि भाव से व्ययगत ग्रह की दशा में अथवा प्रत्येक तन्वादि भाव से व्ययगत राशि के स्वामी की दशा में अथवा उन दोनों में जो निर्बल हो उसकी दशा में मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

स्वामी यस्य गृहस्य दुःखगृहगः संस्थोऽकपो यत्र तद्-
भावस्य ह्यनुरूपवस्तुन इहान्तः कीर्त्तितः कोविदैः।
यद्भावाधिपती रिपुस्थलगतो यद्भावगो वैरिपो
यद्भावप्रभुणान्वितो जनुषि ते भावा इयुः शत्रुताम् ॥ ४६ ॥

जिस भाव का स्वामी व्यय भाव में हो और व्ययेश जिस भाव में हो उस भाव के अनुरूप वस्तु का नाश होता है। जिस भाव का स्वामी षष्ठस्थान में हो, षष्ठेश जिस भाव में हो और जिस भाव के स्वामी से षष्ठेश युक्त हो वे सबभाव शत्रुता को प्राप्त होते है। अर्थात् उन भावों के साथ मनुष्य की शत्रुता होती है।

दो राशियों के एकाधिपत्यफल का निर्णयः——

दुःस्थानेशश्चेत्तदन्यस्वभस्थः स्वक्षेत्रोत्थं तत्फलं तद्विधत्ते ।
नान्यत्पुत्रे पङ्गुरेणे तनूजासिद्धिः षष्ठेशत्वदोषो न तस्य ॥ ४७ ॥

दुःस्थान (६।८।१२) का स्वामी यदि अपनी दुःस्थान (६।८।१२) की राशि को छोडकर अन्य दूसरे स्थान वाली राशि में स्थित हो तो वह अपना स्वक्षेत्रजन्य भावफल को करता है। अन्य दुःस्थान का फल नहीं करता है । जैसे मकर राशि गत शनि यदि पञ्चम में हो तो पुत्रसिद्धि (प्राप्ति) होती है। उसका षष्ठेशत्व दोष नहीं होता है।

अस्ति द्विस्थाननाथत्वं मुख्यं त्रिकोणराशिजम् ।
तद्दलं स्वगृहे प्राग्यदुभयोस्तद्दशामुखे ॥ ४८ ॥
पश्चाद्भावं वदेदत्रापरार्द्धसमये समे ।
गृहे युग्मजमोजस्थे सत्योजभावजं फलम् ॥ ४९ ॥

जो ग्रह दो स्थानों का स्वामी हो उस की मूल त्रिकोण राशि का फल प्रधान होता है और स्वगृह का फल आधा होता है। दशा के आरम्भ में मूलत्रिकोण राशि का फल होता है। और दशा के परार्द्ध में स्वराशि का फल होता है। किसी आचार्य्य का मत है की जन्म समय में 'ग्रह' समराशि में हो तो अपनी समराशि के भावका फल देता है और विषम राशि में हो तो विषम राशि के भावका फल देता है।

भावो भावाधिपो भावकारको भाववीक्षकः ।
भावाश्रितोऽत्र पञ्चानां सौम्यता भावसिद्धिदा ॥ ५० ॥
भावहानिप्रदाऽसत्ता मिश्रता मिश्रदा भवेत् ।
स्थितेरपेक्षया दृष्टिः खेचराणां बलीयसी ॥ ५१ ॥

भाव, भावका स्वामी, भावकारक, भावदर्शी और भावगत इन पाँचों की सौम्यता भावसिद्धि देने वाली होती है। एवं पाँचों की पापता भाव की हानि करने वाली और मिश्रता मिश्रफल देती है। ग्रहों की स्थिति की अपेक्षा दृष्टि बलवती होती है।

भावादखेटाद्ग्रहयुक्तभावो ज्यायान्सखेटादधिकग्रहाढ्यः ।
चरस्थिरद्वन्द्वगृहाः सवीर्य्याः साम्ये क्रमाद्भावबलं किलेत्थम् ॥ ५२ ॥

ग्रह रहित भाव से ग्रह युक्त भाव बलवान् होता है। ग्रह युक्त भाव से अधिक ग्रह युक्त भाव बलवान् होता है। यदि भावगत ग्रहों की समानता हो तो क्रमसे चर, स्थिर तथा द्विस्वभाव राशि बलवान् होती है। इस प्रकार भावों का बल जानना चाहिए।

भावो भावाधीश्वरः कारकश्च ते संयुक्ताः शक्तिभिः स्युस्तदानीम् ।
प्रोक्तं पूर्णं तत्फलं जातकज्ञैरर्द्धं द्वाभ्यां स्वल्पमेकेन वाच्यम् ॥ ५३ ॥

भाव, भाव का स्वामी तथा भावकारक ये तीनों यदि षड्बलों से युक्त हों तो उन का फल पूर्ण कहा है। यदि उक्त तीनों में से दो बलवान् हों तो आधा फल और एक बली हो तो स्वल्प फल कहना चाहिए।

प्राग्भावजफलं दद्यादारम्भसन्धितोऽल्पकः।
विरामसन्धितः पुष्टः खगो गम्यगृहोद्भवम् ॥ ५४ ॥

यदि भावसे 'ग्रह' अल्प हो तो वह प्रथम (आदिम) भाव के फल को देता है। एवं विराम (अन्त्य) सन्धि से 'ग्रह' अधिक हो तो वह आगामी भाव के फल को देता है।

भावस्फुटप्रमलवो यदि भावयात–
स्तद्भावजन्यमखिलं फलमत्र कुर्य्यात्।
सन्धिस्थितो दिविचरः स्वफलं न कुर्या–
न्मध्येऽनुपातवशतः फलमूहनीयम् ॥ ५५ ॥

यदि भावगत ग्रह के अंशादि स्पष्ट भाव के अंशादि के समान हों तो भावगत ग्रह उस भाव से उत्पन्न समस्त फलकों करता है। एवं संधिगत 'ग्रह' अपने फलको नहीं करता है अर्थात् उस के फलका अभाव होता है। भाव और सन्धि के मध्य में स्थित ग्रह का 'भाव फल' त्रैराशिक विधि से विचारना चाहिए।

ग्रहः स्वतुङ्गस्वसुहृद्भयातः प्रधानवीर्य्यैः सहितोऽपि षड्भिः।
सन्धिगतः सन् फलदोनहीति सञ्चिन्त्यसूरिः प्रवदेद्दशायाम् ॥ ५६ ॥

यदि 'ग्रह' अपनी उच्च राशि में स्वराशि में वा मित्र राशि में हो एवं मुख्य षड्बलों से भी युक्त होकर वह सन्धि में स्थित हो तो भावजन्य फल को नहीं देता है। इस प्रकार ग्रह के शुभाशुभ फल का विचार कर के ग्रह के फल को ग्रह की दशा में कहे।

धनादि भावों की चिन्तनविधिः--

चिन्त्यं फलं यस्य गृहस्य तद्गृहं विलग्नमेवं परिकल्प्य देशिकाः।
ततः फलं द्वादशभावसम्भवं वदन्ति तद्रूपधनादिकं क्रमात् ॥ ५७ ॥

जिस भाव के फलका विचार करना हो उस को लग्न मान कर उससे द्वादश भाव जन्य फल को क्रम से उसके रूप धनादि को कहे।

भावकारकग्रहसे फलचिन्तनविधिः—

तत्कारकादिति फलं परिचिन्तनीयं
तातस्य मातुरनुजस्य च मातुलस्य।
पुत्रस्य पत्युरथ किङ्करपूर्वकस्य
तिग्मांशुपूर्वखचराश्रितराशितोऽत्र ॥ ५८ ॥

इस प्रकार देहादि भावों के कारक से भावजन्य फल का विचार करें। सूर्यादि ग्रहों की अधिष्ठित राशिसे पिता, माता, भ्राता, मातुल, पुत्र, पति और दासों के शुभाशुभ फल का लग्न के समान अपने अपने कारक से भी फल का विचार करें अर्थात् सूर्याधिष्ठित राशि से पिता का, चन्द्राधिष्ठित राशि से माता का, भौम से भ्राता का, बुध से मामा का, गुरु से पुत्र का, शुक्र से पति-पत्नी का और शनि से दासों के शुभाशुभ फल का विचार करें।

तातस्वरूपं तपनस्थराशेर्द्वितीयगेहेन चयं प्रकाशम्।
तृतीयतस्तद्गुणसोदरादि चतुर्थतस्तज्जननीं सुखं च ॥ ५९ ॥
प्रबन्धभावाद् धिषणां प्रसादं व्यथारिरोगान् जनकस्य दोषम्।
द्वेष्यान्मदात्तन्मदमारपूर्वं तदायुरन्तं व्यसनं विनाशात् ॥ ६० ॥
भाग्याच्छुभं तज्जनकं च पुण्यं व्यापारमभ्रातपरिचिन्तयेत्सन्।
लब्धेः स्वलाभं व्ययमन्त्यगेहाच्चन्द्रादितोऽपीति फलं विचिन्त्यम् ॥ ६१ ॥

जन्म समय में 'सूर्य' जिस राशि में हो उस राशि को पिता का लग्न मानकर उस से पिता के शुभाशुभ फल का विचार करें अर्थात् सूर्याधिष्ठित राशि से पिता के स्वरूपादि, सूर्य से द्वितीय स्थान में वृद्धि तथा प्रकाश, तृतीय स्थान में पिता के गुण और उसके भ्रातादि (ताऊ, चाचा) चतुर्थ में पिताकी माता का तथा उस के सुखादि, पञ्चम में बुद्धि तथा प्रसन्नता, षष्ठ में पीडा, शत्रु तथा रोग एवं पिता के दोष, सप्तम में मद तथा कामादि, अष्टम में पिताकी आयु, मृत्यु तथा व्यसन, नवम में मंगल, पिताका पिता (पितामह) तथा पुण्य, दशम में व्यापार, लाभ में धन का एवं व्यय में व्ययका विचार करें। इस प्रकार चन्द्रादि ग्रहों से माता प्रभृतियों के स्वरूपादि का विचार करें।

तत्तद्गृहात्कारकतः प्रकल्पयेदितीह तत्तत्पितृमातृपूर्वकान्।
तत्कारके तद्भवने तदीश्वरे शौर्य्यान्विते तद्गृहसौख्यमुच्यते ॥ ६२ ॥

इसी प्रकार पितामाता प्रभृति के पितामातादि का उन के स्थान से और उन के कारक से विचार करना चाहिये। पितामातादि का कारक, उन के स्थान और उन के स्थानों के स्वामी यदि ये तीनों बलवान् हों तो उन भावों का सुख कहा है।

चिन्तयेच्चरमभादतीतकमेष्यमर्थभवनाद्विभावसोः।
भाव्यतीतमुरगाधिनाथतः साम्प्रतं हरिणलाञ्छनाभिधात् ॥ ६३ ॥

व्ययभाव से भूतकाल जनित फल, द्वितीय भाव से भविष्य काल जनित फल एवं सूर्य से भविष्यकाल जनित फल, राहू से भूतकालजनित फल और चन्द्रमा से वर्तमानकालजनित फल का विचार करे।

भावसिद्धिकालपरिज्ञानः—

एते योगाः प्राक्तनाचार्यैः प्रदिष्टा योगानां ये कारकास्तेषु यस्य।
ओजः सान्द्रं तस्य खेटस्य दाये भुक्तौ तज्ज्ञैस्तत्फलं कल्पनीयम् ॥ ६४ ॥

ये योग प्राचीन आचार्य्यों ने कहे हैं। उक्त योगों के जो कारक ग्रह हों उन सब के मध्य में जो अधिक बलशाली ग्रह हो उस की दशा तथा अन्तर्दशा में उक्त योगों के फलप्राप्ति की कल्पना करनी चाहिए।

भावं च भावपगभांशसुताङ्कभं वा-
ऽङ्गेशोऽङ्गपस्थभलवाङ्कसुतर्क्षमङ्गम्।
आयाति भावरमणोऽपि तयोश्च योगे
तद्वीक्षणेऽपि कथयेत्सदनस्य सिद्धिम्॥ ६५॥

भावराशि में भावेश की आश्रित राशि में नवांश राशि में अथवा उस (भावेशाक्रान्त) से पञ्चम राशि में वा नवम राशि में जब गोचर से लग्नेश आवे तब भाव की सिद्धि को कहे अथवा लग्नेश की आश्रित राशि में नवांश राशि में अथवा उस (लग्नेशाक्रान्तराशि) से नवम राशि में पञ्चम राशि में वा लग्न राशि में जब गोचर से लग्नेश आवे तब भाव की सिद्धि को कहे अथवा लग्नेश तथा भावेश का जब समागम हो अथवा जब उन दोनों की परस्पर दृष्टि हो तब भाव की सिद्धि (प्राप्ति) को कहे।

एवं तनूतनुपकारकचन्द्रतोऽपि
यद्भावनाथगतराशिनवांशगो वा।
तस्मात् त्रिकोणगृहगोऽमरराजमंत्री
गोचारके वदतु तस्य गृहस्य सिद्धिम्॥ ६६॥

इसी प्रकार लग्न, लग्नेश, भावकारक और चन्द्रमा से भी भावसिद्धि का विचार करें। जिस भावेश की आक्रान्त राशि में वा नवांश राशि में वा उससे त्रिकोणराशि में जब गोचर से गुरु आवे तब भाव की सिद्धि को कहे।

यद्भावनाथाङ्गपयोर्युतिर्यदा तदा वदेत्तत्फलसिद्ध्यनेहसम्।
शुभं गृहेशाधिबलेऽन्यथा यदाऽन्यच्चन्द्रतोऽङ्गादपि चिन्तयेद्बुधः॥ ६७॥

जिस भावेश और लग्नेश का जब गोचर से समागम हो तब उस भाव की फलसिद्धि के काल को कहे। भावेश के बलवान् होनेपर शुभ फल होता है और उस के निर्बल होनेपर शुभ फल का अभाव होता है। एवं चन्द्रमा और लग्न से भी फलसिद्धि के समय का विचार करें।

पौरारातिपयोर्युतौ पुरपतेर्द्वेष्ये यदा दुर्बले
वैरी तद्वशगो भवेदितरथा व्यस्तं तनूपो रिपुः।
यद्भावाधिपतेरुतारिर्मृतिगस्तत्कालशत्रोर्वशात्
स्पर्धां तेन सहादिशेत्सखियुतौ चेन्मित्रतां गोचरे॥ ६८॥

जब गोचर से लग्नेश तथा षष्ठेश का योग हो और लग्नेश से षष्ठस्थान में जब दुर्बल ग्रह हो तब शत्रु उस के वश को प्राप्त होता है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो शत्रु वशीभूत नहीं होता है। लग्न का स्वामी जिस भावेश का शत्रु हो अथवा गोचर में तात्कालिक शत्रु की अधिष्ठित राशि से षष्ठ वा अष्टम में लग्नेश हो तो शत्रु के

साथ स्पर्धा को कहे । एवं जब गोचर में लग्नेश और लग्नेश मित्र के भावेश का योग हो तब उस भाव से मित्रता को कहे ।

यत्पूर्वमुक्तं द्रविणं खगस्य या कर्मवार्ता कथिता ग्रहस्य ।
आलोक योगोद्भवभावजं तत्सर्वं कृतिन्योजय तस्य दाये ॥ ६९ ॥

ग्रह का संज्ञाध्यायोक्त द्रव्य, ग्रहकी कर्माजीवाध्यायोक्त वृत्ति, ग्रहकी दृष्टि और योग से उत्पन्नफल तथा भावज फल ये सब ग्रहकी दशामें कहे ।

विहङ्गस्यैकस्यैव समफलयोर्यत्र भवति
विरोधे नाशः स्याद्यदि यदधिकं पच्यत इह ।
तदन्यः खेटोनो इतरफलकं हन्ति सदृशं
खगाः सर्वेदद्युर्निजनिजदशायां निजफलम् ॥ ७० ॥

यदि एकही ग्रह के परस्पर विरोध वाले दो फल समान हों तो उनका नाश होता है। एवं एक ग्रह के फल की न्यूनाधिकता हो तो 'ग्रह' अधिक फलको देता है । 'अन्यग्रह' अन्यग्रहके फलका नाश नहीं करता है । सब ग्रह अपनी अपनी दशा में अपने अपने फलका नाश करते हैं ।

असमर्थ ग्रह के लक्षणः—

ये खेचरा निम्नमिता विरूक्षाः क्रूरैरुपेता अणवोऽस्तयाताः ।
वीर्य्योज्झिता वैरिपराजिताः स्युर्न ते समर्था निजकर्म्मकर्त्तुम् ॥ ७१ ॥

जो ग्रह नीच राशि में हों, रूक्ष कान्ति वाले हों, पापग्रहों से युक्त हों, राशि के तीसवें अंशमें हों, अस्तगत हों, बलरहित हो एवं शत्रु ग्रहों से पराजित हो, वे सब ग्रह अपने कर्तव्य पालन में असमर्थ होते हैं ।

पूर्णफलप्रदग्रहलक्षणः—

मार्त्तण्डभागाल्लवषट्कयातो वियच्चरःपूर्णफलप्रदोऽसौ ।
योऽनन्तगेहो गुरुपूर्णदृष्ट्यादृष्टः सनानिष्टफलप्रदाता ॥ ७२ ॥

यदि ग्रह के अंशादि १२ अंश से १८ अंशके अन्तर्गत हों तो वह पूर्ण फलदायक होता है । एवं जो 'ग्रह' गुरु से पूर्ण दृष्ट हो वह अनिष्ट (अशुभ) फल नहीं देता है ।

वक्रोच्चादिगतग्रहफलकथनः—

वक्रोच्चयातःसुकृतोनभश्चरो महाबलीवक्रग उग्रखेचरः ।
अत्युग्र उष्णद्युतितोऽस्तगोदिशेत्पूर्णं फलं मिश्रफलं ददाति वित् ॥ ७३ ॥

शुभ ग्रह यदि वक्रगत वा उच्च राशिगत हो तो महाबली होता है । एवं पापग्रह वक्रगत हो तो अतिक्रूर होता है । यदि सूर्य से सप्तम स्थान में ग्रह हो तो वह पूर्ण फलको देता है । सब कार्यों में 'बुध' मिश्रफल को देता है ।

सूर्यादिग्रहोंकेकष्टप्रदस्थानपरिज्ञानः—

काळिन्दीसूस्तीर्थगो ग्लौर्हितस्थोऽसृग्वीर्य्यस्थोऽबुद्धिगोवासवेड्यः।
कामस्थोऽच्छोमन्दगो मृत्युयातः क्लेशंकुर्य्युश्चेतनानां सदैते ॥ ७४ ॥

नवम में सूर्य, चतुर्थ में चन्द्रमा, तृतीय में मङ्गल, पञ्चम में गुरु, सप्तम में शुक्र और अष्टम में शनि हो ये सब उक्त स्थान में प्राणियोंको क्लेश करते हैं।

ग्रहोंकाशुभाशुभफलः—

पूर्णं शुभं भावबलं निजोच्चे करोतुनिम्नेऽस्तगतःफलं खम्।
स्वोच्चेऽशुभं शून्यमसत्समस्तं स्वनिम्नराशौ सुरवर्त्मचारी ॥ ७५ ॥

यदि 'ग्रह' अपनी उच्च राशि में हो तो उसका भावजन्य फल पूर्ण शुभ होता है। एवं 'ग्रह' अपनी नीच राशि में वा अस्तगत हो तो ग्रह का भावज फल शून्य होता है। यदि 'ग्रह' अपनी उच्च राशि में हो तो अशुभ फल शून्य होता है और 'ग्रह' नीच राशि में हो तो अशुभ फल पूर्ण होता है।

पार्श्वद्वये यस्य गृहस्य शोभने स्यात्सत्फलं चेदशुभेतदाऽशुभम्।
नीचस्थयुक् तुङ्गगतश्च नीचगस्तुङ्गस्थयुङ् मध्यफलं तयोर्भवेत् ॥ ७६ ॥

जिस भावके दोनों पार्श्वोंमें शुभ ग्रह हों उसका शुभ फल होता है। एवं जिस भाव के दोनों पार्श्वों में पाप ग्रह हों उसका अशुभ फल होता है। यदि 'उच्चराशिगत ग्रह' नीचराशिस्थ ग्रह से युक्त हो अथवा नीच राशिगतग्रह यदि उच्चस्थ ग्रह से युक्त हो तो उन दोनों का मध्यम फल होता है।

पूर्णेक्षया पश्यति यद्गृहंगो लग्नाद् गृहे यत्र च तद्गृहं भवेत्।
तत्तुल्यवर्षे फलमस्य लग्नतोऽकान्तं समाद्वादश तद्वदग्रतः ॥ ७७ ॥

जो 'राशि' ग्रह की पूर्ण दृष्टि से दृष्ट हो वह राशि लग्न से जितनी संख्या के भाव में हो उस संख्या के तुल्य वर्ष में उस दर्शी ग्रह का दृष्टि जनित फल होता है। लग्न से व्ययभावपर्य्यन्त १२ वर्ष होते हैं। उसी प्रकार आगे भी वर्षों की कल्पना करे अर्थात् द्वितीयावृत्ति में लग्न से व्ययपर्यन्त २४ वर्ष होते हैं। एवं आगे भी विचार करें।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्वपण्डितचक्रधरभट्टकृतभाषाटीकोदाहरणोपेते भावसारांशप्रकरणं पञ्चत्रिंशमवसितम्।

अथ

ग्रहराशियुतिप्रकरणं प्रारभ्यते ।

मेषराशिगतरविफलं:—

उद्युक्तो भ्रमणरुचिर्दृढास्थिबन्धो-
ऽजे शास्त्रार्थकृतिकलाज्ञ आहवेच्छुः ।
पित्तासृग्गदबलकान्तिसाहसाढ्य-
श्चण्डोऽर्के वरविदितो नृपः स्वतुङ्गे ॥ १ ॥

जिस मनुष्य के जन्मसमय में सूर्य, मेषराशि में हो तो वह अपने कार्य करने में उद्युक्त, भ्रमण करने की इच्छा वाला, दृढअस्थिबन्ध वाला, शास्त्र का अर्थ करने वाला, कलाओं का जानने वाला, संग्रामप्रिय, रक्तपित्त-रोगी; बल, कान्ति तथा साहस से युक्त, प्रचण्ड स्वभाव, श्रेष्ठ तथा प्रसिद्ध होता है । यदि मेषराशिगत सूर्य परमोच्च (१० अंश के अन्तराल) में हो तो राजा होता है ।

वृषराशिगतरविफलः—

वन्ध्याङ्गनाद्वेषयुतो मुखाक्षिरोगाभितप्तो बहुशत्रुपक्षः ।
भक्तो न हि क्लेशसहिष्णुरेष स्याच्छेमुषीमान्व्यवहारवादी ॥ २ ॥
आच्छादनैर्भोजनगन्धमाल्यैः समन्वितो गायननृत्यवेत्ता ।
वाद्यप्रियः शम्बरभीरुरुक्षराशिं प्रयातेऽम्बुनिजीवनेशे ॥ ३ ॥

वृषराशि में 'सूर्य' हो तो वन्ध्या स्त्री से वैर करने वाला, मुख तथा नेत्ररोग से पीडित, बहुत शत्रुवाला, भक्तजन, क्लेश (कष्ट) न सहने वाला, बुद्धिमान्, व्यवहारवादी; वस्त्र, भोजन, गन्ध तथा पुष्पोंसे युक्त, गायन और नृत्य जाननेवाला, वाद्यप्रिय एवं जलसे डरने वाला होता है ।

मिथुनराशिगतरविफलः—

मेधावी सुभगो बहुद्रविणयुग् विज्ञानशास्त्रेषु च
दक्षो वाङ्मधुरो द्विमातृसहितः स्यान्मध्यरूपो नरः ।
वात्सल्यादिगुणैर्युतोऽतिनिपुणो जातो विनीतः श्रुता-
चारो ज्यौतिषविद्रवौ मिथुनगे चोदारचेष्टोऽनिशम् ॥ ४ ॥

मिथुन में 'सूर्य' हो तो धारणा-बुद्धिवाला, ऐश्वर्यवान्, बहुत द्रव्यसे युक्त, विज्ञानविद्या तथा शास्त्रोंमें चतुर, मधुर भाषी, दो माताओंसे युक्त, मध्यम रूपवान्, वात्सल्यवादी गुणोंसे युक्त, अत्यन्त कुशल, नम्र, शास्त्रोक्त आचार वाला, ज्यौतिषशास्त्रवेत्ता और नित्य उदारचेष्टा वाला होता है ।

कर्कराशिगतरविफलः—

स्यान्मानी बहुलस्थितिः पितृगणद्वेष्टा सुरूपः सम-
धर्मी कर्म्मसु चञ्चलो निजगुणैः ख्यातो धरित्रीभुजाम् ।
विद्वेषी स्वजनस्य मद्यरुचिको दिग्देशवेत्ता वर-
वाक्यः पित्तकफार्दितो दिनकरे स्त्रीदुर्भगः कर्कगे ॥ ५ ॥

कर्क में 'सूर्य' हो तो मानयुक्त, बहुतस्थिति वाला, पितृवर्गका शत्रु, सुन्दर रूपवान्, समान धर्मावलम्बी, कर्म में चञ्चल, अपने गुणों से प्रसिद्ध, राजाओंका तथा परिजनोंका शत्रु, मद्यरुचिवाला, दिग्देशकाल का ज्ञाता, श्रेष्ठवचन वाला, पित्त, कफ रोग से पीडित और स्त्री का अभागा होता है ।

सिंहराशिगतरविफलः—

विख्यातो विपिनमहीध्रदुर्गचारी गम्भीरः स्थिरबल आमिषस्य भक्षी ।
उत्साही बधिर इलापतिश्च रौद्रः शूरोऽर्थी हरिग इने सुतेजसाढ्यः ॥ ६ ॥

सिंह में 'सूर्य' हो तो प्रसिद्ध; वन, पर्वत तथा दुर्गों में भ्रमण करने वाला, गम्भीर चेष्टा वाला, स्थिर बली, मांसभक्षी, उत्साही, बधिर (बहरा), पृथ्वी का स्वामी, उग्रस्वभाव, शूर वीर, धनी और तेजस्वी होता है ।

कन्याराशिगतरविफलः—

विद्वान्वल्गुकथस्तथा मृदुवचा दीनोऽल्पसत्त्वो नरो
लज्जावान् लिपिविद् गुरोः सुमनसां शुश्रूषको दुर्बलः ।
मेधावी श्रुतिगेयवाद्यनिरतः स्त्रीतुल्यदेहो भवेत्
दक्षो वाहनकर्म्मसूष्णकिरणे पाथोननामाश्रिते ॥ ७ ॥

कन्या में 'सूर्य' हो तो पण्डित, टेढा बोलने वाला, कोमलवचन, दरिद्री, अल्पबली, लज्जावान्, लेखन-कर्म्म जानने वाला; गुरु तथा देवताओंकी सेवा करने वाला, दुर्बल, धारणा बुद्धिवाला, वेद के गायन तथा वाद्य में लीन, स्त्री के समान शरीरवाला एवं वाहनकर्म में निपुण होता है ।

तुलाराशिगतरविफलः—

सुवर्णलोहादिकपण्यजीवी विदेशमार्गादिकलम्पटश्च ।
द्वेष्यः प्रगल्भः परदारसक्तः सर्वंसहाभृत्परिभूत एषः ॥ ८ ॥
द्विष्टो मनुष्यो मलिनश्च भङ्गक्षयव्ययार्त्तः परकर्म्मरक्तः ।
जातो निहीनोपहतप्रमोदो गभस्तिहस्ते घटराशियाते ॥ ९ ॥

तुला में 'सूर्य' हो तो सुवर्णलोहादिक व्यापार से जीविका करने वाला, विदेशके मार्गादिमें लम्पट, वैर करने योग्य, धृष्ट, परदारगामी, राजासे अपमानित, द्वेषवाला, मलिन, पराजय, क्षयरोग तथा व्ययसे पीडित, अन्यकर्मकर्ता एवं नीच जनों से नष्ट प्रीतिवाला होता है ।

वृश्चिक राशि गत रवि फलः—

न सत्यवाक् क्रोधपरः कलिप्रियोऽसद्वृत्तकश्चानृतवाक् सुलोभवान् ।
कुस्त्रीविधेयः प्रविनष्टदुष्टकयोषो जनन्या जनकस्य दुर्भगः ॥ १० ॥

क्रूरो जनुष्माननिवारिताहववेगश्च मूर्खः श्रुतिधर्म्मसंयुतः ।
ग्रस्तो विषेणायुधतः कृशानुना सरीसृपस्थे जनने द्युभर्त्तार ॥ ११ ॥

वृश्चिक में 'सूर्य' हो तो असत्य वचन वाला, क्रोध में तत्पर, कलह प्रिय, दुष्टचरित्र वाला, मिथ्या भाषी अतिलोभी, निन्दित स्त्री के वचन ग्रहण करने वाला, नष्टावयव दुष्ट स्त्री वाला, माता पिता का अभागा अर्थात् मातृ पितृ सौख्य रहित क्रूरस्वभाव अनिवारित युद्ध वेग वाला, मूर्ख, वैदिक धर्म्म वाला, विष, शस्त्र तथा अग्नि, से ग्रस्त होता है ।

धनू राशि गत रवि फलः—

पृथ्वीपतीष्टो वसुसंयुतो भवी प्राज्ञः प्रशान्तः सहसा समन्वितः ।
गीर्वाणविप्रानुरतो मतङ्गजशस्त्रास्त्रशिक्षाकुशलो मनोहरः ॥ १२ ॥

विस्तीर्णपीनः प्रभवेत्कलेवरः सतां प्रपूज्यो व्यवहारयोग्यकः ।
स्वकीयबन्धोर्हितकारको धनी निषङ्गियाते नलिनीविभौ जनौ ॥ १३ ॥

धनू राशि में 'सूर्य, हो तो राजा से पूजित, द्रव्य से युक्त, पाण्डित, स्थिर स्वभाव, बल से युक्त, देवता तथा ब्राह्मणों की भक्ति में तत्पर; हाथी, शस्त्र तथा अस्त्र की शिक्षा में चतुर, मनोहर कान्ति, विस्तीर्ण तथा स्थूल शरीर, सज्जनों से सम्मानित, व्यवहार योग्य तथा बन्धुजनों का हित चाहने वाला होता है ।

मकर राशि गत रवि फलः—

लुब्धः सतृष्णो बहुकार्य्यरक्तो विहीनबन्धुर्बहुभक्षकश्च ।
भीरुः कुयोषिन्निरतः कुकर्म्मसंवर्द्धितः स्यादटनप्रियश्च ॥ १४ ॥

स्वपक्षविक्षोभविनाशिताखिलश्चलप्रकृत्या सहितोऽल्पसत्त्ववान् ।
कुरङ्गराशिं प्रगते सरोजिनी प्राणाधिनाथे मनुजस्य सम्भवे ॥ १५ ॥

मकर में 'सूर्य' हो तो लोभी, तृष्णा युक्त, बहुत कार्य में आसक्त, बन्धजन रहित, बहुत खाना खाने वाला, डरने वाला, निन्दित स्त्री में आसक्त, निन्दित कर्म से बढा हुआ, भ्रमण में प्रीति रखने वाला, अपने समस्त पक्ष का विक्षोभ से नाश करने वाला, चञ्चल प्रकृति वाला एवं अल्प बली होता है ।

कुम्भ राशि गत रवि फलः—

सतां विगर्ह्यो बहुरोषसंयुतः पराङ्गनानां सुभगश्च कर्म्मसु ।
सुनिश्चितो दुर्जन उद्भवस्तदा स्याद् दुष्प्रलापो मलिनः कलेवरः ॥ १६ ॥

अदभ्रसत्त्वोऽल्पधनः प्रसूतिजप्रायः शठश्चञ्चलसौहृदः सदा ।
नूनं मनुष्यो हृदयामयान्वितो हृद्रोगगे जन्मनि तीव्रदीधितौ ॥ १७ ॥

कुम्भ में 'सूर्य' हो तो सज्जनों के मध्य में अतिनिन्दित, बहुत क्रोधी, पराई स्त्रियों के सौभाग्य वाला, कर्मों में अतिनिश्चित, दुर्जन, वृथा दुष्ट बकवादी, मलिन शरीर, बहुत पराक्रमी, अल्प धनी, दुःख प्रायः, शठ, चञ्चल मित्रता वाला और हृदय रोगी होता है ।

मीन राशि गत रवि फलः—

सुवाग् विपश्चित्सुहृदां सुसङ्गहशीलः समज्ञाधनतो जयोदयी ।
सत्सूनुभृत्याप्तयशाश्च जीवनपण्यार्थवानूर्जितगुह्यरोगवान् ॥ १८ ॥

प्रभूतसोदर्य्यसमन्वितोऽनृतवादी प्रभूतारिसमूहनाशकः ।
प्रीत्या युवत्या इह लब्धसौख्यवान्मत्स्यद्वयस्थे खररश्मिमालिनि ॥ १९ ॥

मीन में 'सूर्य' हो तो सुन्दर वचन वाला, पण्डित, मित्रमण्डली वाला, कीर्ति तथा धन से जयोदय वाला, उत्तम पुत्र तथा भृत्य से लब्ध कीर्ति, जल के व्यापार से धनवान्, बहुत बलवान्, गुप्त रोग वाला, बहुत भाइयों वाला, मिथ्या वादी, शत्रु संघ का नाश करने वाला एवं स्त्री की प्रीति से सौख्य की प्राप्ति वाला होता है ।

मेष राशि गत चन्द्र फलः —

सौवर्णदेहः कुनखाङ्गवालः सोदर्य्यहीनश्चपलः स्थिरस्थः ।
स्यात्क्षामजानू रतिनायकार्त्तः स्नेहान्वितो जीवनभीरुरङ्गी ॥ २० ॥

पाण्यंघ्रिभिः पद्मनिभैः सुविस्तृतदेहोद्भवो वर्त्तुलतुल्यलोचनः ।
योषाजितो मानधनश्च साहसी सुधाकरे सेर्म्मशिरा अजाश्रिते ॥ २१ ॥

मेष में 'चन्द्रमा' हो तो सुवर्ण के समान शरीर वाला; कुत्सित नख, शरीर तथा बाल; भ्राता रहित, चञ्चल स्वभाव, स्थिरधनी, क्षीणजानु, कामदेव से पीडित, स्नेह से युक्त, जल से डरने वाला, कमल के समान हाथ पैर वाले बहुत पुत्रों से युक्त, वर्त्तुल के समान नेत्र वाला, स्त्रियों से पराजित, मान धन वाला, साहसी एवं व्रणाङ्कित शिर वाला होता है ।

वृष राशि गत चन्द्र फलः—

कामी वदान्यो वृषतुल्यनेत्रः स्याद् व्यूढवक्षा यशसा समेतः ।
कन्याप्रजावान् घनवक्ररोमा मध्येऽन्तिमे भोगयुतश्च कान्तः ॥ २२ ॥

क्षान्त्यन्वितो हंससमानलीलाप्रचार आस्येऽङ्कयुतश्च पृष्ठे ।
पार्श्वे ककुत्के पृथुजानुजंघापादांसकश्रोणिमुखो गवीन्दौ ॥ २३ ॥

वृष में 'चन्द्रमा' हो तो काम वासना वाला, अतिदानी, बैल के समान नेत्र वाला, विस्तृत वक्षस्थल वाला, यशस्वी, कन्यासन्तति वाला, घने टेढेबाल वाला, मध्य तथा अन्तिम अवस्था में भोग युक्त, मनोहरशरीर, सहन-

शीलता वाला, हंस के समानलीला तथा गति वाला; मुख, पृष्ठ, पार्श्व तथा ककुत्प्रदेश में चिन्ह युक्त एवं विशाल जानु जंघा पाद स्कन्धकटि (कमर) तथा मुखवाला होता है।

मिथुन राशि गत चन्द्र फलः—

सुरतविधिकलाविन्नीलनेत्रोच्चनासो
विषयसुखसमेतो भोगभाग् व्यायताङ्गः।
दयितवचनयुक्तः काव्यकृत् क्लीबसख्यः
शशिनि नृयुजि हस्ते मत्स्यपाङ्कः शिरालः॥ २४॥

मिथुन में 'चन्द्रमा' हो तो मैथुन की विधि तथा कला ओं को जानने वाला, श्यामनेत्र, उंचीनासिका वाला, विषय सुख से युक्त, भोगवाला, दीर्घशरीर वाला, प्रियवचन भाषी, काव्य करने वाला, नपुंसकों से मित्रता करने वाला, मत्स्याचिन्ह युक्त हाथवाला, एवं शिराल अर्थात् नाडीवाला होता है।

कर्क राशि गत चन्द्र फलः—

कामासक्तो ज्यौतिषज्ञानशीलैः संयुक्तः सौभाग्ययोगैर्वयस्यैः।
गेहोन्मादैश्चाटनैः केशकल्पो भूभृन्मंत्री हानिवृद्ध्यानुयातः॥ २५॥
पीनः कण्ठः सत्प्रमाणः प्रवासी वाप्युद्यानस्वर्गनाथालयानाम्।
कर्त्ता लोके वा प्रसूने रुचिः स्यात्तारानाथे कर्कराशिं प्रयाते॥ २६॥

कर्क में 'चन्द्रमा' हो तो काम में आसक्त, ज्यौतिष, ज्ञान, शील, सौभाग्ययोग, मित्र, ग्रह, उन्माद तथा अटन (भ्रमण) से युक्त; केशकल्प (अल्प बाल वाला), राजमंत्री, हानि वृद्धि को प्राप्ति होने वाला, स्थूलकण्ठ वाला, उत्तम प्रमाण वाला, प्रवास में रहने वाला; वापी (बावडी), उद्यान (वगीचा) तथा देव मन्दिर बनाने वाला लोगों में वा फूलों में प्रीति रखने वाला होता है।

सिंह राशि गत चन्द्र फलः—

दाता सुवक्षा लघुपिङ्गलोचनस्तीक्ष्णोऽल्पपुत्रश्च बृहद्गलाननः।
क्षुत्तर्षदन्तोदररोगपीडितो विक्रान्तकः पीवरकीकसस्तथा॥ २७॥
द्वेषी युवत्याः पलभक्षकोऽखिलगम्भीरदृष्टिर्मृदुरोमसंयुतः।
कार्य्यप्रलापी विपिने नगे रतिः स्वमातृवश्यो हिमगौ हरिं गते॥ २८॥

सिंह में 'चन्द्रमा' होतो दानी, सुन्दरवक्षस्थल वाला, छोटेपीले नेत्र वाला, तीक्ष्ण स्वभाव, अल्प पुत्र वाला, विशाल कण्ठ मुख वाला; क्षुधा, पिपासा, दन्त तथा उदर रोग से पीडित, शूर वीर, स्थूल अस्थि (हड्डी) वाला, स्त्री से वैर करने वाला, मांस भक्षी, सब प्राणियों में गम्भीर दृष्टिवाला, कोमल बाल वाला, कार्य में बकवास करने वाला, वन तथा पर्वत में प्रीति रखने वाला एवं अपनी माता का वशीभूत होता है।

कन्या राशि गत चन्द्र फलः—

शशिनि युवतियाते लम्बबाहुः कुमारी-
जनक इह सुतोनः क्षान्तिसौभाग्यशाली ।
ललितदशनदेहास्याक्षिकर्णः ससत्यः
परविषयरतः स्त्रीलोलकः शौचयुग् ज्ञः ॥ २९ ॥

कन्या में ' चन्द्रमा ' होतो लम्बी भुजा वाला, कन्या ओं का पिता, पुत्र रहित; सहनशील तथा सौभाग्यशाली; सुन्दर दाँत, शरीर मुख, नेत्र तथा कर्ण वाला, सत्य युक्त, परदेश में वास करने वाला, स्त्रियों में चञ्चल, पवित्रात्मा एवं पण्डित होता है ।

तुला राशि गत चन्द्र फलः—

प्रभूतदारो वृषयुक् च धान्यादानैकबुद्धिर्वृषतुल्यमुष्कः ।
सुभूतियुग् हीनतनुः कृशास्याङ्गः स्त्रीजितो विक्रमवित्प्रजातः ॥ ३० ॥

उन्नासको व्यायतलोचनस्तथा शौचान्वितो बन्धुगणोपकारकृत् ।
भूदेवतानां त्रिदिवाधिवासिनां भक्तस्त्रियामेशि तुलाधरङ्गते ॥ ३१ ॥

तुला में ' चन्द्रमा ' होतो बहुत स्त्री वाला, पुण्यात्मा, अन्नसङ्ग्रह, वाला, बैल के समान अण्डकोश वाला, सुन्दर ऐश्वर्य युक्त, हीनशरीर, दुर्बल मुख तथा शरीर, स्त्रीको जीतने वाला, पराक्रम का ज्ञाता, उंची नासिका वाला विशाल नेत्र वाला, पवित्रात्मा, बन्धुवर्ग का उपकार करने वाला एवं ब्राह्मण तथा देवताओं का भक्त होता है ।

वृश्चिक राशि गत चन्द्र फलः—

लुब्धश्चौरो बाल्यकाले गदार्त्तः कर्म्मोद्युक्तः क्रूरचेष्टः समृद्धः ।
चण्डो दक्षश्चारुनेत्रः प्रमत्तो जातो मर्त्यो बन्धुवर्गैर्विहीनः ॥ ३२ ॥

वृत्तोरुजंघः कठिनः कलेवरोऽन्यदारगामी पृथुमस्तकोदरः ।
भूभृद्धृतार्थश्चिबुकेन दोर्भवैर्हीनोऽलियाते क्षणदाधिनायके ॥ ३३ ॥

वृश्चिक में ' चन्द्रमा ' होतो लोभी चौर, बाल्य काल में रोग से पीडित, कर्म्म करने के लिए उद्यत, क्रूरचेष्टा वाला, समृद्ध शाली, प्रचण्डस्वभाव, चतुर, सुन्दर नेत्र, मस्त, बन्धुवर्ग से हीन, वृत्त के समान ऊरु जंघा वाला काठिण शरीर, परस्त्रीगामी, विशाल मस्तक तथा उदर वाला, राजा के द्वारा धन अपहरण किया जाने वाला, चिबुक (ठोढी) और नखसे दुःखित होता है ।

धनु राशि गत चन्द्र फलः—

दृप्तः शूरः संहतांघ्रिः प्रगल्भो बन्धुस्नेही स्थूलकण्ठोच्चघोणः ।
वक्ता शिल्पी पीनबाहुः कृतज्ञो दीर्घांसः स्याद् दीर्घकण्ठोऽस्थिसारः ॥ ३४ ॥

प्रजातको वृत्तविलोचनः पृथुचेतःकटिर्विस्तृतभूरिवीर्य्यवान् ।
ना गूढगुह्यो वसतिस्तटेऽम्बुनो निशाकरे धन्वनि कुब्जविग्रहः ।। ३५ ।।

धनू राशि में 'चन्द्रमा' होतो दुष्ट, शूरवीर, मिले हुए पैर वाला, धृष्ट बन्धुओं से स्नेह करने वाला, स्थूल कण्ठ, ओष्ठ तथा नासिका वाला, सुन्दर बोलने वाला, शिल्प विद्यावाला, स्थूल बाहु वाला, कृतज्ञ, दीर्घस्कन्ध वाला दीर्घ कण्ठ वाला, अस्थिसारवाला, वृत्ताकार नेत्रवाला, विशाल हृदय कटिवाला, बहुतविस्तृत बल वाला, गुप्त गुह्येन्द्रिय वाला, जल के किनारे वास करने वाला और कुब्ज शरीर वाला होता है ।

मकर राशि गत चन्द्र फलः—

प्रांशुः ख्यातो वृत्तजंघो मनुष्यो गीतज्ञः स्यात्सत्यधर्म्मोपसेवी ।
स्वल्पामर्षो निर्दयश्चारुचक्षुर्मन्दोत्साहो दीर्घकण्ठोऽतिकर्णः ।। ३६ ।।
तुषारभीरुर्गुरुदारसक्तश्चित्तोत्थयुक्तः पृथुमस्तकश्च ।
अतीवलुब्धः सुकविर्विलज्जः क्षामाङ्ग इन्दौ हरिणाननस्थे ।। ३७ ।।

मकर में 'चन्द्रमा' होतो ऊंचा शरीर वाला, प्रसिद्ध, वृत्तजंघावाला, गीत जानने वाला; सत्य तथा धर्म का उपसेवन करने वाला, अल्प क्रोधी, निर्दयी, सुन्दर नेत्र, मन्दोत्साही, दीर्घ कण्ठ, बहुत सुनने वाला, ठंड से डरनेवाला, गुरु पत्नी में आसक्त, कामी, विशाल मस्तक वाला, अत्यन्त लोभी, सुन्दर कवि, लज्जाहीन एवं दुर्बल शरीर वाला होता है ।

कुम्भ राशि गत चन्द्र फलः—

कुलोचनः स्थूलशिराः परात्मजपिता विशालांघ्रिकरस्तथा सताम् ।
द्वेष्यः सदा रूक्षतनुर्बृहत्कटिमुखो दरिद्रो निजधर्म्मवर्ज्जितः ।। ३८ ।।
शाठ्यालसाभ्यामभिभूत एव दुःखेन तप्तः किल मद्यपायी ।
दुःशीलकः शिल्पकलासमेत उद्घोण इन्दौ कलशं प्रयाते ।। ३९ ।।

कुम्भ में 'चन्द्रमा' हो तो निन्दित नेत्र, स्थूलशिर, दत्तपुत्र वाला, विशाल पाद हस्त वाला, सज्जनों का वैरी, रूक्षशरीर, विशाल कटि मुखवाला, दरिद्री, अपने धर्म्म से [illegible] तथा आलस्य से तिरस्कारि दुःख से सन्तप्त, मद्य पीने वाला, दुष्टस्वभाव, शिल्प कला युक्त एवं ऊंची नासिका वाला होता है ।

मीन राशि गत चन्द्र फलः—

भूपालसेवी बहुकामिनीरतो गेयस्य वेत्तोदधियानसक्तकः ।
मनोज्ञदेहो निधिना सुखेन च धनेन युक्तः प्रमदाजितस्तथा ।। ४० ।।
दानी सुधर्म्मी पृथुकः सुशिल्पजाधिकारवान्ना कुशलो जये हिते ।
सौख्यान्वितः शास्त्रविदल्पकोपवान्स्यात्सत्स्वभावो हिमगौ विसारगे ।। ४१ ।।

मीन में 'चन्द्रमा' हो तो राजा का सेवक, बहुत स्त्रि यों में आसक्त, गायन विद्या का ज्ञाता, समुद्री यान (जहाज) में आसक्त, सुन्दर शरीर; निधि, सुख तथा धन से युक्त स्त्री को जीत ने वाला, दाता धर्म्मात्मा विशालशिर वाला, उत्तम शिल्प कला से उत्पन्न अधिकार वाला, जय तथा हित में चतुर, सौख्य से युक्त, शास्त्र जानने वाला अल्प क्रोधी एवं उत्तमस्वभाव वाला होता है।

मेष राशि गत भौम फलः—

तेजस्वी वसुधाधिपः किमु रणश्लाघी प्रचण्डः पुर-
सेनाग्रामगणाधिपो बहुवधूसक्तस्तथा साहसी।
शूरो राभसिकश्च सत्यसहितोऽदभ्राजधान्याविगो-
युक्तो दानरतो नरस्य जनने मेषङ्गते मङ्गले ॥ ४२ ॥

मेष में 'मङ्गल' हो तो तेजस्वी, भूमि का स्वामी, सङ्ग्राम की प्रशंसा वाला, प्रचण्डस्वभाव, पुर, सेना तथा ग्रामों के समूह का स्वामी, बहुत स्त्रि यों में आसक्त, साहसी, शूरवीर, उत्सुकता (वेग वा हर्ष) वाला, सत्य युक्त; बहुत बकरी, अन्न, मेंढा तथा गौ ओं से युक्त एवं दान देने में तत्पर होता है।

वृष राशि गत भौम फलः—

द्वेष्यः प्रोद्धतवेषखेलसहितो ना व्यावृतो बान्धवै-
र्विस्रम्भस्थितिवर्जितो निजकुलोत्सादी च सङ्गीतवित्।
स्यात्साध्वीव्रतभङ्गकृद्द्रवि कुजे मन्दार्यपुत्रो बहु-
लोकानां परिपालको जनुषि चेत्पापः सदा दुष्टवाक् ॥ ४३ ॥

वृष में 'मङ्गल' हो तो वैर करने योग्य, उग्र वेष तथा खेल युक्त, बन्धु जनों से घिरा हुआ, विश्वास तथ स्थिति रहित, अपने कुल से पृथक् हुआ, सङ्गीत शास्त्र का ज्ञाता, पतिव्रता स्त्रि यों के पति व्रत धर्म को नष्ट करने वाला; अल्प धन तथा अल्प पुत्र वाला, बहुत लोगों का पालने वाला, पापी एवं दुष्टवचन बोलने वाला, होता है

मिथुन राशि गत भौम फलः—

बहुश्रुतः काव्यविधिप्रवीणो धर्म्मेण युक्तः प्रचुरक्रियासु।
रतस्तथा क्लेशसहिष्णुरेष हितानुकूलः सुहृदां सुतेषु ॥ ४४ ॥
प्रवीणबुद्धिर्बहुशो विदेशगमे रतः कान्ततनुः प्रजातः।
वक्रे विपञ्चीभगते स नाना शिल्पासु विद्यासु नर प्रवीणः ॥ ४५ ॥

मिथुन में 'मङ्गल' हो तो चतुर, काव्य कला में निपुण, धर्म से युक्त, बहुत क्रियाओं में तत्पर, क्लेश सहनशील, मित्रों के पुत्रों में हितानुकूल बहुत निपुण बुद्धि वाला, विदेश की यात्रा में लीन, मनोहर शरीर एवं अल्प कला ओं में चतुर होता है।

कर्क राशि गत भौम फलः—

वैकल्यामयपीडितः कृषिधनो बाल्ये च राड्भोजन-
वस्त्रेप्सुः सलिलाशयाद् द्रविणवान् दीनस्तथा सर्वतः।

वृद्धिः स्यात्स पुनः पुनः परगृहान्नाशी परागारक-
वासी वेदनिकार्दितो मृदुरिलादेहोद्भवे कर्कटे ॥ ४६ ॥

कर्क में 'मङ्गल' हो तो वैकल्य रोग से पीडित, कृषिधन वाला' बाल्य काल में राजभोजन वस्त्र की इच्छा वाला, जलाशय से धनवान्, सब प्रकार से दरिद्र, पुनः पुनः वृद्धि वाला, पराये घर के अन्न का भोजन करने वाला, पर घर में रहने वाला, वेदना से पीडित एवं मृदु शरीर वाला होता है।

सिंह राशि गत भौम फलः—

क्रियोद्यतो धर्म्मफलेन हीनो विनन्दनो व्यालमृगाहिहन्ता।
प्रचण्डशूरस्त्वसहः परस्वशरीरभूसङ्ग्रहणस्वभावः ॥ ४७ ॥

जातो वपुष्मानटवीनिवासशीलः सुसत्त्वो मृतपूर्वदारः।
मांसे रुचिः स्यादिह गोकुलस्य महीतनूजे मृगराजयाते ॥ ४८ ॥

सिंह में 'मङ्गल' हो तो क्रियाओं के करने में उद्यत, धर्मफल से रहित, पुत्र हीन; व्याल, मृग तथा सर्पों को मारने वाला, प्रचण्डस्वभाव, शूर वीर, सहन न करने वाला, पराया धन तथा पुत्र का संग्रह करने वाला, वनवास में प्रीति रखने वाला, अति पराक्रमी, प्रथम स्त्री से रहित एवं गोमांस में रुचि रखने वाला होता है।

कन्या राशि गत भौम फलः—

प्रणीतपार्श्वो विविधव्ययोऽल्पशौर्य्यः सुधीः स्नानविलेपनेप्सुः।
मृदुप्रियाभाषिक एव कान्तः स्वदभ्रशिल्पो रतिगीतवित्तः ॥ ४९ ॥

भवेत्स वेदस्मृतिधर्म्मयुक्तो भृशं विपक्षार्जनभीरुरत्र।
सतां प्रपूज्यो मनुजोऽतिवित्तः पाथोनराशौ पृथिवीतनूजे ॥ ५० ॥

कन्या में 'मङ्गल' हो तो रचित पार्श्व वाला, अनेक प्रकार के व्यय वाला, अल्प पराक्रमी, पण्डित, स्नान तथा लेपन की इच्छा वाला, कोमल स्त्री तथा कोमल भाषण वाला, मनोहर देह, बहुत सुन्दर शिल्प वाला, प्रेम गीत धन वाला, वेद स्मृति कथित धर्म्म से युक्त, नित्य शत्रुजन के संग्रह से भयभीत होने वाला, सज्जनों का मान्य एवं अतीव धनवान् होता है।

तुला राशि गत भौम फलः—

विकत्थनः स्वल्पजनः सुपुण्यप्रसक्तवाक्यः सुभगो रणेप्सुः।
परोपभोगी परिहीनगात्रो मार्गे रतो मित्रवधूगुरूणाम् ॥ ५१ ॥

मनोरमः स्यान्मृतपूर्वभार्यो वेश्यासमीपे किमु शौण्डिकानाम्।
आसन्नके लब्धधनक्षयः स्याद्वक्राभिधाने वणिजं प्रयाते ॥ ५२ ॥

तुला में 'मङ्गल' हो तो अपनी बड़ाई करने वाला, अल्पपरिजन वाला, अतिपुण्यासक्त वचन वाला, ऐश्वर्य्य वाला, संग्राम की इच्छा वाला, पराया उपभोग वाला, हीन देह, मार्ग में तत्पर; मित्र, स्त्री तथा गुरुजनों

के मध्य में मनोहर, प्रथम स्त्री से रहित; वेश्या तथा शौण्डिकों (कलालों) के समीप वास करने से नष्ट धन वाला होता है।

वृश्चिक राशि गत भौम फलः—

व्यापारश्रुतिसत्यकोऽनलविषैः शस्त्रव्रणैस्तप्तको
जातो वैरशठः क्रियासु निपुणो युद्धोत्सुकः सूचकः।
मर्त्यो बह्वपराधयुक् क्षितिसुतस्त्रीणां प्रभुर्मोषक-
संघेड् द्रोहवधाहिताख्यधिषणः पापो नवार्चिष्यलौ ॥ ५३ ॥

वृश्चिक में 'मङ्गल' हो तो व्यापारी, वेदवेत्ता तथा सत्ययुक्त एवं अग्नि, विष, शस्त्र तथा व्रणों से सन्तप्त शरीर वाला, वैर करने वाला, कुटिल हृदय वाला, क्रियाओं में निपुण, संग्राम के लिए उत्सुक, चुगलखोर, बहुत अपराध से युक्त; भूमि, पुत्र तथा स्त्रियों का स्वामी, चौरों के समूह का स्वामी; द्रोह, वध और अहित बुद्धि वाला एवं पापी होता है।

धनू राशि गत भौम फलः—

श्रमैर्विशालैः सुखितः परस्परं क्रोधेन नष्टार्थसुखः पुमान्भवेत्।
शठः कृशाङ्गो बहुभिः क्षतैः पराधीनः प्रजातोऽत्र गुरुष्वसक्तकः ॥ ५४ ॥
शताङ्गमातङ्गपदातियोधी सैन्ये परेषां शरधारकोऽयम्।
तथा शताङ्गेन कठोरवाक् च शरासनस्थे वसुधात्मजाते ॥ ५५ ॥

धनू में 'मङ्गल' हो तो विशाल परिश्रम से सुखी, क्रोध से परस्पर नष्टधन सुख वाला, कुटिल हृदय, बहुत क्षतों से कृशशरीर, पराधीन, गुरुजनों में श्रद्धा न रखने वाला; रथ, हाथी तथा पदातियों से युद्ध वाला, शत्रुसेना में रथ से बाण धारण करने वाला एवं कठोर वचन वाला होता है।

मकर राशि गत भौम फलः—

सेनेशः किमु भूपतिः सुविदितः सुस्थश्च धन्यो धना-
हर्ता श्रेष्ठमतिः स्वबन्धुविषये स्वतंत्रः कुजे।
स्वोच्चस्थे बहुलोपचारनिरतो ह्यारक्षकः शीलवान्
जन्तुर्भोगसुखान्वितोऽत्र सपदि प्रत्याहवे स्याज्जयी ॥ ५६ ॥

मकर में 'मङ्गल' होतो सेनाका स्वामी वा भूमिका स्वामी, प्रख्यात, नीरोग, भाग्यवान्, धन का हरण करने वाला, श्रेष्ठ बुद्धि, अपने बन्धुजनों के विषय में रहने वाला और स्वतंत्र प्रकृति वाला होता है। यदि 'भौम' परमोच्च (२८ अंश के अन्तर्गत) में होतो बहुत उपचार में तत्पर, रक्षा करने वाला, शीलवान्; भोग तथा सुख से युक्त एवं संग्राम भूमि में प्रत्याक्रमण करने में शीघ्र विजयी होता है।

कुम्भ राशि गत भौम फलः—

पाने रुचिः प्रश्रयशौचवर्जितः कुवेषधारी विकृतश्च दुर्भगः।
हृतार्थको द्यूतमुखैः सरोमशगात्रः प्रजातो मरणे सुदुर्गतिः ॥ ५७ ॥

मात्सर्य्यतो वाऽनृततस्त्वसूयया वाग्दोषतो वाऽपहृतार्थको भवेत् ।
समाहृताजीवक एष दुःखतो जरत्समाङ्गः कलशस्थितेऽसृजि ॥ ५८ ॥

कुम्भ में 'मङ्गल' होतो पेय पदार्थों में रुचि रखने वाला, प्रेम तथा पवित्रता से हीन, कुत्सित वेष वाला, रोगी, अभागा द्यूतादि से नष्टधन वाला, रोम युक्त शरीर वाला, मरण में अतिदुर्गति वाला; ईर्षा, निन्दा तथा वागदोष से नष्ट धन वाला, संगृहीत धन से आर्जीविका वाला एवं दुःखसे वृद्ध के समान शरीर वाला होता है,

मीन राशि गत भौम फलः—

हीनोऽनिशं मन्दसुतो विषादी गुरुद्विजावज्ञक एष जिह्मः ।
सुतीक्ष्णशोको विदितः प्रजातः स्तुतिप्रियश्चेप्सितविच्छरीरी ॥ ५९ ॥
मायादिभिर्वञ्चनदोषतो हृतसर्वस्वको बन्धुजनाभिभूतकः ।
प्रवासशीलो गदपूर्वपीडितो विश्वम्भरानन्दन इत्थसिङ्गते ॥ ६० ॥

मीन में मङ्गल होतो हीनदेह, अल्पपुत्र वाला, खेदवाला, गुरु तथा ब्राह्मणों की अवज्ञा करने वाला, कुटिल-स्वभाव वाला, अति शोक वाला, प्रसिद्ध, प्रशंसाप्रिय, ईप्सितवेत्ता, मायादि तथा वञ्चन दोष दे नष्ट सर्वस्व, बन्धु-जनों से तिरस्कृत, प्रवासशील एव रोगादि से पीडित होता है ।

मेष राशि गत बुध फलः—

बहुश्रमोत्पन्नविनष्टवित्तश्चलास्थिरः कूटकरः कृशाङ्गः ।
न सत्यवाग् बव्हृणबन्धभागी सङ्गीतनृत्ताभिरतो लिपिज्ञः ॥ ६१ ॥
रतिप्रियः स्याद्विटधूर्त्तचेष्ट आचार्य्य एष प्रियविग्रहश्च ।
वेत्ताऽक्षदेवी बहुभक्षको ना मेषोपयाते द्विजराजपुत्रे ॥ ६२ ॥

मेष में 'बुध' हो तो बहुत परिश्रम से उत्पन्न किये हुए धनको नष्ट करने वाला, चलस्थिर स्वभाव, कपट रचने वाला, दुर्बल शरीर, असत्य वक्ता, बहुत ऋण तथा बन्धन वाला, सङ्गीत तथा नृत्य में तत्पर, लेखक, प्रीति को प्रिय मानने वाला, व्यभिचारी, धूर्त चेष्टा वाला, आचार्य, कलह प्रिय, ज्ञाता, जूवा खेलने वाला, एवं बहुत खाना खाने वाला होता है ।

वृष राशि गत बुध फलः—

दक्षः प्रगल्भो विदितो वदान्यो व्यायाममाल्याम्बरभूषणैश्च ।
समन्वितोऽगप्रकृतिश्च वेदशास्त्रार्थवेत्ता प्रगृहीतवाक्यः ॥ ६३ ॥
रतौ प्रलोलः स तु हृद्यवल्गुकथस्तथा स्फीतधनोऽङ्गनाढ्यः ।
भवेन्नरो गायनहास्यशीलो गोभङ्गते गौरमरीचिपुत्रे ॥ ६४ ॥

वृष में 'बुध' हो तो चतुर, प्रतिभाशाली, विख्यात, अतिदानी, व्यायाम (कसरत), पुष्प, वस्त्र और भूषण से युक्त, स्थिर प्रकृति, वेदशास्त्रार्थवेत्ता, वचनग्रहण करने वाला, प्रसङ्ग में चञ्चल, प्रिय मनोहर बोलने वाला, बढ़े हुए धन वाला, स्त्री युक्त; गायन तथा हास्यस्वभाव वाला होता है।

मिथुन राशि गत बुध फलः—

प्रियः स्वतंत्रः सुखवर्जितः प्रियभाषी कविर्मानयुतो विकत्थनः।
प्रख्यातवित्तः स मनोज्ञवेषको द्विस्त्रीसुतो दानरतश्च कर्म्मठः॥ ६५॥

प्रभूतमित्रात्मभवो विवादयुक् कलाप्रवीणः श्रुतिकल्पकस्तथा।
जन्मी भवेत्स्वल्परतिर्यदुद्भवे वीणाधरस्थे यदि रोहिणीभवे॥ ६६॥

मिथुन में 'बुध' हो तो स्वतंत्रताप्रिय, सुखरहित, प्रिय भाषी, कवि, मानी, अपनी बड़ाई करने वाला, प्रसिद्ध धनी, उत्तम वेष, द्वितीय स्त्री से पुत्र वाला, दान में तत्पर, कर्म्म शूर, बहुत मित्र पुत्र वाला, विवादी, कलाओं में निपुण, अल्प वेद जानने वाला एवं अल्प प्रसङ्ग वाला होता है।

कर्क राशि गत बुध फलः—

स्त्रीवैरतो नष्टधनः स्ववंशकीर्त्या प्रसिद्धो बहुलप्रलापी।
स्वबन्धुविद्वेषविवादसक्तः प्राज्ञश्चलः कुत्सितशीलयुक्तः॥ ६७॥

बहुक्रियायां निरतो विदेशरतो नरो गायनसक्तचित्तः।
समुद्भवः स्यात्सुकविस्तरुण्यां रतिः कुलीराश्रित इन्दुपुत्रे॥ ६८॥

कर्क में 'बुध' हो तो स्त्री के वैर से नष्ट धनवाला, अपने वंश की कीर्ति से प्रसिद्ध, बहुत बकवास करने वाला, अपने बन्धुजनों के वैर तथा विचार में आसक्त, विद्वान्, चञ्चल प्रकृति, निन्दित स्वभाव, बहुत क्रिया में लीन, विदेश वासी, गायन में आसक्त हृदय वाला, सुन्दर कवि और स्त्री में आसक्त होता है।

सिंह राशि गत बुध फलः—

अल्पस्मृतिर्ज्ञानकलाविहीनो न सत्यवाक्योऽत्र जघन्यकर्म्मा।
सोदर्य्यहन्ता भवति स्वतंत्रो लोकप्रसिद्धो जनने स यस्य॥ ६९॥

स्त्रीदुर्भगः सत्त्वविवर्जितश्च जनाभिरामः स्वकुले विरुद्धः।
प्रेष्यो जनुष्मान् द्रविणैरुपेतः कलेशपुत्रे करिवैरिभस्थे॥ ७०॥

सिंह में 'बुध' हो तो अल्पस्मृतिवाला, ज्ञान तथा कलाओं से रहित, असत्यवचन बोलने वाला, नीच कर्म करने वाला, भाइयों को मारने वाला, स्वतंत्र प्रकृति, लोगों में विख्यात, स्त्री का अभागा, बलहीन, लोगों में आनन्द दायक, अपने कुल से विरुद्ध, दास एवं धनवान् होता है।

कन्या राशि गत बुध फलः—

गुणैरुदारो विदितो बलिष्ठः सुहृत्प्रपूज्यश्चतुरोऽतिगर्गर्मी।
विज्ञानशिल्पाभिरतश्च लेख्यकाव्यप्रवेत्ता सुकृतप्रियश्च॥ ७१॥

ज्येष्ठः स नाना विनयोपचारवादे रतोना मधुराङ्गनासु ।
स्यात्स्वल्पवीर्य्यो यदि जन्मदिष्टे पञ्चार्चिषि स्त्रीभमिते नरस्य ॥ ७२ ॥

कन्या में 'बुध' हो तो गुणों से उदार, विख्यात, अति बली, मित्रों से सम्मानित, चतुर, शास्त्रानुसार अत्यन्त बोलने वाला; विज्ञान तथा शिल्पकलाओं में तत्पर; चित्रकला तथा काव्य जानने वाला, पुण्यात्मा, वृद्ध स्वभाव; अनेक प्रकार के विनय, उपचार तथा विवाद में लीन एवं कोमल स्त्रियों में अल्पवीर्य्य वाला होता है ।

तुला राशि गत बुध फलः—

सुसम्मतो निर्जर वृन्दभक्तो भक्तोऽतिथीनां गुरुभूसुराणाम् ।
अनेकदिक्पण्यरतिः शरीरी विवादशिल्पाभिरतः शठश्च ॥ ७३ ॥

वाणीप्रदक्षः कृतकोपचारदक्षस्त्वरारुट्परितोषकोऽयम् ।
अथार्थमिष्टव्ययकृच्चलश्चेज्जूकङ्गते जन्मनि रौहिणेये ॥ ७४ ॥

तुला में 'बुध' हो तो अतीव अनुमत वाला, देवतागण, अतिथि, गुरु और ब्राह्मणों का भक्त, अनेक दिशाओं के व्यापार में प्रेम रखने वाला, विवाद तथा शिल्प में तत्पर; कुटिल हृदय वाला; वाणी में चतुर; बनावटी उपचार मे निपुण, शीघ्र क्रोधी और सन्तुष्ट होने वाला, धनी, इष्ट व्यय करने वाला और चञ्चल स्वभाव वाला होता है ।

वृश्चिक राशि गत बुध फलः—

शोकश्रमानर्थपरोऽतिधर्म्मलज्जश्च नीचानुरुचिर्निरुद्धः ।
विद्विष्टकर्म्मास्विह दुष्टकान्ताजनान्वितो द्वेष्यक उद्धवी च ॥ ७५ ॥

तथर्णवान्स्याच्छलकत्प्रजातकः पारुष्यदण्डाभिरतोऽन्यवस्तुनः ।
आदानवान्बालिश एष लुब्धको यदैकदेहे भ्रमरं समाश्रिते ॥ ७६ ॥

वृश्चिक में 'बुध' हो तो शोक तथा परिश्रम के कारण अनर्थ में तत्पर, अतीव धर्म्मात्मा तथा लज्जावान्, नीचजनों में प्रीति रखने वाला, शत्रुकर्म्मों में बन्धा हुआ, दुष्ट स्त्री से युक्त, वैर करने योग्य, ऋणग्रस्त, छल करने वाला, कठोर दण्ड में निरत, अन्य की वस्तु का ग्रहण करने वाला, मूर्ख एवं लोभी होता है ।

धनु राशि गत बुध फलः—

मेधावी लिपिलेख्यदानकुशलो दाता व्रती वाक्पटुः
स्याच्छास्त्रश्रुतिशौर्य्यशीलसहितो वंशप्रधानस्तथा ।
मंत्री वाथ पुरोहितः सपुरुषो यस्योद्भवे देहिनो
यज्ञाध्यापनपूर्वकार्य्यनिरतः शान्ते तुरङ्गाङ्गगे ॥ ७७ ॥

धनु में 'बुध' हो तो धारणा बुद्धि वाला; लेखन कर्म, चित्रकला तथा दान कार्य में चतुर, दाता, व्रतवाला, चतुर वक्ता; शास्त्र, वेद पराक्रम तथा शील स्वभाव से युक्त, अपने वंश में श्रेष्ठ, राजमंत्री अथवा राजपुरोहित, सुन्दर पुरुष, यज्ञ तथा अध्यापन प्रभृति कार्य में तत्पर होता है ।

मकर राशि गत बुध फलः--

असत्यचेष्टः पिशुनश्च नाना व्यथापरीतः परकर्म्मकारी।
सगोत्रमुक्तो मलिनश्च दिष्टोऽत्यसंस्थितात्मा मनुसम्भवः स्यात् ॥ ७८ ॥

नीचो नपुंसो जनने कुलादिगुणोज्झितः सश्चलितः स भीत्या।
प्रजातकः स्वप्नविहारशीलः कुम्भीरगे चान्द्रमसायने चेत् ॥ ७९ ॥

मकर में 'बुध' हो तो असत्य चेष्टावाला, दुर्जन, अनेक प्रकार की पीडाओं से व्याप्त, पर कर्म करनेवाला, बन्धुजनों से हीन, मलिन शरीर, उपदेश प्राप्त, अतीव अस्थिर आत्मा वाला, नीचजन, नपुंसक, कुलादि गुणों से हीन, भय से सञ्चलित एवं शयन तथा विहार शील होता है।

कुम्भ राशि गत बुध फलः—

शीलेन हीनो न शुचिः प्रकीर्णधर्म्मार्थमुक्तो विहितार्थयुक्तः।
त्यक्तोऽरिभोगैस्त्वतिदुष्टदारो वाचो धियः कर्म्मरतस्तनूभृत् ॥ ८० ॥

अरातिलोकैः परिभूत एष क्लीबोऽतिभीरुर्मलिनो विधेयः।
अज्ञो विवाक् स्यादतिदुर्भगश्चातिदीर्घसञ्ज्ञे कलशाभिधस्थे ॥ ८१ ॥

कुम्भ में 'बुध' होतो उत्तम चारित्र से रहित, अपवित्र, मिश्रित धर्म तथा अर्थ से रहित, उचित अर्थ से युक्त, शत्रु तथा भोगों से हीन; अतीव दुष्ट स्त्रीवाला, वाणी तथा बुद्धि से कर्म्म में तत्पर, शत्रुओं से अपमानित नपुंसक, अतीव भीरु, मलिन, विधेय (वचन ग्रहण करनेवाला), मूर्ख, वाणीरहित एवं अत्यन्त मन्दभागी होता है।

मीन राशि गत बुध फलः--

सन्तानहीनो विधनश्च सूचीकर्म्मप्रवीणः परधर्म्मसक्तः।
दीनश्च देशान्तरगः प्रकीर्ण आचारवाञ्छौचरतो मनुष्यः ॥ ८२ ॥

विज्ञानहीनः परवित्तसञ्चयदक्षः सुदारः सुभगः सतां तथा।
स जायते वेदकलाविवर्ज्जितो विसारयाते कृतिसाधुरेन्दवे ॥ ८३ ॥

मीन में 'बुध' होतो सन्तान हीन, निर्धन, सूचीकर्म में निपुण, पराये धर्म्म में आसक्त, दरिद्री, परदेश वास करने वाला, मिश्रित स्वभाव, आचार वाला, पवित्रता युक्त, विज्ञान रहित, पराये धन के सञ्चय करने में चतुर, उत्तम स्त्री वाला, सज्जनों के मध्य में ऐश्वर्य्य शाली, वेद तथा कलाओं से हीन एवं शोभन कर्म्म वाला होता है।

मेष राशि गत गुरु फलः--

विख्यातकर्म्मा बहुलाभिघाती नौजोयुतो वादिगुणैः प्रपूर्णः।
बहुव्ययार्थः क्षमालक्षणाङ्गश्चण्डोग्रदण्डाधिपतिः प्रगल्भः ॥ ८४ ॥

प्रयत्नरत्नाभरणैः समेतः सत्त्वेन वित्तेन बलेन युक्तः।
तथा कुमारेण जनौ स यस्य छागाचिते निर्जरनायकार्च्ये ॥ ८५ ॥

मेष में 'गुरु, हो तो विख्यात कर्म्म करने वाला, बहुत शत्रु वाला, ओजस्वी, वादी के गुणों से पूर्ण, बहुत धन व्यय वाला, घाव के चिन्ह से युक्त शरीर, प्रचण्ड स्वभाव, उग्र दण्ड का अधिकारी; प्रतिभाशाली; प्रयत्न, रत्न, आभूषण, सत्त्वगुण, धन, बल, तथा पुत्रों से युक्त होता है।

वृष राशि गत गुरु फलः—

स्याद्भक्तिमान् गोसुरभूसुराणां कान्तः सुवेषः सुभगश्च पीनः।
विशालदेहो कृषिगोधनाढ्यः संविद्गुणः स्वीयकलत्रसक्तः॥ ८६॥
भिषग् विनीतो जनितो नयज्ञः प्रयोगसम्प्राप्तककौशलश्च।
विशिष्टवाणीशुभवस्तुभूषायुतो गुरौ ताबुरिराशियाते॥ ८७॥

वृष में 'गुरु' होतो गौ, देवता तथा ब्राह्मणों की भक्तिवाला, मनोहर शरीर, सुन्दर वेष, ऐश्वर्यवान्, स्थूल तथा विशाल शरीर, कृषि और गोधन से युक्त, बुद्धि गुण वाला, अपनी स्त्री में आसक्त, वैद्य, नम्र, नीति जानने वाला, प्रयोग से कुशलता की प्राप्ति वाला एवं उत्तम वाणी वाला होता है।

मिथुन राशि गत गुरु फलः—

वाग्मी सुमेधः सुविलोचनश्च दाक्षिण्ययुक्तः सहितो वृषेण।
सदाऽऽहितार्थो जनितस्य यस्य भवे स विज्ञानविशारदश्च॥ ८८॥
तथैव मान्यो गुरुबान्धवानां क्रियारतिः सत्कविरेष विज्ञः।
मङ्गल्यतो मण्डनतः प्रलब्धवराख्यशब्दो नृयुजीन्द्रवन्द्ये॥ ८९॥

मिथुन में 'गुरु' हो तो सुन्दर बोलने वाला, सुन्दर बुद्धिमान्, सुन्दर नेत्र, उदारता युक्त, तथा धर्म्म युक्त, आहित धन (अमानत रखने) वाला, विज्ञान शास्त्र का पण्डित, गुरु तथा बान्धवों का मान्य, क्रियाओं में प्रीति रखने वाला, उत्तम कवि, चतुर एवं मङ्गल कार्य से अथवा मण्डण (सजावट) से श्रेष्ठता प्राप्त करने वाला होता है।

कर्क राशि गत गुरु फलः—

प्राज्ञो धनेशः सुषमस्वभावः सुरूपदेहो यशसा समेतः।
प्रभूतधान्याकरयुग् विपश्चित्पुण्यप्रयुक्तः सुविशालसत्त्वः॥ ९०॥
स्थिरात्मजः सत्यसमाधियुक्तो विशिष्टकर्म्मा विदितो नरेशः।
सदैव मित्रानुरतो जनैश्च स्यात्सत्कृतः कर्किणि निर्जरेज्ये॥ ९१॥

कर्क में 'गुरु' होतो बुद्धिमान्, धनवान्, उत्तम स्वभाव, सुन्दर रूप शरीर, यशस्वी, बहुत अन्नवाला, पण्डित, पुण्यात्मा, अतिविशाल बलवाला, स्थिर पुत्र वाला, सत्य तथा समाधि से युक्त, उत्तम कर्म्म करने वाला, प्रसिद्ध, राजा, मित्रजनों में लीन एवं लोगों से सत्कार पाने वाला होता है।

सिंह राशि गत गुरु फलः—

आस्थानलक्ष्यो दृढवैरसत्त्वधीरस्तथाऽऽढ्यो मनुजाधिनाथः।
सम्पूर्णरोषोद्धृतवैरिपक्षो हिते प्रभूतप्रियतासमेतः॥ ९२॥

सर्वसहानायकपौरुषो जनः कृतीह शिष्टाभिजनो वने गिरौ ।
दुर्गे दृढव्यस्तकलेवरो भवेत्प्राक्फाल्गुनेये द्विरदारिसङ्गते ॥ ९३ ॥

सिंह में 'गुरु' होतो सभा लक्ष्य वाला, विशाल वैर, पराक्रम तथा धैर्य वाला, धनवान्, राजा, समस्त क्रोध से शत्रु पक्ष का नाश करने वाला, मित्रजनों में बहुत प्रियता से युक्त, राजा के समान पुरुषार्थवाला, पण्डित प्रतिष्ठित परिवार वाला; वन, पर्वत तथा दुर्ग में दृढ तथा व्यस्त शरीर वाला होता है ।

कन्या राशि गत गुरु फलः—

मेधाविनं धर्म्मपरं क्रियापटुं कृत्येषु ज्ञातं सुविनिश्चितार्थकम् ।
विशुद्धशीलं निपुणं प्रियाम्बरप्रसूनगन्धं जनयेच्छरीरिणम् ॥ ९४ ॥

चित्राक्षरज्ञं धनिनं समृद्धकं शास्त्रार्थशिल्पादिभिरर्थसंयुतम् ।
दातारमिन्द्रस्य पुरोहितो यदा सुधर्म्मवन्तं तरुणीभमाश्रितः ॥ ९५ ॥

कन्या में 'गुरु' होतो धारणाबुद्धि वाल, धर्म्मपरायण, क्रियाओं में चतुर, कार्यों में अतीव निश्चित अर्थ, वाले, निर्मल स्वभाव, चतुर; वस्त्र पुष्प तथा सुगन्ध को प्रिय मानने वाले, विचित्र अक्षरों के जानने वाले, धनी-बहुत सम्पत्ति वाले, शास्त्रार्थ तथा शिल्पादि से धन युक्त, दानी एवं अत्यन्त धर्मात्मा पुरुष को उत्पन्न करता है ।

तुला राशि गत गुरु फलः—

भाषाप्रियं भूरिसुतैः समेतं देवातिथीज्यानिरतं च कान्तम् ।
महत्तरं नैगमवाणिजानां श्रुताभिसक्तं सुधियं करोति ॥ ९६ ॥

मेधाप्रयुक्तं प्रचुरार्थवन्तं विदेशचर्य्यागतमत्र जातम् ।
मर्त्यं विनीतं नटनर्त्तकाद्यैर्गृहीतवित्तं घटगोऽङ्गिरोजः ॥ ९७ ॥

तुला में 'गुरु' हो तो प्रिय वाणी वाले, बहुत पुत्रों वाले, देवता तथा अतिथियों को पूजने वाले, मनोहर शरीर, वैश्य व्यापारियों के मध्य में अतीव श्रेष्ठ, शास्त्र में निरत, पण्डित, धारणावती बुद्धि युक्त, बहुत धनी, विदेशवास करने वाले, नम्र; नट तथा नर्त्तकों से धन व्यय वाला होता है ।

वृश्चिक राशि गत गुरु फलः—

प्रसक्तदोषो बहुभाष्यकारको रोगार्दितः स्वल्पशरीरसम्भवः ।
श्रमप्रभूतोऽदितिसूनुसद्मनः पुरस्य कर्त्ता सदद्भ्रदारयुक् ॥ ९८ ॥

जुगुप्सिताचाररतः प्रवीणो दम्भेन धर्म्मे निरतः प्रदक्षः ।
शास्त्रेष्वदभ्रेषु मनुष्यनाथो भृङ्गप्रयातेऽमरपार्चिताङ्घ्रौ ॥ ९९ ॥

वृश्चिक में 'गुरु' हो तो दोषों में आसक्त, बहुत कठिन स्थलों का सरलार्थ करने वाला, रोग से पीडित, अल्प पुत्रवान्, अधिक परिश्रम वाला, देवालय तथा पुर का बनाने वला, बहुत उत्तम स्त्रियों से युक्त, निन्दित आचार में तत्पर, निपुन, कपट से धर्म में तत्पर, बहुत शास्त्रों में चतुर एवं मनुष्यों का स्वामी होता है ।

धनू राशि गत गुरु-फल:—

विविक्ततीर्थायतनोपलब्धिः सुहृत्स्वपक्षः स्थिरवित्तयुक्तः।
आचार्य्य एष व्रतदानदीक्षादीनां तथा माण्डलिकश्च मंत्री ॥ १०० ॥

प्रियोपकारो मनुजः श्रुताभिरतो वदान्यो हर्य्युपवर्त्तनानाम् ।
नाना निवासी जनितस्तदानीमिष्वासगे शक्रसुवस्तिके चेत् ॥ १०१ ॥

धनु में 'गुरु' हो तो पवित्र तीर्थ तथा मन्दिर में निवास करने वाली बुद्धि वाला, अपने पक्षवालों का मित्र, स्थिर धन से युक्त; व्रत, दान तथा दीक्षा प्रभृतियों का आचार्य, माण्डालिक, मंत्री, उपकार करने वाला, शास्त्र में तत्पर, अतिदानी एवं अनेक देशों में वास करने वाला होता है।

मकर राशि गत गुरु-फल:—

दुरन्तनिःस्वोऽल्पबलश्च नानाचारो विषादी परकिङ्करोऽज्ञः ।
प्रवासशीलो बहुलश्रमाढ्यस्त्रस्तस्तथाऽऽदीनवधारकः स्यात् ॥ १०२ ॥
सगोत्रवात्सल्यदयास्वधर्म्ममङ्गल्यशौचैः प्रभवो विहीनः ।
अमांसकायः पुरुषो विधेयः पुरन्दरेज्येऽजिनयोनिभस्थे ॥ १०३ ॥

मकर में 'गुरु' हो तो कष्टमय अन्त वाला, निर्धन, अल्पबली, अनेक आचार वाला, खेद करने वाला, पराया दास, मूर्ख, परदेशवासी, बहुत परिश्रम करने वाला, डरने वाला, क्लेश युक्त; बन्धुवात्सल्य, दया, धर्म्म, मङ्गलकार्य और पावित्रता से रहित, दुर्बल शरीर एवं विधेय (वचन ग्रहण करने वाला) होता है।

कुम्भ राशि गत गुरु-फल:—

गणस्य मुख्यः सुतरां निहीनरतो नृशंसो जनितश्च लुब्धः।
स्ववाक्यदोषेण विनाशितार्थो न साधुशीलः पिशुनो मनुष्यः ॥ १०४ ॥

कुशिल्पतोयाश्रमकेषुकर्म्मरतो गदार्त्तो गुरुदारगामी।
गुणैर्मनीषादिभिरुज्झितः स्याद्धेतोगदे चित्राशिखण्डिसूनौ ॥ १०५ ॥

कुम्भ में 'गुरु' हो तो संघ का प्रधान, नीचजनों में अत्यन्त लीन, क्रूरस्वभाव, लोभी, अपने वचन के दोष से नष्टधन वाला, दुःशील, दुर्जन, निन्दितशिल्प, जलाशय के कर्म्म में तत्पर, रोग से पीडित, गुरु स्त्री गमन करने वाला, गुण तथा बुद्ध्यादि से रहित होता है।

मीन राशि गत गुरु फल:—

नरेशनेता सुहृदां सतां च पूज्यः प्रसिद्धः सधनस्त्वधृष्यः ।
वेदार्थविच्छास्त्रविदह्यहीनदर्पोऽस्थिरारम्भ इहाङ्गधारी ॥ १०६ ॥

सुनीतिशिक्षाव्यवहारयुद्धप्रयोगनेता मनुजाधिपस्य ।
प्रशान्तचेष्टोऽस्थिरसत्त्वयुक्तः श्लाघ्योऽण्डजस्थे सुमनोनमस्ये ॥ १०७ ॥

मीन में 'गुरु' हो तो राजाओं का नेता, मित्र तथा सज्जनों का मान्य, विख्यात, धनी, धृष्टता रहित, वेद तथा शास्त्र का ज्ञाता; नीच, अभिमानी, स्थिर आरम्भवाला; राजा की नीति, शिक्षा, व्यवहार, युद्ध और प्रयोग का ज्ञाता, शान्त चेष्टावाला, चञ्चल पराक्रम से युक्त एवं प्रशंसनीय होता है।

मेष राशि गत शुक्र फलः—

विरोधशीलः परदारचोरश्चमूपुरश्रेणिसमूहनाथः।
विश्वासहीनश्च कठोरचोरः क्षुद्रः प्रगल्भो बहुदोषयुक्तः ॥ १०८ ॥

वनाद्रिचारी गणिकारतस्तथा सुवासिनीकारणतश्च बन्धनम्।
प्राप्तः प्रजातस्य शरीरिणो जनौ स नैशिकान्धः सुकवौ क्रियास्थिते ॥ १०९ ॥

मेष में 'शुक्र' हो तो वैर करने वाला स्वभाव, पराई स्त्री को चोरने वाला, सेना तथा पुरपंक्तियों के समूह का स्वामी, विश्वास रहित, कठोर हृदय वाला, चोर, कृपण, धृष्ट, बहुत दोषों से युक्त, वन तथा पर्वत में भ्रमण करने वाला, वेश्यागामी, स्त्री के कारण से बन्धन को प्राप्त होने वाला एवं निशांध (रतौंधा) होता है।

वृष राशि गत शुक्र फलः—

दाता सुमूर्तिर्निजबन्धुभर्त्ता गुणैः प्रधानश्च परोपकारी।
बहुप्रदो गोकुलजीविकः स्यादनेकविद्यो बहुरत्नयुक्तः ॥ ११० ॥

अदभ्रकान्तासहितश्च सत्त्वहितप्रकर्त्ताऽशुकगन्धयुक्तः।
कृषीवलो माल्ययुतस्तथाऽऽढ्यो यदा बलीवर्दगते बलीज्ये ॥ १११ ॥

वृष में 'शुक्र' होतो दाता, सुन्दरशरीर, अपने बन्धुजनों का पालक, गुणों से प्रधान, पराया उपकार करने वाला, बहुत देने वाला, गौओं से जीविका वाला, अनेक विद्या वाला, बहुत रत्न तथा बहुत स्त्रियों से युक्त, पराक्रमी, हित करने वाला; वस्त्र तथा गन्ध से युक्त, खेती करने वाला, शिर की माला से युक्त एवं धनवान् होता है।

मिथुन राशि गत शुक्र फलः—

आलेख्यलेख्यनिरतः प्रथितः सुमूर्त्ति-
विज्ञानशास्त्रकुशलः सुकविः सकामः।
साधुः प्रियो हितयुतो धृतगीतनृत्त-
भूतिः सिते मिथुनगे द्विजदेवभक्तः ॥ ११२ ॥

मिथुन में 'शुक्र' होतो चित्र लिखने में तत्पर, प्रसिद्ध, सुन्दर शरीर, विज्ञान तथा शास्त्र में चतुर, सुन्दर कवि, सज्जन, प्रिय, मित्र युक्त; गायन, नृत्य तथा ऐश्वर्य से युक्त एवं देवता तथा ब्राह्मणों का भक्त होता है।

कर्क राशि गत शुक्र फलः—

प्राज्ञो वरो गुणवतां सबलः सुनीति-
राकांक्षितार्थसुखयुग् रतिधर्म्मसक्तः।

स्त्रीपानसम्भवगदैः स्वकुलोत्थदोषैः
सम्पीडितो विधुभगे प्रियदर्शनोऽच्छे ॥ ११३ ॥

कर्क में 'शुक्र' हो तो पण्डित, गुणिजनों के मध्य में श्रेष्ठ, बलयुक्त, सुन्दर नीति वाला, आकांक्षित धन तथा सुख से युक्त, प्रसङ्ग तथा धर्म्म में आसक्त, स्त्री तथा पेय पदार्थों से उत्पन्न रोग और अपने कुल से उत्पन्न दोषों से पीडित एवं देखने में प्रिय होता है।

सिंहराशिगतशुक्रफलः—

कान्ताजनोपासनकः प्रभूतचिन्तासु जातोऽनभियोग एषः ।
अन्योपकारी प्रियबन्धुवर्गो विचित्रसौख्यो लघुसत्त्वकः स्यात् ॥ ११४ ॥
दुःखी तथा लब्धसुखार्थमोद आचार्य्यवर्गेषु गुरुद्विजेषु ।
स्यात्सम्मतो वा निरतो जनुष्मान् दैत्यार्चिते वारणवैरिभस्थे ॥ ११५ ॥

सिंह में 'शुक्र' हो तो स्त्रियों की सेवा करने वाला, बहुत चिन्ताओं में अभियोगरहित, पराये उपकार करने वाला, बन्धुगणों का प्रिय, विचित्र सुख वाला, अल्प पराक्रम वाला, दुःखित; सुख, धन तथा हर्ष से युक्त एवं आचार्य्यवर्ग, गुरु तथा ब्राह्मणों में सम्मत वा तत्पर होता है।

कन्याराशिगतशुक्रफलः—

कान्तासु दुष्टरतिषु प्रणयी सुतास्थे
काव्ये स तीर्थपरिषद्विबुधोऽल्पचिन्तः ।
दीनोऽबलामधुरभाषणकृत्परोप-
सेवी मृदुः सुकुशलः सुखभोगयुक्तः ॥ ११६ ॥

कन्या में 'शुक्र' हो तो दुष्ट प्रसङ्ग वाली स्त्रियों में स्नेह करने वाला, तीर्थों में सभा करने वाला, पण्डित, अल्पचिन्ता वाला, दरिद्र, स्त्रियों में मधुर भाषण करने वाला, पराई सेवकाई करने वाला होता है।

तुलाराशिगतशुक्रफलः—

विदेशवासी श्रमलब्धवित्तः शूरो विचित्राम्बरमाल्ययुक्तः ।
गीर्वाणविप्रार्चनलब्धकीर्त्तिराढ्यः सुपुण्यः सुभगो विपश्चित् ॥ ११७ ॥
प्रवीणरक्षणे दक्षः सुदुष्करेषु कर्म्मसु ।
चपलो मनुजो जातस्तुलास्थे षोडशार्चिषि ॥ ११८ ॥

तुला में 'शुक्र' हो तो विदेश में रहने वाला, परिश्रम से धन प्राप्त करने वाला, शूर वीर, विचित्र वस्त्र तथा माला से युक्त, देवता तथा ब्राह्मणों के सम्मान करने से कीर्तिप्राप्त करने वाला, धनवान्, अतीव पुण्यात्मा ऐश्वर्यवान्, पण्डित, निपुणता के रक्षण में चतुर एवं अति कठिन कर्म्मों में चञ्चल होता है।

वृश्चिकराशिगतशुक्रफलः—

विमुक्तधर्म्मोऽतिशठो विकत्थनो धन्यः स विद्वेषरतिर्नृशंसकः ।
विपन्नवैरी सहजैर्विवर्जितः पापो दरिद्रो वधकार्य्यनैपुणः ॥ ११९ ॥
आर्य्यः पुमान् गर्हितशील इत्वरीदोषी द्विरेफाभिधराशिसंश्रिते ।
प्राद्देवतापूजितपादपद्मके सुगुह्यरोगी प्रचुरर्णसंयुतः ॥ १२० ॥

वृश्चिक में 'शुक्र' हो तो धर्म्म से रहित, अत्यन्त कुटिल हृदय वाला, अपनी बड़ाई करने वाला, भाग्यवान्, वैर करने में रुचि रखने वाला; क्रूर, विपत्ति में प्राप्तजनों का शत्रु, भ्राताओं से रहित, पापी, दरिद्री, वधकार्य में चतुर, श्रेष्ठ, निन्दित स्वभाव, व्यभिचारिणी स्त्री का वैरी, अत्यन्त गुप्त रोगी एवं अधिक ऋणग्रस्त होता है ।

धनुराशिगतशुक्रफलः—

सद्वित्तदारः सुभगः सुदक्षो मर्त्त्येशमंत्री दयितो जनानाम् ।
अलङ्करिष्णुर्विबुधः प्रपूज्यः सतां समूहस्य भवो मनुष्यः ॥ १२१ ॥
गोमांस्तथा पीवरतुङ्गदेहः कुलब्धशब्दो रुचिरः स आर्य्यः ।
फलैः समेतः शुभधर्म्मकर्म्मार्थजैर्हयस्थे शतपर्वनाथे ॥ १२२ ॥

धनू में 'शुक्र' हो तो उत्तम वित्त तथा स्त्री वाला, ऐश्वर्यशाली, अति चतुर राजमंत्री, लोगों का प्रिय, अलङ्कार बनाने वाला, पण्डित, सज्जनों के संघ का मान्य, गौओं से युक्त, स्थूल तथा उच्च देह वाला, पृथ्वी, के हेतु से शब्द प्राप्त करने वाला, मनोहर शरीर, श्रेष्ठ, मङ्गलकार्य, धर्म, कर्म तथा धन से उत्पन्न फलों से युक्त होता है ।

मकरराशिगतशुक्रफलः—

परार्थचेष्टोऽत्र विपन्नचेष्टः सुदुःखितः क्लेशसहो विधेयः ।
नपुंसको दुर्बलविग्रहः स्याज्जराङ्गनायां निरतः प्रवीणः ॥ १२३ ॥
धनस्य लुब्धो व्ययभीतितप्तः पुमान्स लोभानृतवञ्चनश्च ।
प्रजायते स्वान्तगदेन युक्तो वातायुभस्थे विबुधारिवन्द्ये ॥ १२४ ॥

मकर में 'शुक्र' हो तो परायेवास्ते चेष्टा करने वाला, विपत्ति में फंसने की चेष्टा वाला, अति दुःखित, क्लेश सहने वाला, वचनग्राही, नपुंसक, दुर्बल शरीर, वृद्ध स्त्री में लीन, चतुर, धन का लोभी, व्यय के भय से सन्तप्त हृदय वाला; लोभ, मिथ्या तथा वञ्चना वाला एवं हृदयरोग से युक्त होता है ।

कुम्भराशिगतशुक्रफलः—

उद्वेगरोगसन्तप्तो विफलेषु च कर्म्मसु ।
सदैवाभिरतो जातो विधर्म्मो मलिनस्तथा ॥ १२५ ॥
स्नानोपभोगवसनभूषणाद्यैर्निराकृतः ।
कृतवैरः सुतैः सार्द्धं गुरुभिः कलशे कवौ ॥ १२६ ॥

कुम्भ में 'शुक्र' हो तो उद्वेग तथा रोग से सन्तप्त, नित्य विफल कर्म्मों में लीन, विधर्म्मी, मलिन; स्नान, उपभोग, वस्त्र तथा भूषणों से रहित, एवं पुत्र तथा गुरुजनों से वैर करने वाला होता है।

मीनराशिगतशुक्रफलः—

दाक्षिण्यदानगुणवान् दयितो नृपाणां
स्वादेयवाक् सुजनलब्धविभूतिमानः।
ख्यातो जने वर उदारविशिष्टचेष्टो
वाग्धीयुतो हतरिपुः प्रधनोऽण्डजे भे ॥ १२७ ॥

मीन में 'शुक्र' हो तो उदारता, दान तथा गुणवाला, राजाओं का प्रिय, अत्यन्त ग्रहण करने योग्य वचन वाला, उत्तम जनों से ऐश्वर्य तथा मानप्राप्त करने वाला, लोगों में प्रसिद्ध, श्रेष्ठ, उदाराशय, उत्तम चेष्टा वाला, वाणी तथा बुद्धि से युक्त, शत्रुओं को मारने वाला एवं अति धनवान् होता है।

मेषराशिगतशनिफलः—

प्रचण्डशीलो निजबन्धुपक्षनिघ्नःकुवेषोऽपि च लब्धदोषः।
परिश्रमैर्वा व्यसनैः प्रतप्तो जघन्यकर्मा द्रविणेन हीनः ॥ १२८ ॥
नृशंसको नैकृतिकस्तथा प्रियवैरः सुरोषः परुषो विगर्हितः।
धृष्टातिवाङ्ना प्रभवेदसूयकः पापोऽजराशिं प्रगते पतङ्गजे ॥ १२९ ॥

मेष में 'शनि' हो तो उग्रस्वभाव वाला, अपने बन्धुजनों के वश में रहने वाला, निन्दित वेष, दोष वाला, परिश्रम वा व्यसन से सन्तप्तहृदय वाला, नीच कर्म्म करने वाला, निर्धन, क्रूर, निरादर पाने वाला, वैरप्रिय, अतिक्रोधी, निष्ठुरभाषी, निन्दित आचार, धृष्ट, अतीव बोलने वाला, ईर्षा वाला एवं पापी होता है।

वृषराशिगतशनिफलः—

न युक्तवाक्यो नहि सत्यकर्म्मा द्रव्यैर्विहीनः परिचारकः स्यात्।
वृद्धाङ्गनाचित्तहरः परस्त्रीप्रैष्यः प्रजातः कुवयस्य युक्तः ॥ १३० ॥
मूढो भवेन्नैकृतिकस्तथा स्फुटदृष्टः कलत्रव्यसनैः समन्वितः।
बहुक्रियासङ्गत एष देहभृत् पङ्गुर्यदा पुङ्गवराशिमाश्रितः ॥ १३१ ॥

वृष में 'शनि' हो तो युक्त वचन न बोलने वाला, सत्य कर्म्म न करने वाला, धन से हीन, भृत्य, वृद्ध स्त्री के चित्त का हरण करने वाला, पराई स्त्री का दास, निन्दित मित्र वाला, मूर्ख, निरादर पाने वाला, स्पष्ट देखने वाला, स्त्री के व्यसनों से युक्त एवं बहुत क्रियाओं वाला होता है।

मिथुनराशिगतशनिफलः—

क्रियातिशायी छलकृच्च बाह्यक्रीडानुगः शाठ्यगुणैर्विमुक्तः।
श्रमान्वितोऽत्यन्तऋणार्तबन्धनैस्तप्तः कुशीलः कुसुमेषु शीलः ॥ १३२ ॥

सदैव गुह्यो निकृतश्च बन्धनविहारसक्तो जनने जनुष्मतः ।
यस्यानुमंत्री स तु दाम्भिको भवेद्वैरोचनौ जन्मनि वल्लकीं गते ॥ १३३ ॥

मिथुन में 'शनि' हो तो बहुत क्रिया वाला, छल करने वाला, बाह्य क्रीडा का अनुगमन करने वाला, कपट गुणों से रहित, श्रम युक्त बहुत ऋण से आर्त तथा बन्धनों से सन्तप्त हृदय वाला, निन्दित शील वा कामी नित्य ही गुप्त, कुटिल हृदय, बन्धन तथा विहार में आसक्त एवं अनुमंत्रणा वाला और दम्भी होता है ।

कर्कराशिगतशनिफलः—

विलोमशीलः परबाधकश्च सदाऽऽतुरो बन्धुजनैर्विरुद्धः
निःस्वो विपश्चित्सुभगप्रयुक्तो बाल्ये च रोगैरतिपीडितः स्यात् ॥ १३४ ॥
विशिष्टसक्तोऽतिमृदुश्च मध्यमे भूनाथतुल्यः परिभोगवर्द्धितः ।
जनो विशिष्टो जननीविवर्जितो जम्बालनीडङ्गत उष्णरश्मिजे ॥ १३५ ॥

कर्क में 'शनि' हो तो विपरीत स्वभाव वाला, परजनोंका बाधक, नित्य रोगी, बन्धुजनों से विरुद्ध, पण्डित, दरिद्री, ऐश्वर्यशाली, बाल्य काल में रोगों से अतिपीडित, उत्तमजनों में तत्पर, कोमल शरीर, मध्य अवस्था में राजा के समान, भोगों से वर्द्धित, उत्तम मनुष्य एवं माता से रहित होता है ।

सिंहराशिगतशनिफलः—

विगर्हितोऽध्वश्रमभारदुःखैः प्रकीर्णदेहो भृतिजीविकश्च ।
विवृद्धरोषो निरतः क्रियासु नीचासु देही दयिताविहीनः ॥ १३६ ॥
मुदा विमुक्तो लिपिपाठ्यतत्परोऽभिज्ञो विशीलो निजपक्षवर्जितः ।
भ्रान्तो भवेत्स प्रभवो मनोरथैर्नखायुधस्थे नालिनीशनन्दने ॥ १३७ ॥

सिंह में 'शनि' हो तो विशेष निन्दित, मार्ग के परिश्रम तथा भार के दुःखों से थकित शरीर; भृति (नौकरी) से जीविका वाला, बढे हुए क्रोध वाला, नीचक्रियाओं में लीन, स्त्री तथा हर्ष से रहित, लिखने-पढने में तत्पर, चतुर, शीलहीन, अपने पक्ष से रहित एवं मनोरथों से भ्रान्त (व्याकुल वा उन्मत्त) होता है ।

कन्याराशिगतशनिफलः—

परान्नवेश्यानिरतो नपुंसकाकारोऽल्पमंत्रोऽतिशठः कलेवरी ।
विकृत्यचेष्टः स लसत्सुतार्थकः परोपकारी द्राविणैः समुज्झितः ॥ १३८ ॥
अवेक्ष्यकारी पुरुषश्च कन्याप्रदूषकः शिल्पकथासु जातः ।
सदाऽनभिज्ञोऽनुरतः क्रियासु यमानुजे चेद्युवर्तिं प्रयाते ॥ १३९ ॥

कन्या में 'शनि' हो तो पराये अन्न तथा वेश्या में निरत, नपुंसक के समान आकार वाला, अल्पमंत्रणा वाला, अत्यन्त कुटिल हृदय वाला, रोगी के समान चेष्टा वाला, पुत्र तथा धन से शोभित, पराया उपकार करने वाला, निर्धन, निरीक्षक, कन्याजनको दूषण देने वाला, शिल्प कथाओं का न जानने वाला एवं क्रियाओं में तत्पर होता है ।

तुलाराशिगतशनिफलः—

अतीववृद्धः समवायसंसदां वयः प्रकर्षाच्च कृतास्पदस्तथा।
साधुर्विदेशाटनभावितार्थकमानो मनुष्योऽर्थपरो मनोज्ञवाक् ॥ १४० ॥
स्वपक्षगुप्तास्थिरवित्त इत्वरीनटीविटस्त्रीरमणः प्रजायते।
सुबोधनो वा मनुजाधिनायको यदा घटस्थे घटरूपभर्त्तरि ॥ १४१ ॥

तुला में 'शनि' हो तो संघ तथा सभा के मध्य में अत्यन्त वृद्ध, अवस्था की अधिकता से प्रतिष्ठा प्राप्त, सज्जन पुरुष, विदेशभ्रमण से धन तथा मान प्राप्त करनेवाला, धनसञ्चय करने में तत्पर, सुन्दर वाणी वाला, अपने पक्ष से गुप्त तथा स्थिर धन वाला, व्यभिचारिणी नटी वा व्यभिचारी की स्त्री में रमण करनेवाला, सुन्दर ज्ञान वाला अथवा राजा होता है।

वृश्चिकराशिगतशनिफलः—

प्रचण्डकोपो विषमश्च मङ्गलवादित्रबाह्यो द्रविणान्वितस्तथा।
विषायुधघ्नो हरणे समर्थकोऽन्यस्वापते यस्य नृशंसकर्म्मभाक् ॥ १४२ ॥
मनूद्भवो द्वेषपरः प्रहृष्टोऽभिलाषुको ना बहुदुःखयुक्तः।
व्ययोपतापक्षयरोगतप्तश्चण्डांशुपुत्रे यदि चञ्चरीके ॥ १४३ ॥

वृश्चिक में 'शनि' हो तो उग्रक्रोधवाला, विषम स्वभाव, मङ्गल वादित्रों से बाहर रहने वाला, धन से युक्त; विष तथा शस्त्र से मारे जानेवाला, पराये धन का हरण करने वाला, क्रूर कर्म्म करने वाला, वैर में तत्पर, हर्ष से प्रफुल्लित, लोभी, बहुत दुःख से युक्त; व्यय, रोग तथा क्षयरोग से सन्तप्त होता है।

धनुराशिगतशनिफलः—

शीलैः प्रसिद्धो निजधर्म्मवृत्तैर्गुणैः सुतानां प्रभवेत्तथैव।
शिक्षाश्रुतार्थो व्यवहारबोध्यो विद्यानुकूलप्रतिपज्जनुष्मान् ॥ १४४ ॥
सम्प्राप्तमानः परमां भुनक्ति क्षीरोदकन्यां वयसोऽन्त्यभागे।
प्रभूतसञ्ज्ञोऽल्पवचा मृदुश्च सप्तार्चिषीष्वासनराशियाते ॥ १४५ ॥

धनू राशि में 'शनि' हो तो शील,स्वधर्म,चरित्र तथा पुत्रों के गुणों से विख्यात,शिक्षा तथा शास्त्रार्थ वाला, व्यवहार जानने वाला, विद्याके अनुकूल बुद्धि वाला, मान प्राप्त करने वाला अन्त्य अवस्था में लक्ष्मी का उपभोग करने वाला, बहुत नाम वाला; अल्पभाषी एवं कोमल स्वभाव वाला होता है।

मकरराशिगतशनिफलः—

प्रवासशीलो मनुजः प्रजातशौर्य्योपचारो बहुशिल्पवेत्ता।
प्रभुः परक्षेत्रनितम्बिनीनां श्रेष्ठः प्रपूज्यो निजवंशजातैः ॥ १४६ ॥

क्रियाकलाज्ञः परवृन्दसत्कृतो विभूषणस्नानरतोऽनिशं भवेत् ।
तथा प्रसिद्धो गुणवेदसंयुतः कुम्भीरगेऽम्भोभवमित्रनन्दने ॥ १४७ ॥

मकर में 'शनि' हो तो प्रवास में रहने वाला, पराक्रम तथा उपचारयुक्त बहुत शिल्प का ज्ञाता, पराये क्षेत्र तथा स्त्री का स्वामी, श्रेष्ठ, अपने वंश वालों से सम्मानित, क्रिया तथा कलाओं का ज्ञाता; शत्रुसमूह से सत्कार पाने वाला, भूषण तथा स्नान में लीन, विख्यात एवं गुण तथा वेद से युक्त होता है ।

कुम्भराशिगतशनिफलः—

बहुक्रियारम्भकृतप्रयत्नः कुसौहृदो बह्वनृतप्रचण्डः ।
स्यान्मद्यवामाव्यसनप्रसक्तः पराङ्गनार्थः सुमहान्नरस्य ॥ १४८ ॥
यस्याक्षदेवी प्रभवे सुकर्कशाभाषी तथा वञ्चनशील एव सः ।
स्मृत्या तथा ज्ञानकथाभिरुद्भवो बाह्यः सदाऽर्कौ सुदृढो घटङ्गते ॥ १४९ ॥

कुम्भ में 'शनि' हो तो बहुत क्रियाओं के आरम्भ करने का प्रयत्न करने वाला, निन्दित मित्रभाव वाला, बहुत मिथ्याभाषी, क्रूरस्वभाव, मद्यपान, स्त्रीप्रसङ्ग तथा व्यसन में आसक्त, पराई स्त्री तथा धन वाला, अतीव बड़ा मनुष्य, जूआ खेलने वाला, अत्यन्त कठोर भाषण करने वाला, वञ्चनशील, नित्य स्मृति तथा ज्ञान कथाओं से विमुख रहने वाला एवं दृढ शरीर वाला होता है ।

मीनराशिगतशनिफलः—

जातः सुहृद्बन्धुजनप्रधानः शान्तः सुनीतिः परिवर्द्धितार्थः ।
विनीतशीलः पुरुषोऽत्र पश्चाद् भावास्पदो रत्नपरीक्षणे च ॥ १५० ॥
कृतप्रयत्नः प्रिययज्ञशिल्पविद्यः स्वधर्म्मव्यवहारसक्तः ।
गुणैरुपेतः प्रभवस्य यस्योत्पत्तौ तुरष्कोपगते कृशाङ्गे ॥ १५१ ॥

मीन में 'शनि' हो तो मित्र तथा बन्धुजनों में प्रधान, शान्तस्वभाव, सुन्दरनीति वाला, वर्द्धित धन वाला नम्र स्वभाव, पश्चात् प्रभाव तथा प्रतिष्ठा पाने वाला, रत्नपरीक्षण में प्रयत्न करने वाला, यज्ञ तथा शिल्प विद्या प्रिय, अपने धर्म्म में तथा व्यवहार में तत्पर एवं उत्तम गुणों से युक्त होता है ।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरायविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते ग्रहराशियुतिप्रकरणं षट्त्रिंशमवसितम् ।

अथ

योगप्रकरणं प्रारभ्यते

चन्द्रयोग (सुनफादि):—

द्रव्यस्थैः सुनफा विधोर्दिविचरैश्चण्डांशुहीनैस्तथा
रिःफस्थैरनफा तथा दुरुधरायोगोऽवसानार्थगैः।
खेटा नो यदि भारती व्ययनगैः केमद्रुमः कीर्त्तितो
योगा वेदमिता नभश्चमसजाः प्रोक्ता बुधैः प्राक्तनैः॥ १॥

जन्मकालीन चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में सूर्य को छोडकर शेष ग्रह हों तो 'सुनफायोग' होता है। चन्द्रमा से व्ययस्थान में सूर्य को छोडकर शेष ग्रह हों तो 'अनफायोग' होता है। चन्द्रमा से व्यय और द्वितीय में सूर्य को छोडकर शेष ग्रह हों तो 'दुरुधरायोग' होता है। यदि चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश में कोई ग्रह न हो (किन्तु सूर्य हो भी) तो 'केमद्रुमयोग' होता है। ये चन्द्रमा से उत्पन्न चार योग प्राचीन पण्डितजनोंने कहे हैं।

प्रकारान्तर से केमद्रुमयोगः—

वित्तोपयाते व्ययपे विवीर्य्येऽवसानभावोपगते पथीशे।
पापग्रहेन्द्रैर्यदि विक्रमस्थैः केमद्रुमः कीर्त्तित एष योगः॥ २॥

द्वितीय में बलरहित व्ययेश हो, व्यय में नवमेश हो और तृतीय में पापग्रह हो तो भी यह 'केमद्रुम' संज्ञक योग पण्डितजनोंने कहा है।

सुनफायोगफलः—

योगो भवेद्यदि जनौ सुनफाभिधानः
प्रज्ञाधिकः सुकृतवान् सचिवः कृती सः।
ख्यातो जनेषु सकलेषु सदा विशाल-
कीर्त्तिर्धनेन सहितः स्वभुजार्जितेन॥ ३॥

जिस पुरुष के जन्मसमय में सुनफायोग हो वह अधिक बुद्धिमान्, पुण्यात्मा, मंत्री, पण्डित, नित्य सब लोगो के मध्य में विख्यात, विशाल कीर्ति और अपने बाहुबल से उपार्जित धन से युक्त होता है।

अनफायोगफलः—

योगेऽनफाख्ये जनितो विनीतः सद्वाग्विलासः शुभशीलयुक्तः।
प्रभुः सदा मन्मथतुष्टचेता गुणैः समेतः समुदारकीर्त्तिः॥ ४॥

अनफायोगमें जो मनुष्य उत्पन्न हो वह नम्र, उत्तम वाणी के विलास वाला, उत्तम शीलसे युक्त, सामर्थ्यवान्, नित्य काम से संतुष्ट हृदय, गुणों से युक्त और उदारकीर्ति वाला होता है।

दुरुधरायोगफलः—

योगो जनौ दौरुधराभिधानः सीमान्तिनीसक्तमना मनुष्यः।
नित्यं हताराति जनः शुभार्थ सत्कुञ्जरेलाहयसौख्ययुक्तः ॥ ५ ॥

जिसके जन्मसमय में दुरुधरा योग हो वह मनुष्य स्त्रियों में आसक्त हृदय वाला, सर्वदा शत्रुओं का नाश करनेवाला, उत्तम अर्थ, उत्तम हाथी, भूमि और घोड़ों के सौख्य से युक्त होता है।

केमद्रुमयोगफलः—

विदेशवासी च विरुद्धबुद्धिः प्रेष्यः कुवेषो मलिनो विहीनः।
सुद्रव्ययोषातनयात्मलोकैः केमद्रुमे राजसुतोऽपि जातः ॥ ६ ॥

केमद्रुमयोग में यदि राजपुत्र भी उत्पन्न हो तो वह विदेश में वास करने वाला, विरुद्ध बुद्धिवाला, दास, निन्दितवेष, मलिन देह, उत्तम धन, स्त्री, पुत्र और आत्मीयजनों से रहित होता है।

सूर्य-चन्द्रजनितयोग और उस का फलः—

केन्द्रादिगे शशिनि नैपुणनीतिधीस्व-
ज्ञानानि चाधमसमोत्तमकानि भानोः।
नक्तं दिवाऽधिसखिभे निजभे किमब्जे-
ऽच्छेज्येक्षिते यदि सुखी धनवान् क्रमेण ॥ ७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में सूर्य से केन्द्र, पणफर तथा अपोक्लिम में चन्द्रमा हों तो उसका नैपुण्य, नीति, बुद्धि, धन और ज्ञान ये सब केन्द्रादि के क्रम से अधम (अल्प) सम (मध्यम) और उत्तम (अधिक) होते हैं। रात्रि का जन्म हो और चन्द्रमा अधिमित्र राशि में वा स्वराशि में स्थित होकर शुक्र से दृष्ट हो, एवं दिन का जन्म हो और चन्द्रमा अधिमित्र राशि में वा स्वराशिमें स्थित होकर गुरु से दृष्ट हो तो उक्त योग में उत्पन्न मनुष्य सुखी और धनवान् होता है।

चन्द्राधियोगः—

मारारिमृत्युषु शुभैः शशिनोऽधियोगः
सेनेशमंत्रिनृपजन्म भवेत्सवीर्य्यैः।
ऐश्वर्य्यसौख्यसहिता निहतारिपक्षा
वीतामया गतभया विपुलायुषः स्युः ॥ ८ ॥

चन्द्रमा से यदि 'बलवान्' शुभ ग्रह षष्ठ, सप्तम और अष्टम इन तीन स्थानों में से किसी एक स्थान में हो तो उक्त योग में सेना के स्वामी का जन्म होता है। यदि उक्त तीनों स्थानों में से केवल दो स्थान में शुभ ग्रह

हों तो उक्त योग में राजमंत्री का जन्म होता है। एवं उक्त तीनों स्थानों में शुभग्रह हों तो राजा का जन्म होता है। उक्त योगों में उत्पन्न हुए मनुष्य ऐश्वर्य तथा सौख्य से युक्त, शत्रुपक्ष का नाश करने वाले, रोगरहित, भय रहित और दीर्घायु वाले होते हैं।

असत्करो दृश्यतनुस्तमीशो दिवा जना सत्फलकृत्स एव।
अदृश्यदेहो निशि दृश्यदेहः शुभं फलं व्यत्ययतोऽन्यथा स्यात् ॥ ९ ॥

दिन के जन्म में दृश्य (शुक्लपक्षका) चन्द्रमा अशुभफल करता है और दिन के जन्म में अदृश्य (कृष्णपक्ष का) चन्द्रमा शुभ फल करता है। एवं रात्रि के जन्म में दृश्यशरीर (शुक्लपक्ष का) चन्द्रमा शुभ फल करता है और रात्रि के जन्म में अदृश्यशरीर (कृष्णपक्ष का) चन्द्रमा अशुभ फल करता है।

धनियोगः—

सौम्यैः समैरुपचयालयगैर्विलग्नाद्
बह्वर्थवान् हिमकराद् धनवां स्तथैव।
एकेन चाल्पविभवस्त्वथ मध्यवित्तो
द्वाभ्यामिदं प्रबलतोऽपरकेष्वसत्सु ॥ १० ॥

लग्न से उपचयस्थान में सब शुभ ग्रह हों तो अन्य अशुभ योगों के होते हुएभी 'बहुत धन वाला' होता है। एवं चन्द्रमा से उपचयस्थान में सब शुभ ग्रह हों तो 'धनवान्' होता है। यदि लग्न वा चन्द्रमा से उपचय स्थान में एक शुभ ग्रह हो तो अल्प धन वाला और दो शुभ ग्रह हों तो मध्यम धन वाला होता है।

खेशेऽब्जान्मुखकेन्द्रकोणगृहगे रत्नव्रजैर्मण्डितः
कौ वित्ताभरणान्वितो जलगतोऽब्जाक्रान्तराशीश्वरः।
कुर्याद्धस्तिसुखं विचित्रभवनं पुण्यं मुदं भूमिपाद्
द्रव्यं सन्ततिकामिनीहितयशोमुक्तादिकं किंकरम् ॥ ११ ॥

जन्म चन्द्र राशि से जो दशम स्थान हो उस का स्वामी यदि जन्म लग्न से द्वितीय केन्द्र वा त्रिकोण में हो तो वह मनुष्य भूमि में रत्नों के समूह से मण्डित, धन तथा भूषणों से युक्त होता है। यदि चन्द्र राशि का स्वामी चतुर्थ स्थान में हो तो हाथियों का सुख, विचित्रगृह, पुण्य, हर्ष एवं राजा से धन लाभ, सन्तान, स्त्री, मित्र, कीर्त्ति, मुक्तादि और भृत्यों को करता है।

रवि (उभयचर्यादि) योगः—

पष्यः प्रान्त्यार्थयातैरुभयचरिवरो योग एष प्रसिद्धः
सत्पापै राजहीनैर्यदि जनुषि तथा वित्तगैर्वेशिनामा।
तद्वद्दोशिर्निरुक्तो व्ययनभवनगैः खेचरैः पुण्यपापैः
प्रोष्यप्रान्त्यालयस्थैर्न यदि गगनगैः कर्त्तरीनामयोगः ॥ १२ ॥

जन्म समय में सूर्य से द्वादश तथा द्वितीय में चन्द्र रहित शुभ पाप ग्रह हों तो यह प्रसिद्ध 'उभयचरी योग' होता है। सूर्य से द्वितीय में चन्द्र रहित शुभ पाप ग्रह हों तो 'वेशियोग' होता है। सूर्य से व्यय स्थान में शुभ पाप ग्रह हों तो 'वोशियोग' होता है। एवं सूर्य से द्वितीय और द्वादश में कोई ग्रह न हो (चन्द्रमा हो भी) तो 'कर्त्तरीनामक योग' होता है।

उभयचरियोग फलः—

सत्खेटजोभयचरी जनितो नरेशो
वा तत्समानसुखशीलकृपार्थयुक्तः।
दुष्टोद्भवोभयचरावघकृत्ययुक्तो
दारिद्र्ययुक् च परकर्म्मरतः सरोगः॥ १३॥

शुभ ग्रहों से उत्पन्न उभयचरियोग में जो मनुष्य उत्पन्न हो वह राजा अथवा उस के समान सुख शील दया धन से युक्त होता है। दुष्ट ग्रहों से उत्पन्न उभयचरि योग में जो मनुष्य उत्पन्न हो वह पाप कर्म तथा दरिद्र से युक्त, परकर्म्म में तत्पर और रोग युक्त होता है।

वेशियोग फलः—

सदुत्थवेशौ विभयो जितारिर्वाग्मी सुशीलो द्रविणैरुपेतः।
असत्खगोत्थे खललोकरक्तः पापी सुखार्थादिवियुक् प्रजातः॥ १४॥

शुभ ग्रहों से उत्पन्न वेशि योग में जो मनुष्य उत्पन्न हो वह निर्भय, शत्रुओं को जीतने वाला, शास्त्रानुसार बोलने वाला, सुशील और धन से युक्त होता है।

वोशि योग फलः—

दाता विनोदार्थयशःसुखौजोविद्यादियुक्तश्चतुरः शुभोत्थे।
वोशौ खलोत्थे वधभाक् सुमूर्खः कामी सुवक्त्रः परदेशगामी॥ १५॥

शुभ ग्रहों से उत्पन्न वोशि योग में दाता; विनोद, धन, यश, सुख, बल तथा विद्यासे युक्त एवं चतुर होता है पाप ग्रहों से उत्पन्न वोशि योग में वध वाला, अतिमूर्ख, कामी, दुर्मुख और परदेश में वास करने वाला होता है।

पञ्चमहापुरुष योगों के लक्षण तथा नामः—

स्वर्क्षोच्चगाः केन्द्रगताः कुजाद्या वीर्य्यैरुपेताः क्रमशः प्रदिष्टाः।
योगा मुनीन्द्रै रुचभद्रहंसा मालव्यकाख्यः शशनामधेयः॥ १६॥

बलवान् भौमादि पाँच ग्रह स्वराशि में अथवा स्वोच्चराशि में स्थित होकर केन्द्र में हों तो मुनियों ने क्रम से रुच, भद्र, हंस, मालव्य और शशनामक ये पाँच महापुरुष योग कहे हैं अर्थात् बलवान् भौम स्वराश्यादि में स्थित होकर केन्द्र में हों तो 'रुच योग' एवं बुध हो तो 'भद्र योग' गुरु हो तो 'हंस योग' शुक्र हो तो 'मालव्य योग और शनि होतो 'शश योग' होता है।

रुच योग फलः—

सेनाश्वाधिपतिर्धनी रुचभवः शीलेन कीर्त्या युतो
मर्त्येशः किमु तत्समः सह नभोऽगाब्दायुषा स्यात्सुखी।
भास्वत्तुल्यरुचिः सुकोमलतनुर्लावण्ययुङ् मंत्रवि-
च्छास्त्रज्ञो बलवांस्तपोजपकरो दानी जितारातिकः ॥ १७ ॥

रुच योग में उत्पन्न मनुष्य, सेना तथा घोड़ों का स्वामी, धनवान्, शील तथा कीर्त्ति से युक्त, मनुष्यों का स्वामी (राजा) अथवा राजा के समान एवं ७० वर्ष की आयु के साथ सुखी, सूर्य के समान कान्ति, अत्यन्त कोमल शरीर, सौन्दर्य्ययुक्त, मंत्र तथा शास्त्र का ज्ञाता, बली, तप तथा जप करने वाला, दाता और शत्रु पक्ष को जीतने वाला होता है।

समस्त साम्राज्याधिप योगः—

एकोऽपि केन्द्रेऽर्थभवाङ्कपानां जनौ निशानायकतः स्वयं चेत्।
वाग्मी भवागारविभुः समस्तसाम्राज्यनाथत्वमुपैति जन्मी ॥ १८ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से द्वितीय एकादश तथा नवम इन तीन स्थानों के स्वामियों के मध्य में कोई एक ग्रह भी केन्द्र में हो और स्वयं गुरु यदि लाभेश हो तो वह प्राणी समस्त साम्राज्य के स्वामित्व को प्राप्त होता है।

भद्र योग फलः—

शार्दूलतुल्यलपनो धनवान् यशस्वी
मानी मतङ्गजगतिः शुभवृत्तबाहुः।
बन्धूपकारनिरतो नृपतिर्बृहद्धी—
जीवेत्स भद्रजनितः शरदामशीतिः ॥ १९ ॥

भद्र योग में उत्पन्न मनुष्य शार्दूल के समान मुखवाला, धनी, यशस्वी, मानी, हाथी के समान चालवाला, उत्तम चरित्र और भुजावाला, बन्धुजनों के उपकार में तत्पर, राजा, विशाल और अस्सी वर्ष जीवित रहता है।

हंस योग फलः—

हंसोद्भवः स्मरसमो निपुणः सुपादो
हंसस्वरोऽब्जवदनोन्नतनासिकश्च।
गौराङ्ग एति गगनेभमिताब्दमायुः
श्लेष्मा सुखी तनयशास्त्रगुणाङ्गनाढ्यः ॥ २० ॥

हंस योग में उत्पन्न मनुष्य कामदेवतुल्य शरीर वाला; प्रवीण, सुन्दर पाद वाला; हंस के समान स्वरवाला; कमल के समान मुख और ऊंची नासिका वाला; गौर वर्ण; ८० वर्ष की आयु; श्लेष्म (कफ) प्रकृति; सुखी; पुत्र शास्त्र, गुण और स्त्री से युक्त होता है।

मालव्ययोगः—

मालव्यजो बुधवरः परदारगामी
योषास्वभावललिताङ्गविलोचनश्च ।
उत्साहशक्तिगुणयानसुतार्थदार-
तेजोयुतोऽगतुरगोन्मितमायुरेति ॥ २१ ॥

मालव्य योग में उत्पन्न मनुष्य श्रेष्ठ पण्डित; परस्त्रीगामी; स्त्री स्वभाव वाला; मनोहर शरीर और नेत्र वाला; उत्साह, शक्ति, गुण, वाहन, पुत्र, धन, स्त्री और तेज से युक्त एवं सत्तर वर्ष की आयु को प्राप्त होता है।

शशयोग फलः—

सेनेट् क्रूरमतिः सरोषनयनोऽमात्यो महीपोऽथ वा
तेजस्वी वनपर्वतेषु निरतो मर्त्योऽम्बिकाभक्तिमान् ।
शूरः कृष्णतनुः सुखी शशभवोऽन्यस्त्रीरतः सप्तति-
वर्षायुश्च विनोदवञ्चनपरो वादी स धातोस्तथा ॥ २२ ॥

शशयोग में उत्पन्न पुरुष सेनापति, क्रूर बुद्धि, रोष युक्त नेत्र, मंत्री वा राजा, तेजस्वी, वन तथा पर्वत में भ्रमण करने वाला, पार्वती की भक्ति वाला, शूर वीर, कृष्णदेह, सुखी, अन्य स्त्री गामी, विनोद तथा वञ्चनकार्य में तत्पर एवं धातु का वादी और सत्तर वर्ष की आयु को प्राप्त होता है।

पूर्वोक्त योगों के फलदान काल का निर्णयः—

प्रोक्तेषु योगेष्वधिपूर्वकेषु योगस्य यस्य द्युगतिर्बलाढ्यः ।
यः कारकः स्याज्जितदृष्टियुक्तः फलप्रदः स्वीयदशादिकेषु ॥ २३ ॥

पूर्वोक्त चन्द्राधि योगों में जिस योग का जो ग्रह कारक हो वह ग्रह यदि बलवान् हो और विजयी ग्रह से दृष्ट हो तो वह अपनी दशा वा अन्तर्दशा में अपना फल देता है।

लक्षण सहित भास्कर योग फलः—

योगो भास्करसञ्ज्ञको धनगते ज्ञेऽर्काद्विदो लाभगः
शुभ्रांशुः शशिनस्त्रिकोणगृहगो जीवः समर्थो धनी ।
मर्त्यो भास्करयोगजो गणितविद् गान्धर्ववेदान्वितः
शूरो धीरवरो मनोहरतनुर्जातः प्रभुः शास्त्रवित् ॥ २४ ॥

सूर्य से द्वितीय स्थान में बुध, उस से लाभ में चन्द्रमा और उस से त्रिकोण स्थान में गुरु हो तो 'भास्कर योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य समर्थवान्, धनवान्, गणितवेत्ता, गान्धर्व विद्या तथा वेद से युक्त, शूर वीर, धैर्यशालियों में श्रेष्ठ, मनोहर शरीर, मनुष्यों का स्वामी और शास्त्रवेत्ता होता है

लक्षण सहित इन्द्रयोग फलः—

शौर्य्यस्थः शशिनः कुजः कुतनयान्मन्दो मदे मन्दतो
मारस्थः कविरच्छतोऽमरगुरुर्मारस्थ इन्द्राभिधः
तत्रोत्थो विदितः प्रतापगुणयुग् वाग्मी सुशीलो नृप-
स्तत्तुल्यो धनचित्रभूषणयशोरूपैरुपेतो जनः ॥ २५ ॥

चन्द्रमा से तृतीय में मङ्गल, उस से सप्तम में शनि, उस से सप्तम में शुक्र और उस से सप्तम में गुरु हो तो 'इन्द्रयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य, विख्यात, प्रताप तथा गुण से युक्त, सुन्दर बोलने वाला, सुशील, राजा अथवा राजा के समान, धन, विचित्र भूषण, कीर्ति और रूप से युक्त होता है।

लक्षण सहित मरुद् योगः—

कोणस्थः कवितो गुरुर्धिषणतः सोमः सुते सोमत
आदित्यो यदि कण्टकालयगतो वातारव्योगः क्रये।
दक्षो विक्रयकेऽपि पीनजठरो वातोद्भवः शास्त्रवित्
सम्पन्नः पृथुहृन्नराधिपसमो वाग्मी क्षमानायकः ॥ २६ ॥

शुक्र से त्रिकोण में गुरु, उस से पञ्चम में चन्द्रमा और उस से केन्द्र में सूर्य हो तो 'मरुद् योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य क्रय और विक्रय में चतुर, स्थूल उदर वाला, शास्त्रवेत्ता, धनाढ्य, विशाल हृदय वाला, राजा के समान, सुन्दर बोलने वाला और भूमि का स्वामी होता है।

लक्षण सहित बुध योग फलः—

गौरोऽङ्गे हिमगुश्चतुष्टयगतो गारा द्वितोर्बाहुगौ
राजन्यौ वसुगोऽसुरो निगदितो योगो बुधाख्यो बुधैः।
विख्यातो बुधजो नरोऽतुलबलो दुर्हृद्वियुक्छास्त्रवित्
प्रज्ञावान् नरनाथवैभवयुतो दक्षः क्रये विक्रये ॥ २७ ॥

लग्न में गुरु, उस से केन्द्र में चन्द्रमा, उस से तृतीय में सूर्य तथा मङ्गल और द्वितीय में राहु हो तो पण्डितों ने 'बुध योग' कहा है। इस योग में उत्पन्न पुरुष प्रसिद्ध, अतुलबल शाली, शत्रु रहित, शास्त्रवेत्ता, बुद्धिमान्, राज ऐश्वर्य्य से युक्त क्रय और विक्रय में चतुर होता है।

लक्षण सहित शकट योग फलः—

वागीशो विधुतो वधारिगृहगः केन्द्रात्तनोरन्यगो
योगोऽयं शकटाभिधो बुधवरैर्गीतोऽत्र जातो नरः।
निर्द्रव्यो मनुजाधिनाथकुलजोऽश्लीलाधिभूर्विप्रियः
क्लेशायासवशात्सुतप्तहृदयो गर्गादिभिर्गीयते ॥ २८ ॥

चन्द्रमा से षष्ठ वा अष्टम स्थान में स्थित हुआ गुरु यदि लग्नोत्थ केन्द्र से अन्य स्थान में हो तो यह 'शकट योग' होता है। इस योग में उत्पन्न राज पुत्र भी निर्धन, राजा का अप्रिय, क्लेश और परिश्रम के कारण संतप्त हृदय वाला होता है।

लग्नाधि योग के लक्षण:—

विलग्नतो वीतमलै रुजावधूविनाशगैर्नान्वितलोकितैः खलैः
नाग्नेयखेटैर्वसुधातलोपगैर्लग्नाधियोगो मुनिभिर्निगद्यते ॥ २९ ॥

लग्न से षष्ठ, सप्तम और अष्टम में शुभ ग्रह हों और वे पाप ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट न हों एवं चतुर्थस्थान में पापग्रह न हों तो प्राचीन पण्डितोंने 'लग्नाधि योग' कहा है।

लग्नाधि योग फल:—

मुख्यो महात्मा बहुशास्त्रकारकः सेनाधिनाथः कपटोज्झितो जने।
विद्याविनीतार्थयशोगुणान्वितो लग्नाधियोगो जनने स यस्य नुः ॥ ३० ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में लग्नाधि योग हो वह लोगों में श्रेष्ठ; महात्मा; बहुत शास्त्रों का करने वाला सेनापति; विद्या, विनीत, धन कीर्त्ति और गुणों से युक्त होता है।

पारिजातादि भागों का फल:—

सुखानि कुर्य्याद्यदि पारिजातयुक्तो ग्रहश्चोत्तमभागसंस्थः।
निरामयं गोपुरभागयुग्गोधनानि सिंहासनगो विभूतिम् ॥ ३१ ॥

श्रीकीर्त्तिविद्याविपुलं विधत्ते पारावतस्थोऽथ सदेवलोकः।
सुयानसेनां कुरुते नृपत्वमैरावतांशोपगतो विहङ्गः ॥ ३२ ॥

पारिजात वर्ग में स्थित ग्रह सुखों को करता है। उत्तमवर्ग में स्थित ग्रह आरोग्यता को करता है। गोपुरांश में स्थित ग्रह गोधन को देता है। सिंहासनांश में स्थित ग्रह ऐश्वर्य्य को करता है। पारावतांश में स्थित ग्रह बहुत लक्ष्मी, यश तथा विद्या को करता है। देव लोकांशगत ग्रह उत्तम वाहन और सेना को करता है। एवं ऐरावतांश में स्थित ग्रह राजा करता है।

लक्षण सहित गजकेसरी योग फल:—

योगोऽसौ गजकेसरी शशभृतः केन्द्रस्थ इन्द्रार्चितः
किं दृष्टे हिमभासि हेम्नगुरुभैर्मूढाधरोनैस्तथा।
मर्त्यस्तत्र भवो भवेद् गुणयुतस्तेजोऽर्थधान्यान्वितो
मेधावी वसुधाधिभूप्रियकरः प्राहुस्त्विति प्राक्तनाः ॥ ३३ ॥

जिस स्थान में चन्द्रमा हो उस से केन्द्र में गुरु हो तो (१) लथवा 'चन्द्रमा' नीच राशि गत तथा अस्तगत रहित गुरु बुध शुक्र से दृष्ट हो तो वह 'गजकेसरी योग' होता है। इस में उत्पन्न मनुष्य गुण, तेज, धन तथा धान्य से युक्त; धारणा बुद्धि वाला और राजा का प्रिय होता है।

लक्षण सहित अमलायोग फलः—

होराया हिमदीधितेः किमु शुभो राज्याश्रितो जन्मनि
योगोऽसावमलाभिधोऽत्र जनिमान् सम्पद्युतः सर्वदा ।
कीर्त्तिस्त्वाशशितारकी सुविमला तिष्ठेत्स्वबन्धुप्रियो
राजेज्यः स परोपकारनिरतो दाता गुणी भोगवान् ॥ ३४ ॥

यदि जन्म समय में लग्न वा चन्द्रमा से दशम स्थान में शुभग्रह होतो वह ' आमला योग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य नित्य सम्पत्ति से युक्त और जबतक आकाशपथ में चन्द्र तथा तारागण विद्यमान रहें तब-तक पृथ्वी में उसकी कीर्ति विराजमान रहती है । एवं वह मनुष्य अपने बन्धुजनों का प्रिय, राजा से सम्मानित, परोपकार में तत्पर, दानी, गुणवान् और भोगवाला होता है ।

लक्षण सहित शुभ, अशुभ तथा कर्त्तरी योग फलः—

जन्माङ्गे सशुभे शुभोऽथ सखले योगोऽशुभः कीर्त्तितः
सत्पापैर्व्ययवित्तगैर्जनितनोः सत्पापजा कर्त्तरी ।
वाग्मी स्याच्छुभयोगजो गुणयुतो रूपान्वितः शीलभाक्
प्राणी पामरयोगजोऽघनिरतः कामी परद्रव्यभुक् ॥ ३५ ॥

बली तेजोऽर्थसंयुक्तः सत्कर्त्तरीभवो नरः ।
भिक्षुको मलिनः पापी यः क्रूरकर्त्तरीभवः ॥ ३६ ॥

यदि 'जन्मलग्न' शुभग्रह से युक्त होतो शुभयोग होता है । जन्मलग्न पापग्रह से युक्त होतो 'अशुभ योग' होता है । एवं जन्मलग्न से व्यय और द्वितीय में शुभग्रह वा पापग्रह स्थित होतो शुभ वा पाप से उत्पन्न ' कर्त्तरी योग ' होता है । शुभ योग में उत्पन्न मनुष्य सुन्दर बोलने वाला, गुण, रूप तथा शील से युक्त होता है । अशुभ योग में उत्पन्न मनुष्य पाप में लीन, कामासक्त और पराये द्रव्य का उपभोग करने वाला होता है । शुभकर्त्तरी में उत्पन्न मनुष्य बलवान् तेजस्वी और धन से युक्त होता है । एवं पापकर्त्तरी में उत्पन्न मनुष्य भिक्षुक, मलिन और पापी होता है ।

लक्षण सहित पर्वत योग फलः—

शुद्धे शान्तदरेऽथ वा ससुकृते सौम्येषु केन्द्रेषु चे-
त्प्रोक्तः पर्वतयोग उद्गमगृहान्त्येशौ मिथः केन्द्रगौ ।
दृष्टो मित्रखगैस्तथा पुरपतिस्तेजोयशोयुक् स्मरी
विद्याभाग्यविनोदयुक् परवधूक्रीडाचलस्त्यागवान् ॥ ३७ ॥

यदि जन्मलग्न से षष्ठ और अष्टम स्थान शुद्ध हों अर्थात् ग्रह रहित हों अथवा उक्त दोनों स्थान शुभयुक्त हों और केन्द्र में शुभग्रह हो अथवा लग्नेश तथा व्ययेश ये दोनों परस्पर केन्द्र में हों और मित्र ग्रहों से दृष्ट होंतो ' पर्वत योग ' होता है । इस योग में उत्पन्न पुरुष पुर का स्वामी तेजस्वी कामी, विद्या, भाग्य तथा विनोद से युक्त एवं पराई स्त्री से क्रीडाकरने में आसक्त और त्यागी होता है ।

लक्षण सहित काहल योग फलः—

केन्द्रस्थौ हितपार्चितौ यदि मिथः प्राणान्विते पौरपे
किं तुङ्गे स्वगृहे रसातलविभौ राज्येशयुक्तेक्षिते ।
योगः काहलसञ्ज्ञितोऽत्र मनुजः स्यात्साहसौजोऽन्वितो
वैधेयश्चतुरङ्गसैन्यसहितोऽल्पग्रामनाथो भवेत् ॥ ३८ ॥

नवमेश चतुर्थेश ये दोनो परस्पर केन्द्र में हों और लग्नेश बलवान् हो अथवा चतुर्थेश स्वोच्च राशि में वा स्वराशि में स्थित होकर दशमेश से युक्त वा दृष्ट होतो 'काहल योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य साहस और बल से युक्त, मूर्ख, चतुरङ्ग सेना से युक्त और अल्पग्रामों का स्वामी होता है।

लक्षण सहित मालिका योग फलः—

सप्ताकाशचरास्तनूप्रभृतितः सप्तर्क्षगाः सम्भवे
भूपोऽनेकतुरङ्गकुञ्जरपतिर्वित्तादिसंस्था निधीट् ।
धीरोग्रः पितृभक्तिरूपगुणयुक् स्याच्चक्रवर्ती नरो
दुश्चिक्यादिगतास्तदाऽऽमययुतः शूरो धरेशो धनी ॥ ३९ ॥

बन्ध्वाद्या बहुदेशभोगविधियुग् भूपो महादानकृद्
धीस्थानादिगता धराधिरमणो यज्वा यशस्वी किमु ।
मान्द्यादिग्रहमालिका सुखधनोपेतः क्वचिद् दुर्विधो
कामाद्या बहुकामिनीप्रिय इलेड् रन्ध्राद्वधूनिर्ज्जितः ॥ ४० ॥

दीर्घायुर्नरसत्तमो धनवियुग् धर्मात्तपस्वी विभु-
र्यज्वा स्याद्गुणवान् खतो वृषरतो धर्म्मी सुलोकार्चितः ।
लाभाद्या निखिलक्रियासु कुशलो राजाङ्गनारत्पो-
ऽपायादिप्रगतास्त्वतिव्ययकरः पूज्यः समस्तैर्जनैः ॥ ४१ ॥

यदि जन्म समय में लग्न से लेकर सप्तम स्थान पर्यन्त क्रम से सात ग्रह स्थित हों तो वह 'लग्नादि मालिका योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य राजा, अनेक घोडे और हाथियों का स्वामी होता है। धन स्थान से अष्टम स्थान पर्यन्त क्रम से सात ग्रह स्थित हों तो वह 'धनादि मालिका योग होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य निधिका स्वामी, धैर्य्यशाली, उग्र स्वभाव, पितृभक्ति वाला रूप तथा गुण से युक्त और चक्रवर्त्ती होता है। एवं सहजादि मालिका में रोग युक्त, शूरवीर, पृथ्वी का स्वामी और धनवान् होता है। सुखादि मालिका में बहुत देश, भोग और भोग्य से युक्त, पृथ्वी का स्वामी और महादान करनेवाला होता है। पञ्चमादि मालिका में पृथ्वी का स्वामी यज्ञ करने वाला और यशस्वी होता है। षष्ठादि मालिका में सुख तथा धन से युक्त और कहीं दरिद्र होता है। सप्तमादि मालिका में बहुत स्त्रियों का पति और भूमि का स्वामी होता है। अष्टमादि मालिका में स्त्री से पराजित, धन से हीन, दीर्घायु और मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है। नवमादि मालिका में तपस्वी, मनुष्यों का स्वामी, यज्ञ करने वाला और गुणी होता है। दशमादि मालिका में पुण्य में लीन, धर्मी और उत्तम लोगों से

सम्मानित होता है। लाभादि मालिका में समस्त क्रियाओं में चतुर, राजस्त्री और रत्नों का स्वामी होता है ययादि मालिका में अति व्यय करने वाला और समस्त जनों से पूजित होता है।

लक्षण सहित चामर योग फलः—

लग्नाच्येन विलोकिते हरिजपे केन्द्रस्थिते तुङ्गभे
किं पौरे पथिभेऽथ वा पथि पदे चारुद्वये चामरः।
सर्वज्ञः श्रुतिशास्त्रविन्मनुभवेद्पूज्यो बुधोऽत्राङ्कव
आयुर्वर्षमुपैति खाश्वतुलितं वाग्मी च विद्वान्नृपः॥ ४२॥

गुरु से दृष्ट लग्नेश स्वोच्चराशि में स्थित होकर केन्द्र लग्न वा सप्तम में स्थित हों अथवा दो शुभग्रह नवम वा दशम में स्थित हों तो 'चामर योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य सब विषय जानने वाला, वेदशास्त्र का ज्ञाता, राजाओं से पूज्य, पण्डित, सुन्दर बोलनेवाला, विद्वान्, राजा और सत्तर वर्ष की आयु को पाता है।

लक्षण सहित शङ्ख योग फलः—

विक्रान्तः पुरपः पराङ्गपती अन्योन्यकेन्द्राश्रितौ
वाभ्रेशे धनपे चरे नियतिपे सोर्जे स शङ्खाह्वयः।
योगोऽत्रोत्थजनो वधूसुतदयाक्षेत्रार्थसाधुक्रिया–
शास्त्रज्ञानवृषान्वितोऽम्बरमरुद्युग्वर्षमायुर्व्रजेत्॥ ४३॥

लग्नेश बलवान् हो, षष्ठेश तथा सप्तमेश ये दोनों परस्पर केन्द्र में हों अथवा दशमेश तथा लग्नेश चर राशि में हों और नवमेश बलवान् हो तो 'शङ्खयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य स्त्री, पुत्र, दया, क्षेत्र, धन, उत्तमक्रिया, शास्त्रज्ञान और पुण्य से युक्त एवं अस्सी वर्ष की आयु को प्राप्त होता है।

लक्षण सहित भेरी योग फलः—

सप्राणे पदपे खगेषु विभवप्रान्त्याङ्गनाङ्गेष्वथो
केन्द्रस्थौ गुरुतो भृगूदयपती प्राणान्विते पुण्यपे।
योगो भेर्यभिधो नृपो विभयरुक् ख्यातश्चिरायुः सुता–
चारस्त्रीबहुसौख्यशौर्यधनभूयुक् सज्जनः शिक्षितः॥ ४४॥

दशमेश बलवान् हो, द्वितीय, व्यय, सप्तम और लग्न इन चार स्थानों में ग्रह हों अथवा गुरु से केन्द्र में शुक्र और लग्नेश स्थित हों एवं नवमेश बलवान् हो तो 'भेरी योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य राज भय तथा रोग रहित; प्रसिद्ध; दीर्घायु; पुत्र, आचार, स्त्री बहुतसौख्य, पराक्रम, धन तथा भूमि से युक्त, सज्जन और शिक्षित होता है।

लक्षण सहित मृदङ्ग योग फलः—

केन्द्रे कोणे तुङ्गखेटांशनाथे स्वर्क्षे तुङ्गे शक्तियुक्ते सशक्तौ
होरालेखेशे मृदङ्गो यशस्वी भूभृत्तुल्यो रूपकल्याणयुक्तः॥ ४५॥

उच्च राशिगत ग्रह के नवांश का स्वामी यदि स्वराशि वा स्वोच्चराशि में स्थित होकर केन्द्र वा त्रिकोण में स्थित हो और बल से युक्त हो एवं लग्नेश बलवान् हो तो 'मृदङ्ग योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य यशस्वी, राजा के समान, रूप तथा कल्याण से युक्त होता है।

लक्षण सहित श्रीनाथ योग फलः—

स्वोच्चे कान्ताभावपे कर्म्मयाते युक्ते तीर्थस्वामिना खेशि योगः।
श्रीनाथाख्यः सत्प्रदोऽसौ भवोऽस्मिन्मर्त्त्यः पृथ्वीपालकः शक्रतुल्यः ॥ ४६ ॥

सप्तमेश अपनी उच्चराशि में स्थित होकर दशम स्थान में हो और दशम स्थान का स्वामी नवमेश से युक्त हो तो 'श्रीनाथयोग' होता है। यह शुभ फल देने वाला और इस योग में उत्पन्न मनुष्य इन्द्र के समान राजा होता है।

शारदा योग के लक्षणः—

केन्द्रे बुधे सवितरि स्वगृहेऽतिशक्ति-
युक्ते खेपे तनयगेऽथ विधोस्त्रिकोण
वाग्वाग्मिनि क्षितिभुवीन्दुजतस्त्रिकोणे
वाऽऽये बुधादमरमंत्रिणि शारदाख्यः ॥ ४७ ॥

केन्द्र में बुध, अतिबलवान् सूर्य अपनी राशि में हो और दशमेश पञ्चम में हो तो (१) अथवा चन्द्रमा से त्रिकोण में गुरु और बुध से त्रिकोण में मङ्गल हो तो (२) अथवा बुध से लाभ में गुरु हो तो 'शारदा योग' होता है।

शारदा योग का फलः—

धर्म्मीह जातो रतिशीलविद्यातपोबलस्त्रीसतबन्धुयुक्तः।
सुखी गुणी रूपविनोदयुक्तो नृपप्रियो देवगुरुद्विजेज्यः ॥ ४८ ॥

शारदा योग में उत्पन्न मनुष्य धर्म्मात्मा; प्रेम, शील, विद्या, तप, बल, स्त्री, पुत्र और बन्धुओं से युक्त; सुखी गुणवान्, रूप तथा विनोद से युक्त, राजा का प्रिय, देवता, गुरु और ब्राह्मणों को पूजने वाला होता है

लक्षण सहित मत्स्य योग फलः—

पापेऽङ्काङ्गे सापसाम्ये प्रबन्धे क्रूरे रन्ध्रे बान्धवे मत्स्यनामा।
कालज्ञो धीधर्म्मविद्यागुणौजोरूपैः कीर्त्या संयुतोऽसौ दयाब्धिः ॥ ४९ ॥

नवम तथा लग्न में पाप ग्रह हों और पञ्चम में शुभ तथा पाप ग्रह हों एवं अष्टम तथा चतुर्थ में पाप ग्रह हों तो 'मत्स्य योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य कालवेत्ता; बुद्धि, धर्म्म, विद्या, गुण, बल, रूप, तथा कीर्ति से युक्त और दयासागर होता है।

लक्षण सहित कूर्म्मयोग फल.—

मित्रोच्चर्क्षलवाश्रिता गतमाला धीमातुलास्तोपगाः
पङ्काः प्राक्क्षितिजानुजायगृहगा मित्रोच्चगेहाचिताः ।
कूर्म्माख्योऽत्र सुखी च सत्त्वगुणयुक् कौ कीर्त्तिमान् धार्म्मिको
धीरो वाण्यपकारकृन्नरपतिः स्याद्राजभोगीभवी ॥ ५० ॥

यदि ' शुभ ग्रह ' मित्रराशि मित्रांश में वा स्वोच्चराशि स्वोच्चांश में स्थित होकर पञ्चम, षष्ठ तथा सप्तम में स्थित हों और ' पाप ग्रह ' मित्रराशि वा स्वोच्च राशि में स्थित होकर तृतीय, लग्न तथा एकादश में स्थित हों तो ' कूर्म्म योग ' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य सुखी, सत्त्वगुण से युक्त यशस्वी, धर्म्मात्मा, धैर्यशाली वचन से उपकार करने वाला राजा और राजभोग वाला होता है।

लक्षण सहित खड्ग योग फलः—

केन्द्रे धीनवमेऽङ्गपे विधिपतौ वित्तेऽर्थपे तीर्थगे
खड्गोऽस्मिन् कुशलः प्रतापाधधीओजोयुक् कृतज्ञः सुखी ।
सम्पूर्णागमतत्त्वयुक्तिनिपुणो वेदार्थविच्छास्त्रवि-
त्स्वार्योर्ज्जस्य वशान्महाशय उत प्राणी स निर्मत्सरः ॥ ५१

केन्द्र पञ्चम वा नवम में लग्नेश हो, धन में नवमेश और नवम में धनेश हो तो ' खड्ग योग ' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य चतुर, प्रताप, बुद्धि तथा बल से युक्त, कृतज्ञ, सुखी, सम्पूर्ण वेदों के तत्त्व युक्ति में निपुण, वेद के अर्थ का ज्ञाता एवं शास्त्र का ज्ञाता, अपने ही पराक्रम के कारण बड़े आशय वाला और मात्सर्य (डाह रहित होता है।

लक्षण सहित लक्ष्मीयोग फलः—

लक्ष्मीयोग इहोद्गतेशि सबले मूलत्रिकोणेऽङ्गपे
केन्द्रे वा परमोच्चगे बहुसुतस्त्रीकीर्त्तिविद्याकुयुक् ।
स्यात्काष्ठान्तगतक्लमावनिधवैर्ना वन्दनीयः स्मर-
रूपोऽस्मिन्बहुदेशपो गुणयुतो राजाधिराजो भवः ॥ ५२ ॥

यदि जन्म लग्न का स्वामी बलयुक्त होकर मूलत्रिकोणराशि में हो और नवमेश केन्द्र वा परमोच्च राशि में हो तो ' लक्ष्मीयोग ' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य बहुत पुत्र, स्त्री, कीर्ति, विद्या और क्षेत्र से युक्त; सब दिशाओंके ग्लानि रहित राजाओं का पूज्य; कामदेव के समान रूपवाला; बहुत देशों का स्वामी; गुण से युक्त और राजाधिराज होता है।

लक्षण सहित कुसुम योग फलः—

योगोऽयं कुसुमाभिधः स्थिरतनौ केन्द्रे कवावृक्षपे
ध्यङ्कस्थे शुभदेतरे पदगृहे पङ्गौ प्रतापी प्रभुः ।

मर्त्यानां क्षितिमण्डलाधिपतिभिर्वन्द्यो महावंशज—
पृथ्वीशप्रमुखो भवेन्मनुभवो लोके महाकीर्त्तियुक् ॥ ५३ ॥

लग्न में स्थिरराशि, केन्द्र में शुक्र तथा चन्द्र हों, पञ्चम तथा नवम में पापग्रह हों और दशम में शनि हो तो प्रतापी, मनुष्यों का स्वामी, राजाओं से पूज्य; बडे वंश में उत्पन्न राजाओं में मुख्य और लोगों में विशाल कीर्ति से युक्त होता है।

लक्षण सहित पारिजात योग फलः—

होरेशाश्रितराशिनाथगृहपस्तद्भागनाथोऽथ वा
स्वोच्चस्थः पथिधीचतुष्टयगतः स्यात्पारिजाताह्वयः।
योगोऽस्मिञ्जनितो नृपोऽश्वगजयुङ् मध्यान्तसौख्यो नृप–
वन्द्यः स्यान्निजधर्म्मकर्म्मनिरतः कारुण्ययुङ् मुत्प्रियः ॥ ५४ ॥

लग्नेश की राशि का स्वामी जिस राशि में वा जिस नवांश में हो उस का स्वामी यदि अपनी उच्चराशि में स्थित होकर त्रिकोण वा केन्द्र में हो तो 'पारिजातयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य राजा; घोडे तथा हाथियों से युक्त, मध्य तथा अन्त्य अवस्था में सौख्यवान्, राजा से पूज्य, अपने धर्म कर्म में तत्पर, दया से युक्त और हर्षप्रिय होता है।

लक्षण सहित कलानिधियोग फलः—

योगस्त्वेष कलानिधिर्गिरि सुते वृत्रारिवन्द्ये युते
सन्दृष्टे भृगुणा विदा किमु तयोः क्षेत्राश्रिते मन्मथी।
भेरीकम्बुकवाद्यसैन्धवचमूमत्तेभयुक्तो नृप–
मुख्यैर्वन्द्यपदोऽत्र सद्गुणयुतो वीतारिरुक्साध्वसः ॥ ५५ ॥

यदि द्वितीय वा पञ्चम में गुरु हो और वह बुध शुक्र से दृष्ट हो अथवा बुध शुक्र की राशि में हो तो यह 'कलानिधियोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य भेरी शङ्ख प्रभृति वादित्रों से युक्त एवं घोडे, सेना तथा मतवाले हाथियों से युक्त; श्रेष्ठ राजाओं से पूजित चरण वाला, उत्तम गुणों से युक्त; शत्रु, रोग तथा भय से रहित होता है।

लक्षण सहित अंशावतार योग फलः—

स्वोदग्रराशिं निचितेऽर्कभूते सकण्टके वासवपूज्यकव्योः।
केन्द्रस्थयोर्जन्यचरोदये स्यादंशावताराह्वय एव योगः ॥ ५६ ॥

उच्चराशि गत शनि केन्द्र में हो और गुरु शुक्र भी केन्द्र में हों एवं चरराशि के लग्न में जन्म हो तो यह 'अंशावतार योग' होता है।

अंशावतार योग फलः—

कामातुरस्तीर्थचरोऽत्र पुण्यश्लोकः कलाज्ञः श्रुतिशास्त्रवेत्ता ।
वेदान्तविन्मानवनायकश्रीधरो जितात्मा स तु कालकर्त्ता ॥ ५७ ॥

अंशावतार योग में उत्पन्न मनुष्य कामी, तीर्थाटन करने वाला, पुण्य श्लोक (सुन्दर चरित्र वाला), कला ओं का ज्ञाता; वेद, शास्त्र तथा वेदान्त जानने वाला, मनुष्यों का स्वामी, लक्ष्मीवान्, आत्मा जीतने वाला और कालकर्त्ता होता है।

हरि, हर तथा ब्रह्मयोग के लक्षणः—

द्रव्याधीशाद् व्ययवधगता निर्मला दारनाथाद्
ज्ञार्य्यग्लावो निपतनमनोमङ्गलस्थास्तनूपात् ।
कालिन्दीसूभृगुजकुटिला जन्मकाले जनस्य
खायाम्बास्था यदि हरिहरब्रह्मयोगाः स्युरेते ॥ ५८ ॥

द्वितीयेश से व्यय तथा अष्टम में शुभग्रह हों; सप्तमेश से चतुर्थ, नवम और अष्टमस्थान में गुरु, चन्द्र तथ बुध हों एवं लग्नेश से दशम, एकादश और चतुर्थ में रवि, शुक्र तथा ' मङ्गल हों तो ये ' हरिहर ब्रह्म योग होते है।

हरिहर ब्रह्म योग के फलः—

सम्पूर्णविद्यागमपारगामी स्यात्पुण्यकर्म्मा सकलोपकारी ।
जितारिसंघोऽखिलसौख्ययुक्तो मनोज्ञवाक् सत्यरतः सकामः ॥ ५९ ॥

हरिहर ब्रह्म योगो में उत्पन्न मनुष्य समस्त विद्या ओंका तथा वेद का पारगामी, पुण्यकर्म करने वाला, सबका उपकार करने वाला, शत्रु समूह को जीतने वाला, सम्पूर्ण सौख्य से युक्त, मनोहर वचन वाला, सत्य में लीन और कामयुक्त होता है।

लक्षण सहित रज्जू योग फलः—

रज्जूयोगः सर्वखेटाश्चरस्था द्रव्यप्राप्त्यै सञ्चरेन्ना विदेशे ।
चञ्चद्रूपाढ्यस्तथा दुष्टकृत्य उत्साही स्यात्क्रौर्य्यभागीर्ष्युरस्मिन् ॥ ६० ॥

यदि जन्य समय मे सबग्रह चर राशि में हों तो ' रज्जू योग ' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य द्रव्य प्राप्ति के लिए विदेश में भ्रमण करता है। और सुन्दर रूप से युक्त दुष्ट कर्म में उत्साह रखने वाला, क्रूर कर्म्म करने वाला, और ईर्षा वाला हाता है।

लक्षण सहित मुसल योगः—

सर्वे स्थिरस्था मुसलो नभोगा मामानयुक्तो बहुकृत्यसक्तः ।
सज्ज्ञानधान्यात्मभवः सहर्षः स्याद्राजतेजाः प्रभवो जनोऽस्मिन् ॥ ६१ ॥

यदि सबग्रह स्थिर राशि में होंतो ' मुसल योग होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य लक्ष्मी तथा मान से युक्त होता है । बहुत काम में आसक्त, ज्ञान धान्य तथा पुत्र से युक्त, एवं हर्ष से युक्त और राजतेज वाला होता है ।

लक्षण सहित नल योग फलः—

द्व्यङ्गोपयाताः सकला विहङ्गा नलोऽत्र जन्माऽखिलरत्नपूर्णः ।
व्यङ्गः स्थिरो भूपतिवल्लभः स्यात्कीर्त्या युतः पुण्यतनुः प्रवीणः ॥ ६२ ॥

यदि सब ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों तो ' नल योग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य समस्त रत्नों से परिपूर्ण, अङ्गभङ्ग वाला, स्थिरस्वभाव, राजप्रिय कीर्ति से युक्त पुण्य शरीर और चतुर होता है ।

लक्षण सहित माला योग फलः—

मालाख्ययोगोऽमलनाकगेहैः केन्द्रत्रयेऽस्मिन् सहितः सुहृद्भिः ।
सद्भूषणास्रक्सुतभोगयानैर्दोलाङ्गनाकेलिविलासशीलः ॥ ६३ ॥

यदि तीन केन्द्रो में शुभग्रह स्थित होंतो ' माला योग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य मित्र, उत्तम भूषण, माला पुत्र, भोग और वाहन से युक्त दोला तथा स्त्रियों की क्रीडा और विलासशील वाला होता है ।

लक्षण सहित व्याल योग फलः—

असद्विहङ्गैस्त्रिषु कण्टकेषु व्यालस्तदुत्थः स परान्नभोक्ता ।
सार्पोऽपकाराय सरुक् सदर्पोऽभद्रो दरिद्रः प्रतिघी सनिद्रः ॥ ६४ ॥

यदि तीनों केन्द्रों में पापग्रह होंतो ' व्याल योग ' होता है । इसयोग में उत्पन्न मनुष्य परान्न भोजन करने वाला, अपकार के लिए सर्प के समान, रोग तथा अभिमान से युक्त अमङ्गल दरिद्री, क्रोधी और निद्रालु होता है

लक्षण सहित गदायोग फलः—

योगो गदाख्यो यदि सन्निकृष्टकेन्द्रद्वयस्थैः सकलैः स गीते ।
वाद्ये कृती स्त्र्याभरणाढ्य उग्रो द्वेष्यर्थलोभी सधनश्च यज्वा ॥ ६५ ॥

यदि सबग्रह समीपवर्ती दो केन्द्रों में हों तो ' गदा योग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य गीत तथा वाद्य में चतुर, स्त्री तथा भूषण से युक्त, उग्र स्वभाव वैर करने वाला, अर्थ लाभ वाला, धन से युक्त और यज्ञ करने वाला होता है ।

लक्षण सहित शकट योग फलः—

खेटैर्घनास्तमयगैः शकटः समस्तै-
रस्मिन्भवः शकटवृत्तिभुगर्थहीनः ।

दीनः सरुग् विभवमित्रजनैर्वियुक्तः
प्रीतिं व्रजेत्कुवनितां समवाप्य मुक्त्वा ॥ ६६ ॥

यदि लग्न और सप्तम में समस्तग्रह हों तो ‘शकट योग, होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य शकट (गाडी) की आजीविका वाला, धन से हीन, दरिद्र, रोगी, ऐश्वर्य तथा मित्रजनों से हीन और निन्दित आचरण वाली स्त्री को पाकरके उस को छोडकर पुनः प्रीति को प्राप्त होता है।

लक्षण सहित विहङ्ग योग फलः——

पाथःखगैरखिलनाकचरैर्विहङ्ग-
योगो भवेदिह भवः कलिकृच्च दूतः।
नो योगसम्भवसुखेन युतोऽटनः स्या-
त्प्रीतिर्गमेऽस्य सततं द्रविणाल्पता च ॥ ६७ ॥

चतुर्थ और दशम में समस्त ग्रह हों तो ‘विहङ्गयोग’ होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य कलह करने वाला, दूत, योग जन्य सुख से रहित, भ्रमण करने वाला, नित्य यात्रा में प्रीति रखने वाला और निर्धन होता है।

लक्षण सहित शृङ्गाटक योग फलः——

सर्वग्रहैर्हरिजदीक्षणदारकस्थैः
शृङ्गाटकश्चिरसुखी समराभिलाषी।
स्यात्साहसी सुधिषणो जनितोऽत्र भूयो-
त्कर्षः समं प्रथमयाऽङ्गनया विरोधः ॥ ६८ ॥

यदि जन्म समय में लग्न, नवम और पञ्चम में सब ग्रह हों तो ‘शृङ्गाटकयोग’ होता है। इस योग उत्पन्न मनुष्य चिरसुखी, युद्ध की अभिलाषा वाला, साहसी, सुन्दर बुद्धि वाला, बहुत समृद्धि वाला, और प्रथम स्त्री के साथ वैर करने वाला होता है।

लक्षण सहित हल योग फलः——

लग्नान्यकोणगृहगैः सकलैर्मिथः स्या-
द्योगो हलोऽत्र भृतकः सखिबन्धुवर्गैः।
त्यक्तो जनो बहुलभुक् च कृषीवलः स्या-
दुद्वेगदुःखसहितः प्रभवो दरिद्रः ॥ ६९ ॥

लग्न जनित त्रिकोण को छोडकर परस्पर अन्य त्रिकोण में समस्त ग्रह हों तो ‘हलयोग’ होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य भृतक (दास), मित्र तथा बन्धुजनों से त्यक्त, उद्वेग (घबराट) तथा दुःख से युक्त और दरिद्र होता है।

लक्षण सहित वज्र योग फलः——

वज्राख्ययोग उदयास्तगतैः सुखटैः
क्रूरैः कबन्धकुलगैर्यदि जीवितस्य।

भागेऽन्तिमे प्रथमके सुखभाग्ययुक्तो
मध्ये सकोपमदनो विधिना विहीनः ॥ ७० ॥

लग्न और सप्तम में शुभ ग्रह हों एवं चतुर्थ और दशम में पाप ग्रह हों तो 'वज्र योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य जीवन के अन्तिम और प्रथम भाग में सुख तथा भाग्य से युक्त और मध्यावस्था में काम क्रोध से युक्त एवं भाग्य से हीन होता है।

लक्षण सहित यव योग फलः—

योगो यवोऽङ्गमदगर्मलिनैः खहृद्गै—
श्चारुग्रहैर्यदि भवो वयसोऽत्र मध्ये।
कल्याणयुक्स नियमव्रतयुग् वदान्यः
सद्रव्यसौख्यतनयः स्थिरमानसश्च ॥ ७१ ॥

यदि लग्न और सप्तम में पाप ग्रह हों एवं दशम और चतुर्थ में शुभ ग्रह हों तो 'यवयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य अवस्था के मध्यभाग में मङ्गल; नियम तथा व्रत से युक्त; अतिदानी; धन, सौख्य तथा पुत्र से युक्त एवं स्थिर चित्त वाला होता है।

लक्षण सहित कमल योग फलः—

मिश्रग्रहैः पुरपयोऽस्तमयाम्बरस्थै—
र्होराविदा निगदितः कमलो बलीयान्।
कान्तो गुणी विपुलकीर्त्तियुतश्चिरायु—
र्भूनायकः पृथुयशा बहुरुत्तमतः ॥ ७२ ॥

लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम में मिश्र (शुभाशुभ) ग्रह हों तो 'कमल योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य अतिबली, मनोहर शरीर, गुणवान्, विशाल कीर्त्ति से युक्त दीर्घायु, पृथ्वी का स्वामी, विशाल यश वाला और बहुत उत्तमता से युक्त होता है।

लक्षण सहित वापी योग फलः—

केन्द्रान्यगैः पुष्करगैः समग्रैर्वापी सतृप्तो नयसौख्यहृष्टः
तथा स्थिरद्रव्यसुखप्रयुक्तो धनार्जने शिक्षितशेमुषीभाक् ॥ ७३ ॥

केन्द्र के अतिरिक्त स्थान अर्थात् पणफर और आपोक्लिम में समस्त ग्रह हों तो 'वापी योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य अतितृप्ति, नीति के सौख्य से प्रसन्न, स्थिर द्रव्य और सुख से युक्त एवं धनोपार्जन में शिक्षित बुद्धि वाला होता है।

लक्षण सहित यूप योग फलः—

लग्नाच्चतुर्भवनगैर्निखिलैः खगेन्द्रै—
र्यूपो बुधैः समुदितो भव आत्मवेत्ता।

त्यागान्वितोऽत्र नियमव्रतमंत्रयुक्त
इज्यारतः स सुखसत्ययुतो विशिष्टः ॥ ७४ ॥

लग्नादि चार स्थान में सब ग्रह हों तो 'यूपयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य आत्मज्ञानी, त्यागी, नियम, व्रत तथा मंत्र से युक्त; पूजा में लीन; सुख तथा सत्य से युक्त एवं उत्तम पुरुष होता है।

लक्षणसहितशरयोगफलः—

तुर्य्याचतुर्गृहगतैः शरयोग उक्तो
नो साधुशील इषुकृत्पलभुक् च हिंस्रः।
स्यादस्युबन्धनकरो मृगसाधनस्य
सेवी प्रसूतिजयुतश्च कुशिल्पकर्त्ता ॥ ७५ ॥

चतुर्थ स्थानादि चार स्थानों में समस्त ग्रह हों तो 'शरयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य दुष्ट स्वभाव वाला, बाण बनाने वाला, मांसाहारी, क्रूरस्वभाव, चोरों को बन्धन करने वाला, मृगसाधन का सेवन करने वाला, दुःख से युक्त और निन्दित कर्म करने वाला होता है।

लक्षणसहितशक्तियोगफलः—

शक्तिः स्मृतः स्मरचतुर्गृहगैर्नभोगैः
सङ्ग्रामवादकुशलः सुभगः स्थिरश्च।
स्याज्जातकोऽर्थरहितो विकलश्च दुःखी
नीचोऽलसो बलवियुग् विपुलायुरस्य ॥ ७६ ॥

सप्तमादि चार स्थानों में सब ग्रह हों तो 'शक्तियोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य सङ्ग्रामवाद में चतुर, ऐश्वर्य्यवान्, स्थिरहृदय, निर्धन, विकलाङ्ग, दुःखित, नीच, आलसी, निर्बल और दीर्घायु वाला होता है।

लक्षणसहितदण्डयोगफलः—

सम्पूर्णपुष्करचरैः खचतुर्गृहस्थै—
र्दण्डो भवेद्गतधनो विषमो जनुष्मान्।
वीतत्रपो विसुतदारहितः सदुःखः
क्रूरो विधीभृतकवैरकरोऽतिनीचः ॥ ७७ ॥

दशमादि चारस्थानों में सब ग्रह हों तो 'दण्डयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य निर्धन, विषमस्वभाव, लज्जाहीन, स्त्री तथा मित्ररहित, दुःखयुक्त, क्रूरकर्मा, बुद्धिहीन, भर्तृक से वैर करने वाला और अतिनीच होता है।

लक्षणसहितनौकायोगफलः—

नौयोग उद्गमगृहाद्विहगैः समस्तैः
सप्तर्क्षगैः सविभवः सलिलोपजीवी ।
हृष्टो बली च कृपणः प्रचुरप्रयास
युक्तश्चलो विदितकीर्त्तिरिहापि लुब्धः ॥ ७८ ॥

लग्नादि सात स्थानों में समस्त ग्रह हों तो 'नौकायोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य ऐश्वर्यशाली, जल से जीविका वाला, प्रसन्नचित्त, बलवान्, कृपणस्वभाव, बहुत पराक्रम वाला, प्रसिद्ध और कीर्ति से युक्त होने पर भी लोभी होता है।

लक्षणसहितकूटयोगफलः—

सप्तर्क्षस्थैः सौख्यतः सर्वखेटैः कूटो योगोऽस्मिन्कुभृद्दुर्गवासी ।
मिथ्याभाषी निर्धनो बन्धभाक् च धूर्त्तः क्रूरो मल्लकः स्याच्छठो ना ॥ ७९ ॥

चतुर्थादि सात स्थानों में सब ग्रह हों तो 'कूटयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य राजा, दुर्ग में वास करने वाला, झूट बोलने वाला, निर्धन, बन्धन वाला, धूर्त्त, क्रूर, मल्ल और कुटिल स्वभाव वाला होता है।

लक्षणसहितछत्रयोगफलः—

कामात्सप्तर्क्षस्थितैश्छत्रनामा योगः प्राज्ञो दीर्घजीवी दयालुः ।
आद्ये भागे चान्तिमे सौख्ययुक्तो दाता भूभृद्वल्लभश्चातपत्री ॥ ८० ॥

सप्तमादि सातस्थानों में सब ग्रह हों तो 'छत्रयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य पण्डित, दीर्घायु, दयावान्, आद्य तथा अन्तिम अवस्था में सौख्ययुक्त, दानी, राजप्रिय और छत्रवाला होता है।

लक्षणसहितकार्मुकयोगफलः—

सप्तागारस्थैः खतः कार्मुकः स्याद्योगश्चौरो गुप्तपापोऽतिगर्वः ।
मध्ये भागे भाग्यहीनो मृषा वाक् कोदण्डास्त्रः पर्वतारण्यचारी ॥ ८१ ॥

दशमादि सात स्थानों में सब ग्रह हों तो 'कार्मुकयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य चोर, गुप्त पापवाला, अति गर्व वाला, मध्य अवस्था में भाग्य से हीन, मिथ्याभाषी, धनुष अस्त्रवाला, पर्वत और वनचारी होता है।

लक्षणसहितअर्द्धचन्द्रयोगफलः—

केन्द्रान्यभावाद्यदि सप्तमस्थैर्योगोऽर्द्धचन्द्रः सुभगश्चमूपः ।
सुवर्णभूषामणिभिः समेतो भूभृत्प्रियः कान्तवपुर्बलिष्ठः ॥ ८२ ॥

प्रत्येक केन्द्र के अन्य स्थान से अर्थात् केन्द्र को छोडकर पणफर वा आपोक्लिम से आरम्भ होकर यदि सात स्थानों में सब ग्रह हों तो 'अर्द्धचन्द्रयोग' होता है। यह योग आठ प्रकार का होता है। अर्थात् चारों पणफरों से

और चारों आपोक्लिमों से आरम्भ होकर सब ग्रहक्रम से सात स्थानों में हों तो उक्त योग होते हैं। इस योग में उत्पन्न मनुष्य ऐश्वर्यशाली, सेनापति, सुवर्ण, भूषण और मणिसे युक्त; राजप्रिय, मनोहर शरीर और अत्यन्त बली होता है।

लक्षणसहितचक्रयोगफलः—

विलग्नतो भान्तरितैश्च षड्गृहयातैः समग्रैर्यदि चक्रसञ्ज्ञितः।
श्रीमान् प्रतापी सुयशा नृपो मुहुः स्यात्पायनाढ्यो नरनाथवन्दितः॥ ८३॥

लग्न से एक स्थान छोडकर छः स्थानों में सब ग्रह हों अर्थात् लग्न तृतीय, पञ्चम, सप्तम, नवम और एकादश इन छः स्थानों में सब ग्रह हों तो 'चक्रयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य लक्ष्मीवाला, प्रतापी, सुयशवाला, राजा और वारंवार पायन (नजराने) से युक्त एवं राजाओं से सम्मानित होता है।

लक्षणसहितसमुद्रयोगफलः—

षड्गेहगैरेकगृहान्तरेण द्रव्यात्खगैस्तोयधियोग एषः।
दानी दयालुर्नरप्राप्तसौख्यो धीरोऽत्र धन्यश्च मनोज्ञशीलः॥ ८४॥

धनस्थान से एकस्थान के अन्तराल से यदि छः स्थानों में अर्थात् द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम और द्वादश इन स्थानों में सब ग्रह हों तो यह 'समुद्रयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य दाता, दयावान्, राजा से सौख्य प्राप्त करने वाला, पण्डित, भाग्यवान् और सुन्दर स्वभाववाला होता है।

लक्षणसहितगोलयोगफलः—

एकर्क्षगैः सर्वखगैः स गोलस्तस्मिन्भवो ना मलिनो बलाढ्यः।
दीनोऽर्थहीनः सततं च विद्याज्ञामानहीनो बहुदुःखतप्तः॥ ८५॥

यदि सब रव्यादि ग्रह एकस्थान में हों तो 'गोलयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य मलिन, बल से युक्त दरिद्र, नित्य धन से रहित, विद्या, आज्ञा तथा मान से हीन और बहुत दुःख से सन्तप्त होता है

लक्षणसहितयुगयोगफलः—

योगो युगः स्याद् भवनद्वयाश्रितैः सर्वैरिहोत्थो मनुजो बहिष्कृतः।
पाषण्डभाग् ह्रीधनमाननन्दनहीनो वियुक्तः सुकृतेन सर्वदा॥ ८६॥

यदि सब रव्यादि ग्रह दो स्थानों में हो तो 'युगयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य जाति से बहिष्कृत; पाषण्ड वाला; लज्जा, धन, मान और पुत्र से हीन एवं नित्य पुण्य से रहित होता है।

लक्षणसहितशूलयोगफलः—

खगैः समस्तैः सदनत्रयस्थितैः शूलाभिधोऽस्मिन्समरे स तत्परः।
वादे तथा स्याद् हृदि निष्ठुरोऽधनः क्रूरः सुशूरो जनशूलसदृशः॥ ८७॥

यदि सब रव्यादि ग्रह तीन स्थानों में हों तो ' शूलयोग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य सङ्ग्राम तथा विवाद में तत्पर, कठोर हृदयवाला, निर्धन, क्रूर, शूरवीर और लोगों में शूल के समान होता है ।

लक्षणसहितकेदारयोगफल:—

चतुर्षु गेहष्वखिलद्युचारिभिः केदारयोगः सुभगः कृषीवलः ।
बहूपयोज्यः स चलप्रभाववान् स्यात्सत्ययुक्तो धनवान्विनीतकः ॥ ८८ ॥

यदि सब रव्यादि ग्रह चार स्थानों में हों तो ' केदारयोग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य ऐश्वर्यवान्, किसान, बहुत योग्य, चञ्चल प्रभाव वाला धनवान्, नम्र और सत्य से युक्त होता है ।

लक्षणसहितपाशयोगफल:—

पञ्चर्क्षगैर्नाकचरैरनूनकैः पाशः स्मृतो बन्धनभाग् वने रतः ।
दीनस्वरूपो ह्यपकारतत्परः स्याद् भूरितल्पः कपटी स्वनर्थयुक् ॥ ८९ ॥

सब रव्यादि ग्रह पाँच स्थान में हों तो ' पाशयोग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य बन्धन वाला, बन में वास करने वाला, दरिद्र के तुल्य स्वरूप वाला, अपकार में लीन, बहुत शय्यावाला, कपटी और अत्यनर्थ से युक्त होता है ।

लक्षणसहितदामिनीयोगफल:—

स दामिनीयोग उदीरितः षड्भस्थैः समस्तैः पशुवृन्दयुक्तः ।
प्रभूतपुत्रैर्मणिभिः समृद्धो धीरश्च विद्वानुपकारकर्त्ता ॥ ९० ॥

सब रव्यादि ग्रह छः स्थानों में हों तो पशुओं के समूह से युक्त, बहुत पुत्र और मणियों से समृद्ध, धैर्यवान्, विद्वान् और उपकार करने वाला होता है ।

लक्षणसहितवीणायोगफल:—

वीणाभिधः सप्तगृहोपगैर्यदि सम्पूर्णखेटैरिह वित्तवान् सुखी ।
नेता प्रवीणो बहुभृत्यगायननृत्यैः समेतश्च स वाद्यवल्लभः ॥ ९१ ॥

सब रव्यादि ग्रह सात स्थानों में हों तो ' वीणायोग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य धनवान्, सुखी, नेता, निपुण, बहुत दास, गायन तथा नृत्य से युक्त वाद्यप्रिय होता है ।

लक्षणसहितसिंहासनयोगफल:—

आकाशवासैः सकलैर्निधाननिमीलनाराद्यवसानयातैः ।
वदन्ति सिंहासननामयोगं सिंहासनं तत्र विशेन्नृपस्य ॥ ९२ ॥

द्वितीय, अष्टम, षष्ठ और व्यय में सब ग्रह हों तो उस को '.सिंहासनयोग ' कहते है । उस में उत्पन्न मनुष्य राजसिंहासन में बैठता है ।

लक्षणसहितध्वजयोगफलः—

मृत्युस्थलस्था मलिना नभोगा अनूनका वीतमला वपुःस्थाः।
ध्वजाभिधो योग उदाहृतोऽत्र जातः पुमान्मानवनायकः स्यात् ॥ ९३ ॥

अष्टम स्थान में सब पाप ग्रह हों और लग्न में शुभ ग्रह हों तो 'ध्वजयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य मनुष्यों का नायक होता है।

लक्षणसहितहंसयोगफलः—

भवन्ति चेन्नाकचराः समग्रा यदा मनोजोदयकोणभस्थाः।
स हंसयोगो मुनिभिः प्रदिष्टः स्यात्पालकः स्वीयकुलस्य जातः ॥९४॥

यदि सप्तम, लग्न और त्रिकोण में समस्त ग्रह हों तो वह 'हंसयोग' होता है। इस प्रकार मुनियों ने कहा है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य अपने वंश का पालन करने वाला होता है।

मतान्तर से लक्षणसहित हंसयोगफलः—

जूके हयेऽजे हरिणे घटेऽलौ स्युः सर्वखेटा उत हंसयोगः।
स्याच्चेतनोऽसौ सकलैः प्रपूर्णो नरेशपूज्यो नरनाथतुल्यः ॥ ९५ ॥

यदि धनु, तुला, मेष, कुम्भ, मकर और वृश्चिक में सब ग्रह हों तो प्रकारान्तर से 'हंसयोग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य समस्त पदार्थों से परिपूर्ण, राजा से सम्मानित और राजा के तुल्य होता है।

लक्षणसहितराजहंसयोगः—

हरौ तुलायां कलशे हयेऽजे वीणाधरेऽनूनकनाकगेहाः।
स राजहंसः कथितः पुराणै राज्यप्रतिष्ठासुखसंयुतोऽस्मिन् ॥ ९६ ॥

यदि सिंह, तुला, कुम्भ, धनु, मेष और मिथुन में सब ग्रह हों तो प्राचीन महर्षियों ने वह 'राजहंसयोग' कहा है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य राज्य, प्रतिष्ठा और सुख से युक्त होता है।

लक्षणसहितकारिकायोगफलः—

एकादशे वाऽऽस्पदमन्दिरेऽथवा नारीनिकेते निखिला नभश्चराः।
स कारिकायोग इतीरितो नृपो न संशयो राजकुलोद्भवो नृपः ॥ ९७ ॥

एकादश वा दशम वा सप्तम में समस्त ग्रह हों तो वह 'कारिकायोग' होता है। इस योग में उत्पन्न पुरुष राजा और राज कुल में उत्पन्न पुरुष तो अवश्य राजा होता है। इस में संशय नहीं करना चाहिए।

लक्षणसहितएकावलीयोगफलः—

निःशेषखेटाः पतिताः क्रमाद्यदा विलग्नगेहात्किमुतान्यगेहतः।
एकावली तत्र भवः कलेवरी भवेन्महाराज इतीरितं बुधैः ॥ ९८ ॥

लग्न से अथवा अन्यस्थान से यदि सब ग्रह क्रम से पड़े हों तो ' एकावलीयोग होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य महाराज होता है । इस प्रकार पण्डितजनों ने कहा है ।

लक्षणसहितचतुःसागरयोगफलः—

चतुर्षु केन्द्रेषु भवन्तु सौम्यासौम्याश्चतुःसागरनामयोगः ।
राज्यप्रदोऽसौ धनदोऽथ जूके कर्के मृगेऽजे सकलग्रहेन्द्रैः ॥ ९९ ॥
योगस्तथा जन्मनि सर्वरिष्टनिषूदनोऽयं बहुरत्नयुक्तः ।
मतङ्गजद्रव्यहयैः प्रपूर्णो विश्वम्भरायाः पतिरेष जन्तुः ॥ १०० ॥
क्रूराश्चतुर्ष्वेव चतुष्टयेषु विद्यान्मनुष्यं वसुधाधिनाथम् ।
तत्राश्रिताश्चेद्विमला विहङ्गास्तदा भवेत्सिन्धुसुताधिनाथः ॥ १०१ ॥

यदि चारों केन्द्रों में शुभ और पाप ग्रह स्थित हों तो ' चतुःसागरयोग ' होता है । यह योग राज्य और धन देने वाला होता है । तुला, कर्क, मकर और मेष में सब ग्रह हों तो भी ' चतुःसागरयोग ' होता है । यह योग सर्व अरिष्टों को दूर करने वाला और इस योग में उत्पन्न मनुष्य बहुत रत्नों से युक्त, हाथि, धन तथा घोड़ों से परिपूर्ण एवं भूमिका स्वामी होता है । यदि चारों केन्द्रों में पाप ग्रह हों तो मनुष्य को पृथ्वी का स्वामी करते हैं । एवं चारों केन्द्रों में शुभ ग्रह हों तो मनुष्य लक्ष्मीपति (धनाढ्य) होता है ।

लक्षणसहितअमरयोगफलः—

केन्द्रत्रिकोणभवने क्रियसिंहगेऽर्के
गोकर्कगे व्ययनिमीलनभे भनाथे ।
तौ चेत्क्रमेण जनने गुरुभार्गवाभ्यां
संवीक्षितौ सकलरिष्टहरोऽमराख्यः ॥ १०२ ॥

यदि ' सूर्य ' सिंह वा मेष राशि में स्थित होकर केन्द्र वा त्रिकोण में हो और गुरु से दृष्ट हो, एवं ' चन्द्रमा ' वृष वा कर्क राशि में स्थित होकर अष्टम वा व्ययभाव में हो और शुक्र से दृष्ट हो तो ' अमरयोग ' होता है। यह समस्त अरिष्ट को हरण करने वाला होता है ।

लक्षणसहितचापयोगफलः—

कुम्भे कवौ तीव्रविलोचनेऽजे स्वरर्चितांघ्रौ स्वगृहं प्रयाते ।
चापाभिधानं कथयन्ति योगं महानुभावाः प्रभवोऽत्र राजा ॥ १०३ ॥

कुम्भ में शुक्र, मेष में मङ्गल और स्वराशि (९।१२) में गुरु हो तो ' चापयोग ' होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य राजा होता है ।

लक्षणसहितदण्डयोगफलः—

कृत्स्नाभ्रगेहा यमकर्किकन्यापाठीनकोदण्डभमाश्रिताश्चेत् ।
दण्डाभिधं योगमुदीरयन्ति स्यादेष राजास्पदकारकाख्यः ॥ १०४ ॥

एकातपत्रवान्भूरि पुण्यभाक् सिंहविक्रमः ।
तेजस्वी गुरुपात्राद्यैः सेव्यमानो धराधिपः ॥ १०५ ॥

मिथुन, कर्क, कन्या, मीन और धनू राशि में समस्त ग्रह हों तो उस को ' दण्डयोग ' कहते हैं । यह योग राजास्पदकारक होता है । इस योग में उत्पन्न मनुष्य एकछत्रधारी, बहुत पुण्य वाला; सिंह के समान पराक्रम वाला, तेजस्वी, गुरु तथा सज्जनादिसे सेवनीय और पृथ्वी का स्वामी होता है ।

प्रकारान्तर से लक्षणसहितशकटयोगफलः—

मार्त्तण्डमुख्याः खचरा नितान्तं कलेवरानङ्गनिकेतनस्थाः ।
प्रोक्तो बुधेन्द्रैः शकटाख्ययोगोऽनोवृत्तिरत्र प्रभवस्य पुंसः ॥ १०६ ॥

लग्न और सप्तम में समस्त ग्रह हों तो पण्डितों ने यह ' शकटयोग ' कहा है । इस योग में उत्पन्न पुरुष की शकट (गाडी) की वृत्ति होती है ।

लक्षणसहितनन्दायोगफलः—

द्वौ द्वौ विहङ्गौ भवनत्रयाचितौ क्रमात्तथैकैकखगास्त्रिषु स्थितः ।
नन्दाह्वयं योगमुशन्ति कोविदा अस्मिंश्चिरायुः सुखसंयुतो भवः ॥ १०७ ॥

यदि क्रम से तीन स्थानों में दो दो ग्रह स्थित हों और तीन स्थानों में एक एक ग्रह स्थित हों तो ' नन्दायोग ' होता है । इस में उत्पन्न योग मनुष्य दीर्घायु और सुख से युक्त होता है ।

लक्षणसहितदातृयोगफलः—

चक्षा विलग्ने भुवने मघोत्थो ज्ञोऽस्ते नवार्चिर्दिवि कण्टकेऽमी ।
तदा नृणां सत्फलदा भवन्ति सर्वार्थदातार इति प्रवेद्यम् ॥ १०८ ॥

लग्न, में गुरु, चतुर्थ में शुक्र सप्तम में बुध और दशम केन्द्र में मङ्गल हो तो यह ' दातृयोग ' होता है । उक्त स्थानोंमें उक्त ग्रह शुभ फल तथा सब प्रकार के अर्थ को देते हैं ।

लक्षणसहितचिल्हिपुच्छयोगफलः—

योगेषु सिंहासनहंसयोश्च चतुःसमुद्रे मरुति ध्वजे च ।
दण्डाभिधाने यदि चिल्हिपुच्छो महाफलं स्यादिति वेदितव्यम् ॥ १०९ ॥

सिंहासन, हंस, चतुःसागर, मरुत्, ध्वज और दण्ड इन योगों में यदि चिल्हिपुच्छ हो तो महाफल होता है । इस प्रकार पण्डितजनों ने जानना चाहिए ।

सिंहासनाख्ये डमरौ च योगे तुलाजकुम्भीरपुरेऽत्र पुच्छः ।
चेद्राजहंसे कलशैणकामकुलीरलग्ने सति चिल्हिपुच्छः ॥ ११० ॥

सिंहासन और डमरुयोग में तुला, मेष वा मकर लग्न हो तो 'चिल्हिपुच्छयोग' होता है। एवं राजहंसयोग में कुम्भ मकर मिथुन वा कर्क लग्न हो तो 'चिल्हिपुच्छ' होता है।

विसारयोषावृषवृश्चिकोदये पुच्छश्चतुःसागरनामयोगके।
पुच्छो ध्वजे कर्कमृगोदये फलं प्रोक्तं विधत्ते द्विगुणं सपुच्छकः॥ १११॥

चतुःसागरयोग में मीन, कन्या, वृष वा वृश्चिक लग्न हो तो 'चिल्हिपुच्छ' होता है। एवं ध्वजयोग में कर्क वा मकर लग्न हो तो 'चिल्हिपुच्छ' होता है। यदि उक्त योग चिल्हिपुच्छसहित हो तो द्विगुणित फल को करता है।

लालाटियोगलक्षणः—

निशाकरे नैधनगे प्रभापतिकाव्यार्कजैः कर्कमुपागतैर्यदा।
निःशेषकेमद्रुमयोगके तदा लालाटिको योग उदाहृतो बुधैः॥ ११२॥

अष्टम स्थान में चन्द्रमा और कर्क राशि में सूर्य, शुक्र तथा शनि ये तीनों हों एवं संपूर्ण केमदुम योग होने पर भी पाण्डितजनों ने यह 'लालाटियोग' कहा है।

लालाटियोगफलः—

लालाटियोगो यदि जन्मकाल आसम्भवात्कारकखेचरेन्द्रैः।
ख्यातः सुशिल्पी मुशलाकृतिर्ना युक्तः प्रभूतात्मजसम्पदाद्यैः॥ ११३॥

यदि जन्मसमय में लालाटियोग हो तो कारकग्रहों के कारण वह मनुष्य जन्मकाल से लेकर विख्यात उत्तम शिल्प वाला, मुशल के समान आकृति वाला एवं बहुत पुत्र तथा सम्पदाओं से युक्त होता है।

लक्षणसहितदोलायोगफलः—

धनुर्द्धरे नीरनिकेतनेऽजे राशित्रयेऽखण्डखगा यदा स्युः।
योगः स दोलाख्य उदीर्य्यते ज्ञै राज्यस्य दाता मनुसम्भवानाम्॥ ११४॥

धनु, मीन और मेष इन तीन राशियों में समस्त ग्रह हो तो "दोलायोग" होता है। यह योग मनुष्यों को राज्य का देनेवाला होता है।

लक्षणसहितबुधादित्ययोगफलः—

यदा बुधस्तिग्ममरीचिना सह योगं विदध्यात्पुरुषस्य जन्मनि।
योगो बुधादित्य इहार्थकिङ्करधर्म्मात्मजाढ्यो विबुधो जितेन्द्रियः॥ ११५॥

मनुष्य के जन्मसमय में यदि 'बुध' सूर्य के साथ योग करें तो 'बुधादित्य' योग होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य धन, दास धर्म और पुत्र से युक्त एवं पण्डित और जितेन्द्रिय होता है।

लक्षणसहितजल (दरिद्र) योगफलः—

केन्द्रेऽर्के कुशले शनीनशशिभिः शेषैः खगैर्निर्बले-
राचार्य्यैर्जलसञ्ज्ञको निगदितो योगोऽतिदुःखी भवेत्।

विचैश्वर्यवियुग् जलप्रकृतियुक् सोऽन्यान्नकांक्षी सदा
विज्ञानेन विवर्जितो जलभवो लुब्धो नरश्चञ्चलः ॥ ११६ ॥

केन्द्र, द्वादश और नवम में शनि, सूर्य तथा चन्द्रमा हों एवं शेष ग्रह निर्बल हों तो पण्डितजनों ने 'जल योग' कहा है इस योग में उत्पन्न मनुष्य अतिदुःखित; धन तथा ऐश्वर्य से हीन; जलप्रकृति से युक्त; पराये अन्न का आकांक्षी; विज्ञान रहित; लोभी और चञ्चल होता है।

लक्षण सहित श्रीछत्र योग फलः——

कलत्रकल्पव्ययकोशगेहगैर्यदाऽखिलैः पत्ररथायनायनैः।
प्राग्जन्मपुण्यादिह देहधारिणां श्रीच्छत्रयोगो जनने भवेत्तदा ॥ ११७ ॥

जब जन्म समय में सप्तम, लग्न, द्वादश और द्वितीय स्थान में समस्त ग्रह हों तो मनुष्यों के पूर्व जन्म के पुण्य से यह 'श्रीछत्र योग' होता है।

प्रकारान्तर से लक्षण सहित सिंहासन योग फलः——

विश्चे खगा अलिवृषेत्थसिकन्यकासु
यद्वा नृयुग्महरिकुम्भहयेष्वशेषाः।
सिंहासनोऽत्र जनितो मनुजाधिराजो
भूमण्डले तुरगकुञ्जरराजिरूढः ॥ ११८ ॥

वृश्चिक, वृष, मीन और कन्या इन राशियों में समस्त ग्रह हों अथवा मिथुन, सिंह, कुम्भ और धनु इन राशियों में समस्त ग्रह हों तो 'सिंहासन योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य भूमण्डल में मनुष्यों का स्वामी अर्थात् राजा एवं घोड़े और हाथियों की पंक्तियों में आरूढ होनेवाला होता है।

लक्षण सहित चतुश्चक्र योग फलः——

घटरुग्यन्त्ययुग्मालिसिंहाश्विमेषे समाजः खगानां जनौ मानवस्य।
चतुश्चक्रयोगो महीपो जनुष्मान् भवेत्संयुतः सौख्यभोगादिभिः सः ॥ ११९ ॥

मनुष्य के जन्म समय में कुम्भ, कन्या, मीन, मिथुन, वृश्चिक, सिंह, धनु और मेष में समस्त ग्रह हों तो 'चतुश्चक्र योग' होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य सौख्य तथा भोगादियों से युक्त राजा होता है।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते योगप्रकरणं सप्तत्रिंशमवसितम्।

अथ

जन्मपत्र्यादि लेखनानुक्रमप्रकरणं प्रारभ्यते।

तत्रादौ मङ्गलाचरणान्याह—

देवक्या देहजातो व्रजजनरमणो गोपिकास्वान्तसेव्यो
गोपानां बालवृन्दैः सह विपिनलतामण्डपे केलिकर्त्ता।
यो जिष्णोर्दर्पहारी सकलसुरगणैः सेवितौ यस्य पादौ
श्रीकृष्णो यादवेन्द्रः स जयतु सततं गोकुलानन्ददाता ॥ १ ॥

व्रजविपिनविहारी राधिकाराधनीयः
सुरभिशिशुसमूहैश्चावृतो गोपबालैः।
असुरनिवहहन्ता देवकीनन्दनो यो
जयतु जलदवर्णो गोपरूपो हरिः सः ॥ २ ॥

गोभिर्युतो गोपगणप्रपन्नो गोलोकपो गोकुलभूविहारी।
गोपालहृन्मोदकरोऽभ्रदेहो गोपालरूपो जयति व्रजेशः ॥ ३ ॥

देवकीनन्दनो रुक्मिणीवल्लभो यादवानां पतिर्ब्रह्मगो मोहहा।
श्रीधरः श्रीपतिः कृष्णचन्द्राभिधः पात्रिकैषोत्तमा यस्य तं रक्षतु ॥ ४ ॥

जन्मनस्तिथिवारर्क्षयोगाख्याः करणाभिधः।
यस्यैषा पत्रिकारम्या सन्तु तन्मङ्गलाय ते ॥ ५ ॥

स्वस्ति श्रीमन्नृपतिविक्रमादित्यराज्यादतीतसँवत्सरे...तथा तज्जयिश्रीमच्छालिवाहनीय शके...अयने...ऋतौ ...मासे (सि)...पक्षे (दले) तिथौ...वारे (वासरे) घट्यादयः...नक्षत्रे (भे) घट्यादयः...जन्मनि (जनुषि जनौ जनने वा)...नक्षत्र (तद्) भुक्तघट्यादयः...सर्वर्क्षघट्यादयः...दशासाधनायतत्स्पष्टभोग्यघट्यादयः...योगे (युतौ) घट्यादयः... करणे घट्यादयः . केतकीय (ग्रहलाघवीय) दिवागणः...तदीयं चक्रम् ..तदीयायनलवाः...दिनमानम्... दिनदलम्...रात्रिमानम्...रात्रिदलम्...निशीथ (मिश्र) मानम्...अहोरात्रम् ६०।० पूर्व (पश्चिम) नतम्...एवं पञ्चाङ्ग शुद्धौ सत्यां सौरमानेन...अर्कसंक्रमात् ..प्रमितगतेऽहनि...श्रीमन्मार्त्तण्डमण्डलार्द्धोदयादिष्टेऽनेहसि घट्यः...पलानि एतत्समये...उदये तस्य राश्यादौ । । । गृहे...होरायाम्...द्रेष्काणे...सप्तांशे....नवांशे...दशमांशे...द्वादशांशे ...षोडशांशे...त्रिंशांशे,..षष्ठ्यंशे...श्रीमद्...देशे (नगरे नगर्यां पुरे पुरि तीर्थे क्षेत्रे वा)...मण्डले...ग्रामे अमुक (विप्र, क्षत्रिय वैश्य शूद्र) वंशावंसे (अन्वये कुले वा)... उपाह्वे श्रीयुत...अमुक (शर्म्म, वर्म्म, गुप्त, दास) आत्मज श्रीयुत...अमुक (शर्म्म, वर्म्म, गुप्त दास) धर्म्मपत्नी (गृहिणी) (प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ) पञ्चम षष्ठ, सप्तमप्रभृति) पुत्र (कन्या) रत्नमजीजनत्, अथवा अमुक धर्म्मपत्नीकनककुक्षौ (पुत्र) कन्या रत्नमजनि

(प्रासूत अजनिष्ट अभवत् आसीत् अभूत् बभूव) शतपदचक्रानुसारेण...अमुकभ (प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ) पादे (अंघ्रौ चरणे वा) जातःवात्...जन्मनामेति । श्रीयुत अमुक प्रसिद्धनामेति । एताभ्यां नामद्वयाभ्यामलङ्कृतोऽसौ द्विजाशीर्भिश्चिरञ्जीयात् । अस्य...राशिः...स्वामी...वर्गः..वर्णः...योनिः...गणः...नाडी । एतत्सर्वं विवाहादिषु चिन्तनीयमिति ।

अथ तात्कालिका मध्यमग्रहाः सन्ति । अथ तात्कालिकाः स्पष्टाः खगाः सजवाः सन्ति ।

'अथ सप्रयोजन स्पष्टग्रहफलमाह'

विना खगैः स्पष्टतरैर्दशानां भुक्त्यादिकानां च फलं बुधेन्द्राः ।
शुभाशुभं ये कथयन्ति नृणां मध्ये सदा यान्त्युपहास्यतां ते ॥ १ ॥

राज्यप्रदश्चेदुदयी नभश्चरः सदैव देशान्तरदोऽनृजुग्रहः ।
मार्गी तथाऽऽरोग्यकरः समीरितः स्यादस्तयातो धनमानहानिदः ॥ २ ॥

अथ निसर्गमैत्री चक्रम्' । 'अथ तत्कालमैत्रीचक्रम्' । 'अथ पञ्चधामैत्रीयम्' ।

अथ सप्रयोजनमैत्रीफलमाह'

मैत्रीं विनाऽप्यम्बरचारिणां बुधैर्दशादिकानां शुभमध्यहीनता ।
न शक्यते ज्ञातुमतोऽभ्रगामिनां मैत्रीः प्रवक्ष्ये त्रिविधाः परिस्फुटाः ॥ १ ॥

मित्राधिमित्रालयगो विहङ्गः पुत्रार्थलाभं प्रकरोति नित्यम् ।
स्वभे स्वतुङ्गे मनुजेट्पदाप्तिं मूलत्रिकोणर्क्षगतोऽङ्गनाप्तिम् ॥ २ ॥

दायेऽधिशत्रोर्वधबन्धनं स्यादभीष्टभे मित्रगृहे स्वगेहे ।
स्वोच्चे समे वा शुभदा अनिष्टप्रदाः खगा नीचसपत्नभस्थाः ॥ ३ ॥

सपत्ननीचर्क्षलवोपगानां दाये कलत्रात्मजबन्धुनाशः ।
ऐश्वर्य्यहानिर्नृपतित्वभङ्गो भ्रमव्यथाबन्धनपूर्वकं च ॥ ४ ॥

स्वभोच्चमित्रर्क्षगताः स्वदाये मनोरथस्त्रीतनयार्थलाभम् ।
कुर्य्युस्त्रिकस्थाः खलमध्यगाः स्यास्तायुःस्थिता दुःखकराः स्वपाके ॥ ५ ॥

'अथ धूमाद्यप्रकाशाख्या उपखगाः स्पष्टाः सन्ति' । 'अथ चरकारकचक्रमिदम्' । 'अथ कारकांशकुण्डलीयम्' 'अथारूढकुण्डलीयम्' 'अथोपपदकुण्डलियम्' । 'अथ शयनाद्यवस्थाचक्रम्' । 'अथ दृष्टयाद्यवस्थाचक्रम्' । 'अथ दीप्ताद्यवस्थाचक्रम्' । अथ लज्जिताद्यवस्थाचक्रम्' । अथ जाग्रदाद्यवस्थाचक्रम्' । अथ बालाद्यवस्थाचक्रम्' 'अथ प्रवासाद्यवस्थाचक्रम्' ।

'अथ गृहाद्याः षड् (सप्त दश षोडश वा) वर्गाः सन्ति' ।

'अथ सप्तवर्गेभ्यः किं विचार्य्यं तदाह':—

चिन्त्यं विलग्ने निजदेहसौख्यं होरातनूतः सुखसम्पदाद्यम् ।
द्रेष्काणलग्नान्निजबन्धुसौख्यं विचिन्तयेत्सन्ततिमद्रिभागे ॥ १ ॥

कुर्य्यान्नवांशे गृहिणीविचारं मातुः पितुः सौख्यमिनांशलग्नात् ।
त्रिंशांशकाङ्गात्फलमिष्टसञ्ज्ञं वाच्यं समस्तं तनुतोऽपि चिन्त्यम् ॥ २ ॥

'अथ रव्यादीनां ग्रहाणां राशिगतफलानि लेख्यानि'। 'ततः सुनफादीन् योगान् सञ्चिन्त्य तत्फलानि लेख्यानि'। 'ततो नाभसादियोगान् विचार्य्य तत्फलानि लेख्यानि'। 'ततः पञ्चमहापुरुषयोगान् सञ्चिन्त्य तत्फलानि लेख्यानि' ततोऽखिलराजयोगान्विचार्य्य तत्फलानि लेख्यानि'। एवं गजकेसर्य्यादीन्योगानपि सञ्चिन्त्य तत्फलानि लेख्यानि'।

'अथ तन्वादयो द्वादशभावाः ससन्धयः सन्ति'।

'अथ चयक्षय (भावज, आरोहावरोह) फलमिदम्'। 'अथ ग्रहदृष्टयः सन्तीमाः' 'अथ भावदृष्टयः सन्तीमाः'। 'अथोच्चबलचक्रम्'। 'अथ सप्तवर्गजैक्यबलचक्रम्'। 'अथ युग्मायुग्मबलचक्रम्'। 'अथ केन्द्रादिबलचक्रम्'। अथ द्रेष्काणबलचक्रम्'।

'एषां पञ्चानामंशादीनां योगे कृते सति स्थानबलं भवति' 'ततस्तच्चक्रं लेखनीयम्'।

'तत्फलमाह':—

खेटो यदा स्थानबलेन युक्तो भूतिं परां गौरवकौशलादि ।
वीर्य्यप्रपुष्टं महसो विवृद्धिं करोत्यनेकद्रविणस्य लब्धिम् ॥ १ ॥

'अथ दिग्बलचक्रम्'

'तत्फलमाह':—

यस्य प्रकृष्टं द्युसदो हरिद्बलं नीत्वा नभोगो नियमेन सर्वदा ।
निजां दिशं स्वीयधनेन मिश्रितं दायेऽतिलाभं विदधीत देहिनाम् ॥ १ ॥

'अथ नतोन्नतबलचक्रम्'। 'अथ पक्षबलचक्रम्' 'अथ दिनरात्रित्रिभागबलचक्रम्'। अथ वर्षेशादिबलचक्रम्। एषां चतुर्णामंशादीनां योगे कृते सति कालबलं भवति' ततस्तच्चक्रं लेखनीयम्'।

'तत्फलमाह':—

हस्त्यश्वभूवृद्धिमरातिसंक्षयं लीलाविलासं च यशोविनिर्म्मलम् ।
रत्नानि वासांसि सहश्च सम्पदं करोति खेटः समयौजसान्वितः ॥ १ ॥

'अथायनबलचक्रम्'। 'अथ चेष्टाबलचक्रम्'। उभयोरंशादीनां योगे कृते सति स्फुटं चेष्टाबलं भवति' 'ततस्तच्चक्रं लेखनीयम्'।

'तत्फलमाह'

ददाति चेष्टाबलसंयुतो यदा क्वचित्समज्ञां धरणीशतां क्वचित् ।
अर्चां क्वचिद्यच्छति चित्रसञ्ज्ञकं क्वचिद्विहङ्गो द्रविणं शरीरिणे ॥ १ ॥

'अथ निसर्गबलचक्रम्'।

'तत्फलमाह':—

द्वौ वीर्य्यवन्तौ बलिनस्त्रयोऽथ वा प्रकल्पनीया फलदानता त्विति।
निसर्गतः स्युर्बलिनो यथोत्तरं कृष्णास्त्रविज्जीवभभेशभानवः॥ १॥

'अथ दृग्बलचक्रमिदम्'।

'तत्फलमाह':—

असत्फलं यच्छति नो समस्तमसत्प्रदः शोभनलोकितश्चेत्।
शुभप्रदोऽप्येवमसौम्यदृष्टो विचारणा दृक्सहसो निरुक्ता॥ १॥

'स्थानबलं' 'दिग्बलं' 'कालबलं' 'चेष्टाबलं' 'निसर्गबलं' 'दृग्बलं' 'एषां षण्णामेषादीनां योगे कृते सति षड्बलैक्यं भवति' 'ततस्तच्चक्रं लेखनीयम्'।

'तत्फलमाह':—

सद्भिःसवीर्य्यैःकृतवित्कुदेवतागीर्वाणभक्तः सुमभूषणाम्बरैः।
शौचादराचारशुभैः समन्वितः सुरूपवान् सत्ययुतः पुमान् भवेत्॥ १॥
स्वकार्य्यनिष्ठो निजवंशहा तमोगुणान्वितः कुत्सितकर्म्मभाग्भवेत्।
क्रूरस्वभावः पुरुषो मलीमसो लुब्धः कृतघ्नः कलुषैर्बलान्वितैः॥ २॥

'अथ भावस्वामिबलम्' 'भावदिग्बलम्' 'उभयोरैक्यम्' 'भावदृग्बलम्' 'उभयोः संस्कारः' बुधदृष्टिः गुरुदृष्टिश्च एषां योगे कृते सति भावबलैक्यं भवति।

'अथ तन्वादीनां द्वादशभावानां सामुदायकरीत्या फलचिन्तनमाह':—

यो यो भावः स्वामिना सत्खगेन्द्रैः सुस्थानैर्वानीचमूढारिहीनैः।
दृष्टो युक्तस्तस्य भावस्य वृद्धिर्हानिः पापैः स्वर्क्षकोणोच्चगोनैः॥ १॥

'पाठान्तरम्'—

यो यो भावः क्रूरदृग्योगहीनो दृष्टो युक्तः स्वामिसौम्यैः सुभेशैः।
नीचार्य्यस्तेतोनितैस्तस्य वृद्धिर्हानिः पापैः स्वर्क्षकोणोच्चगोनैः॥ २॥
नीचर्क्षयातो रिपुराशिमाश्रितो वियच्चरो भावविनाशकृद्भवेत्।
समः समर्क्षे सखिभत्रिकोणभस्वभोच्चगो भावचयप्रदः स्मृतः॥ ३॥
ये ये भावाः सौम्यवर्गाश्रिताः स्युस्ते निःशेषाः सौम्यतां प्राप्नुवन्ति।
नेष्टा ज्ञेयास्तेऽघवर्गाश्रिता ये ते मिश्राः स्युर्मिश्रवर्गोपयाताः॥ ४॥

मित्रारिराशिपरकीयनिजर्क्षतुङ्ग–
स्थानां फलं दिविषदां परिचिन्तनीयम् ।
लग्नात्तनूमुखगृहैः शुभगा हितेषु
वृद्धिक्षती त्रिकगृहेषु विलोमतस्ते ॥ ५ ॥

होरातदीशौ सबलौ चितिः स्यात्तयोः फलानां बलवर्जितौ तौ ।
स्याद्धानिरेवं निखिलालयेषु ते भावनाथोर्ज्जवशेन चिन्त्ये ॥ ६ ॥

'अथ तन्वादीनां द्वादशभावानां लेखक्रियाक्रमो व्याख्यायते ।' 'तत्रादौ तनुभावविचारो लिख्यते'।

तत्रापि किं विचार्य्यं तदाह':—

बुधैर्देहो वर्णाऽऽकृतिगुणशिरोऽङ्कप्रकृतय–
स्तनोर्मानं जातिर्जनकजननीमातृजनकः ।
वयोमानं स्थानासुखसुखक्रशीलाबलबल–
प्रवासाः सामर्थ्यं वपुषि परिचिन्त्यं सममदः ॥ १ ॥

इति वचनात्तनुनिकेतनं, देहवर्णाकृतिगुणादीनां पदार्थानां भवनं, अमुकाभिधं, अमुकक्षेत्रं, निजेन नाथेन समन्वितं असमन्वितं वा, अमुक ग्रहेण वीक्षितं, अवीक्षितं वा, अत्र गणितागत शुभदृष्टियोगः...पाप दृष्टि योगः... उभयोरन्तरम् अत्र ..शुभदृष्टियोगोऽधिकस्तेन दृष्टिजन्यफलं शोभनं वाच्यम् । यदि पापदृष्टियोगोऽधिकस्तेन दृग्जन्यफलमशुभं वाच्यम् । लग्नेशबलैक्यं लग्ननवांशेशबलैक्यं च लेख्यम्, इह ग्रहाणां बलानामपि न्यूनाधिकता चिन्त्या ' 'तादित्थम्' '**अर्द्धाधिकं षट्कमिनस्य सूरेः शुक्रस्य पञ्चाधिकमर्द्धरूपम् । ससेन्दुपुत्रस्य बलं षडिन्दोः सौरारयोः सायक रूपसंख्या इत्यादिना रवे**र्बलम् ६।३०, चन्द्रबलम् ६।०, भौमबलम् ५।० बुधबलम् ७।०, गुरुबलं ६।३०, शुक्रबलम् ५।३०, शनिबलम् ५।०, न्यूनो ग्रहो हीनबलः । अधिकोमध्यबलः । उक्तबलादधिको ग्रहो बलवान् बोध्यः । एवं सर्वत्र बलाविचारणा कर्त्तव्या । यत्र द्वयोस्त्रयाणां चतुर्णां वा ग्रहाणां बलानां साम्यं भवति तत्र निसर्गबलाद्ग्रहबलं चिन्त्यम् । 'तादित्थम्'—रवेर्बलम् १।०।०, विधोर्बलम् ०।५१।२६, भौमबलम् ०।१७।९, बुधबलम् ०।२५।४३, गुरुबलम् ०।३४।१७, शुक्रबलम् ०।४२।५१, शनिबलम् ०।८।३४, इति । एवं सदसद्द्युचरदृष्टिविचारणादस्य पुंसः अमुकवर्णः स्यात्, केन प्रकारेण 'तादित्थम्'—**विलग्ननन्दांशपतुल्यदेहोऽथ वा बलाढ्यग्रहतुल्यमूर्त्तिरिति**'। लग्ननवांशपतितन्मध्ये यो वियच्चरो बलवत्तरो भवति स ग्रहो लग्नोपरि वा स्वनवांशोपरि दृष्टिमात्रः वा युतः, तद्दिविचरवशतो वपुःप्रकृतिर्मता यदोभौ बलिष्ठौ न स्तस्तदा निखिलेषु खचरेषु यः खचरोऽधिकबलशाली केन्द्रत्रिकोणङ्गतोऽङ्गं विलोकयति तद्द्युचरवशतस्तनुप्रकृतिरादेश्या, यदा तनुः सूर्येक्षितयुता वा बलवत्तरो विरोचनः केन्द्रे त्रिकोणे वा तिष्ठति तदा **शूरो गभीरश्चतुरस्रमूर्त्ति**' रित्यादि प्रकृतिः' यदोदयश्चन्द्रदृष्टयुतः वा सबलश्चन्द्रः केन्द्रे त्रिकोणे वा तिष्ठति तदा '**प्राज्ञः सुवक्ता मृदुवा**' गित्यादिप्रकृतिः । एवंविधोभौमश्चेत्तदा **ह्रस्वः प्रचण्डोऽग्निनिभ**' इत्यादिप्रकृतिः । तथा विधो बुधश्चेत्तदा' '**दूर्वादलश्यामतनु**' रित्यादि प्रकृतिः। तथा विधो गुरुश्चेत्तदा। '**पिङ्गाक्षकेशोमतिमा**' नित्यादि प्रकृतिः। यत्र तथा विधो भार्गवश्चेत्तदा **मनोहराङ्गो मधुवा**'गित्यादि प्रकृतिः। तथा विधः शनिश्चेत्तदा **दीर्घोऽलसः कपिलदृ**' गित्यादिप्रकृतिर्लेखनीया ।

'अथातः परं वर्णविचारः क्रियते'

'**वर्णोऽब्जयुक्तांशपतेः समान**' 'इत्यनेन जन्मनि जैवातृको नवभागे यस्मिन् राशौ तिष्ठति तदीशवशात्' '**ताम्रः श्वेतो रक्तपालाशवर्णा**' 'त्वित्यादि' यदा नवांशे चन्द्रश्चण्डभानोर्नवांशके व्यवस्थितस्तदा ताम्रतुल्यवर्णः, स्वांशके शुभ्रवर्णः, भौमस्यातिलोहितः, बुधस्य हरितनीलः दूर्वाश्यामवर्णः, यदा विधु नवांशेशो बृहस्पतिस्तदा पीतवर्णः, यदा दानवेज्यस्तदा चित्रवर्णः यदा कृष्णस्तदा कृष्णवर्णः। परं कुलजातिदेशवशतो वर्णो वाच्य इति। यस्मिन् राशौ राकानाथः सम्भवे व्यवस्थितस्तद्राशितुल्यपूर्वोक्तराशिस्वरूपस्तत्तुल्यस्वभावः कथनीयः। यदा यस्य नुर्जनने ऽजराशिर्भवति तदा तस्य क्रूरस्वभावः, स्वाङ्गपित्ताधिकः, अतिरवः, प्राच्यां सुखी, पीतवर्णवस्तुतोऽवाप्तिः अल्पाबलासङ्गः, कृशसन्ततिः, रुक्षकान्तिः समाङ्ग इति। यदा यस्य नुर्जनने वृषभराशिर्भवति तदा तस्य सीमन्तिनी स्वभावः, शीतलस्वभावश्च, स्थिरारम्भी, कान्त्या वियुतः, शमनाशायां सुखी, पवनप्रकृतिः, धवलवर्णवस्तुतो लाभः, अतिरवः, मध्यावस्थायां सन्ततिसुखमिति। यदा यस्य नरस्य जनने नृयुग्मराशिर्भवति तदा तस्य पुरुषस्वभावः, क्रूरस्वभावश्च, स्वकीये कार्ये आलस्यवान्, परकार्यकर्त्ता, पवनाधिकः, हरितवर्णवस्तुतो लाभः, महानिनादः, शिथिलाङ्गः, कनाथकाष्ठायां सौख्यं, मध्यावस्थायां सन्ततिसीमन्तिनीसुखमिति।

यदा यस्य पुंस उत्पत्तौ कुलीरराशिर्भवति तदा तस्य दयितास्वभावः, सौम्यस्वभावश्च, निनादोनः, मितभाषी, शिथिलाङ्गी, पयःप्रियः श्लेष्मप्रकृतिः, बहुप्रजः कौबेर्य्यां सुखी, बलक्षवस्तुतो लब्धिः, कार्य्यारम्भेऽतिद्रुतेति। यदा यस्य पुंजन्मनि पञ्चास्यराशिर्भवति तदा तस्य पुरुषस्वभावः, उष्णस्वभावश्च, स्थिरारम्भी, पित्तप्रकृतिः, उग्रः, दृढाङ्गः, दीर्घध्वानः, पीतवर्णः, रूक्षकान्तिः, कृशवनितासङ्गः, अल्पापत्यः, ऐन्द्यां सुखी, धूम्रपीतवर्णवस्तुतोऽवाप्तिः इति। यदा यस्य पुंसः सम्भवे पाथोनराशिर्भवति तदा तस्य प्रमदास्वभावः, शीतलस्वभावः, सौम्यस्वभावश्च, खण्डितरवः रूक्षकान्तिः, शिथिलाङ्गी, कृशसङ्गः, कृशप्रसवः, पवनप्रकृतिः, अपाच्यां सुखी, स्वपरकार्यकर्त्ता, पाण्डुवर्णवस्तुतो लब्धिमानिति। यदा यस्य नरस्य जनुषि जूकराशिर्भवति तदा तस्य पुरुषस्वभावः, क्रूरस्वभावश्च, चञ्चलः, नानाविधवर्णः, उष्णप्रकृतिः, कृशप्रमदासङ्गः, कृशसन्ततिः, समाङ्गः, समीराधिकः, मितभाषी, वारुण्यां सुखीति। यदा यस्य पुरुषोत्पत्तौ सरीसृपराशिर्भवति तदा तस्य प्रमदास्वभावः, सौम्यस्वभावश्च, कफप्रकृतिः, मितभाषी, श्लथाङ्गी पयःप्रियः, अदभ्रसन्ततिः, अदभ्रदयितासङ्गः, स्थिरारम्भी, बलक्षवर्णवस्तुततो रुचिः, राजराजाशायां सुखीति। यदि यस्य नरोद्भवे धनुर्द्धरराशिर्भवति तदा तस्य पुरुषस्वभावः, उग्रस्वभावश्चः, कनककान्तिः, अतिरवः, उष्णः, मारुप्रकृतिः, स्वल्पप्रमदासङ्गः, स्वल्पप्रसवः, परोपकारी, स्वकीयकार्येऽलस इति। यदा यस्य नुरुत्पत्तौ मृगाननराशिर्भवति तदा तस्य सीमन्तिनीस्वभावः, सौम्यस्वभावश्चः, मरुत्प्रकृतिः, श्लथाङ्गी, पिङ्गलवर्णः, कान्त्यूनः, कृशप्रसूतिः, कृशसङ्गः, स्वल्पभाषी, त्वरितकार्यकर्त्ता; कालककुभि सुखीति। यदा यस्य पुरुषस्य प्रभवे कुम्भराशिर्भवति तदा तस्य पुरुषस्वभावः, उग्रस्वभावश्च, धातुसमप्रकृतिः, श्लथाङ्गी मध्यमहिलासङ्गः, मध्यप्रसूतिः, स्थिरारम्भी, कर्बुरवर्णवस्तुतो लब्धिः, प्रतीच्यां सुखीति। यदा यस्य पुरुषोद्भवे मीनराशिर्भवति तदा तस्य ललनास्वभावः सौम्यशीलश्च श्लेष्मप्रकृतिः, स्वल्पभाषी, अम्भःप्रियः अत्यङ्गनासङ्गः, अतिप्रसूतिः, पिङ्गलवर्णवस्तुतोऽवाप्तिः, कदा त्वरितकार्यकर्त्ता, कदा स्थिरारम्भी, कौबेर्यां सौख्यमिति राशिस्वभावः,

अथातः परं प्रकृति विचारः क्रियते'—

तत्राऽऽद्यो यस्य पुंसः सत्वगुणप्रकृतिर्भवति स करुणः, धैर्यवान् ऋतभाषी, विबुधविप्रेषुप्रीतिमान्, परोपकारकर्त्ता, तीर्थगमने धीः, सन्मार्गदानेनादभ्रसमज्ञावान्, अदभ्रशेमुषीमान्, योगाध्वनि व्रते च प्रीतिमान् नयधीमान्, समृद्धः, अकलिततनुर्भवतीति।

अथ रजोगुणप्रकृति विचारः '

यो नरो रजोगुणवान् भवति तस्य प्रकृतिः शूर, उग्रधीः साभिमानः कीर्तिमान्, मनस्वी, न्यायप्रियः मानवनाथद्वारे मानवृद्धिः, मन्मथी, ताम्बूलाम्बराभरणप्रभृतिषु रुचिः, सस्योपस्करादिषु प्रीतिमान्, धनी, निजजनप्रियः अतिभोगी, प्राज्यकल्पनास्तुतिदानान्वितः; गभीरः, गीतगायनेषु रुचिः, वार्त्तासु रसिको भवतीति ।

अथ तमोगुणप्रकृति विचारः क्रियतेः—

यस्य नरस्य तमोगुणप्रकृतिर्भवति सः क्रोधवान्, अलसः, तस्करप्रसङ्गी, अनृजुः कलिवल्लभः, कुवाक् कृतघ्नः बहुनिद्रः, नटविद्यायां कुयंत्रमंत्रेषु च तत्परः, छलभेदकर्त्ता, मस्तके सापवादः, सनिन्दः लुब्धमातारोतिगुणविचारः ।

अथातः परं लघुदीर्घाङ्गविचारः क्रियते '—

मकराद्याः षड् (मकर कुम्भ, मीन, मेष, वृष, मिथुन) राशयो ह्रस्वाः सन्ति । कर्काद्याः षड् (कर्क, सिंह कन्या, तुला, वृश्चिक, धनुः) राशयो दीर्घाः सन्ति, कालपुरुषाङ्गक्रमेणैव लग्नादीनां पुरुषाङ्गे विभागो बोध्यः, प्रयोजनं च यत्राङ्गेऽल्पप्रमाणराशावल्प (ह्रस्व) राश्यधिपो ग्रहो भवति सतदङ्गस्याल्पत्वकृद् भवति, यत्र दीर्घराशौ दीर्घराश्यधिपो ग्रहो भवति तदङ्गस्य दीर्घत्वकृद् भवति, दीर्घराश्यधिपो ग्रहोऽल्पप्रमाणराशौ व्यवस्थितो यदि तदा तदङ्गस्य मध्यत्वकृत् । यदि तु तत्र बहवो ग्रहास्तिष्ठन्ति तदा बलवद्ग्रहवशान्निर्णयः (दीर्घत्वं ह्रस्वत्वं वा मध्यमत्वं) कर्त्तव्यः । यत्र न कश्चन ग्रहो व्यवस्थितस्तत्र राशिप्रमाणत एवाङ्गस्यदीर्घत्वाद्यवगन्तव्यम् ।

' अथवा '—

येषु शीर्षाद्यङ्गेषु दीर्घराशयो व्यवस्थितास्ते दीर्घग्रहैर्भौमगुरुशनैश्चरैः सहिता विलोकिताश्चेत्तदा तान्यङ्गानि दीर्घाणि ज्ञेयानि, एवं येषु शीर्षाद्यङ्गेषु लघुराशयो व्यवस्थितास्ते लघुमञ्ज्ञकग्रहैः सूरसोमसौम्यासितैः संयुताः समालोकिताश्चेत्तदा तान्यङ्गानिलघूनि बोध्यानि, एवं निजधिया विचार्य्य लेखनीयम्, किन्त्वत्र प्रागुदितं मतं श्रेष्ठंज्ञेयमिति

अथातः परं मधुरादीनां षड्रसानां विचारः क्रियते '—

' ग्रहाणां रसास्तु प्राक्सञ्ज्ञाध्याये प्रोक्ताः तेच यथा'— ' चान्द्रेः कषायः कटुरर्ग्यमासृजोस्तीणोऽगुपक्ष्ग्वोर्मधुरो बृहस्पतेः । अम्लोरसो भस्य विधोः पटू रससौख्यंवदेद्वीर्य्यवतो ग्रुचारिण ' इति । चेद्यस्य पुंसः सम्भवसमये सविता सबलो भवति लग्ने वा नवांशलग्ने वा तत्पातिर्यस्मिन् भावे व्यवस्थितसन्द्भावे युक्तिदृष्टिकर्त्ता विकर्त्तनश्चेत्तदा कटुक (तिक्त) रसवल्लभः, यदेवंविधो विधुर्बलवत्तरो भवति तदा क्षार (लवणस्य पटोर्वा) रसभोक्ता, यदैवंविधो वक्रः सबलश्चेत्तदा कटुक (कटुकषाय) रसप्रियः, यदेवंविधो बोधनो बलवत्तरश्चेत्तदा कषाय (क्वाथ कसैला) रसप्रियः, अथवा मिश्ररसप्रियः मिश्रान्नभोक्ता च । यदेवं विधिना वाक्पतिः सबलश्चेत्तदा मधुर (इक्षु वा गुड) रसप्रियः, वा मधुरान्नभोक्ता, यदैवं विधिना भार्गवो वीर्य्यान्वितश्चेत्तदाऽम्ल (दधि तक्र खट्टा) रसवल्लभः, यदेवं विधिना विभावसुसुतः सबलश्चेत्तदा तीक्ष्ण (तेज) रसप्रियः वा कषायरसप्रिय इत्येवं लेखनीयम् । प्रलम्बदोर्वा समदोः कोष्ठ उदरे पवनः, त्वचि मायुः, न तुङ्गः वा तुङ्गः सखर्वगर्वः । वागर्थेनः । यदोदये चरराशौ चण्डांशुर्व्यवस्थितः वा विधुश्चरराशौ लग्ने व्यवस्थितः तदेतस्ततो भ्रमणशीलः यद्युदये शोभनदिविषदि व्यवस्थिते सति तदाऽऽनने मधुरभाषी, यदा मूर्तौ सौम्येतरग्रहे व्यवस्थिते सति तदा कटुवचनभाषी, शोभनखचरे स्वान्ते सरलता पाप्मनि खपान्थे तत्र चेतसि कापट्यभाव इति ।

'कालाङ्गे राशिविभागः'।

	१ मस्तकं	१२ चरणद्वयं	
३ उरः	२ मुखं	११ जंघाद्वयं	१० जानुद्वयं
४ हृदयं	५ उदरं	८ व्यञ्जनं	९ ऊरुद्वयं
	६ कटी	७ बस्तिः	

प्रथमद्रेष्काणेऽङ्गविभागः'।

	१ शीर्षं	१२ दृष्टिः	
३ श्रोत्रं	२ दृष्टिः	११ श्रोत्रं	१० नासिका
४ नासिका	५ कपोलः	८ हनुः	९ कपोलः
	६ हनुः	७ मुखं	

द्वितीयद्रेष्काणेऽङ्गविभागः'।

	१ कण्ठ	२ अंसकः	
३ बाहुः	२ अंसकः	११ बाहुः	१० पार्श्वं
४ पार्श्वं	५ हृदयं	८ उदरं	९ हृदयं
	६ उदरं	७ नाभिः	

तृतीयद्रेष्काणेऽङ्गविभागः'।

	१ बस्तिः	१२ व्यञ्जनं	
३ वृषणः	२ व्यञ्जनं	११ वृषणः	१० ऊरुः
४ ऊरुः	५ जानुः	८ जंघा	९ जानुः
	६ जंघा	७ चरणौ	

'अथातः परमङ्गे तिलमशकादि चिह्नविचारः क्रियते':—

ततः पूर्वोक्तविधनाङ्गे तिलमशकादि चिह्नं लेखनीयमिति, अथवा गडगुमडादिगुच्छं लेखनीयम् इति। यदोदयः आद्यद्रेष्काण दशांशमध्ये स्याद् द्युचरोऽपि प्रथम द्रेष्काणे स्यात्तदा जनिकालप्रभृतिताश्चिह्नं लेखनीयम्, अन्य-द्रेष्काणे तु आगन्तुकं चिह्नं लेखनीयम्, यत्र भेदद्रेष्काणे लग्नं ग्रहो वा भवति तस्य भेदो द्रेष्काणे कथितः, यद्यवं तदा तस्य दिविचरस्य दशान्तर्दशापदशायां तिलमशकादि व्रणादि गुच्छं लेखनीयम्, यदाऽरातौ रन्ध्रे च दुरिताः स्युस्तदा तस्य तनावुच्चात्पतनादि लेखनीयम् इति।

यदि तनयतपोभवने चारुदिविचरा व्यवस्थितास्तदा सम्भवी शास्त्रज्ञः, राजकलासु कुशलः, वार्त्तासु रसिकः, सुकृतवल्लभी, कार्यकालेऽवसरवक्ता' उदारमानसः, प्रपञ्चे निरतः, सद्य उद्यमी, वाचाटः, दभ्रनिद्रः, गीतगाने हास्य-कथासु च कुशलता इति।

यदि दीक्षणदारकसदने दुरितद्युचरा व्यवस्थितास्तदा हठी, स्वेच्छाचारी, क्वचित्पयोवक्तप्यते, सालसः, अति-निद्रः, प्रागुक्तगुणेन वियुत इति।

यदि जनने मिहिरमङ्गलौ शक्तिसहितौ स्यातां तदाऽऽद्यवयसि सुखी, सूरिसितौ सबलौ भवतश्चेत्तदा मध्यवयसि सुखी, यदा सौरिसोमौ सशौर्यौ स्यातां तदान्त्यवयसि सुखी, यदा ते वीतवीर्याः स्युस्तदा क्रमादाद्यमध्यान्त्यवयस्सु दुःखी एवं विचार्य्य लेखनीयम्,

प्रथमादिद्वादशभावान्तेषु यत्र स्थाने खलालये खलालोकिते तन्मासि तद्वायने वा तस्य विग्रहे ग्रहप्रकृतिवशतो ज्वरवमनप्रभृतिशूलचातुर्थिकैकान्तरादिभिस्तस्य तनौ पीडा लेखनीया इति ।

एवं यत्र शोभनराशौ शोभनग्रहसदा दृष्टे तदा तन्मासे तद्वत्सरे वातिसुखं लेखनीयम् । यस्मिन् राशौ मिश्रखचरैः सहितेक्षिते तन्मासे तदब्दे वा मिश्रं फलं लेखनीयम्, । अथवा दुरितखचरभे दुरितखचरालोकिते तस्य ग्रहस्य दशान्तर्दशापदशायां तदब्दमध्ये नभश्चरप्रकृतिवशतः कष्टं लेखनीयम्, ।

रिपौ रन्ध्रे रिःफे वा दुरितखचरे व्यवस्थिते तदा ज्वरवमनादिव्यथा वेद्या, । वेतरस्थाने खलखगे व्यवस्थिते तस्य दशान्तरोपदशायां तस्य भावस्य हानिर्लेखनीया । सबले शोभने केन्द्रे त्रिकोणे वा प्राप्ते तस्य दशान्तर्दशापदशायां तदब्दमध्ये तस्य तनौ सुखं लेख्यम् । तस्य भावस्य वृद्धिर्वेद्या, एवं स्वबुद्ध्या विचार्य्य लेखनीयमिति तनुभावविचारः ।

'अथातः परं धनसदनविचारः क्रियते ':—

तत्र किं चिन्तनीयं तदाह ':—

> **'वित्तं कुटुम्बं मणिदक्षिणाक्षिवागवक्त्रविद्याबहुभाषणानि ।**
> **स्वर्णादिकानां क्रयविक्रयौ च रत्नादिकानामपि सञ्चयश्च ॥ १ ॥**
> **मुक्ताफलं शुक्तिविशेषसत्यामित्राणि मित्रं निजपूर्वजाथम् ।**
> **दासार्थसिद्धी निधनस्य जालं विचिन्त्यमेतद् द्रविणे समस्तम्' ॥ २ ॥**

इति वचनाद् द्वितीयं वित्तकुटुम्बादीनां भवनं अमुकाख्यं, अमुकदैवत्यं, स्वस्वामिना संयुतं, वा अयुतं, अमुकखचरेण निरीक्षितं वा अवीक्षितं, इह शुभग्रहदृग्योगः... पापदृग्योगः... उभयोरन्तरं... शुभयोगाधिकश्चेत्तदा द्वितीयभावजन्यपदार्थानां सुखं, पापदृग्योगोधिकश्चेत्तदा द्वितीयभावजन्यपदार्थानां धनकुटुम्बादीनामपचयो वाच्यः । धनभावबलैक्यम्... धनभावेशबलैक्यम्...धनकारकबलैक्यम् ..एतत्सर्वं लेखनीयं तद्बलानां न्यूनाधिकता चिन्त्या ततो भावजन्यपदार्थानां न्यूनाधिकता ज्ञेया, एवं शुभाशुभदृष्टिविचारणादयं पुरुषो धनी निर्धनो वा इति चिन्त्यम् । प्राणिसुखमदभ्रं कृशं वा लेखनीयम्, परं अमुकवयसि द्रविणोदयो द्रविणचिन्ता चिन्त्या, इह द्वितीयभवनाद्वायनं प्रकल्प्यम्, यस्मिन् स्थाने कल्याणखचरो व्यवस्थितो वा वित्तनिकेतनमालोकयति तच्छरन्मध्ये वियच्चरवर्णवशतो वित्तोदयः, यदि सन्नभोगः सद्गृहे संस्थितः स्वतुङ्गाभिमुखस्सुहृत्सदनसंस्थो भवति तद्वत्सरमध्येऽतीववित्तोदयः, तस्य खपान्थस्य दाये मुक्ता वित्तोदयो बलवशतो लेखनीयः, एवमसौम्यनभःसद्विलं विलोकयति तदब्दमध्ये वित्तहानिस्तद्ग्रहबलवशाल्लेखनीया । कदाऽपि कररिक्तता न स्याद् वा सर्वदा कररिक्तता चिन्त्या, मणिमौक्तिककनकरौप्यवित्तावाप्तिश्चिन्त्या, कोष्ठारे द्रव्यसञ्चयो वा रिक्तकोष्ठार इत्यादि चिन्त्यम्,

यस्य भाविनो जनने तुर्य्याधिपगः सत्पुष्करगो द्राविणनिलयं पश्यति तदा तुर्य्याधिपतो वित्तोपचयः, एवं चतुश्चरणभगोऽचारुखचरो वित्तागारं विलोकयति तदाचतुश्चरणवशतो वित्तहानिः, यदि वित्ते व्यये मलिनवियच्चराः स्युस्तदा दृग्गदः शैशवे विशेषतो दृष्टिर्दुःखयते, वित्तेऽगता प्रदिपयोवाद्वित्तं वा यदि स्वसदनं सत्संयुतेक्षितं तदा द्रव्येऽगता, वित्तनिलयो मिश्रखगोपेतेक्षितो भवति तदाऽन्धाम्भोदाद्वित्तं स्यात्, यदा भार्द्दकुण्डल्यां यदुन्मिताः कल्याणखगा

कुटुम्बभावं प्राप्तास्तदुन्मिता एव वित्तं सम्भाव्यते, यदा द्रविणे दिवाकरस्तदा दक्षिणदोर्दुःख्यते, अदभ्रद्रव्यवान्, तस्य-दाये भुक्तावुपदशायां वा राजदण्डो भवति, । यदा निधानेऽमृतनिधानस्तदा प्रसन्नाननः, तिमिररोगवान्, वनिता-वल्लभः । कोशे कुटिलश्चेत्तदा कोपी, लोहितलोचनः, बुभुक्षी, परुषवक्ता, । वित्ते बोधनश्चेत्तदा चिपटीविलोचनः । आलस्योपभोक्ता, गणिकाध्यक्षः अनर्च्यार्चकः, कलासु पेशलः । वाचि वागीशश्चेत्तदा सुवाक् मानी, शुभवेषधारी, वर्तुलवदनः, विबुधजनवल्लभः, परोपकारकर्त्ता, अम्बतडागादिकर्त्ता च, । कोशे काव्यश्चेत्तदा विलोलविलोचनः कटाक्षः, धनी, । द्रव्ये दैवाकरिश्चेत्तदा द्रविणोऽज्झिताङ्गः, वर्तुलविलोचनः । एवं सौरिवरस्वर्भाणोः फलमपि चिन्त्यम् । कोशाल-यस्थलोहितधवलादिद्युगतिवर्णवशतस्तद्वर्णतो वित्तोदयो वा वित्तहानिरादेश्या । वित्तगतैर्विप्रादिभिर्विहङ्गचरैस्तद्वर्णादेव द्रव्यलब्धिर्वा द्रव्यहानिश्चिन्त्या । यदार्थपः स्वोच्चत्रिकोणाधिसखिसदनं प्राप्तो भवति तदा स्वकीयजनपदे द्रविणोदयः, यदाऽर्थेशस्य विकलता तदा वित्तागारगतराशिदिशि वा तदीयनाथस्य या दिक् तद्दिशि द्रव्यवृद्धिः । यस्य स्वसद्मानियो-ऽनन्तचारी वर्त्तते स वित्तेशसपत्नग्रहो भवति चेद्वा द्रव्यविभूपरि शत्रुग्रहदृष्टिर्भवति तदा परिजनैः सहारिभावः, यदाऽर्थ-भावोऽहःखगयुक्तो वा कोशेशोऽप्येनोभिर्युक्तो वाऽऽलोकितस्तदा परिजनाभावः यदि कोशागारे वसुधाम्बरायनो विद्यते स चेच्चारुसमीरायनचारिदृक्पथं प्राप्तस्तदा परिजनवर्गे सुखं कदा कदा विवादोऽपिजायते, अर्थात्कुटुम्बसुखं मिश्रं वाच्यम् । यदि द्रविणागारे चारुगगनगृह निवासैरुपेते निरीक्षिते वा एवं द्रविणाधिपे सति तदा परिजनसुखं प्राज्यम् सजनो निजकुटुम्बपोषको भवेत् । एवं निजाधियाविचार्य्य लेखनीयामिति द्वितीयभावविचारः ।

अथातः परं तृतीयभावो विचार्य्यते'—

तत्र किं विचार्य्यं तदाह'——

'भ्राता बलं साहसदक्षकर्णकरोपदेशांशुकभूषणानि ।
प्रयाणकण्ठस्वरविक्रमक्षुच्छौर्य्याख्यधैर्य्यौषधयौधवीर्य्यम् ॥ १ ॥
पित्रोर्लयं भक्ष्यविशेषमूलफलाशनं तातकमातुलादि ।
गलोरसस्थानसहायभृत्यदास्यादि सर्वं सहजे विलोक्यम्' ॥ २ ॥

इति वचनात्तृतीयं भ्रातुः बलस्य साहसस्य दक्षकर्णकरयोश्च प्रभृतीनां भवनं अमुकाख्यं अमुकदैवत्यं निजेन नायकेनेत रैर्वानिरीक्षितं वा न निरीक्षितं, सहितं वा नसहितं सदसन्नभः सन्निरीक्षितं वा न दृष्टं लेखनीयम्, इह शुभव्योमतलाधिवास-दृग्योगः...पापविबुधमार्गचरदृग्योग...अनयोर्विवरम्...शुभदृग्योगेऽधिकश्चेत्तदा तृतीयभावजन्य पदार्थानां भ्रातृबलसा-हसादीनां श्रेष्ठं सुखम् । पापदृग्योगोऽधिकश्चेत्तदा तृतीयभावजन्य वस्तुनां भ्रातृबलसाहसादीनामपचयो वाच्यः । भावबलै-क्यम्...भावेशबलैक्यम्....भावकारक (भौम) बलैक्यम्...एतत्सर्वं लेखनीयम् । तन्यूनाधिकता चिन्त्या, । यदा पराक्रमे प्राणी पूषा भवति चेत्तदा सहजसुखवान्, यदि खगो (सू.) नीचराशौ स्थितो विपक्षभवन स्थितो वा तदा सोदरोनरतत्सुखरहितश्च । यदा तृतीये मा (चं.) वर्त्तते चेत्तदा जन्मानन्तरं भगिनीजन्म तत्पश्चात् भ्रातृजन्म वदेत् । यदा पापी (मं) चेत्तत्र तदा ज्येष्ठसोदराणां तापो भवेत् । यदि तत्र शान्तः, (बु.) श्चेत्तदा भ्रातृणां भगिनीनां वा नयने तिमिरान्धादिदोषस्तथा विक्रमोऽधिकोन भवति । यदा तत्र प्रशान्तः (गु.) श्चेत्तदा प्रसूपक्षात्सुखं जनकानिकेतने किञ्चित्कमलावृद्धिः । यदि तत्रेभ (शु.) श्चेत्तदा विक्रमवान् यांत्रिको भवति । यदि तत्र दीर्घ (श) श्चेत्तदाऽ-ल्पारिष्टं नाशयति पश्चाद् भ्रातरो न तिष्ठन्ति । एवं तत्र चक्री (रा.) चेत्तदाप्यल्पारिष्टं नाशयति पश्चाद् भ्रातरो न तिष्ठन्ति ।

एवं तृतीयभावलग्नात्तृतीयभावे सबलविबुधमार्गचरयुतिदृष्टिप्राप्तत्वात् स्वाविक्रमात्सेवकादिसुखम् । सहजसदना-स्सहजाधिभूः सहजप्रभुश्चोभयोस्तनुपतिना साकं यदि मित्रता स्याद्वा तत्र स्थाने बलवत्तरः कश्चन ग्रहो भवति तद

सेवकादिरक्षणेन निजानिलये वित्तवृद्धिः, अनुजभवनादनुजनायकस्य विग्रहाविधुना सत्रा सपत्नभावश्चेद्वा गतबलो भवति तदा सेवकरक्षणान्निजानिकेतने वित्तक्षतिः, एवं विचार्य्य, लेखनीयम् दुश्चिक्यालये यो राशिर्विद्यते तस्य यदङ्कप्रमाणं तत्संख्यानुजानामुत्पत्तयः, एवं भ्रातृभगिनीनाममुकसंख्यात्मकं जीवयोगः, अमुकसंख्यात्मकं मृत्युयोगः 'तदुक्तं ग्रहशीलाध्याये'—

'ज्ञार्की नपुंसकखगौ युवती सितेन्दू आदित्यवाक्पति धरातनयाः पुमांस' इति । यदि जन्मनि तृतीयनिशान्ते कृष्णकोविदौ विषम (पुरुष) राशौ भवतस्तदोभौ पुरुषौ तौ समराशौ भवतश्चेत्तदोभौ स्त्रियौ, एवं सर्वेषां ग्रहाणां तृतीयभावे योगो दृष्टिर्वा न स्यात्तदा चतुःसंख्याकसोदरोत्पत्तिः, दृष्टिकर्तुर्ग्रहस्य यावत्संख्यकांशयो भवन्ति तत्संख्याकसोदरोत्पत्तिमादिशेत्, अथवा तृतीयभावाङ्कं नवमभावाङ्कं चैकीकृत्य तदङ्कमानेन सोदराणामुत्पत्तयः, सत्खगवशतो जीवति, निजनायकव्यतिरिक्तकलुषखगान्वितेक्षितं चेत्सहजसदनं तदा सहजानां संख्या जीवति न स्यात्, अथवा सहजोत्पत्तिकारको विहङ्गमो वाऽनुजनायकः स्वोच्चमित्रादिसंस्थस्तदङ्कप्रमाणेन सोदरोत्पत्तिरादेश्या इति ।

ग्रन्थान्तरे तु द्रेष्काणकुण्डलीवशतः सहजसंख्या प्रोक्ता '— तच्चेत्थम् '— **'द्रेष्काणइन्दुमध्यस्था यत्संख्याः संस्थिता ग्रहाः । तत्संख्याः सहजास्तस्य पापैः पापाः शुभैः शुभा' इति ।** द्रेष्काणतनुतो यस्मिन् स्थाने द्रेष्काणतनुनाथो विद्यते तत्पर्यन्तं वा पीयूषरश्मिपर्यन्तं यावत्संख्याकवियच्चराः स्युस्तावन्मिताः सहजाः कथितव्याः । खलैः खलाः (दुष्टाः) सौम्यैः शुभाः (सौम्यस्वभावाः) सोदरालयलग्नात्त्रिके सपत्नराशौ महाबलवर्त्मगा (ग्र.) व्यवस्थिताः, तृतीयभावात्प्रथमादि वर्षं परिकल्प्य तत्र शरदि सहजानां कलेवरे कष्टं ज्वरवमनचातुर्थिकैकान्तरादिव्यथा, एवं पराक्रममन्दिरात्कण्टककोणे कल्याण विष्णुपदायनाः (शु॰ ग्र.) भवन्ति चेत्तदा तत्र शरदि सोदर्य्याणां बहुलं सुखं गदितव्यम् । तस्य दाये भुक्त्यन्तर्दशायां वा सहजानां सुखं दुःखं वा अनिलाध्वग (ग्र.) वशतो लेखनीयम्, तृतीयभावे भागि (श.) कुण्डलि (रा.) समन्वितालोकिते सति तदा सोदरगर्भगता बलवशाल्लेख्याः ।

अथातः परं पराक्रमविचारः क्रियते '—

यदा जनने दुरितहरिवर्त्मचारिणः स्वतुङ्गांशे मित्रमन्दिरे नन्दांशे वा वर्त्तन्ते यदि ते हरिवर्त्मचारिणो जननोदयतस्तृतीयषष्ठायगाः तस्य महापराक्रमोदयः, क्रूरकार्य्ये स्वकीयपराक्रमतः सकलकार्यसिद्धिः, गगनविचारिवशतोऽमुकवर्णतः स्वकीयपराक्रमवृद्धिः, अमुकवस्तुलोहित पिङ्गलधवलनीलराशिवशतोऽमुकवर्णवस्तुतःपराक्रमकृते निजानिलये तद्वर्णवृद्धिः, तस्माल्लाभोदयः ।

चेत्सोदरसदनलग्नाच्छोभनगगनाधिवासिनः कण्टककोणाश्रितास्तद्दायनमध्ये स्वपराक्रमोदयः, सौम्यकार्य्येषु स्वपराक्रमोदयो लेखनीयः, स तु तद्गगनभ्रमणवर्णजातिवशतो ज्ञेयः । तस्य पराक्रमाद्यशसो महिम्नश्च वृद्धिः, तद्द्युगतिदाये भुक्तौ विदशायां वा तस्य पराक्रमोदयः ।

पराक्रमोदयवर्षाणि ग्रहशीलाध्याये प्रागुक्तानि तानि च यथा '—

ओष्ठा जिना इभयमा रदषोडशाका-
स्तत्त्वानि तर्कदहना द्वियुगाः समा यः ।
स्वोच्चे स्वभेऽम्बरचरो दशवर्गशुद्धो
भाग्योदयः शरदि तस्य खगस्य पुंसाम् ॥ १ ॥

इत्यादिना रविवर्षाणि २२, विधुव॰ २४, मंगलव॰ २८, बुधव॰ ३२, गुरुव॰ १६, शुक्रव॰ २५, शनिव॰ ३६, राहुवर्षाणि ४२ मितानि सन्ति, यो गगननिवासो विक्रमभावे स्वर्क्षांशे स्वोच्चर्क्षांशे वा संस्थितस्तेन तृतीय-

भावो युक्तदृष्टो वा तेन तृतीयाधिपो युक्तदृष्टो भवति तत्पुष्करचरस्याब्दप्रमाणेन तस्य पराक्रमोदयः, तेनादावमुकाब्दे कृशपराक्रमोदयः, अमुकहायने मध्यमपराक्रमोदयो वा अमुक शरदि महापराक्रमोदय इति विचिन्त्यम्, मिश्राकाशचारिभिर्मिश्रपराक्रमोदयः, ' मिश्रग्रहलक्षणमित्थम् '—एकः, क्रूरः,एकः सौम्यः, एको बलिष्ठः, अन्यो बलवर्जितः, एवंविधो मिश्रस्तस्य पराक्रमोऽपि मिश्रः । बलवत्तरस्याकाशवासस्य दाये हृतौ विदशायां वा तस्य प्राज्यपराक्रमोदयः, विबलपुष्करालयस्य दाये हृतौ विदशायां वा स्वीयपराक्रमतः क्षतिः । यदि दुश्चिक्ये स्थिता वा दृष्टि कर्त्तारो व्योमनिवासा तरोभिर्वियुताः साधवोऽसाधवो वा भवन्ति तस्य पुंसः पराक्रमोदयो नास्ति, स नरो दरिद्री, अलसः, सनिद्रः, परनिन्दाप्रियः, द्वेषी, एवं ग्रहस्वरूपराशिस्वरूपप्रकृतिवर्णवस्तु विचार्य्य लेख्यमिति तृतीयभावविचारः ।

अथातः परं सुखसद्मविचारः क्रियते'—

तत्र किं चिन्तनीयं तदाह '—

' सौख्याम्बिकाभवनवाहनयानबन्धु–
क्षेत्रक्षमोपवनचित्तगुणेष्टभूपाः ।
मित्रं तरुर्निधिसुगन्धतडागवापी–
कूपाम्बुगोश्वशुरहर्म्यचतुष्पदादि ॥ १ ॥

विद्याधृताङ्गनजसौख्यबहिःसुखानि
वक्षःस्थलादि जनकोद्यमपूःसमान्नम् ।
भोज्यादिकं शयनसौख्यकमात्मवृद्धिः
स्कन्धासने सममदोऽम्बुनि चिन्तनीयम् ' ॥ २ ॥

इति वचनाच्चतुर्थे सौख्याम्बिकाभवनवाहनयानबन्धुक्षेत्रादीनां वस्तुनां भवनं अमुकामिधं अमुकक्षेत्रं निजनाथेन दृष्टमदृष्टं वा इतरैर्गगनगेहैरपीक्षितमनीक्षितं वा एवं सदसद्गगनवासिदृष्टिविचारतः फलं लेखनीयम्, इह शुभगगनगति दृग्योगः... पङ्कगगनाटनदृग्योगः...अनयोरन्तरम्...शुभगगनवासदृग्योगोऽधिकस्तेन चतुर्थभावजन्यवस्तुनां सौख्याम्बिका भवनवाहनादीनां सुखं श्रेष्ठम्, यदि पावकगगनेचरदृग्योगोऽधिकस्तेन चतुर्थभावजन्यवस्तुनां सौख्याम्बिकाभवनवाहनादीनामपचयः, भावबलैक्यम्... भावेशबलैक्यम्... भावकारक बलैक्यम्...एतत्सर्वं लेख्यम्, तद्बलानां न्यूनाधिकत्वमपि चिन्त्या, यदि ते बलवत्तरास्तदा भावजन्यपदार्थानां चितिः, ते विबलाश्चेत्तदा भावजन्यवस्तुनामपचितिः, ।

तुर्य्ये एकैकखगफलमुक्तं '—

चेन्मातृमन्दिरे महिरस्तदा मातृपक्षे शुभं न भवति, । यदि सोमः सवित्रीभावे विद्यते तदा सवित्रीगात्रे समीरश्लेष्माधिकं सवित्रीसुखं सम्पूर्णं क्षीणे क्षीणम्, । यदि तत्रमानन्दनश्चेत्तदा माता मन्दाग्निना पीड्यते, सा दुर्बलाङ्गी, कृपणा न तूदारा तेन सा बाह्यम्, । तत्र पौरवः (बु.) चेत्तदा माता वा मातुलानी निरुद्यमी, । तत्र प्रख्यः (गु.) चेत्तदा स्वयमुद्यमकारकः चतुःशालागृहस्य सौख्यं निजनिकेतने हयहेषा श्रूयते, यदि चक्षः (गु.) जलचरराशिमाश्रितः सन् जलनिलये वर्त्तते तदा तरुवल्लीमुखानामुद्यमी । तत्र श्वितः (शु.) चेत्तदा नूतननिकेतनसुखोपभोक्ता, निजनिलये निजान्वये चोद्यमी, तत्र पौष्णगूढपादौ (श. रा.) भवतश्चेत्तदा मातुः सुखं न स्यात्, यदि तत्सुखमस्ति तदा तत्तनौ तनुता, स स्वयं नीचजनसेवी, स्ववर्गेषु वाग्वादी एवं विचार्य्य लेखनीयम्, ।

यदि चतुर्थे चारुद्युचरभवने चारुवियच्चरवीक्षिते चेत्तदा स्वसद्मनि उत्सवादिसुखं स्नानपानादिसुखं च, यदा पाताले पापालये पापेऽपिते तदा निजनिशान्ते उत्सवादिसुखं न स्यात् । तुरीये ऽनुत्तमालये उत्तमसमेते वोत्तमालये ऽनुत्तमसमेते एवं विधे मिश्रे मिश्रफलं स्वगृहे उत्सवादि स्यात्, यदि चतुर्थभावे ऽचारुद्युचरसहितनिरीक्षिते तदा स्ववेश्मनि औदास्यम् । तत्र सद्गगनेचरसंयुतालोकिते तदा स्वोदवसिते सुखं बहुलम्, मिश्रे मिश्रफलं मतम् । येन गगनचारेण चतुर्थभावे साहितावलोकिते तेन सार्द्धं सुखस्वामिनः सौहार्दं चेत्तदा मित्रपक्षादिसुखं स्यात्, चेद्वारिभावे वैरिणा वाधिवैरिणावलोकितोपेते तेन सत्रा सुखस्वामिनः शात्रवं चेत्तदा तस्य सखिपक्षे सुखं न स्यात्, अर्थादादौ मित्रभावः पश्चाच्छत्रुभावो जायते, नूतननिकेतनावाप्तिर्वा जीर्णगृहस्य सौख्यं भवति इह तद्विचारः क्रियते । भूभावे बाहशानां गगनगतीनां भवनं तद्वद् गृहभोक्तारः, । 'सूतिकाप्रकरणे तदुक्तम्'—

'दग्धं कुजे दिनकरे न दृढं सकाष्ठं
चन्द्रे नवं प्रसववेश्म बुधे विचित्रम् ।
वीर्यान्विते सुरगुरौ सुदृढं सितस्य
नाव्यं मनोज्ञमिनजे सदनं पुराण'मिति ॥ १ ॥

अस्यार्थः—कुजे भौमे वीर्यान्विते बलेन युक्ते यदा तेन चतुर्थभावे युक्ते दृष्टे वा तदा दग्धगृहभोक्तारः, दिनकरे रवौ सकाष्ठं काष्ठयुक्तं न दृढं असारम्, चन्द्रे सितदले नवं नौतनं गृहम्, प्रसवगृहं च, बुधे विचित्रं, बहुविधशिल्परचितम्, सुरगुरौ बृहस्पतौ सुदृढं चिरकालस्थायी, सितस्य शुक्रस्य नाव्यं नौतनं मनोज्ञं सुन्दरम्, इनजे शनौ पुराणं सदनं जीर्णगृहम्, इत्यमुना प्रकारेणाम्बरगातिबलयुक्तवशेन सदनजन्यं सुखं लब्धम्, अमुकावस्थायां मित्रपक्षे सुखं दुःखं वेति, आद्यमध्यान्त्यावस्थायां सुखं दुःखं लेखनीयम् ।

'गोचरप्रकरणे तदुक्तम्'—

'भादिगौ रविकुजौ शशीनजावन्त्यगौ निगदितौ फलप्रदौ ।
मध्यगौ धिषणदानवार्चितौ सर्वदेह फलदौ मृगाङ्कज' इति ॥

एवं चतुर्थसम्बन्धिवियच्चरवशादवस्थोहनीयेति ।

यदा तुर्यालये तुर्याधिराशिनिचिते वा तुर्यपदगते समीक्षिते सखित्वव्यवस्थिते तदा तुर्याधितोऽदभ्रं सुखं, सपत्नभावव्यवस्थिते तदा तुर्यचरणतः प्राज्यं सुखं नास्ति मिश्रे मिश्रं फलं ज्ञेयम् । यदि मित्रसदनं (श.) मैत्रिणा वा (रा.) नागेन निरीक्षितं युक्तं वा तदा मित्रमन्दिरतो हायन ऊहनीयः, एवं गणनाक्रमेण यथासंख्यात्मके स्थाने तत्तुल्ये वर्षे सवित्रीगात्रे जूर्तिवमनकफशूलादिचातुर्थिकैकान्तरादिपीडा वक्तव्या, दुष्टाम्बरगातिजपदानार्चनैः कष्टनाशः ।

एवं पीयूषभानुतः पातालनिलये प्रसूसुखं चिन्तनीयम्, ।

एवं बन्धुभवने वापीप्रारब्धकार्ये सिद्धिरसिद्धिर्वा चिन्त्या, ।

कायतः करस्थले कुम्भकुम्भीरलग्नं तस्योपरि कालदृष्टिश्चेत्तदा करस्थलतोऽब्दं परिकल्प्य दैवाकरेर्दाये भुक्तौ विदशायां वा तस्मिन्नब्दे निजनिकेतनेऽकस्मात्तस्करसाध्वसं भवेत्, ।

यदि सखिसद्मनि सखिशोभनाकाशगामिमहितसमीक्षिते तदा तन्निशान्ते नानाविधं सुखं भवेत् स्वकीयगेहे गेहोपस्करादिसुखमपि भवेत् । एवं दुरिताम्बरवासे सति तदा सद्मनः सुखं न स्यात्, उपस्करप्रभृतितोऽपि सुखं न

स्यात्, अस्मान्नभःसद्मतः क्षेत्रकर्षणादिलाभोदयो वा हानिश्चिन्त्या, । सोम एव सवित्री समूह्या, तुङ्गप्रसङ्गी वाऽधर प्रसङ्गी, वा सङ्करप्रसङ्गी तत्तत्प्रसङ्गात्रिजमानोपचयो वा मानापचयः (अपमानः) चिन्त्यः । अथवा सुहृज्जनाच्छीर्षेड

४   १०   ११

पवादः, वा स्वयशोमहिमर्द्धिः, अस्य संवसथरक्षणे सिद्धिर्वा हानिश्चिन्त्या । यदि नारनाथः नाकनाथा वा मनोरथ-

२

निकेतने निधान निकेतने वा तिष्ठति तदा संवसथरक्षणे निखिलकार्य्यसिद्धिः परथा क्षतिर्नता एवं बन्धुभावे धिया विचार्य्य लेख्यमिति सुखभाव विचारः ।

' अथातः परं सुतभावो विचार्य्यते '—

तत्र किं विचार्य्यं तदाह '—

' सूनौ सूनुर्गर्भनीतिस्थिती धीर्विद्या तुन्दं देवसेवा प्रबन्धः ।
मंत्रो यंत्रं तातभावो विवेको भूपो मंत्री शक्तिपुण्ये विचिन्त्यम् ' ॥

इति वचनात्पञ्चमं सूनुगर्भनीतिस्थितिधीविद्याप्रभृतीनां भवनं अमुकाह्वयं अमुकक्षेत्रं निजविभुनेक्षितमनीक्षितं वा इतरैरम्बरगामिभिरीक्षितमनीक्षितं वा एवमनघाम्बरचारिवीक्षणविचारवशेन फलं लेखनीयम्, इह शुभाम्बरचर-दृग्योगः...पापाम्बरपान्थदृग्योगः...एतयोरन्तरम्...शुभदृग्योगाधिकत्वेन सुतभवनजन्यपदार्थानां सूनुगर्भनीतिस्थि-तिधीविद्यादीनां बहुसुखम्, यदि पापदृग्योगाधिकत्वेन सुतभवनजन्यपदार्थानां सूनुगर्भनीतीत्यादीनामपचयः, भावबलैक्यम्... भावेशबलैक्यम्... भावकारकबलैक्यम्...एतत्सर्वं लेख्यम्, तन्न्यूनाधिकताऽपि चिन्त्या, द्वित्रिप्रभृ-तिद्विचरयोगफलमपि लेख्यम् '—

पञ्चमे प्रत्येकग्रहफलमाह '—

पञ्चमे पतङ्गे चेत्प्रथमसन्तान सुखं नास्ति, मध्यान्त्यावस्थायां सुतवांस्तत्सुखवांश्च भवेत् । यदा सन्ततौ सोम-श्चेत्तदाऽऽद्यसुता ततः सुतः पश्चात्पुत्री एवं षडपत्यानि जायन्ते । यदि विद्यालये वक्रो वर्त्तते चेत्तदाऽऽद्यसन्तते र्महद्दुःखं मातुले भयं भवति । बुद्धौ बोधनश्चेत्तदा कार्य्यसिद्धिः विद्याधिकः सूनुर्व्यसनी, शूरश्च ।

मनीषामन्दिरे मंत्री चेत्तदा सुसुतः विद्यावान् मेधावी व्यवहारे दक्षः सकलकलासु कुशलः ।

यदा प्रतिभाभवने भार्गवश्चेत्तदा दुहितृजनिः षडपत्यानि स्युः ।

यदा सन्ताने सावित्रसैंहिकेयौ भवतश्चेत्तदा सदैव हलकर्षणगर्भपातानिबहूनि भवन्ति ।

अस्य सन्तानपक्षे सुखमसुखं मृतवत्सो वा, अथवाऽस्य तनया जायन्ते नो तनयाजन्म, वाऽस्य सुतासम्भवः न सुतसम्भवा लेख्यः, सन्तानगर्भोत्पत्तिर्लेख्या, अमुकसंख्याकजीविततनयः, अमुकसंख्याकजीविततनया इत्यादि स्वीयशेमुष्या विचार्य्य लेखनीयम्

तत्रादौ सन्तानचिन्ता विचार्य्यते '—

' विचिन्तयेत्सन्ततिमुद्गमाद्धिधोर्बृहस्पतेरस्तगृहाच्च पुत्रभे ।
सज्यैस्तपोनन्दनकामभैस्तथा सन्तानचिन्तां मतिमान्विनिर्दिशेत् ' इति ॥

ततः सन्तानलब्धेः सम्भवासम्भवविचारः क्रियते'—

'वीर्यान्विताद्दुदयतो धवलांशुतो वा यत्पञ्चमस्थलमिहात्मजवेश्म तस्मिन्।
सद्भे सदीशसुगृहेश्वरयुक्तदृष्टे सन्मध्यगे नहि युतेक्षित उग्रखेटैः ॥ १ ॥
मूढाधरारिगृहगैः सुरपूज्यपुत्रभावेशयोः सबलयोः सुगृहस्थयोर्वा।
धीतत्पयोः सशुभयोः शुभदृष्टियुत्योः सन्तानलब्धिरुदितेतरथा तथा ने'ति॥

इत्युदितविधितः सन्ततिसम्भवासम्भवचिन्ता विधेया।

ततः पुत्रभावगतग्रहवशतः सन्तानसंख्याज्ञानमुक्तं ग्रन्थान्तरे'—

'एकः पुत्रो रवौ वाच्यस्तथा चन्द्रे सुताद्वयम्।
भौमे पुत्रास्त्रयो वाच्या बुधे पुत्री चतुर्द्वयम् ॥ १ ॥
गुरौ गर्भे सुताः पञ्च षट् पुत्र्यो भृगुनन्दने।
शनौ वा गर्भपातः स्याद्राहौ गर्भो भवेन्नहि ॥ २ ॥

इति सन्तानपीडा वा सुखं चिन्त्यम्।

पक्षान्तरे'—

सन्तानभावे येऽङ्कास्ते वा कर्मणोऽङ्कैर्युक्ता यावन्मिता अङ्काःस्युस्तावत्संख्याङ्काः सन्तान संख्या लेख्याः। सन्तान निशान्ते पुरुषपुष्करवासिनां चतुश्चरणदृष्ट्या दृष्टे तदा जीवितसुतः पादवीक्षणे म्रियते एवं शोभनाकाशवासिनि जीवितपुत्रा वा पुत्र्यो राशिवशाद् भवन्ति, यदा प्रमदाखपांथो रमणीराश्युपेतस्तत्र तद्दृष्टिश्चतुश्चरणमिता चेत्तावत्संख्याकपुत्री जीवति, यदा खलानामग्रगामिनां चतुश्चरणदृष्टिःसन्तानभावे विद्यते तदावानता राशेर्वा पुरुषराशिवशेन पुत्रः पुत्री वा म्रियते, यदा पञ्चमं पङ्गुफणियुतं वा ताभ्यांसंपूर्णदृष्ट्या दृष्टं तदा गर्भपातो गदनीयः, यदात्मजभवनं पावकपुष्करगर्हितेक्षितं तदा तन्निमितं जपदान व्रतादिकं कार्य्यं अथवा तदर्चा विधेया यतः सन्तानसम्भवो जायते।

यदा पञ्चमभावे कन्यालग्ने तत्र तदन्तिमनवांशे बुधवीक्षिते एवं जन्मकाले योगोत्पन्नो यस्तस्य द्वे पुत्र्यौ भवतः

यदा पञ्चमगेहे मिथुनलग्नेऽन्तिमनवांशो भवति तस्योपरि बुधसम्पूर्णदृष्टिश्चेत्तदा द्वौ यमलौ पुत्रौ भवतः :

यदात्मजगृहे मीनलग्नेऽन्तिमनवांशो भवति तस्योपरि बुधसम्पूर्णदृष्टिस्तदा यमले द्वे पुत्रिके भवतः। अथ वार्क-गुर्विन्दुभिर्द्विस्वभावराश्युपेतैः पञ्चमभावे व्यवस्थितैः एतदुक्तं भवति। मिथुनकन्याधनुर्मीना एते द्विस्वभावराशयः स्युस्तन्मध्ये मिथुनधनुषी उभौ पुरुषराशी, कन्या मीनावुभौ स्त्रीराशी स्तः।

एवं पञ्चमभावे कन्यालग्नेऽन्तिमनवांशे वा पञ्चमभावे बुधे मिथुननिचिते गुरुणा रविणा वा वीक्षिते तदा यमलौ भवतः, तयोरेकः पुत्र एका पुत्री।

यदा पञ्चमे मीनलग्नेऽन्तिमनवांशो भवति बुधे धनूराशिमाचिते गुरुणा रविणा वा लोकिते तदा यमलौ तथैव पुत्रपुत्र्यौ भवतः, यदा पञ्चमभावे मिथुनलग्ने वा तन्नवांशे बुधयुक्ते कन्याराश्युपेतपीयूषकरदृष्टे वा चन्द्रयुते बुधदृष्टे तदा यमलौ पुत्रपुत्र्यौ भवतः, एवं राशिवशेन वियच्चरवशेन च सन्ततिसदने फलं लेखनीयम्। यदा ब्रध्नवागीशौ

शु. चं. मं ३

विषभयोर्व्यवस्थितौ ताभ्यां सन्तानभावो युतो वा दृष्टस्तदा प्रथमगर्भे पुत्रजन्म, एवं धिष्ण्य धिष्ण्येशधरणीजैर्युग्मराशि-स्थितैः पञ्चमे युतदृष्टे तदा प्रथमगर्भे कन्याजन्म वदेदिति।

सद्बुद्धिमान् बहुबुद्धिमान् विद्याविनोदहर्षसम्पदादिसुखं वाऽन्तरायः, बुद्धिप्रपञ्चोपायात् सिद्धिः गुणैः श्लाकमुपेतो रहितो वा विद्याभ्यासान्नानाविधमंत्रप्रयोगादिकार्य्यसिद्धिः सिद्धिर्नवेति इति पञ्चमभावे लेखक्रिया।

——×——

अथातः परं षष्ठभावविचारः क्रियते'—

तत्र किं विचार्य्यं तदाह'—

'वैरी रुजेर्म्ममधुरादिषडौपदंशा-
श्चिन्ता व्यथा भयकटी पशुमातुलौ च।
नाभिः क्षतं व्यसनतस्करविघ्नशङ्का-
सापत्नमातृसमरा रिपुभे विचिन्त्यम्' ॥

इति वचनात्षष्ठं वैरिरुजेर्म्ममधुरादिषडौपदंशादीनां भवनं अमुकाभिधं अमुकदैवत्यं आत्मीयप्रभुणा दृष्टमदृष्टं वा इतरैराकाशगैरपि दृष्टमदृष्टं वा सदसद्भ्रचरवीक्षणविचारणात्फलं लेखनीयम्, ततो द्वित्र्यादिग्रहयुतिफलं लेखनीयम्।

तत्र प्रत्येकग्रहफलमाह'—

यदा वैरिभवने त्वष्टरि (र.) तदा बली, सपत्नजयी, काष्ठात्पाषाणात्तुर्य्याग्नितस्तुङ्गस्थलाद्वा पतने व्रणम्।

मातुले मासि (चं.) सलिलाश्रयात् शृङ्गितो वा व्रणम्, अग्निमान्दी, तीक्ष्णः, सालसः, धवलपक्षे धवलांशौ षष्ठे चेत्तदा शात्रवोदयः, बहुलपक्षे विधौ तत्र समीरश्लेष्मकृद्रुद्रो भवति, बलिनि मासि (चं.) मातुलानां निखिलं सुखं क्षीणे क्षीणम्।

अरौ क्रूरे (मं.) गरलाग्नितो गदोदयः परिपन्थिनाशः, मातुलसुखाभावः,।

धाते तारेये (बु.) सर्वसहायां पतने व्रणम्।

बृ.

परिपन्थिनि पारुष्येऽनेकारिः मातुलपक्षे सुखं धनोपचयः परिजनवर्गे सुखम्, राज्यपक्षे कृतोद्यमवान्, महेन्द्रेज्य-

शु.

महादशायां भुक्तौ विदशायां वा रोगारात्युदयो लेखनीयः। तत्र शुक्रे चेत्तदा धातुक्षयी, मातुलपक्षे उद्वेगकरः, अहितोदयः, प्राज्यव्ययः। तत्र स्थिरे (श.) धातारौ (रा.) भवतश्चेत्तदा दुर्जनाद् व्याधिनाशः नित्यमेव कुत्सितव्ययः, सपत्नामयनाशकरौ मातुलपक्षे सुखं न स्यात्। एवं स्वीयशेमुष्या विचार्य्य लेखनं यम्। यत्र शात्रवागाररमणो दुरितव्योमचारी भवति तस्मात्सपत्नस्वामिनः सप्तमसद्मनि असौम्यव्योमचरोऽस्ति चेत्तदा नित्यमेव झकटकार्य्यादितो विवादा जायते। चौर्यैः धूर्तेभ्यः कस्यचिन्ना विश्वसेत्।

यदा गदे शुभदे वा गदग्रहोपरि तद्दृष्टिर्भवति तदा झकटकादिकार्यसिद्धिः परथाक्षतिः यदा खुग्रशोभनसहितावलोकिते तदा तस्य दाये हृतौ विदशायां वा गदोदयः, वैरिभवनाद्वर्षं गणनीयं, सपत्नसद्मनो यत्र स्थाने विमलव्योमाटनो भवति सपत्नोपरि तद्दृष्टिस्तस्मिन् हायने गदोदयः, शात्रवसद्मनि शात्रवेशे शुभकरदिवाकरदृश्यमाने तदा तस्मिन् हायने पित्तविकारादिगदोदयः।

यदा अहिते अहितनाथे लोहिताङ्गशुभदृश्यमाने तदा जूर्त्तिपूर्वतः आग्निगडगुमडादितः पीडा, रोगागारे तद्गमणे काव्यकल्याणगगनगदृश्यमाने तदा तस्य दाये भुक्तौ विदशायां वा पवनकृतपीडा, वमनादिगदोदयः, सद्गगनसदा सह क्षीणः क्षणदाधिनाथः सफणिनाथः सपत्नसदने वा तस्योपरि दृष्टिप्राप्तस्तदा चातुर्थिकैकान्तरादिपीडा, मातृपीडा च स्यात्, तत्र शरदि वा दाये हृतौ विदशायां वा अरिष्टतुल्यरोगोदयः, एवं श्लोकोक्तामयसम्भवयोगप्रमाणेन कुष्ठप्रभृतिगद-सम्भवो लेखनीयः, यदा वैरिणि वक्रो निजोच्चे तस्योपरि सबलविधुदृष्टिर्भवति तदा ग्लौलोहिताङ्गमहादशायां हृतौ विदशायां वा अरिष्टतुल्यरोगोदयः, शीतामयाद्यौषधभक्षणेन रोगोदयो भवेदिति ।

शत्रुभावविचारप्रकरणे रोगचिन्तायां विशेषज्ञानमुक्तं '— तदित्थम् '—

' सञ्चिन्तयेत्क्षतरिपुव्यसनानि रोगान्
भौमारितः किमु गदान् गदभावयातैः ।
गुह्यान्त्यगैर्गगनगैर्गदगेहपेन
यद्वा तदन्वितखगैः परिचिन्तयेद्वित् ' ॥ १ ॥

इत्यादिना रोगाश्चिन्त्याः ।

यस्य पुंसः सम्भवे गदागारे स्वस्वामिना समन्वितसमीक्षिते तदा नित्यमेव सपत्नेन सह विवादो जायते, यदि सबलैः सपत्नेशः सपत्ने तदा सपत्नो बलवान्, मध्यबले मध्यबली, हीनबले, हीनबली शत्रुस्तस्योदयः स्यात्, यदा परिपन्थिनाथे कण्टककोणे कल्याणाम्बरगयुते मिश्रव्योमगदृग्वीक्षिते तदा स्वजन एव सपत्नः यस्य नुर्हितभावेशेऽहिते मिश्रव्योमगदृष्टे तदाऽऽयवयसि ये सखायस्तदग्रे सपत्ना भवन्ति, अहितेशो हितेशेन सहितस्तदा स्वजना एव शात्रवाः स्युः एवं योगे व्यापारागारे मिश्रयुचरसहिते तदा स्वजनैः साकं सर्वदैव वाग्वादो जायते, यदि द्रेष्येशो दुश्चिक्ये दुश्चिक्येशो द्रेष्ये एवं योगे सहजैः सह सपत्नभावः, अथवा द्वेष्याधिपे दुश्चिक्ये तस्योपरि सपत्नाकाशवासदृष्टिः तदापि सोदर्यैः सार्द्धं सपत्नभावः एवं सहजेशः सपत्नसदने तस्योपरि सपत्नाकाशवासदृष्टिस्तदापि सहोदरैः सहारिभावः, एवं तनयतरुणीतातनिशान्तना-थाऽरातिसदने संस्थितः अथवा द्वेष्येशो दारकदारतातनिकेतने संस्थितस्तदाऽऽत्मजजायाजनकैः सह भावसमानः शत्रुभावो जायते एवं स्वीयस्वान्ते विचार्य लेखनीयम् । एवं द्विषि दुरितदिविचरैः सहिते निरीक्षिते तदा मातुलपक्षे सुखं न भवेत्, अहिताधिपेऽस्तं प्राप्ते अथवा वैरिवेश्मनि क्रूराक्रान्ते अथवा परिपन्थिपतौ पापाक्रान्ते तदा मातुलपक्षे सुखं नास्तीती लेखनीयम्, यदामयमन्दिरे सौम्यमित्राभ्रचरोपेतावलोकिते तदा मातुलानामदभ्रसुखम्, यदारातिग्रहे वा चारुखचरे निजतुङ्गराशिमाश्रिते तदोच्चमातुलो भवति कल्याणखगतुङ्गवशतो नित्यमेव मातुलपक्षे सुखं गमागमौ स्तः, दुरिततुङ्गवशतः प्राङ् मातुलपक्षेऽतिसुखं पश्चात्क्षीणता स्यात्, एवं विचार्य्य लेखनीयम्, मातुलपक्षे सुखं व सुखं नास्ति, अमुकहायनेऽरीणामुदयो वा नाशः, अमुकाब्दे गदोदयः, अथवा निर्गदगात्रं लेखनीयम्, रोगागारेऽथोऽ ङ्कांशे बलिष्ठत्वात् सुखमिति वैरिभावविचारः ।

——×——

अथातः परं मदनसदनविचारः क्रियते '—

तत्र किं चिन्तनीयं तदाह '—

' जायाविवाहपतिकामपदाभिवस्ति-
नष्टार्थवादद्धिमूपपयोगुडादे ।

यात्राप्रपास्वतनुमृत्युवणिक्क्रियादि
कामे स्वतातजनको निखिलं विलोक्यम् ' ॥

इति वचनात्सप्तमं जायाविवाहपतिकामपदासिबस्तिप्रभृतीनां भवनं अमुकाख्यं अमुकदैवत्यं स्वीयाधिभुवा सहितमसहितं वा दृष्टमदृष्टं वाऽन्यग्रहैर्दृष्टमदृष्टं वा एवमुत्तमानुत्तमदृग्विचारवशेनास्य कान्तासुखमसुखं वा लेखनीयम्, इह शुभयोगतिवीक्षणयोगः-...पापयोगतिवीक्षणयोगः-...अनयोरन्तरम्...यदि शुभवीक्षणयोगोऽधिकस्तेन जायाभवनजन्यवस्तुनां जायाविवाहपतिकामपदासिबस्तिप्रभृतीनां श्रेष्ठं सुखम्, यदि पापवीक्षणयोगोऽधिकस्तेन जायाभवनजन्यवस्तुनां जायाविवाहादीनामपचयः, भावबलैक्यम्,...भावेशबलैक्यम्...भावकारक (शुक्र) बलैक्यम्...एतत्सर्वं लेखनीयम्, तन्न्यूनाधिकताऽपि चिन्त्या, ।

ततो गृहिणीगृहस्य शुभत्वादिविचार '—

' अस्तालयस्थैरुदयाद्विधोः किमु पापैर्विहङ्गैर्न शुभं यदास्तपे ।
त्रिकेऽघभस्थेऽघसमन्वितेक्षिते सर्वं फलं स्त्रीभवनस्यमध्यमम् ' इति ॥

ततः कान्तावाप्तिविचारः '—

' मूर्तीन्द्वोर्यदि मन्मथे सुकृतभे सुस्थाननाथोत्तमैः
सन्दृष्टे सहिते स्वकीयपतिना नास्तारिनीचाशुभैः ।
जायाप्तिं प्रवदन्ति कान्त उदये सौम्यग्रहाणां लवो
त्र्यंशे द्वादशभाग एव भवति स्त्र्याप्तिर्निरुक्ताऽचिरात् ' इति ॥

स्त्रीचिन्तायां विशेषविचारः '—

' कलत्रचिन्ता भमदार्थपैर्वा स्त्रीकारकज्ञेज्यसितेन्दुमध्ये ।
प्राणी खगो योऽत्र ततः समस्तं निरूपयेद्वर्णमुखं गृहिण्याः ' इति ॥

गृहिणीवर्णादिविचारः '—

' अङ्गना भृगुलवाधिपतुल्या वर्णरूपगुणपूर्वकयुक्ता ।
किं कलत्रगृहनायकतुल्यं वर्णशीलमुदितं दयितायाः ' इति ॥

यदा भार्याभवननाथो भार्याभवने व्यवस्थितो भवति तदा तस्य गगनगस्य तुल्यं सीमन्तिनीस्वरूपं भवति, तादृशो वर्णः स्यादित्यर्थः, कलेवरात्कलानिधेर्वा यदा कान्तालये विषमराशिर्भवति तदा तस्य कान्ता क्रूरस्वभावा, एवं विग्रहाद्विधोर्वा युवतिभवने युग्मराशिर्भवति तदा तस्य दयिता सौम्यस्वभावा, मूर्तिमृगाङ्कयोर्मदने एकस्मिन् ओजराशिरन्यस्मिन् युग्मराशिश्चेत्तदा मिश्रस्वभावा, एवमङ्कलवेऽपि ललनालये ललनास्वभावो विलोकनीयः, पुष्करचारिवशतः प्रमदाप्रकृतिर्ज्ञेया, एवं विचार्य्य लेखनीयम् ।

अस्य सीमन्तिनी सुरूपा, सुवदना लावण्युक्ता भवति वा कुत्सितरूपा क्रोधरता कुवदना वियच्चरवशतः स्वीयस्वान्ते विचार्य्येति लेखनीयम् ।

ततः सीमन्तिनीसुखविचारः क्रियते '—

यदा नारीनिलये सत्खवर्त्मनिरीक्षितोपेते तदाऽदभ्रं दयितासुखम्, अथवोदयतो दयितानिशान्ते यो राशिस्तद्रमणश्चेत्साधुसंयुतसमीक्षिते यद्वा महेलालयेशे निज तुङ्गे व्यये मूलत्रिकोणं कीर्णे मित्रमन्दिरसंश्रिते वा तस्य भूरिसुखं भार्यायाः, कलेवरेशेन कलितः कान्तागारेशस्तयोरन्योन्यं मित्रत्वं भवति चेत्तदा तस्य बहुलं सुखं वनितायाः, एवमिन्दुतो दारागारे विलोकनीयम्, किंवा तनुतस्तमीशतो वा यो युवतिभावस्तत्र नवलवलग्नविभुर्विद्यते यद्वा वनिताभवनविभुर्वर्त्तते उभयोः परस्परं सखित्वं तदा प्रमदायाः प्रचुरं सुखम्, कन्दर्पनिकेतेशः क्रूरखगो भवति यद्वा नितम्बिनीनिलये मलिनविहङ्गो व्यवस्थितो भवति तदा तस्य कुत्सितजाया जायते तस्य वधूविलासादिसुखं न भवेत्, यदा सीमन्तिनीसद्मनि असौम्यः स्वराशिमाश्रितो भवति तदा तस्य जाया जीवत्यपि विलासादिसुखं न भवेत् ।

अथेदानीं कतिपयहायने करग्रहणमित्याह '—

यदा मारागारेश्वरो विमलविहङ्गो महेलालये भवति तदा सप्तमेऽब्दे पाणिपीडनम्, अथवा अनङ्गनायकौ नीहारांशुसुररिपूपनियौ निजनिलये न भवेतां तदा द्वादशवत्सरत ऊर्ध्वमुपयामो वाच्यः, नन्दभागविभुना साकं नारीनिकेतननायको यस्मिन् भावे वर्त्तते उभयोः सौहार्दं चेत्तदा भावसंख्यात्मके संवत्सरे शयनिपीडनं निगदनीयम्, अथवा गृहिणागेहे सौम्यगगनगसहिते क्षिते तस्य दाये मुक्तौ विदशायां वा सप्तमे संवत्सरे शयग्रहणम्, यदा भार्गवभावविभू वीतमलविहङ्गमकलितावलोकितौ अथवा धिष्ण्यधिष्ण्यनायकौ ययो राश्योर्व्यवस्थितौ तद्राशिरमणाभ्यां ताववलोकितौ चेत्तदा तद्भावसंख्याप्रमिते वर्षे पाणिग्रहणं भवेदिति लेखनीयम्,

'अथ दयिताया देहस्य सदसत्फलप्रदयोगानाह '—

वधूत्वसमनो वर्षे परिकल्पनीयं, यदा कान्तानिकेतात्कल्याणकलुषयोर्वियद्वयोस्त्रिकगयोस्तदा षष्ठेऽष्टमे द्वादशे वत्सरे तदब्दमध्ये गृहिणीगात्रे ग्रहप्रकृतिवशाद् गदोदयो भवेत्, अथवा कन्दर्पनिकेते कलुषावलोकिते कल्याणसमन्विते कल्मषे सति तत्र चेत्तदब्दमध्ये वा तद्दशायामन्तर्दशायामुपदशायां वा ललनाकलेवरे कष्टं लेखनीयम्, अथवा सितरुक्सितावसौम्यावलोकितौ सपत्नराशिसमाश्रितौ यद्वा दानवपाध्याये दिवाकरदृष्टे तदब्दमध्ये प्रमदावपुषि पित्तविकारादिगदादयः, आमयकारकव्योमगानां जपदानार्चनैरामयनाशो भवेत् ।

अथैकैकस्य ग्रहस्य फलमाह '—

यदा कन्दर्पनिलये कमलिनीनाथस्तदादौ दारकाप्राप्तिः ।

यदा तत्र पीयूषाभीशुस्तदा प्रथमा पुत्री पश्चात्पुत्रस्ततः पुत्री पश्चात्पुत्रस्ततः पुत्री पश्चात्पुत्र एवं षडपत्यानि जायन्ते, पुरुषस्तु स्वयं व्यभिचारी भवेत्, सुरूपा, सुमुखी, कुरङ्गलोचना, स्वाङ्गपुष्टा प्रमदा भवेत् ।

यदा तत्रासृजि तदा प्रथमापत्यार्थे बहुदुःखी, रामा तु रुधिरविकारादितो गडगुमडादितः कमलादितो वा नित्यमेव रोगिणी भवेत्, पुमानपि गदी भवेत् ।

यदा तत्र तमीशतनयस्तदा दयिताद्वेषी, तीक्ष्णस्मरः, स्वयं शेमुषीमान्, व्यसनी, शूरः, क्रयविक्रये चतुरता, मार्गोद्यमे सुखी ।

यदा जायाभवने जीवस्तदासूनुपक्षे सुखं, जनकतोऽधिकः, साध्वी सीमन्तिनी, सौभाग्यसुखं प्रचुरम्, तद्वनिता व्रतधारिणी, पतिव्रता तीर्थचारिणी, भाग्यवती, रूपलावण्योपेता च भवेत् ।

यदा कामे काव्यश्चेत्तदा पुमान् व्यभिचारी, तस्य प्रचुरं सीमन्तिनीसुखं दारिकापक्षेऽपि सुखमदभ्रम्, भूरिसुखभोक्ता, तस्य महिला माञ्जिष्ठवर्णा पतिव्रता धर्म्मचारिणी च भवेत् ।

यदा भार्याभवने भाग्ये वा भोगिराजि तदा भार्यापक्षे विलाससुखं सुखं न भवेत्, तस्य जायाजठरे पवन-कृतपीडा, सा कुत्सितरूपा, कुत्सितानना स तु लोके प्रसिद्धः, सुखी वस्तुतो गृहकार्यकर्त्ता, विलम्बेनापत्यानि जायन्ते तस्य सवित्रीसुखं नास्ति यात्रायामवरोधः सुकृताध्वन्यप्यन्तरायः, स्वाङ्गेऽप्यामयी भवेत्, एवं निजधिया विचार्य लेखनीयम् ।

श्लोकोक्ते महिलामृतियोगे यो मृत्युकारको ग्रहचरस्तस्य दाये भुक्तौ विदशायां वा तस्मिन्नब्दे महिलामृत्युर्भवेत् ।

पुनः प्रमदागारे किंवा गृहिणीगृहेशे शोभनखगविहङ्गमवीक्षिते यद्वा स्वतुङ्गगतावलोकिते तस्य दाये ललना-लब्धिर्भवेत् ।

भार्याभवने भार्गववर्गोपेते भार्गवसहितावलोकिते तदा भूरिभार्यालब्धिः ।

अस्य जायासुखं सम्पूर्णं वा स्वल्पमिति चिन्त्यम्, अस्य वामा विनोदेषु तत्परा, सुव्रतधारिणी, दुष्टा वा भवति इति चिन्त्यम् ।

यस्य पुंसः सम्भवे सप्तमेऽवसानेऽसौम्याः पञ्चमे पीयूषोखो भवति तस्य पुरन्ध्रीसुखं न स्यात् ।

यस्य पुंसः सप्तमेऽसुरेऽशोभनसहितेक्षिते तस्यापि पुरन्ध्रीसुखं न स्यात् ।

यस्य पुरुषस्योत्पत्तौ अहितालये लोहिताङ्गः, सप्तमे स्वर्भाणुः, मरणे मन्दस्तस्य जाया न जीवति । काव्याच्च तुरसोपगतैः खलखेटैस्तदा तस्य वनिताया वह्निना वधः ।

किल्बिषान्तःस्थः कविः कल्याणखचरावलोकितान्वितो न भवति तदाऽस्य महिलाया निपातपाशजो मृत्युः ।

यदाऽनङ्गेऽङ्गारपङ्गुगणे सितसहिते सति तदा परप्रमदागामी यद्वा भृगुजनौ जायासद्मनि जगतीनन्दनविरोचन-विलोकितेऽपि परप्रमदागामी भवेत् ।

अस्य वणिक्क्रियायां सिद्धिर्वाऽसिद्धिश्चिन्त्या, कृतोद्यमे साफल्यं वा क्षतिश्चिन्त्या, इह द्विग्रहादियोगफलं आवेशफलं भावगतराशिफलं च सर्वभावेषु लेखनीयमिति सप्तमभाव विचारः ।

— —×— —

'अधुना निधननिलयविचारः क्रियते'—

तत्र किं चिन्तनीयं तदाह'—

'आयुर्मृत्युरथान्तकारणमथो मृत्युप्रदेशो गति–
मोक्षाद्यं गुदगुह्यदेशसमितो दुर्गादिरोधादिकम् ।
स्तेन्यं व्याधिभवो भृतिः परिभवात्राणादानदानानि च ।
नद्युत्तारकवस्तुनाशविवराद्यं बन्धनं नौमुखम् ॥ १ ॥

जीवनाङ्कुरदंशान्नसुखारिभ्यस्त्रसङ्कटम् ।
मार्गवैषम्यमखिलं नैधनेऽदो विचिन्तयेत्' ॥ २ ॥

इति वचनादष्टमं आयुर्मृत्युमुखानां मन्दिरं अमुकागृहे अमुकक्षेत्रे आत्मीयपतिमुना विलोकितमविलोकितं वा इतरैर्दिवौकोभिर्निरीक्षितमवीक्षितं वा एवं साध्वसाधुवियच्चरवीक्षणविचारवशेन फलं लख्यम्; अत्र विमलवीक्षण-योग....मलिनालोकनयोग ....उभयोरन्तरम् ... यदि गतमलालोकनयोगेऽधिकस्तेन मृत्युभावजन्यवस्तुनामायुर्मृत्यु-

सुखानां वृद्धिः, एवं दहनालोकनयोगोऽधिकस्तेन मृत्युभावजन्यवस्तुनामायुर्मृत्युसुखानामपचयः । भावबलैक्यम्,... भावेशबलैक्यम्,...भावकारक (शनि) बलैक्यम्...एतत्सर्वं लेख्यम् । तन्न्यूनाधिकताऽपि चिन्त्या ।

अथातः परं पञ्चत्वभवनगतप्रत्येकग्रहफलमाह ':—

यदा जनने मृत्युमन्दिरे मार्त्तण्डो भवति तदा कृशात्मजः, विलोचने व्यथा ।

यदा याम्ये यामिनीशस्तदा गदार्दितः, नानामयप्रहारकः ।

यदा कालालये कुटिलश्चेत्तदा राजान्नभोक्ता, शोणितविकारवान्, कृशसन्ततिः विलोचने व्यथा ।

यस्य जनने वधभवने बोधनश्चेत्स शीतलस्वभावः, अगारम्भी, चिरजीवी ।

यदा मरणेऽमरमैत्री तदा विपिननिवासी, दुष्टस्वभावः, सुकृतरहितः, जघन्यकर्म्मकर्त्ता ।

यदा शमनभवने भृगुजन्मा तदा सदा मिथुनरतः कलिकृत् दुर्विधवचनः ।

यदि जनौ कालालये काले यद्वा व्याले सति तदा सविभ्या सह विरोधः, वित्तविहीनः, चौरः, परदयितारतः, दीनाननो भवेत् ।

प्रकारान्तरेण फलमाह '—

यदि धर्म्मराजभावो धामनिधिना निरीक्षितान्वितस्तदा काष्ठपाषाणादिघातपातोदयः ।

यदि तत्र मासा सहितेक्षिते तदा तस्य दशायां भुक्तौ विदशायां वा धनरसघातो यद्वा चतुष्पदशृङ्गितो घातोपातोदयः ।

यदि तत्रासृजा सहितेक्षिते गरलाग्निशोणितस्रवणगर्भोत्पत्तितो घातपातोदयः ।

यदि तत्र तपनजतमोभ्यां संयुतावलोकिते लोहशस्त्रादिचातुर्थिकजूर्तिवमनादिकुष्ठपाषाणज्वरातिसारशूलादिघातपातोदयः स्यात् ।

निखिलाविहङ्गा निजनिजदायदिष्टे तन्मिते हायने घातपातोदयं विदधते ।

इह कालालयलग्नाद्यद्वा कलानिधेर्निधनलग्नाद्वर्षं गणनीयम् ।

यस्य यस्य भावस्य जानिना निधननिलयं निरीक्षितान्वितं चेत्तदाऽष्टमस्थानात्तद्भावपर्यन्तमेकादि वर्षं गणनीयम् । तस्य तस्य कारणवशतो घातपातोदयो लेखनीयः । यदाऽष्टमे किं वा द्वितीये जलचरराशिमुपागते जडांशौ यद्वा भार्गवे किं वा ताभ्यामालोकिते तत्राब्दे धनरसतो घातो लेखनीयः, यद्यष्टमे शोभनसहितेक्षिते तदा घातपातादिमयं परिणामे सुखं भवेत् ।

यदा निधनागारगते धनूराशौ खलखगसहिते तदा तुरङ्गपतनाद् घातपातोदयो लेखनीयः ।

इहायुश्चिन्तायां विशेषविचारः '—

'होरालेखेशेन मानाधिपेन दिष्टान्ताधीशेन भास्वद्भुवा च ।
आयुर्दायं नष्टहेतुं समस्तं पुंसां प्राज्ञाश्चिन्तयेयुः प्रवीणाः' ॥ १ ॥

इत्यादिना विधिनाऽऽयुर्दायं विचिन्त्य ततो वक्ष्यमाणयोगान् विचिन्तयेत् ।

यदि निधने क्षीणक्षणदाधीशे मेषेऽष्टमभागे तदाऽष्टमे हायने पञ्चता वाच्या । एवंविधे वृषभगे विधौ वधभवने नवमे लवे तदा नवमे हायने मृत्युर्लेखनीयः । एवंविधे मिथुनस्थे मृगाङ्के मरणे ऽधिकविंशतिलवे यदा तदा

त्रयोविंशतिमिते हायने मृत्युः। एवंविधे कर्कटगे कलावति कालालये पञ्चविंशतिलवे तदा पञ्चविंशतिमिते हायने मृत्युः। एवंविधे पञ्चाननस्थे पीयूषमयूखे पञ्चतालये पञ्चमलवे तदा पञ्चमे हायने मृत्युः। एवंविधे कन्यागते कलावति कालनिलये प्रथमलवे तदा प्रथमे हायने पञ्चता। एवंविधे तुलागते तुहिनकिरणे मृतौ तुर्य्यलवे तदा तुर्य्ये हायने मृत्युः। एवंविधे वृश्चिकस्थे विभावरीशे वधे त्र्यधिकविंशतिमे लवे तदा त्रयोविंशतिमिते हायनेऽत्ययः। एवं विधे धनुर्द्धरगते धवलांशौ धर्म्मराजभवने धृतिमितलवे तदा धृतिमिते हायने मृत्युः। एवं विधे नक्रोपगे निशापतौ नैधने नखमितलवे तदा नखमिते हायने निधनम्। एवं कलशाश्रिते कलेशे कालधर्म्मालये प्रकृतिमितलवे तदा प्रकृतिमिते वत्सरे पञ्चत्वम्। एवंविधे तिमिगते तमीपतावत्यये पंक्तिमितलवे तदा पंक्तिमिते संवत्सरे पञ्चता वाच्येति। एवं सर्वारिष्टं श्लोकोक्तं विचार्य लेखनीयम्। यस्य यस्य वियच्चरस्यारिष्टोत्पन्नः, तस्य तस्यारिष्टयोगनभोगस्थाने पुण्यपुष्करचरपुण्यग्रहराशिसमाश्रितेऽरिष्टस्थाने दृष्टे तदाऽरिष्टकारकग्रहगतीनां जपदानार्चनानि विधेयानि तेनारिष्टनाशो भवेत्। अरिष्टतुल्यं कष्टं स्यादेवं विचार्य्य लेखनीयम्। यस्मिन् भावे पङ्गुराशौ पङ्गोपेते पङ्गावलोकिते वा तदा तद्भावसंख्यात्मके वर्षे शीतला औरि अच्छबडादिरोगोदयः। पङ्गावलोकिते यदा तदाऽऽमयेन मरणम्। चारुग्रहनिरीक्षिते जीवति, एवं सञ्चिन्त्य लेखनीयम्। यदाऽष्टमेऽशोभनग्रहचारिणः शोभनग्रहचारिराशिसमाश्रिताः, चारुग्रहचरा अचारुवियच्चरराशिसमाश्रितास्तदा तस्य शीतलादिनिष्कासनयोगो न स्यात्। यदा कालधर्म्मागारे कुलीरकौर्प्यमीनानामन्यतमे राशौ तत्र कुजे तदा विषधरादिविषभक्षणादि घातपातोदयः। यदा सखारैः शोभनैः समालोकिते तदा घातपातादिनाशः। यदा धर्म्मराजालयगते धिषणेऽसौम्याकाशवासैः समीक्षितसहिते तदोच्चात्पतनयोगः। यदि शुभग्रहान्यतमेनदृष्टे सति तदा घातपाते पतने तस्याङ्गे पतनात्सूक्ष्मतरं व्रणम्। एतत्सर्वमपि दाये हृतौ त्रिदशायां स्वीयसंविदा सञ्चिन्त्य लेखनीयम्। यो पुष्करचरः पञ्चतागारं पश्यति तद्धातुकोपोद्भवा पञ्चता। यदि तद् बहवो वियच्चरा विलोकयन्ति तदा तन्मध्ये यो बली वियच्चरो वधभवनं विलोकयति तदा तद्धातुकोपोद्भवोऽत्ययः। अथवा विधोर्वधभावो येन वियच्चरेण विलोक्यते तदा तद्धातुकोपोत्पन्नोऽन्तः। यदा छिद्रे छायानाथावलोकिते तदा हव्यवाहनहेतुकोऽत्ययः। सोमे सलिलहेतुकः। आरे आयुधहेतुकः। जैवातृकजे जूर्तिहेतुकः। आचार्य्ये आमयहेतुकः। आस्फुजिति तृड्ढेतुकः। कृष्णे क्षुधाहेतुकः। पतङ्गस्य पित्तम्। कलावतः कफवातौ। पृथ्वीतनूजस्य पित्तम्। सौम्यस्य धातुसमः (त्रिदोषः)। सूरेः श्लेष्मा काव्यस्यकफमारुतौ। वैकर्तनेर्वात इति ग्रहाणां धातवो ज्ञेयाः। एवं निधनावसरे तस्य तस्य ग्रहस्य धातुकोपान्निधनं लेखनीयम्। यदा नैधने चरराशिस्तदीशश्चरराशौ चरराशिनवांशे च विद्यते तदा तस्य परदेशे पञ्चता। यदा नैधने स्थिरो राशिस्तन्नाथः स्थिरराशौ स्थिरांशे च वर्त्तते तदा निजनिलये निधनम्। यदा नैधने द्विदेहराशिस्तद्विभुर्द्विदेहराशौ द्विदेहांशे च वर्त्तते तदाऽध्वनि निधनम्। एवं चरादिराश्यष्टमे तस्यात्ययभावस्य विभुर्यदि चरादिराशौ चरादिनवांशे च न विद्यते तदा स्वीयमन्दिरे मरणं एवं सञ्चिन्त्य लेखनीयम्। अतस्तत्समये सुकृतं विधेयं तेन सुकृतेन दुरितानि विनश्यन्ति। यस्य पुंसः पत्नीपस्थे पङ्गुपिङ्गलफणिनो भवन्ति तदा पृदाकुपीडनात्पञ्चता वाच्या। यदि सिंहोदये सौरिसूरासुराः स्युः स्वोच्चसमाश्रिते सिते शमनसदने एवंविधे योगे जाते तदा तस्य पुंसः पादनात्पञ्चताऽऽदेश्या। यदा यस्योद्भवे विधिभावे वक्रे भानुभानुजभुजङ्गा भार्याभावे विद्यन्ते ते विमलैर्नावलोकिताश्चेत्तदा नाराचेन निधनं भवेत्। पाठीरोदये पुष्करवन्तौ मारे मृगाङ्कारौ कुटुम्बे काव्य एवंविधे योगे तस्य वामाबीजाद्वधः। अथास्य प्राग्जन्मनि कस्मिन् स्थाने कस्यां योनौ प्राप्तो जीवः कस्मात्स्थानादागतो जीव इति तज्ज्ञानमाह'—

यस्य जननकाले विधुविरोचनयोर्मध्ये यो बलवत्तरो भवति तेनाश्रितो यो द्रेष्काणस्तस्य यो प्रभुस्तस्य लोकादागत इति वक्तव्यम्। यदि दिवाकरनिशाकरयोर्मध्ये यो बली स यस्मिन् द्रेष्काणे तस्य स्वामी सुरवंद्यश्चेत्तदा सुरलोकादागतो जीवः। यदा भभाधिनाथौ भवतस्तदा पितृलोकादागतो जीवः। यदा तरणिभूतनयौ तदा तिर्य्यग्लोकात् पक्षिलोकादागतो जीवः। यदा मन्दमृगाङ्कजौ तदा मानवलोकादागतो जीवः। एवमरिष्टयोगेन नभोगेनोत्पन्नः तत्सर्वं स्वीयस्वान्ते सञ्चिन्त्य लेखनीयम्। सर्वस्मिन् भावफले द्वित्रिग्रहादियोगो लेखनीयः। ततो भावेशफलं भावगत-

राशिफलं च लेख्यम् । नद्युत्तारादिभयं वा न भयं लेखनीयम् । वैषम्यदुर्गप्रवेशे कष्टं सुखं वा लेखनीयम् । घातपातं पुष्टं वा कृशतरम् । दुष्टादिविचराणां जपदानार्च्चनैः कष्टनाशो न वा तत्सर्वं लेखनीयम् । अस्य विस्फोटकगदोद्भवे शीतला औरि अच्छबडादिना महती पीडा मध्यपीडा स्वल्पपीडा वेति सञ्चिन्त्य लेखनीयम् । इत्यष्टमभावविचारलेखाक्रिया ।

—×—

अथातः परं धर्म्मभावविचारः क्रियते—

तत्र किं विचारणीयं तदाह—

'भाग्यं भक्तिगुरू वृषोऽथ दुरितं प्रस्थानधर्म्मक्रिये
दानं यज्ञतपःप्रभावविमलस्वान्तान्धहर्म्योरवः ।
तीर्थाप्तिः सहजाङ्गनाऽनुजफलं तातस्य पौत्रोदयः
स्नेहो देवगृहं स्ववामचरणं चिन्त्यं समस्तं शुभे ॥ १ ॥

स्वामी गुरुर्मातुलभाग्यताता धर्म्मे विचिन्त्या नवमाङ्गिरोभ्याम् ।
विचिन्तयेद् भाग्यतपःशुभानि गुरुप्रभावौ सुकृतं विपश्चित्' ॥ २ ॥

इति वचनान्नवमं भाग्यभक्तिगुरुपुण्यप्रभृतीनां भवनं अमुकाख्यं अमुकदैवत्यं निजनाथेन दृष्टमदृष्टं वा इतरैर्ग्रहैर्दृष्टमदृष्टं वा अन्यैर्ग्रहैर्युतं वा वियुतं लेखनीयम् । इह शुभखगाभिदृग्बलयोगः....पापखगाभिदृग्बलयोग..एतयोरन्तरम्..यदि शुभनभःसदृग्योगोऽधिकस्तेन नवमभावजन्यपदार्थानां भाग्यभक्तिगुरुपुण्यप्रभृतीनां श्रेष्ठं सुखम् । यदि पापनभोगदृग्योगोऽधिकस्तेन नवमभावजन्यवस्तूनां भाग्यभक्तिगुरुपुण्यादीनामपचयः । भावबलैक्यम्..,भावेशबलैक्यम्... भावकारकबलैक्यम्..,.एतत्सर्वं लेख्यम्...तन्न्यूनाधिकताऽपि चिन्त्या ।

अन्येषां भावानामपेक्षया भाग्यस्य विशिष्टत्वमाह—

'भाग्यं विचिन्त्यं सकलं विहाय जन्तोर्विशेषेण बुधैः प्रयत्नात् ।
आयुश्च वंशो जनको जनित्री भवन्ति धन्या विधिना युतेन' इति ॥

किं भाग्यस्थानं तन्निर्णयमाह—

'तनुगृहाद्वा तुहिनांशुराशेर्निकेतनं यन्नवमं तदेव ।
विधेर्गृहं वा बलवांस्तयोर्यस्तस्मान्नियत्या भवनं विचिन्त्यम्' ॥

इति वचनात्प्राग् भाग्यभावस्य निर्णयः कर्त्तव्यः, तस्य भाग्यभावस्य यो ग्रहः स्वामी अथवा तस्य नवांशराशिस्वामी यो ग्रहः स स्वोच्चराशौ निजनिलये निजमूलत्रिकोणे उदयं प्राप्तः कल्याणखचरेक्षितः, मित्रेण सहितावलोकितः दुष्टस्थानेतरगः केन्द्रे त्रिकोणे वा विद्यते एवंविधो यो विधिनाथः तेन विधिभावः समन्वितो वा पूर्णदृष्ट्या दृश्यते, यद्वा नवमगृहं सन्नभोगनिरीक्षितं यद्वा सुकृतभवनं सुकृतेशसुहृदा सहितं विलोकितं भवति तदा तस्य पुंसो निजविषये महाभाग्योदयः । सुकृती शेमुषी, सुशीलः, तीर्थकृत्, इतरेतराणि बहूनि सुकृतकार्याणि करोति, नूतनमहामण्डपमठवापीतडागादियज्ञयागादिक्रियां करोति । यदा नियतिनायको नियतिनवांशनायकश्च निम्नराशौ सपत्नराशौ वास्तं प्राप्तो वारिमध्ये वा खलखगेन सहितोऽवलोकितो वा खलखगमध्यगतो वा रविरश्मिगतोऽस्तिवा त्रिकस्थाने समाश्रितो वा नियतिनिलयं

नावलोकयति नयुनक्ति वा नियतिनिलयनायकव्यतिरिक्तासन्नभोगेन निरीक्षितान्वितो भवति तदा भाग्योदयो न भवति, न सुकृतक्रियायां स्वान्ते प्रवृत्तिर्न शीलवान्, न तीर्थदर्शनाभिलाषी, अन्यस्मिन् शुभकार्ये विघ्नकर्ता क्लेशता भवति, यदा नियत्यानायकः केवलं नीचराशौ यद्वा नियतिनिलयं केवलं कलुषैः सहितं निरीक्षितमस्ति तदा नियत्यु दयो न भवेत्, यदा विधिविभुर्वैरिनवभागेऽधरराशौ हितनन्दलवे एवं मिश्रफले सति तदा विषयान्तरे विधेरुदयो भवति। इति सर्वं फलं सञ्चिन्त्य लेख्यम्। तत्र शुभाधिक्ये भाग्योदयो भवति अशुभाधिक्ये भाग्योदयो न भवति।

यदा सुकृतसदनं सुकृतैर्युज्यतेऽसुकृतैर्दृश्यते तदाऽऽद्ये वयसि विधेरूदयो भवति, द्वितीये वयसि दुष्टफलोपलब्धिर्भवति यदा पुण्यभवनं पुण्यैर्दृश्यते पापैर्युज्यते तदाऽऽद्ये वयसि दुःख द्वितीयेवयसि भाग्योदयो भवति, यतश्चेदन्यैर्विषयान्तरे नियत्या उदयोभवति, नियतिनाथश्चेत्तुङ्गादिगतो नियातिनिलयं गतोऽस्ति तदा महाभाग्योदयो भवति, समबले समोऽल्पबलेऽल्पो भाग्योदयो भवति, यदि नियतीशो निर्बलोऽस्ति तदा कस्यां दिशि भाग्योदय इत्याह––यदि पुण्यप्रभुः पण्डितः पूज्यो वा पुण्येक्षितो निर्बलो जननोदये भवति तदा तस्य पूर्वस्यां दिशि दिष्टोदय; यदि विधिभावेशो विरोचनो वक्रो वा निर्बलो व्यापारागारे भवति तदा दक्षिणस्यां दिशि दिष्टौदयः, यदि पुण्येशः पङ्गुः पत्नीभावे निर्बलो भवति तदा वारुण्यां विधेरुदयः, यदा सुकृतसदनेश्वरः सोमः सितो वा निर्बलः सलिलसदने तदा तस्य राजराजदिशि दैवोदयः, एवं सञ्चिन्त्य लेखनीयम्।

अथ प्रत्येकग्रहफलमाह

यदा पुण्ये पतङ्गे तदा पृष्ठे सहोदरो न तिष्ठति साजे ससिंहे वा यांत्रिको भवति। यदा नवमे निशापतौ तदा नित्यभाग्यवृद्धिः, कृशे कृशं भाग्यं, गोकुलीरगते कलावति महाभाग्यशाली. धर्म्मिष्ठः, शीलवान. विबुधबाडवार्चकः, वारिभववस्तुतो वा मणिमुक्ताफलादितो विधेर्वृद्धिः।

तत्र काश्यपीकुमारे तीर्थयात्रायां दुःखी, परकार्य्यहन्ता, यदाजालिकुम्भीरराशिगते सति तदा शस्त्रतो विजयेन प्रवालरक्तवस्तुभिर्भाग्यवृद्धिः तस्य दाये भुक्तौ विदशायां वा केनाचित्सार्द्धं यात्रा भवति। यदा विधौ बोधनो विद्यते तदा तस्य शीतलस्वभावः, नववासाः, आद्ये वयसि सिद्धिः, यदा युग्मयुवतिराशिगतो भवति खलखगावलोकितान्वितो न भवति उदयं प्राप्तः तदा तपस्वी, अपूज्यपूजकः, शास्त्रज्ञः, राजकलासु कुशलः, महाभाग्यशाली अहिंसः सदयो भवेत्। यदा तत्र बलवन्तौ वागीशभार्गवौ भवतश्चेत्तदा लेखालयसलिलाशयाराममठमण्डपप्रहितडागादिकारको भवति, धनी नेता, यज्ञयागतीर्थाश्रयकरणे उदारः, भगवद्गुणानुवादश्रवणे प्रीतिमान्, यात्रावान्, एतत्सर्वं विहङ्गमबलवशतो लेखनीयम्। भाग्ये भाग्ये भोगिराजि वा सति तदा मलिनभाग्यवान्, वाताधिकः अनृजुः (शठः) वञ्चकजनवल्लभः, परवादग्राहकः, जघन्यजनाद् विधिवृद्धिः, कैतवकर्मानुरतः, एवं विहगबलवशतो लेखनीयम्। सुकृतसदने यः सकृताकाशवासः स्वोच्चादिसहितसमीक्षितो भवति चेत्तदा तस्य विहङ्गस्य दाये हृतौ विदशायां वा तदब्दमध्ये तद्वर्णतो नियत्या उदयो भवेत्, खपान्थवशादमुकवस्तुतो विप्रजनादितो भाग्योदयो भवति येन खचारिणा नवमभावो युक्तो दृष्टस्तस्य दाये भुक्तावुपदशायां भाग्येऽन्तरायः, अस्यैवं विचार्य्य, विबुधविप्रार्चने परमप्रीतिमान्, वाऽन्तरायः, कथाश्रवणे दृढः वा शठः (निकृतो वाऽनृजुः) पापिष्ठः, गीतगाने हास्यः वा भङ्गकर्ता, सलिलसम्भवमणिमुक्ताफलसुवर्णलब्धिर्वाऽलब्धिः। यदि विधिभावे बलवत्तरो विकर्त्तनस्तदा द्वाविंशतिमेऽब्दे दिष्टोदयः, नवमे निशीथिनीशे चतुर्विंशतिमे हायने नियत्युदयः, विधौ बलवति वसुधाजे तदाऽष्टाविंशतिमे हायने दैवोदयः, तीर्थे तारातनये शौर्य्यवति तदा द्वात्रिंशतिमे हायने विधेरुदयः, संसारे सूरौ सुकृते सति तदा षोडशेऽब्दे दिष्टोदयः भाग्ये बलवत्तरे भार्गवे तदा पञ्चविंशतिमे वर्षे भाग्योदयः, मांसले मन्दमार्गे सति तदा षट्त्रिंशन्मितेऽब्दे भाग्योदयः, आद्ये वयसि आदित्यावनेयौ, मध्य वयसि सूरिसितौ चरमे वयसि मन्देन्दू सौम्यः सर्वदा फलप्रदो लेखनीयः। इति नवमभावलेखक्रिया।

---×---

अथातःगारं राज्यागारविचारः क्रियते'——

तत्र किं विचारणीयं तदाह'——

'कर्माज्ञाकृषितातजीवनयशोव्यापारसिंहासन-
राज्यप्राप्तिमहत्पदाप्तिशयनालङ्कारमाना न्वयाः ।
प्रव्रज्याऽऽगमखे प्रवासकमृणं विज्ञानविद्याऽश्वलो-
ऽवृष्टिर्वृष्टिरिलेशमानभृतका जान्वम्बरे चिन्तयेत्' ॥ १ ॥

इति वचनाद्दशमं कर्माज्ञाकृषितातजीवनप्रभृतीनां भवनं अमुकाख्यं अमुकदैवत्यं आत्मीयप्रभुणाऽवेक्षित-मनीक्षितं वा इतरैरपि दृष्टमदृष्टं सहितमसहितं वा लेखनीयम् । इह शुभखचारि दृग्योगः.....पापखचारिदृग्योगः.....उभयोर्विवरम्.....यदि शुभदृग्योगोऽधिकस्तेन दशमभावजन्यवस्तुनां कर्माज्ञाकृषितातजीवनादीनां श्रेष्ठं सुखम् । यदि पापदृग्योगोऽधिकस्तेन दशमभावजन्यपदार्थानां कर्माज्ञाकृषितातततादीनां सुखं न स्यात् । भावबलैक्यम्......भावेशबलैक्यम्......भावकारकबलैक्यम्...... एतत्सर्वं लेख्यम्, तन्न्यूनाधिकताऽपि चिन्त्या । तद्वशेन भावस्य शुभाशुभत्वं चिन्तयेत् । यदा मध्यमन्दिरं स्वस्वामिना समन्वितं वा वीक्षितं यद्वा तत्सौम्यखचरैः सहितमवलोकितं वा तदा तस्य सवितुः पक्षे सुखम्, महीपमन्दिरे मानं, व्यापारोद्यमे निखिलार्थसिद्धिर्लेखनीया । यदा नाकनायको नीचास्तगो वा क्रूराक्रान्तः क्रूरोपेतेक्षितो भवति तदा तस्य भूभृद्भवने मानं न स्यात्. जनकपक्षेऽपि सुखं न भवेत् व्यापारोद्यमे हानिः, एवं पदपातिर्द्वादशांशेऽपि ज्ञेयः । जनिकलेवरात् कर्माधीशः कल्याणखेचरसहितसमीक्षितो द्वादशांशे भवति यद्वा स्वभतुङ्गमूलत्रिकोणवयस्यराशिमाश्रितश्चेत्तदा सवितुः सुखं पूर्णम् । एवं मूर्त्तितो मध्येशोऽधरराशौ संस्थितो वाऽशुभसहितेक्षितो भवति तदा तस्य सवितुः सुखं न भवेत्, मिश्रखोकोयुक्तेक्षिते चेत्तदा सवितुः सुखं मिश्रम् । तस्य द्युसदो दाये भुक्तौ विदशायां वा सवितुः सुखमसुखं मिश्रं वा लेखनीयम् । व्योमभावतो वर्षं कल्पनीयम् मानमन्दिराद् यत्र स्थाने शुभग्रुगस्तिष्ठति वा तेन नभोनिशान्तं निरीक्षितं अथवा व्यापारागाराद्यस्य गृहस्याधिभूः शोभनो यत्रस्थस्तेन कर्मभावो निरीक्षितस्तद्भावपतिपर्य्यन्तं व्योमभावाद् वर्षं गणनीयम्, तदब्दे सवितुः शरीरे सुखं तस्य लाभो लेखनीयः । एवंविधेऽब्दे तस्मिन् हायने किं वा तस्य दाये भुक्तावुपदशायां वा जनककलेवरे कष्टं मिश्रखसदि तु तस्मिन्नब्दे सवितुः सुखं मिश्रम् ।

अत्र केचनरवेर्दशमं पितुर्भवनमाहुः—

'अर्कात्कर्म्मगतं पितुश्च भवन केचिद्वदन्ति' इति ।

दिनभर्त्तुर्दशमभावः सौम्येक्षितान्वितो भवति अथवा स्वस्वामिनाऽऽलोकितान्वितो भवति तदा जनितुः सुखं भवेत् । सचेत्पङ्कपुष्करचरनिरीक्षितान्वितो भवति यदा तदा तस्य तातस्य सुखं स्वल्पं मिश्रे मिश्रम्, केचिदर्कान्नवमं पितृगृहमाहुः—

'पिताऽम्बरेऽर्कान्नवमे च चिन्त्य' इति ।

यदा दिवसे जन्म तदा तपनात्रिके कुटुम्बे वा कल्मषखगाः स्युस्तदा तस्य तातस्य सुखं न भवत्येव, तेषु पूर्वोक्तयोगेषु खलखगदाये भुक्तौ वा तातस्य तनौ खसद्वशान्मरुन्मायुश्लेष्मसम्भवगदोदयः । चारुखचरनिरीक्षितान्वित तदा दुरितादित्रिचरस्य जपदानार्चनैः जनककलेवरस्य कष्टनाशः । यदा रात्रावुत्पत्तिस्तदा दैवाकरेर्दिवाकरवद्दुरितदिविचरा व्यवस्थिताश्चेदुक्तवत्फलं ज्ञेयम्, तद्व्यमतो योगसम्भवो ज्ञेयः, सर्वं स्वसंविदा सञ्चिन्त्य लेखनीयम्, यदा प्राप्तिभावे

पुण्योपेते तदा तस्य जनयिता स्ववान्, यदा कर्म्मसाक्षिणः कुटुम्बे कल्याणखगा भवन्ति तदा तस्याम्बकः स्ववान्, यदि लाभे खेर्वित्ते च दुष्कृताः स्युस्तदा तस्य जनिता निर्धनो, निरुद्यमी, आलस्यवान्, परकार्यहन्ता भवति मिश्रे मिश्रफलम्, एवं सञ्चिन्त्य लेखनीयम् ।

अत्रापि विशेषविचारः—

'विज्ञान विद्यागम कर्म्म जीवनव्यापारसन्न्यासयशांसि भूषणम् ।
आज्ञां च मानं शयनांशुकौ कृषिं विचिन्तयेज्ज्ञेज्यशनीनखेशतः ॥'

इति वचनाद्बोधनवाक्पतिवैरोचनिविरोचनव्यापारभावविभुतोऽपिविज्ञानविद्यागमादीनां विचारः कर्त्तव्यः । अथ व्यापारविचारः क्रियते—

यदि व्यापारभवनं सुहृद्राशिसमाश्रितेन सौम्याम्बरचरेण निरीक्षितं सहितं चेत्तदा तस्य व्यापारोद्यमे लाभोदयः, निखिलार्थसिद्धिः, यस्य व्यापारभावसम्बन्धिनो वियच्चरस्य या दिक् तादिशि व्यापारोद्यमे लाभोदयः, एवं बलवशाल्लेखनीयम् । एवं विधोऽपश्चेत्तदा व्यापारे हानिः तस्य शोभनस्य दाये भुक्तौ वा तत्र वर्षे व्यापारोदयः तास्मिन्व्यापारे लाभोदयः । सतः खगस्य यादृशो नीलरक्तपीतकृष्णवर्णस्तादृशवर्णवस्तुतो व्यापारे लाभोदयः । स्वजन्मराशेः सकाशात्सपत्नसदने यो राशिः स यस्य पुंसो भवति तेन सह व्यापारोद्यमे सिद्धिर्नास्ति, यस्य यौ जन्मलग्नजन्मराशिस्वामिनौ तयोर्ये ग्रहाः शत्रवस्तेषां ये राशयस्तन्मध्ये यदन्यपुरुषस्य राशिश्चेद्भवति तेन सह व्यापारोद्यमे शत्रुभावः, मित्रे मित्रभावः, समे समभावः एवं सञ्चिन्त्य लेखनीयम् ।

अथ प्रत्येकग्रहफलमाह—

यदा कर्म्मणि कठोरज्योतिर्भवति तदा तातधनभोक्ता, भाग्यवान्, शेमुषीमान्, निजनिलये गृहोपस्करादि-सुखम्, अतिपराक्रमी भवेत् ।

यदा कर्म्मणि कुवलयनाथे सति तदाऽस्य जननीतो धनलाभः, राजान्नभोक्ता, महीपमन्दिरे मानवृद्धिः, मातृ-सुखं परिपूर्णं, दैवविद्, भैषज्यकारकः, लेखकः, पाठकः, अयाचकः, नित्यवृत्तिः,

'कृषिजलजाङ्गनाश्रयाद् वृत्तिः' इति ।

यदाऽऽस्पदे आषाढाभूः (मं) राजान्नभोक्ता, शोणितविकारवान्, तातवित्तनाशकर्ता पापकार्योदये निज-कार्यकर्त्ता, धातुमारणादि हाटकादि धातुक्रयविक्रये व्यापारे लाभः, आयुधधारणे स्वयशोमहिमवृद्धिः, वैरितो झकटादिकार्येवित्तोदयः इति ।

यदा वंशे श्रविष्ठाभूः (बु) तदा प्रथमे वयसि सुखी, नूतनवृत्तिकारकः परोपकारकर्त्ता, प्रकसञ्चितवित्तभोक्ता, साधुः, कृपालुः सुहृत्प्रसङ्गाद्वित्तवृद्धिः, लेखक्रियायां चतुरः, गणितव्यवहारे नीतिमार्गकर्त्ता, राजकलासु चतुरता, उद्यमी इति ।

यदा दशमे द्वादशार्चिषि (बृ) तदा राज्ये महदाश्रयः, धनी, यात्रायां यानेन युक्तः, स्वीयसोदरतो वित्तातिः, वसुधासु विबुधोपकारनिरतः, धर्म्मिष्ठः, आद्यमध्यवयसोः सुखी इति ।

यदा ऽऽकाशे श्वेतरथः (शु) तदा ऽदभ्रधीमान्, तातवचने विद्वेषग्राहकः, नष्टवित्तोपार्जकः, प्राज्ञः, वाचाटः, गानविद्यायां प्रीतिः, वार्त्तासु रसिकः इति ।

यदाऽत्रे रेवतीभवः (श) भरणीभूः (रा) अश्लेषाभूः (के) वा तदा मलिनोद्यमी, निम्नकर्म्मणा जीविका, सवित्र्याः सुखं स्वल्पं, प्रथमचरमवयसोरनधिकारी, जनकतः कलहकारी, क्षुद्रः, द्रोहकार्य्यकर्त्ता, विपर्यय-बुद्धिः, मध्यवयसिजनितुर्नाशः इति। कीर्त्तौ कोणे (श.) कुम्भकुम्भीरजूकानामन्यतमगते तदोक्तभावफलं विपरीतं ज्ञेयं तल्लेखनीयम् । कर्मणि काकोदरे कामकन्याकुम्भानामन्यतमगते तदा भावोक्तं फलं शुभं ज्ञेयम् । महीपमन्दिरे मानं वा अपमानं, अकस्माद् राज्यतो भीतिर्वा प्राप्तिः खपान्थवशतो लेखनीया, कुनाथकुलाल्लाभो वा हानिः, राजपदवी प्राप्तिः। वाऽपमानम् । तातवर्गे सुखं वाऽसुखं तेनसह सख्यित्वं वा सपत्नत्वं वाणिज्यक्रियायां वा राज्यक्रियायां कर्म्मणा जीविका वान्तरायः । अमुकवर्षपर्य्यन्तं सवितुः सुखं यस्तारापथचारी तातारिष्टकर्त्ता तस्य दाये भुक्तौ अम्बकस्य सुखं न भवेत् । एवं हायनो कल्पनीयः । ततः पूर्वोक्तान् निखिलान् राजयोगान् सम्यक् सञ्चिन्त्य लिखेत् । यस्य वियच्चरस्य येन कर्म्मणा जीविका भवेत् स वृत्तिकारकः, तन्मध्ये कर्म्मणा वृत्तिः, अमुककर्म्मणः कर्म्मोदयः सर्वै राज्यमुद्राधिकारैः सह मित्रादिभावो लेखनीय इति दशमभाव लेखक्रिया ।

अथातः परं लाभभावविचारः क्रियते

तत्र किं विचार्य्यं तदाह—

द्रव्याप्तिजंघायुगले स्वदक्षांघ्यदक्षबाहू अनपत्यता च ।
प्राप्तिः सुतायास्तनयस्य बाभा नाशो सुतानां शिविकारथादि ॥ १ ॥
आन्दोलिकावाहनवाजिभूषेभस्वर्णवस्त्राणि सदादिकानि ।
वामश्रुतिर्मङ्गलमण्डनादि विद्याप्तिराये निखिलं विचार्य्यम् ॥ २ ॥

इति वचनाल्लाभभवनं द्रव्याप्तिजंघायुगलादीनां भवनं अमुकाभिधं अमुकदैवत्यं निजाधिपेन वीक्षितमवीक्षितं सहितमसहितं वा इतरैर्द्युचरैर्युतमयुतं दृष्टमदृष्टं वा एवं सदसद्द्युचरवीक्षणविचारवशेन फलं लेखनीयम् । इह शुभालोकनयोगः ......पापालोकनयोगः ......उभयोरन्तरम्....यदि शुभदृग्योगोऽधिकस्तेन लाभभावजन्यपदार्थानां द्रव्याप्तिजंघायुगलादीनां श्रेष्ठं सुखम् । यदि पापदृग्योगोऽधिकस्तेन लाभभावजन्यपदार्थानां द्रव्याप्तिजंघायुगलादीना-मपचयः । भावबलैक्यम्........भावेशबलैक्यम्........भावकारक (गुरु) बलैक्यम्........एतत्सर्वं लेख्यम्, तन्यूना-धिकताऽपि चिन्त्या ।

सर्वेषां भावानामपेक्षया लाभभावस्य विशेष सौम्यतामाह—

भावाः समग्रा भवभेऽधिवीर्य्ये शुभा भवेयुर्भवभावनाथे ।
षड्वीर्य्ययुक्ते सुशुभं ध्रुवंस्यात्तत्रैकखेटे रसवर्गशुद्धे ॥

इति वचनाल्लाभस्य सौम्यत्वे सति निखिला भावाः सौम्या भवन्ति । लाभालयनाथे षड्बलसहिते सति निश्चये नातिशुभं भवेत् । तत्रगते षड्वर्गशुद्धे एकग्रहे तथा भवेत् ।

ग्रहयुतिदृष्टिवशेन लाभभावफलमाहः—

यदा भवे भानुकेसरसहितेक्षिते स्वसदनगे स्वोच्चसदनगे वा तदेलायालालयाल्लाभोदयः, ततस्तुर्य्याग्रिमुखतो लाभोदयः, बहुलवित्तसञ्चयः, स्वोपार्जितवित्तभोक्ता, दिवाकरस्य दाये भुक्तौ विदशायां वा निजनिलये, लाभोदयः यदि विरोचनो बलिष्ठो न भवति तदा विषयान्तरे प्राच्यां लाभोदयः इति। यदा निजनिलयाश्रितेन श्रविष्ठारमणेन (चं.) मनोरथनिलययुतवीक्षितश्चेत्तदा वारिभववस्तुतो मणिमुक्ताफलहीरकादितो लाभोदयः सीमन्तिनी जनाश्रयाल्लाभः वलक्षे पक्षे बलिष्ठे तिथिप्रवर्त्तके (चं.) वाजिकुञ्जरवृद्धिः, क्षीणः स्नेहरेकभू (चं.) चेत्तदा लाभोनास्ति, यदा बलक्षपक्षेजन्म फलागमे, (११) द्रुहिणपादजातके (चं.) वयस्यनिलये व्यवस्थिते सति तदा हयहस्तिवृद्धिर्न स्यात् तदोत्तराशायां लाभोदयः इति।

यदा भवभावे भूमिदायादेन (मं.) अन्वितवीक्षिते तदा तस्यालये मणिसुवर्णभूपादितो लब्धिः, अनेककलया लाभोदयः कियकौर्पिकुम्भीरगते अवनीतजन्मा (मं.) चेदायेवर्त्तते तदा वसुधातो वसुधापतितो वा बहुलाभोदयः, एवं विधे वक्रचारे (मं.) वैकर्त्तनि निरीक्षितेऽन्यराशिगे लाभेऽस्ति चेत्तदा दक्षिणस्यां दिशि लाभोदयः, क्रूरोग्रकर्मकर्ता उपविद्यावान् अतिभ्रमणकारी, ग्रामसेनाधिकारी, परापवादग्राही, प्रथमसन्ततिनाशः इति। यदि उपान्त्ये श्यामाङ्गे (बु.) वल्लकीवनिताभस्ये वयस्य भवनेयद्वा मूलत्रिकोणगते, तदा नानाकाव्यकलावान्, पृथिवीपति-पुत्रतो लाभः अनेकोद्यमाल्लाभोदयः व्यापारादिवणिक्क्रियायां लाभः निजोदवसिते द्रविणवृद्धिः विषयान्तरे सेवक-जनाल्लाभवृद्धिः, अन्यराशिगते चांद्रिमासिनि (बु.) वाऽथवीक्षिते तदैन्द्र्यां लाभोदयः चरमवयसि सुखी, व्यसनवान्, उदारः,क्रूरः,लाभे स्थिरारम्भी, बहुकर्मकर्त्ता, स्वीयकुमारात्कमलावृद्धिः, यदा विबलो पञ्चार्चिः(बु.) भवेवर्त्तते तदैतादृशं फलं ज्ञेयम् इति यदा निषाङ्गि (९) अनिमिषानिचिते (१२) द्वादशकरे (गु.) चेत्तदा ऽ दभ्रलाभवान्, अनेकवस्तुतो लाभोदयः यज्ञक्रियादिकर्म्मकर्त्ता, साधुजनवल्लभः राज्याश्रितवृत्तित उत्कृष्टलाभोदयः द्रव्येण बहुना चामीकरेणच युक्तः, यदा कुलीरोपगेन फाल्गुनीभवेन (गु.) लाभभावो युतदृष्टश्चेत्तदा ऽप्येवं फलं मतम्, सौम्यासौम्यसहितेक्षिते मिश्रे देवोपनिधि (गु.) लाभे चेत्तदा मिश्रलाभः, तस्य स्वीयसद्मनि लाभोदयोनास्ति, तदाप्रागुत्तरदिशोर्लाभः, पीतवस्तुतो लाभः, द्विजजनाल्लाभः नित्यमिष्टान्नभोक्ता, वनिताजितः, विद्वान्, मेधावी, यानादिसहितो भवति, तस्य दाये भुक्तौ विदशायां वा भाग्योदयः, किंवा लाभभावाद्वर्षे प्रकल्प्यं यत्रभावे बलिष्ठो वियच्चरोवर्त्तते यस्य दृष्टिर्लाभभावे भवति तस्य ग्रहस्य लाभभावाद् यत्संख्यात्मकभावपर्यन्तं वा तस्य ग्रहस्य स्थानं यत्संख्यात्मकं स्यात्तद्वर्षमध्ये लाभोदयः इति।

यदा सुरारिदयितेन (शु.) स्वोच्चस्थेन सुहृद्भवनव्यवस्थितेन वा लब्धिनिलयं निरीक्षितान्वितं चेत्तदा वेश्याजनतो लाभोदयः, मंत्रिशुभ्रवस्तुतोऽपि लाभोदयः, स्वीयसद्मनि रजत-हाटकसुरभिमहिषी प्रभृतीनां चितिः, यदा निर्बलेन निम्नराशिगेन सपत्नराशिसमाश्रितेन श्वेतरथेन (शु.) फलागमे सहितेक्षिते तदा तस्य स्वसदने लाभोदयो न स्यात्, तस्य सौम्याशायां लाभोदयः, तस्य निखिलानि वस्तूनि मनोज्ञानि भवन्ति, वरवनितास्वोपार्ज्जितवित्तभोक्ता, निजजनप्रियः अनर्च्यार्चकः आपदा वियुतः जनितुः प्रियः प्रवासी इति।

यदाऽऽगमे (११) श्रुतश्रवोऽनुजो (श.) धटहरिणद्वद्रोगानामन्यतमस्थो भवति तदा तस्य नीललोहमहिषीलाभः, यदा सम्भवानेहसि राज्ययोगो भवति यद्वाशौर्य्यवान्, श्रुतकर्मा (श.) भवभावे भवति तदा हयहस्तिलाभः, यदा प्रेतपुरीशः पण्डितेन निरीक्षितस्तदा ग्रामादिरक्षणेऽन्त्यतलाभोदयः इति।

सति बलिष्ठे लाभभावे शोभनसहितेक्षिते तदाऽनेकप्रकारेण लाभोदयः सर्वार्थसिद्धिः, यदा कर्कलग्नेवाक्पतिना वीक्षितसहिते मेषूरणे मङ्गले, भवभावे भार्गवे तस्यालये मदगर्जिता गजास्तिष्ठेयुः, तस्याधिकारादनेककलया लाभोदयः, यस्य लेयलग्ने लोकबन्धौ भृगुतनूजे जनकभवने उपान्त्ये उशेषजाते तदा ते हयहस्तिनरवाहनलाभकारिणो ज्ञेयाः, एवं श्लोकोक्तं फलं विचार्य्य लेखनीयम्। अस्योद्यमाल्लाभो वा स्वल्पलाभो वा हस्तगतलाभनाशः वियच्चरवशाल्लेखनीयः।

भवभावे वैरिवियच्चराश्रिते तदा लाभोद्यमे विश्वासो नैवरक्षणीयः, धवलश्याम पीत लोहितवस्तुतो लाभो वा हानिः। यदोपान्त्ये वीर्य्यभाजा भृगुजेन किंवा ऽ त्रिदृग्जेनोपेतेक्षिते तदा हाटक रजतांशुकमाणिमौक्तिकलब्धिर्लेखनीया। यदा महेलालयपालो लाभेवर्त्तते तदा क्रयविक्रये वणिक् क्रियायां प्रचुर लाभोभवेत्। यानतः सुखं वा ऽ सुखं श्वशुरपक्षे मानं वा अपमानं चिन्त्यम्। यदा कलेवरपालेन सहितेक्षिते लब्धौ तदा श्वशुरपक्षे सुख लाभोदयो ऽन्यथाऽपमानम्। द्विजाद्यन्त्यवर्णपर्यन्तं ततो लाभो वा क्षतिर्निभोग वशतो लेखनीया। स्वदेशे विषयान्तरे वा लाभोदयो वा हानिः, इलापालकुलाल्लाभो वाऽपमानम्। तुर्य्योघ्रितोवाप्तिर्वाहानिः स्थानान्तरा दाप्तिर्वाक्षतिः। चित्रपञ्चो-पायात्सिद्धिर्वाहानिः। यो भावः साधुनभोगैः सहितो विलोकितो वा तस्मिन् हायनेऽमुकजनादमुकवस्तुतो लाभो-दयः। निजनिज दायदिष्टे ऽ वाप्तिर्वा क्षतिर्भवति। एवं सञ्चिन्त्य सर्वं भावजन्यं शुभाशुभं फलं लेखनीयम्। एवमम्बर-चारिणां सारासारमवलोक्य प्राप्तिर्वा क्षतिर्लेखनीया इति भवभाव लेखक्रिया।

अथातः परं व्ययभावो विचार्य्यते—

तत्र किं चिन्तनीयं तदाह—

व्ययः समस्तो विभवस्य नाशो व्ययः सुयज्ञेषु धनस्य हानिः।
ऋणांघ्रिदूराटनबन्धनादि स्वापादिसौख्यं विकलत्वदण्डौ ॥ १ ॥

कृषेः क्रिया दुर्गतिदानलब्धी दातृत्ववामाक्षिजलाशयादि।
तातानुजो वैकृतभोगपूर्वे मंत्री विवाहः पतनं रिपूणाम् ॥ २ ॥

वृत्तान्तमप्युद्वहनं पितुःस्वं निर्बन्धवाधे सदसात्क्रियादि।
सम्पूर्णमेतद् व्ययनामधेये गेहे नराणां परिचिन्तनीयम् ॥ ३ ॥

इति वचनाद् व्ययगृहं व्ययपितृव्यादीनां भवनं अमुकाख्यं अमुकदैवत्यं आत्मीयेन विभुना सहितमसहितं दृष्टमदृष्टं वा इतरैर्द्युचरैरपिवीक्षितमवीक्षितं वा, एवं सौम्यासौम्य वियच्चरयोग विचारवशेन शुभाशुभफलं लेखनीयम्। इह शुभदृग्योगः........पापदृग्योगः.......उभयोरन्तरम्......यदि शुभदृग्योगो ऽ धिकस्तेन व्यय-भावजन्य पदार्थानां व्ययपितृव्यादीनां श्रेष्ठ सुखम्। यदि पापदृग्योगोऽधिकस्तेन व्ययभावजन्यपदार्थानां व्ययपितृव्यादी-नामपचयः। भावबलैक्यम्........भावेशबलैक्यम्.......भावकारकबलैक्यम्....एतत्सर्वं लेखनीयम्। तन्न्यूनाधिकताऽपिलेखनीया। यदा व्ययभावे पङ्कपुष्करचर निरीक्षितान्विते यद्वा असदन्तराले यदाऽवसानेशे असदन्तःस्थे तदा पदे पदे वित्तापचयः। अवसानगो विधीशश्चाम्बरचरनिरीक्षितान्वितस्तदा दानप्रसङ्गात्स्वयश उदयः। यद्यवसानगे भानुजनौ भौमेन युतेक्षिते तदा तस्य प्रचुरद्रव्यनाशः। यदि पूर्णबलीन्दुबोधनवागीश भार्गवतपोऽङ्गनाथव्यतिरिक्त दिविचरोऽपाये चेत्तदा प्रचुरवित्तसञ्चयेऽपि सुकृतोदयो न भवेत्, अर्थात्कृपणो भवति। यदि सूनुसदने (५) ऽवसाने (१२) वित्ते (२) विधौ (९) दुरितनभश्चरा वर्त्तन्ते तदा तेषां दाये हृतौ विदशायां वा बन्धनं प्रकल्प्यम्। यदाऽवसानगः सुकृतेशः सुकृताम्बरचारिणा निरीक्षितान्वितश्चेत्तदा तीर्थाश्रये यागादिकर्म्मसु मठमण्डपादि कृतोद्यमे च तस्य प्रचुरवित्तव्ययो भवेत्। यदि नभो भावनाथो निम्नराशिगो वा अहितराशिगोऽवसाने साधो वर्त्तते तदा शीर्षेऽपवादो भवेत्। तेन केनचित्पैशुन्येन राजदण्डोऽपि भवेत्। यदा वित्तेशो

घसानगो व्ययेशो वैरिवधगश्चेत्तदा कुत्सितकर्म्मकर्ता भवेत् । तेन वाराङ्गनाप्रसङ्गेन वाऽन्यस्थाने व्यभिचारयोगेन भूरिवित्तव्ययो भवेत् । यद्वा सपत्नमार्गे द्रव्यव्ययः । यदा प्रान्त्येशः परिपंथिनि परिपन्थिपालः प्रान्त्ये चेत्तदा तस्य झकटादि कार्ये प्रचुरवित्तव्ययः । यदि कोशेशोऽवसानं प्राप्तोऽवसावेश. परिपन्थिपञ्चतालयस्थश्चेत्तदा तस्य कुमार्गेण भूरिवित्त-व्ययः । चरमे वयसि दुर्विधो भवेत् । यदि चरमसद्मस्वामी कल्याणखगगणे मूलत्रिकोणोच्चराशियाश्रितः सन् व्यय-कण्टककोणभावगतः सौम्येन वा सुहृदा सहितो भवति यदा तदा विवाहोत्सवमङ्गलकार्य्ये प्रचुरवित्तव्ययः, तन्मध्ये समशोदयः । रिःफागारे दुरितखचरराशौ दुरित खचरसहिते रिःफागाररमणोऽपि दुरितादिविचरेण सहितश्चेत्तदा तस्य कुत्सितमार्गेण व्यसनव्यभिचारेण भूरिवित्तव्ययः, चरमे वयसि पदे पदे कष्टं धननाशश्च । यदि प्रान्त्येशः पङ्कपुष्क-रचरः पङ्कखगेन सहितेक्षितः सपीयूषकिरणः परिपन्थिपञ्चतालयस्थश्चेत्तदा तस्यानेकैर्व्याधिभिर्भूरिवित्तव्ययः ।

अत्रापि विशेषविचारः'—

'विचिन्तयेज्ज्यौतिषिको जघन्यतस्तन्नायकेनारुणनन्दनेन च ।
दातृत्वदूराटनदुर्गतीः सदा स्वापादिसौख्यं विभवार्थसंक्षयम्' ॥ १ ॥

इति वचनादस्मिन्नेव स्थाने दातृत्वदूराटनप्रभृतीनां पदार्थानामपि चिन्ता विधेया इति ।

अस्मिन् स्थानेऽपि वाहनोवचारो विधेयः स चेत्थम्'—

'मांसलैर्जीवविद्धिष्ण्यैर्वाहनं निर्दिशेद्बुधः ।
वाहनोक्तफलं सर्वं तदिहापि विचिन्तयेत्' ॥ १ ॥

इति वचनाद् वीर्यवद्भिर्वागीशभार्गवबोधनैरपि वाहनविचारो विधेयः ।

ततः प्रत्यकग्रहफलमाह'—

यदा द्वादशे द्वादशात्मनि (र.) तदा कुचैष्टिकः, कलहप्रियः भोगोनः त्यागी, वैरिवर्जितः, बहुलकर्मचतुरः इति ।

यदा चरमे चन्द्रमसि तदा वामविलोचनदूषणं, मधुरान्नभोक्ता, शुभकर्मकर्त्ता, अम्बावल्लभः मातुलार्थभोक्ता-कस्यां रुक् सुरते नोत्पद्यते कामः इति ।

तत्रासृजि नाना रोगप्रहारकः, प्रागर्जितवित्तभोक्ता, अपत्येषु दुःखी, सदा वादग्राहकः, परकार्यहन्ता, विपिन-वासी, दुष्टस्वभावः, सुकृतोनः, अल्पमृत्युः, अनेकापदा मातुलपक्षे सुखं न भवेत् । सिमन्तिन्या किं वा सहजेन सह विरोधः इति ।

तत्र तारातनये शीतलस्वभावः, स्थिरारम्भी, विजयवान्, दीनः, प्रमादी, गुणद्वेषी, परदारकः, दयिताद्रव्य, भोक्ता, महान् विजयी, धनवान्, नेता, परकार्यकर्त्ता, शान्तगुणोपेतः, प्रमदाप्रेरकः, दयिताधूर्त्तकः इति ।

तत्र वाचामीशे, अलसोनः, विजनाय्युन्मत्तः, जघन्यकर्मानुरतः, व्यभिचारी, त्रपोनः इति ।

तत्रास्फुजिति स्वजनप्रियः, नयनामयी, जीविकोनः, प्रचुरवित्तवान्, सत्कर्मकर्त्ता, अहिंसकः, निखिलासु कलासु कुशलः, जननीपक्षे सुखकारी, दुर्गतिनाशकः, धातुक्षयी इति ।

तत्र मन्दे वाहौ चेत्तदा अतिकोपी, मिथ्या क्लेशः, सुकृताध्वनि प्रीतिवियुतः, परदुःखदाता, दुर्व्यसनवान्, भयभीतः, परद्वेषी, अनाचारी, अन्वयाभिमानी इति ।

अस्य सन्मार्गे वित्तव्ययो वा असन्मार्गे वित्तव्ययश्चिन्त्यः । एतादृशं फलं निजनिजदाये भुक्तौ विदशायां वा चिन्त्यम् । श्लोकोक्तं सदसत्फलमपि लेखनीयम् इति व्ययभावविचारः ।

'अथोच्चरश्मः'। 'अथ चेष्टारश्मः'। 'अथेष्टम्'। 'अथ कष्टम्'। 'अथेष्टबलम्'। 'अथ कष्टबलम्'। 'अथेष्टदृष्टिः'। 'अथकष्टदृष्टिः'।

अथायुर्दायानयनमाह'—

'उच्चगुणः'। 'चेष्टागुणः'। 'स्फुटगुणः'। 'मध्यमाश्रयगुणः'। 'स्पष्टाश्रयगुणः'। 'स्फुटाश्रयगुणगुणनम्'। 'कर्म्मयोग्यगुणः'। आयुर्भागाः'। 'चक्रार्द्धहानिगुणः'। 'चक्रार्द्धहानिसंस्कृतायुर्भागाः'। 'अथांशायुश्चक्रमिदम्'। 'पीडादीनामायुषाभायुर्भागाः'। 'शत्रुक्षेत्रहानिसंस्कृतायुर्भागाः'। 'अस्तंगतहानिसंस्कृतायु र्भागाः'। 'चक्रार्द्धहानिसंस्कृतायुर्भागाः'। 'लग्नस्थपापहानिसंस्कृतायुर्भागाः'। 'अथ पिण्डायुश्चक्रमिदम्'। 'अथ निसर्गायुश्चक्रमिदम्'। 'अथ जीवायुश्चक्रमिदम्'। 'द्वयोर्योगः'। 'त्रयाणांयोगः'। 'अथ मिश्रायुश्चक्रमिदम्'। 'अथ मिश्रायुर्दशाक्रमः'। 'अथ लग्नान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ रवेरन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ विधोरन्तर्दशाक्रमः।' 'अथभौमान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ बुधान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ जीवान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ शुक्रान्तर्दशाक :'। 'अथ शन्यन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ दशाप्रवेशचक्रम्'।

'अथाष्टकवर्गाः'।

'अथ रविरष्टकवर्गः'। 'चन्द्राष्टकवर्गः'। 'भौमाष्टकवर्गः'। 'बुधाष्टकवर्गः'। 'जीवाष्टकवर्गः'। 'शुक्राष्टकवर्गः'। 'मन्दाष्टकवर्गः'। 'लग्नाष्टकवर्गः'। 'सामुदायाष्टकवर्गः'।

अथैषां स्थापनाविधिं तत्फलं चाह'—

> 'उक्तानि यानीह गृहाणि तानि च ज्ञेयानि सौम्यान्यपराणि यानिहि।
> अशोभनान्यत्र तदन्तराच्च यत्पुष्टं फलं यच्छति खेचरः स्वभात् ॥ १ ॥
> स्थानाभिधादेकमुखात् क्रमेण कष्टं स्वहानिर्व्यसनं च मध्यम्।
> क्षेमं च नित्यं द्रविणस्य लाभस्त्वतीव हर्षः सकला च सम्पत्' इति ॥

ततः सुदर्शनचक्रं लेखनीयम्'—

'चक्रोद्धारपूर्वकं तत्फलमाह'—

> 'यद् द्वादशारं हि सुदर्शनाख्यं चक्रं तु वृत्तैस्त्रिभिरन्वितं तत्।
> आद्येऽत्र वृत्ते जनिलग्नराशेर्भावाः सखेटाश्च तदूर्ध्ववृत्ते ॥ १ ॥
> सखेटभावा विधुभाद्विलेख्या वृत्ते तदूर्ध्वे रवितोऽपि तद्वत्।
> वृत्तत्रये ये द्युसदोऽपि यत्र राशौ स्थितास्तत्र च तत्र लेख्याः ॥ २ ॥
> विलोकयेत्तद्गृहतोऽथ जन्माङ्गेन्द्वर्कभेभ्यो निधने त्रिकोणे।
> केन्द्रे तमः पापखगास्तथा च दुःखाय सौख्याय शुभग्रहाः स्युः' इति ॥

'अथ विंशोत्तरीदशाक्रमः'। 'तत्रादौ रविदशाफलमाह'। 'अथ चन्द्रदशाफलमाह'। 'अथ भौमदशाफलमाह'। 'अथ राहुदशाफलमाह'। 'अथ गुरुदशाफलमाह'। 'अथ शनिदशाफलमाह'। 'अथ बुधदशाफलमाह'। 'अथ केतुदशाफलमाह'। 'अथ शुक्रदशाफलमाह'। 'अथ खेरन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ चन्द्रान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ

'भौमान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ राहोरन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ गुरोरन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ शनेरन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ बुधान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ केतोरन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ शुक्रान्तर्दशाक्रमः'। एतत्सर्वं प्रागुक्तविधानेन साधनीयं लेखनीयं चेति।

'अथ योगिनीदशाक्रमः'।

'तत्रादौ मङ्गलाफलमाह'। 'अथ पिङ्गलाफलमाह'। 'अथ धान्याफलमाह'। 'भ्रामरीफलमाह'। 'अथ भद्रिकाफलमाह'। अथोल्काफलमाह'। 'अथ सिद्धाफलमाह'। 'अथ सङ्कटाफलमाह'। एतत्सर्वं दशाध्यायोक्तवल्लेखनीयम्। अथ योगिन्यामन्तर्दशाक्रमो लेखनीयः।

'तत्रादौ मङ्गलान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ पिङ्गलान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ धान्यान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ भ्रामर्य्यन्तर्दशाक्रमः'। 'अथ भद्रिकान्तर्दशाक्रमः'। 'अथोल्कान्तर्दशाक्रमः'। 'अथ सिद्धान्तर्दशाक्रमः' 'अथ सङ्कटान्तर्दशाक्रमः'।

'अथ चरदशाक्रमः'। 'अथ कालचक्रीदशाक्रमः'। एवं शास्त्रोक्तविधिना अन्या दशा अपि साधनीया लेखनीयाश्चेति।

'इति जन्मपत्रीलेखक्रिया समाप्ता'।

साधारणजन्मपत्रीलेखक्रिया'—

श्रीगणेशायनमः'।

स्वस्ति श्रीमन्नृपविक्रमार्कराज्यसमयादतीतसंवत्....वर्षे, श्रीमद्भूपतिशालिवाहनकृतशाके....प्रवर्त्तमाने, नर्मदाया उत्तरे भागे अमुकनाम्नि संवत्सरे, अमुकगोलावलम्बिते श्रीगगनचक्रचूडामणौ, अमुकायनगते श्रीसूर्ये, अमुकर्त्तौ, सन्मङ्गल्यप्रदमासोत्तमे अमुकमासे, अमुकपक्षे, अमुकीतिथिघटिकाः....पलानि....जन्मतिथौ....अमुकवासरे, अमुकनक्षत्रघटिकाः....पलानि....जन्मनक्षत्रे, अमुकयोगघटिकाः....पलानि....जन्मयोगे, अमुककरणे, अमुकराशिस्थिते चन्द्रे, राशिनवमांशे द्वितीये, अमुकराश्यभिध, अमुकवश्ये, अमुकयोनौ, अमुकगणे, अमुकवर्णे, अमुकवर्गे, श्रीसूर्याक्रान्तनक्षत्रात्पुरुषाकृतौ, अमुकावयवस्थिते, श्रीरोहिणीरमणनक्षत्रे, अमुकीनाडीस्थिते, श्रीफणीश्वरचक्रे, चन्द्रनक्षत्रे, अमुकभागयुञ्जायाम्, अमुकहंसे (तत्त्वे) अमुकसंक्रान्तेर्गतांशाः....कलाः....विकलाः....एवं पञ्चाङ्गशुद्धौ तद्दिने श्रीसूर्योदयाद्गतघटिकाः....पलानि.. समये, अमुकलग्नव्यञ्जनायामस्यां शुभग्रहनिरीक्षितकल्याणवतीवेलायाम्, अमुकज्ञातौ, 'अवटङ्क' (उपाह्व) अमुकगृहभार्य्योभयकुलानन्ददात्री, अमुकीदेवीकुक्षे पुत्ररत्नमजनि, तस्याभिधानमवकहडचक्रानुसारेण अमुकाक्षरादिममुकरवरान्वितं, अमुकनक्षत्रस्य अमुकचरणानुगं अमुक इति जन्मनाम सप्रतिष्ठितं, द्वितीयं मातापित्रोरुल्लासकरं, देशज्ञातपरिमतं, कुटुम्बजनैरनुमोदितं पितृष्वस्रादत्तं अमुक इति व्यावहारिकं नाम सुप्रतिष्ठितम्, भवतु तराम्। इति जन्माक्षरावधिः समाप्तः।

अथवा

श्रिये नमः'।

अथ श्रीमन्नृपवरविक्रमार्कीयसंवत्....तदन्तर्गतश्रीमच्छालिवाहनभूभर्तुः शाके....तत्र षष्ठ्यब्दानां मध्ये अमुकनाम्नि संवत्सरे, तत्रामुकायने भास्करे, अमुकर्त्तौ, मासानां मासोत्तमे अमुकमासे, अमुकपक्षे, अमुकीतिथौ, अमुकवारे घट्यादि। अमुकनक्षत्रे घट्यादि। परतोऽमुकनक्षत्रे, अमुकयोगे घट्यादि। अमुकनाम्नि करणे घट्यादि।

एवं परिशोधितपञ्चाङ्गशुद्धे अमुकार्कसंक्रमात्, अमुकमितगतेऽहनि...तत्र दिनप्रमाणं घट्यादि । रजनीमानम् । अहोरात्रम् ६०।० अमुकार्कगतांशाः....भोग्यांशाः...तद्दिने श्रीसूर्योदयादिष्टघट्यादि । तदा अमुकलग्नोदये । श्रीमदमुकात्मज अमुकः तद्गृहे पत्न्या उभयकुलानन्दकरं पुत्र (कन्या) रत्नमजनि (प्रासूत) तस्य होडाचक्रानुसारेण अमुकनक्षत्रस्य अमुकचरणे जननत्वात् अमुकनामेति शुभम्, उल्लापने तु अमुकनामेति लोके प्रसिद्धः, देवद्विजाशीर्वचनाच्चिरंजीवी सुखी च भूयात् । अस्यामुकराशिः । अमुकस्वामी । भयातम् । ...भभोगः..दशासाधनाय स्पष्टभोग्य घट्यादि ।

'जन्माङ्गमिदम्' 'चन्द्रकुण्डलीयम्'।

——×——

'अथवा'

'श्रीशः पायाद्वः'

सर्वे भानुमुखाः खेटा हेरम्बाद्याश्च देवताः ।
जन्मपत्री च यस्यैषा दीर्घमायुर्दिशन्तु तम् (१

अथ शुभश्रीमन्नृपतिर्वि.रविक्रमादित्यराज्यसमयादतीताब्दाः संवत्..श्रीमन्नृपशालिवाहनराज्यसमयतो याताब्दाः शकः...मासोत्तमे अमुकमासे शुभे अमुकपक्षे अमुकीतिथौ अमुकवासरे घट्यादि । अमुकनक्षत्रस्य घट्यः...पलानि... अमुकयोगस्य घट्यः...पलानि...अमुककरणस्य घट्यः..पलानि...एवंविधे पञ्चाङ्गशुद्धौ दिनमानघट्यादि । रात्रिमानघट्यादि । अहोरात्रम् ६०।० अमुकार्कगतांशाः...भोग्यांशाः..तत्र सूर्योदयादिष्टम् । एतत्समये अमुकोदयेऽमुकगोत्रोद्भवामुकगृहे पुत्रो जातः (कन्या जाता) तन्नाम अमुकनक्षत्रस्य अमुकचरणजनिवशात् अमुकाक्षरे अमुकस्वरेण बोध्यम् । देवद्विजाशीर्भिः शतवर्षं जीयात् । 'जन्मलग्नोद्धारः'।'चन्द्रकुण्डली'।

——×——

'अथवा'

'श्रीशाय नमः'।

श्रीशुभसँम्वत्सरे... अमुकार्कसंक्रमादमुकमितगतेऽहनि... अमुकवासरे । श्रीनोदयादिष्टम् । एतत्समये अमुकोदयेऽस्य राश्यादौ । । । श्रीमद्... देशे... मण्डले.. ग्रामे अमुकवंशावतंसे । श्रीयुत...अमुकगृहिणी... पुत्ररत्नमज जनत् । अस्यामुकराशिः । अमुकस्वामी ।

'जन्माङ्गमेतत्'।'आधानाङ्गमदः'।

——×——

'श्रीगणपतिर्जयतुतराम्'

सर्वे रव्यादयः खेटाः सर्क्षयोगास्तथा सभाः ।
यस्य हायनपत्रीयं दीर्घमायुर्दिशन्तु तम् (१)

श्री वैक्रमीयसंवत्...शकः...अमुकमासे...अमुकपक्षे...अमुकतिथौ...अमुकवारे घट्यादि.... । अमुकभस्य घट्यादि । अमुकयोगस्य घट्यादि । एवं पञ्चाङ्गशुद्धौ सत्यां दिनमानम् । रात्रिमानम् । अहोरात्रम् ६०।० अमुकार्कगतांशाः-...भोग्यांशाः-...तत्रेष्टम् । तदा अमुकलग्नोदयेऽमुकगोत्रोत्पन्नामुकशर्म्मविजयाब्दप्रवेशः...गताब्दाः... ।

'वर्षलग्नमदः' । 'जन्माङ्गमदः' । 'पञ्चाधिकारिणः' । 'हर्षबलमिदम्' । 'मुद्दादशाक्रमः' । 'योगिनीमुद्दादशाक्रमः' । 'त्रिपताकचक्रमिदम्' ।

——×——

श्रीगणेशाय नमः ।

श्रीशुभसँव्वत्सरे...अमुकार्कसंक्रमादमुकमितगतेऽहनि....अमुकवासरे श्रीसूर्योदयादिष्टम् । एतत्समये अमुकोदये तस्य राश्यादौ । । । श्रीयुत अमुकशर्म्मणोऽब्दप्रवेशः...गता हायनाः....शुभं भूयात् ।

'अब्दाङ्गमिदम्' । 'जनुरङ्गमेतत्' ।

'लग्नपत्र (साहपट्टा) लेखनक्रमः'

——×——

'श्रीमङ्गलमूर्त्तये गणपतये नमः' ।

सूर्य्याद्या द्युचराः सर्वे गणेशाम्बादिदेवताः ।
लग्नपत्री च यस्येयं दीर्घायुर्वितरन्तु तम् (१)

श्रीमन्नृपविक्रमार्कसंव्वत्....शकवत्सराः....अमुकमासे....अमुकपक्षे....अमुकवारे....अमुकीतिथौ घ.. . अमुकभे घ...-अमुकयोगे घ....अमुककरणे घ....दिनमानम्....रात्रिमानम्....अहोरात्रम् ६०।० सूर्योदयादिष्टम्....तत्र अमुकलग्नोदये कन्यादानं शुभम् । अमुकमासे, अमुकपक्षे, अमुकीतिथौ, अमुकवारे, 'हरिद्रास्पर्शः' । अमुकीतिथौ, अमुकवारे, 'रात्रिजागरणम्' । अमुकीतिथौ, अमुकवासरे, 'तैललेपन छेईकरणम्' । अमुकीतिथौ, अमुकवारे, 'मण्डपादि कार्यम्' । अमुकीतिथौ, अमुकवारे, 'वैवाहिककर्म कार्यम्' ।

'वरस्य भास्करबलम्, कन्याया गुरोर्बलम्, 'द्वयोश्चन्द्रबलं विचिन्तयेत्' । 'वरस्य तैललापनम्'...'कन्यायास्तैललापनम्'...शुभम् ।

'विवाहाङ्गमिदम्' ।

——×——

अथवाः—

श्रीगणेशाय नमः । श्रीमहालक्ष्म्यै नमः । अतसीकुसुमोपमेयकान्तिरित्याद्याशीर्वादात्मकं मङ्गलं लेखनीयम् ।। श्रीशुभसंवत्सरे...,अमुकार्कसङ्क्रमादमुकमितगते ऽ हनि...अमुकवारे, श्रीसूर्योदयादिष्टम् । तत्रामुकोदये तस्य राश्यादौ । । अमुकांशे । अमुकभे घट्यादि । अमुकयोगे घट्यादि । दिनमानम् । शुभवेलायामुभयोर्वरवध्वोः (वरकन्ययोः) विवाहमुहूर्त्तः शुभतरः' ।

——×——

अमुकमासदिने, अमुकवारे, अमुकलग्ने 'हरिद्रास्पर्शः'। 'सर्वारम्भः'। 'वरकन्ययोर्मङ्गलस्नानम्' । 'आभूषणघट्टनम्'। 'वस्त्रसूचीकर्म्मापि शुभप्रदं भूयात्'। अमुकमासदिने, अमुकवारे, अमुकोदये, 'वधूप्रवेशः शुभतरः'। 'विवाहकालेऽष्टमलग्ननवांशौ वर्जनीयौ। सर्वथा लग्नभङ्गो विचारणीयः। लग्नेऽब्जाद्याः, कलत्रेऽखिलाः, लये लग्नेट्शुभाराः, रिपौ कवीन्दुलग्नेशास्त्याज्याः। इत्यन्ये योगा अपि चिन्तनीयाः।

विवाहे मङ्गलमेतल्लेखनीयम्:—

अतसीकुसुमोपमेयकान्तिर्यमुनाकूलकदम्बमूलवर्ती।
नवगोपवधूविलासशाली वनमाली वितनोतु मङ्गलानि (१)

व्रतबन्धे मङ्गलमेतल्लेखनीयम्:—

अभ्रश्यामः शुभ्रकौसुम्भवासाः सत्कौपीनः पीतकृष्णाजिनश्रीः।
छत्री दण्डी पुण्डरीकायताक्षः पायाद्देवो वामनो ब्रह्मचारी (१)

—×—

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते जन्मपत्र्यादिलेखनानुक्रमप्रकरणमष्टात्रिंशमवसितम्।

अथ

प्रश्नप्रकरणं प्रारभ्यते ।

तनु तथा धन भाव से विचारणीय वस्तु परिज्ञानः—

पश्येद्विलग्नाच्च्युतिवर्णरूपमादीनवायुः सुखजातिचिह्नम् ।
स्वाद् धातुमुक्ताफलहेमरत्नं क्रयाणकार्घं मणिमीक्षते च ॥ १ ॥

च्युति (भ्रष्ट वा गिरना), वर्ण, रूप, क्लेश, आयु, सुख, जाति और चिह्न इन सब पदार्थों के शुभाशुभ फल का विचार लग्न से करे। धातु (सुवर्णादि) मुक्ताफल (मोती), सुवर्ण, रत्न, क्रयाणक (क्रय वस्तु) का भाव और मणि को धन भाव से देखे।

तृतीय तथा चतुर्थ से विचारणीय वस्तु परिज्ञानः—

दुश्चिक्यगेहाद् भगिनीं सहोदरं विचिन्तयेत्किङ्करदासकर्म्मणी ।
तुर्य्याद्दिहैधां विवरप्रवेशनं वीक्षेत वाटीं खलकं महौषधिम् ॥ २ ॥

भगिनी (बहिन), सहोदर (भ्राता), किङ्कर (सेवक वा नौकर), दासकर्म (सेवकाई) इन सबको तृतीय भाव से विचारे। वृद्धि, विवर (बिल) प्रवेश, वाटिका (फूलवाड़ी), खलक (खलियान) और दिव्यौषधि को चतुर्थ भाव से देखे।

पञ्चम तथा षष्ठ से विचारणीय वस्तु परिज्ञानः—

मत्या विनेयं मतिमंत्रसाधनापत्यानि विद्यामिह गर्भमीक्षते ।
दिनिर्णयोऽरेः पशुमातुलाहवाय्य्यातङ्कशङ्कादिनृशंसकर्म्मणाम् ॥ ३ ॥

शिष्य, बुद्धि, मंत्रसाधन, सन्तति, विद्या और गर्भ को पञ्चम भाव से देखे। पशु (चौपये), मातुल (मामा), आहव (युद्ध), शत्रु, आतङ्क (रोग ताप वा भय), शङ्कादि और क्रूर कर्मों का षष्ठ भाव से निर्णय करे।

सप्तम तथा अष्टम से विचारणीय वस्तु परिज्ञानः—

अस्तात्सहान्यैस्तु विवादमङ्गनां वाणिज्यमीक्षेत गमागमं बुधः ।
दुर्गाध्ववैषम्यसपत्नसङ्कटरुक्छिद्रनष्टाहवदष्टमायुषः ॥ ४ ॥

अन्यों के साथ विवाद, स्त्री, वाणिज्य (व्यापार) और गमागम (जाना आना) इन सब वस्तुओं को पण्डित सप्तम भाव से देखे। दुर्ग (किला), अध्ववैषम्य (मार्ग की विषमता), शत्रु सङ्कट, रोग, छिद्र (छेद वा दोष), नष्ट (नष्ट वस्तु विचार), युद्ध और दष्ट (डसना) इन सब वस्तुओं का विचार अष्टम भाव से देखे।

नवम तथा दशम भाव से विचारणीय वस्तु परिज्ञानः—

तडागवापीप्रहिदेवमन्दिरदीक्षाप्रपायानमठादिकं शुभात् ।
मध्यात्प्रवासं पुरराज्यवर्षणं वृत्तान्तमभ्रस्य पितृप्रयोजनम् ॥ ५ ॥

तडाग (तलाव), वापी (बावड़ी), प्रहि (कूआ), मन्दिर, दीक्षा, प्रपा (प्याऊ), वाहन और मठादि को नवम से विचारे। प्रवास (विदेश यात्रा), पुर (नगर), राज्य, वर्षण, आकाश का वृत्तान्त और पिता का प्रयोजन इन सब पदार्थों को दशम से देखे।

लाभ तथा व्यय भाव से विचारणीय वस्तु परिज्ञानः—

विद्यार्थलाभाश्वमतङ्गजाम्बरसस्यात्मजावाहनकाञ्चनं भवात् ।
व्ययाद् व्ययान् पश्यति पाणिपीडनत्यागेष्टकृष्युद्भवदानभोगजान् ॥ ६ ॥

विद्या, धन लाभ, घोड़ा, हाथी, वस्त्र, अन्न, पुत्री, वाहन और सुवर्ण इन सब वस्तुओंको लाभ भाव से देखे। सब प्रकार के व्यय (खर्च), विवाह, त्याग (दान), इष्ट (आकांक्षित पदार्थ), कृष्युद्भव (खेती से उत्पन्न वस्तु), दान और भोगजन्य वस्तु इन सब को व्यय भाव से देखे।

उदितादि भावों का चिन्तनः—

विचिन्तयेत्सन्नुदिताख्यभावं प्राग् भावि भूतं परिचिन्तयेच्च ।
यः कार्यभावोपगतः खगस्तं कार्य्यस्य भावेन च योगमत्र ॥ ७ ॥

प्रथम उदितभाव (लग्न) को विचारे। तदनन्तर भविष्य (धनभाव) और भूत (व्ययभाव) को विचारे। तदनन्तर कार्यभावस्थ ग्रह को और कार्यभाव के साथ कार्यस्थ ग्रह के योग को विचारे।

उदितभावेश और उस की अधिष्ठितराशि का चिन्तनः—

आदावुदितभावेशं यत्नेन चिन्तयेत्ततः ।
यस्मिन्भावे तदाक्रान्तराशीशस्तं विचिन्तयेत् ॥ ८ ॥

प्रश्न समय में प्रथम लग्नेश का विचार करे। तदनन्तर लग्नेशाधिष्ठित राशि के स्वामी का विचार करे।

लग्न, कार्यभाव, उन के स्वामीयों के दृष्टि योग और भाव तथा भावस्थ ग्रह का चिन्तनः—

चिन्त्यौ भावोऽथ यः कार्यरूपभावश्च तत्पती ।
दृष्टियोगौ पुनश्चिन्त्यौ भावाधिष्ठातृखेचरौ ॥ ९ ॥

लग्न और कार्यरूपभाव के स्वामीयों के दृष्टि योग का विचार करे। तदनन्तर भाव (लग्न कार्यभाव) के स्वामियों के बलाबल का विचार करे।

भाव प्रश्न में फल चिन्तनः—

अथो भावस्य पृच्छायां प्रकल्प्योद्गममन्दिरम् ।
भावं भाविनि तद्वित्तादन्त्याद् भूते फलं वदेत् ॥ १० ॥

भाव प्रश्न में अर्थात् प्रष्टा (पूछने वाले) जिस भाव (धन भ्राता मित्र पुत्रादि) के लिए प्रश्न करे उस भाव को लग्न मानकर उस से जो द्वितीयस्थान हो उस से भाव के भाविष्य फल का और उस से जो द्वादशस्थान हो उस से उस भाव के भूतफल का विचार करे।

प्रश्नकाल में शुभाशुभ शकुनों का परिज्ञानः—

पृच्छाकाले शङ्खवीणामृदङ्गध्वानो गोऽर्वद्धंसहस्तिध्वनिश्च ।
शस्तौ प्रोक्तौ लब्धवर्णैरनिष्टं काकाश्वद्विड्रासभानां रुतं च ॥ ११ ॥

प्रश्न समय में शङ्ख, वीणा और मृदङ्ग का शब्द एवं गौ, घोड़ा, हंस और हाथी का शब्द कर्णगोचर हो तो शकुन शास्त्रवेत्ताओंने ' प्रश्नसिद्धि ' कही है । यदि प्रश्न समय में काक, महिष और गर्दभ का शब्द कर्णगोचर हो तो पृच्छक के प्रश्न की निष्फलता कहे ।

पृच्छकस्थ दिशा से तथा पृच्छाकाल से प्रश्न का शुभाशुभ फलः—

प्राचीसौम्यैशाः प्रशस्ता दिशः स्यू रक्षःप्रत्यग्वह्निकालाशुगाशाः।
प्रष्टुः शस्ता नाथ घस्रस्य पूर्वार्द्धे शस्तः स्यादन्यकाले न शस्तः ॥ १२ ॥

यदि प्रष्टा (प्रश्न कर्त्ता) पूर्व, उत्तर और ईशान को मुख कर के वा स्थित होकर प्रश्न करे तो प्रश्न की सिद्धि कहे। एवं नैर्ऋत्य, पश्चिम, आग्नेय, दक्षिण और वायव्य दिशा को मुख कर के वा स्थित होकर प्रश्न करे तो प्रश्न की विफलता कहे । यदि प्रष्टा दिन के पूर्वार्द्ध में प्रश्न करे तो प्रश्न का शुभ फल कहे और अन्य समय में प्रश्न करे तो प्रश्न का शुभ फल नहीं होता है।

भावकी वृद्धि तथा हानिका विचारः—

भावो युक्तो वेक्षितः स्वामिसौम्यैर्वृद्धिर्वाच्या तस्य भावस्य यस्य ।
खाम्बुस्वास्तप्रान्त्यगैः सत्खगेन्द्रैस्तद्वत् क्रूरैर्हानिरेवं प्रदिष्टा ॥ १३ ॥

जो ' भाव ' स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो उस भावकी वृद्धि कहनी चाहिये । एवं जिस भाव से दशम, चतुर्थ, द्वितीय, सप्तम और व्यय में शुभग्रह हों तो उस भावकी भी वृद्धि कहनी चाहिये । जो ' भाव ' पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो अथवा जिस भाव से दशम, चतुर्थ, द्वितीय, सप्तम और व्यय मे पापग्रह हों तो उस भाव की हानी कहनी चाहिये ।

प्रश्नलग्न से प्रश्नका शुभाशुभ फलः—

यदोदये शोभनसंयुते शुभलग्नेऽस्य वर्गे किमु मस्तकोदये ।
शुभं तदाऽतो विपरीतमन्यथा मिश्रं विमिश्रैः सबलैः प्रपुष्टकम् ॥ १४ ॥

जब प्रश्नलग्न शुभग्रह से युक्त हो अथवा प्रश्नलग्न में शुभग्रह की राशि वा वर्ग हो अथवा शीर्षोदय (३, ५, ६, ७, ८, ११) राशि लग्न में हो तो ' शुभफल ' होता है । यदि उक्त प्रकारसे विपरीत हो तो अशुभ फल और मिश्रग्रहों से मिश्रफल एवं बलवान् ग्रहों से ' पुष्ट फल ' होता है ।

शुभास्त्रिकोणे किमु कण्टके तथा केन्द्रायुरूनास्त्रिषडायगेहगाः।
खलाः समस्तार्थकरा हि पृच्छतां विपर्ययोऽतोऽत्र विपर्य्ययो भवेत् ॥ १५ ॥

प्रश्न समय में यदि 'शुभग्रह' त्रिकोण वा केन्द्र में हों और 'पापग्रह' केन्द्र तथा अष्टम में न होकर तृतीय, षष्ठ तथा एकादश में हों तो प्रष्टाओं को समस्त अर्थ सिद्धि को करनेवाले होते है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो विपरीत फल होता है।

चतुष्टयेशस्तनुगस्तदीयसुहृद्यदा कण्टकगोऽथ वोग्राः।
विहाय केन्द्राष्टमरिःफभावानन्योपगाश्चेद्यदि शोभनं स्यात् ॥ १६ ॥

केन्द्र का स्वामी लग्न में हो और उसका मित्र केन्द्र में हो अथवा पापग्रह केन्द्र, अष्टम और व्ययभावको छोडकर अन्यस्थानों में हों तो 'शुभफल' होता है।

संवीक्ष्यते शुभकरैर्नरराशिलग्नं
यद्वा चतुष्टयगतैः शुभदैर्विहङ्गैः।
सौम्येतरैर्गगनगैस्त्रिभवारियातैः
शस्ताप्तिवित्तविषयान्निगदन्ति सन्तः ॥ १७ ॥

प्रश्न काल में मनुष्य (धनु का पूर्वार्द्ध, मि. कन्या, तु. कुं.) राशि लग्न में हो और वह शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा केन्द्र में शुभ ग्रह हों और तृतीय, एकादश तथा षष्ठ स्थान में पाप ग्रह हों तो पण्डितजन शुभ फल की प्राप्ति, धन तथा विषय अर्थात् देशान्तर की प्राप्ति को कहते हैं।

कुम्भद्वन्द्वस्त्रीतुला मर्त्यभानि सत्खेटाढ्येष्वेषु शस्तं विभाव्यम्।
लाभान्त्यस्थाः पामरा नो शुभाः स्युर्लग्नेऽघोऽब्जो नो शुभः खे शुभश्च ॥ १८ ॥

कुम्भ, मिथुन, कन्या और तुला ये मनुष्य राशि हैं। यदि उक्त राशियों में से एक कोई राशि शुभ ग्रह से युक्त होकर प्रश्न लग्न में हो तो शुभ फल होता है। लाभ और व्यय में 'पापग्रह' शुभ फल देने वाले नहीं होते हैं। लग्न में पाप ग्रह वा चन्द्रमा हो तो शुभफलदायक नहीं होता है। दशम में पाप वा चन्द्रमा हो तो शुभफलप्रद होता है।

तुर्य्यांघ्रिराशौ द्विपदे किमुदये पापेक्षितेऽप्युग्रखसत्समन्विते।
संवीक्ष्यमाणैः सुकृतैः सशक्तिभिर्वृद्धिं नृभाङ्गे सकलं शुभं वदेत् ॥ १९ ॥

यदि प्रश्न लग्न में चतुष्पद (मकर का पूर्वार्द्ध, धनु का परार्द्ध, वृष सिंह और मेष) राशि अथवा द्विपद (धनु का पूर्वार्द्ध, मिथुन, कन्या, तुला और कुम्भ) राशि हो और वह पाप ग्रह से दृष्ट तथा युक्त भी हो एवं बलवान् शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो फल की वृद्धि को कहे। यदि प्रश्न लग्न में मनुष्य राशि हो तो सब शुभ फल को कहे।

सर्वेषु कार्य्येषु निशीथिनीशः स्याद्बीजतुल्यः सुमतुल्यमङ्गम्।
तुल्यः फलेनाङ्कलवः प्रदिष्टो भावः स्मृतः स्वादुसमः सदैव ॥ २० ॥

सब कार्यों में 'चन्द्रमा' बीज तुल्य, 'लग्न' पुष्प तुल्य, 'लग्न गत नवांश' फल तुल्य और 'भाव' स्वादुतुल्य जानना चाहिए।

होराहिमांशू शुभलोक्यमानौ शुभं तदाऽस्माद्विपरीततोऽसत् ।
ऋते विलग्नं मृगलाञ्छनं च नहि प्रवाच्यं किमपि ग्रहज्ञैः ॥ २१ ॥

प्रश्नकालीन लग्न और चन्द्रमा ये दोनों शुभग्रह से दृष्ट हों तो शुभ फल और उक्त प्रकार से विपरीत हों तो अशुभ फल होता है। लग्न तथा चन्द्रमा के विना पण्डितजनों को कुछ भी फल नहीं कहना चाहिए।

युक्तेक्षितः पुण्यखगैः पुराधिपः प्राणान्वितः पौरगृहाश्रितो यदि ।
प्रष्टुः समस्तांस्तनुजानुपद्रवान् दोषान्निहन्यात्स्वसुखप्रदो भवेत् ॥ २२ ॥

यदि प्रश्न लग्न का स्वामी बलवान् हो और शुभ ग्रहों से युक्त वा दृष्ट होकर लग्न में हो तो प्रष्टा के शरीर-जन्य समस्त उपद्रव तथा दोषों का नाश करता है और धन सुख देता है।

योगो विलग्नाधिपकार्य्यनाथयोर्द्वयोः शुभव्योमनिवासयोर्यदि ।
नूनं फलत्युग्रविहङ्गयोस्तयोः कार्य्यस्य निष्पत्तिरुदीरिता कृशा ॥ २३ ॥

लग्नेश और कार्येश वे दोनों का शुभग्रह हों और उन दोनोंका इत्थशाल योग हो तो निश्चय से फलदायक होते हैं। यदि वे दोनों पाप ग्रह हों तो कार्य की अल्प सिद्धि कहनी चाहिए।

कार्य सिद्धि योगः—

पश्येत्पौराधीश्वरः पौरगेहं काय्याधीशः कार्य्यगेहं प्रपश्येत् ।
कार्य्यस्थानं लोकयेल्लग्ननाथः पश्येत्कार्यं कार्य्यपो वोदयेशः ॥ २४ ॥

कार्य्यर्क्षस्थः कायनाथं प्रपश्येत् कार्य्यर्क्षेशः कल्पगः कल्पनाथम् ।
सिद्धिं कार्यस्याप्नुयात्कायनाथं कार्य्यस्वामी प्रेक्षते कार्य्यभावम् ॥ २५ ॥

पौरस्येशः पश्यति ग्लौदृशेह कुर्व्वाते तौ कार्य्यसिद्धिं तदानीम् ।
काये कायेट् काय्यपः कार्य्यभावे वाङ्के कार्य्यक्षेत्रपो वाङ्गनाथः ॥ २६ ॥

कार्य्यस्थो वा कार्य्यनाथाङ्गनाथौ कल्पस्थौ वा कार्य्यगौ राजदृष्टौ ।
होराकार्य्यागारपौजोवशेन प्राहुर्होरावादिनः कार्य्यसिद्धिम् ॥ २७ ॥

प्रश्न समय में लग्नेश लग्न को और कार्येश कार्य्यभाव को देखता हो तो (१) अथवा लग्नेश कार्यस्थान को और कार्येश लग्न को देखता हो तो (२) अथवा लग्नेश कार्यभाव में स्थित होकर कार्येश को देखता हो तो (३) अथवा कार्येश लग्न में स्थित होकर लग्नेश को देखता हो तो 'प्रष्टा' कार्यसिद्धि को प्राप्त होता है। यदि 'कार्येश' लग्न को देखता हो तथा 'लग्नेश' कार्यभाव को देखता हो और वे दोनों चन्द्रमा से दृष्ट हों तो कार्य-सिद्धि को करते हैं। लग्न में 'लग्नेश' और कार्य में 'कार्येश' हो तो (१) अथवा लग्न में 'कार्येश' हो ते

(२) अथवा कार्य में ' लग्नेश ' हो तो (३) कार्येश लग्नेश वे दोनों कार्यभाव में वा लग्न में स्थित हों और चन्द्रमा से दृष्ट हों तो वे लग्नेश कार्येश के बल के द्वारा कार्य सिद्धि को करते हैं। इस प्रकार होराशास्त्रवेत्ताओं ने कहा है।

यदा प्रश्नकाले प्रपश्येद्वपुर्भं वपुर्नायकः कार्यभावाधिनाथः ।
निरीक्षेत कार्य्यस्थलं शीतलांशुः परं कार्य्यभावं व्रजेत्कार्य्यसिद्धिः ॥ २८ ॥

जब प्रश्न समय में ' लग्नेश ' लग्नको और ' कार्येश ' कार्यभाव को देखता हो एवं जब पीछे ' चन्द्रमा ' कार्यभाव में प्राप्त हो तब कार्य की सिद्धि होती है।

सेष्टेशतो यद्गृहतो भवेद्यदि सद्दुर्द्धराऽस्ते शुभ उग्रवर्जितः ।
तद्वृद्धिरङ्गेऽब्जदृशा गुरुर्गुरुदृक्त्वाऽब्ज आप्तिर्नृभगाः शुभाः शुभाः ॥ २९ ॥

जो ' भाव ' शुभ मित्र तथा स्वामी से युक्त हो और उससे यदि शुभ दुर्द्धरा हो अर्थात् उस भावके द्वितीय तथा द्वादश स्थान में केवल शुभग्रह हों और सप्तमस्थान में पापग्रह रहित ' शुभग्रह ' हो तो उस भावकी वृद्धि होती है। यदि लग्न में गुरु हो और वह चन्द्रमा से दृष्ट हो अथवा लग्न में चन्द्रमा हो और वह गुरु से दृष्ट हो तो ' धनलाभ ' होता है। यदि नरराशि में सब शुभग्रह हों तो शुभ फल दायक होते हैं।

अङ्गुष्ठनासास्तनकर्णपादतलोष्ठदोर्गण्डमुखांसकांश्च ।
गुह्यं कटिं संस्पृशतीह वक्ति प्रष्टा शृणोतीष्टमुतेष्टसिद्धिः ॥ ३० ॥

प्रश्न काल में यदि ' प्रष्टा ' अपने अङ्गुष्ठ, नासिका, स्तन, कर्ण, पादतल, ओष्ठ, बाहु, गण्डस्थल, मुख, स्कन्ध, शिर, गुह्य (गुह्येन्द्रिय) और कटी (कमर) इन उक्त अवयवों में से किसी अवयव को स्पर्श करता हुआ प्रश्न पूछे अथवा माङ्गलिक शब्द को सुनकर प्रश्न पूछे तो अभीष्ट कार्य की सिद्धि कही है।

शुभोऽङ्गगश्चेत्स्वगृहं निजोच्चभं पश्येदुताङ्गे हरिभे शुभामिश्रः ।
स्वोच्चर्क्षगोऽन्यान् सुकृतान्विलोकयेत्किं सँस्तनूगः सखिभे सखीक्षितः ॥ ३१ ॥
वेज्यस्तनौ खे तपनोऽथ मङ्गलः खेऽङ्गे बुधो जीवकवी अनोजगौ ।
कार्य्यस्य सिद्धिं यदि पृच्छकस्य हि वदेयुरार्य्याः कुशलाः पुरातनाः ॥ ३२ ॥

प्रश्न समय में ' शुभ ग्रह ' लग्न में स्थित होकर अपनी राशिको वा अपनी उच्च राशिको देखता हो अथवा लग्न में सिंह राशि हो और उच्चराशिगत शुभ ग्रह यदि अन्य शुभ ग्रहों को देखता हो अथवा मित्रराशिगत शुभ ग्रह लग्न में स्थित होकर मित्र से दृष्ट हो अथवा लग्न में गुरु और दशम में सूर्य हो अथवा दशम में मङ्गल, लग्न में बुध और समराशि में गुरु शुक्र हों तो प्राचीन चतुर पण्डितजन प्रश्नके कार्य की सिद्धि को कहते हैं।

प्रश्नोदये देवगुरौ सुखार्थस्थानाम्बराप्तिः किमु तत्र हेम्ने ।
भवं सुविद्याधनसौख्यलाभोऽच्छे तत्र सौख्यास्पदवित्तलाभः ॥ ३३ ॥

प्रश्न लग्न में गुरु हो तो सुख, धन, स्थान और वस्त्र का लाभ होता है। यदि प्रश्न लग्न में बुध हो तो 'उत्तमविद्या, धन तथा सौख्य का लाभ होता है। एवं प्रश्नलग्न में शुक्र हो तो सौख्य, प्रतिष्ठा तथा धनका लाभ होता है।

पृच्छाकाले पूर्णपिण्डःशताक्षीशोयं भावं लोकयेत्पूर्णदृष्ट्या ।
सौख्यं तस्यैणाङ्कदृष्टिं विनेह योगेऽन्यस्मिन् सत्यपि स्यान्न सिद्धिः ॥ ३४ ॥

प्रश्न समय में पूर्ण शरीरवाला चन्द्रमा जिस भाव को पूर्णदृष्टि से देखता हो उस के सौख्य को करता है । यहां प्रश्नप्रकरण में चन्द्र दृष्टिके विना अन्य योग के होते हुए भी कार्य की सिद्धि नहीं होती है ।

होरायां त्रिलवेऽङ्कांश एकस्थौ काय्यकार्यपौ ।
पूर्णं फलं विमिश्रं तच्चिन्त्यं प्रश्ने जनावपि ॥ ३५ ॥

प्रश्नलग्न में, प्रश्नलग्न गत द्रेष्काण और नवांश कुण्डली में यदि लग्नेश और कार्येश ये दोनों एकस्थान में हों तो पूर्णफल और मिश्र हों तो मिश्रफल होता है । इसप्रकार प्रश्नकाल और जन्मकाल में भी फल का विचार करना चाहिये ।

एक पादादि कार्यसिद्धि योगः—

पश्येच्छुभोऽङ्गं न तनुं तनूपः स्यात्पादयोगस्तनुपो विलग्नम् ।
विलोकयन्नो शुभदोऽर्द्धयोगः पुण्यः पुरं पश्यति पौरपोऽपि ॥ ३६ ॥

समीक्षते पावकपादयोगो वीक्षेत पौरं पुरपो द्विपुण्यौ ।
त्रिपुण्यका वा परिलोकयन्ति कार्यस्य सिद्ध्यै त्रिलवोनयोगः ॥ ३७ ॥

' शुभग्रह ' लग्न को देखता हो और 'लग्नेश' लग्नको न देखता हो तो 'एकपाद योग ' होता है । अर्थात् इस योग में चतुर्थांश कार्यसिद्धि होती है । ' लग्नेश' लग्नको देखता हो और 'शुभग्रह' लग्न को न देखता हो तो ' अर्द्धयोग ' होता है अर्थात् आधा कार्य सिद्धि होती है । ' शुभग्रह ' लग्न को देखता हो और लग्नेश भी लग्नको देखता हो तो ' त्रिपाद योग ' होता है अर्थात् चतुर्थांश हीन कार्य सिद्धि होती है । ' लग्नेश ' लग्नको देखता हो और दो वा तीन शुभग्रह लग्नको देखते हों तो कार्य की सिद्धि के लिए ' तृतीयांशहीनयोग ' होता है ।

चत्वार उत्तमखगाः खललोकनोनाः
पश्येयुरुद्गमगृहं पुरपोऽपि पश्येत् ।
सम्पूर्णयोग उदितो विबुधेन यत्र
दृक्षट्कसौम्यगृहमिन्दुदृशा प्रपूर्णम् ॥ ३८ ॥

पाप ग्रहों से अदृष्ट हुए चार शुभ ग्रह यदि लग्न को देखते हों और लग्नेश भी लग्न को देखता हो तो पण्डितजनों ने कार्यसिद्धि के लिए ' सम्पूर्णयोग ' कहा है । प्रश्न काल में जहां लग्न पर चन्द्र दृष्टि सहित छः दृष्टि हों और लग्न में शुभ ग्रह की राशि हो तो योग जन्य फल परिपूर्ण होता है ।

यदा विना शीतलदीधितीक्षामन्यस्य सौम्यद्युचरस्य दृष्टिः ।
प्रयोजनं स्याच्छुभमत्र किञ्चिदुत्पद्यतेऽन्यत्प्रवदन्ति सन्तः ॥ ३९ ॥

प्रश्न समय में जब लग्न पर चन्द्रमा की दृष्टि को छोडकर यदि अन्य शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो कार्य के अतिरिक्त अन्य कुछ शुभ प्रयोजन उत्पन्न होता है । इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं ।

सर्वासु पृच्छ तनुपूद्गमाधिपबलाबलाद् दृष्टिगृहप्रभावतः ।
विनिर्दिशेत्स फलं बलान्वितैः खेटैः शुभं स्वल्पमशोभनं तदा ॥ ४० ॥

सर्वा भं ी र्य्यविवर्जि ग्रहैर्नान्यद्विलोमं व्ययनैधनालये ।
दुष्टाः खगाः केन्द्र खस्थिताः क्रमात्रैकालिकैष्यतफलप्रदाः स्मृताः ॥ ४१ ॥

सब प्रश्न लग्नों में लग्नेश के बलाबल से, दृष्टि और राशि के प्रभाव से प्रष्टा के समस्त शुभाशुभ फल को कहे। बलवान् ग्रहों से अधिक ुभ फल और अल्प अशुभ फल होता है। एवं निर्बल ग्रहों से सब अशुभ फल होता है और किञ्चित् शुभ फल नहीं होता है। व्यय और अष्टम स्थान में शुभाशुभ फल विपरीत होता है। केन्द्र में बलवान् ग्रह हों तो तीनों काल: (भूत, वर्त्तमान और भविष्य) में फलदायक होते हैं। पणफर में बलवान् ग्रह हों तो भविष्य में फलदायक होते हैं। एवं आपोक्लिम में बलवान् ग्रह हों तो भूत काल में फलदायक होते हैं।

कार्य्य हानि के योगः—

ईक्षे ाङ्गगतं कुजं रिपुदृशा मन्दोऽथ मूर्त्तौ मृदौ
दृष्टे क्रेन्दुकुजैरुतोदयगतेऽहौ ग्लौकुजेनेक्षिते ।
किं म ौ धनगेऽथ पूर्णरजनोऽप्यायुरङ्गास्तग
आहो ज्ञेऽङ्गग ईक्षितेऽब्जदुरितैः कार्य्याभिघातं वदेत् ॥ ४२ ॥

लग्न में स्थित मङ्गल को यदि 'शनि' शत्रुदृष्टि (१,४,७,१०) से देखता हो तो (१) लग्न गत शनि यदि सूर्य चन्द्र मङ्गल से दृष्ट हो तो (२) लग्न गत राहु यदि चन्द्र मङ्गल सूर्य से दृष्ट हो तो (३) लग्न में सूर्य हो तो (४) अष्टम लग्न वा सप्तम में 'चन्द्रमा' यदि पूर्ण भी हो तो (५) लग्न गत बुध यदि चन्द्र और पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो उक्त योगों में प्रष्टा के कार्य हानि को कहे।

द्रेष्काणं तनुगं भुजङ्गदहनास्त्राद्यं कुजो लोकयेद्
वाऽथैर्वीर्य्ययुतैः समैर्भवगतैर्वा प्रान्त्ययातैः किमु ।
यामित्रोदययाम्यगैर्यदि खलैः किं चन्द्रमङ्गोपगं
वीक्षितास्तगतः खलः किमु खगो वोग्रैर्व्ययास्तारिगैः ॥ ४३ ॥

किं साङ्गपैरुत खधीत्रिमदाङ्कलग्ना—
युर्बन्धुगैर्बलयुतैर्दुरितग्रहैर्वा ।
केन्द्राङ्गधीस्वमृतिगैरशुभैर्न सौम्यै—
रालोकितैर्न सहितैर्यदि कार्यनाशः ॥ ४४ ॥

लग्न गत सर्प, अग्नि और अस्त्रादि अशुभ द्रेष्काण को यदि मङ्गल देखता हो तो (१) समस्त पाप-ग्रह बलवान् होकर लाभ व व्यय में स्थित हों तो (२) सप्तम, लग्न और अष्टम में पाप ग्रह हों तो (३) लग्न गत चन्द्रमा को सप्तम गत वा दशम गत पाप ग्रह देखता हो तो (४) अष्टम, सप्तम और षष्ठ में पाप ग्रह हों अथवा वे पाप ग्रह लग्नेश से युक्त हों तो (५) दशम, पञ्चम, तृतीय, सप्तम, नवम, लग्न, अष्टम और चतुर्थ में

बलवान् पाप ग्रह हों तो (६) केन्द्र, लग्न, पञ्चम, द्वितीय और अष्टम में स्थित पाप ग्रह यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट युक्त न हों तो उक्त योगों में प्रश्न के कार्य का नाश होता है।

धन लाभ प्रश्नः--

अन्योन्यं सहितेक्षिता धनधनस्वामिक्षपानायकाः
केन्द्राङ्कार्थसुतेषु ते यदि धनप्राप्तिं प्रकुर्व्वन्त्यरम्।
तुर्य्यऽनङ्गगृहे विधौ दिवि रवौ होरोपगः शोभनो
वाऽऽचार्य्ये धनगे तथा हिमकरे कोणे कुटुम्बे तनौ ॥ ४५ ॥

स्वेऽङ्गेशेऽथ युतेक्षिता यदि मिथस्ते लाभदाः संस्मृताः
सद्यो लाभकरास्त्रिकोणगृहगाः केन्द्रस्थिताः शोभनाः।
त्र्यायारातिगताः खला निगदिता नो लाभदा व्यत्ययात्
सन्तोऽस्तानुजधीभवेषु धनदा नेष्टाः खलास्तेषु चेत् ॥ ४६ ॥

लग्नेश, धनेश और चन्द्रमा ये तीनों परस्पर युक्त वा दृष्ट होकर केन्द्र, नवम, द्वितीय और पञ्चम में स्थित हों तो शीघ्र धन की प्राप्ति को करते हैं। चतुर्थ वा सप्तम में चन्द्रमा, दशम में सूर्य और लग्न में शुभ ग्रह हो तो (१) अथवा लग्न में गुरु हो तो (२) त्रिकोण द्वितीय वा लग्न में चन्द्रमा और धन में लग्नेश हो तो (३) गुरु चन्द्र लग्नेश ये तीनों परस्पर युक्त वा दृष्ट हों तो लाभदायक जानने चाहिएँ। त्रिकोण तथा केन्द्र में स्थित शुभ ग्रह एवं तृतीय, एकादश तथा षष्ठ स्थान में स्थित पापग्रह लाभदायक होते हैं। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो लाभ दायक नहीं होते हैं। सप्तम, तृतीय, पञ्चम और एकादश स्थान में स्थित शुभ ग्रह धनदायक होते हैं और उक्त स्थानों में पापग्रह अशुभ होते हैं।

स्थानं दद्युरिहोन्नमाम्बरचरा मेषूरणास्तोपगा
दद्युर्मानधनानि मूर्त्तितनयार्थागारगाः सत्खगाः।
पश्येत्सन् हिमगुं द्विषद्त्रिखमदायस्थं फलं स्त्रीकृतं
लाभाद्यं नवधीत्रिमूर्त्तिमृतिगाः सम्पत्प्रदाः सुग्रहाः ॥ ४७ ॥

दशम और सप्तम स्थान में स्थित शुभ ग्रह स्थान की प्राप्ति को करते हैं। लग्न, पञ्चम और द्वितीय स्थान में स्थित शुभ ग्रह मान और धन को देते हैं। द्वितीय षष्ठ तृतीय दशम सप्तम वा एकादश स्थान में स्थित चन्द्रमा को यदि शुभ ग्रह देखता हो तो स्त्री द्वारा किया हुआ लाभादि फल होता है। नवम, पञ्चम, तृतीय अष्टम और लग्न में स्थित शुभ ग्रह शुभ फल देते हैं।

दृष्टे युक्तेऽङ्गे शुभैः स्वामिसौम्यषड्वर्गे रैलब्धिरुग्रो विधुर्वा।
लग्नस्थं ज्ञं लोकयेच्छीघ्रमर्थलाभोऽनर्थः पृच्छतोऽप्यत्र किन्तु ॥ ४८ ॥

यदि प्रश्न लग्न शुभ ग्रहों से दृष्ट तथा युक्त हो और लग्न में लग्नेश तथा शुभ ग्रह का षड्वर्ग हो तो धन लाभ होता है। लग्न में स्थित बुध को पाप ग्रह वा चन्द्रमा देखता हो तो शीघ्र धन का लाभ होता है किन्तु पृच्छक को अनर्थ भी होता है।

होरागाराधीश्वरो वित्तलब्धा लाभस्वामी दायको लाभपेन।
सत्रा योगो लग्ननाथस्य लाभकर्त्ता ग्लौदृग् लाभगेहे तदाप्तिः ॥ ४९ ॥

प्रश्न लग्न का स्वामी 'वित्तलब्धा' (धन का लोभी), लाभेश 'धनदायक' होता है। यदि लग्नेश का लाभेश के साथ इत्थशाल योग हो तो 'लाभ कर्त्ता' होता है। जब लाभ स्थान पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तब धन की प्राप्ति होती है।

ग्लौदृष्टयोः कार्य्यविलग्नपत्योर्योगोऽर्थलब्ध्यै लघु लग्नभस्य।
दिश्यर्थलाभो बलिकेन्द्रयाताकाशाटनाशासु किमर्थलब्धिः ॥ ५० ॥

कार्येश और लग्नेश इन दोनों का इत्थशालयोग हो और वे दोनों चद्रमा से दृष्ट हों तो शीघ्र धन लाभ होता है। प्रश्न लग्न में जो राशि हो उस की दिशा में अथवा बली केन्द्र (दशम) गत ग्रह की दिशा में धन का लाभ होता है।

हृद्रोगगोवारणवैरिकीटैः स्यात्स्थानलब्धिश्चरभोदये नो।
द्विदेहराशौ तनुगेहगेऽर्द्धे पूर्वे स्थिरोक्तं चरवत्पराऽर्द्धे ॥ ५१ ॥

प्रश्न समय में कुम्भ, वृष, सिंह और वृश्चिक लग्न हों तो स्थान की प्राप्ति होती है। प्रश्न लग्न में चर राशि हो तो स्थान की प्राप्ति नहीं होती है। एवं प्रश्न लग्न में द्विस्वभाव राशि का पूर्वार्द्ध हो तो स्थिर राशि के सदृश फल अर्थात् स्थान की प्राप्ति होती है और प्रश्न लग्न में द्विस्वभाव राशि का उत्तरार्द्ध हो तो चरराशि के सदृश फल अर्थात् स्थान की प्राप्ति नहीं होती है।

कलेवरायाधिभुवौ यदैकत्र्यंशे भवागारसमाश्रितौ स्तः।
भविष्यतीह द्रविणस्य लाभः प्रष्टुः कवीन्द्रा इति सङ्गिरन्ते ॥ ५२ ॥

लग्नेश और लाभेश ये दोनों एक द्रेष्काण में स्थित होकर लाभ भाव में स्थिर हों तो प्रष्टा को धन लाभ होगा। इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं।

कल्याणसंयुक्तविलोकितोऽर्थेट् स्वोच्चादियातः कुरुतेऽङ्गपेन।
निशाकरेणोत यदीत्थशालं वेन्दुज्ञजीवास्फुजितः ससत्त्वाः ॥ ५३ ॥
नाघान्वितास्तुङ्गगृहादिसंस्थिताश्चतुष्टयप्राप्तिनवार्थधीगताः।
लाभं प्रकुर्युः प्रचुरं सुसत्त्वरं ग्लौस्वाङ्गपाः सारयुताः स्वगास्तथा ॥ ५४ ॥

उच्चादि राशि गत द्वितीयेश यदि शुभ ग्रह से दृष्ट युक्त होकर लग्नेश के साथ अथवा चन्द्रमा के साथ इत्थशाल योग करे तो (१) अथवा चन्द्र, बुध, गुरु और शुक्र ये चारों बलवान् हों, स्वोच्चादि राशि में हों; पापग्रह से युक्त न हों; केन्द्र, लाभ, नवम, द्वितीय और पञ्चम में स्थित हों तो शीघ्र बहुत लाभ को करते हैं। चन्द्रमा, द्वितीयेश और लग्नेश ये तीनों बलवान् होकर धन स्थान में हों तो शीघ्र बहुत लाभ को करते हैं।

यदा सिते स्वोच्चगते घनोपगे वोच्चङ्गते वारिणि तुङ्गगे शुभैः ।
दृष्टे सुते तत्र भवे किमुच्चगे प्रष्टा पुरग्राममुखं समाप्नुयात् ॥ ५५ ॥

जब उच्चराशिगत शुक्र लग्नमें हो, अथवा उच्चराशि गत शुक्र चतुर्थ में हो, अथवा उच्चराशि गत शुक्र पञ्चम में स्थित होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो, अथवा उच्चराशि गत शुक्र लाभ भाव में हो तो प्रष्टाको पुरग्रामादि की प्राप्ति होती है ।

आद्येऽङ्गपः प्रांशुगतः खपेक्षितो लाभं करोति क्षितिपात्सदीक्षितः ।
प्रभूतमल्पं दुरितैरथो विधुतन्वर्थपानां तु कबूलयोगके ॥ ५६ ॥
भूर्य्यर्थलाभो निजतुङ्गभे स्वभे वयस्यभेऽल्पं रिपुनीचभे न वा ।
अर्थेऽङ्गपोऽङ्गे धनपो धनप्रदौ स्वगौ तनूौ किमु कोशकायपौ ॥ ५७ ॥
सुखार्थदौ स्तोऽनिजर्क्षगोऽङ्गपोऽङ्गे प्राप्तिगः पूर्णशरीरशीतगुः ।
सायेड् विधत्ते द्रविणाप्तिकां सुखं कार्यार्थसिद्धिं कथयन्ति कोविदाः ॥ ५८ ॥

उच्चराशिगत लग्नेश यदि दशमेश से दृष्ट होकर लग्न में हो तो धनलाभ को करता है । यदि वह लग्नेश शुभग्रह से दृष्ट हो तो बहुतलाभ और पापग्रह से दृष्ट हो तो अल्पलाभ को करता है । चन्द्रमा, लग्नेश और धनेश इन तीनों का यदि कम्बूलयोग हो और वे उच्चराशि वा स्वराशि में होतो बहुत धन लाभ होता है । यदि उक्त तीनों का कम्बूल योग हो और मित्रराशि में हो तो अल्पलाभ होता है । एवं वे तीनों शत्रु वा नीच राशि में हों तो लाभ नहीं होता है । धन में लग्नेश और लग्न में धनेश हो तो धनदायक होते हैं । एवं लग्नेश धनेश ये दोनों धन में हों वा लग्न में हों तो सुख तथा धन देते हैं । लग्नेश लग्न में हो और पूर्ण चन्द्रमा लाभेश से युक्त होकर लाभ में हो तो धनकी प्राप्ति, सुख और कार्यार्थ सिद्धिको करता है इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं ।

उपान्त्यगो मूर्त्तिविभुर्भवाधिपो लग्नोपगस्तौ तनुगावुताप्तिगौ ।
उभौ खदो यत्र यदीत्थशालिनौ वेज्येन्दुदृष्टौ स्वतनूपती तनौ ॥ ५९ ॥
उभौ ससत्त्वौ शुभदौ विशेषतः प्राप्तिं विधत्तः प्रचुरां शरीरिणाम् ।
खार्थाप्तिषु स्वेश्वरशक्रमंत्रिणौ तत्रास्फुजिद्वित्किमखण्डमण्डलः ॥ ६० ॥
ग्लौस्तत्र गोकर्कटगः समन्वितदृष्टोऽमलैर्गर्हितखेटवर्जितः ।
वैकोऽपि काव्येज्यविदां निजोच्चभे स्वभे ससारोऽर्थखधीनवोदये ॥ ६१ ॥
यद्वा सुगात्रः स्वभ उच्चभे बली जीवः सितो ज्ञा भवगः शशीक्षितः ।
लाभः शुभाः कण्टकगा युता बलैः स्वाप्त्यै सुतूर्णं सुखसिद्धिहेतवे ॥ ६२ ॥

लाभ में लग्नेश और लग्न में लाभेश हो अथवा वे दोनों लग्न में वा लाभ में हों और उनका इत्थशालयोग हो तो धन देने वाले होते हैं । धनेश और लग्नेश ये दोनों बलवान् होकर लग्न में हों तो विशेषतः शुभफलदायक और बहुत धन की प्राप्ति को करते हैं । दशम, द्वितीय और लाभ में द्वितीयेश और गुरु हो अथवा उक्तस्थानों में शुक्र बुध हों अथवा पूर्ण चन्द्रमा वृष वा कर्क राशि में स्थिर होकर उक्त स्थानों हो और पापग्रह से रहित होकर शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो अथवा शुक्र गुरु बुध इन तीनों के मध्य में कोई एक ग्रह भी अपनी उच्चराशि में वा

स्वराशि में हो और बलवान् होकर द्वितीय दशम पञ्चम नवम वा लग्न में हो अथवा गुरु वा शुक्र वा बुध सुन्दर शरीर वाला हो, बलवान् हो, स्वराशि में वा स्वोच्चराशि में स्थित होकर लाभ में हो और चन्द्रमा से दृष्ट हो तो लाभ होता है। यदि शुभ ग्रह बल युक्त होकर केन्द्र में हों तो अतिशीघ्र धन की प्राप्ति और सुख सिद्धि होती है।

असाधवः कण्टकमार्गधिस्था निःस्वाय दुःखाय च पृच्छकस्य।
तीर्थालये सौम्यसमेतदृष्टे प्रष्टुस्तदा वाञ्छितवस्तुलाभः ॥ ६३ ॥

यदि पञ्चम, नवम और केन्द्र में पाप ग्रह हों तो दरिद्रता तथा दुःख के लिए होते हैं। एवं नवमस्थान शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो तो प्रष्टा को आकांक्षित वस्तु का लाभ होता है।

तत्र स्थितैः पापखगैर्विनाशश्चेन्नक्तयोगो वपुरर्थभर्त्रोः।
प्रष्टा परस्माद् द्रविणाप्तिमेति परस्परालोकनतोऽत्र नक्तः ॥ ६४ ॥
योगस्तनूतुर्य्यपयोः परस्मात्स्यात्काय्यसिद्धिः किल पृच्छकानाम्।
अस्माद्विलोमे सखले न सिद्ध्येत् स्वदेहपत्योर्यमयाख्ययोगः ॥ ६५ ॥
पदस्य लाभो सचिवेन भावी स्वपोऽङ्गगोऽवेतरदृष्टयुक्तः।
चेदित्थशालं पुरपेन सार्द्धं कुर्यात्तदा पृच्छक एति वित्तम् ॥ ६६ ॥
पापेत्थशालोपगयोर्द्वयोश्चेत्पृथक् तनूस्वेश्वरयोरसौम्यैः।
दृष्टाढ्ययोः शौर्य्ययुतैः स्वलाभः क्वचिन्मृतिः सन्त इति ब्रुवन्ति ॥ ६७ ॥

यदि नवम स्थान में पाप ग्रह हों तो अभीष्ट कार्यका नाश होता है। धनेश लग्नेश का नक्त योग हो तो अन्य पुरुष से प्रष्टा को धनका लाभ होता है। लग्नेश और चतुर्थेश की परस्पर दृष्टि हो वा नक्त योग हो तो अन्य पुरुष से प्रष्टजनों की कार्यसिद्धि होती है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो वा पापयुक्त हो तो कार्य सिद्धि नहीं होती है। धनेश और लग्नेश का यमया योग हो तो मंत्री के द्वारा भावी पदका लाभ होता है। यदि धनेश लग्न में स्थित हो कर पापग्रहोंसे दृष्ट युक्त हो और लग्नेश के साथ इत्थशालयोग करे तो प्रष्टा धनको पाता है। लग्नेश और धनेश इन दोनों का पृथक पृथक पापग्रहों के साथ इत्थशाल योग हों और वे दोनों बलवान् पापग्रहों से दृष्ट युक्त हों तो धनका लाभ होता है और कहीं मृत्यु होती है इसप्रकार पण्डितजन कहते है।

सद्भिर्दृष्टयुतैः स्वगैः सदितरैर्दूरे चिरात्स्वल्पक-
स्वाप्तिस्तैर्मलिनेक्षितैर्यदि तदा प्राक्सञ्चितार्थक्षयः।
मूर्त्तीशो वयसीन्दुदेहगृहपा सत्संयुतालोकितौ
पाथोभावगतौ समेति भवनक्षेत्रावनीः पृच्छकः ॥ ६८ ॥

धन स्थान में स्थित पापग्रह यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हों तो दूर देश में बहुत दिन पश्चात् स्वल्प धनका लाभ होता है। यदि धनस्थान में स्थित 'पापग्रह' पापग्रहसे दृष्ट हों तो पूर्व सञ्चित धन का नाश होता है। लग्नेश चतुर्थ में हो अथवा चन्द्रमा तथा लग्नेश ये दोनों शुभग्रहसे युक्त वा दृष्ट होकर चतुर्थ स्थान में स्थित हों तो 'प्रष्टा' गृह, क्षेत्र (खेत) और भूमि को पाता है।

पातालाङ्गस्वामिनौ पौरयातौ तुर्य्यस्थौ वा तारकानाथयुक्तौ ।
युक्तौ दृष्टौ शोभनाकाशवासैः कुर्व्वाते तौ गेहकेदारलाभम् ॥ ६९ ॥

चतुर्थेश और लग्नेश ये दोनों चन्द्रमा से युक्त होकर लग्न वा चतुर्थ में हों और शुभ ग्रहों से युक्त दृष्ट हों तो गृह तथा क्षेत्र के लाभको करते हैं ।

ग्लावा लेखागारनाथेन चेत्थशालं कुर्य्यान्नागलोकाधिनाथः ।
संयुक्तो वा वीक्षितः सन्नभोगैर्भूगेहाप्तिं पृच्छकस्य प्रकुर्य्यात् ॥ ७० ॥

चन्द्रमा और लग्नेश के साथ यदि शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हुआ चतुर्थेश इत्थशाल योग को करे तो प्रष्टा के लिए भूमि तथा ग्रहकी प्राप्ति को करता है ।

यस्मिन्भावे देहवित्ताधिपेत्थशालः साधुव्योमवासेक्ष्यमाणः ।
देहद्रव्यभ्रातृमित्रात्मजारिस्त्रीषु स्वाप्तिं द्वारतस्तस्य याति ॥ ७१ ॥

तनु, धन, सहज, मित्र पुत्र, रिपु और जाया इन् भावों के मध्य में जिस भाव में लग्नेश धनेश का इत्थशाल हो और वह शुभग्रह से दृष्ट हो तो उस भाव के कारण से धनको पाता है ।

याम्यस्थाने चेत्तयोरित्थशालो बन्धाद् युद्धाद्वा वधाद्वित्तलाभः ।
धर्म्माद् धर्म्मे भूपतो मध्यभावे लब्धौ मित्रात्प्रान्त्यभावे व्ययादः ॥ ७२ ॥

अष्टमस्थान में लग्नेश धनेश का इत्थशाल हो तो बन्धन युद्ध वा वधकार्य से धनलाभ होता है । एवं उन दोनों का इत्थशाल नवम में हो तो धर्म से लाभ, दशम में राजा से लाभ, लाभ में मित्र से लाभ और व्यय में व्ययाद होता है ।

नष्टधन लाभ प्रश्नः—

प्रश्नोदये वारिपयुक्तलोकितेऽथवोडुपे तत्र धनं प्रवर्त्तते ।
स्वदौ शशीज्यौ वधबन्धुखास्तगौ स्वपेऽम्बुकोशे बहु तत्र वित्तकम् ॥ ७३ ॥

यदि 'चतुर्थेश' प्रश्नलग्न में हो वा उसको देखता हो अथवा 'चन्द्रमा' प्रश्न लग्न में हो तो 'धन' अपनी ही जगह स्थित रहता है । अष्टम, चतुर्थ, दशम और सप्तम में यदि चन्द्र गुरु हों तो नष्ट धन को देते है । अर्थात् नष्ट धन का लाभ होता है । चतुर्थ वा द्वितीय में धनेश हो तो बहुत नष्ट धन का लाभ होता है ।

कोदये हिमकरोऽखिलगात्रो गात्रगः किममलोऽमलदृष्टः ।
शौर्य्ययुक् छुभकरो भवगो वा पर्व्वरिः पुरगतो निखिलाङ्गः ॥ ७४ ॥

भार्गवेण गुरुणा यदि दृष्ट किं धनोपचयगैः शुभदैर्वा ।
कष्टकोपचयगैरुत देहाद्वाम्बुनः सहजगो धनगः सन् ॥ ७५ ॥

किं शुभैः पदपयोऽरिमदस्थैर्वाङ्गपे स्मरगते स्मरपेऽङ्गे ।
वा त्रिखाङ्गसुखधीस्वभवस्थैः शक्तिमद्भिरमलैरमलान्यैः ॥ ७६ ॥
केन्द्रकोणफलकालविहीनैर्वोदये शशधरे शुभदृष्टे ।
लोकिते सखिदृशांशुमता स्यात्पृच्छकस्य ननु नष्टधनाप्तिः ॥ ७७ ॥

प्रश्न में लग्न शीर्षोदय राशि हो, सम्पूर्ण बिम्बवाला चन्द्रमा वा शुभ ग्रह यदि शुभ ग्रह से दृष्ट होकर लग्न में हो तो (१) अथवा बलवान् शुभ ग्रह लाभ में हो तो (२) अथवा सम्पूर्ण गात्रवाला चन्द्रमा यदि शुक्र वा गुरु से दृष्ट होकर लग्न में हो तो (३) अथवा ' शुभ ग्रह ' धन और उपचय स्थान में हों तो (४) अथवा केन्द्र और उपचय स्थान में शुभ ग्रह हों तो (५) अथवा लग्न से वा चतुर्थ से तृतीय तथा द्वितीय में शुभ ग्रह हो तो (६) अथवा चतुर्थ, दशम, षष्ठ और सप्तम में शुभ ग्रह हों तो (७) अथवा सप्तम में लग्नेश और लग्न में सप्तमेश हो तो (८) तृतीय, दशम, लग्न, चतुर्थ, पञ्चम द्वितीय और एकादश में बलवान् शुभ ग्रह हों और केन्द्र, त्रिकोण, अष्टम तथा लाभ में पाप ग्रह न हों तो (९) अथवा लग्न गत चन्द्रमा यदि शुभ ग्रह से दृष्ट हो और उसे मित्र दृष्टि से सूर्य भी देखता हो तो उक्त योगों में प्रष्टा को नष्ट धन की प्राप्ति होती है ।

लाभस्वामी लग्नगो लग्नपेत्थशालं कुर्यात्पृच्छकानां तदानीम् ।
नष्टार्थस्य प्राप्तिरुक्ता द्वितीयपुत्रभ्रातृस्थैः शुभैश्चेत्तथा स्यात् ॥ ७८ ॥

लग्न गत लाभेश यदि लग्नेश के साथ इत्थशाल करे तो प्रष्टाओं को नष्ट धन की प्राप्ति कही है । एवं द्वितीय, पञ्चम और सहज में शुभ ग्रह हों तो भी नष्ट द्रव्य की प्राप्ति कही है ।

द्यूनेऽङ्गास्तस्वामिनोरित्थशाले वेन्दौ खेऽङ्गे सौम्यखेटेत्थशाले ।
वास्तेशेऽब्जे वार्कलुप्ते विनष्टस्वाप्तिः पीथे पौरगे चन्दिरेऽस्ते ॥ ७९ ॥
कौ नष्टार्थं नाप्नुयात्केन्द्रकोणकालार्थस्थैः पामरैः पापदृष्टैः ।
पुण्यायुक्तैर्नष्टवित्तस्य नाशश्चान्यार्थस्यापि क्षयं स्यात्तदानीम् ॥ ८० ॥

लग्नेश और सप्तमेश का यदि सप्तम स्थान में इत्थशाल हो तो (१) दशम वा लग्न में स्थित चन्द्रमा का शुभ ग्रह के साथ इत्थशाल हो तो (२) सप्तमेश वा चन्द्रमा यदि सूर्य लुप्त (अस्तंगत) हो तो नष्ट धन का लाभ होता है । लग्न में सूर्य और सप्तम में चन्द्रमा हो तो भूमि में नष्ट हुए धन का लाभ नहीं होता है । केन्द्र, त्रिकोण, अष्टम और द्वितिय में स्थित पाप ग्रह यदि पापग्रहों से दृष्ट हों और शुभ ग्रहों से युक्त न हो तो नष्ट धन के साथ ही अन्य धन का भी नाश होता है ।

न लभ्यतेऽरं स्थितमर्थमम्बुगेऽघेऽथास्तकालेऽसृजि नाप्यते तदा ।
अन्यत्र वित्तं तत उद्गमे तमो याम्यस्थितोऽर्को द्रविणं न लभ्यते ॥ ८१ ॥

यदि चतुर्थ स्थान में पापग्रह हो तो रक्खा हुआ धन शीघ्र नहीं मिलता है । सप्तम वा अष्टम में मङ्गल हो तो अन्यत्र (द्वितीय स्थान में) धन नहीं मिलता है । लग्न में राहु और अष्टम में सूर्य हो तो भी धन नहीं मिलता है ।

पङ्कः पश्यति पङ्कलग्नभवनं नष्टं विनष्टं भवे-
न्नष्टाप्तिः शुभदोदये शुभकरैर्दृष्टे ततः स्वांशगाः ।

पश्चास्यालिघटाः खलेक्षितयुता द्यूनस्थिता वा कुजे
तन्नन्दांशगते पराभवगृहे नष्टस्य लब्धिर्नहि ॥ ८२ ॥

प्रश्न लग्न में पापग्रहकी राशि हो और उसको पापग्रह देखता हो तो नष्ट धन विनष्ट (नाश) होता है। शुभग्रहकी राशी लग्न में हो और वह शुभदृष्ट हो तो नष्ट धनका लाभ होता है। प्रश्नसमय में सिंह, वृश्चिक और कुम्भ लग्न में वर्गोत्तमांश हों अर्थात् पाँचवें नवांश हों वे पापग्रहों से दृष्ट युक्त हों अथवा उक्त राशि सप्तम स्थान में स्थित हों अथवा उक्त राशियों के नवांश में स्थित हुआ मङ्गल अष्टमस्थान में स्थित हो तो नष्ट धन नहीं मिलता है।

प्राप्तं विनष्टं ककुभि क वित्तं प्रश्ने पुरस्थे क्षणदाधिनाथे।
प्राच्यामवाच्यां पदगे प्रतीच्यामनङ्गयाते कग उत्तरस्याम् ॥ ८३ ॥

नष्ट धन किस दिशा में मिलेगा ऐसा प्रश्न करने पर यदि उस समय 'चन्द्रमा' लग्न में हो तो पूर्व, दशम में हो तो दाक्षिण, सप्तम में हो तो पश्चिम और चतुर्थ में हो तो उत्तर दिशा में नष्ट धन मिले।

यदा न केन्द्रोपगते कलेशे नाराचयुक्तैः खसमुद्रभागैः।
भागे सदा दिक्क्रम ईरितो वा कृशानुभूमारुततोयराशौ ॥ ८४ ॥

जब 'चन्द्रमा' केन्द्र में न हो तो पैंतालीस अंशोंके क्रम से दिशा क्रम कहा है अर्थात् पूर्व से ९० अंशपर दक्षिण है इसके आधा ४५ अंश पर अग्निकोण, दक्षिण से ९० अंश पर पश्चिम है इसके आधा ४५ अंश पर नैऋत्यकोण, पश्चिम से ९० अंश पर उत्तर है इसके आधा ४५ अंश पर वायव्यकोण, उत्तर से ९० अंश पर पूर्व है इसके आधा ४५ अंश पर ईशान कोण जानना चाहिये। अथवा लग्न में अग्नितत्त्ववाली राशि हो तो आग्नेय कोण में धन, भूमितत्त्ववाली राशि में नैऋत्य कोण में धन, वायुतत्त्ववाली राशि लग्न में हो तो वायव्य में धन और जलतत्त्ववाली राशि प्रश्न लग्न में हो तो ईशान कोण में धन मिले।

पतित धन लाभ प्रश्नः—

वेद्यं बुधेन्द्रैः प्रथमे त्रिभागे हृतं द्वितीये पतितं तृतीये।
त्र्यंशे तदा विस्मृतमेवमूह्यमन्त्ये गृहस्यान्तरके हृतं स्वम् ॥ ८५ ॥

प्रश्न कालीन लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो प्रष्टा का 'धन' चोरा गया है, द्वितीय द्रेष्काण हो तो 'धन' कहीं गिर गया है। और तृतीय द्रेष्काण हो तो 'धन' कहीं पर भूल गया अथवा घर के मध्य में 'धन' किसी ने चुरा लिया है।

प्रष्टुर्धनस्य पतितस्य मिथोऽनुयोगे
जायागृहोद्गतपती भवनोपयातौ।
किं वा तयोर्मुथशिलं प्रभवेत्तदाऽऽशु
तत्रैव पण्डिततराः समुदीरयन्ति ॥ ८६ ॥

प्रष्टा के पतित धन के लिए प्रश्न करने पर यदि सप्तमेश और लग्नेश ये दोनों परस्पर एक दूसरे की राशि में हों अर्थात् उन दोनों का राशि सम्बन्ध हो अथवा दोनों का मुथशिल (इत्थशाल) योग हो तो श्रेष्ठ पण्डित जन शीघ्र पतित धन को गिरने के स्थान में स्थित कहते हैं।

स्वेशोऽङ्गपेन शशिना सममित्थशालं
कुर्य्याद्युतास्तमयगैः स्वतनूपपैर्वैः।
देहेऽर्थपे धनगृहस्थखगेत्थशाले
प्रष्टा समेति सततं पतितार्थलाभम् ॥ ८७ ॥

लग्नेश तथा चन्द्रमा के साथ यदि द्वितीय स्थान का स्वामी इत्थशाल योग करे अथवा द्वितीयेश, लग्नेश और चन्द्रमा ये तीनों सप्तम में हों वा द्वितीयेश लग्न में हो और द्वितीय स्थान में स्थित ग्रह के साथ इत्थशाल योग करे तो प्रष्टा नित्य पतित धन को पाता है।

चौरापहृतधन प्राप्ति योगः—

पृच्छायां विगतविनष्टविचलब्धेश्चौरः स्यान्मदनगृहं ततोऽर्थलाभः।
स्वस्थानं सुखभवनं विलग्नगेहं शीतांशुर्द्रविणपतिर्मतो बुधेन्द्रैः ॥ ८८ ॥

गत नष्ट धन की प्राप्ति के प्रश्न में चोर का सप्तमस्थान होता है। उस से धन लाभ सम्भव होता है। रक्खे हुए धन का चतुर्थ स्थान है। लग्न तथा चन्द्रमा धन के स्वामी जानने।

रन्ध्रं मलिम्लुचधनं धनधामनाथे
तत्राथ वा युवतिभे विभवस्य नाप्तिः।
द्यूनेऽङ्गपे मुथशिली मदनाधिपेन
लाभस्ततो वपुषि सङ्करपः स्वयं स्वम् ॥ ८९ ॥

पाटच्चरोऽर्पयति भास्कररश्मियाते
वास्तङ्गते द्रविणपे यदि तस्करस्य।
लाभस्ततो मुथशिलात्पदपौरपत्योः
सम्प्राप्यते धनयुतः प्रतिरोधिनामा ॥ ९० ॥

प्रश्न लग्न से जो अष्टम स्थान है वह चोर का धन स्थान है। यदि 'धनेश' अष्टम वा सप्तम में हो तो अपहृत धन का लाभ नहीं होता है। यदि 'लग्नेश' सप्तम स्थान में स्थित होकर सप्तमेश से मुथशिल करे तो चोरित धन का लाभ होता है। यदि 'अष्टमेश' लग्न में हो तो चोर स्वयं धन को लाकर देता है। यदि 'धनेश' सूर्य की रश्मियों में प्राप्त हो वा अस्तगत हो तो चोर मिले अर्थात् धन सहित चोर पकड़ा जाय। यदि लग्नेश दशमेश का मुथशिल हो तो धन सहित चोर मिले।

पाटच्चरः प्रथमनायकखस्थभावे
मात्राऽन्वितः समुपयाति बुधा भणन्ति।

दग्धेऽस्तपे रविमयूखगतेऽत्र दस्युः
संलभ्यते हरिजनाथकृतेत्थशाले ॥ ९१ ॥

दत्ते स्वयं धनमिदं धरणीशभीत्या
नेक्षा पुरस्मरपयोर्विकलोऽङ्गपस्तत् ।
चौर्य्यं महीपतिकुलेऽस्य कराद्ददाति
चौरोऽथ विग्रहगृहाम्बरनाथयोगे ॥ ९२ ॥

चौर्य्यं नरेशकुलमाप्य सुलभ्यते स्वं
सम्प्राप्यते मुथशिले स्वनिमीलनेशोः ।
खायुःपयोर्मुथशिले प्रतिरोधिपक्ष-
कृद्भूपतिस्तनुपतौ धनपे दृगूने ॥ ९३ ॥

नाप्तिः श्रुतिर्भवति कामतनूपतीत्थ-
शाले तनौ प्रददति स्वयमेव चौरः ।
स्वं वाथ तस्करजनः प्रपलायतेऽर्थं
नीत्वा पुरात्पुरपदाधिपतीत्थशाले ॥ ९४ ॥

वाङ्गे शुभेऽर्थे भृगुजे व्यये गुरौ
किं कायतोऽर्थे सति वाऽनुजे जले ।
वास्ताम्बुखस्थैः शुभदैः किमुत्तमे-
ऽस्ते वा विलग्नेऽपहृतं स्वमाप्नुयात् ॥ ९५ ॥

दशमेश यदि लग्नेश से दृष्ट न हो तो माता सहित चोर मिले। सप्तमेश दग्ध वा सूर्यरश्मियों को प्राप्त हो तो चोर मिले। सप्तमेश के साथ यदि लग्नेश का इत्थशाल हो तो राजाकी भय से स्वयं चोर धन को देता है। लग्नेश और सप्तमेश की दृष्टि न हो और लग्नेश विकल हो तो चोर चोरित धनको राजा के द्वारा देता है। लग्नेश दशमेश का योग हो तो भी राजाके द्वारा धन मिले। धनेश अष्टमेश का मुथशिल हो तो चोरित धन मिले। दशमेश अष्टमेश का मुथशिल हो तो 'राजा' चोरका पक्ष करता है। लग्नेश धनेश की परस्पर दृष्टि न हो तो चोरित धन न मिले केवल चोरित धन कर्णगोचर होता है। सप्तमेश और लग्नेश का लग्न में इत्थशाल हो तो स्वयं चोर चोरित धनको देता है। लग्नेश दशमेश का इत्थशाल हो तो चोर धनको लेकर पुर से भाग जाता है। लग्न में शुभग्रह, द्वितीय में शुक्र और व्ययमें गुरु हो तो (१) प्रश्न लग्न से द्वितीय तृतीय वा चतुर्थ में शुभग्रह हो तो(२) सप्तम, चतुर्थ और दशम में शुभग्रह हों तो (३) सप्तम वा लग्न में शुभग्रह हो तो चोरित धन मिले।

हृतस्य नाप्तिर्द्युनगे धनेशे वाऽनाप्तिकृत्तत्रगतः कृशेन्दुः ।
शीघ्रं शुभैः सप्तमगैर्हृताप्तिर्न स्याद्बलीन्दौ स्मरगे हृताप्तिः ॥ ९६ ॥

लग्नेश सप्तम में हो तो चोरित धन न मिले। क्षीण चन्द्रमा सप्तम में हो तो चोरित धन शीघ्र न मिले। सप्तम में शुभ ग्रह हों तो चोरित धन न मिले। सप्तम में बलवान् चन्द्रमा हो तो चोरित धन न मिले।

चौर प्रश्नः—

अथास्तगेहाधिपतौ चतुष्टये तत्रैव चौरः पुरतो विनिर्गतः।
नान्यत्र यातो मदपे त्रिमार्गपेत्थशालकेऽन्यत्र गतः स मोषकः ॥ ९७ ॥

यदि सप्तमस्थान का स्वामी केन्द्र में हो तो 'चोर' चोरित धनवाले के पुरमें ही होता है अर्थात् पुरसे निकलकर बाहर नहीं जाता है। सप्तम स्थान का स्वामी यदि तृतीयेश और नवमेश से इत्थशाल करे तो 'चोर' किसी दूसरे स्थानको चला जाय।

दस्युज्ञानप्रश्न आद्यार्कचन्द्रदृष्ट्या स्वीयागारदस्युर्द्वयोश्चेत्।
दृष्ट्यैकस्यार्थं वसेत्स्वस्य वेश्मासन्ने लग्नस्थेऽङ्गपे सास्तनाथे ॥ ९८ ॥
वाच्यश्चौरो वेश्मयातोऽस्तनाथे दुश्चिक्ये वा द्वादशेऽयं स्वभृत्यः।
सीमन्तिन्या भावनाथः स्वतुङ्गे यद्वा स्वर्क्षे तस्करः स्यात्प्रसिद्धः ॥ ९९ ॥

चोरज्ञान प्रश्न में यदि प्रश्न लग्न पर सूर्य और चन्द्रमा इन दोनों की दृष्टि हो तो चोर अपनेही घरका होता है। यदि प्रश्न पर सूर्य और चन्द्रमा के मध्य में किसी एक की ही दृष्टि हो तो अपने घर का पड़ोसी चोर होता है। यदि 'लग्नेश' सप्तमेश से युक्त होकर लग्न में हो तो चोर अपने ही घर का होता है। तृतीय वा द्वादश में सप्तमेश हो तो अपना भृतक (नोकर) चोर होता है। सप्तमेश अपनी उच्चराशि में वा स्वराशि में हो तो चोर प्रसिद्ध (नामवर वा मशहूर) होता हैं।

चौरोऽन्धः सपतङ्गशीतकिरणे सिंहोदयेऽस्रार्कज–
दृष्टेऽथो क्षणदापतौ व्ययगते वामेन काणो व्यये।
व्रध्नेऽन्येन विलोचनेन कथितः काणोऽथ यस्मिन् गृहे
प्राग्लग्नाद् दुरितोऽरिगः खलखसङ्के तत्प्रदेशे व्रणः ॥ १०० ॥

प्रश्न समय में सिंह लग्न हो और उस में स्थित हुए सूर्य चन्द्रमा यदि मङ्गल शनि से दृष्ट हों तो चौर अन्धा होता है। व्यय में चन्द्रमा हो तो चौर वाँये आँख का काना होता है और सूर्य व्यय में हो तो चौर दाहिने आँख का काना होता है। प्रश्न लग्न से छठे स्थान में स्थित पापग्रह जिस राशि में हो वह पाप ग्रह की राशि हो तो उस राशिवाले अङ्ग में चौर के शरीर में व्रण कहे।

पृच्छायां स्थिरभे तनौ स्थिरलवे वर्गोत्तमे वा धन–
मात्मीयेन जनेन केन तु हृतं तत्रैव तच्चोरितम्।
वस्त्वस्त्येवमिहापरैश्चरगृहांशे चोरितं वस्तु तद्
वाच्यं सञ्चलितं तथा द्वितनुभे प्राग्लग्नगे चोरितम् ॥ १०१ ॥

तद् द्रव्यं प्रतिवेशिनेति कथितं गेहाद्बहिर्निर्गतं
हर्ता स्यात्सबलद्युनस्थितखसत्तुल्यो नृदृष्टे नरः।
ओजर्क्षे पुरुषोऽन्यथा तु दयिताऽतो लग्ननन्दांशकाद्
वित्तस्यापहृतस्य जातिरुदिता चौरस्वरूपं तथा ॥ १०२ ॥

द्रेष्काणात्कथितं बुधैर्भवनतो दिग्देशकालादिक-
मेवं जातिवयोविभाग उदयांशात्कीर्तितः खेचरैः।
केन्द्रस्थैः ककुभो विचिन्त्य तनुभात्तेषामुतासम्भवे
ज्ञेयान्यत्र तु योजनानि चलितैर्लग्नान्तराङ्कांशकैः ॥ १०३ ॥

यदि प्रश्न समय लग्न में स्थिर राशि तथा स्थिर राशि का नवांश हो अथवा वर्गोत्तमांश हो तो अपने परिवार के मनुष्य ने 'धन' चुराया है और वह चुराया हुआ द्रव्य वहीं किसी स्थान रक्खा हुआ है ऐसा कहना चाहिए। यदि लग्न में चरराशि तथा चरराशि का नवांश हो तो किसी अन्य मनुष्य ने 'धन' चुराया है और वह धन घर से बाहर चला गया है। एवं प्रश्न लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो किसी समीपवर्त्ती (पड़ोसी) मनुष्य ने 'धन' चुराया है और वह घर से बाहर निकल गया है। सप्तम स्थान में स्थित ग्रहों के मध्य में जो बलवान् ग्रह हो उसके स्वरूपादि के समान चोर का स्वरूपादि होता है। यदि प्रश्नलग्न पुरुष ग्रह से दृष्ट हो वा विषम राशि लग्न में हो तो पुरुष चोर और उक्त प्रकार से विपरीत हो तो स्त्री चोर होती है। प्रश्नलग्न में जो नवांश राशि हो उस से चोरित धन की जाति कही है। प्रश्नलग्न में जो द्रेष्काण राशि हो उससे चौर का स्वरूप और प्रश्नलग्न राशि से दिग् देश कलादि को कहे। लग्नगत नवांश राशि से चौर की जाति और अवस्था को कहे। केन्द्रस्थ ग्रहों से दिशा का विचार करे। यदि केन्द्र में ग्रह न हों तो लग्नराशिसे दिशा का विचार करे। लग्न के अन्तर के नवांशकों से चौर की चाल के योजन जानने चाहिएँ।

त्र्यब्ध्यग्निवर्णाभिधमेषकाश्चरस्थिरद्विदेहेष्वपि मूर्त्तिषु क्रमात्।
जातिं तनूनाथसमां परे जगुर्वयोमितिं चापि तथेह तत्समाम् ॥ १०४ ॥

प्रश्न लग्न में चर राशि हो तो चोर का दो अक्षरों का नाम, स्थिर राशि लग्न में हो तो चोर का चार अक्षरों का नाम एवं द्विस्वभाव राशि लग्न में हो तो चोर का तीन अक्षरों का नाम होता है। अन्याचार्य्य चोर की जाति तथा अवस्था लग्नेश के तुल्य कहते हैं।

कल्पे कलानिधिदिवाकरदृश्यमाने
यद्वान्तराङ्गकृतपाणिनिवेशकेऽत्र।
चेत्पृच्छके स्वजन एष मलिम्लुचः स्याद्
बाह्यप्रतीककृतपाणि निवेशकेऽन्यः ॥ १०५ ॥

यदि प्रश्न लग्न सूर्य और चन्द्रमा से दृष्ट हो अथवा प्रष्टा अन्तरङ्ग (भीतर) की ओर हाथ किया हुआ प्रवेश करे तो अपने घर का मनुष्य चोर होता है। यदि प्रष्टा बाहर के अङ्ग की और हाथ किया हुआ प्रवेश करे तो अन्य पुरुष चोर होता है।

अस्तोदयेशौ तनुगौ कुटुम्बजनस्तदा तस्कर उक्त आर्यैः।
चिरोत्थनाथे सहजेऽवसाने चरः स्याद्विनियोज्यलोकः ॥ १०६ ॥

सप्तमेश और लग्नेश ये दोनों लग्नमें हों तो कुटुम्ब का मनुष्य चोर होता है। तृतीय वा व्यय में सप्तमेश हो तो द्वारपाल (ड्योढीवाला) चोर होता है।

मेषादि लग्नसे चोर की जातिका परिज्ञानः—

मेषाङ्के यदि वाडवो वृषतनौ राजन्य उक्तो यमे
वैश्यः कर्कटकेंऽघ्रिजः करिरिपौ चौरोऽन्त्यजोऽथाङ्गना।
कन्यायां तनुजोऽनुजः किमु सखा जूकेऽलिभे सेवको
ऽश्वे भ्रातोरुभवो मृगे कलशभे त्वाखुर्झषे भूतलम्॥ १०७॥

यदि प्रश्न समय में मेष लग्न होतो ब्राह्मण, वृषमें क्षत्रिय, मिथुन में वैश्य, कर्क में शूद्र सिंह में अन्त्यज (चण्डाल), कन्या में स्त्री, तुला में पुत्र भ्राता वा मित्र, वृश्चिक में सेवक, धनु में भ्राता, मकर में वैश्य, कुम्भ में मूषक (चूहा) और मीनमें भूतल (भूमिके नीचे का स्थान) चोर कहना चाहिए।

मूक गुप्त प्रश्नः—

जीवं मूलं तथा धातुं समे प्रतीपमोजभे।
विद्याद्योंऽशो विलग्ने तत्क्रमाद् गण्यो विचक्षणैः॥ १०८॥

सम राशि में जीव, मूल और धातु को जाने एवं विषम राशि में विपरीत जाने अर्थात् धातु, मूल और जीवको जाने। प्रश्न लग्न में जो नवांश हो उसके क्रमसे पण्डितजनों ने जीवादियों की गणना करनी चाहिए।

कः खेटोऽभ्युदितं निजांशमुदये यद्वा त्रिकोणालये
स्वांशस्थः समवेक्षते निगदिता चिन्ता तदा धातुजा।
चिन्तां जीवसमुद्भवां परलवे संस्थो विधत्ते खगो
मूलोत्थां परभागगः परलवं चिन्तां प्रपश्यन् ध्रुवम्॥ १०९॥

कोई ग्रह प्रश्न लग्न में स्थित होकर अपने नवांश में उदय हो अथवा त्रिकोण में स्थित हुआ ग्रह अपने नवांश में स्थित हो और अपने नवांश को देखता होतो धातुजन्य चिन्ता जाननी चाहिए। अन्यग्रह के नवांश में स्थितग्रह अपने नवांश को देखता होतो जीवचिन्ता को करता है। यदि अन्यग्रह के नवांशमें स्थित ग्रह अन्यग्रह के नवांश को देखता होतो मूलजन्य चिन्ता को करता है।

चिन्ता धातोः कण्टके वीर्य्ययुक्तासृक्सूर्य्याभ्यां दृष्टयुक्त बलिभ्याम्।
सौरिज्ञाभ्यां मूलजा जीवचिन्ता चन्द्रेज्याच्छैस्तैर्विशेषात्तनुस्थैः॥ ११०॥

यदि प्रश्नसमय में प्रश्नलग्न से जो केन्द्रस्थान है वे बलवान् मङ्गल सूर्य से दृष्ट वा युक्त होतो धातुकी चिन्ता केन्द्रस्थान बलवान् शनि बुध से दृष्ट युक्त हो तो मूल की चिन्ता एवं केन्द्रस्थान बलवान् चन्द्र गुरु शुक्र से दृष्ट युक्त हो अर्थात् विशेषतया उक्त ग्रह लग्न में हो तो जीव चिन्ता होती है। यहां केन्द्र शब्द से विशेषतया लग्न ग्रहण करना चाहिये।

पञ्चास्याजालिलग्ने दिनकरधरणीपुत्रसंयुक्तदृष्टे
धातोश्चिन्तां वदेयुर्युगयुवतिघटैणोदये मूलचिन्ता।
ज्ञार्किभ्यां दृष्टयुक्ते तदनु वृषतुलाकर्किकोदण्डमीनैः
जीवोत्था वीक्षिताढ्यैः सितविधुगुरुभिर्मिश्रखेटैस्तु मिश्रा॥ १११॥

प्रश्न समय में सिंह मेष वा वृश्चिक लग्न हो और वह सूर्य मङ्गल से दृष्ट युक्त हो तो धातु की चिन्ता होती है। मिथुन, कन्या, कुम्भ वा मकर लग्न हो और वह बुध शनि से दृष्ट युक्त हो तो मूल की चिन्ता होती है। वृष, तुला, कर्क धनु वा मीन लग्न हो और वह शुक्र चन्द्र गुरु से दृष्ट युक्त हो तो जीव चिन्ता होती है। एवं मिश्र ग्रहों से मिश्र चिन्ता होती है। किन्तु उक्त श्लोक का भाव यह है कि लग्नेश लग्न में हो वा लग्न को देखता हो तो उक्त ग्रहों की उक्त चिन्ता को कहे।

ज्ञेऽनुजस्य रुधिरे निजचिन्ताऽच्छे कुलस्थ तपने पितुरिन्दौ।
मातुरार्कितमसोरहितानां वीर्य्यभाजि धिषणे वनितायाः॥ ११२॥

प्रश्न समय में सब ग्रहों की अपेक्षा यदि बुध अधिक बली हो तो भ्राताकी चिन्ता, मङ्गल अधिक बली हो तो शरीर सम्बन्धिनी चिन्ता, शुक्र अधिक बली हो तो कुल की चिन्ता, सूर्य अधिक बली हो तो पिता की चिन्ता, चन्द्रमा अधिक बली हो तो माता की चिन्ता, शनि राहु अधिक बली हों तो शत्रुओंकी चिन्ता और गुरु अधिक बली हों तो स्त्रीकी चिन्ता होती है।

यो वीर्य्यवान्पौरफलाधिपत्योर्मध्ये ततो यत्र गृहे सितांशुः।
तद्भावयातस्य च वस्तुनो हि विचिन्तनं चेतसि पृच्छकस्य॥ ११३॥

लग्नेश और लाभेश इन दोनों के मध्य में जो अधिक बलवान् हो उससे जिस स्थान में चद्रमा हो उस भाव जन्य पदार्थोंकी चिन्ता प्रष्टा के हृदय में होती है। इस प्रकार पण्डित जन कहते हैं।

ग्लौर्येनाम्बरवासिना मुथशिली प्रश्नस्य काले यदा
तच्चिन्ता परिपृच्छकस्य हृदये होराविदोक्ताऽथवा।
होरास्थप्रथमाधिभूमुथशिली भावस्य यस्येश्वर–
स्तद्भावस्य किमिन्दु पुष्टखचराङ्गेड्गालयोस्था स्मृतिः॥ ११४॥

प्रश्न समय में जिस ग्रहसे 'चन्द्रमा' इत्थशाल करे उस ग्रह की पूर्वोक्त चिन्ता प्रष्टा के हृदय में होती है। अथवा जिस भाव का स्वामी लग्नगत लग्नेश के साथ इत्थशाल करे उस भावकी चिन्ता होती है। अथवा चन्द्रमा, बलवान् ग्रह और लग्नेश जिन स्थानों में हों उन स्थानों की चिन्ता होती है।

ज्ञार्किक्षितो हरिजगो हिमगुर्बुधो वा
कन्यां वदन्ति विबुधाः परिचिन्तितां हि।
वृद्धां स्त्रियं मृदुगतिस्तरुणीं सितारौ
सूतां सुरेज्यतपनौ पुरुषेऽपि चेत्थम्॥ ११५॥

लग्नगत चन्द्रमा वा बुध यदि बुध शनि से दृष्ट हो तो कन्या की चिन्ता को कहे। लग्न में शनि हो तो वृद्ध स्त्रीकी चिन्ता, शुक्र मङ्गल लग्नमें हों तो तरुणी (प्रौढा) स्त्री की चिन्ता, गुरु सूर्य लग्नमें हों तो प्रसववती स्त्री की चिन्ता होती है। इस प्रकार पुरुष में भी चिन्तित पुरुष की कल्पना करे।

कामेऽर्कास्फुजिदिनजैर्विचिन्तितान्य–
जायास्याद्धिदि गणिका निशाकरेऽपि।

स्वीयस्त्री सुरसचिवेऽन्यजातिरन्यै-
धीरैग्लौवदिह वयो विचिन्तनीयम् ॥ ११६ ॥

प्रश्नलग्न से सप्तम मे सूर्य शुक्र शनि हों तो परस्त्री की चिन्ता, बुध चन्द्रमा सप्तम में हों तो वेश्याकी चिन्ता, गुरु लग्न में हो तो अपनी स्त्री की चिन्ता और अन्य ग्रह लग्न में हों तो अन्य जाति की स्त्री की चिन्ता होती है। एवं प्रश्न कालमें 'चन्द्रमा' पूर्ण मध्यम वा क्षीण जैसा हो वैसे ही अवस्था का विचार करें अर्थात् मध्यम चन्द्रमा हो तो बालादि अवस्था, पूर्ण चन्द्रमा हो तो प्रौढावस्था और क्षीण चन्द्रमा हो तो वृद्धावस्था वाली स्त्री की चिन्ता होती है।

स्याच्चिन्ताऽऽत्मसमस्य लग्नगखगैर्मातुः स्वसुस्तुर्य्यगैः
पुत्रस्यात्मजगैः खगैर्बलयुतैर्भ्रातुः सहोत्थस्थितैः
शत्रोः शत्रुगतैः स्त्रिया मदनगैः स्वस्थैर्गुरोर्धर्म्मगै-
र्धर्म्मस्यैव बलान्वितेष्वरिहितस्वांशाधिपर्क्षेषु च ॥ ११७ ॥

यदि 'बलवान् ग्रह' लग्नमे हों तो आत्मा की वा आत्मा के समान मनुष्य की चिन्ता, चतुर्थगत बलवान् ग्रहों से माता की वा बहिण की चिन्ता, पञ्चमगत बलवान् ग्रहों से पुत्र की चिन्ता, सहजगत ग्रहों से भ्राता की चिन्ता, शत्रुगत ग्रहों से शत्रु की चिन्ता, सप्तमगत ग्रहों से स्त्री की चिन्ता दशमगत ग्रहों से गुरु की चिन्ता और नवमगत ग्रहों से धर्म की चिन्ता होती है। शत्रु, मित्र और स्वीयनवांश के स्वामी की राशियों में स्थित बली ग्रहों के क्रमसे उक्त चिन्ता को कहे।

लग्ने चरे चरलवे स्मृतिरध्वनः खाद्
भ्रष्टप्रवासिमनुजस्य बुधैः प्रदिष्टा।
व्यावर्त्तते यदिमदेऽनृजुनाकचारी
भ्रष्टोऽत्र नानृजुखगो यदि तत्र नैव ॥ ११८ ॥

लग्न में चरराशि तथा चर नवांश हो तो मार्ग (यात्रा) की चिन्ता होती है। दशमसे प्रवासभ्रष्ट मनुष्य की चिन्ता को कहे। सप्तम स्थान में वक्री ग्रह हो तो प्रवासी मनुष्य घर लौट आता है और सप्तम में वक्री ग्रह न हो तो प्रवासी मनुष्य घर को नहीं लौटता है।

चिन्तासवीर्य्याद्रजनीपतेस्तनुनेताऽत्र यद्भावगतस्तदीयजा।
किं केवलं चन्द्रगभावजाऽथवा तद्गेहजा यत्र निजोच्चगग्रहः ॥ ११९ ॥

बलवान् चन्द्रमा से जिस भावमें लग्नका स्वामी हो उस भावकी चिन्ता होती है। अथवा केवल चन्द्रमा जिस भावमें हो उस भावकी चिन्ता होती है। अथवा उच्चराशिगत ग्रह जिस भाव में हो उस भावकी चिन्ता होती है।

सिते सितांशौ रजतं कुमारे स्वर्णं सुरेज्ये कनकं सरत्नम्।
अङ्गारके शीसकरङ्गमार्कौ लोहं प्रभाभर्त्तरि ताम्रमुक्ते ॥ १२० ॥

शुक्र और चन्द्रमा के बली होनेपर रूप्य (चांदी) की चिन्ता, बुध में सुवर्ण की, गुरु में रत्नयुक्त सुवर्ण की, मङ्गल में शीसा और राङ्गकी, शनि में लोहकी एवं सूर्य में ताम्बा और मोतीकी चिन्ता होती है।

तुर्य्यांघ्रिजा रोहितदेहरव्योरादित्यकव्योर्द्विपदोद्भवा सा ।
सरीसृपाणामसुरामृतांश्वोर्वीनां स्मृतिर्बोधनमन्दगत्योः ॥ १२१ ॥

यदि मङ्गल सूर्य बलवान् हों तो चतुष्पदों की चिन्ता, सूर्य शुक्र बलवान् हों तो द्विपद (मनुष्य) जन्य चिन्ता राहू चन्द्रमा बलवान् हो तो सरीसृपों (बिलवासियों) की चिन्ता और बुध शनि बलवान् हो तो पक्षियोंकी चिन्ता होती है।

स्वर्क्षे सूर्य्ये राजराज्योत्थचिन्ता खातक्षेत्राम्बूद्भवा चिन्तनेन्दौ ।
माहेये द्विड्भूमिनाथाग्निभीतेर्ज्ञे कृष्यस्त्रक्षेत्रजाता खलोत्था ॥ १२२ ॥

प्रश्न समय में यदि 'सूर्य' स्वराशिमें हो तो राजा का राज्य की चिन्ता, चन्द्रमा स्वराशिमें हो तो खात, क्षेत्र और जलमय चिन्ता, मङ्गल स्वराशिमें हो तो शत्रु, राजा अग्निभय की चिन्ता एवं बुध स्वराशि में हो तो कृषि, शस्त्र, क्षेत्रजन्य तथा खलियान की चिन्ता होती है।

दैत्येज्ये निःशेषसौख्यस्य चिन्ता वाचामीशे धर्म्ममित्रक्षितीशाम् ।
चिन्ता सौरौस्वर्क्षयाते पितॄणां स्यान्मेदिन्याः सद्मनां पृच्छकस्य ॥ १२३ ॥

शुक्र स्वराशि में हो तो समस्त सौख्य की चिन्ता, गुरु स्वराशि में हो तो धर्म, मित्र तथा राजाकी चिन्ता एवं शनि स्वराशि में हो तो पितरों की, भूमि की और घरों की चिन्ता होती है।

प्रकर्षतोऽब्जे भृगुजेत्थशाले सौम्येत्थशाले धिषणेत्थशाले ।
सतीत्थशाले द्युकृतो विशेषादस्ते स्त्रियः पाणिनिपीडनस्य ॥ १२४ ॥

सप्तम स्थान में शुक्र बुध वा गुरु का इत्थशाल हो तो विशेषतया सप्तम भावमें चन्द्रमा का इत्थशाल हो अथवा सूर्य का इत्थशाल हो तो स्त्री के विवाह की चिन्ता होती है।

चिन्ताऽजे द्विपदांवृषे पशुभवा गर्भस्य चिन्ता यमे ।
कर्काख्ये व्यवसायजा मृगरिपौ जीवस्य कन्यात्मके ।
नार्य्यास्तौलिनि वित्तजा गदभवा कौर्प्ये हयाङ्केऽर्थजा
स्थानोत्था कलशे मृगे रिपुभवा चिन्ता झषे दैविकी ॥ १२५ ॥

प्रश्न समय में मेष लग्न हो तो द्विपदों (मनुष्यों) की, चिन्ता वृषमें पशुओंकी, मिथुन में गर्भकी, कर्क में व्यवसाय (व्यापार) की, सिंह में जीवकी, कन्या में स्त्री की, तुला में धन की, वृश्चिक में रोगकी, धनु में धन की, कुम्भ में स्थान की, मकर में शत्रु की और मीन में देवसम्बन्धिनी चिन्ता होती है।

चिन्ताङ्केऽर्के कूटपाखण्डिमंत्र्यसत्योत्थार्थे कार्यवीर्य्यस्य चिन्ता ।
शौर्य्ये तुर्य्येऽर्के विवादोद्भवा धीस्थे पुत्रोत्था मान्द्यगे मार्गचिन्ता ॥ १२६ ॥

प्रश्न समय में यदि सूर्य लग्न में हो तो कपट, पाषण्ड, मंत्री और असत्यजन्य चिन्ता, द्वितीय में सूर्य हो तो कार्य तथा बल की चिन्ता, तृतीय वा चतुर्थ में सूर्य हो तो विवादजन्य चिन्ता, पञ्चममें सूर्य हो तो पुत्रजन्य चिन्ता और षष्ठ में सूर्य हो तो मार्ग की चिन्ता होती है।

द्यूने पत्न्याः स्यात्तरेर्नैधनेऽन्यदेशोत्थाङ्के भूपकार्य्यस्य माने।
लाभे राज्ञो वित्तलब्धेर्व्ययेऽर्के चिन्ता वेद्याऽरातिमार्गोद्भवा नुः ॥ १२७ ॥

सप्तम में सूर्य हो तो स्त्री की चिन्ता, अष्टम में नाव की चिन्ता, नवम में अन्यदेशकी, दशम में राजकार्य की, एकादश में राजा और धनप्राप्ति की चिन्ता एवं द्वादश में सूर्य हो तो शत्रुजन्य तथा मार्गजन्य चिन्ता जाननी चाहिए।

क्षेत्रार्थासनजोदये हिमकरे वित्तोपयाते विधौ
चिन्ता वित्तविवादजा भुजगते स्याद् वृष्टिचिन्ता सुखे।
मातुर्वेश्मन आत्मजे तनयजा द्वेष्ये गदार्त्तस्य सा
कान्ताया ललनालये त्रिलयगे जग्धेर्मृतेश्चिन्तना ॥ १२८ ॥

चन्द्रमा लग्न में हो तो क्षेत्र, धन और आसन की चिन्ता, द्वितीय में धन और विवाद की, तृतीयमें वर्षाकी चतुर्थ में माता तथा गृह की, पञ्चम में पुत्र की, षष्ठ में रोगी की, सप्तम में स्त्री की और अष्टम में भोजन तथा मृत्युकी चिन्ता होती है।

भाग्ये वर्त्मगमोद्भवा दिवि खलक्षेत्रोद्भवा भावगे
शुभ्रांशौ शुचिवस्तुवस्त्रजनिता प्राप्तेर्हृतस्य व्यये।
भौमेऽङ्गे भयवादजा द्रविणगे नष्टार्थलब्धेर्भुजे
भ्रातॄणां सुहृदां सुखे रिपुसुहृच्चिन्ता क्रयादेः पशोः ॥ १२९ ॥

नवम में चन्द्रमा हो तो मार्ग गमनकी चिन्ता, दशम में खलियान तथा क्षेत्रजन्य चिन्ता, लाभमें पवित्र वस्तु, वस्त्रजन्य तथा प्राप्तिकी चिन्ता एवं व्ययमें चन्द्रमा हो तो धन चुराये जानेकी चिन्ता होती है। 'मङ्गल' लग्नमें हो तो भय और विवाद की चिन्ता, धन में नष्टधन प्राप्ति की चिन्ता, तृतीय में भ्राता तथा मित्रों की चिन्ता, एवं चतुर्थ में शत्रु, मित्र तथा पशुके खरीदने इत्यादि की चिन्ता होती है।

मंत्रेऽमर्षनरानुभीतिजनिताऽरौ वह्निरूप्यायस–
स्वर्णानां मदने विनष्टभृतकाश्वाद्युद्भवा चिन्तना।
याम्यस्थेऽसृजि मन्दुरादिगृहजा मार्गस्य चिन्ताऽङ्कगे
वादस्य प्रतिवादिनो दिवि भवे विश्वासबुद्ध्या रिपोः ॥ १३० ॥

प्रोक्ता सा विनिपातजा व्ययगते वैर्य्याहवोत्था मता
ज्ञेऽङ्गे शास्त्रसुखादिजा वसुगते पुत्रार्थचैलोत्थिता।
दुश्चिक्ये स्वसृसोत्थजा हृदि कृषेः स्याद्वाटिकोत्था सुते
चिन्ता सन्ततिकार्य्यजा गदगते गुप्ताङ्गनावित्तयोः ॥ १३१ ॥

पञ्चम में मङ्गल हो तो क्रोधी मनुष्यके भयकी चिन्ता, षष्ठमें अग्नि, चान्दी, लोहा और सुवर्णकी चिन्ता, सप्तम में नष्ट धन, सेवक, तथा अश्वादिजन्य चिन्ता; अष्टममें मन्दुरा (अस्तबल) इत्यादि गृहकी चिन्ता, नवममें मार्ग की; दशममें प्रतिवादी (मुद्दाले) के विवाद की; लाभ में विश्वासबुद्धिके कारण शत्रुसे गिरजाने की चिन्ता और व्यय में मंगल हो तो शत्रुसे युद्ध की चिन्ता होती है ।

यदि लग्नमें बुध हो तो शास्त्र तथा सुखादिजन्य चिन्ता; धन में पुत्र, धन तथा वस्त्रजनित चिन्ता; सहजमें बहिन तथा भ्राता की चिन्ता; चतुर्थ में कृषि तथा वाटिकाजन्य चिन्ता; पञ्चममें सन्तानकार्यजन्य चिन्ता और षष्ठ में बुध हो तो गुप्त स्त्री तथा धन की चिन्ता होती है ।

कामे वेर्युवतेर्मृतौः नरपतेः शिष्ट्या हृतार्थस्य च
पुण्ये पक्षिभवाऽऽस्पदे सुखकथाशास्त्रोद्भवा संस्मृता ।
लाभे संशयवित्तयोर्व्ययगृहे पाखण्डविद्रोहयोः
सौख्यास्याथ तनौ गुरौ विकलतानाशस्य सौख्यस्य च ॥ १३२ ॥

सप्तम में बुध हो तो पाक्षिकी तथा स्त्री की चिन्ता, अष्टममें राजाकी आज्ञासे अपहरण किये गये धनकी चिन्ता, नवम में पक्षियोंकी चिन्ता, दशममें सुखकथा तथा शास्त्रजन्य चिन्ता, लाभमें सन्देह और धनकी चिन्ता एवं व्ययमें बुध हो तो पाखण्डि, विद्रोह और सुखकी चिन्ता होती है । यदि गुरु लग्नमें हो तो वैकल्य नाशकी तथा सौख्यकी चिन्ता होती है ।

वित्तेक्षेमसुखार्थजा सहजगे वाचामधीशे स्वसु
श्चिन्ता स्वस्य जनस्य तुर्य्यभवने बन्धोर्विवाहस्य च ।
पुत्रस्नेहविवाहजा तनयगे रोगोपगे गीष्पतौ
चिन्तास्त्रीवडवादिगर्भजनिता माराश्रिते मंत्रिणि ॥ १३३ ॥
सा सिद्धेरुदितार्थकस्य मृतिगे पृच्छा कदर्थ्यस्य सा
पुण्यस्थे परदेशगार्थसरणिस्थानां पदस्थानगे ।
वागीशे सुखमित्रविग्रहभवाऽऽये सौख्यमन्त्ये यशो
होरायां सित इष्टगायनभवा किंनृत्यसौख्योद्भवा ॥ १३४ ॥

'गुरु' धनमें हो तो क्षेम (कुशल), सुख तथा धनकी चिन्ता; तृतीय में बहिन और अपने जनकी चिन्ता; चतुर्थमें बन्धु तथा विवाह की चिन्ता, पञ्चममें पुत्र, स्नेह और विवाहजन्य चिन्ता; षष्ठमें स्त्री तथा घोडीके गर्भकी चिन्ता; सप्तम में सिद्धि और उदित (बढे हुये) धनकी चिन्ता; अष्टममें कृपणकी चिन्ता; नवम में प्रवासी धन और मार्गस्थ मनुष्योंकी चिन्ता, दशम में सुख, मित्र तथा शरीर जनित चिन्ता; लाभमें सौख्य की चिन्ता; एवं व्ययमें गुरु हो तो यश की चिन्ता होती है ।

लग्नमें शुक्र हो तो इष्टवस्तु, गायनजन्य तथा नृत्यसौख्य जनित चिन्ता होती है ।

स्वेरत्नाम्बरवित्तजाऽनुजगते गर्भस्य चिन्ता स्त्रियः
किं वा भ्रातृसुखस्य बन्धुभवने वैवाहिकी सौख्यजा ।
सन्ताने सखिसोत्यसूनुतनयाचिन्ता सपत्नस्थिते
गुर्विण्याः प्रसवस्य मन्मथगृहे स्त्रीसङ्गसौख्यादिजा ॥ १३५ ॥

शुक्र द्वितीय में हो तो रत्न, वस्त्र तथा धनजन्य चिन्ता; सहजमें स्त्रीके गर्भ की तथा भ्रातृसुख की चिन्ता; चतुर्थ में विवाह सम्बन्धिनी तया सौख्यजन्य चिन्ता; पञ्चम में मित्र, भ्रातृ, पुत्र तथा पुत्री की चिन्ता; षष्ठमें गर्भवती स्त्रीकी चिन्ता एवं सप्तम में स्त्रीप्रसङ्ग तथा सौख्यादि जनित चिन्ता होती है।

यास्ये भे परदारजाङ्कभवने सुप्तस्य सत्कर्म्मणां
खे लाभेललनानसोश्वरभे स्वर्यातवस्तूद्भवा ।
मन्देऽङ्गे गदजाऽऽनने तनुभुवां सा पाठनादेर्भुजे
सोदर्य्यक्षयजाऽथ वारि युवतेः स्तन्यस्य वृद्ध्युद्भवा ॥ १३६ ॥

अष्टम में शुक्र हो तो पराई स्त्री की चिन्ता, नवम में शयन की चिन्ता, लाभ में स्त्री तथा गाडी की चिन्ता और व्यय में शुक्र हो तो स्वर्गगत वस्तु की चिन्ता होती है।

लग्नमें शनि हो तो रोगजनित चिन्ता, धनमें, पुत्रोंके पठनादिकी चिन्ता, सहजमें भ्रातृनाशकी चिन्ता और चतुर्थ में शनि हो तो युवति के स्तन्यवृद्धिजन्य चिन्ता होती है।

पुत्रे नृद्वयकार्य्यजा क्षतगृहे प्राग्जारिकायाः स्मरे
कामिन्याः शकटस्य सङ्गरगते नष्टार्थदास्यन्तजा ।
धर्म्मे निन्दति दुश्चितोर्गगनगे भीतेस्तथैवानसः
प्राप्तौ कुत्सितकार्य्यजाऽन्त्य इनजे चिन्ता रिपूणां मता ॥ १३७ ॥

पञ्चम में शनि हो तो दो मनुष्यों के कार्य जनित चिन्ता, षष्ठमें प्रथम जारिणी की चिन्ता, सप्तम में स्त्री की तथा गाडीकी चिन्ता, अष्टम में नष्टधन तथा दासीके अन्त की चिन्ता, नवम में निन्दा तथा दुष्ट बुद्धिकी चिन्ता, दशम में भय और गाडी की चिन्ता, लाभ में निन्दितकार्यजन्य चिन्ता और द्वादशमें शनि हो तो शत्रुओंकी चिन्ता जाननी चाहिए।

रोगी का शुभाशुभ प्रश्नः—

वैद्योऽङ्गं मद आमयः पदगृहं रोग्यौषधं तुर्य्यभं
मैत्री चेद् गदसंयुतस्य भिषजो भैषज्यरोगाख्ययोः ।
मैत्रे रोगशमं वदन्ति विबुधाः कोपस्तयोः शात्रवे
रोगैधा भिषजोऽङ्गगेऽसति तनौ भव्ये भिषग्गीः सुधा ॥ १३८ ॥

'वैद्य' लग्न, 'रोग' सप्तमस्थान, 'रोगी' दशमस्थान, 'औषध' चतुर्थ स्थान जानना चाहिए। लग्नेश और दशमेश की मैत्री हो अथवा लग्नगत राशिके तत्त्वकी तथा दशम गतराशिके तत्त्वकी मित्रता हो एवं चतुर्थेश और सप्तमेश की मित्रता हो अथवा चतुर्थ गत राशिके तत्त्व की और सप्तम गत राशिके तत्त्व की मित्रता हो तो पण्डितजन रोगके नाशको कहते हैं। यदि उक्त स्थानों के स्वामियों की वा तत्त्वों की शत्रुता हो तो रोग का प्रकोप होता है। यदि लग्न में पापग्रह हो तो वैद्यसे रोगकी वृद्धि और लग्नमें शुभग्रह हो तो वैद्यका वचन अमृतमय होता है।

यदा विलग्नेखलखेचरार्दिते गुणो न वैद्याद्गदवृद्धिरौषधात् ।
होरोपगैश्चारुखगैः सशक्तिभिश्चिकित्सकादौषधतः सुखी गदी ॥ १३९ ॥

जब प्रश्न लग्न पापग्रह से पीडित हो अर्थात् पापग्रह और लग्न के अंशादियों का सामीप्य हो तो वैद्य से गुण नहीं होता है और औषध से रोग की वृद्धि होती है । यदि लग्न में बलवान् शुभग्रह हों तो वैद्य और औषध से रोगी सुखी होता है ।

जामित्रयातैर्मलिनैश्चिकित्सकात्तथौषधादामयतोऽतिरोगवान् ।
सद्भिःस्मरस्थैस्तु सुपथ्यसेवनाद् गदी सुखी भेषजतश्च वैद्यतः ॥ १४० ॥

प्रश्न लग्न से सप्तम स्थान में पापग्रह हो तो वैद्य, औषध तथा रोग से रोगी जन अति रोगवाला होता है । यदि सप्तम में शुभग्रह हों तो उत्तम पथ्य के सेवन, औषध और वैद्य से रोगी सुखी होता है ।

खस्थैः खलैः स्वीयधियाऽगुणोभवेत्साधुग्रहैरास्पदगैः सुपथ्यतः ।
भैषज्यवैद्यैः सुखमेति रोगवान् शुभैर्गृहस्थैर्गदवान् गतामयः ॥ १४१ ॥

प्रश्न लग्न से यदि दशम स्थानमें पापग्रह हों तो अपनी बुद्धि से अगुण होता है । दशम स्थानमें शुभग्रह हों तो उत्तम पथ्य, औषध और वैद्यसे रोगीजन सुखको प्राप्त होता है । एवं चतुर्थ स्थानमें शुभग्रह हों तो रोगी रोगसे निर्मुक्त होता है ।

ग्लौगात्रभर्त्रोर्विमलेत्थशालिनोर्गदस्य नाशो गदिनस्तदा भवेत् ।
तस्मिन्यदा वक्रिणि नाकचारिणि भूयोऽपिरोगं समुपैति रोगवान् ॥ १४२ ॥

चन्द्रमा और लग्नेश का शुभग्रह के साथ इत्थशाल योग हो तो रोगीके रोगका नाश होता है । यदि इत्थशाल कर्त्ता शुभ ग्रह वक्री हो तो रोगीजन फिरभी रोगको प्राप्त होता है ।

मूर्त्तेःपतिर्मृत्युगृहस्य नाथ उभौ भवेतामनुयोगमूर्त्तौ ।
एकत्रिभागे यदि संस्थितौ तौ निर्व्याधिगात्रो गदपीडितस्य ॥ १४३ ॥

यदि प्रश्न लग्न में लग्नेश और अष्टमेश ये दोनों एक द्रेष्काण में हों तो रोगसे पीडित मनुष्य नीरोग शरीर होता है ।

चतुष्टयस्थःसुखगान्वितेक्षितो ग्लौरित्थशालं विभुना तनोःसह ।
तथाऽमलेनाम्बरचारिणा ततोऽङ्गेशे निशानेतरि कण्टकाश्रिते ॥ १४४ ॥
युक्तेक्षिते सद्द्युचरैर्न कल्मषैर्याम्येशवक्रास्तभगोज्झितेऽथवा ।
द्व्यङ्गे चरेऽङ्गेऽङ्गपचन्द्रचारुभिर्दृष्टेऽम्बुखेऽब्जे निजभे गदक्षयः ॥ १४५ ॥

यदि शुभग्रह से युक्त वा दृष्ट 'चन्द्रमा' केन्द्रमें स्थित होकर लग्नेशके वा शुभग्रह के साथ इत्थशाल योग करे (१) अथवा लग्नेश तथा चन्द्रमा केन्द्रमें स्थित होकर शुभ ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो और पापग्रह से दृष्ट वा युक्त न हो एवं अष्टमेश की राशिमें, वक्री ग्रह की राशिमें तथा अस्तगत ग्रह की राशि में न हो तो (२) अथवा लग्नमें द्विस्वभाव राशि वा चरराशि हों तो और वह लग्नेश, चन्द्रमा और शुभग्रहों से दृष्ट हो एवं स्वराशिगत चन्द्रमा चतुर्थ वा दशम में हों तो रोगीके रोगका नाश होता है ।

युक्तेऽमलैस्तुहिनगौ त्रिकभेतरस्थे
सल्लोकिते हरिजपेऽथ सनिर्मलेऽङ्गे ।
सौम्यान्तरे किमु सुधाकिरणेससौम्ये
केन्द्राश्रिते गदविनाशमुशन्ति सन्तः ॥ १४६ ॥

यदि 'चन्द्रमा' शुभग्रहों से युक्त होकर त्रिकरहित स्थानमें हो और लग्नेश शुभग्रहों से दृष्ट हो (१) अथवा लग्न शुभग्रहों से युक्त हो वा शुभग्रहों के अन्तराल मे हो तो (२) अथवा शुभग्रहसे युक्त चन्द्रमा केन्द्र में हो तो उक्त योगों में पण्डितजन रोगी के रोगका नाश कहते है।

स्वोच्चे कण्टककोणगे गतमले मूर्त्तीश्वरे मांसले
वैकःसद्विहगोऽङ्गलो हरिजगो रोगातुरं त्रायते ।
दैवायानुजवैरिगा इतमला घ्नन्त्यामयं रोगिणो
विप्राणी क्षयपस्तनूप उदितो लाभेट् सवीर्य्योऽगदः ॥ १४७ ॥

यदि शुभग्रह अपनी उच्चराशि में स्थित होकर केन्द्र वा त्रिकोण में हो और लग्नेश बलवान् हो अथवा एक बलवान् शुभग्रह लग्न में हो तो रोगी जनकी रक्षा करता है। नवम, एकादश, षष्ठ और तृतीय में शुभग्रह हो तो रोगी के रोगका नाश करते हैं। अष्टमेश दुर्बल हो, लग्नेश उदय हो, और लाभेश बलवान् हो तो रोगीजन रोगरहित होता है।

वार्मण्डलेऽन्यूनकले बुधेतनौ काव्यार्ययोःकण्टकधामयातयोः ।
चतुष्टयायूरहितेष्वसत्सुवा जामित्रजन्यात्मजविग्रहाश्रितैः ॥ १४८ ॥
सद्वीक्षितैश्चारुनभश्चरैःशशी दशायषट्शौर्य्यगतःकिमुत्तमैः ।
केन्द्रायुरङ्गात्मजगैरनुष्णगौ वृद्धिस्थिते वा प्रथमे सदीक्षिते ॥ १४९ ॥
यद्वोदयस्थःपरिपूर्णमण्डलो वार्मण्डलो वीक्षित इन्द्रमंत्रिणा
किं केन्द्रगावाङ्गिरसासुरार्च्चिता उतोत्तमा मृत्युमदप्रबन्धगाः ॥ १५० ॥
अघा भवन्त्युत्तमलोकनान्विताःषट्त्र्यायमानोपगतस्तिथिप्रणीः ।
किंवा शुभाकाशगृहाःकलावतश्चयोपयाता लभते सुखंगदी ॥ १५१ ॥

यदि प्रश्न समय में 'चन्द्रमा' परिपूर्ण विम्बा हो, 'बुध' लग्न में हो, शुक्र गुरु केन्द्र में हों, केन्द्र और अष्टममें पापग्रह न हों तो (१) अष्टम, सप्तम, पञ्चम और लग्न में स्थित हुए शुभ ग्रह यदि शुभग्रह से दृष्ट हों और चन्द्रमा उपचय स्थानमें स्थित हो तो (२) केन्द्र, अष्टम, नवम और पञ्चम में शुभग्रह हों एवं चन्द्रमा उपचय में अथवा 'लग्न' शुभदृष्ट हो (३) लग्नगत पूर्णचन्द्रमा गुरु से दृष्ट हो (४) बृहस्पति युक्त ये दोनों केन्द्र में हों (५) अष्टम, सप्तम और पञ्चम में शुभग्रह हों, 'पापग्रह' शुभग्रहों से दृष्ट हों एवं 'चन्द्रमा' उपचय स्थानमें हो (६) चन्द्रमा से उपचय स्थानमें शुभग्रह हो तो रोगी मनुष्य सुखको पाता है।

कलेवरेशे बलभाजि कण्टकसमाश्रिते सद्गगनाटने किमु ।
प्रश्नोदयादस्तमयेऽमलान्वित आर्त्तस्य भद्रं कथितं न पामरैः ॥ १५२ ॥

लग्नेश बलवान् हो और शुभग्रह केन्द्रमें हो अथवा प्रश्न लग्न से सप्तम स्थानमें शुभग्रह हो और पापग्रह न हों तो रोगीजन का मङ्गल अर्थात् आरोग्यता कहनी चाहिए।

ग्लावं ज्ञंवाऽऽद्याश्रितं वीक्षतेंऽहाः प्रष्टुः कष्टो व्याधिरिन्दौ रिपुस्थे ।
वाऽङ्गायुस्स्थे कल्मषैः कोशकामान्त्यस्थैर्वाब्जेऽघान्तराले तथैव ॥ १५३ ॥

प्रश्नलग्न में स्थित चन्द्रमाको वा बुध को पापग्रह देखता हो तो प्रष्टाको कष्ट तथा रोग होता है। यदि 'चन्द्रमा' षष्ठ लग्न वा अष्टम में हो एवं 'पापग्रह' द्वितीय, व्यय तथा सप्तम में हों अथवा चन्द्रमा पापग्रहोंके अन्तराल में हो तो प्रष्टाको कष्ट तथा रोग होता है।

मूर्त्तिधाम्नि मलिने खलेक्षित औषधं गदवतः क्षमं नहि ।
देहगे दिनदयेऽमृतद्युतौ मन्मथे मरणमातुरो लभेत् ॥ १५४ ॥

लग्नमें स्थित 'पापग्रह' यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो रोगी जनके लिए औषध हितकारक नहीं होती है। लग्न में सूर्य और सप्तम में चन्द्रमा हो तो रोगी मृत्युको प्राप्त होता है।

पप्यः पुत्रः पुण्ययातः शुभाना योगेक्षोनः पावकैर्दृष्टयुक्तः ।
स्याद्रोगार्त्तस्त्वन्यदेशप्रयातः षष्ठाष्टस्थोऽवश्यमन्तं विदध्यात् ॥ १५५ ॥

नवम स्थान गत शनि यदि शुभग्रहों के योग और दृष्टि से रहित हो एवं पापग्रहों से दृष्ट युक्त हो तो 'रोगी' अन्यदेशको जाता है। यदि उक्त लक्षण युक्त शनि षष्ठ वा अष्टम में हो तो अवश्य रोगीजन की मृत्युको करता है।

मित्रेऽवसाने तनये कलेवरे कुर्वन्ति पङ्का गदतः प्रणाशनम् ।
गात्रे गदेशो दुरितो निरीक्षते चेज्जन्मराशिं गदतो मृतिर्मता ॥ १५६ ॥

यदि चतुर्थ, व्यय, पञ्चम तथा लग्नमें 'पापग्रह' हों तो रोग से रोगीका नाश करते हैं। षष्ठेश लग्नमें हो और पापग्रह जन्मराशिको देखता हो तो रोगसे रोगीकी मृत्यु जाननी चाहिए।

पापान्तरेऽब्जे मृतिमित्रगे मृतिः सवीर्य्यसत्खेटदृशाऽचिरात्सुखम् ।
पौरे परिज्ञे पतिगेऽब्जिनीपतौ रोगी तदा कालनिकेतनं व्रजेत् ॥ १५७ ॥

यदि अष्टम वा चतुर्थ स्थान में स्थित 'चन्द्रमा' पापग्रहों के अन्तराल में हो तो रोगीकी मृत्यु होती है परन्तु उक्त 'चन्द्रमा' बलवान् शुभग्रह से दृष्ट हो तो शीघ्र रोगी सुखी होता है। लग्नमें चन्द्रमा और सप्तम में सूर्य हो तो रोगी मृत्युको प्राप्त होता है।

पापान्तरे प्रथमपे प्रथमे सपङ्के
शीतद्युतौ गतबलेऽथ क्रूशेऽवयुक्ते ।
क्रूरान्तरेऽत्रितनये धनपे गतोर्ज्जे
उत्तिष्ठते नहि तदा गदतो गदार्त्तः ॥ १५८ ॥

यदि ' लग्नेश ' पापग्रहों के अन्तराल में हो, ' लग्न ' पापयुक्त हो और चन्द्रमा निर्बल हो अथवा क्षीण चन्द्रमा पापयुक्त वा पापान्तर्गत हो और ' लग्नेश ' निर्बल हो तो रोगसे रोगी नहीं उठता है अर्थात् रोगी की मृत्यु होती है ।

मौढे निम्नसपत्नभे खलदृशा युक्ते खले लग्नपे
सोग्रेऽब्जे गदगुह्यभेऽथ धनपे नीचारिराशौ तनौ ।
सक्रूरे न शुभेक्षितेऽथ तनुपे मान्द्यान्वितेऽब्जे त्रिके
लेखा नोत्तमलोकितोत यजते कृष्णात्मजेनान्विते ॥ १५९ ॥
उग्रैर्दृष्टयुते निमीलनभये यद्वा सपङ्केऽङ्गपे
कोणेऽङ्गे युवने त्रिके सदुरितेऽथेन्दौ किमङ्गप्रभौ ।
आग्नेयाभ्रचरान्तरे हरिजभेऽहोलोकितेऽथाङ्गपात्
केन्द्रे काव्य उतेद्रमंत्रिणि घनेऽवाकाशवासेक्षिते ॥ १६० ॥
यद्वा द्वन्द्वलवे घनालयविभौ मान्द्यंशभे लक्ष्मणे
तस्मात्कोणगते खलेऽथ गुलिकस्थांशे तमिस्राकरे ।
प्राप्तेऽरातिविनाशरिःफभवनं तस्मात्प्रबन्धेऽध्वनि
पाप्माकाशचरे ध्रुवंनिधनतां सम्प्राप्नुयादातुरः ॥ १६१ ॥

प्रश्न लग्न का स्वामी यदि पापग्रह हो और वह अस्तंगत हो, नीचराशि में वा शत्रु राशि में हो, पापग्रहसे दृष्ट हो एवं पापयुक्त चन्द्रमा षष्ठ वा अष्टम में हो तो (१) धनेश नीच राशिमें वा शत्रु राशि में हो और लग्न पापयुक्त होकर शुभ दृष्ट न हो तो (२) ' लग्नेश ' यदि गुलिकसे युक्त हो, चन्द्रमा त्रिकस्थान में हो और 'लग्न' शुभदृष्ट न हो तो (३) गुलिक से युक्त चन्द्रमा षष्ठ वा अष्टम में स्थित होकर पापग्रहसे दृष्ट वा युक्त हो तो (४) ' लग्नेश ' पापयुक्त हो, लग्न में शनि और पाप युक्त चन्द्रमा त्रिक में हो तो (५) चन्द्रमा वा लग्नेश पाप ग्रहों के अन्तराल में हो और ' लग्न ' पापग्रह से दृष्ट हो तो (६) लग्नेश से केन्द्र में शुक्र हो तो (७) लग्नगत गुरु यदि पाप दृष्ट हो तो (८) ' लग्नेश ' मिथुनांश में वा द्विस्वभाव राशिके नवांश में हो, ' चन्द्रमा ' गुलिक की नवांश राशि में वा राशि में हो और गुलिक त्रिकोण में पापग्रह हो तो (९) ' चन्द्रमा ' गुलिक की नवांश राशि में स्थित होकर त्रिकस्थान में हो और उससे त्रिकोण में ' पापग्रह ' हो तो निश्चय से रोगी मृत्युके प्राप्त होता है ।

प्रश्नाङ्गोपगतं यदा दुरितभं पङ्क्षितालं क्षये
पङ्काकाशचरान्तरे मदुरिता चूडाऽय पृच्छाक्षणे ।
याम्येऽन्त्ये मलिना विधुर्द्विषि मृतौ मूर्त्तौ मदेऽथाजभे
कौर्प्यांशे सविधौ कुजेऽथ तनुपे सावेऽस्तगे पञ्चता ॥ १६२ ॥

प्रश्नलग्न में पापग्रह की राशि हो और वह पापग्रह से दृष्ट वा युक्त हो एवं अष्टमस्थान पापग्रहों के अन्तराल में हो और ' चन्द्रमा ' पापयुक्त हो तो (१) अथवा प्रश्नकाल में अष्टम तथा व्यय में पापग्रह हों, षष्ठ अष्टम लग्न वा सप्तम में चन्द्रमा हो तो (२) चन्द्रयुक्त भौम मेष राशि के वृश्चिकांश में हो तो (३) पापयुक्त लग्नेश सप्तम में हो तो रोगी की मृत्यु होती है ।

रोगार्त्तस्य भवेद्बली वधविभुर्देहेश्वरो दुर्बल—
स्तारानेतरि नैधने रुजिततो मूर्त्यायुरीशौ मृतौ ।
एकस्मिंस्त्रिलवे स्थितावुत घनेशानः खरांशे मृति—
श्छिद्रेशे तनुगे तनूपशशिनोश्छिद्रस्थयोः स्यान्मृतिः ॥ १६३ ॥

अष्टमेश बलवान् हो, लग्नेश निर्बल हो और 'चन्द्रमा' अष्टम वा षष्ठ में हो तो (१) लग्नेश अष्टमेश ये दोनों अष्टम स्थान में स्थित होकर एकद्रेष्काण में हों तो (२) 'लग्नेश' बाईसवें द्रेष्काण में हो तो रोगी की मृत्यु होती है । 'अष्टमेष' लग्न में हो, लग्नेश और चन्द्रमा अष्टम में हों तो रोगी की मृत्यु होती है ।

ईक्षते जननभं खलग्रहो मृत्युमंदिरगतः किमङ्गगः ।
यस्य रोगविनिपीडितस्य हि मृत्युरस्य कथितो विपश्चिता ॥ १६४ ॥

जिस रोगी की जन्म राशि को अष्टमस्थ वा लग्नस्थ पापग्रह देखता हो उस रोगी की मृत्यु कही है ।

क्रूरेक्षिते कालतनूपतीत्थशालेऽथ केन्द्रोपगते कलीशे ।
क्षयेऽङ्गपेवा हिबुकादधस्तान्मूर्त्तीश्वरो मान्ध्यगतोऽमृतांशुः ॥ १६५ ॥

यदा कलत्रालयपेत्थशालगोऽस्तेशोऽरिगो वा कलिकण्टकस्थयोः ।
ग्लौलग्नपत्योरशुभेत्थशालिनोरयुक्तदृष्टे विमलैर्बलक्षगौ ॥ १६६ ॥

प्रागलग्नपालेऽस्तमिते किमुद्रमेऽब्जेऽन्त्येऽसितेऽर्के कलहे कुजे खगे ।
नाङ्गे बलिष्ठोधिषणोऽथ दुष्कृतैर्देहायुरस्तालयगैर्जले लये ॥ १६७ ॥

एनोन्तरेऽब्जे विबलैर्विनिर्मलैः किमम्बुगे मारगतेऽङ्गगे ग्रहे ।
शशीत्थशालेऽथ विरामपे पुरे राजाङ्गभर्त्रोर्विलये किमङ्गपे ॥ १६८ ॥

सूर्य्येऽस्तपेऽरौ विकुशः स्मरालयपतीत्थशालः किमुकालपेनच ।
यदा विनष्टेन तथाऽस्तगेन चेत्केन्द्रस्थितेऽङ्गाधिपतीत्थशालिनि ॥ १६९ ॥

किंकण्टके क्रूरनिपीडिते तयोर्यदीत्थशालाद्दिनो मृतिर्मता ।
प्रविष्ट आदित्य दिवाकरांशकं कल्पेश्वरेऽप्येवमिहोदये चरे ॥ १७० ॥

अरुक् सरुग्वाऽऽमयवान् क्षणे ततो द्व्यङ्गेऽन्यरोगःस्थिर एव रोगतः
स्यादामयत्वं मरणं न रोगिणो नो रोगशान्तिःकिमुकृत्तिकाजनेः ॥ १७१ ॥

वक्रेत्थशाले स्थिररोग ईरितो मन्देत्थशाले प्रथमं रुजो जनिः ।
मूत्रस्य रोधादनुयोग उद्गमेद् ग्लौर्वास्तगो वारिपतीत्थशालभाक् ॥ १७२ ॥

मन्दो जनःस्यादनुयोगतःप्राग् विलोक्य चत्वारि दिनानि चैवम् ।
तुरङ्गतुल्यानि यदीनचन्द्रौ तेषूत्तमैर्दृष्टयुतौ वदेच्छम् ॥ १७३ ॥

पापग्रह से दृष्ट हुए अष्टमेश और लग्नेश का इत्थशाल हो तो (१) अष्टमेश केन्द्र में हो और लग्नेश अष्टम में हो तो (२) यदि 'लग्नेश' चतुर्थस्थान से नीचे हो अर्थात् तृतीय द्वितीय लग्न वा व्ययादि स्थान में हो, षष्ठ स्थान में स्थित चन्द्रमा का सप्तमेश के साथ में इत्थशाल हो अथवा सप्तमेश षष्ठ स्थान में हो तो (३) चन्द्रमा तथा लग्नेश ये दोनों मृत्युस्थान में वा केन्द्र में हो और उन दोनों का पाप ग्रह से इत्थशाल हो तथा 'चन्द्रमा' शुभग्रह से दृष्ट युक्त न हो एवं 'लग्नेश' अस्तगत हो वा सप्तम भाव में हो तो (४) लग्न में चन्द्रमा, व्यय में शनि, अष्टम में सूर्य, दशम में मङ्गल और बलवान् गुरु लग्न में हो तो (५) सप्तम, अष्टम और लग्न में पापग्रह हों, पापान्तर्गत चन्द्रमा चतुर्थ वा अष्टम में हो एवं शुभग्रह निर्बल हों तो (६) चतुर्थ, सप्तम वा लग्न में स्थित हुए ग्रह का चन्द्रमा के साथ इत्थशाल हो तो (७) लग्न में अष्टमेश हो, अष्टम मे चन्द्रमा तथा लग्नेश हों तो (८) लग्नेश सूर्य हो, सप्तमेश षष्ठ स्थानमें हो और चन्द्रमा का सप्तमेश के साथ इत्थशाल हो तो (९) विनष्ट वा अस्तगत अष्टमेश के साथ केन्द्रगत लग्नेश का इत्थशाल हो तो (१०) यदि केन्द्र गत तथा क्रूर ग्रहों से पीडित हुए लग्नेश और अष्टमेश का इत्थशाल हो तो उक्तयोगों में रोग युक्त मनुष्य की मृत्यु होती है। यदि 'लग्नेश' सूर्य के द्वादशांश में हो और लग्न में चरराशि हो तो रोगी जन क्षण में निरोग हो और क्षण में रोग युक्त होता है। यदि द्विस्वभाव लग्न हो तो अन्यरोग होता है। स्थिर लग्न हो तो रोग से ही रोगत्व होता है एवं रोगी की मृत्यु नहीं होती है और रोग की भी शान्ति नहीं होती है। यदि चन्द्रमा का वक्री ग्रह के साथ इत्थशाल हो तो रोग की स्थिरता को कहे। यदि चन्द्रमाका मन्द ग्रहके साथ इत्थशाल हो तो प्रथम मूत्रावरोध से रोग की उत्पत्ति होती है। यदि प्रश्नसमय में लग्नेश वा चन्द्रमा अस्तगत हो अथवा लग्नेश तथा चन्द्रमा का षष्ठेश के साथ इत्थशाल हो तो मनुष्य रोगी होता है। प्रश्नकाल से पूर्व चौथे दिन वा सातवे दिन यदि सूर्य और चन्द्रमा ये दोनों शुभग्रह से युक्त वा दृष्ट हो तो रोगी जन के लिए शुभ फल प्रद होते हैं।

रोगानुयोग उरगेशयमौ हरस्थौ
वातप्रकोप इनभूतनयौ च तत्र।
कोपोऽस्रपित्तजनितो विधुरास्फुजिद्वा-
ऽतीसार आरभृगुजौ सहसो विनाशः ॥ १७४ ॥

रोगप्रश्न में राहु और शनि अष्टमस्थान में हो तो 'वात प्रकोप' होता है। यदि अष्टम में सूर्य, मङ्गल हो तो रक्तपित्त का प्रकोप होता है। अष्टम में चन्द्रमा वा शुक्र हो तो अतीसार होता है। एवं मङ्गल शुक्र अष्टम में हो तो बल का नाश होता है।

स्यात्सन्निपातः सखले बुधेऽष्टमे त्रिदोषकृत्तत्र गुरुः सगर्हितः।
भानुः सखेटो यदि चित्ररुक्करः स्यात्कुष्ठकृत्तत्र सभोगिपो भगः ॥ १७५ ॥
सस्यान्महाकुष्ठगदप्रदोऽरिगस्ततो भुजङ्गाधिभुवा समन्वितः।
सौरिः समीके मरुतोऽग्निकम्पकृत्काव्यः ससृग्नो युधिसन्निपातकृत् ॥ १७६ ॥
यद्वा महारोगकरो बलोज्झितोऽशुभान्वितः केनचिदेवमीरितम्।
कृतान्तगेहेऽशुमति ज्वरं वदेन्मरुज्ज्वरं तत्र विभावरीविभौ ॥ १७७ ॥
वदन्ति मायुं महिमूर्तिसम्भवे राज्ये भ्रमं लेखगुरौ कपीडनम्।
कफामयं दैत्यपुरोधसीनजे तत्रज्वरं गन्धवहोत्थितं वदेत् ॥ १७८ ॥

यदि पापयुक्त बुध अष्टम में हो तो 'सन्निपात रोग' होता है। अष्टम में पापयुक्त गुरु हो तो त्रिदोष रोग को करता है। यदि अष्टम गत सूर्य ग्रह युक्त हो तो विचित्र रोग को करता है। राहु युक्त सूर्य अष्टम में हो तो कुष्ठरोग को करता है। एवं राहुसहित सूर्य षष्ठस्थान में हो तो महाकुष्ठ को करता है। राहु युक्त शनि अष्टम में हो तो वायु से पैरों में कम्प को करता है। राहु युक्त शुक्र अष्टम में हो तो सन्निपात रोग को करता है। अथवा बल रहित 'शुक्र' पाप युक्त होकर अष्टम में हो तो महारोग को करता है। इस प्रकार कोई आचार्य कहते हैं। अष्टम में सूर्य हो तो ज्वर, चन्द्रमा हो तो वातज्वर, मङ्गल हो तो पित्त, बुध हो तो भ्रम गुरु हो तो मस्तक में पीडा, शुक्र हो तो कफ जन्य रोग और शनि हो तो वातजन्य ज्वर को कहे।

रोगप्रश्नमें देवदोषका परिज्ञानः—

प्राग्लग्नतःपुण्यपराक्रमान्त्य प्रत्यर्थिगा दुष्कृतनाकवासाः।
हतस्तदा शस्त्रजलामयाद्यैस्तदन्वयोत्थं निगदन्ति दोषम् ॥ १७९ ॥

प्रश्न लग्नसे तृतीय, षष्ठ, नवम और व्यय में 'पापग्रह' हो तो शस्त्र, जल तथा रोगादियों से आहत होता है एवं वंशजन्य दोषको कहते हैं।

दोषं वंशपजं वदन्ति विबुधाः प्रश्ने क्रिये प्राक्कुजे
गोलग्ने पितृसम्भवं नरयुगे दोषं खदेव्यास्तथा।
शाकिन्याःशशिभे हरौ पुरपतेःषष्ठे कुलेश्यास्ततो
वंशेज्या जननी तुलाभृति ततःपुष्पन्धये नागराट् ॥ १८० ॥
यक्षाणामधिभूर्धनुर्धरतनौ तोयेश्वरी नक्रभे
कुम्भे यक्षभयं तनौ तिमियुगे दोषोऽम्बिकाया मतः।
युध्यन्त्ये तपनेऽनुयोगतनुतो दोषःकुलेश्या बुधे
भूताःशाकिनिका कुजेऽथ पितरो जीवेऽन्वयेशी यमे ॥ १८१ ॥
पाते प्रेतभयं सितेऽम्बुनिकटप्राप्तस्य भूतस्य भीः
साध्या देवगणाःस्वभोच्चगृहगे वीर्य्यान्विते वा शुभैः।
केन्द्रस्थैःस्तवमंत्रपूजनजपात्साध्या न साध्या विधौ
नीचे वीतबलेऽथवा बलयुतैःकेन्द्राश्रितैर्दुष्कृतैः ॥ १८२ ॥

प्रश्नलग्नमें मेष राशि हो तो पण्डितजन कुलदेवजन्य दोषको कहते है। एवं वृषमें पितृजन्य, मिथुनमें आकाशदेवी, कर्क में शाकिनी, सिंहमें ग्रामदेवता, कन्यामें कुलदेवी, तुलामें कुलपूजा देवी तथा माता, वृश्चिकमें नागराजा, धनु में यक्षोंके स्वामी (कुबेर), मकरमें जलदेवी, कुम्भमें यक्षोंका भय और मीनमें देवीका दोष जानना चाहिए। प्रश्नलाभ से अष्टम वा व्ययमें 'सूर्य' हो तो कुलदेवीका दोष, बुधमें भूत, मङ्गल मे शाकिनी, गुरुमें पितृगण, शनि में कुलदेवी, राहुमें प्रेतसे भय एवं शुक्र में जलतटगत भूत से भय होता है। यदि अष्टम वा व्यय स्थानमें स्थित हों और बलवान् हों तो देवतागण साध्य जानने चाहिएँ। यदि 'शुभग्रह' केन्द्रमें हों तो स्तोत्र, मंत्र, पूजन तथा जपसे देवतागण साध्य जानने चाहिएँ। एवं 'चन्द्रमा' नीचराशि में हो वा निर्बल हो अथवा पापग्रह बलवान् होकर केन्द्र में हों ते देवतागण साध्य नहीं होतीं है।

वर लाभ प्रश्नः—

भेन्दू सवीर्य्यौ विषमांशराशिगौ प्रपश्यतोऽङ्गं वरमेति कन्यका ।
पुंभोदयेऽङ्गायगतेऽर्च्चिते तथेन्दुभौ भवेऽस्ते सहितेक्षितौ शुभैः ॥ १८३ ॥

बलवान् शुक्र चन्द्रमा यदि विषम नवांश में तथा विषम राशिमें स्थित होकर लग्नको देखते हों तो 'कन्या' वरको पाती है। लग्नमें पुरुष राशि और लग्न वा लाभमें गुरु हो अथवा चन्द्रमा और शुक्र ये दोनों शुभग्रहोंसे युक्त दृष्ट होकर लाभ वा सप्तम में हों तो भी 'कन्या' वरको पाती है।

विवाह प्रश्नः—

ग्लौर्धीत्र्यायार्य्यस्तगो ज्ञेज्यसूरैर्दृष्टो दातोद्वाहकस्य त्रिकोणे ।
केन्द्रे सन्तस्तद्वदेवेह योगेऽस्ते सन्सत्स्त्रीं प्राप्नुयादन्यथा न ॥ १८४ ॥

यदि 'चन्द्रमा' पञ्चम तृतीय लाभ षष्ठ वा सप्तम में स्थित होकर बुध गुरु सूर्य से दृष्ट हो तो 'विवाह दाता' होता है। एवं 'शुभग्रह' त्रिकोण वा केन्द्र में हो तो वे भी विवाहदाता होते है और उक्त योगमें सप्तमस्थान में शुभ ग्रह हो तो उत्तम स्त्री की प्राप्ति होती है। यदि उक्त प्रकार से विपरीत हो तो स्त्रीकी प्राप्ति नहीं होती है।

लभ्या कन्याऽऽर्कौ समस्थे वरस्यातो व्यस्तान्नो पूज्यदृष्टःपरिज्वा ।
खारित्र्यायार्थास्तयातो युवत्या लाभं कुर्यात्तत्क्षयं पङ्कखेटैः ॥ १८५ ॥
दृष्टो युक्तोऽथावदृग्योगहीनं देहस्थं ज्ञं वोडुपं वीर्य्यवान्भः ।
प्रेश्य क्षिप्रं कन्यकाप्तिं प्रकुर्य्याद्धोरालेखेन्दू चरर्क्षोपयातौ ॥ १८६ ॥
दृष्टौ भेनासत्खगाःकण्टकस्थाःसम्प्राप्नोतु प्राज्यपत्न्यस्तदानीम् ।
गात्रेऽन्त्येशेऽन्त्यऽङ्गपे स्त्र्यर्थलाभोऽङ्गेशेऽस्तेऽङ्गेऽस्तेश्वरे ग्लौकविभ्याम् ॥ १८७ ॥
संयुक्ताश्चेत्कर्कगोतौलिसञ्ज्ञा उद्वाहःस्यान्मानवानामवश्यम् ।
जायाद्येशौ स्वर्क्षतुङ्गोपयातावन्योन्यं तौ पश्यतःपौरपोऽस्ते ॥ १८८ ॥
द्यूनेशोऽङ्गे सत्वरं स्याद्विवाहः सद्दृष्टाढ्योऽब्जोऽस्तधीत्र्यायरवस्थः ।
किं सद्दृष्टाः सत्खगाः सत्त्ववन्तः स्वोच्चादिस्थाः कण्टकायाश्रिता वा ॥ १८९ ॥
आर्य्येऽङ्गेऽब्जेऽस्तेखलोनेऽष्टकेन्द्रे किं प्रद्युम्ने प्राणवान्पौरपो वा
स्वोच्चस्थेऽब्जेऽस्ताङ्गगे वीक्ष्यमाणे पूज्याच्छूभ्यां प्राप्नुयाच्चारुपत्नीम् ॥ १९० ॥

यदि सम राशि में 'शनि' हो तो वर को कन्याकी प्राप्ति होती है। और उस प्रकार से विपरीत हे तो कन्या नही मिलती है। दशम षष्ठ तृतीय एकादश द्वितीय या सप्तममें चन्द्रमा हो और वह गुरु से दृष्ट हो तो स्त्री का लाभ और पापग्रह से दृष्ट हो तो स्त्री का नाश करता है। अर्थात् स्त्री नही मिलती है। लग्न गत बुधको वा लग्नगत चन्द्रमा को यदि बलवान्युक्त देखता हो तो शीघ्र कन्याकी करता है। चरराशिगत लग्न तथा चन्द्रमा यदि शुक्र से दृष्ट हों और पापग्रह केन्द्र मे हो तो बहुत स्त्रियोंकी प्राप्ती होती है। लग्न में व्ययेश और व्ययमें लग्नेश हो तो स्त्री धन का लाभ होता है। सप्तममें लग्नेश और लग्न में सप्तमेश हो एवं कर्क वृष

तुला राशि यदि चन्द्र शुक्र से युक्त हों तो अवश्य मनुष्योंका विवाह होता है। सप्तमेश लग्नेश ये दोनों स्वराशिमें वा स्वोच्चराशि में स्थित होकर परस्पर देखते हो और लग्नेश सप्तममें तथा सप्तमेश लग्न में हो तो शीघ्र विवाह होता है सप्तम पञ्चम तृतीय लाभ वा दशम में चन्द्रमा हो और वह शुभग्रह से दृष्ट युक्त हो तो (१) बलवान् शुभ ग्रह उच्चादि राशिमें स्थित होकर शुभ ग्रहसे दृष्ट हो एवं केन्द्र तथा लाभ में हों तो (२) लग्न में गुरु, सप्तममें चन्द्रमा और अष्टम तथा केन्द्र में पापग्रह न हों तो (३) बलवान् लग्नेश सप्तममें हो तो (४) स्वोच्च राशिगत चन्द्रमा सप्तम वा लग्नेश हो और शुक्र गुरुसे दृष्ट हो तो ' प्रष्टा पुरुष ' उत्तम स्त्री को पाता है।

भग्लौगृहं देहगतं बलान्वितसद्युक्तदृष्टं शुभदं ततोऽङ्गभम् ।
युग्मर्क्षभागोपगतौ बलीन्दुभौ विलोक्य लब्धिं कुरुतस्तदा स्त्रियः ॥ १९१ ॥

प्रश्न लग्न में शुक्र वा चन्द्रमा की राशि हो और वह बलवान् शुभग्रह से युक्त दृष्ट हो तो शुभप्रद होती है। अर्थात् विवाहदायक होती है । यदि बलवान् चन्द्रमा शुक्र ये दोनों समराशि तथा समनवांश में स्थित होकर लग्न को देखते हों तो स्त्री की प्राप्ती को करते है।

भार्य्याविभुर्भव्यविलोकितान्वितः पश्यन्कलत्रं सममित्थशालकम् ।
करोतु कायाधिभुवेन्दुना ध्रुवमयाचितस्त्रीजनलाभमाप्नुयात् ॥ १९२ ॥

सप्तम स्थानका स्वामी यदि शुभ ग्रह से दृष्ट युक्त हो और वह सप्तम भावको देखता हुआ लग्नेश के वा चन्द्रमा के साथ इत्थशाल करे तो ' प्रष्टा पुरुष ' अयाचित स्त्री को पाता है।

लभेत कान्तामिह याचितां पुरपालः परिज्वा किमनङ्गगस्ततः ।
मूर्तीशतो मूसरिफे विधौ वधूनाथेत्थशाले स्वयमाप्तिका स्त्रियः ॥ १९३ ॥

यदि प्रश्न समय में लग्नेश अथवा चन्द्रमा लग्न से सप्तम हो तो याचित (मनोऽनुकूल वा मांगी हुई) स्त्री को पाता है। लग्नेश के साथ चन्द्रमा का इसराफ योग हो और सप्तमेश के साथ चन्द्रमा का इत्थशाल योग हो तो स्वयं स्त्री की प्राप्ति है।

याते शुभत्वं ललनानिकेतने किं क्रूरिते बान्धवमे विवाहिता ।
प्राप्ते वयस्ये शुभतां धृताङ्गना चेत्क्रूरितेऽप्यस्तमये तथा भवेत् ॥ १९४ ॥

यदि सप्तम भाव शुभत्व को प्राप्त हो अर्थात् सप्तम भावमें केवल शुभ ग्रहों का सम्बन्ध हो अथवा चतुर्थ भाव क्रूरित हो अर्थात् चतुर्थ भावमें पापग्रहों का सम्बन्ध हो तो विवाहिता स्त्री होती है। चतुर्थ भाव शुभत्व को प्राप्त हो तो धृताङ्गना (रखेली स्त्री) होती है। एवं सप्तम भाव क्रूरित हो तो भी धृताङ्गना होती है।

सम्प्राप्तयोः शोभनतां यदोभयोः स्त्रियौ भवेतां च विवाहिता धृता ।
असौम्यतां चेद्गतयोस्तयोर्द्वयोर्धृतानभार्या न विवाहिता तदा ॥ १९५ ॥

सप्तम चतुर्थ ये दोनों भाव यदि शुभत्व को प्राप्त हों तो विवाहिता तथा धृता दोनों स्त्रियां होती है। एवं सप्तम चतुर्थ ये दोनों भाव क्रूरत्व को प्राप्त हो तो विवाहिता तथा धृता ये दोनों स्त्रिया नहीं होती है।

सद्भिः सुखेऽघैः पथि दर्पके धृता नोद्वाहितास्त्री मुहिराम्बुगैरघैः ।
बाहौ घुनेऽङ्गेन सदीक्षितान्विते कान्ते म्रियेते धृतिकाविवाहिते ॥ १९६ ॥

चतुर्थ में शुभग्रह एवं सप्तम तथा नवम में पापग्रह हो तो पुरुष की धृता स्त्री होती है और विवाहिता स्त्री नही होती है। यदि सप्तम तथा चतुर्थ में पापग्रह हो अथवा सप्तम में वा लग्न में राहु हो और वह शुभग्रह से दृष्ट युक्त न हो तो पुरुष की धृता तथा विवाहिता इन दोनों स्त्रियोंका मरण होता है।

चतुष्टयावाप्तिवधप्रबन्धगे शशी नलिन्या मलिनेत्यशालतः ।
उताशुभैः शान्तचतुष्टयाश्रितैः प्रष्टा तदा नोलभतेऽङ्गनाजनम् ॥ १९७ ॥

केन्द्र एकादश अष्टम वा पञ्चम में चन्द्रमा हो और वह पापग्रह से इत्थशाल करे अथवा पापग्रह अष्टम तथा केन्द्र में हो तो प्रष्टा को स्त्री की प्राप्ति नहीं होती है।

भेन्दू साघौ वाघदृष्टे समर्क्षेऽब्जे मन्देऽरौ नैधने नो विवाहः ।
कायाङ्कास्ताग्र्यन्त्यगे कामपे वा नीचे सोग्रे पञ्चता पूर्वपत्न्याः ॥ १९८ ॥

शुक्र और चन्द्रमा ये दोनों पापयुक्त हों अथवा सप्तमराशिगत चन्द्रमा पापयुक्त हो और षष्ठ वा अष्टम में शनि हो तो विवाह नहीं होता है। लग्न नवम सप्तम षष्ठ वा व्ययमें सप्तमेश हो अथवा वह सप्तमेश नीच राशि में हो वा पापयुक्त हो तो प्रथम स्त्री की मृत्यु होती है।

निरोधकारकः करग्रहस्य चिक्लिदः खलैः ।
युतेक्षितोऽककायकाङ्ककाल धर्ममंत्रगः ॥ १९९ ॥

यदि 'चन्द्रमा' पापग्रहों से युक्त दृष्ट होकर द्वादश लग्न चतुर्थ नवम अष्टम वा पञ्चम में हो तो विवाहका प्रतिरोधक (रोकनेवाला) होता है।

गर्भप्रश्नः—

होरायां स्थिरभे भव्यैर्लोकिते स्थिरराशिगे ।
यद्वाऽऽयात्मजगैः सौम्यैर्गर्भयोगाविमौ मतौ ॥ २०० ॥

प्रश्न लग्नमें स्थिर राशि हो और वह स्थिर राशिगत शुभ ग्रहों से दृष्ट हो अथवा पञ्चम और लाभ में शुभ ग्रह हों तो ये दोनों गर्भयोग जानने चाहिएँ।

प्रबन्ध पौराप्तिगतैरपापैरवक्रास्तमुक्तैर्बलिभिर्विपश्चिता ।
गर्भोमतः केन्द्रगयोर्मतीश्वरेत्थशालयोर्माहरिजेशयोस्तथा ॥ २०१ ॥

वक्रास्त रहित शुभग्रह यदि बलवान् होकर पञ्चम लग्न और लाभ में स्थित हों अथवा चन्द्रमा और लग्नेश ये दोनों केन्द्र में स्थित होकर पञ्चमेश से इत्थशाल करें तो गर्भ जानना चाहिए।

गर्भे सभव्ये स्वपतीक्षितान्विते किं मांसले मासपतौ शिवं वदेत् ।
गर्भस्य गर्भच्युतिरुग्रखेचरे गर्भे स्वकीयाधिभुवा न लोकिते ॥२०२॥

शुभ ग्रह से युक्त हुआ पञ्चमस्थान यदि अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो अथवा मास का स्वामी बलवान् हो तो गर्भ की कुशलता कहे। यदि गर्भ (पञ्चम) स्थान में पाप ग्रह हो और वह अपने स्वामी से दृष्ट न हो तो गर्भच्युति होती है।

द्विदेहभेऽङ्गे तनये सदन्विते द्वौ नन्दनौ गर्भगतौ गभस्तिना ।
पुंराशिसंस्थेन यदीत्थशालिनि कलेवरागारपतौ तु गर्भदः ॥ २०३ ॥

लग्न में द्विस्वभावराशि हो और पञ्चमस्थान शुभयुक्त हो तो गर्भ में दो पुत्र कहने चाहिएँ। पुरुष राशि में स्थित सूर्य यदि लग्नेश से इत्थशाल करे तो गर्भदायक होता है।

धिस्थैर्धैरत्रिजनावधेत्थशाले न गर्भोऽङ्गपयक्षराजोः ।
सार्क सुतेशेन यदीत्थशाल आपोक्लिमे लग्नधियोरदृष्टेः ॥२०४॥

तथाऽङ्गगेऽब्जे चरभेऽसदित्थशाले सगर्भा म्रियतेऽङ्गनाऽस्य ।
जीवेन्न गर्भोऽब्जतनूपयोस्तत्पतिस्थवाक्र्यम्बरगेत्थशाले ॥ २०५ ॥

पाप ग्रह पञ्चम स्थान में हो और चन्द्रमा पाप ग्रह के साथ इत्थशाल करे तो गर्भ नहीं होता है। अपोक्लिम स्थित लग्नेश और चन्द्रमा का पञ्चमेश के साथ इत्थशाल हो और वे दोनों लग्न पञ्चम को न देखते हों तो भी गर्भ नहीं होता है। चरराशिगत चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर पाप ग्रह से इत्थशाल करे तो गर्भवती स्त्री की मृत्यु होती है। चन्द्र राशि के स्वामी का और लग्नेश की राशि के स्वामी का वक्री ग्रह के साथ इत्थशाल हो तो 'गर्भ' जीवित नहीं रहता है।

सन्तति प्रसूति समय प्रश्नः—

प्रश्नक्षणे यद्भगते दशाश्वे तत्पञ्चमं जन्मगृहं तथेन्दोः ।
जायाभमंशादनुयोगलग्नांशकेशभं ग्लावि गते प्रसूतिः ॥२०६॥

प्रश्न समय में 'चन्द्रमा' जिस राशि में हो उस से पञ्चम स्थान में जो राशि हो वह 'जन्म राशि' होती है। चन्द्रमा की नवांश राशि से जो सप्तम राशि हो उस में वा प्रश्नलग्न के नवांशेश की राशि में चन्द्रमा के जाने पर 'प्रसव' होता है।

धीशः पुरे गौरकराङ्गपौ शुभैर्दृष्टौ मतिस्थौ किमु धीशुभायगः ।
जीवोऽथ लग्ने शुभदे सदेहपे फलेऽर्चिते वोदयपेऽम्बुखास्तगे ॥ २०७ ॥

कन्द्रे ससौम्ये सचिवे ततः खलदृशा विमुक्तोऽमृतसूश्चतुष्टये ।
धीदेहपाभ्यां च यदीत्थशालकं कुर्य्यादलं सन्ततिमेति पृच्छकः ॥ २०८ ॥

लग्न म पञ्चमेश, पञ्चम में चन्द्रमा तथा लग्नेश हों और वे शुभ दृष्ट हों तो (१) पञ्चम नवम वा लाभ में गुरु हो तो (२) लग्नेश युक्त शुभ ग्रह यदि लग्न में हों और लाभ में गुरु हो तो (३) चतुर्थ दशम वा सप्तम में लग्नेश हो और शुभयुक्त गुरु केंद्र में हो तो (४) पाप ग्रह से अदृष्ट चन्द्रमा केन्द्र में स्थित होकर यदि पञ्चमेश और लग्नेश से इत्थशाल करे तो प्रष्टा को सन्तान की प्राप्ति करता है।

गर्भे प्रदृष्टे सहिते भजानिना युक्तेक्षिते भव्यवियच्चरेण वा ।
तत्रोच्चयातेऽभ्युदिते लभेत नाऽनुयोगकर्त्ता किल दिव्यसन्ततिम् ॥ २०९ ॥

पञ्चमस्थान यदि चन्द्रमा से दृष्ट वा युक्त हो वा शुभग्रह से युक्त दृष्ट हो वा पञ्चम में उच्चराशि गत ग्रह हो वा अभ्युदित ग्रह हो तो प्रश्नकर्ता उत्तम सन्तति को पाता है।

भव्यो मतीशो त्रिमलान्वितेक्षितश्चेदित्थशालं कुरुतेऽङ्गपेन च ।
परिज्वनाऽसौ विदधीत सन्तातिं प्रष्टुः प्रबन्धं प्रमदानरग्रहाः ॥२१०॥
आलोकयन्त्युर्ज्जयुता यदुन्मितास्तदुन्मिताः स्युर्दुहितार आत्मजाः ।
धीभांशतुल्याः पतिपुण्ययोगतोऽनुयोगकाले जननेऽपि संस्मृताः ॥ २११ ॥

पञ्चम स्थान का स्वामी यदि शुभग्रह हो और वह शुभग्रह से युक्त दृष्ट हों एवं लग्नेश तथा चन्द्रमा के साथ इत्थशाल करता हो तो प्रष्टा को सन्तान की प्राप्ति करता है।' जितने बलवान् पुरुषग्रह पञ्चम स्थान को देखते हों उतने पुत्र और जितने बलवान् स्त्रीग्रह पञ्चम स्थान को देखते हों उतनी पुत्री होती हैं। अथवा प्रश्न काल में और जन्मकाल में भी पञ्चम स्थान में स्थित राशि तथा नवांश राशि की संख्या के तुल्य पञ्चमेश और शुभग्रहों के योग से सन्तान की संख्या जाननी चाहिए।

हित्वोद्गमं विषमराशिगते घटेशे
स्यात्सूनुजन्म समराशिगते तु तस्मिन् ।
स्त्रीजन्म युग्मभलवे त्रिलवे समे च
दृष्टे न पुंदिविचरैः पुरगे तथा स्यात् ॥ २१२ ॥

लग्नको छोडकर यदि विषम स्थान (३।५।७।९।११) में 'शनि' हो तो पुत्रजन्म और लग्न तथा सम-स्थान (२।४।६।८।१०।१२) में 'शनि' हो तो कन्या का जन्म होता है। यदि प्रश्न लग्न में समराशि, समराशि का नवांश तथा समराशि का द्रेष्काण हो और शुभग्रहों से दृष्ट न हो तो भी कन्या का जन्म होता है।

यदोदयं वीर्य्ययुते नृखेटवर्गोपयाते पुरुषग्रहेन्द्रैः ।
संवीक्ष्यमाणे सुतसम्भवः स्याद्वरं प्रशस्तं ललना लभेत ॥ २१३ ॥

यदि प्रश्न लग्न बलवान् हो और उस में पुरुषग्रह के वर्ग हो एवं पुरुषग्रहों से दृष्ट हो तो पुत्रजन्म होता है। यदि वर प्राप्ति के प्रश्न में उक्त योग हो तो स्त्रीजन उत्तम वर को पाती है।

रवीज्यरक्तैर्विधिविक्रमास्तप्रबन्धगैर्गर्भगतः पुमान् स्यात् ।
तत्रान्यखेटैर्दुहिताऽऽत्मजेशे काये किमङ्गेशविधू मतिस्थौ ।।२१४॥
शीघ्रं सुताप्तिर्धनपे नृभे तथाऽपत्यस्य योगो द्वितनौ विलग्नगे ।
सद्युक्तपुत्रेऽथ समेऽङ्गपुत्रपौ सुताऽथ तावोजगृहे सुतप्रदौ ।। २१५ ।।

तृतीय, सप्तम, नवम और पञ्चम में सूर्य, गुरु और भौम ये तीनों हों तो गर्भ में पुरुष होता है। यदि उक्त स्थानों में अन्य ग्रह हों तो गर्भ में कन्या होती है। लग्न में पञ्चमेश हो अथवा पञ्चम में लग्नेश और चन्द्रमा ये दोनों हों तो शीघ्र पुत्रकी प्राप्ति होती है। यदि लग्नेश पुरुष राशि में हो तो भी पुत्र की प्राप्ति होती है। लग्न में द्विस्वभाव-राशि हो और पञ्चम स्थान शुभयुक्त हो तो अपत्य (सन्तति) योग होता है। लग्नेश और पञ्चमेश ये दोनों सम-राशि में हों तो कन्या देने वाले होते हैं। एवं वे दोनों विषम राशि में हों तो पुत्र देने वाले होते हैं।

वपुर्विभुर्बुद्धिनिशान्तनाथः स्यातामुभौ नन्दनधामसंस्थौ ।
एकत्रिभागोपगतौ यदा तौ प्रष्टुस्तदानीं तनयस्य लब्धिः ।।२१६ ।।

लग्नेश और पञ्चमेश ये दोनों पञ्चम में स्थित होकर एक द्रेष्काण में हों तो प्रष्टा को पुत्र प्राप्ति होती है।

गर्भो भपो भारनिरीक्षितो वा चारुभदृष्टस्तनयस्य जन्म ।
नावेक्षते नन्दनभं निशेशः किंवा कविर्नन्दनजन्म न स्यात् ।। २१७ ।।

पञ्चमस्थान वा चन्द्रमा यदि शुक्र और मङ्गल से दृष्ट हो वा शुभदृष्ट हो तो पुत्र का जन्म होता है। यदि पञ्चमस्थान को चन्द्रमा वा शुक्र न देखता हो तो पुत्र का जन्म नहीं होता है।

पुत्रःपुत्रे दृष्टिरिन्द्वारभानां पुत्रस्थौ ग्लौभौ सुताजन्मदौ स्तः ।
तौ सप्राणौ प्रेक्ष्य पुत्रं विधत्तः पुत्रं नीचास्तारिगौ सन्ततिं तौ ।। २१८॥
नो कुर्य्यातां पुत्रदौ प्राणवन्तौ तावायस्थौ सूनुदौ सूनुगोऽङ्गेट् ।
आद्ये धीशः सौजसाऽब्जेन युग्वोच्चस्थौ ध्यङ्गेशौ तयोर्दृङ् मिथश्चेत् ।।२१९॥

पञ्चम स्थान में यदि चन्द्र, मङ्गल और शुक्र की दृष्टि हो तो पुत्र होता है। यदि चन्द्र तथा शुक्र पञ्चम में हों तो कन्यादायक होते हैं। पञ्चम स्थान को बलवान् चन्द्र शुक्र देखते हों तो पुत्र जन्म को करते हैं। चन्द्र शुक्र यदि नीच राशि में हों वा शत्रुराशि में हों तो सन्तान की उत्पत्ति को नहीं करते हैं। बलवान् चन्द्र शुक्र यदि लाभ भाव में हों तो पुत्रदायक होते हैं। पञ्चम में लग्नेश और लग्न में पञ्चमेश हो एवं बलवान् चन्द्रमा से युक्त हो अथवा पञ्चमेश तथा लग्नेश ये दोनों अपनी अपनी उच्चराशि में स्थित होकर परस्पर देखते हों तो पुत्र दायक होते हैं।

अथ प्रबन्धे दहनग्रहाणां योगोऽथ वा दृक् त्रिदशेज्यदृष्टिम् ।
विना तदोत्पात उदीर्य्यते धीशाने स्मरस्थेऽधनिपीडिते वा ।। २२० ।।
निम्ने भवेन्नैव सुतो भवत्यपि विनश्यतलातनयेन वाऽहिना ।
धीपः समेतः किमुतान्तरे तयोः सोऽपत्यहानिं ब्रुवते विचक्षणाः ।। २२१ ।।

यदि पञ्चमस्थान में पापग्रहों का योग वा दृष्टि हो और बृहस्पति की दृष्टि न हो तो गर्भ के लिये उत्पात (गर्भ च्युति) कहते हैं। यदि पञ्चम स्थान का स्वामी अस्तंगत वा पापपीडित वा नीचराशिगत हो तो पुत्र नहीं होता है। पञ्चमेश यदि मङ्गल से वा राहु से युक्त हो तो उत्पन्न हुआ पुत्र नष्ट होता है। पञ्चमस्थानका स्वामी यदि मङ्गल राहु के अन्तराल में हो तो पाण्डितजन सन्तान हानि को कहते हैं।

न पश्यतोऽङ्गं प्रतिभां परस्परं गर्भाधिनाथोद्गमगेहपौ किमु।
धीदेहपत्योरसदित्थशालयोर्न स्यादपत्यं परिपृच्छतां तदा॥ २२२॥

पञ्चमेश और लग्नेश ये दोनों लग्न तथा पञ्चम को परस्पर न देखते हों अथवा पञ्चमेश लग्नेश का पापग्रहों के साथ इत्थशाल हो तो प्रश्नकर्त्ताओंकी सन्तान नहीं होती है।

प्रवासी प्रश्न में प्रवासी के कष्ट के योग :—

मूर्तिस्थे मलिनग्रहे नहि हतो बद्धो न वाऽस्तेऽष्टमे।
ऽघे बद्धः प्रहतोऽथ वाऽऽयुषि तनौ क्रूरः परं मुच्यते।
वद्धो वाथ हतोऽथ पावकखगैः पृष्ठोदये प्रेक्षिते
बन्धो नेह वधो न शोभनदृशाऽथाघे त्रिषट्कण्टके॥२२३॥
स्थानात्प्रच्युत एष नष्ट उत स भ्रष्टोऽथ लग्ने स्थिरे
सद्युक्ते स्थिरबन्धनं निगदितं क्षिप्रं चरेऽसद्युते।
मोक्षोऽथो द्वितनौ सनिर्मलखगे बन्धश्च मोक्षोऽशुभैः
सन्दृष्टे सदनीक्षिते पुरगृहे पृष्ठोदये वा खलैः॥२२४॥
केन्द्रस्थैरपि ना विदेशनिरतोऽत्रोभीलसन्तप्तकः
पङ्गुः पङ्कविलोकतः खलभगो बन्धौ त्रिकोणे बधे।
यातुर्बन्धनमादिशेद् ध्रुवमथो पीत्वोर्विनाशस्थयोः
पुण्यानीक्षितयोः पतङ्गजनि । न्हष्टयोः शस्त्रभीः॥२२५॥
मार्गेऽथासृजि मन्दगे मृतिगतेऽप्याढ्येक्षिते भीः पथि
सद्दृग्योगविवर्जितोऽशुभखगैर्युक्तेक्षितो मन्दगः।
मार्गस्थः कुरुते प्रवासिन इह व्याधिं खलाढ्येक्षिते
दैवे दुःखमुतामयः प्रथमगैः पङ्कैर्मयकेशरुक्॥२२६॥

प्रश्नकालीन लग्न में पापग्रह हो तो प्रवासी न मारा जाय न बान्धा जाय। सप्तम तथा अष्टम में पापग्रह हो तो प्रवासी बांधा जाय वा मारा जाय। अष्टम तथा लग्न में पापग्रह हो तो प्रवासी बांधा जाय किन्तु पश्चात् छोड दिया जाय वा मारा जाय। प्रश्न लग्न में पृष्ठोदय राशि हो और वह पापग्रहों से दृष्ट हो परन्तु शुभग्रहों से दृष्ट न हो तो प्रवासी न बांधा जाय न मारा जाय। तृतीय, षष्ठ तथा केन्द्र में पापग्रह हो तो प्रवासी जन स्थान से च्युत नष्ट वा भ्रष्ट होता है। लग्न में स्थिरराशि हो और वह शुभग्रह से युक्त हो तो स्थिर

बन्धन कहा है। यदि लग्न में चरराशि हो और वह पापयुक्त हो शीघ्र बन्धन होता है। एवं द्विस्वभाव राशि लग्न में हो और शुभग्रह से युक्त हो तो बन्धन और मोक्ष दोनों होते हैं। लग्न में पृष्ठोदय राशि हो और यह पाप दृष्ट हो किन्तु शुभदृष्ट न हो अथवा केन्द्र में पापग्रह हो तो प्रवासी दुःख से संतप्त होता है। पापराशिगत शनि यदि पापग्रह से दृष्ट होकर चतुर्थ त्रिकोण वा अष्टम में हो तो गमन करने वाले को अवश्य बन्धन कहे। अष्टमस्थानगतसूर्य और चन्द्रमा यदि शुभग्रहों से अदृष्ट हों और शनि से दृष्ट हों तो मार्ग में भय होता है। नवमगत शनि यदि शुभग्रहों से युक्त दृष्ट न हो और पापग्रहोंसे युक्तदृष्ट हो तो प्रवासी को रोग करता है। यदि नवम स्थान पापयुक्तदृष्ट हो तो प्रवासी को दुःख अथवा रोग होता है। यदि लग्न में पापग्रह हो तो प्रवासी को भय क्लेश या रोग होता है।

कोणेऽस्तेऽरिनिरीक्षिता अघखगाः पृष्ठोदयेऽङ्गे यदा
यातुः कष्टमुदिरयन्ति दुरिते नाके नृपालाद्भयम्।
मारेऽघे गमने विरोधक उतोच्चे सत्फलस्याल्पता
काण्डस्थेन कलत्रगेण घनपः सत्रेत्थशालं यदा ॥२२७॥

कुर्य्यात्कष्टमघान्विते चरपुरे क्लेशः प्रवासो भयं
क्रूरैर्वैरिदृशेक्षिते विधिवपुर्नाथेत्थशाले क्षयम्।
वित्तस्याथ वधे व्यये वपुरिने चौरारिभीतिर्भवेत्
तस्मिन्नुग्रयुते निमीलनभयं तीर्थे रवौ रोगयुक् ॥२२८॥

त्रिकोण तथा सप्तम में स्थित हुए पापग्रह यदि शत्रुग्रहोंसे दृष्ट हों और लग्न में पृष्ठोदयराशि हो तो याता (यात्री) को कष्ट कहते हैं। यदि दशम स्थान में पापग्रह हो तो राजा से भय होता है। प्रश्नलग्न से सप्तम स्थान में पापग्रह हो तो यात्रा में विरोध करने वाला होता है। यदि वह पापग्रह उच्चराशिगत हो तो शुभ फल की अल्पता कहनी चाहिये। लग्न का स्वामी यदि चतुर्थगत तथा सप्तमगत ग्रह से इत्थशाल करे तो याता को कष्ट होता है। लग्न में चर राशि और वह पापयुक्त हो तो याता को क्लेश प्रवास वा भय होता है। नवमेश और लग्नेश का इत्थशाल हो और उन को पापग्रह शत्रुदृष्टि से देखते हों तो धन का नाश होता है। अष्टम वा व्यय में लग्नेश हो तो चौर और शत्रु से भय होता है। यदि उक्त स्थानगत लग्नेश पापयुक्त हो तो मृत्यु से भय होता है। यदि नवम में सूर्य हो तो याता रोग से युक्त होता है।

पुरात्पुरेशतोऽथ वा यदुन्मिताः खलग्रहाः।
अपायगा दयागतास्तदुन्मिता उपद्रवाः ॥२२९॥

लग्न से वा लग्नेश से व्यय स्थान तथा नवम स्थान में जितने पापग्रह हों याता को प्रवास में उतने उपद्रव होते हैं।

प्रवासी जन की मृत्यु के योग :—

होरेशे हिमगौ हरे रुजि हिते मूढेऽतिनिम्नेऽथ वा
सद्युक्ते कलिपेत्थशालिनि वदेद् दूरस्थितस्यात्ययम्।

क्ष्माधःस्थेन च वक्रगेण कुरुते चेदित्थशालं शशी
नो दृष्टः सुकृतैस्तथा त्रिकगतैर्भव्यैरवीर्यैः खलैः ॥२३०॥

दृष्टैः पापयुतौ पपीखचमसौ तद्वच्च पृष्ठोदये
सोग्रेऽघैः सदनीक्षितैर्द्विषि मृतौ केन्द्रे त्रिकोणे तथा।
द्विड्दृष्टैर्दुरितैस्त्रिकोणमदगैः पृष्ठोदयेऽङ्केऽमलै-
र्नो दृष्टे पथिकोऽन्तमेति मृतिगे मन्दाभिधाने तथा ॥२३१॥

लग्नेश वा चन्द्रमा अष्टम षष्ठ वा चतुर्थ में स्थित होकर अस्तंगत वा परमनीच में हो अथवा शुभग्रह से युक्त होकर अष्टमेश से इत्थशाल करे तो दूरदेशगत प्रवासी का मरण होता है। चतुर्थ स्थान से अधःस्थित वक्रगति ग्रह से यदि चन्द्रमा इत्थशाल करे और वह शुभग्रहों से दृष्ट न हो तो दूरदेशस्थ प्रवासी की मृत्यु होती है। निर्बल शुभग्रह यदि त्रिकस्थान में हो और वे पापग्रहों से दृष्ट हो तथा सूर्य चन्द्रमा पापयुक्त हो तो भी प्रवासी की मृत्यु होती है। पापयुक्त पृष्ठोदयराशि लग्न में हो और शुभग्रहों से अदृष्ट हुए पापग्रह यदि षष्ठ, अष्टम, केन्द्र तथा त्रिकोण में हो तो भी प्रवासी की मृत्यु होती है। त्रिकोण तथा सप्तम में शत्रु दृष्ट पापग्रह हों और लग्नगत पृष्ठोदयराशि शुभग्रहों से दृष्ट न हो तो पाथिक (राहगीर) मृत्यु को पाता है। यदि अष्टम स्थान में शनि हो तो भी पथिककी मृत्यु होती है।

राजोदयेशौ रुजि वा कलत्रभे सपञ्चतेशौ पथिकस्य पञ्चताम्।
विधत्त इन्दोरुदयाज्ज्ञकाव्ययोः स्वेऽन्त्ये मृतिर्वाऽऽगमनं न सत्वरम् ॥२३२॥

चन्द्रमा और लग्नेश ये दोनों अष्टमेश से युक्त होकर षष्ठ वा सप्तम में हों तो पथिक की मृत्यु को करते हैं। लग्न से वा चन्द्रमा से द्वितीय तथा द्वादश में बुध शुक्र हों तो प्रवासी की मृत्यु होती है अथवा शिघ्र आगमन नहीं होता है।

प्रवासी के सौख्य के योगः—

पानीयगेहोपरिगेण खौकसा शशीत्थशालं प्रकरोति शोभनैः।
युक्तेक्षितः सौख्यमुपैति पद्धतौ विदेशयातोऽत्र सुखी च जीवति ॥२३३॥

चतुर्थ स्थान से ऊपर के स्थानों में स्थितग्रह से यदि चन्द्रमा इत्थशाल करे और शुभग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो याता मार्ग में सुख को पाता है और विदेशगत मनुष्य सुखी तथा जीवित रहता है।

सुखाम्बिरच्छे विदि नैधनेऽथाङ्कस्थैः शुभैस्तस्य मृतिः प्रशस्ता।
वक्रेऽङ्कपे पश्यति गात्रगेहं तत्रोडुनाथे किमु वक्रगेण ॥२३४॥

चेदित्थशाले सति सौख्यमेति शीघ्रं प्रवासी सशुभे द्विदेहे।
स्यादल्पकार्यार्थसुखाय सिद्ध्यै यात्राऽनुजायारिगतैरसौम्यैः ॥२३५॥

प्रयाणतोऽरातिजनस्य नाशः प्रश्नेर्नवाङ्गाधिपतीत्थशाले।
सदीक्षिते स्नेहदृशा विशेषात्तदा भवेतां सुखवित्तलाभौ ॥२३६॥

अष्टमस्थान में शुक्र वा बुध हो तो याता को सुख की प्राप्ति होती है। जिस प्रष्टा के प्रश्न काल में प्रश्न लग्न से नवम में शुभग्रह हों तो उस का मार्ग शुभ अर्थात् सुखदायक होता है। वक्रगति वाला लग्नेश यदि लग्न को देखता हो और लग्न में चन्द्रमा हो अथवा चन्द्रमा वक्रगति ग्रह के साथ इत्थशाल करे तो प्रवासी शीघ्र सौख्य को प्राप्त होता है। यदि शुभयुक्त द्विस्वभाव राशि लग्न में हो तो याता की यात्रा अल्पकार्यार्थ सुख के लिए तथा अल्प सिद्धि के लिए होती है। यदि प्रश्न लग्न से तृतीय, एकादश तथा षष्ठस्थान में पापग्रह हो तो प्रष्टा की यात्रा से शत्रुका नाश होता है। यदि लग्नेश तथा नवमेश का इत्थशाल हो और विशेषतया मित्रदृष्टि से शुभग्रह देखते हों तो सुख तथा धन का लाभ होता है।

श्रेष्ठं फलं कन्द्रगयोः सतीत्थशाले दयादेहपयोः प्रयाणात् ।
भाग्यर्यास्थयोर्भूरिधनाप्तिरम्भः स्थयोः प्रयातुः सुखसम्पदः स्युः ॥२३७॥

केन्द्रगत लग्नेश भाग्येश का यदि इत्थशाल हो तो याताको यात्रासे श्रेष्ठफल होता है। एवं सप्तमगत लग्नेश भाग्येश का इत्थशाल हो तो बहुत धन का लाभ होता है। यदि चतुर्थगत लग्नेश भाग्येश का इत्थशाल हो तो याता को सुख सम्पत्ति का लाभ होता है।

शुभे घनेनेऽभ्युदिते विनिःसृते पापाच्छुभं मासि सदित्थशालिनि।
विनिःसृतेऽघाद् घनरिःफनैधनोनेऽङ्गेशदृष्टेऽभ्यूदिते सुखार्थदः ॥२३८॥

नवमगत लग्नेश उदयी हो तथा पापग्रह से निकला हुआ हो अर्थात् पापपीडितत्व से निर्मुक्त हो तो यात्रा में शुभ फल होता है। पापग्रह से निकला हुआ चन्द्रमा यदि लग्न द्वादश अष्टम रहित स्थान में स्थित होकर शुभग्रह के साथ इत्थशाल करे एवं लग्नेश से दृष्ट हो और उदयी हो तो सुख तथा धनप्रद होता है।

प्रवासी के अन्यदेश की यात्रा के योग :—

प्रवासी शौर्य्यगैः पापैर्देशाद्देशान्तरङ्गतः ।
अन्यदिग्गतिरादित्ये दिष्टान्ते सद्युतक्षिते ॥२३९॥

यदि प्रश्न लग्न से तृतीय में पापग्रह हों तो प्रवासीजन अन्य देश को जाता है। एवं अष्टमगत सूर्य यदि शुभग्रह से युक्तदृष्ट हो तो भी प्रवासी का अन्य देश गमन होता है।

मार्ग में स्थित प्रवासी के योग :—

पौरस्थेन पुराधिपे मुथाशिल त्र्यङ्केऽथ तास्मिन्नभः—
संस्थनाथविरामग मुथाशिले मार्गे प्रवासी भवेत् ।
सोमे सप्तमगेऽथवाऽध्वरमणे भाद्धात्परे वा भपे
मुल्यस्ते चरभेऽथवाऽनुजवधाब्धार्थे घनार्य्ये तथा ॥२४०॥

तृतीयगत वा नवमगत लग्नेश यदि लग्नस्थ ग्रह से इत्थशाल करे अथवा द्वितीयगत वा अष्टमगत लग्नेश दशमस्थ ग्रह से इत्थशाल करे तो प्रवासीजन मार्ग में होता है। यदि सप्तम में चन्द्रमा हो अथवा 'नवमेश' राशि के १५ अंश से परे हो अथवा 'चन्द्रमा' चरराशि में स्थित होकर चतुर्थ वा सप्तम में हों अथवा तृतीय अष्ट

प्रवासी के मार्ग से निवृत्ति के योग :—

वक्रेऽस्तपेऽथेज्यबुधार्कभैर्व्ययस्थितैः किमार्य्येण युते द्विदेहभे ।
किं वाहगैर्वीतमलैर्वियच्चरैर्यातुर्निवृत्तिं सरणेर्विनिर्दिशेत् ॥२४१॥

सप्तम भाव का स्वामी वक्रगति को प्राप्त हो अथवा गुरु, बुध, सूर्य और शुक्र ये चारों व्यय में हों अथवा लग्नगत द्विस्वभाव राशि गुरु से युक्त हो अथवा चतुर्थ में शुभग्रह हो तो मार्ग से यात्रा की निवृत्ति को कहे।

कोविदेनकवीज्येषु यदैकास्मिन्विहङ्गमे ।
स्थिरराश्युद्गमं प्राप्ते निवृत्तिं मार्गतो वदेत् ॥२४२॥

बुध, सूर्य, शुक्र और गुरु इन चारों में से एक कोई ग्रह लग्नगत स्थिर राशि में हो तो मार्ग से यात्रा की निवृत्ति को कहे।

प्रवासी जन के शीघ्रागमन के योग :—

शौर्य्यार्थात्मजगौ सुरेज्यभृगुजावायात्परं प्रोषितो
मित्रेऽब्जे चरभे चरांशकगते क्षिप्रं प्रवासी नरः ।
आयात्यस्य तु पात्रिकाऽपि च तथाऽच्छेज्यौ स्वशौर्य्यस्थितौ
तद्वत्तौ हितभावगौ किमु कलेट् कीलालगः कार्य्यकृत् ॥२४३॥
आयाति करितं ततश्चरतनौ चन्द्रे चरर्क्षोपगे
धीकेन्द्रार्य्यनुजार्थगैरितमलैर्यद्वेह पृष्ठोदये ।
किं धीत्र्यस्तधनारिगैरनृजुगैः खेटैर्विशेषात्तत—
एकोऽप्यायगतोऽरुणेज्यभविदां वर्ज्जुज्ञभेनार्किषु ॥२४४॥
एकश्चेच्चरराशिगोऽथ विधुनोपाया जघन्याश्रितो
गात्रागारपतिः समं मुथशिले किंवा विलग्नात्किमु ।
पातालालयतः सहोदरगता आकाशवासा यदा
पुण्याः प्रोषितरुपुषस्य कृतिनस्तूर्णं भणन्त्यागमम् ॥ २४५ ॥

गुरु और शुक्र ये दोनों तृतीय, द्वितीय और पञ्चम में हों तो प्रवासी मनुष्य शीघ्र घर को आता है। चतुर्थगत चन्द्रमा यदि चरराशि में तथा चरांशक में हो तो भी प्रवासी शीघ्र घर को आता है। अथवा पात्रिका (चिट्ठी) आती है। अथवा गुरु शुक्र यदि द्वितीय तृतीय में हों तो भी प्रवासी शीघ्र घर को आता है। अथवा चतुर्थ में गुरु शुक्र हों वा चन्द्रमा हो तो प्रवासी अपना कार्य करके शीघ्र घर को आता है। लग्न में चरराशि हो तथा चन्द्रमा भी चरराशि में हो और पञ्चम, केन्द्र, षष्ठ, तृतीय एवं द्वितीय में शुभग्रह हों अथवा लग्न में पृष्ठोदयराशि हो अथवा पञ्चम, तृतीय, द्वितीय, सप्तम वा षष्ठ में वक्री ग्रह हो अथवा सूर्य, गुरु, शुक्र और बुध इन चारों में से कोई एक भी लाभभाव में हो अथवा मार्गी बुध शुक्र शनि वा सूर्य इन के मध्य में कोई एक चरराशि में हो अथवा व्ययस्थान में स्थित लग्नेश यदि चन्द्रमा के साथ इत्थशाल करे अथवा लग्न वा चतुर्थ से तीसरे स्थान में शुभग्रह हो तो पण्डितजन प्रवासी का शीघ्र आगमन कहें।

प्रवासी के आगमन के योगः—

केन्द्रे गुरौ वैरिणि वा स्मरे ग्रहान्वितेऽथ काव्ये विदि वा त्रिकोणगे ।
किं सर्वखेटैस्त्रिसुतार्थगैरुत चतुष्टयाद् व्योमचरे द्वितीयगे ॥ २४६ ॥
यद्वोत्तमैर्मत्रभुजार्थगैश्चिराद्गतः प्रवास्येति निकेतनं निजम् ।
भव्यैरुपेते दिवि वा विशेषतः पुण्येऽर्थपूर्णः पथिकः समाप्नुयात् ॥ २४७ ॥

केन्द्र में गुरु हो, षष्ठ वा सप्तमस्थान ग्रह से युक्त हो तो (१) शुक्र वा बुध त्रिकोण में हो तो (२) तृतीय, पञ्चम और द्वितीय में सब ग्रह हों तो (३) केन्द्रसे द्वितीय स्थान अर्थात् पणफरस्थानों में ग्रह हों तो (४) तृतीय, पञ्चम और द्वितीय में शुभग्रह हों तो चिरकाल से गया हुआ प्रवासी अपने घरको आता है । यदि दशमस्थान अथवा विशेषतः भाग्य स्थान यदि शुभग्रहों से युक्त हो तो द्रव्यसे परिपूर्ण हुआ प्रवासी अपने घरको आता है ।

वित्पूज्यभैर्भूतलगैरुतोत्तमैर्युक्ते चरेऽङ्केऽमृतपिण्डवीक्षिते ।
गत्वाऽऽयियासुःसहसा स्वमन्दिरं समेति सार्थो विबुधो वदेदिति ॥ २४८ ॥

बुध, गुरु और शुक्र ये तीनों चतुर्थ में हों अथवा लग्नगत चरराशि शुभग्रहों से युक्त होकर चन्द्रमा से दृष्ट हो तो आनेकी इच्छा वाला मनुष्य परदेश जाकर और अर्थ से परिपूर्ण होकर अकस्मात् अपने घरको आजाता है इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं ।

प्रवासी के सुखागमन के योगः—

लेखास्थेनोद्गमेशेऽत्र कृतमुथशिले प्रोषितः सौख्यमेत्या
यात्युग्रैर्नाकगेहेभयभवभुजगैर्निर्मलैः कीचकस्थैः ।
दूरस्थोऽपि प्रवासी यदि निजनिलयं सौख्ययुक्तोऽभ्युपैति
तद्वत्पङ्कैर्विकेन्द्रे शशभृति समरे सत्सु लाभाङ्गखेषु ॥ २४९ ॥

लग्नका स्वामी यदि लग्नस्थ ग्रह से इत्थशाल करे तो सौख्य युक्त प्रवासी अपने घरको आता है । तृतीय, एकादश तथा षष्ठमें पाप ग्रह हों और केन्द्रमें शुभग्रह हों तो दूरदेशस्थ प्रवासी भी सुख से युक्त होकर अपने घरको आता है । केन्द्ररहित स्थान में पापग्रह हों, अष्टम में चन्द्रमा हो तथा शुभग्रह एकादश, लग्न और दशम में हों तो भी दूरदेशस्थ प्रवासी अपने घरको आता है ।

प्रवासी के अनागमन के योगः—

अनुत्तमैर्मित्रखगैः किमम्बुगौ क्लेन्दूष्णगू नागमनं शुभोद्भवे ।
मनोजगेहस्य च दुर्द्धराभिधे योगेहितस्वामिनिषेधतस्तदा ॥ २५० ॥
नायाति याता खलखेटसम्भवे सपत्नचौरामयकारणेन सः ॥
अथाङ्गपे कीचगगेत्थशालिनि मूर्त्तीक्षणोने न कदाऽप्युपैति सः ॥ २५१ ॥

चतुर्थ तथा दशम में पापग्रह स्थित हों अथवा चतुर्थ में चन्द्र सूर्य हों तो प्रवासी अपने घरमें नहीं आता है । यदि सप्तम भाव में शुभग्रहों से दुरुधरा योग हो अर्थात् सप्तम भाव के दोनों पार्श्वों (षष्ठ तथा अष्टम) में

शुभग्रह हों तो याताजन मित्र और स्वामी के निषेध के कारण अपने घरमें नहीं आता है। यदि सप्तम भाव में पापग्रहों से दुरुधरा योग हो अर्थात् सप्तम भाव के दोनों पार्श्वों में पापग्रह हों तो याताजन शत्रु, चौर वा रोग के कारण अपने घरमें नहीं आता है। यदि लग्नेश लग्नको न देखता हो और वह केन्द्रगत ग्रह से इत्थशाल करे तो याता कभी अपने घरमें नहीं आता है।

एकोऽपि पश्येत्स्थिरभोद्गमं मृदुवागीशयोर्नागमनं प्रवासिनः।
शीर्षोदये चेद् गमनस्थिरोऽपि च चिरेण नैवागमनं प्रवासतः ॥ २५२ ॥

शनि और बृहस्पति इन दोनों के मध्यमें एक ग्रह भी लग्नस्थ स्थिर राशि को देखता हो तो प्रवासी का आगमन नहीं होता है। यदि लग्नमें शीर्षोदय राशि हो तो गमन स्थिर होने पर भी प्रवास से चिरकाल में भी आगमन नहीं होता है।

गमन के योग:—

एकोऽपि भास्वत्सितसौरिवाक्पतिविदां चराङ्गोपगतो भवेद्यदि।
वदेत्तदानीं गमनं घनेश्वरे लोकम्पृणे वा कुशले गतिर्भवेत् ॥ २५३ ॥

सूर्य, शुक्र, शनि, गुरु और बुध इन पाँचो के मध्य में कोई एक ग्रह भी लग्नगतचर राशि में हो तो याता के गमन को कहे। यदि लग्नेश वा चन्द्रमा नवम में हो तो भी गमन होता है।

कल्याणपेऽङ्गे पुरपे सहोत्थे केन्द्रे तथाङ्गे पथिपौरपालौ।
तावित्थशालं कुरुतोऽनुयोगः कर्तुः प्रयाणं कृतिभिः प्रदिष्टम् ॥ २५४ ॥

लग्न में नवमेश और तृतीय वा केन्द्र में लग्नेश होतो याता का गमन होता है। भाग्येश और लग्नेश ये दोनों लग्न में स्थित होकर इत्थशाल करें तो प्रश्नकर्त्ताकी यात्रा कहनी चाहिए।

शीघ्रगमन के योग:—

यदाऽध्वनाथस्तनुमेति किंवा कृतेत्थशालः सह कल्पपेन।
प्रष्टुः प्रयाणं चरराशियोगे विशेषतोऽरं गमनं तु तत्र ॥ २५५ ॥

जब लग्न में नवम भाव का स्वामी आवे तब यात्रा होती है। अथवा जब नवमेश लग्न के स्वामी के साथ इत्थशाल करे तब प्रष्टा की यात्रा होती है। विशेषतः चरराशि के योग में शीघ्रगमन होता है।

आर्य्योशनोहास्तिविदां यदैकः खगः फलस्थोऽरमुपैति यात्राम्।
कोऽप्यच्छपाताङ्गिपतङ्गवित्सु चरोदये लध्वयतां यियासुः ॥ २५६ ॥

गुरु, शुक्र, सूर्य और बुध इन चारों के मध्य में कोई एक ग्रह भी लाभ भाव में हो तो याता की शीघ्र यात्रा होती है। शुक्र, शनि, सूर्य और बुध इन चारों के मध्य में कोई एक ग्रह भी लग्नगत चरराशि में हो तो याता का शीघ्र गमन होता है।

गमनाभावादि के योगः--

अपायगेष्विज्यकवीनवित्सु वा चारुग्रहे खे हृदि वाऽनृजुष्वपि ।
ज्ञार्कीनकाव्येष्वथ शोणिताभिधात्रिकोणगा ज्ञेज्यभमन्दगाः किमु ॥ २५७ ॥

एकोऽपि तेषूत रवेस्तुषारगौ गन्तुर्भवेन्नो गमनं बलोत्कटे ।
केन्द्रे स्थिरर्क्षे रिपुपापसंयुते सविघ्नतो नो गमनं घनालये ॥ २५८ ॥

सम्पीडिते वा विबलेऽध्वपे तथा स्यन्दाङ्कपाभ्यां पथि सन्निरीक्षिते ।
तत्रोपगेन प्रभुणाङ्गवेश्मनोऽसदित्थशाले न गमः स्मरेऽशुभे ॥ २५९ ॥

व्रजेद्यदर्थं परिपृच्छकस्तदा तत्कार्य्यनाशान्नहि तद्गमो भवेत् ।
खस्थैःखलैर्ज्येष्ठसहोदरस्य वा राज्ञो निषेधान्न गमोऽथ वक्रिणि ॥ २६० ॥

न कार्य्यसिद्धिर्वसुपेऽन्यथा शुभमगे घने वेन्दुमदाङ्गवेश्मनाम् ।
पार्श्वोपयातौ दहनावुतोत्तमौ योगेऽपि चैकत्र गमागमौ नहि ॥ २६१ ॥

व्ययमें गुरु, शुक्र, सूर्य और बुध हों तो (१) दशम वा चतुर्थ में शुभग्रह हों तो (२) बुध, शनि, सूर्य और शुक्र वक्री न हों तो (३) मङ्गल से त्रिकोण में बुध, गुरु, शुक्र और शनि हों तो (४) अथवा उक्त ग्रहों में से एक कोई भी त्रिकोण में हो तो (५) सूर्य की अपेक्षा यदि चन्द्रमा अधिक बली हो तो गन्ता का गमन नहीं होता है । केन्द्रगत स्थिरराशि यदि शत्रुग्रह से तथा पापग्रह से युक्त हो तो गन्ता का गमन नहीं होता है । लग्न यदि पापग्रह से पीडित हो और नवमेश निर्बल हो तो भी गमन नही होता है । नवमस्थान यदि चन्द्रमा और नवमेश से दृष्ट हो और नवमगत लग्नेश का पापग्रह के साथ इत्थशाल हो तो गमन नहीं होता है । सप्तम में यदि पापग्रह हो तो प्रष्टा जिस कार्य के लिए जाना चाहता हो उस कार्य के नाश होनेसे गमन नहीं होता है । धनेश वक्री हो तो कार्य की सिद्धि नहीं होती है और धनेश मार्गी हो तो शुभ होता है । स्थिर राशि लग्न में हो अथवा चन्द्रमा, सप्तम, लग्न तथा चतुर्थ इन स्थानोंके दोनों पार्श्वों में पापग्रह वा शुभग्रह हो अथवा एकत्र योग होने पर भी गमागम (जाना आना) नहीं होता है ।

क्रूरैर्दरं चौरजनाच्च सत्कृतरोधो भवेद् भव्यवियच्चरैरथो ।
अवेक्षिताघैर्गदकोणगामिभिरगोदये नैव गमागमं वदेत् ॥ २६२ ॥

यदि पापग्रहों से पूर्वोक्त योग हो तो चौरभय और शुभ ग्रहों से पूर्वोक्त योग हो तो सज्जनों के निषेध के कारण गमागम (जाना आना) नहीं होता है । पापग्रह से दृष्ट हुए पापग्रह यदि षष्ठ तथा त्रिकोण में हों और स्थिर राशि लग्नमें हो तो गमागम नहीं होता है ।

समुद्गमाद्वा हिमरश्मिमालिनो वागीशविद्दानवराजवन्दिताः ।
सरस्वतीपीडनगामिनः कथाऽऽगमस्य नास्तीह गमस्य पृच्छतः ॥ २६३ ॥

लग्नसे वा चन्द्रमा से द्वितीय तथा द्वादश स्थानमें गुरु, बुध और शुक्र हों तो प्रष्टा के आने जाने की कथा (चर्चा) तक नहीं होती है ।

देहे चरेऽब्जे चरराशिगे वा द्विदेहभे तत्र चरांशसंस्थे ।
यद्वा चरर्क्षे वपुरालयस्थे गमागमौ स्तो द्वितनौ तु मिश्रम् ॥ २६४ ॥

लग्न में चरराशि हो और चन्द्रमा भी चरराशि में हो अथवा लग्नमें द्विस्वभाव राशि हो और उसमें चरराशिका नवांश हो अथवा लग्न में केवल चरराशि हो तो प्रष्टा का जाना आना होता है । यदि लग्नमें द्विस्वभाव राशि हो तो मिश्र फल कहना चाहिए ।

मार्गस्यानुभवः पुरात्पद्भतः कार्यं गतिस्थानकं
कामात्कार्यमिलागृहात्परिणतिस्त्वेवं विलग्ने सुखम् ।
देहस्यास्पदमन्दिरे गतमले कार्यस्य सिद्धिः स्मरे
स्थाने यत्र जनः प्रयाति कुशलं तत्रोच्यते हौरिकैः ॥ २६५ ॥

प्रश्न लग्नसे मार्गके सुख दुःखका अनुभव, दशमसे कर्त्तव्य कार्य का विचार सप्तमसे गतिस्थान अर्थात् जहाँ जाना हो उस स्थानका विचार, चतुर्थ से कर्त्तव्य कार्य की परिणति (परिणाम) का विचार एवं लग्न से शरीर के सुख का विचार करे । यदि दशम स्थान में शुभग्रह हो तो कार्य की सिद्धि होती है और सप्तम में शुभग्रह हो तो याता जिस स्थानको जाय वहां शुभ फल होता है ।

कीलाले विमले कार्ये परिणामो मनोरमः ।
वेश्मवेशो वनाद्विष्णोः प्रवासोऽस्तान्निवर्त्तनम् ॥ २६६ ॥

यदि चतुर्थ में शुभ ग्रह हो तो कार्य में सुन्दर परिणाम (नतीजा) होता है । चतुर्थ से गृहप्रवेश, दशमसे प्रवास और सप्तमसे निवर्त्तन (प्रवाससे लौट आने) का विचार करे ।

किसी के पास जाने पर उसके मिलने न मिलने का विचारः—

केन्द्रे ससत्त्वे मिलति स्वमन्दिरेऽस्तेशे स्वगेहान्तिक आय आनने ।
मतौ मृतौ नो मिलति व्रजेच्च स आपोक्लिमेऽन्यस्य गृहे मिलेत्स ना ॥ २६७ ॥

बलवान् सप्तमेश केन्द्र में हो तो जिस को मिलने को जावे वह आपने घर पर मिलता है । यदि बलवान् सप्तमेश द्वितीय वा लाभ में हो तो अपने घरके पास मिलता है । एवं बलवान् सप्तमेश यदि पञ्चम वा अष्टम में हो तो नहीं मिलता है । यदि बलवान् सप्तमेश आपोक्लिम में हो तो मिलने वाला पराये घरपर मिलता है ।

प्रवासी जनके गृहागमन समय का परिज्ञानः—

यस्मिन् गृहे गात्रगृहात्समाश्रितो ग्रहः समस्तोत्तमसत्त्वसंयुतः ।
तस्मिन् खगेन्द्रे चरभागमाश्रिते यातुर्निवृत्तिं निगदेत्तदुन्मितैः ॥ २६८ ॥
मासैस्तदाकाशचरे स्थिरांशकं समाश्रिते चेत्तमनेहसं बुधाः ।
विनिर्दिशेयुर्द्विगुणं द्विरात्मकांशकेतु तस्मिंस्त्रिगुणं परे जगुः ॥ २६९ ॥

तं कालमस्तेऽनृजुं करोत्युतावृत्तेः खगेऽङ्गाद्यतमे गृहाश्रिते ।
निघ्नानि तेनारुणभानि वासरास्तदुन्मिता आगमनस्य सूरिभिः ॥ २७० ॥

जो ग्रह सम्पूर्ण उत्तम बलों से युक्त होकर लग्न से जितने स्थान में हो और वह ग्रह यदि चरराशि के नवांश में हो तो उतने ही मासों में याता (यात्री) की निवृत्ति (लौटने) को कहे । यदि वह ग्रह स्थिरराशि के नवांश मे हो तो लब्ध संख्या को द्विगुणा कर के याता की निवृत्ति के काल को कहे । एवं वह ग्रह द्विस्वभावराशि के नवांश में हो तो उक्त काल को तिगुणा कर के याता की निवृत्ति के काल को कहे । जब सप्तम भावका स्वामी पुनरावृत्ति से वक्रगति को प्राप्त होता है वह याता की निवृत्ति का काल होता है इस प्रकार अन्याचार्य कहते हैं । अथवा प्रश्नलग्न से जितने स्थान पर ग्रह स्थित हो उस संख्या को १२ से गुण कर जितना गुणन फल हो उतने दिन याता के आगमन के जानने चाहिएँ ।

वक्रोपगैर्व्योमचरैर्निवर्त्तनमायाति भव्योऽनुजभं यदोदयात् ।
पान्थस्तदाऽभ्येति यदा विधुः स्मरं व्रजेद्विवाहोऽग्रिमभं चतुष्टयात् ॥ २७१ ॥

विदेशतस्तत्क्षण आगमो भवेद्यस्मिन् गृहे तिष्ठति लग्नतोऽसलः ।
नभश्चरः कश्चन तद्गृहोन्मिता अङ्का रविघ्ना दिवसैः समेति तैः ॥ २७२ ॥

खगोऽनृजुश्चेत्पुनरेव तैः स च गन्ताऽथ कामेश उपैति विग्रहम् ।
कृतेत्थशालो हरिजाधिपेन वोपैति प्रवासी निजमन्दिरं चरे । ॥ २७३ ॥

राशौ विशेषात्समुपैति पुण्यपो होरामुताङ्गाधिभुवा समं स तु ।
कृतेत्थशालो गमनं भवेत्तदाऽनुयोगकर्तुश्चरभे विशेषतः ॥ २७४ ॥

वक्री ग्रहों से पथिक की यात्रा की निवृत्ति के समय को कहे । जब लग्न से तृतीय स्थान में शुभग्रह आवे तब पथिक अपने घर में आयेगा । जब चन्द्रमा सप्तम स्थान में जायेगा तब विवाह होगा । जब केन्द्र से अग्रिम राशि में चन्द्रमा जायेगा तब पथिक विदेश से अपने घर में आयेगा । प्रश्नलग्न से जितने संख्या के स्थान मे कोई बलवान् ग्रह स्थित हो उस स्थान के तुल्य संख्या को १२ से गुणकर जो संख्या हो उतने दिनों में प्रवासी अपने घर में आयेगा । यदि वह ग्रह वक्री हो तो प्रवासी पुनः उतनेही दिनों में अपने घर में आयेगा । सप्तमस्थान का स्वामी यदि लग्नेश के साथ इत्थशाल करे तो किसी अन्य पुरुष के साथ प्रवासी का विवाद होता है । यदि विशेषतः प्रश्नलग्न में चरराशि हो तो प्रवासी अपने घर में आयेगा । यदि नवमेश लग्न में हो अथवा नवमेश लग्नेश के साथ इत्थशाल करे और विशेषतया चरराशि लग्न में हो तो प्रष्टा की यात्रा को कहे ।

योंऽशो विलग्नस्य तदीयनायको यः खेचरस्तद्वशतस्त्वनेहसम् ।
वदेत्तथैवोदितभागसंख्यया भास्वन्मुखानामयनादिरीरितः ॥ २७५ ॥

प्रश्न लग्न में जिस राशि का नवांश हो उस राशि का जो ग्रहस्वामी हो उस के वश से प्रवासी के घर आने के समय को कहे । अथवा प्रश्न लग्न में जितनी उदित नवांश संख्या हो उसके तुल्य नवांशेश सूर्यादि ग्रहों के अयन प्रभृति समय को कहे अर्थात् प्रश्नलग्न के नवांश का स्वामी सूर्य हो तो उदित नवांश सख्या तुल्य अयन और चन्द्रमा हो तो क्षण इत्यादि समय कहना चाहिए ।

क्षिप्रं चरेऽङ्गे स्थिरभे चिरेण कालेन चैवं द्वितनौ विलम्बः ।
याऽन्तर्मितिर्मूर्त्तितुषाररश्म्योस्तत्तुल्य उक्तः फलपाकदिष्टः ।। २७६ ।।

यदि प्रश्न समय में चरलग्न हो तो प्रष्टा का शीघ्र गमन होता है । स्थिरलग्न में दीर्घकाल (देर) से गमन होता है । एव द्विस्वभाव लग्न में विलम्ब से गमन होता है । अथवा लग्न और चन्द्रमा का जितने स्थानों का अन्तराल हो उस संख्या के तुल्य समय में गमन को कहें ।

शङ्कुच्छायाङ्गुलैर्ज्ञात्वा तात्कालिकतनोः कलाः ।
छायाङ्गुलैर्निहन्यात्ताः पृथक्संस्थास्तुरङ्गमैः ।। २७७ ।।
हृत्वा शेषग्रहगुणकारः सायकमूर्च्छनाः ।
शक्रगोऽष्टानलेशाना ज्ञेया भान्वादितो बुधैः ।। २७८ ।।
हत्वैवं तुरगोच्छिष्ट उदयो विमलस्य चेत् ।
कार्यस्याप्तिस्तदा प्रष्टुरादेष्टव्या नहीतरैः ।। २७९ ।।

प्रश्न समय में द्वादशाङ्गुल शङ्कु की जो छाया हो उसको अङ्गुलों से नापकर जितने अङ्गुल हों उनसे इष्टकाल को साधकर उस से तात्कालिक लग्न की कलाओं को जानकर उनको शङ्कुकी अङ्गुलात्मक छाया से गुणकर जो गुणनफल हो उसको दो स्थान में स्थापित करे । तदनन्तर एकस्थान में ७ से भाग दे शेष ग्रह के तुल्य गुणक ग्रहण करना चाहिए । ५ सूर्य के, २१ चन्द्रमा के, १४ मङ्गल के, ९ बुध के, ८ गुरु के, ३ शुक्र के और ११ शनि के गुणक जानने चाहिएँ तदनन्तर पृथक् स्थित गुणन फलको शेष ग्रह के गुणक से गुणकर ७ से तष्ट करे । यदि शेष शुभग्रह का उदय हो तो प्रष्टा के कार्य की सिद्धि कहनी चाहिए एवं शेष पापग्रह का उदय हो तो प्रष्टा के कार्य की सिद्धि नहीं होती है ।

विहृतो गुणकाराणां योगेनार्कादिखौकसाम् ।
गुणकैः स च संशुद्धो वर्गो यस्य न शुद्ध्यति ।। २८० ।।
तद्वर्गगो मतः कालो दिनानीनास्त्रशेषके ।
भेन्द्वोः पक्षा गुरोर्मासा ऋतवो ज्ञे यमे समाः ।। २८१ ।।
गमनागमने द्रव्यसम्प्राप्तौ च जयाजये ।
आधानेऽरिक्षये कालमनुयोगे ध्रुवं वदेत् ।। २८२ ।।

द्वितीय स्थान में स्थापित गुणन फल में गुणकारों के योग ७१ से भाग दे तत्र जो शेष वचे उस में सूर्यादि ग्रहों के गुणकों को हीन करे अर्थात् प्रथम स्थान में स्थित गुणन फलको ७ से तष्ट करने पर जो ग्रह शेष वचा हो उस ग्रह के गुणक के क्रम से ग्रह गुणकों को जहाँ तक शोधन हो सके वहां तक शोधन करे । जिस ग्रह का गुणक शेष संख्या में न घट सके उस ग्रह का वक्ष्यमाण काल जानना चाहिए । रवि तथा मङ्गल का गुणक न घट सके तो ' दिनात्मक काल ' जाने । एवं शुक्र तथा चन्द्रमा का गुणक न घट सके तो ' पक्ष संज्ञक काल ' जाने। गुरु का गुणक न घट सके तो ' मास संज्ञक काल ' जाने । बुध का गुणक न घट सके तो ऋतुसंज्ञक काल ' जाने । एवं शनि का गुणक न घट सके ' तो वर्ष संज्ञक काल ' जानना चाहिए । गमन, आगमन, धनलाभ, जय, पराजय, गर्भाधान और शत्रुसंहार प्रभृति प्रश्न में निश्चय से उक्त काल को कहे ।

—ःउदाहरणः—

पौष कृष्ण प्रतिपदा तिथि, धनुरर्क गतांश १४ के दिन इष्ट समय में द्वादशाङ्गुल शङ्कु की छाया १४ अङ्गुल है। इस से 'परमदिनं दिनमानविहीनम्' इस रीति के द्वारा इष्ट काल साधन किया तो १२ घटी इष्ट काल हुआ। इस से 'तत्कालार्कः सायनः' इस रीति के द्वारा स्पष्ट लग्न साधन किया तो ११|१६|८|३४ राश्यादि स्पष्ट लग्न मिला। स्पष्ट लग्न की राशि ११ को हटाकर १६ अंश को ६० से गुणा तो ९६० हुए इन में ८ कला को युक्त किया तो ९६८ स्पष्ट लग्न का कला पिण्ड हुआ। इस को अभीष्ट समय के छायाङ्गुल १४ से गुणा तो १३५५२ 'शुद्ध पिण्ड' हुआ। इस को दो स्थान में स्थापित कर के एक स्थान के पिण्ड १३५५२ में ७ से भाग दिया तो ० शून्य शेष वचा। यहां शेष संख्या शून्य है अतः शेष भाजक ७ की पूर्ण संख्या मान कर ७ शेष वचे। शेष संख्या के तुल्य सातवां ग्रह शनि है इसलिए शनि के गुणक ११ से द्वितीय स्थान में स्थित शुद्ध पिण्ड १३५५२ को गुणा तो १४९०७२ हुए। इन को दो स्थान में स्थापित करके एक स्थान के गुणन फल १४९०७२ में ७ से भाग दिया तो शून्य शेष वचा। सूर्यादि ग्रहों के क्रम से शेष संख्या ७ पर्यन्त गिना तो सातवां ग्रह 'शनि' हुआ। यह अशुभ ग्रह है अतः कार्य की हानि होगी अर्थात् कार्य सिद्ध न होगा। तदनन्तर द्वितीय स्थान में स्थापित गुणन फल १४९०७२ में गुणकारों के योग ७१ से भाग दिया तो ४३ शेष वचे। इन में पूर्वागत शेषग्रह शनि के गुणक ११ को शोधन किया तो ३२ शेष वचे। इन में रवि के गुणक ५ को शोधन किया तो २७ शेष वचे। इन में चन्द्रमा के गुणक २१ को शोधन किया तो ६ शेष वचे। इन में भौम के गुणक १४ न घट सके अतः भौम के वर्गगतकाल अर्थात् दिनात्मक काल हुआ। इसलिए ६ शेष के तुल्य दिन में अर्थात् छठे दिन इष्ट कार्य की हानि होगी।

मेघाच्छादित दिन में तथा रात्रि में लग्न परिज्ञानः—

वक्रास्फुजिद्विद्धिषणेनजानां वर्गाः कपूर्वाः क्रमशो निरुक्ताः।
स्वरा अकाराद् द्युकृतो यपूर्वं वर्णाष्टकं गीतमनुष्णरश्मेः॥ २८३॥

मङ्गल, शुक्र, बुध, गुरु और शनि के क्रम से ककारादि वर्ग कहे हैं अर्थात् मङ्गल का कवर्ग, शुक्र का चवर्ग, बुध का टवर्ग, गुरुका तवर्ग और शनि का पवर्ग होता है। अकारादि सोलह स्वर सूर्य के और यकारादि आठवर्ण चन्द्रमा के कहे हैं।

प्रागुक्तवर्णैरनुयोगकाले ज्ञात्वा ततोऽङ्गं सदसत्फलं सन्।
प्रष्टू रजन्यां प्रवदेद्विलग्नं वर्णैस्तु वर्गादिममध्यमान्त्यैः॥ २८४॥
अयुग्ममन्यैस्तु समं द्विभेश्वर एकर्क्षकत्वान्न दिवाकराब्जयोः।
पृच्छाक्षणे प्राग्वदतः शुभाशुभं सर्वं तथा बह्वनुयोगकेऽप्यदः॥ २८५॥

प्रश्न समय में प्रष्टा जिन वर्णों का उच्चरण करे उन के मध्य में जो प्रथम वर्ण हो उस से इष्ट समय के लग्न को जानकर शुभाशुभ फल को कहे। यदि प्रथमोच्चारित वर्ण द्विराशिस्वामीवाले भौमादि ग्रहों के वर्ग का हो और वह वर्ग का प्रथम तृतीय वा पञ्चम वर्ण हो तो भौमादि ग्रहों की विषम राशि इष्टसमय में लग्न की राशि होती है। यदि द्वितीय वा चतुर्थ वर्ण हो तो भौमादि ग्रहों की समराशि इष्टसमय में लग्न की राशि होती है। सूर्य तथा चन्द्रमा की एक राशि होने के कारण उन के समविषम स्वर तथा वर्णों से लग्न राशि का विचार न

करे अर्थात प्रष्टा का प्रथमोच्चरित वर्ण सूर्य अथवा चन्द्रमा के पूर्वोक्त स्वर तथा वर्णों के मध्यम में हो तो उन की सिंह वा कर्क राशि के लग्न को कहे। उस लग्न से प्रश्नसमय में पूर्वोक्त प्रकार के समान सब शुभाशुभ फल को कहे। एवं बहुत प्रश्न में भी उक्त क्रिया से लग्न को जानकर प्रष्टा के सब शुभाशुभ फल को कहे।

प्राण्यङ्गकार्येशसुधांशुयोगेऽवधिर्मताऽभीप्सितकार्य्यसिद्धेः।
आदित्यभोनोडुपभे कुयुक्ते कार्यावधिर्वाश्विभतः क्रमेण ॥ २८६ ॥

अथवा बली लग्न, कार्येश और चन्द्रमा इन तीनों के स्पष्ट राश्यादि के योग करने से जो राश्यादि संख्या हो उस के तुल्य दिन इष्ट कार्य की सिद्धि के निर्णय में अवधि जाननी चाहिए। अथवा सूर्याधिष्ठित नक्षत्र की संख्या को चन्द्राधिष्ठित नक्षत्र की संख्या में हीन करके जो शेष बचे उस में १ युक्त करके जो संख्या हो उस से अश्विनी के क्रम से वक्ष्यमाण कार्यावधि को जाने।

भैर्व्योमनागाविधुभिर्नखभानुदन्त–
भूपैर्नभोदिविचरैः खपुराणतुल्यैः।
खाक्षेन्दुभिः खजिनकैर्नरपैः खसूर्यैः
खाहर्मितैः खतपनैस्तपनैः खयुग्मैः ॥ २८७ ॥

दन्तेशषोडशभिरभ्रखगैः खघस्रै–
र्व्योमर्त्तुभिः खदहनैः खखगैः शराब्जैः।
घस्रैर्नभोहययमैर्दिवसैरमीभि–
र्यद्वा विलग्नपतिकार्यगृहाधिपांशाः ॥ २८८ ॥

त्रिघ्नाः खाब्धिकृशा दिनानि चरभे द्विघ्नानि कार्याण्यगे
द्व्यङ्गे रामगुणान्युतेह समयोऽप्यङ्गांशकस्वामिनः।
सम्प्रोक्तःप्रथमोदितांशकसमः कालोऽयनाद्यो बुधैः
किं लग्नस्थलवाच्च यत्र लवपस्तस्योक्तकालः स्मृतः ॥ २८९ ॥

यदि पूर्वोक्तविधि से अश्विनी नक्षत्र हो तो कार्यावधि के २७ दिन, भरणी में १८०, कृत्तिका में २०, रोहिणी में १२, मृगशिरा में ३२, आर्द्रा में १६, पुनर्वसु में ९०, पुष्प में १८०, आश्लेषा में १५०, मघा में २४०, पूर्वाफाल्गुनी मे १६ उत्तराफाल्गुनी में १२०, हस्त में १५०, चित्रा में १२०, स्वाती में १२, विशाखा में २०, अनुराधा में ३२, ज्येष्ठा में ११, मूल में १६, पूर्वाषाढा में ९०, उत्तराषाढा में १५०, श्रवण में ६०, धनिष्ठा में ३०, शतभिषा में ९०, पूर्वाभाद्रापदा में १५, उत्तराभाद्रपदा में १५, रेवती में २७० कार्यावधि के दिन हैं। अथवा लग्नेश और कार्येश के अंशो का योग करके जो संख्या हो उसको ३ से गुणकर ४० से तष्ट करे शेष दिन होते हैं। प्रश्नकाल में चरलग्न हो तो शेष तुल्य दिन कार्यावधि के जानने। स्थिर लग्न हो तो शेष संख्या को

२ से गुणकर कार्यावधिके दिन होते हैं। एवं द्विस्वभाव लग्न हो तो शेष संख्याको ३ से गुणकर कार्यावधिके दिन होते हैं। प्रश्नलग्नमें जो वर्तमान नवांश राशि हो उसका स्वामी यदि बली हो तो जो उसका पूर्वोक्त अयनादि समय हो उसमें कार्यसिद्धि कहनी चाहिए। उसमें भी विशेष यह है कि प्रश्नलग्नमें जितने उदित नवांश हों उनकी संख्या के तुल्य काल जानना चाहिए। जैसे किसीने मेष लग्नमें प्रश्न किया तो इष्ट समय में पाँचवां नवांश वर्तमान है और चार नवांश गत हो गये है। यहां पाँचवें नवांश सिंहका स्वामी सूर्य है उसका अयन काल है अतः वर्तमान पाँचवें नवांश के तुल्य पाँचवें अयनमें कार्यसिद्धि कहे। अथवा प्रश्न समय में लग्नगत नवांश से जितनी संख्या के नवांश में वर्तमान नवांश का स्वामी हो उन संख्याके तुल्य अयनादि काल में अर्थात् वर्तमान नवांशेश का जो अयनादि काल हो उसमें उक्त संख्या के तुल्य समय में कार्य की सिद्धि कहनी चाहिये। एवं चार प्रकार से अवधि ज्ञान कहा है जहां जो संभव हो बुद्धिमान् ज्योतिषी ने वहां वही काल कहना चाहिए।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पण्डितचक्रधरभट्टकृत भाषाटीकोदाहरणोपेते प्रश्नप्रकरणमेकोनचत्वारिंशमवसितम्

अथ

परीक्षापरिणामप्रकरणं

प्रारभ्यते।

ज्योतिषी के कर्त्तव्य का परिज्ञान:—

परीक्षार्थिनो बुद्धिविद्यादियोगान्यशः पूर्वयोगानिहादौ समीक्ष्य।
जनुःकालिकान् दायभुक्ती विदार्यं फलं हायनस्यापि मासस्य वीक्ष्य ॥ १ ॥
परीक्षाक्षणस्य स्थितिं खेचराणामिदं पञ्चकं तत्त्वमत्या विचार्य्य।
विचिन्त्यासनां प्रश्नकाले ग्रहाणां परीक्षाफलं संवदेद्दूरदर्शी ॥ २ ॥

परीक्षार्थी विद्यार्थीजन यदि परीक्षाफल जानने का प्रश्न करे तो उसकी जन्म कुण्डली में (१) बुद्धिके योग (२) विद्याके योग (३) यश के योग (४) वर्त्तमान दशा, अन्तर्दशा, विदशा एवं वर्षफल तथा मासफल का विचार (५) परीक्षाकालीन ग्रहों की स्थिति, इन पूर्वोक्त पाँचो विषयों का तात्त्विक बुद्धि से विचार करे। तदनन्तर प्रश्न कालिक ग्रहों की स्थितिका भी पूर्णतया विचार करनेके पश्चात् पण्डितजन परीक्षा के फल को कहे।

विद्याया यशसश्च कारकखगो मुख्योऽमरेज्यः स तु
विद्यायां सुयशःप्रदोऽथ सितरुक् चेतोयशःकारकः।
सञ्चिन्त्यौ किल तेन तौ जनुषि वा वर्षेऽथवा मासि वा
प्रश्ने गोचरकेऽथवा शुभकरौ सत्स्थानगौ सौजसौ ॥ ३ ॥

विद्या तथा यशका 'गुरु' मुख्य कारकग्रह है। एवं चित्त तथा यश का 'चन्द्रमा' मुख्य कारक ग्रह है। अतएव परीक्षाफल निर्णय में मुख्यतया उन दोनों का विचार करे। जन्म समय, वर्ष प्रवेश, मासप्रवेश, प्रश्न और गोचर में यदि वे दोनों बलवान् होकर शुभ स्थान में हो तो शुभफल कारक होते है अर्थात् परीक्षार्थी परीक्षामें उत्तीर्ण होता है।

धीभाग्यार्थ प्राप्त्याङ्गानि विद्यास्थानान्येतान्येव।
प्रोक्तान्यङ्गं मंत्रं मार्गं तेषुश्रेष्ठानीत्याचार्य्यैः ॥ ४ ॥

पञ्चम, नवम, द्वितीय, एकादश, और लग्न ये पाँचस्थान विद्याके कहे हैं। उन में भी लग्न पञ्चम और नवम ये तीन स्थान विद्याके मुख्य जानने चाहिएँ।

विद्यागृहेशाः शुभशौर्य्यसंयुताः स्युर्गोचरे नास्तमिता न निम्नगाः।
नो वैरिभस्थाः किमु नो गतौजसो वेद्या परीक्षा शुभकारिणी तदा ॥ ५ ॥

विद्या (लग्न, द्वितीय, पञ्चम, नवम, और एकादश) स्थानों के स्वामी यदि गोचर में उत्तमबल से युक्त हों, एवं अस्तगत, नीचराशिगत, शत्रुराशिगत और निर्बल न हों तो 'परीक्षा' शुभफलप्रद जाननी चाहिए।

यस्योत्पत्तौ वाचामीशो दैवं देहं द्रव्यस्थानम्।
पुत्रं प्राप्तिं प्राप्तो मर्त्यो विद्यातत्कीर्तिभ्यां युक्तः ॥ ६ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समयमें नवम लग्न धन पञ्चम वा लाभ स्थानमें गुरु हो तो वह मनुष्य विद्या और उससे उत्पन्न कीर्त्तिसे युक्त होता है।

यदा परीक्षासमयोदयाच्छुभैः प्रबन्धपुण्योपगतैः शुभप्रदा।
भवेत्परीक्षा सचिवानुकूलता तस्यामवश्यं गणको वदेदिति ॥ ७ ॥

परीक्षा कालके प्रथम दिनमें जिस समय प्रश्न पत्र हस्तगत हो उस समय जो लग्न हो उससे पञ्चम और नवम स्थानमें यदि शुभग्रह हों तो परीक्षा का सुन्दर परिणाम होता है। परीक्षामें गुरुकी अनुकूलता परमावश्यकीय है। इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं।

बृहस्पतिर्नोप्यनुकूलवर्त्ती जनुस्तनूदीक्षणदारकेशाः।
बलाभ्युपेता यदि गोचरे धीनिधानमार्गाद्यमनोरथस्थाः ॥ ८ ॥
निरीक्षिता वा सहिताः शुभैस्ते न निम्नगा नास्तगता न शत्रोः।
गृहङ्गता नो विबलाः परीक्षाफलं मनोज्ञं गदितं ग्रहज्ञैः ॥ ९ ॥

यदि वार्षिक परीक्षा में 'गुरु' अनुकूल न भी हो तो जन्म लग्नेश, जन्म लग्न से पञ्चम स्थान और नवम स्थान के स्वामी ये तीनों गोचर से बलयुक्त होकर जन्म लग्न की राशिमें अथवा जन्म राशिसे पञ्चम द्वितीय नवम प्रथम वा एकादश स्थान में स्थित हों एवं शुभ ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हों; नीचराशि, अस्तगत तथा शत्रुराशि में न हों और निर्बल भी न हों तो पण्डितजनों ने परीक्षा का फल उत्तम कहा है।

परीक्षायाःकाले जननतनुतो जन्मशशिभा-
यदा जीवो वाणीघननवमधीलब्धिगृहगः
परीक्षाकालीनः शिशिरकिरणो जन्मविधुभा-
त्सुताङ्कस्थस्तस्मान्नियतिमतिगः शक्रसचिवः ॥ १० ॥
परीक्षाकाले चेदथ जनितनोर्धीगुरुभवो-
दयार्थेशाः स्वोच्चप्रभृतिगृहगा निर्मलखगैः।
युता दृष्टास्तत्रापि शुभसहिताश्चेदथ शनिः
शुभो गोचारेऽथो जनितनुपतीन्द्विज्यपदपाः ॥ ११ ॥

परीक्षार्हे स्वोच्चाधिसखिमुखभस्थाः सविमलाः
शुभैर्दृष्टाः केन्द्रे तनयनवमे यद्यधिगताः ।
प्रकारैः पूर्वोक्तैर्जनुरुदयतश्चोद्भवविधोः
स्थितिश्चेत्खेटानां यदि शुभकरी सा शुभकरी ॥ १२ ॥

वार्षिकपरीक्षा तथा अन्तिम परीक्षा काल में जन्मलग्न राशिसे और जन्म चन्द्र राशिसे यदि 'गुरु' गोचरमें द्वितीय प्रथम नवम पञ्चम वा लाभस्थान में हो तो (१) जन्मचन्द्रमा की राशिसे परीक्षाकालीन चन्द्रमा पञ्चम वा नवम हो और परीक्षाकाल में परीक्षा कालीन चन्द्रमासे गोचर में 'गुरु' यदि नवम वा पञ्चम हो तो (२) जन्म लग्न से पञ्चम, नवम, एकादश, प्रथम और द्वितीयस्थानमें जो राशि हों उनके स्वामी यदि परीक्षा कालमें अपनी उच्चराशि मूलत्रिकोणराशि स्वराशि अधिमित्रराशि वा मित्रराशि में स्थित हों और वे शुभग्रहोंसे युक्त तथा दृष्ट हों एवं पूर्वोक्तस्थानभी शुभग्रहों से युक्त हों तो (३) गोचरमें यदि 'शनि' शुभफलदायक हो अर्थात् अनिष्टस्थान (१।२।८।१२) में न हो तो (४) जन्मलग्न पति, चन्द्रमा, गुरु और जन्मलग्नसे जो राशि दशमस्थान में हो उसका स्वामी ये चारों ग्रह यदि परीक्षाके समय स्वोच्चादि शुभराशियों में हों और शुभ ग्रहोंसे दृष्ट तथा युक्त होकर केन्द्र नवम वा पञ्चम में हों तो इनपूर्वोक्त पाँचों प्रकारोंसे एवं जन्म लग्न राशिसे और जन्म चन्द्रराशिसे परीक्षाकालीन ग्रहों की स्थिति यदि उत्तम हो तो परीक्षा का परिणाम भी उत्तम जानना चाहिए अर्थात् परीक्षार्थी परीक्षामें अवश्य उत्तीर्ण होता है । यदि उक्त प्रकार से ग्रहों की स्थिति मिश्रित (शुभाशुभ) हो तो विद्यार्थी केवल एक विषय में अनुत्तीर्ण अर्थात् कम्पाटमेण्ट में उत्तीर्ण (पास) होता है ।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे भाषाटीकोदाहरणोपेते परीक्षापरिणामप्रकरणंचत्वारिंशं समाप्तिमगमत् ।

अथ

वृष्टिप्रकरणं

प्रारभ्यते ।

गर्भनिमित्त परिज्ञानः—

सौदामनी गन्धवहः कबन्धं कबन्धवाहो रसितं तथैव ।
वैज्ञानिकैः पञ्चनिमित्तकानि प्रोक्तानि गर्भस्य मुनिप्रवर्य्यैः ॥ १ ॥

बिजली, वायु, जल, मेघ (वादल) तथा रसित (मेघगर्जन) ये गर्भ के पाँच निमित्त श्रेष्ठ मुनिजनों न कहे हैं ।

गर्भ समय परिज्ञानः—

* मार्गशीर्षसितपक्षपक्षतेः शीतगौ सलिलभं समाश्रिते ।
गर्भलक्षणमुदीरयेद्बुधो ग्लावि यद्भमुपगेऽत्र गर्भकः ॥ २ ॥
सोऽमृतांशुवशतोऽहनीन्द्रियाङ्कामृतद्युतिमिते प्रसूयते ।
शुभ्रपक्षजनितोऽसिते दले नीलजः सितदले द्युजो निशि ॥ ३ ॥
रात्रिजोऽहनि दिनान्तसम्भवः सायमेव सततं स सूयते ।
गर्भ एष मृगशीर्ष पूर्वजः पौषशुक्लजनितोऽल्पकः फलः ॥ ४ ॥

मार्गशीर्ष मासके शुक्ल पक्षकी प्रतिपदा से जिस दिन ‘ चन्द्रमा ’ पूर्वाषाढा नक्षत्र में प्रवेश करे उस दिन से गर्भ के लक्षण को कहे । जिस नक्षत्र में चन्द्रमा के आगमन से मेघको गर्भ हो वह गर्भ चन्द्रमा के वशसे १९५ दिन में प्रसव होता है । शुक्लपक्ष में धारण किया हुआ गर्भ कृष्णपक्षमें और कृष्णपक्षमें धारण किया हुआ गर्भ शुक्लपक्षमें प्रसव होता है । दिनका गर्भ रात्रिमें, रात्रिका गर्भ दिन में, प्रातः संध्याकाल का गर्भ सायं सन्ध्याकालमें और सायं संध्याकाल का गर्भ प्रातः संध्याकालमे प्रसव होता है । मार्गशीर्ष से पूर्व के गर्भ और पैाष शुक्ल के गर्भ अल्प फल वाले होते हैं ।

तैषस्य नीलेन नभःसितं वदेत्तपःसितोत्थो नभसोसितेदले ।
आयाति सूतिं तपसोऽसितेन च नभस्यशुक्लं विबुधोविनिर्दिशेत ॥ ५ ॥

पौष के कृष्णपक्ष से श्रावण के शुक्लपक्ष को कहे अर्थात् पौषकृष्ण पक्षका गर्भ श्रावण शुक्लपक्ष में प्रसव काल को प्राप्त होता है । एवं माघ शुक्ल पक्षका गर्भ श्रावण कृष्ण पक्षमें और माघ कृष्ण पक्ष का गर्भ भाद्रपद शुक्ल में प्रसव होता है ।

---

* श्रीवराहमिहिराचार्य्येण परमतदर्शनपूर्वकं निजमतं सकारणं निजनिर्मितसंहितायामुक्तम् ’—केचिद्वदन्ति कार्तिकशुक्लान्तमतीत्य गर्भदिवसाः स्युः । न तु तन्मतं बहूनां गर्गादीनां मतं वक्ष्ये ’ इति ।

गर्भोऽर्ज्जुनस्यार्ज्जुनपक्षजोऽसिते नभस्य मासस्य स सूयते सदा ।
तस्यैव शुक्लेतरपक्षजोऽश्वयुक्छुक्ले तथा चैत्रिकपाण्डरोत्थितः ॥ ६ ॥
इषस्य नीले मधुर्नीलपक्षजो गर्भोऽभिवर्षेदिह बाहुलार्ज्जुने ।
स्वाराड्दिगुत्थो दिशि पाशिनोऽपरभवो घनः प्राग्दिशि शेषादिक्ष्वपि ॥ ७ ॥
इत्थं समीरस्य विपर्ययो भवेत्खं निर्मलं ल्हादिमृदुप्रभञ्जनः ।
पूर्वोत्तरेशानभवो हरी बहूपसूर्यकौ स्निग्धसितौ शुभप्रदौ ॥ ८ ॥

फाल्गुनशुक्लपक्षजनित गर्भ भाद्रपद कृष्णपक्ष में प्रसव होता है । फाल्गुन कृष्णपक्ष जात गर्भ आश्विन शुक्लपक्षमें प्रसव होता है । चैत्र शुक्लपक्ष संभव गर्भ आश्विन कृष्णपक्ष में एवं चैत्र कृष्णपक्ष में उत्पन्न गर्भ कार्त्तिक शुक्लपक्षमें वर्षता है । पूर्व दिशाके मेघ पश्चिम में और पश्चिमके मेघ पूर्व दिशा में उदित (उदय) होता है । इस प्रकार शेष दिशाओंके मेघों का भी विचार करे । वायुका विचार भी विपरीत करना चाहिए । गर्भ धारणके अनन्तर यदि अकाश निर्मल हो, पूर्व, उत्तर तथा ईशान दिशा से उत्पन्न मनोहर कोमल वायु वहे एवं सूर्य चन्द्रमा यदि स्निग्ध, श्वेत तथा बहुत परिवेष वाले हो तो गर्भ पुष्टप्रद होते हैं ।

विशुद्धशीतद्युतिभं बृहद्बहु स्निग्धाम्बुभृद् वायसपेशिसन्निभम् ।
जीमूतसूचीक्षुरकास्रमेघयुग् विहायसं श्यामलतुल्यरूपकम् ॥ ९ ॥
पुलोमजेट्कार्मुकमन्द्रगर्जितक्षणप्रभाख्या प्रतिसूर्यका शुभा ।
सन्ध्या ततःशान्तरवा मृगद्विजसंघा महेशेन्द्रमृगाङ्कदिग्गताः ॥ १० ॥

चन्द्रमा और नक्षत्र निर्मल ज्योति वाले हों; स्थूल, बहुत और स्निग्ध मेघ हो; काक के अण्डे के समान मयूर के क्षुरक सदृश लालवर्णके मेघयुक्त वा श्याम कान्ति वाला आकाश हो; इन्द्रधनुष्य गम्भीर गर्जन युक्त; सूर्याभिमुख विद्युत्प्रकाशयुक्त सन्ध्याकाल शुभ फल दायक होता है । एवं ईशान, पूर्व और वायव्य दिशा में स्थित शान्त शब्द वाले मृग तथा पक्षियों के समूह (झुण्ड) सन्ध्याकालमें शुभ होते हैं ।

स्निग्धांशवो याम्यचरा विशालाःस्युरभ्रवासा उपसर्गहीनाः ।
तथोपसृष्टाङ्कुरवर्जिताः स्युर्द्रुमाः प्रहृष्टाः पशवो मनुष्याः ॥ ११ ॥
उदाहृतास्तेऽखिलगर्भ पुष्टिकरा विशेषो मुनिसंहितासु ।
स्वर्त्तुस्वभावप्रभवो य उक्तो गर्भस्य वृद्धौ कथयाम्यहं तम् ॥ १२ ॥

यदि बहुतसे ग्रह चिकनी किरण वाले, दक्षिण मार्गचारी, विशाल बिम्ब और उपद्रव रहित हों एवं वृक्ष-समूह व्याधिरहित अङ्कुरवाले हों, चतुष्पद और मनुष्य हर्षित दृग्गोचर हो तों पण्डितजनो ने ये सब उक्त लक्षण गर्भो की पुष्टिकरने वाले कहे हैं । मुनि प्रणीत संहितओं में गर्भ वृद्धि में अपनी ऋतु के स्वभावसे उत्पन्न जो विशेष कहा हुआ है उसको आगे कहूंगा ।

मासे सहस्ये सहसीह सन्ध्यारागः पयोदाः परिवेशयुक्ताः ।
तथा सहस्येऽतिहिमप्रपातो मार्गेऽतिशीतं नहि शोभनाय ॥ १३ ॥

पौष तथा मार्गशीर्ष में सन्ध्याराग और परिधि युक्त मेघ हों एवं पौष में अतीव हिमपात और मार्गशीर्ष मे अत्यन्त शीत हो तो गर्भोंकी पुष्टि नहीं होती है ।

माघे समीरः प्रबलस्तुषाराविलद्युती शीतकरोष्णरश्मी ।
सुशीतलं साम्बुधरस्य भानोरस्तोद्गमाख्यौ भवतः प्रशंस्यौ ॥ १४ ॥

माघ मास में प्रबल वायु वहे, चन्द्रमा और सूर्य तुषार की समान कलुषित किरण वाले हों, अत्यन्त शीत हो एवं मेघयुक्त सूर्यका उदय तथा अस्त धन्य (वाञ्छनीय) होता है ।

रूक्षोऽनिलः फाल्गुनिके प्रचण्डकोऽभ्रसम्प्लवान्यत्र तु चिक्कणानिच ।
स्युर्मण्डलान्यासकलानि भास्करस्ताम्रप्रभो वा कपिलः शुभोभवेत् ॥ १५ ॥

फाल्गुन मास में रूक्ष (रूखी) और प्रचण्ड वायु वहे, चिकने वादल इकठे हों, आकाश में चारों ओर मण्डल (परिवेष) हों एवं (सूर्य) ताम्रवर्ण वा पिङ्गलवर्ण हो तो शुभ होता है ।

चैत्रे समीराम्बुदवृष्टियुक्ता गर्भाः शुभाः स्युः परिवेषयुक्ताः ।
हिताय राधे स्तनितैःसमेताः कीलालविद्युद्घनगन्धवाहैः ॥ १६ ॥

चैत्र में सबगर्भ यदि वायु, मेघ, वृष्टि और परिवेष युक्त हों तो शुभ होते हैं। एवं वैशाख में सबगर्भ यदि मेघगर्जन, जल, बिजली, मेघ और वायु से युक्त हों तो हितकर होतें है ।

गर्भेषु मेघाः सलिलोत्थसत्त्वाकारास्तथा रौप्यकमौक्तिकाभाः ।
तमालनीलाम्बुजसन्निकाशास्तथाऽञ्जनाभा बहुमेघपुष्पाः ॥ १७ ॥

गर्भधारण समयमें यदि ' मेघ ' जलचर प्राणियों के समान आकारवाले हों अथवा चान्दी वा मोती के समान कान्तिवाले हों अथवा तमालवृक्ष, नीलकमल वा अञ्जन के समान वर्णवाले हों तो बहुत जल देने वाले होते हैं ।

वलाहकास्तीव्रविवस्वदंश्वभितापिता मन्दसमीरसञ्ज्ञाः ।
काले प्रसूत्या रुषिता इवाम्भोधाराभिधाभिर्विसृजन्ति मेघाः ॥ १८ ॥

तीक्ष्ण सूर्य की किरणों से तप्त गर्भ मन्द २ पवन के चलने से प्रसव काल में गर्भ समयके मेघ रुषित के समान जलधारा वर्षाते हैं ।

* गर्भोपघातास्तु रजःस्वरूल्कापातस्वपूःकीलकभूमिकम्पाः ।
निर्घातदिग्दाहनभोनिवासयुद्धध्वजा दर्शनमिन्दुशत्रोः ॥ १९ ॥
रक्तादिवर्षाविकृतेन्द्रचापोपसूर्यकाणि त्रिविधैरमीभिः ।
उत्पातकैरित्युदितैस्तथान्यैर्गर्भाभिधानो निहतस्तदानीम् ॥ २० ॥

धूलीपात, वज्रपात, उल्कापात, गन्धर्वनगर, कीलक भूकम्प, निर्घात, दिग्दाह, ग्रहयुद्ध, केतुराहुदर्शन, रुधिरादिवर्षणजनित विकार, इन्द्रधनु और उपसूर्यक ये गर्भोपघातक हैं । इन कहे हुए उत्पातों से, त्रिविध (दिव्यभौमान्तरिक्ष) उत्पातों से तथा अन्य उत्पातों से गर्भ नष्ट होता है ।

---

* एवं ग्रन्थान्तरेऽप्युक्तम्'—करका धूमरिका पातो रजोवृष्टिः सधूमिका । त्रिभिरेतैर्महोत्पातैः सद्योगर्भो विनश्यति ' इति ।

वदन्ति गर्भोपचितिं निजर्तुस्वभावजैर्लक्षणकैस्तथा यैः ।
सामान्यसञ्ज्ञैरिह तैर्विलोमैर्विपर्ययःस्यादिति वेदितव्यम् ॥ २१ ॥

अपनी ऋतु के स्वभाव से उत्पन्न जो सामान्य लक्षण हैं उनसे गर्भोंकी वृद्धिको कहते हैं। उक्त प्रकारसे विपरीत लक्षणों से गर्भों की हानि होती है। इसप्रकार पण्डितजनों ने जाननी चाहिए।

अजैकपाद्वैश्वकबन्धदैवाहिर्बुध्न्यपैतामहतारकासु ।
गर्भो विवृद्धःप्रभवेत्समस्तर्तुषु प्रभूताम्बरसप्रदःस्यात् ॥ २२ ॥

पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराषाढा, शतभिषा, उत्तराभाद्रपदा और रोहिणी इन नक्षत्रों में वढा हुआ गर्भ सब ऋतुओं में बहुत जल देनेवाला होता है।

गर्भः शुभः स्याच्छततारकाहिमहेशभस्वातिमघाभ्युपेतः ।
पुष्णात्यदभ्रान् दिवसान्निहन्त्युत्पातैः समग्रैस्त्रिविधैर्हतो यः ॥ २३ ॥

शतभिषा, अश्लेषा, आर्द्रा, स्वाति और मघा इन नक्षत्रों से युक्त हुआ गर्भ शुभ होता है। एवं बहुत दिन तक गर्भ को पोषण करता है अर्थात् वढाता है और समस्त त्रिविध (दिव्यभौमान्तरिक्ष) उत्पातों से जो गर्भ हनन हुआ हो उसका नाश होता है।

पञ्चभ्य एभ्यः क्रमशस्तदैकतमोडुना मास्सु सहोसुखेषु ।
वर्षन्ति गर्भा गजषण्महीपसिद्धेषु खोष्ठेषु गुणेष्वहस्सु ॥ २४ ॥

इन शतभिषादि पाँच नक्षत्रों में से किसी एक नक्षत्र में गर्भ हों तो मार्गशीर्षादि मासों में क्रमसे ८।६।१६।२४।२०।३ दिन पर्यन्त वे गर्भ वर्षते हैं।

भवन्ति गर्भाः करकाझषाशनिवृष्टिप्रदाः पङ्करवर्गैः समन्विते ।
पतङ्ग इन्द्रौ यदि सद्युतेक्षिते गर्भास्तदानीं बहुवर्षकारकाः ॥ २५ ॥

गर्भ धारण काल में सूर्य तथा चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त हों तो वे 'गर्भ' करका (ओले), झष (मछली), अशनि (वज्र) इनकी वर्षा करते हैं। यदि गर्भ धारणके समय में सूर्य और चन्द्रमा शुभग्रह से युक्त वा दृष्ट हों तो वे गर्भ बहुत वर्षा करते हैं।

गर्भकाले न गर्भायाऽतिवृष्टिर्निर्निमित्तकृत् ।
द्रोणेभांशाधिकायां स्याद्वृष्टौ गर्भः स्रुतस्तदा ॥ २६ ॥

गर्भ धारण समय में यदि अकारण ही बहुत सी वर्षा हो तो गर्भका अभाव होता है। द्रोण के अष्टमांश से अधिक वृष्टि होनेपर भी गर्भ नष्ट होता है।

गर्भः प्रपुष्टः प्रसवे न वृष्टो नभश्चराणामुपघातपूर्वः ।
दद्यात्कबन्धं करकाभिमिश्रं स्वकीयगर्भावसरे सदैव ॥ २७ ॥

जो गर्भ ग्रहों के उपघातादि से प्रसव के समय में न वर्षे तो अपने गर्भ प्रसव काल में ओलों से मिले हुए जल को वर्षाते है।

अथो निमित्तैः शतयोजनं तदर्द्धार्द्धमेकक्षयतोऽक्षतुल्यैः ।
इह क्रमाद्वर्षति पञ्च गर्भ एकेन रूपेण समन्ततो यः ॥ २८ ॥

पाँच निमित्तों से पुष्ट हुआ गर्भ सौ योजन (चारसौ कोश) वर्षता है। उक्त पाँचों निमित्तों के मध्य में एक एक निमित्त के अभाव में अर्द्ध अर्द्ध हानि के क्रम से वर्षता है जो गर्भ पाँच निमित्त वाला हो वह एक रूप से चारों ओर वर्षता हैं।

द्रोणोऽत्र गर्भेऽक्षमिते निमित्ते त्रीण्याढकानि श्वसनेन सूतौ ।
नवाम्बुदैः षट् तडिता जलानि भास्वन्मितानि स्तनितेन वर्षेत् ॥ २९ ॥

पाँच निमित्तवाला गर्भ प्रसवकाल में एक द्रोण जल वर्षाता है । वायुनिमित्तक गर्भ तीन आढक, मेघ-निमित्त गर्भ नौ आढक, विद्युत्‌निमित्तक गर्भ छः आढक एवं स्तनित (मेघनिर्घोष) निमित्तक गर्भ प्रसवकाल में बारह आढक जल वर्षाता है।

प्रकारान्तर से गर्भधारण तथा प्रसवसमय परिज्ञानः—

दिक्सम्मितेष्वसुरभादिषु भानुभेषु
शम्बाभ्रपाथ उदयोऽर्कयुजां दशानाम् ।
गर्भः शिवोडुत इषुग्रहभूमिताहे
गर्भाहतः क्रिय इने कथयन्ति वृष्टिम् ॥ ३० ॥

जब मूल प्रभृति दश (मू, पू.षा, उ.षा, अभि, श्र, ध, श, पू. भा, उ. भा, रेव.) नक्षत्रों में सूर्य का चार हो तब जिस दिन वज्रपात मेघ (दुर्दिन) वा वृष्टि हो उस दिन गर्भधारण होता है । मेष के सूर्य होने पर जब आर्द्रा से दश (आर्द्रा, पुन, ति, श्ले, म, पू. फा, उ.फा, ह. चि, स्वा.) नक्षत्रों में सूर्य का चार हो तब गर्भ दिन से १९५ दिन में वर्षा को कहे ।

दिग्भेषु रौद्रवदनैः कुइतोऽम्बुपाताद्
*
गर्भस्य पात उदितः किमु मूलभादेः ।
याम्यान्तकं नभसि गर्भधराणि पौषे
वर्षन्ति रौद्रदशभानि पतङ्गचारात् ॥ ३१ ॥

---

* ग्रन्थान्तरेऽप्येवमुक्तम् '—'मूलर्क्षे भास्करे याते तदारभ्य दशाहकम् । विद्युदभ्रादिना गर्भो यत्र तत्र दिने भवेत् । क्रमादार्द्रादिनक्षत्रे भानौ वृष्टिः प्रजायते । मूलभाद्भरणी यावद्भेषु चैकादशेष्वपि । पौषमासदिनर्क्षेषु गर्भस्त्वभ्रादिना भवेत् । तत आर्द्रादिके सूर्ये क्रमाद् वृष्टिः प्रजायते ' इति ।

आर्द्रादि दश नक्षत्रों में सूर्य चार के अनंतर वृष्टि हो तो गर्भपात कहा है । अथवा पौष मास में धनु राशि के सूर्य होने पर मूल से भरणी पर्यंत नक्षत्रों में यदि आकाश में गर्भधारण हो तो वे गर्भ सूर्य के चार से आर्द्रादि दश नक्षत्रों में वर्षते हैं ।

चैत्रे दशस्वश्विमुखेषु भेषु गर्भोऽभ्रविद्युद्रदनेन तद्वत् ।
आरभ्य मेषार्कदिनं क्रमेण वृष्टिप्रदो रौद्रदशर्क्षगोऽर्कः ॥ ३२ ॥

चैत्र मास में अश्विन्यादि दश नक्षत्रों में अथवा मेष संक्रान्ति के दिन से दश दिनतक मेघ अथवा विद्युत् इत्यादि से गर्भ हो तो सूर्य चार के आर्द्रादि दश नक्षत्रों में क्रम से वृष्टिप्रद होते हैं ।

साम्भोविद्युद्गर्जिताभ्राशुगो यो गर्भोऽत्यम्भाः पञ्चरूपान्वितः सः ।
प्राज्यं तोयं प्रोत्सृजेद्गर्भकाल इत्वा कुर्याच्छीकरं सतिकालम् ॥ ३३ ॥

जो 'गर्भ' जल, बिजली, गर्जित, मेघरूप और वायु इन पाँच निमित्त कर के युक्त हो वह पञ्चरूप युक्त गर्भ बहुत जल देनेवाला होता है । यदि गर्भधारण समय में बहुत वर्षा हो तो प्रसव काल को पाकर जलकणों को करता है ।

यस्यां तिथौ पौषसिताद्दिवा निशि यावत्कभृत्खे मसृणो घनो भवेत् ।
तस्यां तिथौ श्रावणशुक्लतो घनागमे प्रवर्षं जलदौघसम्मितम् ॥ ३४ ॥

पौष शुक्ल पक्ष से जिस तिथि में दिन वा रात्रि में जब तक जल धारण किया हुआ स्निग्ध मेघ आकाश में दृग्गोचर हो वर्षा ऋतु में श्रावण शुक्ल पक्ष में उसी तिथि में उतनेही समय तक मेघ गण के समान वृष्टि होती है ।

एकादश्यां बाहुले दृश्यतेऽभ्रं व्योम्न्याषाढे भूयसी वृष्टिरुक्ता ।
मार्गाष्टम्यां वर्षणं चञ्चला वा वाच्या वृष्टिः श्रावणे मासि तज्ज्ञैः ॥ ३५ ॥

कार्तिक की एकादशी को आकाश में यदि मेघ दिखाई दे तो आषाढ में बहुत वृष्टि होती है । एवं मार्गशीर्ष की अष्टमी को वर्षा वा बिजली दृग्गोचर हो तो श्रावण में वर्षा होती है ।

वृष्टिर्भाद्रे पौषकृष्णे दशम्यां विद्युद्वर्षा स्यात्तपःशुक्लपक्षे ।
सप्तम्यां चेदभ्रपूर्वं शिफायां ज्येष्ठे वृष्टिर्मेघकालेऽतिवृष्टिः ॥ ३६ ॥

पौष कृष्ण दशमी को बिजली वा वर्षा हो तो भाद्रपद में वर्षा होती है । एवं माघ शुक्ल पक्ष की अचला सप्तमी को यदि मेघ (बादल) हो और ज्येष्ठ मास के मूल में वर्षा हो तो वर्षा ऋतु में बहुत वर्षा होती है ।

कृष्णे पक्षे मार्गशीर्षे मघायां गर्भे जाते वाऽसितस्येशतिथ्याम् ।
विद्युन्मेघालोकने शुक्लपक्षे शुच्या वर्षेद्विप्रराजस्य तिथ्याम् ॥ ३७ ॥

मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष और मघा नक्षत्र में गर्भ हो अथवा मार्गशीर्ष कृष्ण चतुर्दशी में बिजली और मेघ दृग्गोचर हों तो वह गर्भ आषाढ शुक्ल चतुर्थी में जल वर्षाता है ।

यदा सहःकृष्णचतुर्थिकामुखत्रये क्रमेणोरगतारकात्रये ।
गर्भो यदि स्याच्छुचिमासि योनिभात्तदा त्रिरात्रं वदतु प्रवर्षणम् ॥ ३८ ॥

मार्गशीर्ष कृष्णचतुर्थी से तीन तिथियों में क्रम से आश्लेषादि तीन (श्ले.म.पू.फा.) नक्षत्र हों और उन में गर्भ हो तो आषाढ मास में पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र से तीन दिन पर्यन्त वर्षा होती है।

स्यान्मार्गशीर्षेऽर्कतिथीमुखत्रये सत्यर्य्यमादित्रयभेऽत्र गर्भितम् ।
वातैः पयोदैस्तडिता च वातभेऽष्टम्यां शुचेः श्वेतदले त्रिरात्रकम् ॥ ३९ ॥

जीमूतवृष्ट्या सलिलैरिला भवेदेकार्णवाऽथो सहसोऽसिते दले ।
दर्शे क्रमाच्चेद्दशमीतिथित्रये चित्रात्रये गर्भभवे घनोदयः ॥ ४० ॥

आषाढशीतांशुतिथौ तु तस्यां तस्मिन्नुडुन्येव भवेत्प्रवर्षम् ।
एकादशी श्रावणकृष्णगा या वा सप्तमी वा तिथिरन्तकस्य ॥ ४१ ॥

तास्वभ्रचिह्नेन समन्विता यदि सन्ध्या त्रिरात्रं त्विह वृष्टिकारिणी ।
दर्शे सिते वा नभसोऽत्र गर्भकश्चित्रादिने दुर्दिवसेन तत्क्षणे ॥ ४२ ॥

मार्गशीर्ष की सप्तम्यादि तीन तिथियों में उत्तराफाल्गुनी प्रभृति तीन नक्षत्र हों और वायु, मेघ तथा बिजली से गर्भ हो तो आषाढ शुक्लाष्टमी और स्वाती नक्षत्र में तीन रात तक मेघों के वर्षाये हुए जलों से पृथ्वी एक समुद्र के समान होती है। मार्गकृष्ण अमावास्या में अथवा दशमी प्रभृति तीन तिथियों में क्रम से चित्रादि तीन नक्षत्र हों और उस में गर्भ हो तो आषाढ शुक्ल पूर्णिमा के दिन अथवा उसी तिथि और उसी नक्षत्र में वर्षा होती है। श्रावण कृष्ण पक्ष की एकादशी सप्तमी वा दशमी के सन्ध्याकाल में यदि मेघचिन्ह दृग्गोचर हो तो तीन रात तक वर्षा होती है। श्रावण अमावास्या वा शुक्लपक्ष में वा चित्रा नक्षत्र में दुर्दिनादि से शीघ्र गर्भ उत्पन्न होता है।

भाद्रार्ज्जुनेऽब्धिशरशैलगजेष्वहस्सु
तारेदृतिथौ शरनगैर्दिवसैर्द्रुतं कौ ।
गर्भेण जीवनधरोदय आश्विनाख्ये
तिथ्योर्गणेशफणिनोर्यदि गर्भताऽऽशु ॥ ४३ ॥

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की चतुर्थी पञ्चमी सप्तमी अष्टमी वा पौर्णमासी में गर्भ हो तो शीघ्र ही पृथ्वी में पाँच वा सात दिन मे मेघों का उदय अर्थात् वृष्टि होती है। एवं आश्विन की चतुर्थी और पञ्चमी को शीघ्र गर्भता होती है।

मेघ लक्षण परिज्ञानः—

निर्वार्दलाख्यं किमतीव वार्दलमत्युष्णसञ्ज्ञं किमुतातिशीतलम् ।
अतीव वातं किमु वातवर्जितं स्यात्षड्विधं जीवनदस्य लक्षणम् ॥ ४४ ॥

वादल रहित अथवा अत्यन्त वादल, अत्यन्त उष्ण अथवा अत्यन्त शीतल, अत्यन्त वायु अथवा वात रहित ये मेघ के छः प्रकार के लक्षण आचार्योंने कहे हैं।

बहुजलादि राशियों का परिज्ञानः—

कर्केणमत्स्या बहुतोयराशयो वृषाश्वकुम्भाः शकलाम्बुराशयः।
तुलाधरालो सलिलाभिधौ स्मृतौ स्युर्निर्जलाः स्त्रीहरियुग्मतुम्बुराः ॥ ४५ ॥

कर्क, मकर और मीन ये बहुत जल राशि हैं। वृष, धनु और कुम्भ ये अर्द्धजल राशि हैं। तुला और वृश्चिक केवल जलसंज्ञक राशि हैं। कन्या, सिंह, मिथुन और मेष ये निर्जल राशि हैं।

वर्षा ऋतु में प्रश्न लग्न द्वारा वृष्टि का परिज्ञानः—

वर्षानुयोगेऽम्बुचरर्क्षकं समाश्रितयोडुनाथोऽङ्गमितो भवेत्किमु।
पक्षे सिते कीचकगः सशोभनैर्दृष्टोऽम्बुभस्थोऽम्बु बहूग्रखेचरैः ॥ ४६ ॥

दृष्टोऽल्पमम्भः सृजतीह सत्वरं वर्षासु शुक्रोऽपि शशाङ्कवत्स्मृतः।
घनागमेऽच्छान्मदगः शशी शुभैर्दृष्टः किमार्केः स्मरकोणगोऽम्बुने ॥ ४७ ॥

वर्षा प्रश्न में जलचर राशिगत चन्द्रमा यदि लग्न में हो अथवा शुक्ल पक्ष में जलचर राशिगत चन्द्रमा केन्द्र में स्थित हो और शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वर्षाकाल में शीघ्र बहुत वर्षा होती है। यदि जलचर राशिगत चन्द्रमा केन्द्र में स्थित होकर पापग्रहों से दृष्ट हो तो स्वल्प जल को करता है। एवं चन्द्रमा के समान शुक्र का फल भी जानना चाहिए। यदि वर्षाकाल में शुक्र से सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो और वह शुभग्रहों से दृष्ट हो अथवा शनि से सप्तम पञ्चम वा नवम में चन्द्रमा हो तो वृष्टि होती है।

वर्षाकाले तपनशशिनोः कामगौ काव्यकोणौ
किं वा कल्पान्मनसि मरणे वाचि वा विक्रमे तौ।
वर्षं कुर्य्याद् द्रुतमुत गुरोरस्तगोऽच्छो जलाय
शुभ्रे पक्षे शुभदिविषदोऽम्भोभमाश्रित्य केन्द्रे ॥ ४८ ॥

त्र्यर्थे संस्था घनरसकराः किञ्चिदम्बुप्रदाश्चे-
त्सोग्रा वाथो भवभवनगोऽब्जोऽम्बुदो भव्यदृष्टः।
वाम्भोभस्थो विधुरुदयगो वीर्य्ययुक्ताच्छदृष्टो
वाङ्गस्थोऽच्छः सबलविधुना वीक्षितो भूरि वर्षम् ॥ ४९ ॥

वर्षा ऋतु में सूर्य से वा चन्द्रमा से शुक्र और शनि ये दोनों सप्तम में हों अथवा प्रश्न लग्न से चतुर्थ अष्टम में अथवा द्वितीय तृतीय में शुक्र और शनि ये दोनों हों तो शीघ्र वर्षा को करते हैं। यदि गुरु से सप्तम में शुक्र हो तो वृष्टि होती है। केन्द्र, द्वितीय तथा तृतीय में जल राशिगत शुभग्रह हों तो वृष्टि करनेवाले होते हैं। उक्त स्थानों में स्थित शुभग्रह यदि पापग्रहों से युक्त हों तो अल्पवृष्टिदायक होते हैं। लाभगत चन्द्रमा यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जलप्रद होता है। अथवा जलराशिगत चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर बलवान् शुक्र से दृष्ट हो अथवा जलराशिगत शुक्र यदि बलवान् चन्द्रमा से दृष्ट हो तो बहुत वर्षा होती है।

कोणं याते हिमरुचि मृगेऽपीनभूराशितोऽम्बु
    दद्याद्विष्वग् भुवि भुवनदा नूतना ध्वानयुक्ताः ।
सोर्ज्जः सोमो विबुधगुरुणा लोकितः कल्पमाप्तः
    कुर्वीतेलां परित उशनोराशितोऽम्भोमयीं सः ॥ ५० ॥

मकरराशिगत चन्द्रमा यदि नवम वा पञ्चम में हो अथवा मकर वा कुम्भ का भी चन्द्रमा हो तो भूमि में चारों ओर से जल को देता है और शब्दयुक्त नवीन मेघ दृग्गोचर होते हैं। बलवान् चन्द्रमा शुक्र की (२।७) राशि में स्थित होकर लग्न में हो और गुरु से दृष्ट हो तो भूमि को चारों ओर से जलमयी करता है।

सर्वैः सौम्यैः समरगृहगैःवृष्टिराशु प्रभूता
    स्यात्सत्खेटैः सुखसदनगैः शोभना वृष्टिरङ्गे ।
काव्याराब्जैः किमुत सितरुक्काणकोणैः सुवृष्टि-
    र्द्वौ कल्याणौ यदि दिवि तथा शोभनाः स्युस्त्रयोऽङ्गे ॥ ५१ ॥

प्रश्न लग्न से अष्टम स्थान में सब शुभग्रह हों तो शीघ्र बहुत वर्षा होती है। यदि चतुर्थ में शुभग्रह हों तो उत्तम वृष्टि होती है। एवं प्रश्नकालीन लग्न में भौम, शुक्र और चन्द्रमा हों अथवा प्रश्न लग्न में चन्द्र, शुक्र और शनि हों तो उत्तम वृष्टि होती है। यदि प्रश्न लग्न से दशम स्थान में दो शुभग्रह हों अथवा प्रश्न लग्न में तीन शुभग्रह हों तो भी उत्तम वृष्टि होती है।

वर्षासु वृष्टिः शशिनि द्विदेहभे किं प्रश्नलग्नाज्जलभं स्वशौर्य्ययोः ।
तत्राम्बुखेटो जलदः कुजः शशी सितोऽसितः सम्मिलिता विलग्नगाः ॥ ५२ ॥

तदाऽतिवृष्टिः कथिताऽखिलाः खगाश्चरास्तनौ द्वादशयामकैर्जलम् ।
जलोदये चारुयुते जलग्रहे द्राग् वृष्टिकृत्स्वे सशुभे चरे तनौ ॥ ५३ ॥

मासात्स्थिरेऽङ्गे जलमब्धिदोर्दिनैर्द्विदेहभेऽङ्गेऽङ्गगुणोन्मितैर्दिनैः ।
सनिर्मलो लग्नविभुर्धनाद् धने पराक्रमे भप्रमितद्युभिजलम् ॥ ५४ ॥

वर्षा ऋतु में यदि द्विस्वभाव राशि में चन्द्रमा हो तो वर्षा होती है। अथवा प्रश्न लग्न से द्वितीय तथा तृतीय स्थान में जलराशि (कर्क, मकर, मीन) हो और उस में जलग्रह (चं. शु.) हों तो जल देनेवाले होते हैं। मङ्गल, चन्द्र, शुक्र और शनि ये चारों इकट्ठे होकर लग्न में हों तो अतिवर्षा होती है। सब चर (शीघ्रगति) ग्रह लग्न में हों तो १२ प्रहर में वृष्टि होती है। जल राशि के लग्न में स्थित हुआ जलग्रह यदि शुभग्रह से युक्त हो तो शीघ्रवृष्टि करनेवाला होता है। लग्न में चरराशि हो और द्वितीय में शुभग्रह हो तो एक मास में वर्षा होती है। यदि लग्न में स्थिर राशि हो तो २४ दिन में और लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो ३६ दिन में वर्षा होती है। यदि प्रश्नलग्न का स्वामी शुभग्रह से युक्त होकर द्वितीय या तृतीय स्थान में हो तो २७ दिन में वर्षा होती है।

रसातलेऽङ्गाद्भृगुनन्दनार्चितग्लौवित्समाजः शुभ काल उच्यते ।
अतीव वृष्ट्या दुरितग्रहैरनावृष्टिः प्रदिष्टा जलभोदये यदा ॥ ५५ ॥

त्रिभागवृष्टिः सहिते शुभाशुभैर्ग्रहैरथो निर्जलभानि कण्टके ।
युतानि शुष्काम्बुखगैस्तदा दलवृष्टिः प्रवाच्या सदसत्प्रमाणतः ॥ ५६ ॥

प्रश्न लग्न से चतुर्थ स्थान में यदि शुक्र, गुरु, चन्द्र और बुध इन चारों का योग हो तो बहुत वर्षा होने से सुभिक्ष होता है। यदि चतुर्थ स्थान में पापग्रहों का योग हो तो अनावृष्टि होती है। जलराशि के लग्न में शुभग्रह हों तो तृतीयांश वृष्टि होती है। एवं निर्जल राशि केन्द्र में हों और वे शुष्क तथा जलग्रहों से युक्त हों तो शुभाशुभ-ग्रहों के प्रमाण अर्द्धवृष्टि होती है।

केन्द्रोदयेषु शुभखेटयुतेषु विश्वग्
वृष्टिर्मतांघ्रिरहिता दहनान्वितेषु ।
तज्ज्ञैर वर्षणमथासृजि विग्रहस्थे
जीमूतगर्जनयुता चपलाऽतिवृष्टिः ॥ ५७ ॥

केन्द्र या लग्न शुभग्रहों से युक्त हों तो चारों ओर से तीनचरण वृष्टि होती है। यदि उक्त स्थान पापग्रहों से युक्त हों तो अवर्षण होता है। एवं प्रश्न लग्न में मङ्गल हो तो मेघगर्जनयुक्त विद्युत् और बहुत वृष्टि होती है।

साम्भः कुम्भं द्रव्यमार्द्रं पयस्तत्सञ्ज्ञं स्पृष्ट्वा वारिकार्योन्मुखो वा ।
प्रष्टा पृच्छेच्छ्रूयते यत्र वारिशब्दः प्रश्ने सद्य उक्तं कबन्धम् ॥ ५८ ॥

प्रश्न समय में यदि प्रष्टा (पूछनेवाला) जलयुक्त घट, आर्द्र वस्तु, जल तथा जलसञ्ज्ञक पदार्थ को स्पर्श करके पूछे अथवा जलसम्बन्धी कार्य करता हुआ पूछे अथवा प्रश्न समय में ' जल ' ऐसा शब्द श्रवणगत हो तो शीघ्र वृष्टि कहे।

अम्भः पतेत्क्ष्मा उदयाद्रिगोऽर्कोऽरं हाटकाभो यदि दुर्निरीक्ष्यः ।
अत्यंशुना निर्मलविद्रुमाभस्तपेद्यदोच्चैः खमिनोऽतितीक्ष्णम् ॥ ५९ ॥

यदि उदयाचल में स्थित ' सूर्य ' सुवर्ण के समान कान्तिवाला हो अधिक रश्मियों के कारण कठिनता से दृग्गोचर हो अथवा विमल प्रवाल के समान कान्तिवाला हो अथवा आकाश में स्थित हुआ ' सूर्य ' अत्यन्त ऊंचाई से तपे तो भूमि में शीघ्र जल गिरता है।

मेघागमेऽम्भो लवणं रसोज्झितं दिशोऽमला गोनयनाभमम्बरम् ।
मधुव्रताभं किमु वायसाण्डवन्मीनोत्प्लवः के नहि वाति मारुतः ॥ ६० ॥
वर्षाभुवां चेदसकृन्निनादो बालाः प्रतोल्यां यदि सेतुबन्धान् ।
कुर्व्वन्त्यथो शक्रकिट्संघः सविस्रगन्धोऽथ नखैर्बिडालाः ॥ ६१ ॥
बलां लिखन्तोर्भृशमाशु कं पतेत्क्षौ पर्वता अञ्जनपुञ्जसन्निभाः ।
बाष्पेनरुद्धा यदि कन्दराः परिवेषा विधोः कुक्कुटलोचनोपमाः ॥ ६२ ॥
व्यालव्यवायो विटपाधिरोहोऽहीनां गवामूर्ध्वमिनेक्षणं वा ।
द्रुमस्तकस्थाः सरटाः खदत्तदृशोऽर्यमा चण्डकरो ह्युदेति ॥ ६३ ॥

प्रचालयन्त्यण्डचयं पिपीलिका विनोपघातेन गवां प्लुतं तथा।
नेच्छन्ति गेहात्पशवो विनिर्गमं धुन्वन्ति कर्णांश्च खुरान् पशुस्त्विव ॥ ६४॥
श्वानोऽथ खास्या विततं रुवन्ति च श्वानः स्थिताश्चेत्पटलेषु वेश्मनाम्।
महेशदिग्जा तडिदह्नि काश्यपी भवेत्समानाऽतिकबन्धतस्तदा ॥ ६५॥

वर्षा ऋतु में यदि जल और नमक विरस अर्थात् स्वादरहित हों, दशों दिशायें निर्मल (बादल इत्यादि से रहित) हों, 'आकाश' गौके नेत्र के समान कान्तिवाला वा भ्रमर (भँवर) की समान कान्तिवाला वा कौवे के अण्डे के समान कान्तिवाला हो, जल में मछलियों का वारंवार उछलना, वायुका न चलना, मेंडकों का वारंवार शब्द करना, बालकों का गांवकी गलियों में रेत इत्यादि का सेतु (पुल) बान्धना, लोहे पर मल जमजाने से उसमें कच्चे मांस के समान गन्ध का आना एवं बिल्लियोंका अपने पञ्जों से पृथ्वी को कुरेदना. इत्यादि, उक्त लक्षण जिस दिन दृग्गोचर हों उस दिन पृथ्वी पर जल गिरे अर्थात् वृष्टि होती है। सब पर्वत अञ्जन आदि के समान रंगवाले हो जाँय, कन्दरा (गुफा) ओं में बाष्प (भाप) भर जाय, चन्द्रमा के परिवेष कुक्कुट के नेत्र के समान हों, सर्पों का मैथुन तथा उनका वृक्षपर चढना, गायें ऊपर को दृष्टि उठाकर सूर्य को देखती हों, गिरगट वृक्षोंपर चढकर आकाश की ओर देखते हों, 'सूर्य' तीक्ष्ण किरणों से उदय हो, विना किसी उपद्रव के चींटियों का अपने अण्डों को एकस्थान से दूसरे स्थान पर लेजाना, गायों का उछलना कूदना, 'पशु' घर से बाहिर जाने की इच्छा न करें, कुत्ते कान तथा खुरों को कम्पायमान करते रहें और वे घरों की छतोंपर बैठकर आकाश की ओर देखकर रोवें एवं दिन में ईशान कोण में बिजली चमकती हो तो बहुत जल वर्षने से भूमि एकाकार हो जाती है।

कपोतकीराक्षिनिभोऽथ माक्षिकनिभो निशेशः प्रतिशीतगुर्दिवि।
विराजतेऽथो स्तनितं च विद्युतो रात्रावसृग्भाः किमु दण्डवत्स्थिताः ॥ ६६॥
दिवाऽथ शीतः पुरतोऽनिलोऽथ वाऽङ्कुरा लतानां खतलोन्मुखा वयः।
स्नायन्त एवोदकपांशुभिः सरीसृपा भजन्तेऽत्र तृणाग्रकं तथा ॥ ६७॥

जिस दिन चन्द्रमा का वर्ण कबूतर अथवा तोते के नेत्र के समान लाल हो अथवा शहद के समान हो अथवा आकाश में दूसरा चन्द्रमा देखता हो, रात्रि में बिजली की कड़कड़ाहट का शब्द हो, दिन के समय रक्त समान कान्ति अथवा दण्ड के समान बिजली की रेखायें देख पड़ें, आगे से वायु शीतल हो लताओं, के नये पत्ते यदि आकाश की ओर उठ जाँय, पक्षि गण जल वा धूली में स्नान करे एवं सर्पवृश्चिकादि कीड़े मकोड़े तृणों की नोक पर चढकर बैठें तो शीघ्र वर्षा होती है।

कीराहिभुक्चातकचाषतुल्यवर्णा जपापुष्पसरोजमुद्काः।
कूर्मागनीरोर्मिविसारकोलनक्रोपमाः प्राज्यपुटव्रजा ये ॥ ६८॥
सन्ध्यापयोदा वितरन्ति कं द्रुतं पर्य्यन्तकेष्वत्र सुधेन्दुपाण्डराः।
मध्ये द्विरेफाञ्जनभाः प्रचिक्कणाः क्षरत्कबन्धाख्यकणा अदभ्रकाः ॥ ६९॥
पुटास्तथाऽऽरोहणसञ्ज्ञकस्य च विच्छेदिनः पश्चिमजाश्च पूर्वजाः।
प्राचीं प्रतीचीं क्रमतो व्रजन्ति ये त्यजन्ति तेऽरं बहु जीवनं घनाः ॥ ७०॥

सन्ध्याकाल के मेघ यदि तोते, मोर, चातक और नीलकण्ठ पक्षी के समान वर्णवाले हों जपापुष्प वा कमल की कान्ति के समान हों, कछुआ, पर्वत, जलतरङ्ग, मछली, सूकर और नक्र के समान आकारवाले हों एवं बहुत पुटपुञ्जवाले हों तो शीघ्र जल को देते है। अथवा आकाश के चारों ओर बिजली के समान चञ्चल, चन्द्रमा के समान श्वेतवर्णवाले, मध्याह्न में भ्रमर और अञ्जन के समान वर्णवाले, चिकने, जल की बूँदें टपकाते हों, बहुत पुटवाले हों, सोपानों (सीढियाँ) के समान एक के ऊपर एक चढे हुए हों एवं पश्चिम दिशा से आकर पूर्व को जाँय और पूर्व से आकर पश्चिम को जाँय तो वे बादल शीघ्र ही बहुत जल वर्षाते हैं।

यदोदयास्तावसरे खरांशोः प्रत्युष्णरश्मिः परिघेन्द्रचापौ।
किं रोहितो वा परिधिश्च विद्युत्प्रभूतमम्भो द्रुतमादिशेत्सन् ॥ ७१ ॥

जब सूर्य के उदय वा अस्त समय में यदि दूसरा सूर्य, परिघ, इन्द्रधनुष, वा दण्डाकार इन्द्रधनुष, परिवेष वा बिजली दृग्गोचर हो तो शीघ्र बहुत जल को कहे।

किं तिग्मभानोरुदयास्तकाले खं तित्तिराणां दलसन्निभं कौ।
व्योघा वदेयुर्मुदिता द्युरात्रं पयः पयोदा द्रुतमुत्सृजन्ति ॥ ७२ ॥

अथवा सूर्य के उदय वा अस्त समय में यदि आकाश का वर्ण तित्तिर पक्षियों के पङ्खों के समान और पक्षिगण आनन्दित होकर कलरव करें तो 'मेघ' शीघ्र ही दिन रात जल वर्षाते हैं।

यदाऽम्बुदा भूमिसमं रसन्तेऽमोघांशवोऽर्कास्तशिलोच्चयोस्राः।
इवोच्छ्रिता लक्ष्म महच्च वृष्टेस्तत्स्यात्सुधीन्द्रैरिति चिन्तनीयम् ॥ ७३ ॥

जब बादल भूमि के निकट शब्द करें और सूर्य के अस्त समय में अस्ताचल की किरणों के समान ऊंची तथा अमोघ (अव्यर्थ) किरणें विराजमान हों तो ये सब वृष्टि के बड़े लक्षण है। इस प्रकार पण्डितजनों ने विचारना चाहिए।

तीव्रातपो मध्यदिनेऽथ मक्षिका अनल्पतां यात्यपरेन्द्रकार्मुकम्।
सन्ध्याप्रदोषे घनगर्जनं नरा निद्रातुराः प्रावृषि वर्षणं लघु ॥ ७४ ॥

वर्षा ऋतु में जिस दिन मध्याह्न में सूर्य की किरणें अतीव तीक्ष्ण (असह्य) हों अथवा जिस दिन मक्षिका (मक्खी) ओं की अधिकता हो वा सन्ध्याकाल वा प्रदोष में मेघों का गर्जन हो अथवा जिस दिन मनुष्य समाज प्रायः निद्रा से व्याकुल हों उस दिन शीघ्र वृष्टि होती है।

खद्योतसञ्ज्ञा रजनौ पयोधरोपकण्ठके चेत्प्रविशन्ति कं द्रुतम्।
केदारपूरं प्रचुरं प्रवर्षति सकृत्समीरः प्रबलो वहेद्दिशि ॥ ७५ ॥
यमस्य पाथःपतिभेऽरमम्बुदो वर्षेद्वहेच्छक्रदिशि प्रभञ्जनः।
स्युर्धूमिताःसर्वदिशस्तदा चतुर्यामान्तरेऽभ्रं परिपूरयेत्सरः ॥ ७६ ॥

रात्रि में मेघों के समीप यदि खद्योत (जुगनू) प्रवेश करें तो मेघगण शीघ्र क्षेत्रपूर्ति के लिए बहुत जल वर्षाते हैं। यदि वरुणमण्डल के नक्षत्रों में एक बार प्रबल वायु दक्षिण दिशा में वहे तो शीघ्र मेघ वर्षता है। यदि पूर्व दिशा में वायु वहे और सब दिशायें धूमित हों तो चारप्रहर में 'मेघ' सरोवर को पूरा करता है।

खद्योतदीप्ती रजनौ पयोभृतां नक्तं निवासः सलिले यदोष्णता ।
सद्योऽम्बुमुग्वृष्टयभिलक्षणं मतं प्राच्यां घनो धूमनिभश्च कृष्णताम् ॥ ७७ ॥
यात्यस्तकाले द्युकृतो विदो दिशि जीमूतमाला विमला दिशो दश ।
प्रातस्तथा मध्यदिनेऽर्कतापकः स्यादीदृशं वारिदलक्षणं ध्रुवम् ॥ ७८ ॥
तुष्ट्यै निशीथोत्तरवृष्टिरङ्गिनां तारागलत्कार उषाभिधासु च ।
प्रातः पतङ्गोऽत्यरुणो धनुः शचीपतेरवृष्टौ लघु वर्षणं भवेत् ॥ ७९ ॥

रात्रि में ' खद्योत ' प्रकाश करें एवं रात्रि में मेघ का वास हो और जल में उष्णता हो तो ' मेघ ' शीघ्र वर्षा के लक्षण को सूचित करता है । पूर्व दिशा में धूम्र कान्तिवाला मेघ हो और सूर्य के अस्तकाल में कृष्णत्व को प्राप्त हो, उत्तर दिशा में मेघमाला हो प्रातःकाल दशोंदिशायें निर्मल हो और मध्याह्न में अधिक ताप हो तो इस प्रकार निश्चय से मेघ के लक्षण जानने । यदि उक्त लक्षण दृग्गोचर हो तो अर्ध्दरात्रि के अनन्तर मनुष्यों को सन्तोष देनेवाली वृष्टि होती है । रात्रि में उल्कापात (ताराओंका पतन देखता हो), प्रातःकाल में सूर्य का अत्यन्त रक्तवर्ण हो और अवर्षणकाल में इन्द्रधेनु दृग्गोचर हो तो शीघ्र वर्षा होती है ।

शेते श्वोर्ध्वे नगाः सान्द्रा धूमिताश्चातकध्वनिः ।
कृत्यादावार्द्रता कीटा गोमये चोत्करादिषु ॥ ८० ॥
प्रातः प्रतीच्यां वृषकार्मुकोद्गमस्तत्कालमम्लं मथितं लघूदकम् ।
मेघा दिनान्ते यदि पर्वतप्रभा वर्षन्त्यहोरात्रमिनास्तसङ्गते ॥ ८१ ॥

यदि कुत्ते छत पर सोयें, पर्वत निबिड (घने) और धूमित देखते हों, चातक शब्द करें चर्मादियों में आर्द्रता (गीलापन) हो, गोमय (गोबर) में अथवा उत्करादि (धान्यादि राशि वा सम्मार्जन्यादि क्षिप्त धूली) में कीडे देखते हों, पूर्वदिशा में प्रातःकाल इन्द्रधनुष देखता हो अथवा तत्काल मथित दही अम्ल (खट्टा) हो तो शीघ्र वर्षा होती है । सन्ध्याकाल में यदि मेघ पर्वताकार हो तो सूर्यास्त होने के पश्चात् दिनरात वर्षते है ।

आषाढस्य सितेतरस्य तिथिषु श्रुत्यक्षषट्पर्वत-
तुल्यास्वाशु च लक्षणैर्जलभृतेः सूर्य्योदये श्रावणे ।
गर्जेयुर्जलदा जलोपरि यदा मीना भ्रमेयुस्तदा
वाराऽष्टादशयाममध्य इह कुं पूर्णां प्रकुर्व्वन्ति ते ॥ ८२ ॥

आषाढ कृष्ण पक्ष की चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी वा सप्तमी तिथि में जललक्षण दृग्गोचर होने से शीघ्र मेघोदय होता है । श्रावण मास में यदि सूर्योदयकाल में मेघगर्जना करें और मछलियां जल के ऊपर भ्रमण करें तो अठारह प्रहर के अन्तराल में ' मेघ ' पृथ्वी को जल से पूर्ण करते है ।

यथाक्रमं भाद्रपदेऽग्निकालरवीन्दुदुर्गातिथिषु प्रतीच्याम् ।
घना न दृश्यन्त उदप्रदाख्या वर्षन्ति जीमूतरसा अदभ्राः ॥ ८३ ॥

भाद्रपद में यथाक्रम से प्रतिपदा, दशमी, सप्तमी, पूर्णिमा और नवमी तिथि में यदि पूर्वदिशा में 'मेघ' दिखाई न दे तो मेघगण बहुत जल वर्षाते हैं।

ग्रहों के उदयास्तादि तथा राशि चर (गोचर) आदि से वृष्टि का परिज्ञानः—

ग्रहोदयास्तावसरे बहुग्रहसमागमे वाथ गमे दलक्षये।
भगायनान्ते भवमं गते भगे वृष्टिर्भवेन्मण्डलसङ्क्रमे ध्रुवम् ॥ ८४ ॥

भौमादि ग्रहों के उदय वा अस्तकाल में, बहुत ग्रहों के समागम (इकट्ठे) होने पर ग्रहों की आक्रान्त राशि से गन्तव्य (अग्र) राशि में जानेपर, पक्ष के अन्त में, सूर्य के अयन के अन्त में, सूर्य के आर्द्रा नक्षत्रप्रवेशसमय में तथा ग्रहों के मण्डल सङ्क्रमण काल में नियम से वर्षा होती है।

पतेज्जलं ज्ञास्फुजितोः समागमे वाचार्यकव्योर्धिषणज्ञयोरथो।
यमासृजोर्नोत्तमदृष्टयुक्तयोः स्यात्सङ्गमे पावकवातजं भयम् ॥ ८५ ॥

बुध शुक्र के, गुरु शुक्र के और गुरु बुध के समागमकाल में वर्षा होती है। यदि शनि तथा मङ्गल का समागम हो और वे दोनों शुभग्रह से दृष्ट वा युक्त न हों तो अग्नि और वायु से भय होती है।

विद्भार्गवावेकभगौ भगाभिधभानूज्झितौ भूमितनूद्भवो न चेत्।
तदन्तरस्थोऽविरलं वनं ननु मुञ्चन्ति पृथ्व्यां परितः पयोमुचः ॥ ८६ ॥

बुध और शुक्र ये दोनों जिस समय एकराशि में स्थित हों और सूर्यकी किरणों से रहित हों अर्थात् अस्तगत न हों और उन दोनों के मध्य मे मङ्गल न हो तो 'मेघगण' भूमि में चारों ओर जल वर्षाते हैं।

योगे ज्ञगुर्वोर्जलदागमेऽम्बुनः स्याद्वर्षणं तत्र रविर्न वा कुजः।
एकार्णवां कुर्युरिलां ग्रहा रवेरालम्बिताश्चेत्पुरतश्च पृष्ठतः ॥ ८७ ॥

जब वर्षासमय में बुध और गुरु का योग हो और उन के साथ सूर्य वा मङ्गल न हो तो वर्षा होती है। यदि सूर्य के अवलम्बन करनेवाले ग्रह सूर्यकी पीठ पीछे अथवा आगे हों तो पृथ्वी को एक समुद्र के समान कर देते हैं।

पक्षावसानक्षणदामुखेऽयनं बध्नो व्रजेद्वा स गृहान्तरं यदा।
मुंचेत्कबन्धं भुवि चेतसो मुदे मधुव्रताभः स्तनयित्नुमण्डली ॥ ८८ ॥

पूर्णिमा वा अमावास्या के दिन प्रदोष काल में यदि 'सूर्य' उत्तरायण दक्षिणायन वा द्वितीय राशि में प्राप्त हो तो नीले बादलों की मण्डली पृथ्वी में पर्याप्त वृष्टि को करती है।

❀ अत्र विशेषः— यदा रवेः पुरतः पृष्ठतो बहवः खगाः स्थिताश्चेत्स्युस्तेन पुनः कुटिलेतिं भजन्ति तदा घना भुवि प्रचुरमम्बु विसृजन्तीति।

मार्गी: कुजः सञ्चरते रविर्यदा वर्षेद्धिमं वर्षतु वा दले दले।
खलाढ्यदृष्टेन्दुभयोः समागमे योगेऽम्भसोऽल्पोदकदस्तदा घनः॥ ८९ ॥

सूर्य सङ्क्रान्ति के दिन यदि मङ्गलमार्गी हो तो हिम (तुषार) वृष्टि वा खण्ड वृष्टि होती है। पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट हुए शुक्र और चन्द्रमा का समागम हो एवं वृष्टि के योग होने पर भी मेघगण स्वल्पजल देते हैं।

पर्पीः पुरोऽस्मात्परितः पयो भुवि कुर्यात्कुजोऽर्कात्पुरतो व्रजन् हरेत्।
समागमं तं महदम्भसस्ततो विश्वम्भराजे चलति क्षपाकरे॥ ९० ॥
अम्भश्चरर्क्षे यदि चारतो गते घनाः प्रमुञ्चन्ति घनागमे दकम्।
*
गुरूद्गमे वा चलतीज्य इन्दुजे काव्योदयास्तावसरे त्रिधा दिवि॥ ९१ ॥
भास्वद्भुवः सञ्चरतस्तदा भुवि घनो घनं मुञ्चति सर्वतो वनम्।
दर्शाष्टमीभूततिथीषु भार्गवोऽस्तं वोद्गमं गच्छतु कं पतेद्भुवि॥ ९२॥

यदि मङ्गल से ' सूर्य ' आगे हो तो पृथ्वी में सर्वत्र वर्षा को करता है। एवं सूर्य से ' मङ्गल ' आगे हो तो बहुत जल के समागम को भी नष्ट कर देता है। मङ्गल के राशि सङ्क्रमणकाल में वा मार्ग काल में यदि चन्द्रमा चार वश जलचर राशि में हो तो वर्षाकाल में मेघगण वृष्टि को करते है। गुरु के उदयकाल में वा गुरु और बुध के राशि सङ्क्रमणकाल में वा शुक्र के उदय और अस्तकाल में वा शनैश्चर के उदय, अस्त और राशिसङ्क्रमण काल में ' मेघगण ' पृथ्वीपर सर्वत्र वृष्टि को करते है। अमावास्या अष्टमी वा चतुर्दशी तिथि में यदि ' शुक्र ' अस्त वा उदय को प्राप्त हो तो पृथ्वी में वृष्टि को करता है।

पित्र्यादिपञ्चर्क्षगतोऽसुरार्चितः पूर्वोदितश्चेदुत पश्चिमोदितः।
प्रभञ्जनादित्रितये स्थितस्तथा स्याद्वृष्टिकृद्व्यस्तमतोऽन्यथा भवेत्॥ ९३ ॥

मघादि पाँच नक्षत्रों में प्राप्त हुआ शुक्र यदि पूर्व दिशा में उदय हो अथवा स्वाति प्रभृति तीन नक्षत्रों में प्राप्त हुआ शुक्र यदि पश्चिम दिशा में उदय हो तो वृष्टि करनेवाला होता है और उक्त प्रकार से विपरीत हो तो अवर्षण होता है।

एकर्क्षयातावसितक्षमासुतौ परस्परं तौ समसप्तगौ किमु।
द्विजग्रहौ राजनभश्चरौ तथा भवेत्तदानीमिह बिन्दुवर्षणम्॥ ९४ ॥

यदि शनि और मङ्गल एक राशि में अथवा दोनों परस्पर सातवीं राशि में हों अथवा गुरु शुक्र अथवा मङ्गल सूर्य एक राशि में वा परस्पर सप्तम राशि में हों तो जलकणों की वर्षा होती है।

एकर्क्षगौ विभ्द्भृगुजौ न गर्हितैर्दृष्टौ युतौ जीवदृशा विशेषतः।
तदातिवृष्टिर्बुधवाक्पती यदैकर्क्षगतौ क्रूरदृशा विवर्जितौ॥ ९५ ॥

---

* एवमन्यत्र ग्रन्थप्रणेतृभिरुक्तम् '—' शिखण्डिसूनोरुदितेऽत्र वृष्टिरस्तं प्रयाते भृगुदेहजाते। वृष्टिर्धरित्रीभुवि राशिभान्तर्गतेऽर्कपुत्रे त्रिविधाऽपि वृष्टिः ' इति। वक्रं गतेऽपि शनौ वृष्टिरुक्ताऽन्यत्र।

विशेषतो धिष्ण्यदृशाऽन्वितौ वरां वृष्टिं विधत्तो द्विजनाकचारिणौ ।
असद्ग्रहेणापि निरीक्षितौ युतौ बुधेन दृष्टौ कुरुतोऽम्बुयोगतः ॥ ९६ ॥
तदातिवृष्टिं ज्ञभसूरयो यदैकराशियाता न खलग्रहेक्षिताः ।
इमे महावृष्टिविधायका मता वागीशदृष्टौ वसुधाजभार्गवौ ॥ ९७ ॥
एकत्र संस्थौ मुदिरः प्रवर्षति न संशयोऽच्छे जलमण्डलान्विते ।
वारे समासे सकला दिशस्तदा उद्बन्धनाः स्याज्जलयोगको महान् ॥ ९८ ॥

एक राशि में स्थित हुए बुध शुक्र यदि पापग्रहों से दृष्ट तथा युक्त न हों और विशेषतया गुरु से दृष्ट हों तो अत्यन्त वृष्टि होती है । एक राशि में स्थित हुए बुध गुरु यदि पापग्रहों से अदृष्ट हों और विशेषतया शुक्र से दृष्ट हों तो उत्तम वृष्टि को करते है । यदि शुक्र और गुरु पापग्रहों से दृष्ट वा युक्त होकर भी बुध से दृष्ट हों और अन्य जलयोग हों तो बहुत वृष्टि को करते है । एक राशि में स्थित हुए बुध शुक्र गुरु ये तीनों पापग्रहों से अदृष्ट हों तो बहुत वर्षा करनेवाले होते है । एक राशि में स्थित हुए शुक्र मङ्गल यदि गुरु से दृष्ट हों तो निःसन्देह मेघ वर्षता है । ' शुक्र ' यदि चन्द्रमा से युक्त हो अथवा ' मङ्गल ' चन्द्रमा से युक्त हो तो दशों दिशायें उद्बन्धन (अवरुध्द) होती है और यह बहुत वडा जलयोग होता है ।

सन्तोऽसतामग्रत एव संस्थिताः परस्परं ते ददते दकं बहु ।
विपर्यये नाथ विवस्वता सहैकभाश्रितो वर्षति वासवार्चितः ॥ ९९ ॥
यावन्न यात्यस्तमनं विदिज्ययोर्द्वन्द्वं युतिर्वाथ बुधस्त्यजेत्सितम् ।
कृत्वा यदोन्मार्गगमं घनो दिनैर्वर्षेच्छरैर्वा नगसम्मितैस्तदा ॥ १०० ॥

पापग्रहों के आगे यदि शुभग्रह स्थित हों तो वे परस्पर बहुत जलको देते हैं । यदि उक्तप्रकार से विपरीत हों तो जल नहीं देते है । जब तक बुध और गुरुका द्वन्द्व (युध्द) वा युति (योग वा समागम) अस्तको प्राप्त न हो तबतक सूर्यके साथ में स्थित गुरु बर्षाको करता है । वक्रगति को प्राप्त हुए शुक्रको बुध त्याग दे तो पाँच वा सात दिनमें वर्षा होती है ।

कुलीरराशौ विशते पयोस्ते पूर्णेक्षाय पश्यति शेमुषीशः ।
पादोनदृष्ट्या किमु तत्र दिष्टे महज्जलं वर्षति वारिवाहः ॥ १०१ ॥

यदि ' सूर्य ' कर्क राशि में प्रवेश करे और उसको पूर्णदृष्टि से वा त्रिपाददृष्टि से ' गुरु ' देखता हो तो उस समय ' मेघ ' बहुत जल वर्षाता है ।

त्रिपाददृष्ट्या किमुताखिलेक्षया वीक्षेत चारुर्द्युचरं यदोदये ।
किमस्तकाले मुहिरः प्रवर्षतु भार्क्योर्यदैकर्क्षगयोर्न सस्यकम् ॥ १०२ ॥
स्यादल्पवृष्टिर्दुरिता यदाऽनृजूचीर्णाः शुभाः स्युः कुटिलं गतो गुरुः ।
शुभोऽतिचारं प्रगताः शुभेतरा भवन्ति ते क्षुल्लकवृष्टिदायकाः ॥ १०३ ॥

उदयकाल में वा अस्तकाल में भृगुको यदि बृहस्पति त्रिपाददृष्टि से वा पूर्णदृष्टि से देखता हो तो वृष्टि होती है । यदि शुक्र शनि ये दोनों एकराशी में होंतो अल्प वृष्टि के कारण अन्न नहीं होता है । यदि पापग्रह वक्र से

उत्तीर्ण होंतो शुभ होते है। और वक्र गति गुरु शुभ होता है। एवं पापग्रह अतिचारको प्राप्त होंतो अल्पवृष्टि देनेवाले होते है।

भव्यग्रहा वृष्टि विधायिनोऽनृजुं गता महीजास्फुजितोः शनीज्ययोः।
मासीह वृष्टिः समसप्तकं तथा सौम्योग्रयोः स्याद्यदि खण्डवर्षणम् ॥ १०४ ॥

यदि शुभग्रह वक्रगति को प्राप्त होंतो वर्षाप्रद होते है। शुक्र और मङ्गलका अथवा शनि और गुरुका समसप्तक योग होतो एक मास में वृष्टि होती है। एवं शुभ और पापग्रहका समसप्तक योग होतो खण्ड वृष्टि होती है।

रवेर्नृयुक्सङ्क्रमणे नृयुग्मस्त्रीमीनचापेषु शुभैः सुवृष्टिः।
किंकर्किगोगौ भबुधौ झषेऽब्जे सूरौ स्त्रियां वापि विलोमतः स्यात् ॥ १०५ ॥
सुवृष्टिराराहियमा नृयग्मपाठीनकन्याश्विषु वृष्टिरल्पा।
महार्घ उक्तोऽथ सितो द्विदेहे गोकर्कगौ कोणकुजौ तदाल्पा ॥ १०६ ॥
वृष्टिस्तथान्नप्रियमास्फुजिज्ज्ञौ द्वन्द्वाजगौ ग्लौधिषणौ धनुःस्थौ।
अचारुखेटाः करिवैरिकौर्प्यतुलासु वृष्टिश्च समर्घता स्यात् ॥ १०७ ॥

सूर्य की मिथुन सङ्क्रान्ति काल में यदि धनु, मिथुन, कन्या और मीन में शुभ होंतो उत्तम वर्षा होती है। वृष वा कर्क में बुध शुक्र हों, मीनमें चन्द्रमा और कन्या में गुरु हो अथवा उक्त प्रकार से विपरीत भी होतो उत्तम वर्षा होती है। मिथुन, कन्या, मीन और धनु में मङ्गल, राहु और शनि ये तीनों होंतो अल्पवृष्टि और वस्तुओं की महार्घता होती है। द्विस्वभाव राशिमें शुक्र हो, वृष वा कर्क में मङ्गल शनि ये दोनों होंतो अल्पवृष्टि और अन्न की महार्घता होती है। मिथुन मेषमें शुक्र, बुध हों धनु में चन्द्रमा गुरु हों एवं सिंह, वृश्चिक और तुलामें पापग्रह होंतो वृष्टि होने से अन्नादि की समर्घता होती है।

सप्तनाडीसे वृष्टिका परिज्ञानः—

साभिजिन्ति क्रमाद्भानि पाक्कादीनि संलिखेत्।
सर्पवत्सप्तनाडीनां व्यधंतत्र प्रकल्पयेत् ॥ १०८ ॥

कृत्तिका के क्रमसे अभिजित् सहित सर्प के समान चण्डादि सप्त नाडियों को लिखे और उन सप्त नाडियों के वेधकी कल्पना करे।

एका नाडी चतुर्धिष्ण्यवेधेनाथ यमानिलौ।
द्विदैवं मैत्र मूर्ध्वाख्या चण्डनाडीनसूनुजा ॥ १०८ ॥

चार नक्षत्रों के वेधसे एकनाडी होती है। भरणी, कृत्तिका, अनुराधा और विशाखा इन चार नक्षत्रोंकी शनि से उत्पन्न ऊर्ध्व संज्ञक 'चण्डनाडी' होती है।

द्वितीयाऽनिलकेन्द्राश्वा वातनाडी द्युनाथजा।
तक्षपौष्णेन्दुमूलानि तृतीया दहनाऽऽरजा ॥ ११० ॥

स्वाति, रोहिणी, ज्येष्ठा और अश्विनी इन चार नक्षत्रों की सूर्य से उत्पन्न द्वितीय 'वातनाडी' होती है। चित्रा, रेवती, मृगशिरा और मूल इन चार नक्षत्रोंकी भौमसे उत्पन्न तृतीय 'दहननाडी' होती है।

बुध्न्याद्राम्बुकराः सोम्या चतुर्थी चारुनाडिका।
पञ्चम्यर्य्यमविश्वाजैकांघ्र्यादित्याः सितोत्थिताः ॥ १११ ॥
नीरनाड्यथ योनीज्याभिजिद्वारुणभानि च।
जलनाडी ज्ञजा षष्ठी मघाश्रोत्रवसूरगाः ॥ ११२ ॥
सप्तमीन्दोः सुधाऽथेह मध्यगा सौम्यनाडिका।
अतः पुरः पृष्ठतश्च सोम्यं याम्यं त्रिकं त्रिकम् ॥ ११३ ॥
नाडीनामुत्तरे याम्ये याम्यपार्श्वगताः खलाः।
शोभनाः सौम्यभागस्था नाडी मध्या तु मध्यमा ॥ ११४ ॥
द्युसत्स्वरूपफलदा एकनाडीगता ग्रहाः।
द्व्याद्याः शुभा खला वापि चण्डनाड्यां महानिलम् ॥ ११५ ॥
वातायां कं महादाहमग्निनाड्यां तु मध्यताम्।
कुर्युः सौम्यगता नीरयाता जीमूतवाहकाः ॥ ११६ ॥

उत्तराभाद्रपदा, आर्द्रा, पूर्वाषाढा और हस्त इन चार नक्षत्रोंकी गुरु से उत्पन्न चतुर्थ 'सौम्यनाडी' होती है। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, पूर्वाभाद्रपदा और पुनर्वसु इन चार नक्षत्रोंकी शुक्र से उत्पन्न पञ्चम 'नीरनाडी' होती है। पूर्वाफाल्गुनी, पुष्य, अभिजित् और शतभिषा इन चार नक्षत्रोंकी बुध से उत्पन्न षष्ठ 'जलनाडी' होती है। मघा, श्रवण, धनिष्ठा और आश्लेषा इन चार नक्षत्रोंकी चन्द्रमा से उत्पन्न सप्तम 'अमृतनाडी' होती है। यहां सातों नाडियों के मध्य में सौम्यनाडी मध्य गत होती है। इससे आगे की तीन नाडियां 'सौम्य' और पीछे की तीन नाडियां याम्य होती है। सौम्य और याम्य नाडियों के मध्यमें यदि पापग्रह याम्य भाग में हों और शुभग्रह सौम्य भाग में हों तो नाडियोंका फल मध्यम होता है। यदि शुभ वा पापग्रह सौम्य (मध्य) नाडी में होंतो ग्रह के स्वरूपके समान नाडी का फल होता है। यदि दो प्रभृति शुभ वा पापग्रह एक नाडी में हों तो भी ग्रह के स्वरूप के समान नाडीका फल होता है। यदि शुभ वा पापग्रह चण्ड नाडी में होंतो बहुत वायु, वायु नाडी में हों तो भी वायुको करते है। अग्नि नाडी मे महादाह को करते है। एवं सौम्य नाडी और नीर नाडी में ग्रह हों तो 'मेघ' मध्यम फल को करते है।

तोयायां तोयदः सोमो महावृष्टिकरो ग्रहः।
चन्द्रनाडीं गतश्चैकोऽप्यथो स्वीयफलप्रदः ॥ ११७ ॥
स्वीवनाड्यां ततः कुर्य्यान्नाडीतुल्यं फलं कुजः।
यस्यां नाड्यां विधुःसंस्थश्चेत्खगा अपि तत्रगाः ॥ ११८ ॥
यद्वा मिश्रद्युसद्भिर्वा वृष्टिः स्यादुत्तमा दिने।
तस्मिन्नथैकधिष्ण्यस्थे योगे तत्र खगा यदि ॥ ११९ ॥

वृष्टिः स्यान्महती तस्मिन्दिने यावत्तदंशगः ।
कलेशः केवलैर्विद्धः खलैर्वा शोभनैर्जलम् ।।१२०।।
तुच्छं तत्राम्बरं मेघमेदुरंग्लौः कभागगः ।
यावन्मिश्राः कभांशस्थास्तावत्कुर्वन्ति वर्षणम् ।।१२१।।

जलनाडी स्थित 'चन्द्रमा' जलदेनेवाला होता है। एकग्रहभी चन्द्रनाडीमें स्थित होतो अतिवृष्टि को करता है। एवं अपनी नाडीमें स्थितग्रह अपने फलको देता है। जिस नाडी में मङ्गल स्थित हो वह उसीके तुल्य फलको करता है। जिस नाडीमें चन्द्रमा हो उसीमें अन्य ग्रहभी हों अथवा चन्द्रमा जिस नाडीके नक्षत्र में हो वह मिश्र ग्रह से भिन्न (विध्द) होतो उस दिन उत्तम वृष्टि होती है। ग्रहोंके एक नक्षत्रमें स्थित होनेपर अथवा ग्रहों के योग होनेपर और अन्यग्रहभी उस नक्षत्र वा राशिमें जिस दिन आजाँय और जबतक 'चन्द्रमा' उस नवांश में स्थित रहे उस दिन तबतक महती वृष्टि होती है। यदि 'चन्द्रमा' केवल पापग्रहोंसे अथवा केवल पुण्यग्रहोंसे विध्द होतो स्वल्पजल अथवा दुर्दिन (मेघाच्छादितदिन) को करता है। 'चन्द्रमा' जबतक जलराशिके नवांश में स्थित रहे और मिश्र (शुभ तथा पाप) ग्रहभी जलराशिके नवांश में हों तबतक वे वर्षाको करते हैं।

अखण्ड मण्डलश्चन्द्रो नाडीं यातो द्युचारिणः ।
यस्याभ्रचारिणा तेन चेद्युतो वृष्टिदो भवेत् ।।१२२।।

जिसग्रह की नाडी में पूर्णचन्द्रमा स्थित हो और उसी ग्रह से युक्त होतो वृष्टिदायक होता है।

वेधे मिथः पुंद्युसदोर्मरुद्वहेत्समन्ततः पुंयुवतिद्युचारिणोः ।
वृष्टिर्बुधेन्द्रैः कथिताऽथ दुर्दिनं नपुंसकाकाशगयोरुदाहृतम् ।।१२३।।

यदि दो पुरुषग्रहोंका परस्पर वेध होतो सर्वत्र वायु बहता है। पुरुष और स्त्री ग्रहोंका परस्पर वेध हो तो वर्षा होती है। एवं दो नपुंसक ग्रहोंका परस्पर वेध होतो केवल दुर्दिन (मेघाच्छादिताकाश) होता है।

पीयूषनाड्यां यदि कृत्तिकाभवस्तत्रस्थिताः सर्वविहङ्गमा यदा ।
एकार्णवा भूः परितः क्षगाज्जलैः किंवा त्रिवेदाक्षमिताः खगाः क्रमात् ।।१२४।।
भूत्र्यद्रिघस्राञ्जलदः प्रवर्षति जलाभिधायां द्युदलं दिनं तथा ।
दिनानि पञ्चाथ पयोऽत्र वर्षति यामं द्युखण्डं दिवसत्रयं किमु ।। १२५ ।।
नीराभिधायां जलदोऽमृतादिकत्रयेऽपि चेत्थं सकला नभःसदः ।
धृत्यंशुमत्षड्दिवसान् बहूदकं दिशन्ति कौ व्योमचरा दिनत्रयम् ।। १२६ ।।
सौम्याभिधायां परितो दिशन्ति कं वदेदनावृष्टिमघग्रहा यदा ।
याम्ये कुमध्येऽथ सदेवयाजकाविकर्क्षगौस्तः शशलाञ्छनासृजौ ।। १२७ ।।
वदन्ति वृष्टिं महतीं समन्ततो बुधास्तथैकर्क्षगतौ भपण्डितौ ।
सनिर्जरेज्यौ यदि तत्र चन्द्रयोगेन वृष्टिर्गदिता तदोत्तमा ।। १२८ ।।

यदि 'चन्द्रमा' अमृतनाडी में हो और उसी में सब ग्रह स्थित होंतो शीघ्रही समस्त भूमण्डल वर्षा से एक समुद्र के समान होता है। यदि अमृत नाडी में स्थित चन्द्रमा तीन ग्रहोंसे युक्त होतो एक दिन, चार ग्रहोंसे युक्त होतो तीन दिन एवं पाँच ग्रहोंसे युक्त होतो सात दिन पर्यंत वर्षा होती है। यदि जलनाडीमें स्थित चन्द्रमा तीन ग्रहोंसे युक्त होतो आधादिन, चार ग्रहोंसे युक्त होतो एकदिन एवं पाँच ग्रहोंसे युक्त होतो पाँच दिन पर्यंत वर्षा होती है। यदि नीरनाडी गत चन्द्रमा तीन गहों से युक्त होतो एक प्रहर, चार ग्रहों से युक्त होतो आधादिन एवं पाँच ग्रहों से युक्त होतो तीन दिन पर्यन्त वर्षा होती है। सब रव्यादी ग्रह अमृत नाडी में होंतो १८ दिन, जलनाडी में सब ग्रह होंतो १२ दिन एवं नीर नाडी में सब ग्रह होंतो पृथ्वी में ६ दिन पर्यंत बहुत जल को देते है। यदि सबग्रह सौम्य नाडीं में होंतो सर्वत्र तीनदिन पर्यंत जलको देते है। जब याम्य नाडी में पापग्रह स्थित हों तब अनावृष्टि (खण्ड वर्षा) होती है। एक राशि में स्थित हुए मङ्गल तथा चन्द्रमा यदि गुरूसे युक्त हो तो सर्वत्र बहुत वर्षा को करते है। एवं एक राशि में स्थित हुए बुध और शुक्र यदि गुरूसे युक्त हों एवं जिस दिन उन सें चन्द्रमा का योग हो उस दिन उत्तम वृष्टि होती है।

समीरचण्डानलनाडीकोपगा महामरुत्तापकृतोऽखिलग्रहाः।
स्वल्पोदकं वर्षणमम्बुयोगके महत्यपीन्द्वास्फुजितौ युतौ खलैः॥ १२९॥

यदि सम्पूर्णग्रह वायु, चण्ड और दहन नाडी में हो तो बहुत वात तथा ताप को करते है। चन्द्रमा और शुक्र यदि पापग्रहों से युक्त हों तो अधिक वर्षण के योग होते हुए भी स्वल्प जल वर्षण को करते है।

जलप्रदा निर्जलनाडिका ह्यपि योगेऽधिके यत्र शुभद्युचारिणम्।
तथैव नाडी सजला विजीवना योगे यदा सत्यधिकेऽघखौकसाम्॥ १३०॥

जहां अधिक शुभ ग्रहों का योग हो वहां निर्जल नाडी भी जल देनेवाली होती है। एवं अधिक पापग्रहों के योग होनेपर जल नाडी भी निर्जल होती है।

वक्रेच मार्गेऽस्तमने तथोदये किं सङ्क्रमे पुष्करगामिनो यदा।
कबन्धनाडी प्रगतास्तदा महावृष्टिप्रदाः स्युस्त्विति कोविदा विदुः॥ १३१॥

वक्र मार्ग अस्त वा उदयकाल में अथवा राशिसंङ्क्रमण काल में यदि भौमादि ग्रह जल नाडी मे हों तो बहुत वृष्टि देनेवाले होते है। इस प्रकार पण्डित जन कहते है।

'सप्तनाडीबोधकचक्रमिदम्'॥

शनिः	रवि	भौमः	गुरुः	शुक्रः	बुधः	चन्द्रः
कृत्ति.	रोहि.	मृगः	आर्द्रा	पुन.	पुष्य	आश्ले.
विशा.	स्वाती	चित्रा	हस्त.	उत्तराफा.	पूर्वाफा	मघा
अनुरा.	ज्येष्ठा	मूलम्	पूर्वाषा.	उत्तराषा.	अभिजि.	श्रवण
भरणी	अश्वि.	रेवती	उत्तराभा.	पूर्वाभा.	शतभि.	धनि.
चण्डा	वाता	दहना	सौम्या	नीरा	जला	अमृत
याम्या	याम्या	याम्या	मध्या	उत्तरा	उत्तरा	उत्तरा

त्रिनाडी से वृष्टिपरिज्ञान,

नाडीत्रयं दास्रमुखं भुजङ्गचक्रं विलेख्यं नवगोऽङ्कभानि ।
स्वर्गे तथा भूमितले क्षमायां यद्येकनाडीप्रयुताः समस्ताः ॥ १३२ ॥
सौम्या असौम्याः सपदि ध्रुवासा वृष्टिं तदानीं महतीं विदध्युः ।
असद्विहङ्गा यदि नाकनाडीसंस्थाः शुभा भूतलनाडिकास्थाः ॥ १३३ ॥
प्रजायते तत्र सदैव वृष्टिर्नपुंसकव्य.मानिवासयोगे ।
क्षिपेत्तदा वारिधिगं कबन्धं वातोऽबलाखेचरयोगतः स्यात् ॥ १३४ ॥
संयोगतः पञ्चजनैणनेत्रयोः सवीर्ययोर्वृष्टिरुदाहृता ततः ।
भयं मरुज्जं नरयोगतो भवेद्योगेऽङ्गनाषण्ढनभःसदोर्हिमम् ॥ १३५ ॥

सर्पाकारचक्र में अश्विन्यादि त्रिनाडी नक्षत्रों को लिखे । अश्विन्यादि नौ नौ नक्षत्र स्वर्ग, पाताल और भूमि में होते है । यदि सम्पूर्ण शुभ तथा अशुभ ग्रह एक नाडी में हों तो शीघ्र बहुत वृष्टि को करते हैं । पापग्रह स्वर्ग नाडी में हो और शुभग्रह पाताल्नाडी में हों तो नित्य वृष्टि होती है।दो नपुंसक ग्रहों का एक नाडी में योग होतो समुद्र गत जल को करते हैं । एकनाडी में दो स्त्री ग्रहों का योग होतो वायु बहता है । यदि बलवान् पुरुष और स्त्री ग्रह का योग हो तो वृष्टि होती है । दो पुरुषग्रहों के योग से वातजन्य भय होता है । एवं स्त्री और नपुंसक ग्रह के योग से तुषारपात होता है ।

समीरनाडीमुखगा नभोगाः कुर्वन्ति नाडीजनितं फलं ते ।
एकोऽपि दत्ते ग्रुवरः फलं तत्स्वनाडिकास्थो गगनोल्मुकाख्यः ॥ १३६ ॥
ददाति नाडीष्वखिलासु नाडीभवं फलं यत्र कुमारकाख्यौ ।
यदैकनाडीसहितौ सपापिपूज्यौ सुवृष्टिं सततं विधत्तः ॥ १३७ ॥

वायु प्रभृति नाडियों में प्राप्त हुए ग्रह नाडीजन्य फल को करते है । अपनी नाडी में स्थित हुआ एक ग्रह भी अपनी नाडीजन्य फल को देता है । सब नाडियों में मङ्गल नाडीजन्य फल को देता है । बुध शुक्र ये दोनों एक नाडी में स्थित होकर भौम गुरु से युक्त हों तो नित्य अतिवृष्टि को करते हैं ।

त्रिनाडिचक्रमिदम् ।

स्वर्गनाडीभानि	अश्वि.	आर्द्रा.	पुन.	उ. फा.	हस्त	ज्ये.	मू.	श.	पू. भा.
पातालनाडीभानि	भर.	मृग.	पुष्यः	पू. फा.	चित्रा.	अनु.	पू. षा.	ध.	उ. भा.
मर्त्यलोकनाडीभानि	कृति.	रोहि.	आश्ले.	मघा.	स्वाती	विशा.	उ. षा.	श्र.	रे.

रोहिणीचक्र से वृष्टि परिज्ञानः—

मेषार्कवासरभतो यमले समुद्रे
युग्मे तटे कुभृति रूपमथो द्वयं च ।

सन्धौ सदेह त्रिधियुग्गणना विधेया
भानां क्रमं पतति यत्र ततः फलं स्यात् ॥ १३८ ॥

इष्ट वर्ष की मेष सङ्क्रान्ति के दिन जो नक्षत्र हो उस से गिनकर २ नक्षत्र समुद्र में, २ नक्षत्र तट में एक नक्षत्र पर्वत में, २ नक्षत्र सन्धियों में लिखे। यहां नक्षत्रों की गणना अभिजित् सहित करे जहां रोहिणी पडे उस से वक्ष्यमाण शुभाशुभ फल कहना चाहिए !

विरिञ्चिधिष्ण्ये जलधिस्थलं गते तदाऽतिवृष्टिः समधान्यवर्द्धनम्।
ग्लौवल्लभाचेत्पतिता तटस्थले वृष्टिः प्रभूता कणवित्तवर्द्धनम् ॥ १३९ ॥
स्यात्खण्डवृष्टिः सकलान्ननाशनं शिलोच्चये शीतकरप्रिया पतेत्।
सन्धौ स्थिता ग्लौदयिता वदन्त्यनावृष्टिं तथा धान्यचितिं विचक्षणाः ॥ १४० ॥

यदि 'रोहिणी नक्षत्र' समुद्र में पडे तो बहुत वृष्टि और समस्त धान्यों की वृद्धि, तट प्रदेश में पड़े तो बहुत वृष्टि और कण धन की वृद्धि, पर्वत में पडे तो खण्ड वृष्टि और समस्त अन्नों का नाश एवं 'रोहिणी' सन्धियों में पड़े तो अनावृष्टि तथा धान्य की वृध्दि करती है।

'रोहिणीचक्रमिदम्'।

सन्धिः उ.भा. १ शृङ्गम् पू. भा. १ सन्धिः शतः १	तटम् रेवती १	समुद्रः अश्विः भर. २	तटम् कृत्ति. १	सन्धिः रोहिणी १ शृङ्गम् मृग. १ सान्धिः आर्द्रा १
तटम्, धनि, १				तटम्, पुन. १
समुद्रः अभिजित् श्रव. २				समुद्रः आश्लेषा पुष्यः २
तटम्, उ. षा. १				तटम्, मघा १
सन्धिः पू.षा. १ शृङ्गम् मू. १ सन्धिः हस्त १	तटम् अनु. १	समुद्रः विशा. स्वाती २	तटम् चित्रा १	सन्धिः पू. फा १ शृङ्गम् उ. फा. १ सन्धिः हस्त १

बिजली से वर्षा का परिज्ञान :—

पाशीन्द्रचान्द्रीशहरित्क्षणप्रभा वृष्टिप्रदा स्यादतिवेलमाशु सा ।
मरुद्धरित्था चपलापि वृष्टिकृत्स्याद्वृष्टिहृत्त्यन्यककुब्भवा तडित् ॥ १४१ ॥

पश्चिम, पूर्व, उत्तर और ईशान इन दिशाओं में विद्युत् (बिजली) दृग्गोचर हो तो शीघ्र नितान्त वृष्टिदायक होती है । वायव्य दिशा में विद्युत् दृग्गोचर हो तो भी वृष्टिदायक होती है । एवं अन्य दिशाओं में अर्थात् आग्नेय, दक्षिण और नैर्ऋत्य में विद्युत् दृग्गोचर हो तो वर्षा को हरण करनेवाली होती है ।

जलाढक के लक्षण:—

विस्तीर्णसञ्ज्ञं दशयोजनं च तथाऽऽयताख्यं शतयोजनं च ।
बुधैरपामाढकमेवमुक्तं येनानिशं वर्षति निर्जरेन्द्रः ॥ १४२ ॥

दश योजन विस्तीर्ण (फैला हुआ), सौ योजन आयत (लम्बा) इस प्रकार पण्डितजनों ने जल का आढक कहा है । जिस से नित्य देवराज वर्षता है ।

जलाढकानयन रीतिः—

कर्कं याते पतङ्गे क्रियतिमिनरयुग्गोगतेऽब्जे शताढं
सिंहे चापेऽर्द्धमेवं युवतिहरिणयोश्चेदशीतिर्घटेऽलौ ।
कुम्भे कर्के कलेशे गतवति रसगोसम्मितं काढकं तद्
गुण्यं दिक्षट्समुद्रैर्नखरपरिहृतं सिन्धुवगेलासु काढम् ॥ १४३ ॥

जिस दिन 'सूर्य' कर्क राशि में प्रवेश करे उस दिन मेष मिथुन वा बृष में 'चन्द्रमा' हो तो सौ आढक जल, सिंह वा धनु मे ' चन्द्रमा ' हो तो पचास आढक जल, कन्या वा मकर में चन्द्रमा हो तो अस्सी आढक जल, एवं तुला वृश्चिक कुंभ वा कर्क में चन्द्रमा हो तो छियानबे आढक जल वर्षता है । पूर्वागत जलाढकों को तीन स्थान में रखकर पृथक् पृथक् क्रम से १०, ६, ४ से गुणकर २० से भाग दे लब्ध क्रम से समुद्र, पर्वत और पृथ्वी में जलाढक जानने चाहिएँ ।

चन्द्रमा के वर्ण से वृष्टि का परिज्ञानः—

खे दृश्यते कुन्दपयोनिभो भपो यदा प्रसन्नो धवलद्युतिः शिवम् ।
करोति सोऽथाभ्रमुखे सुधाघृणिः प्रभाविहीनो यदि पूर्णिमातिथौ ॥ १४४ ॥
यद्वा विवर्णः किमु खण्डितः समलोकान्तकृत्स्यादरुणाब्जसन्निभः ।
मृगोन्नितो वह्निशिखानिभो महाभयं समन्तात्प्रभवेद् धराभृतः ॥ १४५ ॥

जब पूर्णिमा के दिन आकाश में ' चन्द्रमा ' कुन्दपुष्प के समान दुग्ध के समान प्रसन्न वा श्वेतकान्तिवाला दृग्गोचर हो तो वह जगत् के कल्याण को करता है । यदि पूर्णिमा के दिन आकाश के आरम्भ में अर्थात् क्षितिज पर 'चन्द्रमा' कान्तिरहित विवर्ण या खण्डित आकारवाला दृग्गोचर हो तो सब लोगों का नाश करनेवाला होता है ।

एवं पूर्णिमा के दिन 'चन्द्रमा' रक्तकमल के समान कान्तिवाला मृग (शश) चिन्ह से रहित वा अग्नि की शिखा के समान कान्तिवाला दृग्गोचर हो तो सर्वत्र राजा से अतिभय होता है।

खे कम्बुमुक्तादधिसन्निभः शशी सायं सदा मङ्गलमातनोत्यथो।
चञ्चत्सुवर्णाभिधचम्पकप्रभः कुर्याद्बलं कं विगदं धनव्रजम् ॥ १४६ ॥

यदि सायंकाल में 'चन्द्रमा' कम्बु (शङ्ख) मुक्ता (मोती) वा दधि (दही) के समान वर्णवाला दृग्गोचर हो तो नित्य मङ्गल को करता है। एवं देदीप्यमान सुवर्ण के समान वा चम्पक पुष्प के समान कान्तिवाला चन्द्रमा आकाश मे दृग्गोचर हो तो बल, जल आरोग्यता और धन के समूह को करता है।

समन्ततः साध्वसमस्रताम्रकभस्मानलाभः कुरुतेऽथ तापकम्।
मञ्जिष्ठरागारुणसन्निभस्ततः पिङ्गच्छविर्वह्निभयं नृपालये ॥ १४७ ॥

यदि सायंकाल मैं रक्त ताम्र भस्म वा अग्नि के समान कान्तिवाला चन्द्रमा आकाश में दृग्गोचर हो तो सर्वत्र भय को करता है। मंजीठ के राग के समान रक्त कान्तिवाला चन्द्रमा दृग्गोचर हो तो तापको करता है। एवं पिङ्गल कान्तिवाला चन्द्रमा राजभवन में अग्नि से भय को करता है।

करोति नृणां मरणं मृगाङ्कः कृष्णः शरीरः पशुपीडनं कौ।
नो वारिदा वर्षति वाथ कीरपक्षोपमो नश्यति सस्यराशिः ॥ १४८ ॥

यदि आकाश में कृष्णवर्ण वाला चन्द्रमा दृग्गोचर हो तो पृथ्वी में मनुष्योंका मरण, पशुओं को पीडा और मेघ वर्षा नहीं करता है। यदि आकाश में 'चन्द्रमा' तोते के पङ्ख के समान कान्तिवाला दृग्गोचर हो तो धान्य राशि का नाश करता है।

गौरप्रभो ग्लौरिभमण्डली तथा रक्तोऽसितोऽन्तः कुभृतोऽस्त्रघाततः।
धूमप्रभो रूक्षनिभो महाभयं न मङ्गलं सर्वत आमयव्रजः ॥ १४९ ॥

यदि सन्ध्याकाल में 'चन्द्रमा' पीत कान्तिवाला इभ (हस्ती) मण्डली ( ) के समान कान्तिवाला रक्त वा कृष्ण कान्तिवाला हो तो अस्त्रप्रहार से राजा का मरण होता है। यदि आकाश में धूम वा रूक्ष कान्तिवाला 'चन्द्रमा' दृग्गोचर हो तो महाभय, अमङ्गल और सर्वत्र रोग समूह दृग्गोचर होता है।

शीतांशोः प्रतिचन्द्रिका यदि भवेद्वामे च दक्षे यदा
पार्श्वाख्ये महतीह वृष्टिरुदिता धरित्रिरात्रं भयम्।
पक्षैकेण तथोदये दलमुखे नीलाम्बुदैरावृतो
ग्लौरन्येन सुसाध्वसं त्वतिसमिद् दोषो न मेघागमे ॥१५०॥

चन्द्रमा के वाम वा दक्षिण पार्श्व (भाग) में प्रतिचन्द्रिका दृग्गोचर हो तो तीन रात्रि पर्यन्त अतीव वृष्टि और एकपक्ष पर्यन्त भय होती है। पक्षारम्भ में जिस दिन चन्द्रमा का उदय हो उस दिन यदि 'चन्द्रमा' नीले मेघो से आवृत (आच्छादित) हो तो अन्य लोगों से बहुत भय और महायुध्द होता है। यदि उक्त लक्षणयुक्त चन्द्रमा वर्षा काल में दृग्गोचर हो तो दोषकारक नहीं होता है।

नात्युन्नतं नातिलघु क्षपापतेः शृङ्गद्वयं धातृतिथौ प्रदृश्यते ।
यदाऽभिरामं कुशलप्रदस्ततः शृङ्गं क्रमाद्दक्षिणवामभागयोः ॥१५१॥
नीचोन्नतं गच्छतु चेत्सुभिक्षकं निरामयत्वं धरणौ प्रजायते ।
अतोऽन्यथा दुष्टभयं नृणां क्षयं स्यात्खण्डवृष्टिर्नृपमण्डले समित् ॥१५२

यदि शुक्ल द्वितीया के दिन सायंकाल आकाश में चन्द्रमा के दोनो शृङ्ग न अति ऊंचे और न अति छोटे अर्थात् सुन्दर मध्यम आकार के दृग्गोचर हों तो कल्याणप्रद होते हैं । यदि चन्द्रमा के शृङ्ग क्रम से दक्षिण भाग में निम्नत्व और वाम भाग में उन्नतत्व को प्राप्त हों तो पृथ्वी में आरोग्यता तथा सुभिक्ष होता है और उक्त प्रकार से विपरीत हों तो दुष्टजनों से भय, मनुष्यों का नाश, खण्डवृष्टि और राजाओं में युध्द होता है ।

लाक्षाज्याशासृङ्निभः पङ्कजन्मबन्धूकाभः सन्ततं घोरयुद्धम् ।
वीरव्रातैर्भूपतीनां समन्तादातङ्कः खेऽन्तर्धनुर्गोक्षयं कौ ॥१५३॥

यदि आकाश में 'चन्द्रमा' लाक्षा (लाख) अग्नि वा रक्त के समान कान्तिवाला वा अरुण के समान कान्तिवाला दृग्गोचर हो तो नित्य वीरगणों का घोर युध्द और राजाओं के मध्य में सर्वत्र भय होता है। एवं आकाश के मध्य भाग में यदि इन्द्रधनु दृग्गोचर हो तो पृथ्वी में गायों की हानि होती है ।

शृङ्गद्वयं दैववशाद्विधोरधो वक्रं दिवि व्यक्तमिनास्तदिष्टके ।
पतङ्गसन्तापतनूनपाच्छतशिखाह्वयाभिर्विकलास्तनूभृतः ॥१५४॥
तले धरित्र्या विलपन्ति हाहाकारं समन्ताद्दिवि सौम्ययाम्या ।
रेखाऽऽयता पक्षमुखेऽमृतांशोः प्रदृश्यते चेद्यदि खण्डवृष्टिः ॥१५५॥
घोरं युद्धमिलाभृतां भुवि तदा शीतज्वरश्लेष्मणां
व्रातैरप्रगुणा भवन्ति मनुजास्त्रासं प्रजानां तथा ।
आकाशे यदि दृश्यते विधिवशाच्चन्द्रो द्विधास्याच्छुभं
विप्राणां शशभृत्त्रिधा प्रलयकृद्दानाद्गवां मङ्गलम् ॥१५६॥

यदि सूर्यास्त समय आकाश में चन्द्रमा के दोनों शृङ्ग दैववश नीचे के ओर बक्र (टेढे) दृग्गोचर हों तो सूर्य के प्रचण्ड प्रताप से तथा अग्नि की सौ शिखाओं से भूतल में मनुष्यगण विलाप तथा सर्वत्र हाहाकार करते हैं । एवं पक्षारम्भ के दिन आकाश में चन्द्रमा के उत्तर दक्षिण आयत (लम्बी) रेखा दृग्गोचर हो तो पृथ्वी में खण्डवृष्टि (अनावृष्टि), राजाओं का परस्पर घोर युध्द, मनुष्यगण शीतज्वर तथा श्लेष्म के समूह से व्याकुल और प्रजाजनों के लिय भयप्रद होता है । यदि आकामें दैववश दो चन्द्रमा दृग्गोचर हों तो ब्राह्मणों को मङ्गल करनेवाला होता है । एवं आकाश में तीन चन्द्रमा दृग्गोचर हों तो प्रलय करनेवाला होता है । गायों के दान करने से प्रजा का कल्याण होता है ।

सूर्य कान्ति से वृष्टि परिज्ञानः—

विराजतेऽर्को रजतेन्दुयुक्ताप्रख्योऽन्तरिक्षे द्वितयेऽयनेऽत्र ।
वदन्ति सस्यं बहुलं कबन्धं कुर्यात्कबन्धं सलिलोपमश्चेत् ॥१५७॥

उत्तर वा दक्षिण अयनारम्भ दिन के सूर्योदयकाल में रजत चन्द्र वा मुक्ता के सदृश कान्तिवाला 'सूर्य' आकाश में दृग्गोचर हो तो अन्न तथा बहुत वृष्टि होती है। एवं जल के समान कान्तिवाला सूर्य दृग्गोचर हो तो वर्षा को करता है।

रूक्षप्रभो दुष्टनरान्निहन्ति तदा महादाहमुषर्बुधाभः।
मृणालिनीशो यदि ताम्रकाभः शस्त्रोद्भवां भीतिमुदीरयन्ति ॥१५८॥

यदि अयनारम्भ दिन के सूर्योदयकाल में सूर्य की कान्ति रूक्ष हो तो दुष्टजनों को नाश करता है। यदि सूर्य की कान्ति अग्नि के समान हो तो बहुत दाह एवं सूर्य की कान्ति ताम्बे के समान हो तो शस्त्रजनित भय को कहते हैं।

उदेति पूषा द्युमुखे प्रवालारुणाब्जहेमच्छविरम्बु कुर्य्यात्।
सुनिर्मलाख्यं भवि सप्ततन्तुं सुखं जनानामथ लोकबन्धुः ॥१५९॥
दिवामुखे नीलमणिच्छविर्यदा तदा सतीला विकला विश्वम्भरा।
रोगैः समेताः सुजना भुवि प्रतिदिशं मनुष्या विलपन्ति हारवम् ॥१६०॥

प्रातःकाल में प्रवाल लालकमल वा सुवर्ण सदृश छविवाला 'सूर्य' उदय हो तो पृथ्वी में अतिनिर्मल जल, यज्ञ तथा प्रजाजनों के लिए सुख को करता है। यदि प्रभात काल में नीलमणि के समान कान्तिवाला 'सूर्य' उदय हो तो पृथ्वी विकल तथा जलहीन होती है एवं उत्तम पुरुष रोगों से युक्त और मनुष्य दशों दिशाओं में हाहाकार शब्द को करते है।

यदा पिशङ्गालिनिभो भुजङ्गमशार्दूलचौरानधिकौजसस्ततः।
इत्थं कबन्धं कुरुते प्रवालकप्रभो यदा रक्तनिभो महीभृताम् ॥१६१॥
युद्धेऽस्रधारां नृपसायकव्रजैर्भित्सकाभः किमु धूमसन्निभः।
निहन्ति तोयं वसुधाभुजां बलं पर्पीयदा कुन्दनिभः पुरोहितम् ॥१६२॥
हन्याद्यदा चम्पकपुष्पसन्निभो महीपसूनून्विनिहन्ति भानुमान्।
द्विधा त्रिधा तीक्ष्णकरस्य मण्डलं छिन्नं किमर्के परिदृश्यते यदा ॥१६३॥
दण्डो नृपाणां मरणं दिशेच्छशासृक्सन्निभश्चेदुदये दिनप्रणीः।
संदृश्यतेऽन्योन्यमिलाधिनाथयोर्युद्धं ततः शीतगुविम्बसादृशः ॥१६४॥
विनिर्मलो वा यदि कांस्यभाजननिभस्त्रिमूर्तीर्विकरः खगध्वगः।
भीतिप्रदोऽतीव विभाकरो यदोदये भवेद् बर्हिणचन्द्रिकोपमः ॥१६५॥
नगैरिवक्ष्मा परिमण्डिता तदा कबन्धचक्रेण नवाम्बुभृन्निभा।
रेखा द्युकृन्मण्डलमध्यगा यदा संलक्ष्यते दैववशाद्दरं लयः ॥१६६॥

जब प्रभात काल में कपिल कान्ति वा भ्रमर के समान कान्तिवाला 'सूर्य' उदय हो तो सर्प, शार्दूल तथा चोरों की अधिकता एवं वृष्टि को करता है। यदि सूर्योदय काल में सूर्य का विम्ब प्रवाल के समान वा रक्त के

समान दृग्गोचर हो तो युध्द में राजाओं के बाणजालों से रक्तधारा को प्रवाहित करता है। यदि विकृत कान्तिवाला या धूम के सदृश कान्तिवाला सूर्य उदयकाल में दृग्गोचर हो तो अवर्षण करता है एवं राजाओं की सेना का नाश करता है। कुन्द पुष्प के समान सूर्य उदय हो तो राजपुरोहित का नाश करता है। चम्पक पुष्प के समान कान्तिवाला सूर्य उदय हो तो राजकुमारों का नाश करता है। यदि सूर्य का मण्डल दो वा तीन प्रकार से छिन्न हो वा सूर्य में दण्ड देखता हो तो राजाओं का मरण करता है। यदि शश (मृग) के रक्त के समान कान्तिवाला सूर्य उदय हो तो राजाओं में परस्पर युध्द होता है। निर्मल चन्द्रबिम्ब के समान वा कांस्य पात्र के समान कान्तिवाला सूर्य उदय हो अथवा आकाश के मध्य में 'सूर्य' निस्तेज हो तो अतीव भयप्रद होता है। मयूर चन्द्रिका के समान कान्तिवाला सूर्य उदय होतो पृथ्वी पर्वतों के सदृश नरकबन्धों से परिपूर्ण होती है। यदि सूर्यमण्डल में दैववश नव मेघों के समान रेखा दृग्गोचर हो तो भय तथा मृत्यु को करता है।

यदाऽस्तकाले सविता सरन्ध्रः किं पाण्डरो देश इलापतिश्च।
विनाशमायाति तदीयदोषापनुत्तये विद्धवनं विदध्यात् ॥ १६७ ॥

जब सूर्यास्तकाल में सूर्य के बिम्बमें छिद्र दृग्गोचर हो अथवा सूर्य की पाण्डर कान्ति हो तो देश और राजा विनाश को प्राप्त होते है अतः उक्त दोष निवारणार्थ पण्डितजन वैदिक मंत्रों से हवन करे।

चैत्रादि मासों में वायु से वृष्टिका परिज्ञानः—

महाबलो याम्यभवश्चतुर्थ्यां मधोर्वलक्षस्य वहेत्पयोदः।
गच्छेद्यदैन्द्रिमुखमाश्विने चेद् वर्षान्वहं स्याच्छुचिशुक्लपक्षे ॥ १६८ ॥
चित्रातृतिथ्यां नहि चेत्कबन्धं स्यादूवृष्टिपूर्णा नभसि क्षमाह्वा।
गौरीतिथौ पूर्वभवो नभस्वान् वहेदिहाभ्राणि बिलोमगानि ॥ १६९ ॥
मेघा न मुञ्चन्ति महीतलेऽम्बु भाद्रेऽथ शुच्यर्जुनसर्पतिथ्याम्।
समीरणः सौम्यज ऊर्जमासे भूः सस्यपूर्णा महती च वृष्टिः ॥ १७० ॥

चैत्र शुक्ल पक्ष की चतुर्थी के दिन दक्षिण दिशा का वायु वहे और मेघ पूर्वादि दिशा को जाय तो आश्विन मास में प्रतिदिन वर्षा होती है। चैत्र शुक्ल द्वितीया के दिन यदि वर्षा न हो तो श्रावण में पृथ्वी जल से परिपूर्ण होती है। आषाढ शुक्ल तृतीया के दिन यदि पूर्व दिशा की ओर वायु वहे और मेघविपरीत जाँय तो भाद्रपद मास में पृथ्वी पर मेघ गण नहीं वर्षते। आषाढ शुक्ल षष्ठी के दिन यदि उत्तर की ओर वायु चले तो कार्तिक में बहुत वृष्टि और पृथ्वी अन्न से परिपूर्ण होती है।

आषाढवेधस्तिथितोऽहितिथ्यन्तमम्बुदो वर्षति लब्धवर्णाः
वदन्ति दुर्भिक्षमतीव वृष्ट्या समन्ततो व्याकुलतां तदानीम् ॥ १७१ ॥

आषाढ द्वितीया के दिन से षष्ठी पर्यन्त मेघ वर्षे तो अतिवृष्टि के कारण दुर्भिक्ष और चारों ओर व्याकुलता को कहते हैं।

आषाढ पूर्णिमा के दिन के प्रदोष कालीन वायुसे वृष्टि का परिज्ञानः—

आषाढ्या रजनीमुखे यदि वहेद्वातो वृषाशोद्भवो
ऽम्भोऽलं संसृजति क्षितौमुदं प्रायो धरित्रीभृतः ।
वातो मन्दजवोऽग्निकोणजनितो रात्र्या मुखे संवहे-
च्छोचिष्केशशिखाकुला वमति भूर्भस्मास्यतः सर्वतः ॥ १७२ ॥

आषाढ पूर्णिमा के प्रदोष काल में पूर्व दिशा का वायु चले तो पृथ्वी पर पर्याप्त वर्षा और प्रायः राजा के लिए बहुत हर्ष को करता है । यदि उक्त तिथि के प्रदोष काल में आग्नेय दिशा से उत्पन्न मन्दवेगवाला वायु चले तो अग्नि की शिखाओं से व्याकुल हुई भूमि अपने मुख से चारों ओर भस्म वमन करती है अर्थात् राख उगलती है ।

याम्याशोत्थित आशुगः प्रवति चेद्रक्षोजनन्यानने
मन्दाम्भःकणिकामतोऽत्र जनयन्भूमौ भयं वारिदः ।
रक्षःकोणभवोऽनिलो यदि वहेत्ताम्या मुखे तोयभृत्
तोयोनः परिलक्ष्यते प्ररुदतीवोर्व्यन्नहीना तदा ॥ १७३ ॥

यदि उक्त तिथि के प्रदोष काल में दक्षिण दिशा से उत्पन्न वायु वहे तो पृथ्वी में मेघगण अल्प जलकणों की वृष्टि और भय को करते हैं । एवं नैर्ऋत्य दिशा का वायु चले तो मेघ निर्जल और पृथ्वी अन्न से रहित होकर रोती सी दिखाई देती है ।

पाश्याशाभवमारुतो वहति भू रेण्वाः कणानुत्क्षिपन्
चेदाशूग्रजवोऽभितः क्षितिभुजां नाशं व्रजेदोर्बलम् ।
वायुर्वाति समीरकोणजनितः सायं धरा निर्मला
स्यान्नूत्नाम्बुदधारया फलमया विश्वम्भरायां द्रुमाः ॥१७४॥

यदि उक्त तिथिके प्रदोष काल में पश्चिम दिशा से उत्पन्न वायु चले तो पृथ्वी चारों ओर से शीघ्र अतीव वेग से धूली कणों को फेंकती है और राजाओं का भुजबल नाश को प्राप्त होता है । एवं उक्त तिथि के सन्ध्याकाल में वायव्य कोण से उत्पन्न वायु चले तो पृथ्वी निर्मल होती है और नव मेघों की जलधाराओं से पृथ्वी में वृक्ष फलमय होते हैं ।

तस्यास्ये शुचिपर्वणि प्रवहति ज्ञाशोद्भवो मारुतो
मन्देतिः क्षितिरम्बुसस्यसहिता भीदुःखहीना जनाः ।
यातेऽर्कक्षितिजं परं च पवनो वातीशकोणोद्भवः
साम्भोभूः सफलप्रसूनविटपा गावोऽतिदुग्धान्विताः ॥१७५॥

आषाढ पौर्णमासी की रात्रि के आरम्भ समय में यदि उत्तर दिशा से उत्पन्न मन्दगतिवाला वायु चले तो 'पृथ्वी' जल तथा अन्न से परिपूर्ण होती है और मनुष्यगण भय तथा दुःख से रहित होते हैं । एवं आषाढ की

पूर्णिमा के दिन सूर्य के पश्चिम क्षितिज को प्राप्त होते समय में यदि ईशान कोण जनित वायु चले तो 'पृथ्वी' जल से युक्त, 'वृक्ष' फलपुष्पों से युक्त और गायें बहुत दुग्ध से युक्त होती हैं।

पूर्वादि दिशागत मेघों से वृष्टि का परिज्ञान.—

पूर्वस्यां यदि वासरान्तसमयेऽभ्राच्छादितं पुष्करं
कैश्चित्पर्वतसन्निभैः करितनूप्रख्यैर्घनैः कैश्चन ।
नानाकारधरैर्मतङ्गजमितैर्धवैः शरैः पर्वतै-
र्वृष्टिः सद्य उदीर्य्यते धरणिभृन्मालेव संविस्तृतः ॥ १७६ ॥

सायं विदिशि वारिदो यदि भवेद् वृष्टिस्तृतीये दिने
स्युः शैला इव पाशभृद्दिशि दिनान्ते मेचकाभा घनाः ।
आदित्यास्तमिते तदा सपदि ते वर्षन्त्यवाच्यां हि स-
कोटीनारभवास्त्रिसायककुभृद्रात्रान्तरेऽम्भोभृतः ॥ १७७ ॥

किञ्चिद्वृष्टिविधायका हुतभुजो दिश्यम्बुदाः पुष्कल-
तापायाल्पजलप्रदाश्च निर्ऋतौ सन्तापदाः संस्मृताः ।
वर्षारोगकरा मरुद्दिशि घनाश्चेदुन्नताः सत्वरं
वर्षावातकरा उमेट्ककुभि कात्सौख्यप्रदा नारदाः ॥ १७८ ॥

सन्ध्या समय पूर्व दिशा की ओर यदि 'आकाश' मेघों से आच्छादित हो और उन मेघों में कोई पर्वताकार, कोई हस्ती के समान आकारवाले, कोई अनेक प्रकार के आकारवाले और कोई श्वेत हस्ती के समान आकारवाले हों तो शीघ्र पाँच वा सात दिन में वर्षा होती है। सन्ध्याकाल में उत्तर दिशा की ओर यदि पर्वतमाला के समान मेघ विस्तृत हो तो तीसरे दिन वर्षा होती है। सन्ध्यासमय यदि पश्चिम दिशा में पर्वत के समान नीले वर्ण के मेघ हों तो सूर्यास्त होने के अनन्तर 'मेघ' शीघ्र जल वर्षाते हैं। सन्ध्यासमय यदि दक्षिण दिशा में इन्द्रधनु सहित जलजन्य मेघ दृग्गोचर हों तो तीन पाँच वा सात रात्रि के अन्तराल में वे मेघ किञ्चित् जल वर्षाते हैं। आग्नेय दिशा के मेघ बहुत ताप करनेवाले और स्वल्प वृष्टिप्रद होते हैं। नैर्ऋत्य दिशा के मेघ सन्ताप देनेवाले और रोग करनेवाले होते हैं। वायव्य दिशा की ओर यदि मेघ उन्नत हों तो शीघ्र वर्षा तथा वायु करनेवाले होते हैं। एवं ईशान दिशा के मेघ जल से सुख देनेवाले होते हैं।

स्त्री पुरुष नक्षत्र गत सूर्य चन्द्र से वृष्टि का परिज्ञानः—

कपालभृद्भाद्दश तारकाः स्त्रियस्तिस्रो बिडौजोऽनलभान्नपुंसकाः ।
तथा पुमांसो निर्ऋतेश्चतुर्दश प्रकीर्त्तिता गर्गपराशरादिभिः ॥ १७९ ॥

आर्द्रा से दश नक्षत्र अर्थात् आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा और स्वाती ये नक्षत्र स्त्री संज्ञक हैं। विशाखा से तीन नक्षत्र अर्थात् विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये नपुंसक हैं। एवं मूल से चौदह नक्षत्र अर्थात् मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा ये पुरुष नक्षत्र हैं। इस प्रकार गर्गपराशरादि महर्षियों ने कहा है।

रवेर्भवेशावसरे त्विषांपतिविधू उभौ भे भवतां च यादृशे।
वाच्यं फलं तद्वशतो नरस्त्रियोर्वृष्टिः प्रदिष्टा महती स्त्रियोर्द्वयोः॥ १८०॥

दुर्वासरं पुङ्गलयोरवर्षणं भवेन्नपुंसाभिधयोः समीरणः।
स्त्रीक्लीवयोर्वर्षणमल्पमीरितं नपुंसपुंसोः प्रभवेदवर्षणम्॥ १८१॥

सूर्य के नक्षत्र प्रवेश काल में सूर्य और चन्द्रमा ये दोनों जैसे (स्त्री पुरुष वा नपुंसक) नक्षत्र में हों उनके द्वारा फल कहना चाहिए। यदि उक्त समय में सूर्य और चन्द्रमा इन दोनोंके मध्यमें एक पुरुष नक्षत्र में हो और दुसरा स्त्री नक्षत्र में हो तो बहुत वृष्टि होती है। यदि उक्त समय में वे दोनों स्त्री नक्षत्रों में हों तो दुर्दिन, पुरुष नक्षत्रों में हों तो अवर्षण, नपुंसक नक्षत्रों में हों तो केवल वायु बहे, स्त्रीनपुंसक नक्षत्रों में हों तो अल्पवर्षा एवं पुरुष नपुंसक नक्षत्रों में हों तो अवर्षण होता है।

सूर्य नक्षत्र प्रवेश काल के वारादि से वृष्टिका ज्ञानः—

सद्वासरे भास्करधिष्ण्यचारः शुभप्रदोऽस्त्राकिंपपीदिनेषु।
न सन् विधौ वा हरिजे स मत्स्ये कर्के मृगेऽम्भो बहु गोघटाश्वे॥ १८२॥

जलार्द्धमात्रं धट्वृश्चिकाम्बुसञ्ज्ञं तु शेषाण्यजलानि भानि।
श्रवोमघाश्वीन्दुसमीरजैवपौष्णानि कीलालदसञ्ज्ञकानि॥ १८३॥

तत्रोष्णरश्मिर्विशते प्रवर्षते रवेर्भवेशेऽम्बुभमाश्रिते विधौ।
त्रिकोणकेन्द्रे कविनेक्षितान्विते पयःप्रदाः स्युः सकला वलाहकाः॥ १८४॥

यदि शुभ (चन्द्र बुध गुरु शुक्र) वारों में सूर्य नक्षत्र चार हो तो शुभफलदायक एवं भौम, शनि और रविवार में सूर्यनक्षत्र चार हो तो अशुभ फलप्रद होता है। मीन कर्क वा मकर के चन्द्रमा में वा उक्तराशि के लग्न में सूर्य नक्षत्र प्रवेश हो तो बहुत वृष्टि होती है। एवं वृष कुंभ वा धनु में अर्द्ध वृष्टि, तुला वा वृश्चिक में केवल वृष्टिका आभासमात्र और शेष राशियों में अवर्षण होता है। श्रवण, रेवती, स्वाती, अश्विनी, मघा, मृगशिरा और पुष्य ये मेघ नक्षत्र हैं। यदि उक्त नक्षत्रों में सूर्य प्रवेश करे तो वृष्टि होती है। सूर्य नक्षत्र प्रवेश काल में यदि चन्द्रमा जलराशि में स्थित होकर केन्द्र वा त्रिकोण में हो और शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो समस्त मेघगण जलप्रद होते हैं।

चन्द्र सूर्य नक्षत्रगत सूर्य चन्द्र से वृष्टि परिज्ञानः—

बुध्न्याद् द्वयं पञ्चकमीशभाज्जलाच्चतुष्कमश्वात्त्रयमिन्दुतारकाः।
विवस्वतोऽन्याः पवनः पपी पपी वर्षेद् घनोऽर्केन्दुयुतौ न चान्यथा॥ १८५॥

उत्तरा भाद्रपदा से दो नक्षत्र, आर्द्रा से पाँच नक्षत्र, पूर्वाषाढा से चार नक्षत्र, और अश्विनी से तीन नक्षत्र ये चौदह चन्द्रमा के नक्षत्र हैं और शेष तेरह नक्षत्र सूर्य के हैं। यदि सूर्य तथा चन्द्र ये दोनों सूर्य के नक्षत्र में हों तो केवल वायु बहती है। एवं सूर्य और चन्द्रमा ये दोनों परस्पर एक दूसरे के नक्षत्र में हों वा अपने अपने नक्षत्रमें हों तो वृष्टि होती है। यदि उक्तप्रकार से विपरीत हो अर्थात् वे दोनों चन्द्र नक्षत्र में हों तो वृष्टि नहीं होती है।

समस्त वर्षा काल में वृष्टि योगः—

चण्डातपो गवि घटे पवनः प्रचण्डो-
ऽभ्राडम्बरो झष इने करका क्रियेऽर्के ।
नक्रे रवौ प्रतिदिनं तुहिनागमोऽर्क-
स्तिष्ठेत्स्त्रियां हि भुवि वर्षति तावदम्बु ॥ १८६ ॥

वृष के सूर्य में प्रचण्ड ताप, कुंभ के सूर्य में प्रचण्ड वायु, मीन के सूर्य में मेघोंका आडम्बर, मेषके सूर्यमें करका (ओले) पड़े और मकरके सूर्यमें तुषार (बर्फ वा पाला) पड़े तो जबतक सूर्य कन्याराशि में रहेगा तबतक पृथ्वीपर वर्षा होगी ।

वर्षाकाल में अल्पवृष्टि योगः—

शुक्रे न चण्डक इनो हिमवर्षणं न
माघेऽथ वृष्टिरहितं खमिनोऽभ्रपूर्णः ।
चैत्रेऽथ राध उपलस्य घनस्य नैव
पातोऽल्पवृष्टिरुदिता जलदागमे ज्ञैः ॥ १८७ ॥

ज्येष्ठ में प्रचण्ड सूर्य न तपा हो, माघ में तुषार (वर्फ वा पाला) न पड़ा हो, चैत्र में आकाश वृष्टिरहित हो और सूर्य मेघों से पूर्ण हो एवं वैशाख में बहुत उपल (ओले) न पड़े हों तो वर्षा काल में अल्पवृष्टि कहनी चाहिये ।

वर्षाकाल में अवर्षण के योगः—

प्रावृट्कालेऽर्कासृजावेकभस्थौ हेलेरग्रेंऽशादिना क्षोणिजो वा ।
दैत्यर्त्विग्ज्ञावेकराशिं प्रयातौ तन्मध्यस्थो भास्करो वारसूरी ॥ १८८ ॥
चातुर्मास्ये त्वेकभस्थौ किमुग्रैर्दृष्टो युक्तोऽहिर्ध्वजो वा घटस्थः ।
सिंहस्थो वा दुष्कृतैः शुक्रलग्नसंस्थैरेते वृष्टिरोधस्य योगाः ॥ १८९ ॥

वर्षाकाल में सूर्य मङ्गल एक राशि में हों और मङ्गल अंशों के द्वारा सूर्य से आगे हो अथवा शुक्र बुध एक राशि में हों और उन दोनों के अन्तराल में सूर्य हो अथवा वर्षाकाल में मङ्गल गुरु एक राशि में हों अथवा राहु वा केतु यदि कुम्भ में वा सिंह में स्थित होकर पापग्रहों से दृष्टयुक्त हों अथवा प्रश्नलग्नगत शुक्र राशि में पापग्रह हों तो ये वृष्टि अवरोध के योग हैं । अर्थात् उक्त योगों के होनेपर वर्षा नहीं होती है ।

यस्मिन्मासे त्वाष्ट्रे वाते द्वीशे धिष्ण्ये वृष्टिर्न स्यात् ।
तस्मिन्मासे निःकिलाला मेघाः सत्त्वेषा गर्गोक्तिः ॥ १९० ॥

जिस मास में चित्रा, स्वाती और विशाखा इन नक्षत्रों में वर्षा न हो उस मास में मेघ निर्जल होते हैं । यह श्रीमहर्षि गर्गजीका वचन है ।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वे जोशीत्युपाह्व पं. चक्रधरभट्टकृत
भाषाटीकोदाहरणोपेते वृष्टिप्रकरणमेकचत्वारिंशमवसितम् ।

अथ

अर्घप्रकरणं प्रारभ्यते।

मेष राशि के द्रव्यः—

स्यादोषधीनां स्थलसम्भवानां वस्त्राविकाणां कुतुपाभिधानाम्।
मसूरगोधूमसुवर्णरालयवाभिधानामधिनायकोऽजः॥ १॥

स्थल में उत्पन्न होनेवाली औषधि, भेड़ तथा बकरी की ऊन के वस्त्र, मसूर, गेहूं, सुवर्ण, राल तथा जौ इन वस्तुओं का स्वामी मेष राशि है।

वृष तथा मिथुन राशि के द्रव्यः—

शाल्यंशुकानां यवकासराणां प्रसूनगोधूमगवां पतिर्गौः।
पतिर्नृयुक् छारदधान्यवल्लीशालूककार्पासकसञ्ज्ञकानाम्॥ २॥

शाली (साठी), वस्त्र, जौ, महिष, पुष्प, गेहूं तथा बैल इन वस्तुओं का स्वामी वृष है। शरद् ऋतु के सब अन्न, लता (द्राक्षादि लता), शालूक (कमल मूल) तथा कपास इन वस्तुओं का स्वामी मिथुन राशि है।

कर्क तथा सिंह के द्रव्यः—

कर्कः पतिः कोद्रवपत्रचोचरम्भारुहाकन्दफलाख्यकानाम्।
सिंहो रसानां तुषधान्यसिंहाद्यसृग्धराणां च गुडस्य नाथः॥ ३॥

कोद्रव (कोदों), पत्र (तेजपत्र), चोच (दालचीनी), रम्भा (केला), रुहा (दूब) कन्द फल (गुञ्जन या गाजर) इन वस्तुओं का स्वामी कर्क राशि है। रस, तुषधान्य (भुसीवाले अन्न) सिंहादियों की त्वचा (छाल) और गुड इन सब वस्तुओं का स्वामी सिंह राशि है।

कन्या तथा तुला के द्रव्यः—

निष्पावगोधूमकलायकुल्थमुद्गातसीनामधिपा कुमारी।
यवस्य माषस्य च सर्षपस्य गोधूमकस्याधिपतिस्तुलाभृत्॥ ४॥

निष्पाव (राजमाष वा श्वेतशिम्बिधान्य), गोधूम (गेहूं), कलाय (मटर), कुलत्थ (कुलथी वा गथ), मुद्ग (मूंग), अतसी (अलसी), इन का कन्या स्वामी है। यव (जौ), मास (उडद), सर्षप (सरसों), गोधूम (गेहूं) इन का तुला स्वामी है।

वृश्चिक तथा धनू राशि के द्रव्यः—

रसालकालायससैक्यकानां छागाविकानामधिपोऽलिनामा ।
धनुर्धरो धान्यतिलास्त्रमूलवासोहयानां लवणस्य नाथः ॥ ५ ॥

रसाल (ऊख), कालायस (लोहा), सैक्य (आग से सेके जानेवाले पदार्थ) बकरी तथा भेड़ इन का वृश्चिक स्वामी है । धान्य, तिल, शस्त्र, मूल (कन्दमूल), वस्त्र, घोड़ा और लवण (नमक) इन का स्वामी धनू राशि है ।

मकर तथा कुम्भ राशि के द्रव्यः—

सुवर्णसैक्येक्ष्वसितायसां द्रुगुल्मादिकानां मकरोऽधिनाथः ।
कजस्य पुष्पस्य फलस्य चित्ररूपस्य रत्नस्य घटोऽधिभूः स्यात् ॥ ६ ॥

सुवर्ण (सोना), सैक्यान्न, इक्षु (ऊख), लोह, वृक्ष तथा गुल्मादियों का स्वामी मकर राशि है । जलजन्य पुष्प तथा फल एवं विचित्र रूपवाले रत्न इन का स्वामी कुम्भ राशि है ।

मीन राशि के द्रव्यः—

अनेकरूपाणि कपालजानि रत्नानि वज्राणि विलारजानि ।
स्नेहानि कीलालभवानि चैषामधीश्वरः स्यात्पृथुरोमराशिः ॥ ७ ॥

अनेक प्रकार के कपालजन्य रत्न, वज्र (हीरा) विसारज (मछलियों से उत्पन्न वस्तु) स्नेहपदार्थ (तेलइन-घृततैलादि), जलजन्य इन का स्वामी मीन राशि है ।

गोचरगत ग्रहों के वश से राशियों के द्रव्यों का सुलभत्व तथा दुर्लभत्वः—

राशेरिज्योऽर्थायधीखास्तभाग्याम्बुस्थो ज्ञश्च ध्यायखार्थाष्टमस्थः ।
वृद्धिं कुर्याद्भोऽस्तरुग्गो विदध्याद्धानिं भेष्वन्येषु वृद्धिं प्रकुर्यात् ॥ ८ ॥

एधां प्रकुर्युश्चितिगा असन्तो हानिं विदध्युस्त्वितरेषु भेषु ।
सोर्ज्जः खलो यद्भवनस्य पीडास्थानोपयातः कथितस्य तस्य ॥ ९ ॥

द्रव्यस्य वै दुर्लभता महार्घता स्याद्भस्य यस्येष्टगतः शुभग्रहः ।
द्रव्यस्य तस्येह समर्घता तथा स्यात्सौलभं सांहितिकैरिति स्मृतम् ॥ १० ॥

जिस राशि से २, ४, ५, १०, ११, ९, ७ स्थान में ' गुरु ' स्थित हो तो उस के पूर्वोक्त द्रव्य की वृद्धि करता है । जिस राशि से २, ११, ५, १०, ८ स्थान में ' बुध ' स्थित हो तो उस के पूर्वोक्त द्रव्य की वृद्धि करता है । जिस राशि से ७, ६ स्थान में ' शुक्र ' स्थित हो तो उस के पूर्वोक्त द्रव्य की हानि (महार्घता) करता है और शेष १, २, ३, ४, ५, ८, ९, १०, ११, १२, स्थान में ' शुक्र ' हो तो उस के द्रव्य की वृद्धि (समर्घता) करता है । एवं जिस राशि से उपचय (३, ६, १०, ११) स्थान में ' पापग्रह ' (र. मं. श. रा. के.) स्थित हों तो उस के पूर्वोक्त द्रव्य की वृद्धि करते हैं और शेष १, २, ४, ५, ७, ८, ९, १२ स्थान में उस के

द्रव्य की हानि करते हैं। जिस राशि के पीडास्थान (१, २, ४, ५, ७, ८, ९, १२) में 'बलवान् पापग्रह' स्थित हों उस के पूर्वोक्त द्रव्यका दुर्लभत्व (महार्घ्य मूल्यवृद्धि वा महंगाई) करते हैं। एवं जिस राशि के इष्ट स्थान में शुभग्रह (चं. बु. बृ. शु.) स्थित हों उसके द्रव्य की वृद्धि (सुलभता सामर्घ्य मूल्यह्रास वा सस्ताई) करते हैं।

राकानाथो द्वादशात्मोत राशौ राशौ यस्मिन् संयुतः स्वाधिमित्रैः।
संदृष्टश्चेद् द्रव्यलाभप्रदोऽयं तत्र प्रोक्तः शास्त्रविद्भिः पुराणैः ॥ ११ ॥

जिस जिस राशि में 'चन्द्रमा' अथवा 'सूर्य' स्थित हो यदि वह अधिमित्र ग्रहों से दृष्ट हो तो प्राचीन पण्डित जनों ने द्रव्यलाभदायक कहा है।

सद्योऽर्घवृद्धिकर उत्तमदृष्टयुक्तः
पूर्णः शशीनयुगुतोग्रसमेतदृष्टः।
अर्घं हिनस्ति किमिनः प्रतिराशियातान्
भावान् समीक्ष्य कथयेत्सदसत्फलं सन् ॥ १२ ॥

'सम्पूर्ण (पूर्णिमान्तकालीन) चन्द्रमा' अथवा 'सूर्य युक्त (दर्शान्तकालीन) चन्द्रमा' यदि शुभग्रह से दृष्ट और युक्त हो तो शीघ्र अर्घ (मूल्य वा भाव) वृद्धि करनेवाला होता है। यदि उक्त कालीन 'चन्द्रमा' पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो अर्घ (मूल्य वा भाव) को नाश (सामर्घ्य) करता है। एवं पण्डितजन चन्द्रमा के समान सूर्य के प्रत्येक राशिगत भावों को देखकर शुभाशुभफल (अर्घ की वृद्धि तथा हानि) को कहे।

ग्रह द्रव्य परिज्ञान —

गन्धस्नेहरसाधिपो ग्रहपुषः स्वामी रसानां शशी
रक्ताङ्गश्चवलाभिधस्य दयितः कोशाख्यधान्यस्य च।
श्यामाङ्गो द्विदलप्रभुः सुरगुरुः पीताभधान्येश्वरः
सर्पिःशालियवेक्षुहेमसुमनस्स्वामी च तज्ज्ञैः स्मृतः ॥ १३ ॥

गन्ध (सुगन्धित द्रव्य), स्नेह पदार्थ (तैल घृत वा तिलहन) तथा रसों का स्वामी 'सूर्य' है। एवं रसों का स्वामी 'चन्द्रमा' है। चवल ( ) और कोशधान्य ( ) का स्वामी 'मङ्गल' है। द्विदल (दलिहन या दाल) का स्वामी 'बुध' है। पीत धान्य (पीले वर्ण के अन्न) घृत, शाली (साठी) जौ, ऊख, सुवर्ण और गेहूं इन सब वस्तुओं का स्वामी 'गुरु' है।

प्राणिप्रभुः सस्यपतिर्मघाभूरथो तिलानां सकलासितानाम्।
स्याकोद्रवाणां लवणस्य नाथो माषस्य कङ्गोर्नलिनीशजन्मा ॥ १४ ॥

समस्त जीव तथा अन्न का स्वामी 'शुक्र' है। तिल, समस्त नील वर्ग के पदार्थ, कोद्रव (कोदों), लवण (नमक), माष (उड़द), कङ्गु (कङ्गुनी) इन सब वस्तुओं का स्वामी 'शनि' है।

प्रश्न लग्न के वश से समर्घ महार्घ परिज्ञान. —

विक्रेता भवभावपः पुरविभुः क्रेता तथैवं विधे
नूनं सत्यनुयोगके कृत इदं गृह्ण यई वस्तु चेत्।

होराख्या बलशालिनी यदि तदा सङ्गृह्यते यत्ततः
प्रष्टुर्लाभ उदीर्य्यते भवगृहे ययौजसा संयुते ॥ १५ ॥

विक्रीणाम्यमुकं च वस्त्विति सति प्रश्ने कृते पृच्छतो
विक्रेतव्यमिह क्रयाणकमतो लाभो भवेन्निश्चितम् ।
ग्राह्यं वस्तु तदा यदोदयपतिः पश्येद्विलग्नालयं
न ग्राह्यं विपरीततोऽथ बलवान्यावत्तनौ तिष्ठति ॥ १६ ॥

तावत्सन् कथयेत्समर्घमुदयं यावद्बलप्रोज्झितं
तावच्चैव महार्घमङ्गभवनं सन्नाथदृष्टान्वितम् ।
सप्राणं तदुदाहृतं यदि पुरे प्राणप्रयुक्ते मतं
सामर्घ्यं घनभे बलेन रहिते ज्ञेयं महार्घं तदा ॥ १७ ॥

यदि 'प्रष्टा' (प्रश्नकर्त्ता वा पूछनेवाला) अमुक वस्तु को खरीदना चाहता हूं ऐसा प्रश्न करे तो उस समय जो लग्न वर्त्तमान हो उसका स्वामी क्रेता (खरीदनेवाला) और लाभ भाव का स्वामी विक्रेता (वेचनेवाला) जानना चाहिए। यदि वर्त्तमान लग्न राशि बलवान् हो तो जो क्रयाणक (खरीदी हुई वस्तु) हो उससे प्रष्टा को 'लाभ' होता है। यदि प्रष्टा (पूछनेवाला) अमुक वस्तु को वेचना चाहता हूं ऐसा प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न से जो एकादश स्थान हो यदि वह बल से युक्त हो तो बेचने योग्य क्रयाणक को वेचने से अवश्य 'लाभ' होता है। जब लग्नेश लग्नको देखता हो तब वस्तु का संग्रह करना चाहिए। जिस लग्न में लग्नेश बलवान् न हो उसमें वस्तु का संग्रह न करे। जबतक 'लग्न बलवान् ग्रह से युक्त हो तबतक वस्तु की समर्घता (मूल्यह्रास वा सस्ताई) और जब तक 'लग्न' निर्बल हो तबतक महार्घ (मूल्यवृद्धि वा महंगाई) कहे। यदि 'प्रश्न लग्न' शुभग्रह तथा अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो तो बलवान् जानना चाहिए। यदि 'लग्न' बलवान् हो तो वस्तु का सामर्घ्य और लग्न निर्बल हो तो वस्तु की महार्घता को कहे।

सामर्घ्यमूर्ज्जै रहिते निधानपे प्राणैर्युते तत्र महार्घता भवेत् !
चतुष्टयेशस्य गृहं विलग्नभं सद्युक्तदृष्टं प्रबलं तदीरितम् ॥ १८ ॥
बलोज्झितं व्यत्ययतो यदाङ्गभं निर्वीर्य्यमीशाधिबले बलान्वितम् ।
किञ्चित्प्रदिष्टं पुरगेऽङ्गपे बलाधिक्ये तदिष्टं बलवद्वपुर्गृहम् ।

यदि प्रश्नकालीन लग्न से द्वितीय स्थान का स्वामी निर्बल हो तो क्रयाणक समर्घ और द्वितीयेश बलवान् हो तो क्रयाणक महार्घ होता हैं। यदि केन्द्र स्थान के स्वामी की राशि प्रश्न लग्न में हो और वह शुभग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो 'लग्न' विशेष बलवान् और उक्त प्रकार से विपरीत हो तो 'प्रश्न लग्न' निर्बल जानना चाहिए। जब 'लग्न' स्वयं निर्बल हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लग्न' किञ्चित् बलवान् कहा है। यदि 'लग्नेश' अधिक बली होकर लग्न में हो तो वह इष्ट (शुभ) बली लग्न होता है।

प्राप्तिप्राप्तिपती अतीव बलिनौ ज्यौतिर्विदा वस्तुनो
वेद्या तत्र महार्घता यदि तयोर्निर्वीर्य्ययोर्वस्तुनः ।

सामर्थ्यं यदि मिश्रितेह समता स्वर्क्षे प्रपूर्णं बलं
पादोनं हितभे दलं समगृहे पादं बलं वैरिभे ॥ २० ॥

लग्न से एकादशभाव में जो राशि हो वह और उसका स्वामी यदि ये दोनों अत्यन्त बली हो तो क्रयाणक वस्तु की महार्घता, वे दोनों निर्बल हो तो समर्घता और मिश्र बली हों तो समानता होती है। यदि 'ग्रह' अपनी राशि में वा उच्चराशि में हो तो 'पूर्णबली' होता है। अधिमित्र तथा मित्र राशि में तीन चरण बल, समग्रहकी राशि में अर्द्धबल एवं शत्रु राशि में एकपादबल होता है।

महार्घकं वाथ समर्घकं मम वदामुकं वस्त्वनुयोगके कृतिन्!।
सौम्यत्वमेव प्रतिप्राप्यते नभोऽधिवासिना येन खगः स यावतः ॥ २१ ॥

मासांस्तनोः शोभनतां प्रगच्छतु मासान्समर्घं प्रकरोतु तावतः।
लग्नेश्वरश्चोद्गमगः शुभग्रहौ तौचेत्फलं तादृशमत्र चिन्तयेत् ॥ २२ ॥

हे पण्डित! मेरी अमुक वस्तु की महार्घता वा समर्घता को कहो, प्रष्टा के ऐसे प्रश्न करने पर पण्डित को चाहिए की जिस ग्रहके कारण लग्नको शुभत्व प्राप्त हुआ हो वह ग्रह जितने मास तक लग्नको शुभत्व प्रदान करे उतने ही मास पर्यन्त उस वस्तु की समर्घता को कहे। यदि लग्नेश और लग्नगत ये दोनों ग्रह शुभ हों तो यहाँ उक्त फल का विचार करे।

अथाशुभोऽसौ परिचिन्तनीयस्त्वयं कियद्भिर्दिवसैः पुरस्य।
सुसौम्यभावं प्रविधास्यतीह विनिश्चितं सन्त इति ब्रुवन्ति ॥ २३ ॥

यदि लग्न का स्वामी वा लग्न में पापग्रह हो तो वह लग्न को कितने दिनतक सबलत्व करेगा। इसप्रकार पण्डितजन निश्चित विचार करके समर्घ महार्घ को कहें।

मासा अहोभिः परिवेदितव्यास्तावत्प्रमाणैः किल माससञ्ज्ञैः।
तद्वस्तुनो गाणितिकैः पुराणैः समर्घता संप्रतिपादनीया ॥ २४ ॥

पूर्वोक्त सामर्थ्य विचार से जितने दिन तक लग्न का सौम्यभाव (शुभत्व) होगा उतने ही मासपर्य्यन्त पण्डितजनों ने उस वस्तु की समर्घता कहनी चाहिए।

न युक्तदृष्टे विभुनोदयेऽधिष्ठातुर्बलं वस्तुन आर्य्य! विद्धि।
सतीश्वरे वस्तुन ओजसोने तनोर्बलं तत्पतिवीर्य्यमेव ॥ २५ ॥

क्रय वा विक्रय प्रश्न में यदि 'लग्न' अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट न हो तो उस वस्तु का जो ग्रह स्वामी हो उस के बल का विचार करे। यदि वस्तु का स्वामी निर्बल हो तो लग्न के स्वामी के बल को लग्न का बल जानना चाहिए।

क्रयाणकानामनुयोगकाले महात्मभिः शोभनता प्रवेद्या।
समर्घता सौर्य्ययुतेऽङ्गगेहे महार्घतैवं सहसा विमुक्ते ॥ २६ ॥

क्रय विक्रय प्रश्न में यदि प्रश्न कालीन लग्न बलवान् हो तो पण्डित जनों ने उस वस्तु की समर्घता जाननी चाहिए । यदि प्रश्न लग्न निर्बल हो तो उस वस्तु की महार्घता जाननी चाहिए ।

लग्न के सबलत्व निर्बलत्व का परिज्ञान:—

यदोद्गमे निर्मलवीक्ष्यमाणे स्वभर्तृदृष्टे किमु भव्ययुक्ते ।
चतुष्टये चारुखगान्विते वा सप्राणमङ्गं परथा निरोजः ॥ २७ ॥

जब प्रश्न कालीन लग्न शुभग्रहों से अथवा अपने स्वामी से दृष्ट हों अथवा शुभग्रहों से युक्त हो अथवा प्रश्न काल के लग्न से जो केन्द्रगत राशि हों उन में शुभग्रह हों तो 'प्रश्न लग्न बलवान्' होता है । यदि उक्त प्रकारसे विपरीत हों तो 'प्रश्न लग्न निर्बल' होता है ।

मतान्तर से क्रय विक्रय का परिज्ञान:—

लग्नं तथा लग्नपतिः क्रयी मत आयो य आयाधिपतिः स विक्रयी ।
विलग्नलग्नेश्वरयोः सवीर्य्ययोर्लाभो धनस्य क्रयिणो भवेत्तदा ॥ २८ ॥

लग्न और लग्नेश 'क्रेता' (खरीदने वाला), लाभ और लाभेश विक्रेता (बेचनेवाला) जानना चाहिए । लग्न और लग्नेश के बलवान् होने पर क्रेता को धनका लाभ होता है ।

सप्राणयोर्लाभभलाभनाथयोर्धनाप्तिका विक्रयिणस्तनूभृतः ।
इमे समस्ता बलसंयुता यदा प्राप्तिर्धनानामुभयोरुदाहृता ॥ २९ ॥

एवं लाभ और लाभेश ये दोनों बलवान् हों तो विक्रेता को धनकी प्राप्ति होती है । यदि लग्न, लग्नेश, लाभ और लाभेश ये चारों बलवान् हों तो क्रेता और विक्रेता इन दोनों को धन की प्राप्ति होती है ।

हानिर्भवेत्ते यदि वीर्यवर्जिताः समर्घता स्याद्यदि सर्वथोदयः ।
बली तथा वीर्य्यवियुङ्महार्घता निधाननाथे सबले महार्घता ॥ ३० ॥

यदि वे पूर्वोक्त चारों निर्बल हों तो क्रेता तथा विक्रेता को धनकी हानि होती है । यदि 'प्रश्न लग्न' सब प्रकार से बली हो तो वस्तु की समर्घता और निर्बल हो तो महार्घता होती है । एवं धन भाव का स्वामी बलवान् हो तो भी महार्घता होती है ।

सामर्घ्यमर्थाधिपतौ बलोनिते ततः शरीरं सबलस्तनूधवः ।
पश्येद् धनाप्तिर्गदिता क्रयाणकादथोदयेशं शुभदं शुभग्रहः ॥ ३१ ॥
स्वदीप्तभागैर्यदि वीक्षते तदा वस्तुक्रयाल्लाभ उदीर्य्यते बुधैः ।
महार्घतोपान्त्यतदीयनायकौ सोज्जावथो चेदुभयोर्बलोनयोः ॥ ३२ ॥
सामर्घ्यमाहुः कुशला महात्मनो मध्ये तयोः सत्त्वसमन्वितो यदा ।
एकोऽन्य ओजोरहितो भवेत्तदाऽर्घो मध्यमो वस्तुन उच्यते विदा ॥ ३३ ॥

यदि धनेश निर्बल हो तो वस्तु की समर्घता होती है। एवं बली लग्नेश यदि लग्न को देखता हो तो क्रयाणक से धन का लाभ कहना चाहिए। लग्न का स्वामी शुभ ग्रह हो और उस को अपने दीप्तांशों से शुभ ग्रह देखता हो तो वस्तु के खरीदने से लाभ कहे। लाभ और लाभेश ये दोनों बलवान् हों तो वस्तु की महार्घता और निर्बल हो तो वस्तु की समर्घता होती है। लाभ और लाभेश के मध्य में यदि एक बली हो और दूसरा निर्बल हो तो वस्तु का भाव मध्यम (समान) कहा है।

चेदित्थशाल उदयास्तमयाधिपत्योः
शाठिः स्वयं भवति मित्रदृशोभयोर्वै।
योगे च नक्त इह शोभनयोः परस्मा-
त्स्यान्मित्रयोर्धनमनोजपयोः सुशाठिः ॥ ३४ ॥

यदि प्रश्नसमय में लग्नेश और सप्तमेश की परस्पर मित्र दृष्टि हो और इत्थशाल हो तो प्रष्टा स्वयं वस्तु का क्रय विक्रय करता है। यदि प्रश्न समय में लग्नेश तथा सप्तमेश ये दोनों शुभ ग्रह हों, दोनों मित्र हों और उन का नक्त योग हो तो प्रष्टा का अन्य व्यापारी से उत्तम क्रय विक्रय होता है।

होरातदीयदयितौ हितवीक्ष्यमाणौ
विक्रेतुरिष्टमनुजैः सह शाठिमाहुः।
दृष्टौ स्वकीयसखिभिः प्रमदातदीये
शौ ग्राहकस्य सखिवर्गत एव शाठिः ॥ ३५ ॥

प्रश्नलग्न और उसका स्वामी ये दोनों मित्र ग्रह से दृष्ट हों तो विक्रेता का अपने मित्रजनों के साथ क्रय विक्रय होता है। सप्तम और सप्तमेश ये दोनों अपने मित्रों से दृष्ट हो तो ग्राहक (क्रेता) के मित्रजनों से क्रय विक्रय होता है।

अर्थी क्रयी वस्तुन उद्गमेशेऽस्ते विक्रयी हृद्भवपे पुरस्थे।
क्रयी मनोजे सति सत्यवादी स्याद्विक्रयी सत्युदयेऽन्यथाघैः ॥ ३६ ॥

सप्तम स्थान में प्रश्न लग्न का स्वामी हो तो 'क्रेता' वस्तु का अर्थी (नियत वस्तु याचक) होता है। यदि लग्न में सप्तमेश हो तो 'विक्रेता' वस्तु का अर्थी होता है। सप्तम में शुभ ग्रह हो तो 'क्रेता' सत्यवादी और लग्न में शुभ ग्रह हो तो 'विक्रेता' सत्यवादी होता है। एवं पाप ग्रहों से विपरीत होता है।

यदीत्थशालं कुरुते नभःसदा ग्लौर्ग्राहको वस्तु तदा प्रविन्दताम्।
ग्लौरीसराफं कुरुते द्युचारिणाऽसौ विक्रयी वस्तु समर्पयेत्स्वयम् ॥ ३७ ॥

'चन्द्रमा' जिस समय किसी ग्रह से इत्थशाल योग को करे उस समय ग्राहक (क्रेता) वस्तु को पाता है। एवं 'चन्द्रमा' जिस समय किसी ग्रह से ईसराफ योग को करे उस समय विक्रयी (विक्रेता) वस्तु को देता है।

चन्द्रस्य येन द्युसदेसराफो ग्रहः स भास्वत्करगः परस्मै।
दत्त्वाऽऽपणं वस्तु च तद्विहायाऽन्तं विक्रयी दैववशादुपैति ॥ ३८ ॥

चन्द्रमा का जिस ग्रह के साथ ईसराफ योग हो यदि वह ग्रह अस्तगत हो तो विक्रेता उस वस्तु को छोडकर उस के व्यापार को अन्य पुरुष को देकर भाग्यवशात् स्वयं नाश को प्राप्त होता है ।

स्वान्तोत्थगैः सहजशत्रुगतैश्च पङ्कैः
पुण्यग्रहैः पुरपदार्थमनोरथस्थैः ।
तुङ्गे स्वभे हरिजपे हिमदीधितौ च
सर्वासु लाभ उदितोऽत्र वणिक्क्रियासु ॥ ३९ ॥

यदि प्रश्नकाल में सप्तम, तृतीय और षष्ठ में पाप ग्रह हों, लग्न, दशम, द्वितीय और एकादश स्थान में शुभ ग्रह हों एवं लग्नेश तथा चन्द्रमा अपनी राशि में वा अपनी उच्चराशि में हों तो सब प्रकार के व्यापार में 'लाभ' होता है ।

आद्याधिपे बलयुते स्वधवेऽल्पवीर्य्ये
ग्राह्यं सुवस्तु सततं ध्रुवसङ्ग्रहाय ।
प्राप्तिस्थले बलवति स्वपतौ सशक्तौ
स्वाप्तिस्तदा भवति वस्तुकविक्रयेण ॥ ४० ॥

यदि लग्नेश बलवान् हो और धनेश अल्प बली हो तो निश्चित वस्तु सङ्ग्रह के लिए उक्त समय में उत्तम वस्तु का सङ्ग्रह करे । जब लाभस्थान बलवान् हो और द्वितीयेश भी बलवान् हो तब वस्तु के विक्रय से धन की प्राप्ति होती है ।

काव्येज्यदृष्टौ घनगौ विधूष्णगू
यद्वायसन्तानगतावघेक्षितौ ।
शीतद्युतीनौ क्रमशो महार्घता
*रौप्यस्य हेम्नः कथिता विपश्चिता ॥ ४१ ॥

प्रश्न लग्न में स्थित हुए चन्द्रमा और सूर्य को क्रमसे शुक्र तथा गुरु देखते हों अथवा लाभ और पञ्चम में स्थित हुए चन्द्र और सूर्य को पाप ग्रह देखते हों तो क्रम से चान्दी और सोने की महार्घता पण्डित जनों ने कही है ।

शालिवाहनीय शक से सुभिक्षादि का परिज्ञानः—

शाके कृशानुगुणितेऽक्षयुतेऽद्रिभक्ते
शेषे सुभिक्षमुदधीक्षणसम्मिते खे ।
पीडा समं शशधरभ्रमरांघ्रितुल्ये
दुर्भिक्षमग्निपवनप्रमितेऽब्दमध्ये ॥ ४२ ॥

शालिवाहनीय शक वर्षों की संख्या को ३ से गुणकर जो गुणन फल हो उस में ५ युक्त करके ७ से तष्ट करे यदि ४ या २ शेष बचे तो 'सुभिक्ष', 'शून्य' शेष बचे तो पीडा (महामारी अन्नकालादि), १ या ६

* इह रजतस्य शशिसितौ स्वामिनावेवं सुवर्णस्य सूरसूरी स्वामिनौ मतौ ।

शेष वचे तो समानता (अन्नादियों का भाव साम्य) एवं ३ या ५ शेष वचे तो दुर्भिक्ष अर्थात् अन्नादि की महंगी होती है ।

—: उदाहरण :—

इष्ट शक १८६२ को ३ से गुणा तो ५५८६ हुए । इन में ५ युक्त किये तो ५५९१ हुए । इन को ७ से तष्ट किया तो ५ शेष वचे इसलिए इस वर्ष में दुर्भिक्ष होगा ।

वैक्रमीय संवत्सर से सुभिक्षादि का परिज्ञानः—

सँव्वत्सरे गुणहते सशरेऽगभक्ते
शेषे सुभिक्षमतुलं श्रुतियुग्मतुल्ये ।
दुर्भिक्षमाशुगकृशानुमिते रसेंदु–
तुल्ये समं नभसि रौरवमत्र वर्षे ॥ ४३ ॥

वैक्रमीय संवत्सर की संख्या को ३ से गुण कर जो गुणन फल हो उस में ५ युक्त करके ७ से भाग दे यदि २ या ४ शेष वचे तो 'बहुत सुभिक्ष' ३ या ५ शेष वचे तो 'दुर्भिक्ष' ६ या १ शेष वचे तो 'समता' शून्य शेष वचे तो रौरव अर्थात् घोर (डरावना) समय होता है ।

—: उदाहरण :—

वैक्रमीय संवत् १९९७ को ३ से गुणा तो ५९९१ हुए । इन में ५ युक्त किये तो ५९९६ हुए । इन को ७ से तष्ट किया तो ४ शेष वचे इसलिए इष्ट वर्ष में 'सुभिक्ष' होगा ।

प्रभवादि संवत्सर संख्या से सुभिक्षादि का परिज्ञानः—

सँव्वत्सरे द्विगुणिते गुणसंविहीने
शैलैर्हृते पवनयुग्ममिते सुभिक्षम् ।
शेषे रसानलमिते सममब्धिचन्द्रे
दुर्भिक्षकं शरदि *रौरवमभ्रतुल्ये ॥ ४४ ॥

प्रभवादि संवत्सरों की संख्या को २ से गुण कर जो गुणन फल हो उसमें ३ हीन करके जो शेष वचे उस में ७ से भाग दें यदि ५ या २ शेष वचे तो 'सुभिक्ष' ६ या ३ शेष वचे तो 'मध्यम' (समान), ४ या १ शेष वचे तो 'दुर्भिक्ष' और शून्य शेष वचे तो 'रौरव' अर्थात् वार वार रोने का शब्द श्रवण गत होता है ।

—: उदाहरण :—

इष्ट वर्ष में नन्दन नाम संवत्सर है इस की संख्या २६ को २ से गुणा तो ५२ हुए इन में ३ हीन किया तो ४९ शेष वचे इन में ७ से भाग दिया तो शून्य शेष वचा अतः इष्ट वर्ष में रौरव अर्थात् अन्नकाल राजविग्रह तथा महामारी प्रभृति से वार वार रोने के शब्द कर्णगोचर होंगे ।

---

* अस्मिन्वर्षे युरोपदेशीयराज्ञां महासङ्ग्रामोऽस्ति तेन बहुजनमृत्युतः सर्वत्र रौरवं दृश्यत इति ।

वर्ष प्रवेशादि लग्नों के स्वामियों की स्थिति के वश से समर्घादि का परिज्ञानः—

तद्वर्षलग्नं च यदुद्गमे झषान्मेषङ्गतेऽर्के क्रियसङ्क्रमात्पुरा ।
या पूर्णिमाऽमा किमु तत्प्रवेशनविलग्ननाथः शरदुद्गमेशः ॥ ४५ ॥
तौ केन्द्रोपगतौ शुभग्रहदृशा युक्तौ स्वराशिङ्गतौ
द्रव्याणां सुसमर्घतां प्रकुरुतोऽसद्वीक्षितौ स्वर्क्षगौ ।
द्रव्याणां कुरुतो महार्घ्यमरुणेन्दू केन्द्रगौ सद्दृशा
संयुक्तौ च समर्घतां पणफरे तौ स्वर्णदुर्वर्णयोः ॥ ४६ ॥

जिस समय ' सूर्य ' मीन राशि से मेष राशि में प्रवेश करे उस समय क्षितिज पर जो लग्न वर्तमान हो वह ' वर्ष लग्न ' और उनका स्वामी ' वर्षेश ' होता है । एवं इष्ट वर्ष की मेष संक्रान्ति से पूर्व पौर्णमासी अथवा अमावास्या का प्रवेश जिस लग्न में हो उस लग्न का स्वामी ये दोनों उक्त लग्नों से केद्र में स्थित होकर शुभ ग्रहोंसे दृष्ट हों तो वे दोनों अपनी राशि की वस्तुओं की समर्घता और पापदृष्ट हों तो महार्घता करते हैं । एवं उक्त लग्नों से जो केन्द्रगत राशि हों उन में अथवा पणफर (२।५।८।११) स्थान में सूर्य तथा चन्द्रमा स्थित हों और वे शुभग्रह से दृष्ट हों तो सोना और चान्दी की समर्घता करते हैं ।

सङ्क्रान्ति के मुहूर्तों से समर्घादि का परिज्ञानः—

याम्यैन्द्राम्बुपवातसर्पशिवभं प्रोक्तं जघन्यं बृह-
दादित्यध्रुवभद्विदैवतमथोच्छिष्टं समं वासराः ।
बाणाम्भोधिमिता नभोगुणमितास्तज्ज्ञैर्मुहूर्त्ताः क्रमा-
त्प्रोक्ताः सङ्क्रमणे जघन्यभमुखेऽर्घे नेष्टसत्साम्यकम् ॥ ४७ ॥

भरणी, ज्येष्ठा, शतभिषा, स्वाति, आश्लेषा और आर्द्रा ये नक्षत्र ' जघन्यसञ्ज्ञक ' है । पुनर्वसु ध्रुवनक्षत्र (तीनों उत्तरा तथा रोहिणी) और विशाखा ये नक्षत्र ' बृहत्सञ्ज्ञक ' हैं । शेष नक्षत्र अर्थात् अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिरा, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, पूर्वाषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा और रेवती ये नक्षत्र ' समसञ्ज्ञक ' हैं । सूर्य की मेषादि सङ्क्रान्तियों का संक्रमणकाल जघन्यसञ्ज्ञक नक्षत्र में हों तो उन सङ्क्रान्तियों के १५ मुहूर्त्त, बृहत्सञ्ज्ञक नक्षत्र में हों तो ४५ मुहूर्त और समसञ्ज्ञक नक्षत्र में हो तो ३० मुहूर्त होते हैं जिस सङ्क्रान्ति का सङ्क्रमणकाल १५ मुहूर्त वाले नक्षत्र में अर्थात् जघन्य नक्षत्र में हो उस सङ्क्रान्ति के मास में उस के द्रव्यादियों की ' महार्घता ' होती है । जिस संक्रान्ति का सङ्क्रमण काल ४५ मुहूर्त वाले नक्षत्र में अर्थात् बृहत् नक्षत्र में हो उस संक्रान्ति के मास में उस के द्रव्यादियों की ' समर्घता ' होती है । एवं जिस सङ्क्रान्ति का सङ्क्रमणकाल ३० मुहूर्त वाले नक्षत्र में अर्थात् समनक्षत्र में हो उस सङ्क्रान्ति के मास में उस के द्रव्यादियों की ' समता ' होती है ।

शुक्ल द्वितीया के चन्द्रदर्शन से समर्घादि तथा वर्ष के विंशोपकों का परिज्ञानः—

ग्लौदर्शनेऽप्येवमिनादिवासरे कुलीरसंक्रान्तिदिने विंशोपकाः ।
वर्षस्य काष्ठा नखरेभभास्कराधृतिः पुराणाः पवनाः क्रमान्मताः ॥ ४८ ॥

शुक्ल द्वितीया के दिन जघन्य नक्षत्र हो और उस में चन्द्रदर्शन हो तो उस मास में उस सङ्क्रान्ति के द्रव्यों ो महार्घता बृहन्नक्षत्र में चन्द्रदर्शन हो तो समर्घता और सम नक्षत्र में चन्द्रदर्शन हो तो उस मास में उस ङ्क्रान्ति के द्रव्यों की समता होती है। कर्कसङ्क्रान्ति का प्रवेश जिस वार में हो उस के जितने विंशोपक हों वे ई के विंशोपक होते हैं। रविवार में १०, चन्द्र में २०, भौम में ८, बुध में १२, गुरु में १८ शुक्र में १८, ानि में ५ विंशोपक होते हैं। जिस वर्ष में कर्कसङ्क्रान्ति के विंशोपक १० से न्यून हों उस वर्ष में वस्तुओं की हार्घता १० विंशोपक में समानता १० से अधिक विंशोपक हो तो उस वर्ष में सब वस्तुओं की समर्घता होती है।

सङ्क्रान्ति प्रवेश काल के नक्षत्र से समर्घादि का परिज्ञानः—

प्राक् संक्रान्तेर्भास्करस्य द्विधिष्ण्ये रामर्क्षे वा संक्रमः स्यात्समर्घम् ।
वेदेऽक्षे भे पूर्वसंक्रान्तितोऽन्या स्याद्दुर्भिक्षं रौरवं तर्कधिष्ण्ये ॥ ४९ ॥

सूर्य की पूर्व सङ्क्रान्ति के दिन जो नक्षत्र हो उससे द्वितीय वा तृतीय नक्षत्र में पर सङ्क्रान्ति हो तो उस ास में 'वस्तुओं की समर्घता' होती है। पूर्व सङ्क्रान्ति प्रवेश काल के नक्षत्र से चतुर्थ वा पञ्चम नक्षत्र में र सङ्क्रान्ति हो तो उस मास में दुर्भिक्ष अर्थात् अन्नादि वस्तुओं की महार्घता होती है। एवं पूर्व सङ्क्रान्ति ्वेश काल के नक्षत्र से षष्ठ नक्षत्र में पर सङ्क्रान्ति हो तो उस मास में रौरव अर्थात् घोर अन्नकालादि होता है।

प्रकारान्तर से सङ्क्रान्ति की घटियों के द्वारा समर्घादिका परिज्ञानः—

साङ्काः संक्रान्तिनाड्यस्तुरगविनिहिताः शेषिता रोहिताश्वैः
सामर्घ्यं रूपशेषे भवति करमिते साम्यमभ्रे महार्घम् ।
संक्रान्तेर्वारभैक्ये तिथिमितिसहिते द्रव्यनामाक्षराढ्ये
रामैस्तष्टे समर्घं शशभृति नयने स्यात्समं खे महार्घम् ॥ ५० ॥

इष्ट सङ्क्रान्ति की घटियों में ९ युक्त करे तब जो संख्या हो उसको ७ से गुणकर जो गुणन फल ो उसको ३ से तष्ट करे। यदि एक शेष बचे तो सब वस्तु की समर्घता, दो शेष में समानता एवं शून्य शेष में हार्घता होती है। अथवा सङ्क्रान्ति प्रवेश काल के वार, नक्षत्र तथा तिथि इन तीनों की संख्याओं का योग रे तब जो संख्या हो उस में धान्यादि के नामाक्षर युक्त कर के ३ से तष्ट करे यदि एक शेष बचे तो 'समर्घता' ो शेष में समता और शून्य शेष में महार्घता होती है।

वार्षिक, मासिक तथा दैनिक अर्घानयन रीतिः—

मात्रासंख्या धान्यनामाक्षराणां संख्यायुक्ता योऽत्र राशिर्भवेत्सः ।
पण्यक्षेपः क्रूरपुष्टे त्यजेत्कुं रूपं देयं सौम्यपुष्टे च तस्मिन् ॥ ५१ ॥
नो हर्त्तव्यं नैव देयं समाने सौम्यक्रूरे सांघ्रियुग्मेन भेन ।
राशेर्मानं कथ्यते धिष्ण्यमानाद् भानां स्पष्टो जायते नन्दभागः ॥ ५२ ॥
यस्मिन् गोंऽशे ग्लौर्मुहूर्त्ते च यस्मिन् संक्रान्तिः संयोज्य तौ तद्दिने यः ।
वारो मित्या तस्य तत्संनिहन्यात्पण्यक्षेपं तत्र योज्यं पुरोक्तम् ॥ ५३ ॥

विभाजयेत्तं दहनैर्विशिष्टादर्घस्य पण्यस्य विनिर्णयः स्यात् ।
क्रमेण रूपादित उत्तमोऽर्घोमध्योऽधमः शास्त्रविदो वदन्ति ॥ ५४ ॥
सुरेज्यसंक्रान्तिवशेन वर्षे मासेऽर्कसंक्रान्तिवशेन चैवम् ।
वारोदयाद्वासरके त्रिधेह द्रव्यार्घकस्येति विनिर्णयोऽयम् ॥ ५५ ॥

धान्य (अन्न) के नामाक्षरों की संख्यामें धान्य (अन्न) के नामकी मात्राओं की संख्या को युक्त करे तब जो संख्या हो वह ' मध्यमपण्यक्षेपक ' होता है । धान्य के नामाक्षरों के स्वामियों के मध्य में यदि क्रूर ग्रह अधिक हों तो पूर्वागत मध्यम पण्यक्षेपक में १ हीन करे और शुभग्रह अधिक हों तो १ युक्त करे तब ' स्पष्टपण्य क्षेपक ' होता है । यदि धान्य के नामाक्षरों के स्वामियों के मध्य में शुभग्रह और पापग्रहों की संख्या समान हो तो पूर्वागत मध्यम पण्यक्षेपक ही स्पष्टपण्यक्षेपक होता है अर्थात् उसमें १ हीन या १ युक्त न करे । सवादो $२\frac{१}{४}$ नक्षत्रों की एकराशि और एकराशि के ९ नवांश होते है । इष्ट संक्रान्ति के प्रवेश काल में चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में हो उसकी संख्या में संक्रान्ति के मुहूर्तों की संख्या को युक्त कर के जो संख्या हो उस को संक्रान्ति के दिन के वार की संख्या से गुणकर जो गुणन फल हो उस में स्पष्टपण्यक्षेपक को युक्त कर के ३ से भाग दे यदि एक शेष बचे तो इष्ट द्रव्य की समर्घता, २ शेष में मध्यम भाव (समानता), शून्य शेष में इष्ट वस्तु की महार्घता होती है । यहाँ वस्तु के अर्घ का निर्णय तीन प्रकार से करना चाहिए अर्थात् वार्षिक अर्घ का निर्णय गुरु की संक्रान्ति प्रवेश काल से, मासिक अर्घ का निर्णय सूर्य संक्रान्ति प्रवेश काल से और दैनिक अर्घ का निर्णय दिन के वारोदय काल से करना चाहिए ।

वार्षिक अर्घनिर्णय में इष्ट वर्ष के जिस मास, जिस दिन और जिस समय ' गुरु ' पूर्व राशि को छोडकर अग्रिम राशि में जाय उस समय ' चन्द्रमा ' जिस राशि के नवांश में हो उस नवांश की संख्या को एकान्त में स्थापित करे । तदनन्तर गुरु की राशि प्रवेश समय में जघन्यसंज्ञकादि जो नक्षत्र हो उसकी जितनी मुहूर्त्त संख्या हो उसको एकान्त में स्थित नवांश संख्या में युक्त करे तब जो संख्या हो उसको गुरुसंक्रान्ति (राशि) प्रवेश समय के वारकी संख्या से गुणकर जो गुणन फल हो उस में इष्ट वस्तु के पण्यक्षेपक को युक्त कर के ३ से भाग दे यदि एक शेष बचे तो उत्तमार्घ (समर्घता) दो शेष में मध्यमार्घ (समानता) और शून्य शेष में अधमार्घ (महार्घ्य) इष्ट वर्ष में जानना चाहिए ।

मासिकार्घ निर्णय में सूर्यसंक्रान्ति प्रवेश काल के चन्द्र नवांश की संख्या और संक्रान्ति के मुहूर्तों की संख्या इन दोनों का योग करे तब जो संख्या हो उसकी संक्रान्ति प्रवेश समय के वारकी संख्या से गुणकर जो गुणन फल हो उस में इष्ट वस्तु के पण्यक्षेपक को युक्त कर के ३ से तष्ट करे । एक शेष में समर्घता, दो शेष में समानता एवं शून्य शेष में महार्घता होती है ।

एवं दैनिकार्घ निर्णय में वारप्रवृत्तिकाल में ' चन्द्रमा ' जिस नवांश में हो उसकी संख्या का और वार प्रवृत्ति समय के जघन्यसंज्ञकादि नक्षत्रों के मुहूर्तों की संख्या का योग करे तब जो संख्या हो उसको इष्ट वार की संख्या से गुणकर जो गुणन फल हो उसमें इष्ट वस्तु के स्पष्टपण्यक्षेपक को युक्त कर के ३ से तष्ट करे १ शेष में समर्घ, २ शेष में मध्यम एवं शून्य शेष में महार्घ जानना चाहिए ।

‘ धान्यस्वराणां ध्रुवाङ्काः ’ ।

स्वराः	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ	ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
ध्रुवाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६

‘ धान्यादीनां कादिवर्णानां ध्रुवाङ्काः । ’ ।

वर्णाः	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट	ठ	ड	ढ	ण	त
ध्रुवांकाः	२५	३०	९	१८	२२	२७	२८	३	१५	१४	१८	३५	१३	१२	१७	१७
स्वामिनः	शनिः	भौमः	शनिः	भौमः	शनिः	गुरुः	सूर्यः	भौमः	गुरुः	सूर्यः	गुरुः	सूर्यः	राहुः	बृह.	सूर्यः	शुक्रः
वर्णाः	थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
ध्रुवाङ्काः	१३	३५	२८	१३	३६	२७	२८	१०	१७	२७	११	९	३०	२५	१०	३०	१२
स्वामिनः	राहुः	शुक्रः	केतुः	शुक्रः	शुक्रः	शनिः	शुक्रः	शनिः	शुक्रः	शनिः	राहुः	शनिः	केतुः	शनिः	केतुः	शनिः	राहु

‘ वाराणां ध्रुवाङ्काः ’ ।

वाराः	रविः	चन्द्रः	भौमः	बुधः	गुरुः	शुक्रः	शनिः
ध्रुवाङ्काः	७	२२	१०	९	५	१६	४

‘ नक्षत्राणां ध्रुवाङ्काः ’ ।

नक्षत्राणि	अश्वि.	भर.	कृत्ति.	रोहि.	मृग.	आर्द्रा.	पुन.	पुष्य	आश्ले	मघा	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.
ध्रुवाङ्काः	३०	१५	३०	४५	३०	१५	४५	३०	१५	३०	३०	४५	३०	३०
नक्षत्राणि	स्वा.	विशा.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ.षा.	श्रव.	धनि.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रे.	
ध्रुवाङ्काः	१५	४५	३०	१५	३०	३०	४५	३०	३०	१५	३०	४५	३०	

—: उदाहरण :—

यहाँ ‘ चणा ’ इस धान्य के पण्यक्षेपकका साधन करते हैं । इसलिए चकार का ध्रुवाङ्क २७, णकार का ध्रुवाङ्क १७ है । इन दोनोंका योग किया तो ४४ हुए । एवं चकार की अकार मात्राका ध्रुवाङ्क १, णाकार की

आकार मात्रा का ध्रुवाङ्क २ है इनदोनोंका योग किया तो ३ हुए। तदनन्तर धान्य नामाक्षरके ध्रुव योग ४४ में मात्रा योग ३ को युक्त किया तो ४७ 'मध्यम पण्यक्षेपक' हुआ। यहां चकार का स्वामी गुरु और णकार का स्वामी सूर्य हैं। इनदोनोंमें १ शुभ और १ अशुभ हैं। यहां धान्याक्षरोंके स्वामियों की संख्या समान है इसलिए पूर्वागत ४७ मध्यम पण्यक्षेपक ही चणा (धान्य) का ४७ ' स्पष्ट पण्यक्षेपक ' हुआ।

एवं 'गोधूम' इस धान्य के पण्य क्षेपक का साधन करते हैं। अतः गकार का ध्रुवाङ्क ९, धकार का ध्रुवाङ्क २८, मकार का ध्रुवाङ्क १७ इन तीनों का योग किया तो ५४ हुए। एवं गोकार की मात्रा ओकार के ध्रुवाङ्क ९, धूकार की मात्रा ऊकार के ध्रुवाङ्क ६, मकार की मात्रा आकार का ध्रुवाङ्क १ इन तीनों का योग किया तो १६ हुए। इन को अक्षर ध्रुव योग ५४ में युक्त किया तो ७० 'मध्यम पण्य क्षेपक' हुआ। यहाँ गकार का स्वामी शनि, धकार का स्वामी केतु और मकार का स्वामी शुक्र है। धान्य के नामाक्षरों के स्वामीयों के मध्य में अधिक पाप हैं। अतः पूर्वागत मध्यम पण्यक्षेपक ७० में १ को हीन किया तो ६९ गोधूम का स्पष्टपण्य क्षेपक हुआ। एवं अन्यधान्यों के पण्यक्षेपक का साधन करें। किन्तु यहां स्मरण रखना चाहिए कि प्रश्नसमय में प्रष्टा (पूछनेवाला) जिस प्रकार जिस धान्य के नामाक्षर का उच्चारण करे उन उक्त अक्षरों से वस्तु के पण्यक्षेपक का साधन करे।

वार्षिक अर्घ साधनोदाहरणः—

संवत् १९९७ चैत्र शुक्ल सप्तमी रविवार आर्द्रा नक्षत्र के दिन मेष राशि में गुरु का प्रवेश हुआ। गुरु की मेष राशि प्रवेश समय में आर्द्रा नक्षत्र के तृतीय चरण में 'चन्द्रमा' है अतः वर्त्तमान मिथुन राशि के सातवें नवांश में हुआ। इस नवांश संख्या ७ को एकान्त में स्थापित किया। एवं गुरु की मेष राशि प्रवेश समय में आर्द्रा नक्षत्र है। यह जघन्यसञ्ज्ञक है अतः १५ मुहूर्त हुए। इनको एकान्त में स्थित नवांश संख्या ७ में युक्त किया तो २२ हुए। इन को गुरु की मेष राशि प्रवेशकाल के रविवार की संख्या १ से गुणा तो २२ हुए। इन में चणा के पण्यक्षेपक ४७ को युक्त किया तो ६९ हुए। इन को ३ से तष्ट किया तो शून्य शेष वचा अतः इष्ट वर्ष में चणों की महार्घता होगी।

मासिक अर्घ साधनोदाहरणः—

संवत् १९९७ चैत्र शुक्ल षष्ठी शुक्रवार मृगशीर्ष नक्षत्र में सूर्य की मेष सङ्क्रान्ति है। सङ्क्रान्ति के प्रवेश काल में मृगशीर्ष नक्षत्र के तृतीय चरण में 'चन्द्रमा' है अतः वर्त्तमान मिथुन राशि के १ लेनवांश में हुआ। इस नवांश संख्या १ को एकान्त में स्थापित किया एवं सूर्य की मेष सङ्क्रान्ति प्रवेशकाल में मृगशीर्ष नक्षत्र है यह समसञ्ज्ञक है अतः ३० मुहूर्त्त हुए। इनको एकान्त में स्थित चन्द्रनवांश संख्या १ में युक्त किया तो ३१ हुए। इन को मेष सङ्क्रान्ति प्रवेश काल के शुक्रवार की संख्या ६ से गुणा तो १८६ हुए। इन में चणे का पण्यक्षेपक ४७ को युक्त किया तो २३३ हुए इनको ३ से तष्ट किया तो २ शेष वचे। दो शेष रहने के कारण वैशाख में चणे की भाव की समानता होगी।

दैनिक अर्घ साधनोदाहरणः—

संवत् १९९७ चैत्र शुक्ल एकादशी गुरुवार मघानक्षत्र के दिन चणे के समर्घादिका निर्णय करते है। अतः उक्त दिन सूर्योदय के अनन्तर १ घटी १७ पल में गुरुवार की प्रवृत्ति हुई। यहां वार प्रवृत्ति समय में मघानक्षत्र

के तृतीय चरण में 'चन्द्रमा' है अतः वर्तमान सिंह राशि के ३ रे नवांश में हुआ। इस नवांश संख्या ३ को एकान्त में स्थापित किया। वारप्रवृत्ति काल में मघा नक्षत्र है यह 'समसञ्ज्ञक' है अतः ३० मुहूर्त्त हुए। इनको एकान्त में स्थित नवांश संख्या ३ में युक्त किया तो ३३ हुए। इन में चणे के पण्यक्षेपक ४७ को युक्त किया तो ८० हुए। इनको ३ से तष्ट किया तो २ शेष बचे अतः इष्ट दिन में चणे का भाव समान रहेगा।

प्रकारान्तर से मासिक तथा दैनिक अर्घानयन रीतिः—

एकीकृत्याऽऽदित्यसंक्रान्तिपक्षे धान्यादीनां वासराणां तिथीनाम्।
योगर्क्षाणां येध्रुवास्तान् खरांशोः संक्रान्तेर्यो भध्रुवस्तं तुरङ्गैः ॥ ५६ ॥

हन्याद्रामैः सम्भजेद्यद्विशिष्टं तत्तन्मासे तत्फलं साम्यमुर्व्याम्।
स्यात्सामर्घ्यं लोचनाभ्यां महार्घ्यं खेन ज्ञेयं दैनिकेऽप्येवमूह्यम् ॥ ५७ ॥

इष्ट मास की सङ्क्रान्ति के प्रवेश काल के वार, तिथि, योग और नक्षत्र के ध्रुवाङ्कों का योग करे। तदनन्तर योग करने पर जो संख्या हो उस में इष्ट मास की सूर्य राशि के ध्रुव को और इष्ट द्रव्य के ध्रुवको युक्त कर के जो संख्या हो उसको ७ से गुणकर ३ से भाग दे यदि एक शेष बचे तो इष्टमास में इष्ट द्रव्य का समान भाव, दो शेष में समर्घता और शून्य शेष में महार्घता होती है। एवं प्रत्येक दिन में प्रत्येक द्रव्य (वस्तु) के अर्घ (भाव का निर्णय करे।

*तिथिध्रुवाङ्काः.'।

तिथयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०
प्रथममतमिद-मस्य पुस्तकमतम्।	१८	२०	२२	२४	२६	२५	२३	२१	१९	१७	१५	१३	११	९	१६	७
द्वितीयमतं शुद्धमेनम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०
तृतीयमतम्,	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
चतुर्थमतं गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	१६	३२	४८	६४	८०	९६	११२	१२८	१४४	१६०	१७६	१९२	२०८	२२४	२४०	४८०
षष्ठमतम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०

*इह प्रथममते शुक्लकृष्णपक्षतिथीनां तुल्या एव ध्रुवाः। द्वितीयमते कृष्णप्रतिपदातः षोडशतो ध्रुवाङ्का ज्ञेया। चतुर्थमते ध्रुवाङ्काभावः। 'पञ्चममते' कृष्णपक्षतु पूर्णिमाया ध्रुवाः २४० षोडशवृद्धितोऽसितप्रतिपदादीनां क्रमशो ध्रुवा ज्ञेयाः।

‘ नक्षत्राणां ध्रुवांकाः ’ ।

	अश्वि.	भर.	कृत्ति.	रोहि.	मृग.	आ.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.
‘ प्रथममस्य पुस्तकमतम् ।’	१०	१०	९६	५६	२०	८६	२१	६४	१३५	१५०	२२०	७२	३३४	२१
‘ द्वितियमतं शुद्धमेतत् ’ ।	१८	५	३२	१४	४	१३	२८	२८	३६	१५	३	३१	१८	२५
तृतीयमतम्’।	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	३०	,,	,,	,,
चतुर्थमतं गुरुमतम्	,,	५	३२	१४	४	,,	२८	,,	,,	१५	३०	३१	१८	२५
पञ्चममतम्	१०	१०	११	५०	२०	१८६	११०	६४	३३३	१५०	२२	३३२	२३४	३५०
षष्ठमतम्	११	१७	३५	१४	४	१३	३०	३०	३६	१५	२०	३१	१८	२१

नक्षत्राणि	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रे.
प्र. अस्य पुस्तकमतम् ।	२१०	३२०	४१३	५५९	५५२	१४२	४२०	५५०	७३६	५७६	२७५	१२६	२५६
द्वि. शुद्धमेतत्	१४	२४	३४	३७	१८	७३	३०	२५	२३	२४	९	४१	२८
तृतीयमतम्	,,	,,	१६	२१	,,	१३	,,	,,	२२	,,	,,	,,	१८
च. गुरुमतम्	१४	१४	३९	२१	१८	१३	३०	२५	,,	२४	९	४१	२८
पञ्चममतम्	२१०	३२८	४०३	५५८	५३३	१४०	४२०	५५०	७७	५२६	१८५	१०६	७५६
षष्ठमतम्	२४	२	२९	२१	१०	७	२०	२५	२२	२४	२९	४१	२८

' योगध्रुवांकाः ' ।

योगाः	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति.	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.
प्रथममतामिदम-स्य पुस्तकमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
द्वि. शुद्धमदः ।	१३	१२	४७	५९	३६	४७	१८	४४	१३	२५	१७	२२	१५	३५
तृतीयमतम्' ।	,,	१७	४१	,,	३८	,,	,,	,,	,,	२४	,,	,,	१४	२५
च. गुरुमतम्'	१३	,,	,,	५९	,,	,,	१८	,,	२३	,,	,,	२२	१५	२४
पञ्चममतम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
षष्ठमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.

योगाः	वज्रम्	सिद्धिः	व्यती	वरी.	परि.	शिव.	सिद्ध.	साध्य.	शुभ.	शुक्ल.	ब्रह्म.	ऐन्द्रः	वैधृ.
प्रथममतामिदम स्य पुस्तकमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
शुद्धमदः ।	१४	२२	१३	३९	१५	१३	१९	१२	२५	२२	१३	२७	२६
तृतीयमतम्	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	१४	,,	,,	,,	१७	२६
च. गुरुमतम्	,,	२२	१३	,,	,,	१३	,,	१४	,,	,,	,,	२७	२६
द्रपञ्चममतम्	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७
षष्ठमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.

'वारध्रुवाङ्का'

वाराः	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
प्र. पुस्तकमतम्	४०	५०	५७	७२	६५	२४	१४
द्वि. शुद्धमदः	२१	१५	१२	२	१३	१४	०
तृतीयमतम्	,,	,,	,,	१	,,	,,	,,
च. गुरुमतम्	२१	१५	१२	१	१३	१४	०
पञ्चममतम्	३५	५०	५७५	२१	६५	९४	१४०
षष्ठमतम्	३०	१५	१	१८	१३	४	१९

'मेषादिसंक्रांतीनां ध्रुवाङ्काः'।

संक्रान्तयः	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी
प्र. पुस्तकमतम्	३७	८४	६६	१०९	१२५	१०२	१४०	१४४	१४४	१९८	१९०	१८०
द्वि. शुद्धमदः	३	२२	२२	२५	१९	१७	२०	१३	१६	१९	२३	१५
तृतीयमतम्	,,	२३	,,	,,	,,	,,	२०	,,	,,	,,	१३	,,
च. गुरुमतम्	३	२२	२२	२५	१९	१७	२०	१२	१६	१९	१३	१४
पञ्चममतम्	१८	२०	२२	२४	२६	२८ वा. २५	६	८ वा ६	१०	१२	१४	१६
षष्ठमतम्	३२	२२	६६	२४	१९	१७	२९	४३	१६	१९	२	१५

‘ धान्यादिवस्तूनां ध्रुवाङ्काः ’।

धान्यादीनां नामानि	धान्य	गोधूम	मूंग	चणा	माष	जुवार	मोठ	जौ	सरसों	कुलथ्थ	काङ्गनी	चावल	चौलाई	तिल	छिमा ढुरी
प्र. पुस्तकमतम्	.	१४	५१	५६	८०	१००		५७	८८	६२	२०	१७	८७	५३	७२
द्वि. ज्यौतिष-फलोदयमतम्	७७	१०९	४१	३५	९	१३३	२१	५०७	७७	.	१०२	.	.	१८	७७
तृतीयमतम्	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
च. गुरुमतम्	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
पञ्चममतम्	.	१४	४०	६५	६०	१००	६४	५७	७०	.	.	९७	.	५३	.
षष्ठमतम्	.	१५	४१	.	८०	.	८१	.	११५	७६	.	७६	.	.	६५

धान्यादीनां नामानि	शाली	बाजरा	बटलो (मटर)	मसूर	चोलादाल	कोदों	वेसन	तूर	मक्की	अलसी	खारी	सिंगाड़ा	मकूट	चावल	मुंगधरी
प्र. पुस्तकमतम्	१६५	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
द्वि. ज्यौतिष-फलोदयमतम्	,,	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.		
तृतीयमतम्	,,	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च. गुरुमतम्	,,	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	७७	१३५	२८	३०	११	१०९	६६२	७३	३०	१००	१४४	५४	१२५	.	.
षष्ठमतम्	.	.	.	९१	.	.	.	.	.	.	.	.	.	७२	११

धान्यादीनां नामानि	साहिरी	कुरड	राई	खुरड	गुड	खाण्ड	चीनी	मिश्री	बताशा	शर्करा	घृत	तैल	लूण	सैन्धव	दाल
प्र.पुस्तकमतम्	.	.	.	.	४०	.	.	१०३	.	१०२	.	.	५९	.	.
द्वि. ज्यौतिष-फलोदयमतम्	.	.	.	.	४७	९९	.	.	.	१०१	.	.	.	.	.
तृतीयमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च. गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	.	.	५	.	६४	८८९	७६	.	२६	.	५०	१७०	५९	.	२९
षष्ठमतम्	७७	६६	.	९१	.	९	.	१०	.	.	.	.	८०३	१२२	.

धान्यादीनां नामानि	बदाम	गरी	नारियल	चिरौंजी	अनार दाडिम	सुपारी	छुहारा	इलायची	लौङ्गा	मिर्च	सुंठ	जीरा	पीपल	पीपल	हल्दी
प्र.पुस्तकमतम्	.	८३	७८	.	.	२०४	१४४	.	.	१०७	१००	७०	.	.	१०९
द्वि. ज्यौतिष-फलोदयमतम्	.	.	१०४	.	.	९५	.	.	.	१०७	७२	.	.	.	१०९
तृतीयमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च.गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	१८	.	१३	११	२४	५	.	१	५६	६४	१०५	७८०	१७२	१०८	३८
षष्ठमतम्	.	३३	.	.	.	९५	.	.	.	१२८	१०८	.	१२८	.	.

धान्यनामानि	अजवायन	हींग	आंवला	आंवला	हरड़	बहेड़ा	फटकड़ी	सज्जी	अमल	अफीम	जरदा	भांग	तमाखू	कपास	रूई
प्र.पुस्तकमतम्	.	६२	.	.	७३	.	.	.	.	१९२	.	.	.	१२८	७७
द्वि. ज्यौतिष-फलोदयमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	१२०	४४
तृतीयमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च. गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	१	६२	१४०	१	३८	२८	२७	३५	१००	८८४	१३	२९	२१	१२७	.
षष्ठमतम्	.	.	.	.	१५३	.	.	.	.	.	.	.	.	१२६	४८

धान्यनामानि	सूत	ऊन	कपड़ा	रेशमी कपड़ा	घोड़ा	हाथी	भैंस	गौ	बैल	बकरी	वृषभ	गाड़ी के बैल	ऊंट	गदहा	सोना
प्र.पुस्तकमतम्	९४	.	१००	.	७७०	६४	९२	७७	८७	६०	९४वा ६४	१४	८५	.	९६
द्वि. ज्यौतिष-फलोदयमतम्	१०७	.	१०९	.	७०	.	९३	४७	.	.	१७६	१४	.	.	.
तृतीयमतम्		.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च. गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	५४	१०९	१९०	.	.	७७०	९२	.	८७	५४	.	.	७७	९४	१०६
षष्ठमतम्	१२५	.	१०९	१०५	७७	७४	८३	४७	.	११८	६७	.	.	.	७४

'धान्यादिवस्तूनां ध्रुवाङ्काः'।

धान्यनामानि	चान्दी	ताम्बा	शीशा	पीतल	रांग	कांसी	लोहा	टका	मोती	जवाहिर जात	पारा	आफू	पाट	कुङ्कुम	केसर	कस्तूरी
प्र. पुस्तकमतम्	८१	१०	९०	५९	.	१२७	५४	.	९५	.	.	.	.	२५	.	.
द्वि. ज्यौतिफलोदय-मत म्	.	.	.	१	.	२वा ३०	.	.	.	.	.	.	.	.	.	१३४
तृतीयमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च. गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	८१	१०२	९०	५९	६२	१११	५४	९	८५	.	६२७	७१	४६७	.	.	.
षष्ठमतम्	८३	.	९९	२२	२२	.	५३	.	.	९५	.	.	.	.	२९	१०७

धान्यनामानि	चन्दन	कपूर	सिन्दूर	कामी (इङ्गुर)	लाख	कथीर	कुसुमा	लाव	कस्ट	हिंगुळ	राळी	मंजीठ	चीट	नील	कशीश	आम
प्र. पुस्तकमतम्	.	१०२	.	.	.	६७	.	.	.	.	.	१४४	.	.	२	३०
द्वि. ज्यौतिषफलोदय.	१८७	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	१२८	.	.	२	३०
तृतीयमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
च. गुरुमतम्	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	.
पञ्चममतम्	२५	१०२	१७७	६	२५	१९७	४८२	८८	९६	८२०	१२२	११४	५८	३३	.	.
षष्ठमतम्	.	१०९	.	.	.	.	.	.	.	.	.	१२८	.	.	.	.

‘ गोधूमचणकयोः समर्घादीनां मासिकोदाहरणमदः ’ ।

संक्रान्तयः	संक्रा. ध्रु.	वाराः	वारध्रुवाः	तिथयः	तिथिध्रुवाः	नक्षत्राणि	नक्ष. ध्रुवाः	योगाः	ध्रुवयोगाः	गोधूम ध्रुव १४ योगाः	त्रितष्टः	सु. दु.	चणकध्रुव ५७ योगाः	त्रितष्टः	सु. दु.	मुहूर्ताः	भक्ष्याणि	मण्डलानि
मेष. सं.	३७	श.	१४	प्रति.	१८	अ-श्वि.	१०	वि.	७१	९३	०	दुर्.	१३५	०	दुर्.	३०	अन्नं	
वृष. सं.	८४	मं.	५७	द्विती.	२०	रोहि.	५६	अति.	२१७	२३१	०	दुर्.	२७३	०	दुर्.	४५	भिक्षा	
मि. सं.	६६	शु.	२४	चतु.	२४	ति.	६४	व्या.	१७८	१९२	०	दुर्.	२३४	०	दुर्.	३०	.	
कर्क सं.	१०९	मं.	५७	प.	२५	उ. फा.	७२	परि.	२६३	२७७	१	सु.	३१९	१	सु.	४५	भिक्षा.	
सिं. सं.	१२५	शु.	२४	अष्ट.	२१	वि.	३२०	ब्र.	४९०	५०४	०	दुर्.	४४६	०	दुर्.	४५	अन्नं.	
कन्या सं.	१०२	चं.	५०	दश.	१७	पू. षा.	१४२	सौ.	३११	३२५	१	सु.	३६७	१	सु.	३०	पयः	
संक्रान्तयः	संक्रा. ध्रु.	वाराः	वा. ध्रु.	तिथयः	ति. ध्रु.	नक्षत्राणि	न. ध्रु.	योगाः	ध्रुवयोगाः	गोधूम ध्रुव १४ योगाः	त्रितष्टः	सु. दु.	चणक ध्रुव ५७ योगाः	त्रितष्टः	सु. दु.	मुहूर्ताः	भक्ष्याणि	मण्डलानि
तु. सं.	१४०	बृ.	६५	एका.	१५	शत.	५७६	गं.	७९६	८१०	०	दुर्.	८५२	०	दुर्.	१५	चित्रान्नं	
वृ. सं.	१४४	श.	१४	द्वाद.	१३	उ.भा.	१२६	वज्रं	२९७	३११	२	स.	३५३	२	स.	४५	पात्रान्नं	
ध. सं.	१४४	सू.	४०	द्वाद.	१३	आश्वि.	१०	परि.	२०७	२२१	२	स.	२६३	२	स.	३०	पात्रान्नं.	
म. सं.	१९८	चं.	५०	दश.	१७	कृत्ति.	९६	शुक्रः	३६१	३७५	०	दुर्.	४१७	०	दुर्.	३०	चित्रान्नं	
कुं. सं.	१९०	बु.	७२	एका.	१५	मृग.	२०	वि.	२९७	३११	२	स.	३५३	२	स.	३०	दधि.	
मी सं.	१८०	शु.	२४	एका.	१५	ति.	६४	शो.	२८३	२९७	०	दुर्.	३३९	०	दुर्.	३०	पात्राचित्रान्नं	

मतान्तरेण गोधूमस्य समर्घादीनां दैनिकोदाहरणम् ’।

तिथ.	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ति. ध्रु.	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सं. ध्रु.	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७
बा. ध्रु.	१२	२	१३	१४	०	२१	१५	१२	२	१३	१४	०	२१	१५	१२	२	१३	१४	०	२१	१५
न. ध्रु.	४	१३	२८	२८	३६	१५	३	३१	१८	२५	१४	३४	३९	३७	१८	७३	३०	२५	२३	२४	९
यो. ध्रु.	१३	३९	१५	१३	१९	१२	२५	२२	१३	२७	२६	१३	४७	५९	३६	४७	१८	४४	१३	२५	१७
योगः	६८	९४	९७	९७	९८	९२	८८	१११	८०	८३	७३	५७	१२८	१३३	८९	१४६	८६	१०९	६३	९९	७१
गो. ध्रु.	१०९	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”	”
योगः	१७७	२०३	२०६	२०६	२०७	२०१	१९७	२२०	१८९	१९२	१८२	१६६	२३७	२४२	१९८	२५५	१९५	२१८	१७२	२०८	१८०
शै. फ.	०	२	२	२	०	०	२	१	०	०	२	१	०	२	०	०	०	२	१	१	०

पुनर्मतान्तरेण गोधूमस्य समर्घादीनां दैनिकोदाहरणम् '।

ति.	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ति. ध्रु.	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सं. ध्रु.	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७
बा. ध्रु.	१२	१	१३	१४	०	२१	१५	१२	१	१३	१४	०	२१	१५	१२	१	१३	१४	०	२१	१५
न. ध्रु.	४	१३	२८	२९	३६	१५	३०	३१	१८	२५	१४	१४	२९	२१	१८	१३	३०	२५	२२	२४	९
यो. ध्रु.	१३	३९	१४	१३	१९	१४	२५	२२	१३	२७	२६	१३	२७	५९	३८	४७	१८	४८	१३	२४	२७
योगः	६८	९३	९७	९८	९८	९४	११५	१११	९४	९८	८८	६२	११३	१३२	१०६	१००	१०१	१२४	७७	११२	९५
गो. ध्रु.	२२९	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
योगः	२९७	३२२	३२६	३२७	३२७	३२३	३४४	३४०	३०३	३१७	३१७	२९१	३४२	३६१	३३५	३२९	३३०	३५३	३०६	३४१	३२४
शे. फ.	०	१	२	०	०	२	२	१	२	०	२	०	०	१	२	२	०	०	०	२	०

—: उदाहरण :—

संवत् १९९७ की मीन सङ्क्रान्ति का प्रवेश प्रतिपदातिथि, गुरुवार, उत्तराफाल्गुनीनक्षत्र और गण्डयोग में हुआ। अतः तिथि ध्रुव १८, वार ध्रुव ६५, नक्षत्र ध्रुव ७२, योग ध्रुव ०, मीनसङ्क्रान्ति ध्रुव १८०, इन सबका योग किया तो ३३५ हुए। इन में गेहूं के ध्रुव १४ को युक्त किया तो ३४९ हुए। इन को ७ से गुणा तो २४४३ हुए। इन को ३ से तष्ट किया तो १ शेष बचा। इस लिए चैत्र में गेहूं का भाव समान रहेगा। एवं दैनिकार्घ का भी साधन करना चाहिए।

पञ्चाङ्गस्थ तिथ्यादि से अर्घपरिज्ञानः—

विज्ञाय प्रतिवासरं तिथिपटाद् वृद्धिं तिथेर्भस्य च
ज्ञात्वैवं च तयोः समस्तघटिकाद्याप्तिं तथाऽनाप्तिकाम्।
प्रत्येकं क्रमतस्तिथेरिह भवेत्षड्भिर्घटीभिर्यदा
वृद्धिर्भस्य च यत्र तत्र कथितं सामर्घ्यमाद्यैर्बुधैः ॥ ५८ ॥

पञ्चाङ्ग से प्रत्येक दिन की तिथि और नक्षत्र की वृद्धि को जानकर एवं तिथि और नक्षत्र की सर्वभोग्य घट्यादि को जानकर लाभालाभ को कहे। जहां प्रत्येक तिथि के क्रम से नक्षत्र की छः छः घटियों से वृद्धि हो तहां प्राचीन पण्डितजनोंने सामर्घ्य कहा है।

धिष्ण्यैधादिवसे निशापरिवृढो नो दृश्यते दुष्कृतैः
सामर्घ्यं परिपुष्टमुग्रखचरैर्दृष्टो महार्घं वदेत्।
पार्श्वाद्यत्र गरीयसी यदि तिथेर्धिष्णस्य वृद्धेर्दिने
घस्रे तत्र समर्घकं किल तिथेर्वृद्धौ महार्घ्यं मतम् ॥ ५९ ॥

जिस दिन नक्षत्र की वृद्धि हो उस दिन का चन्द्रमा यदि पापग्रहों से दृष्ट न हो तो उस दिन अधिक समर्घता कहे। यदि नक्षत्र वृद्धि के दिन का चन्द्रमा पापदृष्ट हो तो महार्घता कहे। जहां नक्षत्र वृद्धि के दिन में पार्श्व की तिथि से नक्षत्र की घटी अधिक हों उस दिन समर्घता और तिथि की वृद्धि में महार्घता होती है।

वृद्धौ भानां स्याद्रसाधिक्यमृक्षहान्यां तद्वत्स्याद्रसानां क्षयश्च।
योगाधिक्ये छेद उक्तो रसानां स्पष्टो वाच्यः प्रत्यहं वासरार्घः ॥ ६० ॥

नक्षत्रों की वृद्धि में रसों की समर्घता एवं नक्षत्रों की हानि में रसों की महार्घता होती है। योगों की अधिकता में रसों की महार्घता कही है। इस प्रकार प्रत्येक दिन वासरार्घ (दिन का भाव) स्पष्ट कहना चाहिए।

यावद्घट्या भस्य वृद्धिः समर्घं ज्ञेयं तज्ज्ञैस्तद्विशोपप्रमाणम्।
यावन्नाड्यो यत्र तिथ्या विवृद्धिर्विज्ञातव्यं तत्प्रमाणं महार्घ्यम् ॥ ६१ ॥

जितनी घटी नक्षत्र की वृद्धि हो उसके विंशोपका के तुल्य समर्घता जाननी चाहिए। एवं जितनी घटी तिथि की वृद्धि हो उसके तुल्य महार्घता जाननी चाहिए।

मासाख्यं भं क्षीयते पूर्णिमायां तस्यैधायां संस्मृतं वा महार्घ्यम् ।
राकायां नो यत्र मासाभिधानं धिष्ण्यं तत्रावश्यमुक्तं महार्घ्यम् ॥ ६२ ॥

जिस मास की पौर्णमासी के दिन में इष्ट मास के नाम के नक्षत्र का क्षय (लोप) हो अथवा वृद्धि हो उस मास में वस्तुओं की महार्घता होती है । जिस मास की पौर्णमासी के दिन में मासनाम का नक्षत्र न हो उस मास में अवश्य वस्तुओंकी महार्घता को कहे ।

संलग्ना या तारका पौर्णमास्यां किं वाऽमायां तत्क्षयश्चेन्महार्घ्यम् ।
तत्र ज्ञेयं पूर्वखण्डाच्च मासनक्षत्राख्ये जायतेऽप्येवमेव ॥ ६३ ॥

जिस मास की पूर्णिमा अथवा अमावास्या में जिस नक्षत्र का सम्पर्क हो यदि उस नक्षत्र का क्षय हो तो उस मास के पूर्वार्द्ध से महार्घता जाननी चाहिए। एवं मास नक्षत्र में भी विचार करना चाहिए ।

यदोडुतो न्यूनसमाधिके स्तोऽमापूर्णिमे तत्र तदा क्रमेण ।
सामर्घ्यतुल्यार्घमहार्घ्यकाणि मासस्य धिष्ण्यस्य बुधैः स्मृतानि ॥ ६४ ॥

जब नक्षत्र की घटियों से अमावस्या और पौर्णमासी की घटी न्यून, समान और अधिक हों तब क्रम से समर्घता, समता और महार्घता जाननी चाहिए । एवं मास नक्षत्र की घटियों से पौर्णमासी की घटियों की हीन, समान और अधिकता में क्रम से सामर्घ्य, साम्य और महार्घ्य कहे ।

योगौ यदा द्वौ यदि मासमध्ये संत्रुट्यतश्चेद् घृततैलनाम्नोः ।
महार्घता तत्र युतेर्विवृद्धौ समर्घता स्यादुभयोस्तदानीम् ॥ ६५ ॥

यदि एक मास में दो योगों का क्षय (लोप) हो तो घी और तेल की महार्घता एवं योग की वृद्धि में उक्त दोनों की समर्घता को कहे ।

वर्षाकाले राममासेषु तिथ्या हानिर्वृद्धिर्भस्य वेद्यः सुकालः ।
तिथ्या वृद्धिर्हानिर्ऋक्षस्य येषु नश्येत्कालस्तेष्ववश्यं तथैव ॥ ६६ ॥

वर्षा काल के तीन मास (आषाढ, श्रावण तथा भाद्रपद) में यदि तिथि की हानि और नक्षत्र की वृद्धि हो तो सुकाल (सुभिक्ष) होता है । एवं वर्षाकाल के तीन मासों के मध्य में जिन मासों में तिथि की वृद्धि और नक्षत्र की हानि हो उन मासों में अवश्य सुकाल का नाश अर्थात् दुष्काल होता है ।

हीनास्तिथेर्दर्शदिनेषु येष्वाश्लेषामघामूलशिवात्रिपूर्वाः ।
वाच्यास्तदा स्वल्पकणा महार्घाः स्युः पूर्वखण्डात्त्रिविगुग् धरित्री ॥ ६७ ॥

जिन मासोंमें अमावास्याके दिन आश्लेषा, मघा, मूल आर्द्रा और तीन पूर्वाओंकी घटी तिथिकी घटियोंसे हीन होतो उनमासोंके पूर्वार्द्धसे जलके स्वल्पकण, महार्घता एवं पृथ्वी त्रिवर्ग (धर्म्म, अर्थ तथा काम) से रहित होती है ।

भाद्रे सहस्ये पतिता तिथिश्चेत्पक्षे वलक्षे दिवसैर्द्विनिघ्नैः ।
मर्त्येशमृत्युः किमुतातिरौद्रं भवेच्च दुर्भिक्षमितीरयन्ति ॥ ६८ ॥

भाद्रपद अथवा पौषमें यदि शुक्लपक्ष में तिथिका लोप होतो द्विगुणित दिनोंसे राजाकी मृत्यु अथवा भयानक दुर्भिक्ष होता है । इसप्रकार पण्डितजन कहते हैं ।

मासेषु मार्गादिषु पञ्चसु क्षयस्तिथ्या यदा शुक्लदले च विग्रहः ।
सञ्जायते भूमिभृतां च दौस्थ्यकं किं छत्रभङ्गो गदितश्चिरन्तनैः ॥ ६९ ॥

मार्गशीर्षादि पाँच मासोंके मध्यमें यदि शुक्लपक्षमें तिथिका क्षय (लोप) होतो राजाओं में कलह, दुर्भिक्ष अथवा छत्रभङ्ग होता हैं । इसप्रकार प्राचीन पण्डितजनों ने कहा है ।

वायुके द्वारा दुर्भिक्ष का परिज्ञानः—

पञ्चम्यां पवनो मधोः सितदले वातीन्द्रदिक्सम्भवः
सस्यानां तु गुणत्रयं निगदितं मूल्यं नभस्ये ततः ।
याम्याशाभव आशुगो यदि वहेच्छुक्रस्य शुक्ले दले
पञ्चम्यां द्विगुणं नभस्य उदितं तैलस्य मूल्यं बुधैः ॥ ७० ॥

चैत्र शुक्लपञ्चमीके दिन यदि पूर्वदिशासे उत्पन्न वायु वहे तो भाद्रपदमें अन्नका तिगुणा मूल्य कहे । एवं ज्येष्ठ शुक्ल पक्षकी पञ्चमी के दिन दक्षिण दिशा से उत्पन्न वायु वहे तो भाद्रपद में तेल का द्विगुणा मूल्य कहे ।

शुचेः सितस्याहितिथौ नभस्वान् वहेद्यदा पाशिहरित्समुत्थः ।
प्रजायते कार्त्तिकमासि धान्यमूल्यं नदीनाथगुणं तदानीम् ॥ ७१ ॥

आषाढ शुक्ल पञ्चमी के दिन पश्चिम दिशा से उत्पन्न वायु चले तो कार्त्तिक में अन्न का चौगुणा मूल्य होता है ।

तत्रान्तकाशाप्रभवोऽनिलो वा प्रत्यक्प्रजातः पवनो वहेच्चेत् ।
भोगीन्द्रतिथ्यां नभसः सितस्य दुर्भिक्षमातङ्कमुशन्ति सन्तः ॥ ७२ ॥

एवं आषाढ शुक्ल पञ्चमी को दक्षिण दिशा का वायु चले अथवा श्रावण शुक्ल पञ्चमी को पश्चिम दिशा से उत्पन्न वायु बहे तो दुर्भिक्ष (अकाल) तथा आतङ्क (रोग ताप वा शङ्का) को करता है ।

आषाढे दिवसद्वयेऽपरयमाशासम्भवो मारुत
आतङ्काकुलिता भवन्ति मनुजाः सस्यक्षयोऽथोत्तरः ।
पञ्चम्यां पवनोऽथ पूर्वजनितो गौरीतिथौ संवहेद्
धान्यानि प्रभवन्ति वारिदरसैर्युक्ता नदाः सर्वदा ॥ ७३ ॥

आषाढ के दो दिन अर्थात् शुक्ल पञ्चमी और शुक्ल तृतीया को पश्चिम तथा दक्षिण दिशा से उत्पन्न वायु बहे तो रोग तापादि से व्याकुल और धान्य का नाश होता है । यदि पञ्चमी को उत्तर दिशा से और तृतीया को पूर्व दिशा से वायु बहे तो बहुत धान्य होते हैं और नद नदियां जल से परिपूर्ण होती हैं ।

प्रश्न लग्न द्वारा दुर्भिक्ष का परिज्ञान.—

दुर्भिक्षभीत्यै दुरिता दके ततोऽङ्गेऽर्कारकाला विकबन्धभाश्रिताः ।
सोर्ज्जास्तदान्नं प्रियतामवाप्नुयाद्दुर्भिक्षमार्त्तिं सहसा प्रकुर्व्वते ॥ ७४ ॥

यदि प्रश्न लग्न से चतुर्थ स्थान में पापग्रह हों तो दुर्भिक्ष (अन्नकाल) तथा भयको करते हैं । एवं बलवान् सूर्य, मङ्गल तथा शनि ये तीनों जल राशि को छोडकर शेष राशि में स्थित होकर लग्न में हों तो 'अन्न' प्रियता को प्राप्त होता है अर्थात् अन्न की महंगी होती है और अकस्मात् दुर्भिक्ष तथा पीडा को करते हैं ।

गोचर द्वारा दुर्भिक्ष का परिज्ञानः—

मघाभवादित्य नवार्चिषः समाश्रिताः शनेर्भे यदि तत्र शीतगुः ।
दुर्भिक्षतो भीर्वृषगौ कुजासुरौ दुर्भिक्षतः पीडनकं महद्भयम् ॥ ७५ ॥

मासे च षष्ठेऽथ शनिः किमूरगो युग्मे कबन्धेड्दिशि भूपतिक्षयः ।
दुर्भिक्षमेकत्र समाश्रिताः सितारसूरिसौराः सलिलं न मुञ्चति ॥ ७६ ॥

मेघो हि दुर्भिक्षमजङ्गतः फणी सोग्रोऽत्र दुर्भिक्षमजेऽस्त्रभार्कयः ।
सार्काश्च दुर्भिक्षमिला भयाकुला स्याल्लोकपीडाऽस्त्रभमन्दगा वृषे ॥ ७७ ॥

स्याद्राष्ट्रभङ्गो जनसाध्वसं तथा दुर्भिक्षमर्कास्त्रयमा वृषङ्गताः ।
वर्षन्ति नाम्भो जलदा जनाभिधपीडेह दुर्भिक्षमिनात्मजो झषे ॥ ७८ ॥

आर्य्यः कुलीरे रुधिरस्तुलाधरे दुर्भिक्षमारार्किसितास्तुलाङ्गताः ।
किं तत्र याता भकुजाहयो महाघोरं समीकं कुभुजां परस्परम् ॥ ७९ ॥

भू रक्तपूर्णा भगुरू यदैकभसंस्थौ तु दुर्भिक्षकरौ हि दुःखदौ ।
एकर्क्षगौ क्रोडकुजावनीकदौ दुर्भिक्षदौ रौद्रभगौ यमोरगौ ॥ ८० ॥

दुर्भिक्षकं वृष्ट्यवरोध उच्यतेऽर्कभूरुभायां द्विधवे कुजो गुरुः ।
कर्के च दुर्भिक्षकमिन्दुभे ज्ञभौ तत्राङ्गमासे च तथैकराशिगाः ॥ ८१ ॥

सौरारसोमासुरसूरसूरयो भवन्ति दुर्भिक्षकरा वसुन्धरा ।
क्रूरान्विता छत्रकभङ्ग ईरितः स्याद्राजभङ्गः सितसौरिभूसुताः ॥ ८२ ॥

एकत्र दृश्यन्त इहाग्निदाहको दुर्भिक्षमुग्रोऽनृजुगोऽतिचारगः ।
सन्वा शुभः कः कुरुतेऽतिचारकं स्याद्रौद्रदुर्भिक्षमिलेट्परिक्षयः ॥ ८३ ॥

शुक्र, सूर्य तथा मङ्गल ये तीनों शनि की (मकर वा कुम्भ) राशि में स्थित हों और चन्द्रमा भी उन के साथ में हो तो दुर्भिक्ष से 'भय' होता है । मङ्गल और राहु ये दोनों वृष राशि में स्थित हों तो दुर्भिक्ष से पीडा और छठे महीने में बड़ी भय होती है । शनि अथवा राहु मिथुन राशि में हो तो पश्चिम दिशा में 'राजा की मृत्यु और दुर्भिक्ष' होता है । शुक्र, मङ्गल, गुरु तथा शनि ये चारों एक राशि में हों तो 'मेघ नहीं वर्षते और

दुर्भिक्ष होता है । पाप ग्रहसे युक्त हुआ राहु यदि मेषराशि में हो तो 'दुर्भिक्ष' होता है। मङ्गल, शुक्र तथा शनि ये तीनों मेषराशिमें हों तो 'देशभङ्ग' 'लोगो में भय' और 'दुर्भिक्ष' होता है। सूर्य, मङ्गल तथा शनि ये तीनों वृषराशिमें हों तो 'मेघ जल नहीं वर्षाते' 'लोगो में पीडा' और 'दुर्भिक्ष' होता है। मीन में शनि, कर्क में गुरु और तुला में मङ्गल हों तो 'दुर्भिक्ष' होता है। तुला राशि में मङ्गल, शनि और शुक्र ये तीनों हों अथवा शुक्र, मङ्गल तथा राहु ये तीनों हों तो राजाओंमें परस्पर महायुद्ध और पृथ्वी रुधिर से परिपूर्ण होती है। शुक्र तथा गुरु ये दोनों, एक राशि में हों तो दुर्भिक्ष करनेवाले और दुःख देनेवाले होते हैं। शनि तथा मङ्गल ये दोनों एक राशि में स्थित हों तो युद्ध तथा दुर्भिक्ष करनेवाले होते हैं। आर्द्रा नक्षत्र में शनि और राहु हों तो 'दुर्भिक्ष और अवर्षण' होता है। उत्तराभाद्रपदा में शनि, विशाखा में मङ्गल और कर्क में गुरु हों तो 'दुर्भिक्ष' होता है। बुध तथा शुक्र ये दोनों कर्क राशि में हों तो छ महिने में 'दुर्भिक्ष' होता है। शनि मङ्गल, चन्द्र, राहु, सूर्य और गुरु ये छ ग्रह एक राशि में हों तो 'दुर्भिक्ष' करते हैं। एवं पृथ्वी क्रोध से पूर्ण, छत्रभङ्ग तथा राज्यभङ्ग होता है। शुक्र, शनि और मङ्गल ये तीनों एक राशि में हों तो 'अग्नि से भय तथा दुर्भिक्ष' होता है। यदि क्रूर ग्रह वक्री हो और शुभग्रह अविचारी हो अथवा केवल कोई शुभग्रह अविचार करे तो 'घोर दुर्भिक्ष' तथा राजाका नाश होता है।

सामर्घ्य योगः—

भूभूभराज्या अहिभं समाश्रिता नन्दन्तिलोकाः सुखिनो यदा तदा ।
सुभिक्षकंसञ्जनयन्त्यथो सितारेज्या यदैकोडुगताः सुभिक्षकम् ॥ ८४ ॥
मासे चतुर्थेऽत्रयवान्नसङ्ग्रहे लाभो भवेत्पुष्कल एकराशिगाः ।
वैकोडुगा वाक्पतिवक्रभार्गवा ग्राह्यं तदान्नं मनुजैश्चतुर्थके ॥ ८५ ॥
मासेऽतिलाभश्च सुभिक्षमेकभं समाश्रिता ज्ञैन्यहिपूषपूजिताः ।
सुभिक्षमारोग्यशिव सितार्किजो चेद्गच्छतः पृष्ठ इहाश्रितो बुधः ॥ ८६ ॥
भवेद्धरित्री धनधान्यपूरिता प्रजाः सुनन्दन्तिच सर्वशस्तदा ।
घटे कुजाच्छौ किमु मूलभे मृदौ वाते बुधः सस्यसमर्घता भवेत् ॥ ८७ ॥

जब शुक्र, बुध और मङ्गल ये तीनों आश्लेषा नक्षत्र में एक ही साथ विचर रहे हों तब प्रजाजन हर्षित तथा सुखी होते है एवं वे सुभिक्षको उत्पन्न करते है। जब शुक्र, मङ्गल और गुरु ये तीनों एक ही नक्षत्र में विचर रहे हों तो 'सुभिक्ष' होता है और जौके सङ्ग्रह करनेसे चौथे महीने में अधिक लाभ होता है। गुरु, मङ्गल और शुक्र ये तीनों एक राशि में अथवा एक नक्षत्र में हों तो अन्न के सङ्ग्रह करनेसे चौथे महीने में अधिक लाभ तथा सुभिक्ष होता है। यदि बुध, शनि, राहु, सूर्य और गुरु ये पाँचों एक नक्षत्र में स्थित हों तो सुभिक्ष, आरोग्यता और सुखदायक होते हैं। शुक्र और शनिके चलते समय यदि बुध पीछे के नक्षत्र में हो तो 'पृथिवी' धन तथा धान्य से परिपूर्ण और प्रजाजन सब प्रकार से हर्षित होते हैं! तुला राशि में मङ्गल और शुक्र एवं मूलनक्षत्र में शनि तथा स्वाति में बुध हो तो अन्नकी समर्घता होती है।

कार्पाससामर्घ्यमिहादितौ कविर्गोधूमसामर्घ्यकमास्फुजिद्गुरू ।
गोविन्दभे वा वसुभे व्यवस्थितावथो भरण्यां किमुतौद्विदैवते ॥ ८८ ॥

तदान्नकार्पासमुखस्य वस्तुनः समर्घतैकर्क्षगताः सबोधनाः ।
पर्पीभपूज्या रससस्यपूर्वकसामर्घ्यमाचार्य्य उभाङ्गतोऽथवा ॥ ८९ ॥
कृशानुभस्थो रसतन्दुलाभिधदुर्वर्णकार्पाससमर्घता तदा ।
बृहस्पतौ रौद्रमुपागते रसकार्पासपूर्वस्य समर्घता मता ॥ ९० ॥

पुनर्वसु नक्षत्र में ' शुक्र ' हो तो कपास की समर्घता होती है। धनिष्ठा में वा श्रवण में शुक्र तथा गुरु ये दोनों हों तो गेहूं की समर्घता होती है। अथवा वे दोनों भरणी में वा विशाखा में हों तो अन्न तथा कपासादि वस्तु की समर्घता होती है। बुध, सूर्य, शुक्र तथा गुरु ये चारों एक नक्षत्र में हों तो रस तथा अन्नादि की समर्घता होती है। उत्तराभाद्रपदा में वा कृत्तिका में गुरु हो तो रस, चावल, चान्दी तथा कपास की समर्घता होती है। आर्द्रा में गुरु हो तो रस तथा कपासादि की समर्घता होती है।

कर्णे कविज्ञौ जलभे गुरू रसकार्पाससस्यादिसमर्घतोदिता ।
यदा मघायां किमु वासवे गुरू राहुर्मृगस्थोऽन्नसमर्घतेरिता ॥ ९१ ॥

श्रवण में शुक्र और बुध हों और पूर्वषाढा में गुरु हों तो रस, कपास तथा अन्नादि वस्तु की समर्घता होती है। जब मघा में वा धनिष्ठा में गुरु हो और मृगशीर्ष में राहु हो तो अन्न की समर्घता कही है।

सर्वान्नसामर्घ्यमिनोशनोविदः स्युरेकराशौ तत एकराशिगाः ।
कालाहिहेलीज्यसिताः किमार्य्यवित्पतङ्गपातङ्ग्यगवश्च पुष्कलम् ॥ ९२ ॥
क्षेमं सुभिक्षं सितविद्रगास्त्रय एकर्क्षगा एम्यइह क्षमाजनिः ।
न वर्त्ततेऽग्रे यदि यानिकानि च धान्यानि साम्यं सकलं तदादिशेत् ॥ ९३ ॥

सूर्य, शुक्र तथा बुध ये तीनों एकराशि में हों तो सब अन्न समर्घ होते हैं। शनि, राहु, सूर्य, गुरु और शुक्र में पाँचों अथवा गुरु, बुध, सूर्य, शनि तथा राहु ये पाँचों एकराशि में हों तो बहुत सुख और सुभिक्ष होता है। शुक्र, बुध तथा सूर्य ये तीनों एकराशि में हों और इनसे आगे की राशि में मङ्गल न हो तो जो कोई भी धान्य हों उन सबकी समता (एकभाव) कहे।

यातोऽतिचारं मृदुगोऽत्र वक्री भूतो गुरुर्वा विदधाति कश्चित् ।
क्रूरोऽतिचारं पतयः पृथिव्या नन्दन्ति मूर्धान्य धनाकुलास्यात् ॥ ९४ ॥

शनि अतिचार को प्राप्त हो और गुरु वक्री हो अथवा कोई क्रूर ग्रह अतिचार करे तो राजालोग हर्षित होते हैं एवं ' पृथिवी ' धान्य धन से परिपूर्ण होती है।

महार्घ्य योगः—

भवर्क्षगौ भौमभगाववाप्नुयुर्धान्यानि मासं हि महार्घतां पुनः ।
स्यात्स्वस्थता भान्वनिलौ मृगङ्गतौ याम्योडुयातौ किमु सैन्धवं बिडम् ॥ ९५ ॥

महार्घतां याति नभस्वतीन्दुज इन्दुर्मघायां निर्ऋतौ पतङ्गजः ।
धान्यस्य सर्वस्य च सङ्ग्रहे सति लाभो भवेन्नेतरथाऽथ कश्चन ॥ ९६ ॥
क्रूरो विहङ्गो हरिभे महार्घतां व्रजेयुरन्नानि विशेषतस्तदा ।
गोधूमकाश्चाथ शते महामतिस्तक्षे नृशंसः सुमनो विनश्यति ॥ ९७ ॥
स्यात्सस्यहानिश्च महार्घतां तत एकोडुगाः कोविदकालसूसिताः ।
गच्छन्ति धान्यानि महार्घतां तदा सर्वाणि ते साध्वसवर्द्धकाः स्मृताः ॥ ९८ ॥

आर्द्रा में मंगल तथा सूर्य, ये दोनों हों तो एक मास पर्य्यंत सब धान्य महार्घ होते है । और फिर पूर्व के समान हो जाते हैं । मृगशिरा में सूर्य और केतु ये दोनों हों तो सैन्धानमक तथा बिड महार्घ होते हैं । स्वाति में बुध, मघा में चन्द्रमा और मूल में शनि हों तो सब धान्यों के सङ्ग्रह करनेपर 'लाभ' और विपरीत हो तो नहीं होता है । यदि श्रवण में कोई क्रूर ग्रह हो तो अन्न महार्घ होते हैं किन्तु गेहूं विशेष महार्घ होते हैं । शतभिषा में गुरु और चित्रा में मङ्गल हों तो गेहूं का नाश, धान्य की हानि और महार्घता होती है। यदि बुध, सूर्य और शुक्र ये तीनों एक नक्षत्र में हों तो सब धान्य महार्घ और भयकी वृद्धि करते हैं ।

एकोडुभस्थैर्भृगुभौमभास्करैस्तैलं मसूरान्नघृतं महार्घति ।
महाभयं स्यादुत देशविग्रह एकत्र याता धिषणेन्दुपूषणः ॥ ९९ ॥
तदोत्तरस्यां दिशि साध्वसं प्रजाः क्रन्दन्तिमुद्गान्नयवान्नवाससाम् ।
शरीरिभिश्चेद्यदि सङ्ग्रहे कृते स्याद्भूरिलाभो खलुमासि सप्तमे ॥१००॥

शुक्र, मङ्गल और सूर्य ये तीनों एक नक्षत्र वा एकराशि में हो तो तैल, मसूरान्न और घृत महार्घ होते हैं एवं महाभय अथवा देशविग्रह होता है । यदि गुरु, चन्द्र और सूर्य एकत्र हों तो उत्तर दिशा में भय, प्रजाजनों को कष्ट एवं मूंग, जौ और वस्त्रों के संग्रह करने पर सातवें महीने में 'बहुत लाभ' होता है ।

अग्रे प्रयात्युष्णकरो भृगोः सुतः पृष्ठे बुधो मध्यगतो महार्घता ।
अन्नस्य वाच्येत्थसिगाः कुजेन्दुभा धान्यान्यशेषाणि सुदुर्लभानिकम् ॥१०१॥
मुञ्चेन्न मेघोऽनृजुतां समेत्य साचार्य्यः कृशाङ्गः कुरुते महार्घताम् ।
मासेऽङ्कतुल्ये तिलतैलयोस्तथा गोधूमकानामथ शक्रभेगुरुः ॥१०२॥
मैत्रस्तुमैत्रेऽन्नमहार्घता जलेऽश्चार्कीभवर्क्षेऽनिलकाश्यपीभवौ ।
वृष्टेरभावोऽन्नमहार्घता तत ऋतौच शैषेऽसृजितक्षभे शते ॥१०३॥
पर्ज्जन्यपूज्यः सुमनस्य संक्षयोऽथाच्छे कुजर्क्षेऽन्नमहार्घता भवेत् ।
किं तत्रकोऽपिद्युचरो भवेद्यदा षण्मासतः स्यात्तुषधान्यनाशनम् ॥१०४॥

जिस मास में 'सूर्य' अग्रगामी, 'शुक्र' पृष्ठगामी और 'बुध' मध्यवर्ती हो तो उस महीने में अन्नकी महार्घता कहनी चाहिए । मङ्गल, चन्द्र और शुक्र ये तीनों मीन राशि में हों तो सब धान्य महार्घ और 'मेघ' जल नहीं वरसाते हैं । 'वक्री शनि' यदि गुरु से युक्त हो तो नवें महीने में तिल, तैल तथा गेहूं की महार्घता करते है । ज्येष्ठ में गुरु और अनुराधा में 'शनि' हो तो अन्नकी महार्घता होती है । पूर्वाषाढा में राहु शनि

ये दोनों हों तथा आर्द्रा में केतु और मङ्गल ये दोनों हों तो वर्षाका अभाव तथा अन्न की महार्घता होती है। चित्रा में मङ्गल और शतभिषामें गुरु हों तो शिशिर ऋतु में गेहूं का नाश होता है। मङ्गलकी (१।८) राशि में 'शुक्र हो तो अन्नकी महार्घता होती है। यदि कोईभी ग्रह मङ्गल की (१।८) राशि में हो तो छः महिने में तुष धान्य का नाश होता है।

महार्घ्यमुक्तं यदि तत्र शन्यही चेत्तत्र भारार्कतमोग्रहा यदा।
कार्पाससञ्ज्ञस्य गुडस्य चोदितं महार्घ्यमर्कः शनिभेऽत्र वाससाम् ॥१०५॥
महार्घता कर्किणि सामृतद्युतिः क्रूरो महार्घाणि दिनद्वयं तदा।
धान्यानिकर्केऽनिलनीलवाससौ वारध्वजौ श्यामलकान्नसंशयः ॥१०६॥
कार्पासकेन त्रिगुणंच लाभकं भवेद्यदैकर्क्षमुपागता यदा।
भभानुभौमाङ्गिरसा महार्घतां सर्वाणि धान्यान्युपयान्त्यरं तदा ॥१०७॥

शनि तथा राहु ये दोनों मङ्गल की (१।८) राशि में हों तो महार्घता को करते है। एवं शुक्र, भौम, सूर्य, राहु और केतु यदि मङ्गल की राशि में हों तो कपास और गुडकी महार्घता होती है। यदि शनिकी (१०।११) राशि में सूर्य, हो तो वस्त्र की महार्घता करता है। कर्क राशि में स्थित हुआ चन्द्रमा यदि क्रूर ग्रह से युक्त हो तो दो दिन तक धान्य महार्घ होते हैं। कर्क राशी में केतु शनि ये दोनो अथवा मङ्गल केतु ये दो नों हों तो काले अन्न अर्थात् उड़द इत्यादि का नाश और कपास में तिगुना लाभ होता है। शुक्र, सूर्य, मङ्गल और गुरु ये चारों एक राशि में हों तो शीघ्र सब अन्न महंगे होते हैं।

यस्मिन्मासे पूर्णिमायां तडित्वान्वर्षेत्तस्मिन्मासि गोधूमकानाम्।
धान्याज्यानां स्यान्महार्घ्यं मघौचेदेकर्क्षस्थौ षोडशार्चिःसुराग्र्यौ ॥१०८॥
आज्यंग्राह्यं तैलसूत्रे तिलंचदोर्मासान्तः संस्मृतः प्राज्यलाभः।
ऊर्जे मासे मार्गशीर्षेच भानोःसङ्क्रान्तौचेद्वारिवृष्टिः सहस्ये ॥१०९॥
सस्यानां स्यान्मध्यमार्द्धिर्महार्घ्यं मार्त्तण्डाद्याः पञ्च खेटा यदाऽऽर्केः।
सङ्गेसंस्थाः सर्वधान्यं महार्घ्यं ब्रूयादेवं संहिताशास्त्रविज्ञः ॥११०॥

जिस मास की पौर्णमासी को वर्षा हो उस मास में गेहूं, धान्य और घृतकी महार्घता होती है। चैत्र के महीने में शुक्र तथा गुरु ये दोनों एक राशि में हों तो घृत, तैल, सूत्र और तिलके सङ्ग्रह करने से दो महीने में 'बहुत लाभ' होता है। कार्तिक और मार्गशीर्षकी सङ्क्रान्ति के दिन जलकी वृष्टि हो तो पौषमें अन्न की मध्यम वृद्धि और अन्य पदार्थों की महार्घता होती है। यदि सूर्यादि पाँचग्रह अर्थात् सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध और गुरु ये पाँच ग्रह शनि के साथ में हों तो सब धान्य महार्घ होते हैं। इस प्रकार संहिता शास्त्रवेत्ता कहते हैं।

मृत्युपुत्रोऽथवा पात उभायामुत पाणिभे।
कार्पासस्य रसानां च वेदितव्या महार्घता ॥१११॥

केतु अथवा राहु यदि उत्तराभाद्रपदा में अथवा हस्तनक्षत्र में हो तो कपास और रसों की पण्डितजनों ने महार्घता जाननी चाहिए।

महार्घ्ययोगेष्वपि चेत्समर्घयोगो यदाऽऽगच्छतु तत्र वेद्यः।
समर्घयोगोऽतिबली यथा स्यात्संरक्षको मारकतोऽतिवीर्य्यः ॥११२॥

जब महार्घ योगों में भी समर्घ योग आजाय तो वहाँ महार्घ योगों की अपेक्षा समर्घयोग अति बलवान् जानना चाहिए जैसा कि मारक की अपेक्षा रक्षक अति बलवान् होता है ।

मिश्रित योगः—

वातं व्याप्तः क्षितितनुजनिः पिङ्गलः पौष्णयातः
पृथ्वीनाथोऽतिचलहृदयः स्यात्प्रजानाश आर्किः ।
मैत्रेशार्केऽदितिजनिगुरुश्चेत्प्रजासंक्षयःस्याद्
वेद्यं युद्धं दिशि जलपतेः संहिताशास्त्रदक्षैः ॥११३॥

स्वाति में मङ्गल और रेवती में सूर्य हो तो राजाका हृदय अत्यन्त चञ्चल और प्रजाका नाश होता है । अनुराधा में शनि और ज्येष्ठा में गुरु हो तो प्रजाका नाश और पश्चिम दिशा में युद्ध होता है । इस प्रकार संहिताशास्त्र में निपुण पण्डितों ने जानना चाहिए ।

शूर्पे शक्रस्यमंत्री मृदुरनलभगश्चानयोऽतीव घोरो
वाच्यो विज्ञैः प्रजानामथ यदि तु तयोरेकभं यातयोश्चेत् ।
प्रोक्तः पुर्य्याः प्रभेदः सकुज इनजनिर्वासवे वारिवाहा
नोवर्षेयुःकबन्धं सुचतुरगणकैः सस्यहानिर्निरुक्ता ॥११४॥

विशाखा में गुरु और कृत्तिका में शनि हो तो पण्डितजनोंने प्रजाके मध्यमें अत्यन्त घोर अनीति कहनी चाहिए । यदि वे (गुरु, शनि) दोनों एक नक्षत्र में हों तो नगरभेदन कहा है । धनिष्ठा में शनि हो और वह मङ्गल से युक्त हो तो मेघ जल नहीं वरसाते और चतुर गणकों ने धान्यकी हानि कही है ।

सञ्ज्ञाभूशोणिताच्छा यदि वसुभगता वारिवाहा गर्ज्जन्ति
वर्षेयुर्नो कविन्दु गुरुरहिरिनजो वार्कभे दुःखिताः स्युः ।
पृथ्वीपाला अनाथा रविकविसचिवा एकभस्थाः कृशानो—
रुद्वेगो वातभीतिः फणिरविरुधिराः सौरिशुक्रेन्दवश्च ॥११५॥

प्राग्देशे चातिपीडा क्षितिरिह सभया स्यात्प्रजासंक्षयो रुग्—
भीतिर्नाशो नृपाणां यमशशितपनास्त्वास्तमश्चन्द्रजश्च ।
एकर्क्षस्थास्तदानीं यमदिशिभयदा एकराशिं प्रयाताः
पाप्याक्र्यादित्यपाताः सुरदनुजगुरू तत्रभीवर्द्धकाः स्युः ॥११६॥

भङ्गश्छत्रस्य चान्द्रेर्दिशि शशिकुटिलार्का यमेज्येन्दुजाश्च
राज्ञांनाशः सभीर्भूर्भवति गदभयं संक्षयोवै प्रजानाम् ।
एकर्क्षस्थाः सभौमा भगभृगुगुरवः सर्वधान्यं महार्घ्यं
व्याधिर्मीरेकभस्थाः सवितृसितविदोऽशेषधान्यं महार्घ्यम् ॥११७॥

स्वल्पाम्भोदाः पयोदा बहुलभयकरा एकनक्षत्रगास्ते
सम्प्राप्ता एकराशाविनगुरुकवयो राज्यभङ्गोमहार्घ्यम् ।
धान्यानां चाखिलानां क्षय इहकथितोऽङ्गैः प्रजानां तमोभा—
ऽऽर्कीज्या एकर्क्षगाः कं ददति जलधरः स्यान्महार्घ्यं समानम् ॥११८॥

धनिष्ठा में शुक्र, शनि और मङ्गल ये तीनों हों तो मेघ गरजते हैं किन्तु जलका बिन्दु मात्र भी नहीं वरसाते। हस्त में गुरु, राहु वा शनि हों तो राजा अनाथ होकर दुःखित होते हैं। सूर्य, शुक्र और गुरु एक राशि में हों तो अग्निका उद्वेग और वात से भय होती है। राहु, सूर्य और मङ्गल ये तीनों अथवा शनि, शुक्र तथा चन्द्रमा ये तीनों एक राशि में हों तो पूर्व देश में अति पीडा, पृथ्वी भय से युक्त, प्रजा का नाश, रोग, भय और राजाओंका नाश होता है। शनि, चन्द्र, सूर्य, मङ्गल, राहु और बुध एक राशि में हों तो दक्षिण दिशा में भयदायक होते है। एवं भौम, शनि, सूर्य, राहु, गुरु और शुक्र एक राशि में हों तो भयवर्धक होते हैं एवं उत्तर दिशा में छत्रभङ्ग होता है। चन्द्र, मङ्गल, सूर्य, शनि, गुरु और बुध ये एक राशि में हों तो राजाओंका नाश, पृथ्वी भययुक्त, रोग, भय और प्रजाका नाश होता है। सूर्य, शुक्र, गुरु और मङ्गल एक राशि में हों तो सब धान्य महार्घ्य, रोग और भय होता है। सूर्य, शुक्र तथा बुध एक राशि में हों तो सब धान्य महार्घ्य होते है। यदि वे (सूर्य, शुक्र तथा बुध) एक नक्षत्र में हों तो मेघ अल्प जल देनेवाले और भयप्रद होते हैं सूर्य, गुरु और शुक्र ये तीनों एक राशि में हों तो सब धान्यों की महार्घता और प्रजाजनों का नाश कहा है राहु, शुक्र, शनि और गुरु एक राशि में हों तो मेघ जल वरसाते है और सब अन्नों की महार्घता होती है।

याता एकर्क्षमस्वारुणतनयसिताः स्यात्प्रजानां विनाशो
भूपा नश्यन्ति भारासितबुधधिषणा वस्त्रधात्वोर्महार्घ्यम् ।
देशभ्रंशः प्रजानां क्षय इनविधुविद्विप्रखेटाः पयोदा
वर्षेयुः स्यान्महार्घ्यं निर्ऋतिदिशि तदा नाश उक्तः प्रजानाम् ॥११९॥

मङ्गल, शनि और शुक्र एक राशि में हों तो प्रजाजनों का नाश और राजा लोग नष्ट होते हैं। शुक्र मङ्गल, शनि, बुध और गुरु एक राशि में हों तो वस्त्र और धातुकी महार्घता, देशभ्रंश और प्रजाका नाश होता है। सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु और शुक्र ये पाँच ग्रह एक राशि में हों तो मेघ वरसते हैं एवं महार्घता और नैर्ऋत्य दिशा में प्रजाका नाश कहा है।

एकत्र याता द्विजराजखेचरमन्दाः प्रपीडा कुभुजां महार्घता ।
अन्नस्य शस्त्राभिभयप्रतप्तकाः क्रदन्ति लोकास्तत एकराशिगौ ॥१२०॥
पातङ्गिपातौ भयविह्वला नृपा निःशेषधान्यस्य महार्घता भवेत् ।
मृगेन्द्रगा विद्विधुवाग्मिबाहुजाः स्याच्छत्रभङ्गो धरणिर्दराकुला ॥१२१॥
प्रजाक्षयो वैश्वभगो भगात्मजो विभावसुः सप्तमभेऽम्बुनाशनम् ।
नूनं प्रजानां महदेव सन्ततं स्यात्क्रन्दनं भास्करिरिज्ययुग् यदा ॥१२२॥

किं सप्तमेदेवगुरोः स्थितः प्रजाभूपा विनश्यन्ति तथान्नसंक्षयः ।
असृग्यमौ कर्कमृगान्त्यकन्यकाश्रितौ धरित्री धनधान्यवर्जिता ॥१२३॥

युद्धाकुला द्वन्द्वभसंश्रितोऽसितो नश्यन्ति भूपाःक्षितिरस्रपूरिता ।
अवौ रविश्चेद्वविरोहितद्युती रणो महान्भूमिभुजां सरुग्भयाः ॥१२४॥

जना यदैकर्क्षगयोर्भमन्दयोरस्तं तदान्नार्त्तिरिहाहवो महान् ।
देशे च देशे कलिरर्कजोध्वजोऽसृग्वा प्रियायास्तुहिनद्युतेरनः ॥१२५॥

भिन्द्यात्समस्तं हि जगत्क्षयं व्रजेत्तमोज्ञकृष्णाः शनिभे तदा नृणाम् ।
कष्टं पशूनांच समैकभाश्रिता आर्क्यस्रजीवाः समसप्तकेऽथवा ॥१२६॥

क्षुच्छस्त्रभीतिर्ननु रक्षसां पुरे साकेतसञ्ज्ञे किमुमध्यदेशके ।
दृश्यन्त एकत्र गुरुः कुजः शनिर्भृश्च क्षितीशां क्षयमादिशेत्तदा ॥१२७॥

यदि मङ्गल, गुरु, शुक्र, शनि और सूर्य ये पाँचों ग्रह एकत्र हों तो राजाओं के मध्य में पीडा, अन्न की महार्घता, शस्त्र से भय तथा सन्ताप एवं प्रजाजन पीडित होते हैं। राहु और शनि एक राशि में हों तो लोग भय से व्याकुल और सब प्रकार के अन्न की महार्घता होती है। बुध, गुरु, मङ्गल, सूर्य और चन्द्र ये पाँचों ग्रह सिंह राशि में हों तो छत्रभङ्ग, 'पृथ्वी' भय से व्याकुल और प्रजाका नाश होता है। उत्तराषाढा में शनि हो और सप्तम राशि वा नक्षत्र में सूर्य हो तो अवर्षण और प्रजाजनों को महत् कष्ट होता है। यदि 'शनि' गुरु से युक्त हो अथवा गुरु से सप्तम राशि पर हो तो राजाओंका नाश और अन्न की हानि होती है। कर्क और मकर में अथवा मीन और कन्या में मंगल, शनि ये दोनों हों तो 'पृथ्वी' धन धान्य से रहित और युद्ध से व्याकुल होती है। यदि मिथुन राशि में शनि हो तो राजाओंका नाश और पृथिवी रुधिर से परिपूर्ण होती है। मेष में सूर्य और वृष में मंगल हो तो राजाओंका महान् सङ्ग्राम, प्रजाजनों में रोग तथा भय होती है। जब एक राशि में प्राप्त हुए शुक्र और शनि ये दोनों अस्त हों तो अन्नसे पीडित, महान् सङ्ग्राम और देश देश में कलह होता है। शनि, केतु वा मंगल यदि रोहिणी शकट का भेदन करे तो सम्पूर्ण जीव नाश को प्राप्त होते हैं। यदि राहु, बुध और शनि ये तीनों शनि की (१०।११) राशि में हों तो मनुष्य और पशुओं को कष्ट होता है। शनि, मंगल और गुरु ये तीनों एक सम राशि में हों अथवा समसप्तक राशि में हों तो लङ्का (सिलोन) में, साकेत (अयोध्याप्रान्त) में अथवा मध्य देश में क्षुधा (भूख) तथा शस्त्र से भय होती है। यदि भौम, शुक्र, शनि और गुरु ये चारों एकत्र दिखाई दें तो राजाओंका नाश कहे।

पञ्चानने भो रुधिरस्तुलाधरे वागीश्वरः कर्किणि धूलिवर्षणम् ।
मरुन्महान् धान्यमहार्घता ततः पातः सपापः कलशेऽत्र सङ्ग्रहे ॥१२८॥
गोधूमसूत्राभिधयो रसोन्मिते मासेतु लाभः प्रभवेच्चतुर्गुणः ।
पङ्गवारपूज्याः कविभे किमिज्यभावेकर्क्षगौ वर्षणमाहवोऽथवा ॥१२९॥

सिंह में शुक्र, तुला में मंगल और कर्क में गुरु हो तो धूलिवर्षण, महान् वायु एवं अन्न की महार्घता होती है। कुम्भ में स्थित राहु यदि पापसे युक्त हो तो गेहूं और सूत्र के सग्रह करने से छठे महीने चौगुणा

लाभ होता है। मंगल, शनि और गुरु यदि शुक्र की (२।७) राशि में हों अथवा गुरु शुक्र एक राशि में हों तो वर्षण अथवा संग्राम होता है।

एकर्क्षे तपनात्मजासुरगुरू सर्वं तदार्घं समं
स्याद्दीर्घः पवनस्तमो गुरुयमा एकर्क्षगा भूपभीः।
धान्यानीह सुभिक्षितानि पृतनादुःखं सवर्षोपला-
वृष्टिर्ग्लौभकुजा वृषानिमिषगाः सामर्घ्यमल्पं जलम् ॥ १३० ॥

शनि और शुक्र ये दोनों एकराशि में हों तो सब अर्घ (भाव) समान और दीर्घ वायु होता है। राहु, गुरु और शनि ये तीनों एकराशि में हों तो राजा से भय, धान्यों की उत्पत्ति से सुभिक्ष, सेना में पीडा और उपलों युक्त वर्षा होती है। चन्द्र, शुक्र और मङ्गल ये तीनों मीन में वा वृष में हों तो समर्घता और अल्प जल होता है।

एकर्क्षे ग्रहपञ्चकं भुजभवौ विप्रौ शनिश्चाम्बुदा
नो मुञ्चन्त्यमृतं कृषिश्च सकला नष्टा महार्घ्यं तदा।
ज्ञेयं कुङ्कुमपूर्वकस्य सचिवौ पातश्च पण्ढग्रहौ
खेटाः पञ्च यदैकभे नृविषयार्त्तिः स्यान्महार्घ्यं भुवि ॥ १३१ ॥
धातोः स्वर्णमुखस्य दक्षगणकैर्दुर्भिक्षकं कीर्त्तितं
विप्रव्योमचरौ बुधौ खगवरश्चैकर्क्षसंस्था यदि।
पञ्चाकाशचराः कबन्धसहिताः स्युर्गर्जमाना घना
वृष्टिः स्याद्दिशि रक्षसामविरतं मूल्यंमहद्वस्तुनाम् ॥ १३२ ॥

रवि, मङ्गल, शुक्र, गुरु और शनि ये पाँचों ग्रह एकराशि में हों तो मेघ जल नहीं बरसाते, सम्पूर्ण खेती नष्ट एवं कुङ्कुमादिकी महार्घता होती हैं। गुरु, शुक्र, शनि, राहु और बुध ये पाँचों ग्रह एक राशि में हों तो मनुष्यों में तथा देश में पीडा एवं सुवर्णादि धातुकी महार्घता और दुर्भिक्ष होता है। सूर्य, बुध, चन्द्र, शुक्र तथा गुरु ये पाँचों ग्रह एकराशि में हों तो जल युक्त मेघ गरजते है और नैर्ऋत्य दिशा में वृष्टि एवं वस्तुओंके मूल्य की महार्घता होती है।

राजन्यासितवाडवाम्बरचराश्चेदेकराशौ जन-
देशार्त्तिश्च महार्घ्यकाणि सततं धान्यानि सर्वाणिच
भूपानामकमेव पञ्चखचराः सार्का यदैकर्क्षगा
ज्येष्ठे मासि भवन्ति जीवनभृतां रोधो भवेच्छ्रावणे ॥ १३३ ॥
कुत्रचिच्छत्रभङ्गाय यदोर्ज्जनवमीतिथौ।
पञ्चखौकस एकस्था अकालेऽप्यतिवृष्टितः ॥ १३४ ॥

नद्यः पूर्णा घनैर्मार्गशीर्षे पञ्चैकभेऽग्रगाः ।
अतिमारी जनेषु स्यान्नृपाणां मरणं क्वचित् ॥ १३५ ॥

गुरु, सूर्य, शुक्र, शनि और मङ्गल ये पाँचो ग्रह एक राशि में हों तो प्रजाजनों में तथा देश में पीडा एवं सब धान्यों की महार्घता और राजाओं को कष्ट होता है । यदि ज्येष्ठ मास में सूर्य सहित पाच ग्रह एक राशि में हों तो श्रावण में मेघों का अवरोध और कहीं छत्रभङ्ग होता है । यदि कार्तिक की नवमी के दिन पाँच ग्रह एक राशि में हों तो अकाल में भी मेघों के द्वारा अतिवृष्टि होने से नदी परिपूर्ण होती है । एवं मार्गशीर्ष में पाँच ग्रह एक राशि में हों तो प्रजाजनों में अतिमारी और कहीं राजाओं का मरण होता है ।

चत्वारः खेचराः पञ्च यद्यैकर्क्षगता यदा ।
मांसला भूभृतां भूरि भयं दुःखं विपक्षजम् ॥ १३६ ॥

यदि बलवान् चार अथवा पाँच ग्रह एक राशि में हों तो राजाओं के मध्य में बहुत भय तथा शत्रुजन्य दुःख होता है ।

निघ्नन्ति पञ्च द्युचराश्चतुष्पदान् राज्ञो विनिघ्नन्त्यखिलान् खगास्तु षट् ।
निघ्नन्ति देशान्सकलान्नभश्चराः सप्ताष्ट चैतैरिह कूटयोगकः ॥ १३७ ॥

यदि एक राशि में पाँच ग्रह हों तो चतुष्पदों को मारते हैं । एक राशि में छः ग्रह हों तो सम्पूर्ण राजाओं को मारते हैं । एवं एक राशि में सात अथवा आठ ग्रह हों तो समस्त देशों को मारते हैं और इन ग्रहों से यह 'कूटयोग' होता है ।

मासे यस्मिन् षट्खगैरेकभस्थैर्गोलो योगो वासवोऽप्यन्तमेति ।
भूभृन्नाशो निम्नगा निःकबन्धा लोका रङ्काः सन्त्यजेत्सूनुमम्बा ॥ १३८ ॥

जिस मास में, एक राशि में छः ग्रह हों वह 'गोलयोग' होता है । उस में इन्द्र भी नाश को प्राप्त होता है । एवं राजाओंका नाश, नदी निर्जल, लोग निर्धन और माता पुत्र को त्याग देती है ।

गोलो योगः सप्तवाऽष्टौ विहङ्गा मासे यस्मिन्नेकराशिं प्रयाताः ।
अस्मिन् योगे जायते राष्ट्रपीडा दुर्भिक्षाख्यं चैवमाहुः खगज्ञाः ॥ १३९ ॥

जिस महिने में सात अथवा आठ ग्रह एक राशि में हों तो यह 'गोल योग' होता है । इस योग में राष्ट्र में पीडा और दुर्भिक्ष होता है । इस प्रकार पण्डितजन कहते हैं ।

प्रतीपगौ द्वौ द्युचरौ तु यस्मिन्मासे तदा क्षोभयतो नृपालम् ।
प्रतीपगाः पुष्करगास्त्रयश्चेद्वृष्टिप्रदाः सङ्गरभीतिदाः स्युः ॥ १४० ॥

जिस मास में दो ग्रह वक्री हों उस में राजा को क्षोभ करते हैं ।एवं जिस मास में तीन ग्रह वक्री हों वे वृष्टिदायक, सङ्ग्राम और भयदायक होते हैं ।

राज्यस्थ भङ्गं कुटिलत्वमाप्ताश्चत्वर आकाशसदः प्रकुर्य्युः ।
प्रतीपगाः पञ्चविहङ्गमाश्चेद्राष्ट्रस्य राज्यस्य विभङ्गदास्ते ॥ १४१ ॥

यदि चार ग्रह वक्रत्व को प्राप्त हों तो राज्यभङ्ग करते हैं। एवं पाँच ग्रह वक्री हों तो देश तथा राज्य का नाश करते हैं।

तिथौ खरांशोर्धरणीकुमारच्छायाजनी चेदनृजत्वमाप्तौ ।
रवस्तदानीं मनुजेषु हाहाकारो विशेषाद्दिशि दक्षिणस्याम् ॥ १४२ ॥

सप्तमी तिथि में मङ्गल और शनि ये दोनों वक्रत्व को प्राप्त हों तो मनुष्यों में विशेषतः दक्षिण दिशा में हाहाकारशब्द होता है।

वाचामधीशः किमु रोहितच्छविर्मलिम्लुचे मासि गृहान्तरं व्रजेत् ।
वृष्टिस्तदा स्यान्महती परिक्षयो मनूद्भवानामिति कोविदा विदुः ॥ १४३ ॥

मलमास में गुरु अथवा भौम दूसरी राशि में जाँय तो बहुत वृष्टि और मनुष्यों का नाश होता है। इस प्रकार पण्डित जनों ने जानना चाहिए।

महायोगः—

यद्येकभस्थौ भगतत्कुमारौ छायाक्षमाजौ तिमिरारुणो स्थौ ।
पृथ्वीजपूज्यावसितामरार्च्यौ स्मृतो महायोग इलाक्षयाय ॥ १४४ ॥

जब सूर्य शनि, शनि मङ्गल, राहु शनि, मङ्गल गुरु और शनि गुरु ये एक राशि में स्थित हों तो यह 'महायोग' होता है। यह पृथ्वी के नाश के लिए होता है।

दिग्दाह योगः—

पतङ्गतः पञ्चमराशिगोऽथवा कलत्रगो ग्लौः क्षितिजः क्षतोपगः ।
दिग्दाहयोगो गदितो विपश्चिता भवेत्स तूल्कापतनादिकारकः ॥ १४५ ॥

सूर्य से पञ्चम वा सप्तम राशि में यदि 'चन्द्रमा' हो और षष्ठराशि में मङ्गल हों तो पण्डितजनों ने यह 'दिग्दाहयोग' कहा है। यह उल्कापात करनेवाला होता है।

पीतो वर्णो दिशां दाहः साध्वसायावनेर्भुजाम् ।
वर्णोऽरुणोऽन्ननाशाय देशनाशाय पावकः ॥ १४६ ॥

यदि दिग्दाह पीत वर्ण का हो तो राजाओं के लिए भयप्रद, लाल वर्ण का दिग्दाह सस्य की हानिप्रद और अग्नि वर्ण का दिग्दाह देशनाशक होता है।

भूकम्प योगः—

उपप्लवः सप्तमराशिगोऽसृजस्ततो बुधः पञ्चमराशिगस्ततः ।
चतुष्टयस्थः सितपद्मबान्धवो भूकम्पयोगः कृतिनैष कथ्यते ॥ १४७ ॥

मङ्गल से सातवीं राशि में राहु हो उस से पाँचवीं राशि में बुध हो और उस से केन्द्र में चन्द्रमा हो तो पण्डितजनों ने यह 'भूकम्पयोग' कहा है।

भूकम्पयोगे द्विजपूर्वकाणां यामक्रमेणाशुभकृन्निरुक्तः।
अनिष्टकृन्मानवनायकानां भवेत्स सन्ध्याभिधयोर्द्वयोश्चेत्॥ १४८ ॥

यह भूकम्पयोग प्रथमादि प्रहरों के क्रम से ब्राह्मणादि वर्णों के लिए अनिष्टकारक कहा है। एवं दोनों सन्ध्याओं में होनेवाला भूकम्प राजाओंका अनिष्ट करनेवाला होता है।

घात योगः—

सञ्ज्ञासूनुद्वादशार्चिर्मघाभूतारापुत्रा एकभं संश्रिताः स्युः।
पूर्वाचार्य्यैः पेशलैर्घातयोगः प्रोक्तस्तस्मिञ्जायते पांशुवृष्टिः॥ १४९ ॥

यदि शनि, गुरु, शुक्र और बुध ये चारों ग्रह एक राशि में हों तो पूर्वाचार्यों ने 'घातयोग' कहा है। उक्त योग में धूली वर्षा होती है।

एकांशगत ग्रहों के द्वारा धान्यादि सङ्ग्रह से धन लाभ का परिज्ञानः—

एकांशगौ यदि हरी अनुराधिकास्थौ
धान्यस्य सङ्ग्रहणमर्थदमिज्यदृष्टौ।
एकांशगौ भुजभुवौ निजतुङ्गयातौ
सस्यस्य सङ्ग्रहणमर्थदमुक्तमाद्यैः॥ १५० ॥

अनुराधा नक्षत्र में स्थित सूर्य चन्द्र ये दोनों एक नवांश में हों तो धान्य का सङ्ग्रह धनप्रद होता है। बृहस्पति से दृष्ट होकर मंगल सूर्य यदि अपनी उच्च राशि में हों और एक ही नवांश में स्थित हों तो सस्य (साठी) का संग्रह धनप्रद होता है। इस प्रकार प्राचीन पण्डितों ने कहा है।

एकांशलग्नोपगयोर्भमन्दयोर्दुर्वर्णसस्यग्रहणं स्ववृद्धिकृत्।
एकांशदेहोपगयोर्भचन्द्रयोर्ग्राह्याणि धान्याम्बररूप्यकाणि हि॥ १५१ ॥

प्रश्न लग्नस्थ शुक्र तथा शनि ये दोनों एकनवांश में हो तो चान्दी और साठियों के संग्रह करने से धन की वृद्धि होती है। प्रश्नलग्नस्थ शुक्र तथा चन्द्र ये दोनों एक नवांश में हों तो धान्य, वस्त्र और चान्दी के संग्रह से धन का लाभ होता है।

ग्राह्यं स्वर्णं स्वर्क्ष उच्चेऽर्कजीवावेकांशस्थौ कोणयोर्वाथ रूप्यम्।
ग्राह्यं भार्कौ स्वत्रिकोणोपयातावेकांशस्थौ प्रत्यहं तस्य वृद्धिः॥ १५२ ॥

एकनवांश में स्थित होकर सूर्य तथा गुरु ये दोनों अपनी राशि में अपनी उच्च राशि में वा अपनी मूल-त्रिकोण राशि में हों तो सुवर्ण के संग्रह करने से 'धन लाभ' होता है। यदि शुक्र और सूर्य ये दोनों अपनी मूल त्रिकोण राशि में स्थित होकर एक नवांश में हों तो प्रति दिन चान्दी की वृद्धि होती है अतः चान्दी का संग्रह करना चाहिए।

मन्दार्कयोरेकलवोपयातयोर्यत्र द्वयोश्चेल्लग्नकोदयोपरि।
कृष्णाश्म सङ्ग्राह्यमथैकभागगौ गात्रङ्गतौ भोऽचिकुरश्च सङ्ग्रहम् ॥ १५३ ॥

छत्रस्य शस्त्रस्य च वाहनस्य च शस्तं यदैकांशगतौ भपासृजौ।
स्वर्क्षोपगावायुधसङ्ग्रहेण तु भवेन्मनुष्यः प्रविदारणे जयी ॥ १५४ ॥

जहां शनि और सूर्य ये दोनों एकनवांश में स्थित होकर लग्नगत नवांश में हों वहां कृष्ण वर्ण की वस्तुओं का और लोहे का संग्रह करने से धनलाभ होता है। प्रश्न लग्नस्थ शुक्र और केतु ये दोनों एक नवांश में हों तो छत्र, शस्त्र तथा वाहन का संग्रह करना हितकर होता है। स्वराशिगत चन्द्र तथा मंगल ये दोनों एक नवांश हों तो शस्त्र के संग्रह करने से 'मनुष्य' संग्राम में विजयी होता है।

प्राप्स्यन्तौ ग्रहणं विनोरगरवी एकांशके स्वाप्तये
कार्यं भूग्रहणं पताकतपनावेकांश आर्कीक्षितौ।
तद्वद्भौमभृगू यदैकलवगौ क्षेत्रं प्रयत्नेन सं-
ग्राह्योयाद्धनवृद्धये बुधकवी तद्वद्यदैकांशगौ ॥ १५५ ॥

राहु और सूर्य ये दोनों ग्रहण काल के अतिरिक्त यदि एक नवांश में प्राप्त हों तो धन लाभ के लिए भूमि का संग्रह करे। एवं सूर्य तथा केतु ये दोनों एक नवांश में स्थित होकर शनि से दृष्ट हों तो भी भूमि के संग्रह से 'धन का लाभ' होता है। यदि मंगल तथा शुक्र एकनवांश में हों तो धन वृद्धि के लिए यत्न से क्षेत्र का संग्रह करे। एवं बुध और शुक्र ये दोनों एक नवांश में स्थित हों तो भी धन वृद्धि के लिए क्षेत्र का संग्रह करे।

सर्वतोभद्रचक्रोद्धाररीतिः—

विन्यस्याशा रेखिका ऊर्ध्वयातास्तिर्य्यग्रेखाः खेन्दुतुल्याश्च तद्वत्।
कात्यायिन्यै सर्वतोभद्रचक्रमीशेनोक्तं यामले ब्रह्मसञ्ज्ञे ॥ १५६ ॥

दश रेखा ऊर्ध्व (खडी) और दश रेखा तिरछी (आडी) देने से यह सर्वतोभद्र (एकाशीतिपद) चक्र ८१ कोष्ठ (कोठों) का होता है। यह चक्र ब्रह्मयामलग्रन्थ में श्रीपार्वतीजी से श्री शिवजी ने कहा है।

‘ सर्वतोभद्रचक्रमिदम् ’

ईशान कोण — पूर्वदिशा — आग्नि कोण

उत्तरदिशा (बायें) — दक्षिणदिशा (दायें)

अ०	कृ०	रो०	मृ०	आर्द्रा	पुन०	ति	आश्ले०	आ०
भर०	उ०	अ०	व	क	ह	ड	ऊ	म०
अश्वि	ल	लृ	वृष	मिथुन	कर्क	ॡ	म	पू.फा.
रेव०	च	मेष	ओ	नंदा १।६।११ र.मं.	औ	सिंह	ट	उ.फा.
उ.भा०	द	मीन	रिक्ता ४।९।१४ शु.	पूर्णा ५।१०।१५ शनि	भद्रा २।७।१२ चं.बु.	कन्या	प	ह.
पू.भा०	स०	कुम्भ	अः	जया ३।८।१३ गु	अं	तुला	र	चि०
शत०	ग	ऐ	मकर	धनु	वृश्चिक	ए	त	स्वा.
धनि.	ऋ०	ख	ज	भ	य	न	ॠ	वि.
ई	श्रव	अभि०	उ.षा	पू.षा०	मू.	ज्ये	अनु	इ

वायव्य कोण — पश्चिम दिशा — नैर्ऋत्य कोण

स्वरा अकारप्रमुखाश्च सृष्टिमार्गेण देया विदिशि प्रकोष्ठे ।
ईशादिकायामिह षोडशैवं चतुश्रमं चाथ लिखेत्क्रमेण ॥ १५७ ॥
पुरन्दराशाप्रभृतौ कृशानुपूर्वाणि धिष्ण्यानि च सप्त सप्त ।
भुजङ्गदोस्सम्मितसंख्यया भतिथीश्च वर्णान् कुजपूर्ववारान् ॥ १५८ ॥*

ईशानादि चारों विदिशाओं (कोणों) में सृष्टिमार्ग (सव्यक्रम) से अर्थात् सोलह कोष्ठों में आकारादि १६ स्वरों को सीधे क्रम से एक एक करके चार आवृत्ति में लिखे अर्थात् अ उ ऌ ओ ईशान में, आ ऊ ॡ औ आग्नेय में, इ ऋ ए अं नैऋत्य में, ई ॠ ऐ अः वायव्य में लिखे। अभिजित् सहित कृत्तिकादि २८ नक्षत्रों को पूर्वादि चारों दिशाओं में सव्यक्रम से कृत्तिकादि सात सात नक्षत्रों के क्रम से लिखे अर्थात् कृत्तिकादि ७ नक्षत्र पूर्व दिशा में, मघादि ७ नक्षत्र दक्षिण दिशा में, अनुराधादि ७ नक्षत्र पश्चिम दिशा में और धनिष्ठादि ७ नक्षत्रों को उत्तरदिशा में लिखे। वृषादि तीन तीन राशियों को सव्यक्रम से पूर्वादि चारों दिशाओं में लिखे। तदनन्तर पूर्व में नन्दा, दक्षिण में भद्रा, पश्चिम में जया, उत्तर में रिक्ता और मध्य में पूर्णा तिथियों को लिखे। एवं भौम तथा रविवार को नन्दा के कोष्ठ में, बुध तथा सोम को भद्रा के कोष्ठ में, गुरु को जया के कोष्ठ में, शुक्र को रिक्ता के कोष्ठ में और शनि को पूर्णा के कोष्ठ में लिखे।

---

* अस्मिश्चक्रे स्वराणां वर्णानां वृषादिराशीनां नन्दादितिथीनां भौमादिवाराणां च स्थापनविधिर्ग्रन्थान्तरे स्पष्टतया प्रोक्तः स च यथाः—अवकहडा दिशि प्राच्यां मटपरताश्च दक्षिणे । नयभजखाश्च वारुण्यां गसदचलास्तथोत्तरे १ नयत्रयो वृषाद्याश्च पूर्वाशादि बुधैः क्रमात् । राशयो द्वादशैवं तु मेषान्ताः सृष्टिमार्गतः २ शेषेषु कोष्ठकेष्वेवं नन्दादितिथिपञ्चकम् । वाराणां सप्तकं लेख्यं भौमादित्यक्रमेण च ३ भौमादित्यौ च नन्दायां भद्रायां बुधशीतगू । जयायां च गुरुः प्रोक्तो रिक्तायां भार्गवस्तथा ४ पूर्णायां शनिवारश्च लेख्यं चक्रेऽत्र निश्चितम् ’ इति ।

वेध परिज्ञानः—

निजे निजे भे सकलान्विहङ्गमान् संविन्यसेद् यद्गतः खगस्ततः ।
वेधत्रयं खेचरदृग्वशेन च वामे तथा सम्मुखदक्षयोर्भवेत् ॥ १५९ ॥

वेध के अवलोकन के समय में सब सूर्यादि ग्रहों को अपने अपने अधिष्ठित नक्षत्रपर लिखे अर्थात् अभीष्ट समय में जो ग्रह जिस नक्षत्रपर स्थित हो उस ग्रह को इस चक्र में भी उसी अधिष्ठित नक्षत्रपर लिखे। जिस नक्षत्रपर ग्रह स्थित हो उस नक्षत्र के स्थान से ग्रह की दृष्टि के अनुसार वाम, सम्मुख तथा दक्षिण इन तीन ओर को 'वेध' होता है अर्थात् ग्रह की जिस ओर को दृष्टि हो उसी ओर को 'वेध' होता है जिस ओर दृष्टि न हो उस ओर 'वेध' नहीं होता है।

दृग्दक्षिणा वक्रगतेर्द्युचारिणः स्याद्वामदृष्टिर्द्रुतगामिनस्तथा ।
दृङ् मध्यमा मध्यगतेर्दिवौकसो मतैवमीक्षा कुजपूर्वपञ्चके ॥ १६० ॥

भौमादि पाँचों (मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि) के मध्य में जो ग्रह वक्री हो उस की अपसव्य (दक्षिण वा दाहिनी) ओर को 'दृष्टि' होती है। जो ग्रह शीघ्रगामी (मार्गी वा अतिचारी) हो उस की सव्य (वाम वा बांई) ओर को 'दृष्टि' होती है। एवं जिस ग्रह की स्पष्ट गति अपनी मध्यम गति के समान हो अर्थात् मध्यचारी हो उस की दृष्टि सामने को होती है।

सदाऽनृजू पातपताकसञ्ज्ञकौ स्यातां रवीन्दू द्रुतगामिनौ तथा ।
*
एकस्वभावस्य च हेतुना गतेरेषा सदा दृक्त्रितयं समीरितम् ॥ १६१ ॥

राहु और केतु की सदा 'वक्रगति' होती है। एवं सूर्य तथा चन्द्र की 'शीघ्रगति' होती है। उक्त ग्रहों की गति का एक स्वभाव होने के कारण उक्त ग्रहों की नित्य तीनों ओर (वाम, दक्षिण और सम्मुख) को 'दृष्टि' होती है।

दृशा वामया दक्षया चाग्रदृष्ट्या त्रिधा कीर्त्तिता वेधसञ्ज्ञाः खगानाम् ।
उडूनां तथा भाक्षराणां स्वराणां तिथीनां च वेधा बुधैः पञ्चधोक्ताः ॥ १६२ ॥

ग्रहों की वाम, दक्षिण और सम्मुख दृष्टि से तीन ओर को वेध कहे हैं। उन उक्त वेधों से नक्षत्र, राशि, अक्षर, स्वर और तिथि ये पाँच वेधे जाते हैं अतः पण्डितजनों ने वेध के पाँच प्रकार कहे हैं।

सव्यापसव्येन विलोचनेन संवेधयेद्विष्णुपदाधिवासी ।
ताराितिथी चाक्षरभस्वरान्यद्धं सम्मुखं सम्मुखवीक्षणेन ॥ १६३ ॥

---

* इह श्रीमद्दैवज्ञेन चरणहस्तिना तु वेधज्ञानं प्रकारान्तरेणोक्तम् ' ' तद्यथा '—वक्री दक्षं कर्णगत्याऽथ वामं शीघ्रो विध्येद्वीक्षतेऽग्रे समस्तम्। नित्यं वक्रौ राहुकेतू रवीन्दू नित्यं शीघ्रौ दृश्ययां तुल्यरूपौ ' । इत्यत्र यस्य ग्रहस्य यादृशी दृक् तद्वशेन ग्रहस्य तादृग्विधो वेधः । किन्त्वेतन्न बहूनां मतं तेन नादरणीयम् ।

वेध कर्ता ग्रह की यदि वाम दृष्टि हो तो बांई ओर के, तथा दक्षिण दृष्टि हो तो दाहिनी ओर के नक्षत्र, तिथि, अक्षर, राशि और स्वर इन पाँचों में से जो जो वेध की सीध में हों उन सबही को वेध होता है। एवं सम्मुख दृष्टि से केवल सामने के एक नक्षत्र को ही वेध होता है अर्थात् सम्मुखस्थ वर्ण, स्वर, राशि और तिथि को वेध नहीं होता है।

प्रत्येक नक्षत्रस्थान से वेध परिज्ञानः—

हन्यात्खगो वह्निभगो भरण्यकारौ वृषं तं हरिभं द्विदैवम्।
नन्दां च भद्रां च तिथिं तुलां चेत्ताराग्रहो वक्रग एकमेव ॥ १६४ ॥
याम्यं हरेत्सत्वरगो ग्रहेन्द्रोऽकारं तुलां तं वृषभं च नन्दाम्।
भद्रां सवारां द्विपतिं च मध्यगत्या समः सम्मुखगं श्रवोभम् ॥ १६५ ॥

यदि कृत्तिका नक्षत्र में 'ग्रह' स्थित हों तो वह भरणी नक्षत्र, अकारस्वर, वृष राशि; तकार अक्षर; श्रवण तथा विशाखा नक्षत्र; नन्दा तथा भद्रा तिथि एवं तुला राशि को वेधता है। यदि वह कृत्तिका स्थित तारा (भौमादि पाँच) ग्रह वक्री हो तो दक्षिण दृष्टि से केवल भरणी नक्षत्र को ही वेधता है। यदि कृत्तिका स्थित तारा ग्रह शीघ्र गामी हो तो अकारस्वर, तुलाराशि, तकार अक्षर, वृष राशि वार सहित नन्दा तथा भद्रा तिथि और विशाखा नक्षत्र को वाम दृष्टि से वेधता एवं कृत्तिका स्थित तारा ग्रह की स्पष्ट गति अपनी मध्यम गति के समान हो तो सम्मुख दृष्टि से श्रवण को वेधता है।

वातर्क्षं हयभं हरेदभिजितं वैरञ्चभस्थो ग्रहो
हन्ति व्योमचरो निशाकरभगस्त्वाष्ट्रान्त्यवैश्वानि च।
विद्धेच्छङ्करधिष्ण्यगो दिविचरो हस्तं च बुध्न्याम्बुभे
आदित्योडुगतोऽर्य्यमोडु खचरोऽजैकाङ्घ्रिभं राक्षसम् ॥ १६६ ॥

रोहिणी नक्षत्र पर स्थित ग्रह वाम दृष्टि से स्वाती को, दक्षिण दृष्टि से आश्विनी को और सम्मुख दृष्टि से अभिजित् को वेधता है। मृगशिरा नक्षत्र पर स्थित ग्रह वाम दृष्टि से चित्रा को दक्षिण दृष्टि से रेवती को और सम्मुख दृष्टि से उत्तराषाढा को वेधता है। आर्द्रा नक्षत्र पर स्थित ग्रह वाम दृष्टि से हस्त को, दक्षिण दृष्टि से उत्तराभाद्रपदा को और सम्मुख दृष्टि से पूर्वाषाढा को वेधता है। पुनर्वसु नक्षत्र पर स्थित ग्रह वाम दृष्टि से उत्तराफाल्गुनी को, दक्षिण दृष्टि से पूर्वाभाद्रपदा को और सम्मुख दृष्टि से मूल को वेधता है।

जैवस्थो भगभं कपं सुरपभं भौजङ्गयातो ग्रहः
पैत्र्यं वासवभं च मित्रभमथो खौका मघास्थो हरिम्।
आश्लेषां यमभं खगो भगगतो हन्याद्विधिं धैषणं
दास्रं चार्य्यमभाश्रितो गगनसद् वैश्वादिती रेवतीम् ॥ १६७ ॥

पुष्य नक्षत्र पर स्थित ग्रह पूर्वाफाल्गुनी को वाम दृष्टि से, शतभिषा को दक्षिण दृष्टि से और ज्येष्ठा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। आश्लेषा नक्षत्र पर स्थित ग्रह मघा को वाम दृष्टि से, धनिष्ठा को दक्षिण दृष्टि से और अनुराधा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। मघा नक्षत्र पर स्थित ग्रह श्रवण को वाम दृष्टि से, आश्लेषा को

दक्षिण दृष्टि से और भरणी को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। पूर्वाफाल्गुनी पर स्थित ग्रह अभिजित् को वाम दृष्टि से, पुष्य को दक्षिण दृष्टि से और अश्विनी को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। उत्तराफाल्गुनी पर स्थित ग्रह उत्तराषाढा को वामदृष्टि से, पुनर्वसु को दक्षिण दृष्टि से और रेवती को सम्मुख दृष्टि से वेधता है।

हस्तस्थो गगनाटनः सलिलभं रौद्रं च बुध्न्यं हरेद्
विद्धेत्तक्षभसंस्थितो निर्ऋतिभं सौम्यं च पूभां ततः।
हन्त्याकाशचरः समीरणभगो ज्येष्ठां कभं वारुणं
द्वीशस्थो द्युचरो निहन्ति सततं मैत्राग्निभे वासवम् ॥ १६८ ॥

हस्त नक्षत्र पर स्थित ग्रह पूर्वाषाढा को वाम दृष्टि से, आर्द्रा को दक्षिण दृष्टि से और उत्तरा भाद्रपदा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। चित्रा नक्षत्र पर स्थित ग्रह मूल को वाम दृष्टि से मृगशिरा को दक्षिण दृष्टि से और पूर्वाभाद्रपदा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। स्वाती नक्षत्र पर स्थित ग्रह ज्येष्ठा को वाम दृष्टि से रोहिणी को दक्षिण दृष्टि से और शतभिषा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। विशाखा नक्षत्र पर स्थित ग्रह अनुराधा को वाम दृष्टि से, कृत्तिका को दक्षिण दृष्टि से और धनिष्ठा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है।

याम्यद्वीशभुजङ्गभानि खचरो मैत्रर्क्षसंस्थो हरे-
त्स्वर्गाधीशभगोऽश्विनीं पवनभं पौष्यं खगो मूलगः।
हन्यात्पौष्णभतक्षभे अदितिभं पाथोभगः खेचरो
बुध्न्यं हन्ति च हस्तभं गिरिशभं वैश्वाश्रितो व्योमगः ॥ १६९ ॥

पूभां चार्य्यमभं निहन्ति शशिभं खेटोऽभिजिद्गः शतं
भाग्यं हन्ति कभं ततो हरिभगः खौका धनं पित्र्यभम्।
आग्नेयं वसुगोऽश्रगोऽहिहरिभे द्वीशं निहन्यात्ततो
भिन्द्याद्वारुणभाश्रितो गगनगो जैवं विधिं मारुतम् ॥ १७० ॥

अनुराधा नक्षत्र पर स्थित ग्रह भरणी को वामदृष्टि से, विशाखा को दक्षिण दृष्टि से और आश्लेषा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। ज्येष्ठा नक्षत्रपर स्थित ग्रह अश्विनी को वामदृष्टि से, स्वाती को दक्षिण दृष्टि से और तिष्य को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। मूल नक्षत्रपर स्थित ग्रह रेवती को वाम दृष्टि से, चित्रा को दक्षिण दृष्टि से और पुनर्वसु को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। पूर्वाषाढा नक्षत्रपर स्थित ग्रह उत्तराभाद्रपदा को वाम दृष्टि से, हस्त को दक्षिण दृष्टि से और आर्द्रा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। उत्तराषाढा नक्षत्रपर स्थित ग्रह पूर्वाभाद्रपदा को वामदृष्टि से, उत्तराफाल्गुनी को दक्षिण दृष्टि से और मृगशिरा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। अभिजित् नक्षत्र पर स्थित ग्रह शतभिषा को वाम दृष्टि से, पूर्वाफाल्गुनी को दक्षिण दृष्टि से और रोहिणी को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। श्रवण नक्षत्र पर स्थित ग्रह धनिष्ठा को वाम दृष्टि से, मघा को दक्षिण दृष्टि से और कृत्तिका को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। धनिष्ठा नक्षत्र पर स्थित ग्रह आश्लेषा को वामदृष्टि से, श्रवण को दक्षिण दृष्टि से और विशाखा को सम्मुख दृष्टि से वेधता है। शतभिषा नक्षत्रपर स्थित ग्रह पुष्य को वाम दृष्टि से, अभिजित् को दक्षिण दृष्टि से और स्वाती को सम्मुख दृष्टि से वेधता है।

पूर्वाभाद्रपदास्थितस्त्वदितिभं वैश्वं तथा तक्षभं
बुध्न्यस्थो भवभं वनं तपनभं पौष्णाश्रितो मस्तकम् ।
मूलर्क्षार्य्यमभे ग्रहोहयभगोधात्र्यैन्द्रभे भाग्यभं
* संविद्धेत्खुर वर्त्मगो यमभगोऽग्न्यृक्षानुराधे मघाम् ॥१७१॥

पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्रपर स्थित ग्रह पुनर्वसु को वामदृष्टि से, उत्तराषाढा को दक्षिण दृष्टि से और चित्राको सम्मुख दृष्टिसे वेधता है । उत्तराभाद्रपदा नक्षत्रपर स्थित ग्रह आर्द्रा को वाम दृष्टि से, पूर्वाषाढा को दक्षिण दृष्टि से और हस्तको सम्मुख दृष्टि से वेधता है । रेवती नक्षत्रपर स्थित ग्रह मृगशिराको वामदृष्टि से मूल को दक्षिण दृष्टिसे और उत्तराफाल्गुनी को सम्मुख दृष्टिसे वेधता है । अश्विनी नक्षत्रपर स्थित ग्रह रोहिणी को वामदृष्टिसे, जेष्ठा को दक्षिण दृष्टिसे और पूर्वाफाल्गुनी को सम्मुख दृष्टिसे वेधता है । एवं भरणी नक्षत्रपर स्थित ग्रह कृत्तिका को वामदृष्टि से अनुराधाको दक्षिणदृष्टि से और मघाको सम्मुख दृष्टिसे वेधता है ।

'अश्विन्यादिनक्षत्रगतानां ग्रहाणां स्पष्टवेधबोधक चक्रमिदम्' ।

नक्षत्राणि	अश्वि.	भर.	कृत्ति.	रोहि.	मृग.	आर्द्रा	पुन.	तिष्य.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.
वामदृष्टि	रोहि. उ.	कृत्ति.	विशा. वृष. तुला अ त नन्दा भद्रा	स्वाति मिथुनः कन्या व औ र ब	चित्रा कर्कः सिंहः क प	हस्तः ह ट ऌ	उ.फा. ड म	पू.फा. ऊ	मघा	श्रवणम् सिंहः मकरः म ष ख जया भद्रा	अभिजि. कन्या धनुः ट ज अं	उ. षा. तुला वृश्चिकः प भ	पू.षा. य र ए	मूलम् त न
दक्षिण दृष्टि	ज्येष्ठा धनुः मीनः च थ अः	अनुराधा मेषः वृश्चिकः न ल रिक्ता जया	भरणी	अश्वि. उ	रेवती ल अ	उ.भा. त्र व ब ऌ	पू.भा. मेषः वृषः क द	शताभि. मीनः मिथुनः ह श स ओ	धनि. कर्कः कुम्भः ड ग नन्दा रिक्ता	आश्ले.	पुष्यः ऊ	पुन. म ड	आर्द्रा ट ह ऌ	मृगः कर्कः सिंहः प क
सम्मुख-दृष्टि	पू.फा.	मघा	श्रव.	अभि.	उ.षा.	पू.षा.	मूलम्	ज्येष्ठा	अनु.	भरणी	अश्वि.	रेवती	उ.भा.	पू.भा.

* अस्मिंश्चक्रे येऽनुक्ताक्षरास्तेषां वेधज्ञानमुक्तं 'ब्रह्मयामले'—"बवौ शसौ षखौ चैव ज्ञेयाविति परस्परम् । एकेन द्वितयं ज्ञेयं शुभाशुभखगव्यधे १" अस्यार्थः—बवौ, शसौ, षखौ इत्येषामक्षराणां मध्ये द्वयोर्द्वयोरक्षरयोः परस्परं सम्बन्धोऽस्ति तेनास्मिंश्चक्रे उक्ताक्षरेषु योऽक्षरस्थितः स यदि ग्रहेण विध्यते तदा

नक्षत्राणि	स्वाती	विशा.	अनु.	ज्येष्ठा	मूलम्	पू.षा.	उ.षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती
वामदृष्टि	ज्येष्ठा ऋ	अनु.	भरणी मेषः वृश्चिक न ल जया रिक्ता	अश्वि. धनुः मीनः य च अः	रेवती मकरः कुम्भः भ द	उ. भा. ज श स ऐ	पू.भा. ष ख ग	शतभि. ॠ	धनि.	आश्ले. कर्कः कुम्भः ग ड नन्दा रिक्ता	तिष्यः मिथुनः मीनः श स ह ओ	पुन. मेषः वृषः द क	आर्द्रा च व ब ऌ	मृगशि. ळ अ
दक्षिण-दृष्टि	रोहि. मिथुन कन्या र व ब औ	कृत्ति. वृषः तुला त अ नन्दा भद्रा	विशा.	स्वाती ऋ	चित्रा न त	हस्तः य र ए	उ.फा. तुलाः वृश्चिक भ प	पू. फा. कन्या धनुः ज ट अं	मघा सिंहः मकरः ख ष म जया भद्रा	श्रव.	अभि. ॠ	उषा. ग ख ष	पू.षा. ज स श ऐ	मूलम् मकरः कुम्भः द भ
सम्मुख-दृष्टि	शताभिः	धनि.	आश्ले.	पुष्यः	पुन.	आर्द्रा	मृग.	रोहि.	कृत्ति.	विशा.	स्वाती	चित्रा	हस्तः	उ. फा.

तत्सम्बन्ध्यनुक्ताक्षरोऽपि विद्धोबोध्य इति । " घङछाः षणठाश्चैव धफढास्थझञास्तथा । एतत्त्रिकं त्रिकं विद्धं विद्धैःकपभदैः क्रमात् २ " अस्यार्थः—कपभदैरोभिर्वर्णैर्विद्धैः सद्भिस्तदा क्रमात् घङछाः, षणठाः, धफढाः, थझञा एतात्रिकं त्रिकं विद्धं ज्ञेयम् अर्थात् यदा ककारो विध्यते तदा घङछा वर्णा अपि विद्धा ज्ञेयाः । यदा पकारो विध्यते तदाषणठा वर्णा अपि विद्धाः । यदा भकारो विध्यते तदा धफढा अपि विद्धाः । एवं दकारो विध्यते चेत्तदा थझञा अपि विद्धा बोध्या इति । अत्र पुनस्तेषां वेधः प्रकारान्तरेणोच्यते । "घङछा रौद्रगे वेधे षणठा हस्तगे ग्रहे । धफढाः पूर्वाषाढायां थझञा भाद्र उत्तरे ३ " अस्यार्थः—यदाऽऽर्द्रा विद्धा तदा घङछा वर्णा अपि विद्धाः । यदा हस्तो विद्धस्तदा षणठा वर्णा अपि विद्धाः । यदा पूषा विद्धा तदा धफढा अपि विद्धाः । यदोभा विद्धा तदा थझञा अपि विद्धा ज्ञेया इति । इह स्वरवेधे विशेषक्रम उच्यते सच यथाः—" अवर्णादिस्वरद्वन्द्वेष्वेकवेधे द्वयोर्व्यधः । युक्तस्वरात्मके वेधे त्वनुस्वारविसर्गयोः " इति, अस्यार्थः—अकारादीनां चतुर्दशस्वराणां मध्ये द्वौ द्वौ स्वरौ सवर्णितौ ज्ञेयौ यदैकः स्वरो विध्यते तदाऽन्योऽपि विद्धो ज्ञेयः । अनुस्वारविसर्गयोस्तु भिन्नक्रमः । येन स्वरेण सहानुस्वारविसर्गौ स्तो यदि सस्वरो विद्धस्तदा तावपि विद्धौ मताविति । अत्र कोणस्थस्वराणां वेधः प्रकारान्तरेणोच्यते । स तु यथा—" कोणस्थ धिष्ण्ययोर्मध्य अन्त्यादिपादगेग्रहे । अस्वरादिचतुष्कस्य वेधः पूर्णातिथेः क्रमात् " इति । अत्रेशानादिषु चतुःकोणेषु द्वे द्वे नक्षत्रे स्तः । तत्र प्रथमनक्षत्रस्यान्त्यपादे ग्रहस्थिते सतिद्वितीयनक्षत्रस्य प्रथमपादे ग्रहस्थिते सति वा तदा कोणस्थाः स्वरा विद्धातेयाः । यथा भरण्या अन्त्यपादे कृत्तिकायाः प्रथमपादेवा चेद ग्रहः स्थितस्तदेशान कोणस्थोऽकारः स्वरो विद्धः । एवमाश्लेषाया अन्त्यपादे मघायाः प्रथमपादे वा यदि ग्रहः स्थितस्तदाऽग्निकोणस्थ आकारो विद्धः । विशाखाया अन्त्यपादेऽनुराधायाः प्रथमपादे वा यदि ग्रहः स्थितस्तदा नैऋत्यकोणस्थ इकारो विद्धः । श्रवणस्यान्त्यपादे धनिष्ठायाः प्रथमपादे वा ग्रहः स्थितश्चेत्तदा वायव्यकोणस्थ ईकारो विद्धो ज्ञेयः । इह येन ग्रहेण कोणस्थः स्वरो विध्यते तैनैव मध्यस्था पूर्णातिथिरपि विद्धेति ।

ग्रहोंकी एकराशिभोग कालका परिज्ञानः—

सांघ्रिद्वयं वासरमेकभोद्भवः स्यान्मध्यभोगो हिमगोस्तथैकमाः ।
भास्वद्भयोर्ज्ञस्य शराश्विवासराः सार्द्धैकमासः कुसुतस्य संस्मृतः ॥ १७२ ॥
मासा हुताशेन्दुमिता गुरोरगोर्मासा गजैके त्वथ नीलरोचिषः ।
मासा नभोरोहितसप्तिसम्मिता भमध्यभोगो द्युसदामयं मतः ॥ १७३ ॥

मध्यमगति के स्थूल मानसे 'चन्द्रमा' २$\frac{1}{4}$ दिन, 'सूर्य' तथा 'शुक्र' १ मास, 'बुध' २५ दिन 'मङ्गल' १$\frac{1}{2}$ मास, 'गुरु' १३ मास, राहु १८ मास एवं 'शनि' ३० मासमें एकराशिका भोग करता है।

ग्रहों के नक्षत्रचारदिनोंका परिज्ञानः—

भे संस्थितिः सितरुचः कुदिनं नखाहं
स्याद्भूभुवो मनुदिनं तरणेर्यमस्य
खाभ्राब्ध्यहं खजिनकाहमगोः सितेशा-
हं खाष्टयहं सुरगुरोर्नव वाऽष्ट चान्द्रेः ॥ १७४ ॥

मध्यमगति के स्थूल मानसे 'चन्द्र' १ दिन, 'मङ्गल' २० दिन, 'सूर्य' १४ दिन, 'शनि' ४०० दिन, 'राहु' २४० दिन, 'शुक्र' ११ दिन, 'गुरु' १६० दिन, 'बुध' ९ वा ८ दिन में एकनक्षत्र का भोग करता है।

ग्रहों के नक्षत्रपादचार के दिनोंका परिज्ञानः—

भैकांघ्रौ दिवसत्रयं त्रिलवयुक् सूर्यज्ञभानां विधो-
र्घट्योऽक्षेन्दुमिता दिनानि कुभुवः पञ्चाथ मासत्रयम् ।
सत्र्यंशं च शनेरगोर्यममितौ मासौ गिरांस्वामिनो
मासो वित्रिलवश्रुतीन्दुदिवसैर्युक्तः स्थितिः प्रोच्यते ॥ १७५ ॥

मध्यमगतिके स्थूल मानसे सूर्य, बुध तथा शुक्र ३ दिन २० घटी, 'चन्द्र' १५ घटी, 'मङ्गल' ५ दिन, 'शनि' ३ मास १० दिन, 'राहु' २ मास और 'गुरु' ४३ दिन ४० घटी में एकनक्षत्र के एक पादको भोगता है।

ग्रहों के वक्रादिचारका परिज्ञानः—

विहङ्गचारस्त्रिविधोऽनृजुर्द्रुतः समोविपश्चिद्भिरुदाहृतोऽनृजुः । *
अतीववक्रः कुटिलोऽनृजुर्मत एषोऽथ मन्दस्तुसमोऽतिचारगः ॥ १७६ ॥

---

* अत्र भौमादीनां फलितैक्यगतिरष्टभेदात्मिकेत्याह 'सूर्यसिद्धान्ते'— वक्रानुवक्रा कुटिला मन्दा मन्दतरा समा । तथा शीघ्रतरा शीघ्रा ग्रहाणामष्टधागतिः । तथातिशीघ्रा शीघ्राख्या मन्दा मन्दातरा समा । ऋज्विति पञ्चधा ज्ञेया या वक्रा सानुवक्रगा " इति ।

मार्गस्थ उक्तः खचरः सुचारगः शीघ्रस्तथा मन्दगतिः समः स्मृतः ।
अथोदयो व्यर्कखगोऽस्तगोऽरुणग्रस्तोऽर्कधाम्नो द्युसदां गतिर्मता ॥ १७७ ॥

ग्रहोंका चार वक्र, शीघ्र तथा सम ऐसा तीन प्रकारका है । वक्र, अतिवक्र तथा कुटिलगति वाला ग्रह 'वक्री' जानना चाहिए। मन्द, सम तथा शीघ्रगतिवाला ग्रह 'मार्गी' कहा है। अतिचारवाला ग्रह 'शीघ्रगति' और मन्दगतिवाला ग्रह 'समगति' जानना चाहिए । सूर्यरहित ग्रह 'उदय' सूर्यसहित ग्रह 'अस्त' होता है अर्थात् 'ग्रह' अपने वक्ष्यमाणकालांशों के भीतर हो तो 'अस्त' एवं ग्रह और सूर्य का अन्तर यदि कालांशों से अधिक हो तो 'उदय' होता है । ग्रहोंकी उक्तगति सूर्यके स्थान से जाननी चाहिए ।

मतान्तर से ग्रहोंकी सात प्रकारकी गतिका परिज्ञानः—

यद्वा समा वक्रगतिस्तथाऽत्यनृजुश्चरा चातिचरा मृदुश्च ।
सदा कृशा सप्तविधा ग्रहाणां गतिर्भवेत्केचिदुदीरयन्ति ‡ ॥ १७८ ॥

सम (मध्यमतुल्य), वक्रगति, अतिवक्र, शीघ्रगति, अतिशीघ्र, मन्दगति और आतिमन्दगति यह ग्रहोंकी सात प्रकारकी गति है । ऐसा कोई आचार्य कहते हैं ।

चन्द्रादि ग्रहोंके कालांशों का परिज्ञानः—

कुमुद्वतीशात्समयांशकाःस्युर्भगानगैके त्रिधरा महेशाः ।
खगोन्मिता बाणधरा अनृज्वोः श्यामाङ्ककव्योर्वसुधाविहीनाः ॥ १७९ ॥

१२ चन्द्रमाके, १७ भौम के, १३ बुधके, ११ गुरु के, ९ शुक्रके, १७ शनि के 'कालांश' होते हैं। यदि शुक्र तथा बुध मे वक्री हों तो उक्त ग्रहोंके उक्त कालांशों में १ हीनकरे तब उक्त ग्रहोंके कालांश होते हैं अर्थात् वक्री बुध के १२ और वक्री शुक्र के ९ 'कालांश' होते हैं । चन्द्रादि ग्रह सूर्यकेसमीप आनेसे जितने अंशोंतक अस्त रहते हैं उनको 'कालांश' कहते हैं ।

*** अर्केण युक्ता उदया यदा स्फुरद्बिम्बाः कुजीशाश्च तदर्थगे भगे ।**
शीघ्रा तृतीयस्थ इनेसमा ततो मन्दा रवौ तुर्य्यगतेऽथ पञ्चमे ॥ १८० ॥

---

‡ इह श्री कविना कालिदासेन स्वकृतग्रन्थे ज्योतिर्विदाभरणे ग्रहाणां सप्तधैवगतिरुक्ता'—समाव्रजिनगाऽतिवेल्लिता चरा चरतए दिवौकसः। गतिर्भवति मन्दगाञ्झिका सदेति च कुशैव सप्तधा." इति । अस्यार्थः- मध्यगतिः स्पष्टगतिर्यदा तुल्या स्यात्तदा सा समागतिः । व्रजिनगा वक्रगतिः । अतिवेल्लिता अतिवक्रागतिः । चरागति चरतरागतिः । मन्दगाञ्झिका मन्दागतिः । कुशा गतिः । इति ग्रहाणां सप्तविधा गतिरुच्यते ।

* एतद्ग्रहगतिविधानं होरानुभवदर्पणे व्यत्ययेनोक्तम् 'तदित्थम्' —अर्कयुक्तश्चोदयः स्याद् द्वितीये

षष्ठे च वक्राऽत्यनृजुः प्रभाकरे सप्तमाष्टमेऽथो नवमेऽथवाग्रगे ।
भुक्तिः पतङ्गे कुटिला भवान्त्यगे पङ्केरुहेशे भजतेऽरतां पुनः १८१ ॥

स्फुरद् बिम्बवाले भौम, गुरु तथा शनि ये तीनों सूर्य से युक्त हों तो 'उदय' होते हैं। एवं भौम, गुरु तथा शनिकी अधिष्ठित (आक्रान्त वा वर्त्तमान) राशिसे यदि 'सूर्य' द्वितीय राशिपर हो तो उक्तग्रहोंकी 'शीघ्र-गति' होती है अर्थात् शीघ्रगामी होते हैं। तीसरी राशिपर हों तो 'समचारी' चौथी राशिपर हों तो 'मन्दचारी' पाँचवी वा छटी राशिपर हों तो 'वक्री' सातवी वा आठवी राशिपर हों तो 'अतिवक्री' नवमी वा दशमी राशिपर हों तो 'कुटिलगति' और ग्यारहवी वा बारहवी राशिपर हों तो पुनः 'शीघ्रगामी' होते हैं।

व्रजन्ति खेटा भगगा जने पुनरदृश्यतां पण्डितभौ पतङ्गतः ।
द्विद्वादशेऽनृज्वरगौ तृतीयक एकादशे चासुरवन्दितः समः ॥ १८२ ॥

यदि भौमादि तीन ग्रह सूर्य की राशि में प्राप्त हों अर्थात् कालांशों वे अन्तरालवर्ती होनेसे उक्त ग्रह लोक म पुनः अस्त हो जाते हैं। यदि सूर्य की राशि से द्वितीय राशिमें शुक्र तथा बुध होंतो 'वक्री' एवं वे दोनों बारहवीं राशिपर हों तो 'शीघ्रगामी' होते हैं। यदि सूर्य की राशि से तृतीय वा एकादश राशि में शुक्र हो तो 'समचारी' होता है।

'कुजेज्यार्किमतः शीघ्रादिगतिबोधक चक्रम्'।												सूर्यमाद्विद्गतिः		सूर्यमात्झत गतिबोधक चक्रम्					
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२ १२	१	२	३	११	१२	
अस्तमिथः सूर्ये प्रस्तास्तः । सूर्ये मुक्तोदयः	शीघ्रगतिः	समगतिः	समगतिर्व्योमसु गतिमथश्च न्यूना मन्दगतिः	वक्रा	वक्रा	अतिवक्रा	अतिवक्रा	कुटिला	कुटिला	शीघ्रा	शीघ्रा	अस्ताह्वया	वक्रा	शीघ्रा	अस्ताह्वया	वक्रा	समा	समा	शीघ्रा

भौमादि ग्रहोंके अस्तप्रभृति दिनोंका परिज्ञानः—

व्योमार्का दिवसाः कुजस्य खगुणा जीवस्य तर्काग्नयः
सौरेः पाशभृतो दिशोऽस्तदिवसा ज्ञस्याष्टिरङ्काः कवेः *
चान्द्रेः षड्दहनाः कवेर्द्विगिरयोऽस्ताह्वा दिशो वज्रिणो
भौमो नागमरुद्रसैद्व्र्यगगुणैरार्यः खवेदानलैः ॥ १८३ ॥

शीघ्रगो भवेत्। खेस्तृतीये समता गतिर्मन्दा चतुर्थके। पञ्चमेऽप्यथवा षष्ठे किञ्चिद्वक्राच वक्रगा। सप्तमाष्टम-योरर्कादतिवक्रा गतिर्भवेत्। नवमे दशमे मानोः खेटानां कुटिला गतिः। एकादशे द्वादशे शीघ्रा शीघ्रतरा क्रमात्। रविसंयुक्तखेटस्य गतिरस्ताह्वया भवेत्" इति चिन्त्यम्।

* इह केनचिदाचार्येण शुक्रस्य पूर्वोदयादिदिनान्यथा प्रोक्तानि तानिच यथा—यमशरभुजवासर वज्रिणो दिशि दिसप्त सितास्तमनं तथा। गगनबाणयमैर्दिशि पश्चिमे नवदिनास्तमनं तु भृगोर्बुधैः। इति।

प्राच्यां पिङ्गलजो दिनैरुदयति ज्ञोदैवतैरास्फुजिद्
घस्रैर्नागजिनैः क्रमादुदयतो ज्ञाच्छौ परेऽगाग्निभिः ।
शून्येषुद्विदिनैर्हरेर्दिशि कुजात्षट्पर्वतारूयश्विनो
व्यर्का बाणयुगा नगाग्निवसुधाः स्युर्वक्रघस्राः क्रमात् ॥ १८४ ॥

स्थूलमानसे १२० दिन मङ्गल, ३० दिन गुरु और ३६ दिन शनि पश्चिमदिशामें अस्त रहते हैं। १६ दिन बुध और ९ दिन शुक्र पश्चिममें अस्त रहते हैं। ३६ दिन बुध और ७२ दिन शुक्र पूर्वमें अस्त रहते हैं। स्थूलमान से ६५८ दिन मङ्गल, ३७२ दिन गुरु और ३४० दिन शनि पूर्व में उदय रहते हैं। ३३ दिन बुध और २४८ दिन शुक्र पश्चिम में उदय रहते हैं। एवं स्थूलमानसे ३७ दिन बुध और २५० दिन शुक्र पूर्व में उदय रहते हैं। ७६ दिन मङ्गल, २३ दिन बुध, १२२ दिन गुरु, ४५ दिन शुक्र और १३७ दिन शनि 'वक्रचार' में रहते हैं।

भौमादियोंके मार्ग दिनों का परिज्ञानः—

मार्गाश्रिताः स्युर्दिवसाः क्रमेण भौमाच्छरानन्तनगा द्विनन्दाः ।
मातङ्गतारा दहनानलाक्षाः स्तम्बेरमाज्याशपरेतराजः ॥ १८५ ॥

स्थूलमानसे ७०५ दिन मङ्गल, ९२ दिन बुध, २७८ दिन गुरु, ५३३ दिन शुक्र और २३८ दिन शनि 'मार्गी' रहते हैं।

* 'स्थूलमानतो ग्रहाणां राशिचारपूर्वदिवसादिचक्रामिदम्'।

ग्रहाः	सू	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु	श.	रा.	के.
राशिचारदिनानि ··	३०	२$\frac{१}{४}$	४५	२५	३९०	३०	९००	५४०	५४०
नक्षत्रचारदिनानि ···	१४	१	२०	८ वा ९	१६०	११	४००	२४०	२४०
नक्षत्रपादचारदिनानि ···	३$\frac{१}{३}$	$\frac{१}{४}$	५	३$\frac{१}{३}$	४३$\frac{२}{३}$	३$\frac{१}{३}$	१००	६०	६०
ग्रहलाघवीयाःकालांशाः	-	१२	१७	१३ वक्रिणि १२	११	९ वक्रिणि ८	१५	-	-
केतकीयाःकालांशाः	-	११	१५	११	९	६।३६	१३	-	-

* अत्रोध्दृता राशिचारादीनां ये दिवसास्ते स्थूला एव सन्ति। तस्मात्प्रचरितात्सूक्ष्मकरणादेव ग्रहराशिचारादीन् ज्ञात्वा ग्रहवेधं विचारयेदित्युक्तं' 'ग्रन्थान्तरे'—यत्र देशे यत्र काले दृश्यते गणितैक्यकम्। तेन मानेन ते कार्याः स्फुटास्तत्समयोद्भवाः, ग्रहचारस्य विज्ञानं वेधबोधेहि कारणम्। सूक्ष्मं करणागमाज्ज्ञेयं साधारणं ब्रवीमि तत् " इति २

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
ग्रहलाघवमतेनास्त दिनानि	-	-	१२०	प. अ. १६ पू. अ. ३२	३०	प. अ. ७½ पू. अ. ६०	३७½	-	-
मतान्तरेणास्तादिनानि	-	-	१२०	प. अ. १६ पू.अ.३६वा३२	३०	पू. अ. ९ पू. अ. ७२	३६	-	-
ग्रहलाघवमतेनवक्र-दिनानि	-	-	६०	२२	१२०	५२½	१३५	-	-
मतान्तरेण वक्रदिनानि	-	-	७६ वा ७५	२३ वा २४	१२२ वा १२३	४५ वा ५०	१३७ वा १४०	-	-
ग्रहलाघवमतेनोदय-दिनानि	-	-	६६०	प. उ. ३५ पू. उ. ३५	३७५	प. उ. २६२½ पू. उ. २६२½	३४५	-	-
मतान्तरेणोदयदिनानि	-	-	६५८	प. उ. ३३ पू. उ. ३७	३७२	प. उ. २५८ पू.उ. २५० वा २५१	३४० वा ३३९	-	-
ग्रहलाघवमतेनमार्ग-दिनानि	-	-	७२०	९६	२८५	५४०	२४७½	-	-
मतान्तरेण मार्गदिनानि	-	-	७०५	९२	२७८	५३३	२३८	-	-
वराहमतेनातिचार-दिनानि	-	-	७	३	११	५	१३	-	-
मतान्तरेणातिचार-दिनानि	-	-	१५	१०	४५	१०	१६५ वा १८०	-	-
पुनर्मतान्तरेणातिचार-दिनानि	-	-	१५	१०	३०	१५	३०	-	-

भौमादियोंके अतिचारकारण का परिज्ञानः—

यःखेचरो गच्छति नैजमार्गमाक्रान्तभेऽतीव जवेन तस्य ।
भुक्तिश्चरा स्यादपहाय राशिं तं गम्यभं गच्छति सोऽतिचारः ॥ १८६ ॥

'ताराग्रह' जिस समय अपनी साधारण गति (चाल) से जितने समय में राशि के जितने भाग का भोग कर सके उतने भागका अति शीघ्र गति के कारण अत्यल्प समय में भोग करके वर्त्तमान राशि को भोगकर गम्य (आगे की) राशिपर चला जाय उस समय उसे 'अतिचारी' कहते हैं। जब भौमकी स्पष्टगति ४६।११ बुधकी ११३।३२, गुरु की १४।४, शुक्र की ७५।४२ और शनि की ७।४५ गति हो तब उक्त ग्रह परमशीघ्रगामी अर्थात् 'अतिचारी' होते हैं ।

भौमादियों के अतिचार दिनों का परिज्ञानः—

दिवा दश ज्ञास्फुजितौ महीजः पक्षं सुरेज्यो दलयुक्तमासम् ।
सार्द्धैर्मरुन्माभिरुताङ्गमासैर्मन्दोऽनृजुः प्राग्भफलं प्रदत्ते ॥ १८७ ॥

स्थूल मान से १० दिन बुध और शुक्र, १५ दिन मङ्गल, ४५ दिन गुरु एवं १६५ अथवा १८० दिन शनि अतिचारमें रहतें हैं । यदि उक्तग्रह वक्री हों तो उक्त दिनपूर्व प्रथमराशि के फल को देते हैं ।

भौमाद्या यदि वक्रिणो नगगुणेशप्राणविश्वैः क्रमाद्
वस्रैः पूर्वफलप्रदा इति जगौ विद्वान् वराहो दिनैः।
दिग्भिः शून्यगुणैर्दिनैः खदहनैर्दद्युः फलं ते दिनैः
प्राग्राशेरपरे जगुर्बुधवरा नैतद्बहूनां मतम् ॥ १८८ ॥

'वक्री मङ्गल' ७ दिन, 'वक्री बुध' ३ दिन, 'वक्री गुरु' ११ दिन, 'वक्री शुक्र' ५ दिन और 'वक्री शनि' १३ दिन तक पूर्व राशि के फलको देते हैं । इस प्रकार श्रीवराहमिहिराचार्य कहते हैं । 'वक्री मङ्गल' १५ दिन, 'वक्री बुध' १० दिन, 'वक्री गुरु' ३० दिन, 'वक्री शुक्र' १५ दिन और 'वक्री शनि' ३० दिन तक पूर्व राशि के फलको देते हैं । इस प्रकार अन्याचार्य कहते हैं । किन्तु यह बहुतों का मत नाहीं है अतः आदरणीय नहीं है ।

* योगच्छतीतर्क्षमुतैष्यराशिं प्रतीपभुक्त्या किमुतातिभुक्त्या ।
खगोऽपहायेह फलं तदीयं प्राग्भस्य यत्तत्फलमेव दत्ते ॥ १८९ ॥

---

* एवं श्रीवराहमिहिरेण बृहत्संहितायामप्युक्तम्'—विलोमगत्या यदि वातिगत्या प्रयाति यो राशिमतीतमेष्यम् । हित्वा तदीयं गगने चरेऽसौ दद्यात्फलं पूर्वगृहे यदुक्तम् " इति । अस्यार्थः—यदा विलोमया अतिगत्या आश्रितराशिं त्यक्त्वा पाश्चात्यराशिं प्राप्ते ग्रहे वक्रतरा अतिशयेन वक्रा गतिः । यदा ग्रहोऽतिवेगेन आश्रितराशिं विहायैष्यभे आगामिकराशौ गच्छति तदाऽतिचरा गतिः । यदि ग्रहस्तत्र राशौ वक्री इह मार्गी सन् चरति तदाऽतिचारी कथ्यते ।

*
विहङ्गमोऽतिचारेण वक्रगत्याऽथ वा स्थितः ।
राश्यन्तरेऽपि यः पूर्वराशेरेव फलप्रदः ॥ १९० ॥

जो ' ग्रह ' विलोम (वक्र) गति से गत राशि पर जाय तथा अतिचारी (शीघ्र) गति से एष्य (गम्य) राशि पर जाय तो वह ' ग्रह ' वर्त्तमान राशि के फल को छोडकर पूर्व राशि के ही फल को देता है । जो 'ग्रह' अतिचार गति से अथवा वक्र गति से अन्य राशि में स्थित हो तो भी पूर्व राशि के ही फल को देता है ।

×
यो वक्रभुक्तिर्दिवसा यदुन्मितास्तत्तुल्यका वक्र उतातिचारकः ।
तेषां दिगंशोन्मितवासराः फलं यत्कीर्तितं प्राग्भवने प्रयच्छतु ॥ १९१ ॥

जो ' ग्रह ' वक्रगतिवाला हो उस के जितने वक्र दिन हों उतने ही दिन वह वक्र अथवा अतिचार होता है । उन वक्र दिनों के वा अतिचार दिनों के दशमांश तुल्य दिन तक जो पूर्व राशि का फल कहा हुआ है उसी को देता है ।

÷
यदाऽयं विहङ्गोऽभ्युपैतीह यद्भं तदीयं फलं स प्रदत्ते तदानीम् ।
यथा दीपकः संस्थितो यत्र गेहे प्रकुर्यात्सदोद्योतकं तत्र नूनम् ॥ १९२ ॥

जब जो ' ग्रह ' जिस राशि में स्थित हो तब वह उसी राशि के फल को देता है । जैसा दीपक जिस घर में हो वह उसी घर में प्रकाश करता है ।

जन्म नामादि का परिज्ञान:—

*
भवेत्प्रसूतिर्मनुजस्य यत्र भे यस्तत्र वर्णोऽथ च तत्र यः स्वरः ।
यस्तत्र राशिश्च तिथिश्च या बुधैर्विज्ञेयमेतज्जनिकालतोऽखिलम् ॥ १९३ ॥

---

* एवं श्रीवराहेणाप्युक्तम् '—वक्रातिचारेण गृहान्तरेऽपि स्थितो ग्रहः पूर्वफलप्रदः स्यात् । देशान्तरं कार्यवशात् गतोऽपि स्वदेशधर्म्मं न जहाति मर्त्यः " इति ।

× तेनैवमुक्तम् '—यावन्ति यो वक्रगतेर्दिनानि भवेत्स वक्रो यदि वाऽतिचारः । दशांशतुल्यानि दिनानि तेषां दद्यात्फलं पूर्वगृहे यदुक्तम् " इति ।

÷ तेन तत्रैवमुक्तम् '—यदा ग्रहोऽयं समुपैति राशिं तदा तदीयं स फलं ददाति । पीतादिवर्णेन समागमे हि वर्णः सितस्तन्मयतामुपैति " इति । अत्र निश्चयवाक्यमाह ' ' श्रीमहर्षिपराशरः '—यस्मिन् गृहे स्थितो दीपस्तत्रोद्योतं करोति वै । एवं ग्रहोऽपि यत्र स्यात्तत्रैव फलदः स्मृतः " इति । श्रीगर्गोऽपि '—चारातिचारवक्रेण यो यत्रावस्थितो ग्रहः । स तद्राशिफलं दद्याद्गोचरे बलसाधने " इति । एवमन्योऽप्याह '—शुभाशुभं स्थानभवं ग्रहाणां शुभाशुभत्वं न निसर्गसिद्धम् । स्थितिं यदा यत्र गुणे करोति भजेत्तदा तत्प्रकृतिं हि मर्त्यः " इति ।

*अत्र ' चू चे चो ला दासम ' मित्यादिना जन्मनामवर्णो ज्ञेयः । नामाक्षरवशात्स्वरज्ञानमुक्तं ' ' ग्रन्थान्तरे '— " मातृकायां पुरा प्रोक्ताः स्वराः षोडशसंख्यया । तेषां द्वावन्तिमौ त्याज्यौ चत्वारश्च नपुंसकाः " इत्यत्र

जिस नक्षत्र में मनुष्य का जन्म हो वह जन्म नक्षत्र, उस नक्षत्र के प्रथमपादादि के क्रम से अर्थात् चू. चे. चो. ला अश्विनी इत्यादि से जो अक्षर आता हो वह अक्षर, उस अक्षर में जो स्वर हो वह स्वर, जिस तिथि में जन्म हो वह तिथि और जन्म नक्षत्र के पादानुसार जो मेषादि राशि आती हो वह राशि, ये सब जन्म नक्षत्रादि पाँचों ही मनुष्य के जन्मकाल से ही जानने चाहिएँ।

अथ पाक्षिक, दैनिक तथा क्षणिक ग्रहानयन रीतिः—

भगस्थर्क्षमारभ्य भास्वन्मितर्क्षे ध्वजः स्यात्ततोऽस्त्यष्टिभे सोमसूनुः।
ततस्तुर्यभेऽच्छस्ततः शक्रतुल्ये तमः स्यात्ततोऽष्टादशेऽसृक् च तस्मात् ॥ १९४ ॥
गुरुस्त्रीन्दुतुल्ये ततः पंक्तिधिष्ण्ये विवस्वत्सुतोऽतः शरेन्दून्मितेऽब्जः।
*
इमे पाक्षिकाः संस्मृता व्योमवासा विधुस्थर्क्षमारभ्य भौमोऽद्रितुल्ये ॥ १९५ ॥

अं, अः, एतौ द्वौ त्याज्यौ। ऋ, ॠ, ऌ, ॡ एते चत्वारः स्वरा नपुंसकाः सन्त्यतस्तेऽपि त्याज्या इति। 'अथ शेषस्वराणां व्यवस्थामाह'—" शेषा दशस्वरास्तेषु स्यादेकैको द्विके द्विके। ज्ञेया अतः स्वराद्यास्ते स्वराः पञ्च-स्वरोदये" इति। अस्यार्थः— इह शेषा दश स्वराःस्युस्तेषु द्विके द्विके एकैकः स्वरः स्यात्। तेन स्वरोदयशास्त्रे पञ्चस्वरा एव ज्ञेया इति। 'अथ वर्णस्वरचक्रविन्यासमाह'—कादिहान्तान् लिखेद्वर्णान् स्वराधो ङञणोज्झितान्। तिर्यक्पंक्तिक्रमेणैव पञ्चत्रिंशत्प्रकोष्ठके १ नरनामादिमो वर्णो यस्माद्यस्मात्स्वराद्धः। स स्वरस्तस्य वर्णस्य वर्णस्वर इहोच्यते २ न प्रोक्ता ङञणा वर्णा नामादौ सन्ति ते नहि। चेद्भवन्ति तदा ज्ञेया गजडास्तु यथाक्रमम् ३ यदि नाम्नि भवेद्वर्णः संयोगाक्षरलक्षणः। ग्राह्यस्तस्यादिमो वर्ण इत्युक्तं ब्रह्मयामले ४ यदा स्वरादिकं नाम तदा ग्राह्यं वराक्षरम्। देशे ग्रामे पुरे हर्म्ये नरनामादिनिर्णये ५ 'अथ स्वर वशात्तिथिज्ञानमाह'— नन्दाभद्राजयारिक्तापूर्णाश्च प्रतिपन्मुखाः। अकारादिस्वराणां च नन्दादितिथयः क्रमात् ६ आद्ये तिथौ त्रयो वर्णा द्वौ द्वौ वै शेषयोर्यदि। एवं तिथित्रयज्ञेया वर्णसंख्यास्वरेष्वपि ७ 'अथ नक्षत्रवशाद्राशिज्ञानमाह'— सप्तविंशतिभानां च नवभिर्नवभिः पदैः अश्विनीप्रमुखानां च मेषाद्या राशयः स्मृताः ८ 'अथाज्ञातजन्मकाले नामज्ञानमाह'— जातकं च तिथिं राशिं विज्ञेयं नामगाज्झलैः। अज्ञातजातकानांतु समस्तमभिधानतः। प्रसुप्तो भाषते येन येनागच्छति शब्दतः। संस्कृतं प्राकृतं वापि ख्यातं नाम फलप्रदम् ११ बहूनि यस्य नामानि नरस्य च कथंचन। तस्य पश्चाद्भवं नाम ग्राह्यं स्वर-विशारदैः" इति १२

*इह मासग्रहतोऽपि वेधचिन्तनमुक्तं' 'ग्रन्थान्तरे'— मेषादिमासपक्षाहः क्षणतात्कालिकग्रहान्। उपग्रहाँश्च लत्ताश्च क्रमादेताँल्लिखेत्तथा" इति। अत्र मासिकग्रहा गणितागतग्रहा एव ज्ञेयाः। 'अथ पाक्षिकादि ग्रहतः फलचिन्तनमुक्तं' तदित्थम्'—" पक्षवर्त्ती पक्षफ (ब) लं नित्यवेधं समादिशेत्। आश्चर्यं हि नित्यफलं यदुक्तं वेधमार्गतः" इत्यत्र पाक्षिकग्रहैः पक्षे, दैनिकग्रहैर्दिने, क्षणिकग्रहैः क्षणे वेधमार्गतो यत्फलमुक्तं तत्तात्कालिकमाश्चर्य्य रूपं नित्यं चिन्त्यमिति।

इह ग्रन्थकारैस्तात्कालिकचन्द्रसाधनमुक्तम्'—" नक्षत्रयातं नगलोचनघ्नं समस्तनक्षत्रहृतं मपूर्वम्। तद्यात-नक्षत्रयुतं तदेति तत्कालशीतद्युतिनामधेयः" इति। अस्यार्थः— प्रश्नसमये यद्भस्य भुक्तघट्यादिकं तत्सप्तविंशत्या हतं सर्वर्क्षभक्तं लब्धं नक्षत्रादि भवेत्। लब्ध नक्षत्रसंख्यायामभीष्ट गतनक्षत्रसंख्या योज्या जातं तत्कालेन्दोर्गतभादि।

भवेङ्के ततस्तुर्य्यभे बोधनोऽतो गुरुः पञ्चमस्थस्ततस्तर्कभेऽच्छः ।
ततः सप्तमे मन्दगोऽतोऽङ्कतुल्ये विवस्वाँस्ततो नन्दभे दानवोऽतः ॥ १९६ ॥

ध्वजो गोमितेदैनिकाः स्युर्नभोगा द्युकृत्संस्थभात्पावकेष्वद्रिधिष्ण्ये ।
भुजङ्गेभशक्रोरगागप्रमर्क्षे क्षणाख्याः खगाश्चन्द्रतः स्युः क्रमेण ॥ १९७ ॥

इष्ट समय में जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उस से १२ वें नक्षत्र पर केतु, उस से १७ वें बुध, उस से ४ थे शुक्र, उस से १४ वें राहु, उस से १८ वें मङ्गल, उस से १३ वें गुरु, उस से १० वें शनि और उस से १५ वें नक्षत्र पर चन्द्रमा होता है । इस क्रम से ये पाक्षिक ग्रह जानने । इष्ट समय में जिस नक्षत्र पर चन्द्रमा हो उस से ७ वें नक्षत्र पर मङ्गल, उस से ४ थे बुध, उस से ५ वें गुरु, उस से ६ ठे शुक्र, उस से ७ वें शनि, उस से ९ वें सूर्य, उस से ९ वें राहु और उस से ९ वें नक्षत्र पर केतु होता है । इस क्रम से ये दैनिक ग्रह जानने । इष्ट समय में जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उस से ३ रे नक्षत्र पर चन्द्रमा, उस से ५ वें मङ्गल, उस से ७ वें बुध, उस से ८ वें गुरु, उस से ८ वें शुक्र, उस से १४ वें शनि, उस से ८ वें राहु और उस से ७ वें नक्षत्र पर केतु होता है । इस क्रम से ये क्षणिक ग्रह जानने । किन्तु यहां स्मरण रखना चाहिए कि पाक्षिकादि ग्रह साधन में अभिजित् सहित नक्षत्रों की गणना करे ।

'वर्णस्वरचक्रमिदम्'।

अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

'स्वरवर्णतिथिचक्रमिदम्'।

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
अ क छ १	इ ख ज २	उ ग झ ३	ए घ ट ४	ओ च ठ ५
ड ध ६	ढ न ७	त प ८	थ फ ९	द ब १०
भ व ११	म श १२	य ष १३	र स १४	ल ह १५

'उदाहृतिः'— प्रश्नकाले वर्त्तमानं पुष्यभं तद्भुक्तघट्यादयः १०।३० सर्वर्क्ष घट्यादयः ६१।३० ततो भभुक्तम् १०।३० सप्तविंशत्या २७ गुणितं जातं २८३।३० इदं षष्ठ्या गुणितं १७०१० जातो भाज्यः। ततः सर्वर्क्षघट्यादयः ६१।३० षष्ठ्या गुणिता ३६९० जातो भाजकः । भाज्यं १७०१० भाजकेन ३६९० विभज्य फलं ४।३६।३५ नक्षत्रादि । इदं गतनक्षत्रपुनर्वसुसंख्यया ७ युक्तं जातं ११।३६।३५ तत्काले चन्द्रस्य गतनक्षत्रादि । अर्थात् उत्तराफाल्गुनीतृतीयचरणे चन्द्रो वर्त्तते इति ।

‘ रविभतः पाक्षिकग्रहाः ’।

र. नक्ष.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.
चन्द्रः	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.
भौमः	मृग.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा,	वि.	अनु.	ज्ये.
बुधः	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.
गुरुः	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.
शुक्रः	कृत्ति.	रोहि.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.
शनिः	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.	कृत्ति.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.
राहुः	विशा.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि
केतुः	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	शत.

‘ रविभतः पाक्षिकग्रहाः ’।

र. नक्ष.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.
चन्द्रः	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.
भौमः	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रे.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.
बुधः	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.
गुरुः	कृत्ति.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.
शुक्रः	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.
शनिः	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	शत.
राहुः	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.
केतुः	पू. भा.	उ. भा.	रे.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.

‘ चन्द्रमतो दैनिकग्रहाः ’ ।

चं. नक्ष.	अश्वि.	भर.	कृत्ति.	रो.	मृ.	आ.	पुन,	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.
रविः	मृग.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.
भौमः	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.
बुधः	मघा	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.
गुरुः	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.
शुक्रः	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा	उ. भा.	रे.	अश्वि	भर.	कृ.	रो.
शनिः	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.
राहुः	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा,	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा.
केतुः	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रे.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा

‘ चन्द्रभतो दैनिकग्रहाः ’ ।

चं. नक्ष.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.
रविः	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रोहि.
भौमः	उ. षा.	अभि.	श्रव.	ध.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा
बुधः	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.
गुरुः	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	वि.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.
शुक्रः	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.
शनि.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा,	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा,	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.
राहुः	उ. भा,	रेव.	अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ, फा.
केतुः	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.

‘ रविभतः क्षणिकग्रहाः ’।

र. नक्ष.	आश्वि.	भर.	कृत्ति.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.
चन्द्रः	कृत्ति.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.
भौमः	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.
बुधः	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.
गुरुः	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.
शुक्रः	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.
शनिः	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	शत.
राहुः	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.	कृ.	रो.
केतुः	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	ति.	श्ले.	म.

‘ रविभतः क्षणिकग्रहाः ’।

र. नक्ष.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	ध.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.
चन्द्रः	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.
भौमः	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. फा.	रेवं.	आश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा
बुधः	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.	कृत्ति.	रो.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.
गुरुः	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.
शुक्रः	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्र.	धनि.	शत.	पू. भा.
शनि.	पू. भा.	उ. भा.	रेव.	आश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.
राहुः	मृ.	आर्द्रा.	पुन.	ति.	श्ले.	म.	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.
केतुः	पू. फा.	उ. फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.

ग्रहों के सौम्यपापत्व का परिज्ञानः—

एकादश्याः कृष्णपक्षस्य शुक्लपञ्चम्यन्तं ग्लौः कृशः क्रूर एषः ।
क्रूराः केत्वारार्किहीनाः समांशे तद्युग् ज्ञोऽपि क्रूरकोऽन्ये शुभाःस्युः ॥ १९८ ॥

कृष्णपक्ष की एकादशी से शुक्ल पक्ष की पञ्चमी पर्य्यन्त ' क्षीण चन्द्रमा ' होता है इसलिए यह क्रूर जानना चाहिए । केतु, मङ्गल, शनि, राहु और सूर्य ये 'क्रूरग्रह' हैं । उक्त क्रूरग्रह तथा बुध एक राशि में स्थित होकर एक ही नवांश में हो तो बुध भी क्रूर होता है । यदि क्रूरग्रह और बुध एक राशि में स्थित होने पर भी एक नवांश में न हों तो ' बुध शुभ ' होता है । पूर्ण चन्द्रमा और शेष ग्रह शुभ होते हैं ।

चन्द्रमा के शुभाशुभत्व का विशेष परिज्ञानः—

दारालयस्थो दुरितात्खलद्वयमध्यस्थितो वाऽघयुतोऽमृतद्युतिः ।
सन्नप्यसत्कृत्सचिवेक्षितः शुभाधीष्टांशकेऽब्जोऽशुभगोऽपि सत्प्रदः ॥ १९९ ॥

पाप ग्रह से सप्तमस्थान में ' चन्द्रमा ' हो अथवा दो पापों के मध्य में ' चन्द्रमा ' हो अथवा चन्द्रमा पाप ग्रह से युक्त हो तो शुभ स्थान में स्थित हुआ चन्द्रमा भी अशुभ फल करता है । एवं अशुभ स्थान में स्थित हुआ चन्द्रमा भी शुभ ग्रह के तथा अधि मित्र के नवांश में स्थित हो और गुरु से दृष्ट हो तो शुभ फल करता है

वक्री तथा उदय ग्रह के बल का परिज्ञानः—

प्रपूर्णवीर्य्यो द्युचरोऽनृजूदयस्वमानखण्डेऽथ तदग्रपृष्ठगे ।
नभश्चरे वीर्य्यमिहानुपाततः संसाधयेत्सन्ततमार्य्यसत्तमः ॥ २०० ॥

भौमादि पाँच ग्रहों के मध्य में जो कोई ग्रह वक्री वा उदय हो उस की वक्रावधि अथवा उदयावधि के समय का आधा समय वीत जाने पर वक्री ग्रह का वा उदय ग्रह का मध्य काल होता है । उस मध्य काल में वक्री वा उदय ग्रह पूर्ण बली होता है । उस मध्य काल से ' ग्रह ' जितना आगे वा पीछे हो उतना बल त्रैराशिक गणित के द्वारा पूर्ण बल से न्यून जाने क्योंकि वक्री वा उदय होने के आरम्भकाल में वा अन्त्यकाल में वक्री का और उदय का ०।० बल होता है अर्थात् वक्र तथा उदय के आरम्भ और अवसान में बलाभाव होता है ।

उच्च बल का परिज्ञानः—

बलं समग्रं परमोच्चभागसमाश्रितानां गगनेचराणाम् ।
दलं बलं स्यात्परमाधरांशस्थानां तयोर्मध्यगतेऽनुपातात् ॥ २०१ ॥

उच्च राशि के परमोच्चांश पर ' पूर्णबल ' तथा नीच राशि के परमनीचांश पर ' अर्द्धबल ' होता है । यदि ' ग्रह ' अपनी उच्चराशि तथा नीच राशि के मध्य में हो तो त्रैराशिक गणित से ग्रह के उच्चबल का साधन करे।

ग्रहों के स्वक्षेत्रादि बल का परिज्ञानः—

विहङ्गमे स्वीयभगे प्रपूर्णं वीर्य्यं वयस्यालयगेऽघ्रिहीनम् ।
समानराशौ शकलं तदोर्ज्जमरातिगेहोपगतेऽघ्रितुल्यम् ॥ २०२ ॥

यदि ' ग्रह ' अपनी राशि पर हो तो ' पूर्णबल ' मित्र की राशि पर हो तो ' त्रिपादबल ' सम की राशि पर हो तो ' द्विपादबल ' और शत्रु की राशि पर हो तो ' एक पाद बल ' होता है। यह बल भी वक्रोदयादि बल के तुल्य जानना अर्थात् ' ग्रह ' उक्त राशियों के मध्य (१५ अंश) में हो तो यथोक्तबल पूर्ण होता है। एवं ग्रह राशि के मध्य से जितना आगे वा पीछे हो उतना बल त्रैराशिक गणित से न्यून हो जाता है अर्थात् राशि के आरम्भ में और अन्त्य में ग्रह का ०।० बल जानना चाहिए।

एतद्बलं स्थानवशात्समानं सौम्यग्रहाणां च खलाभिधानाम्।
सौम्ये मतं सत्फलमेतदेव फलं विलोमाद्दुरितग्रहेऽदः ॥ २०३ ॥

यह स्थानबल शुभ तथा पापग्रहों का समान होता है। किन्तु फल में विपरीतता होती है अर्थात् शुभग्रहों का जितना स्थानबल हो उतना ही शुभफल होता है और पापग्रहों का शुभफल विपरीत जानना।

शुभग्रहों के शुभफल का स्पष्टीकरण—

स्वक्षेत्रगे सत्फलपूर्णमेवोदासीनभे नेमफलं निरुक्तम्।
सदश्रपान्थे सखिभे त्रिपादं दुर्हृन्निशान्ते चरणप्रमाणम् ॥ २०४ ॥

यदि ' शुभग्रह ' अपनी राशि में हो तो ' पूर्ण शुभफल ' समग्रह की राशि में ' अर्द्धशुभफल ' मित्रग्रह की राशि में ' त्रिपाद शुभफल ' और शत्रुराशि में ' एकचरण शुभफल ' होता है।

पापग्रहों के शुभफल का स्पष्टीकरण—

पङ्काभिधेये स्वनिकेतनस्थे पादं फलं मित्रनिकेतनेऽर्द्धम्।
त्रिपादतुल्यं समसद्मसक्ते फलं समग्रं परिपन्थिराशौ ॥ २०५ ॥

यदि पापग्रह अपनी राशि में हो तो उस का ' एकपाद अशुभफल ' मित्रराशि में ' आधा अशुभफल ' समग्रह की राशि में ' तीनपाद अशुभ फल ' एवं शत्रुराशि में ' सम्पूर्ण अशुभ फल ' होता है।

यावन्मितं स्थानबलं प्रजायते वेधस्य कर्तुः सुरवर्त्मचारिणः।
तावन्मितं वेध्यकवस्तुनां फलं प्रकल्पनीयं श्रुतवारपारगैः ॥ २०६ ॥

वेध करनेवाले ग्रह को जितना स्थान बल प्राप्त हो उतना ही विधि हुई वस्तु के वेध फल की पण्डितजनों ने कल्पना करनी चाहिए।

'ग्रहाणां स्वक्षेत्रादिबोधकचक्रमिदम्'।

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
स्वक्षेत्राणि	५	४	१।८	३।६	९।१२	२।७	१०।११	६	१२
मित्रक्षेत्राणि	४ १।८ ९।१२	५ ३।६	४।५ ९।१२	५ २।७	४।५ १।८	३।६ १०।११	२।७ ३।६	"राहुकेत्वोर्मिथो मैत्री शत्रुतान्यान् ग्रहान् प्रति" इति	
समक्षेत्राणि	३।६	१।८ २।७ ९।१२ १०।११	२।७ १०।११	१।८ ९।१२ १०।११	१०।११	१।८ ९।१२	९।१२		
शत्रुक्षेत्राणि	२।७ १०।११	०	३।६	४	३।६ २।७	४।५	४।५ १।८		
उच्चराशयः	१	२	१०	६	४	१२	७	३	९
उच्चांशाः	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	२०	२०
नीचराशयः	७	८	४	१२	१०	६	१	९	३
नीचांशाः	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	२०	२०

'शुभाशुभानां स्थानबलमिदंविंशोपकात्मकम्' । 'शुभाशुभानामुच्चबलमिदं विंशोपकात्मकम्'।

स्वक्षेत्रमध्ये	मित्रक्षेत्रमध्ये	समक्षेत्रमध्ये	शत्रुक्षेत्रमध्ये	परमोच्चे	परमनीचे
२०	१५	१०	५	२०	०

'शुभाशुभानां वक्रोदयबलं विंशोपकात्मकम्'।

उदयारम्भे	उदयमध्ये	उदयान्त्ये	वक्रारम्भे	वक्रमध्ये	वक्रान्त्ये
०	२०	०	०	२०	०

'शुभानां शुभफलबोधकचक्रम्'। 'पापानां पापफलबोधकचक्रम्'।

स्वभे	मित्रभे	समभे	रिपुभे	स्वभे	मित्रभे	समभे	रिपुभे
पूर्णम्	पादोनम्	दलम्	एकचरणम्	एकचरणम्	दलम्	पादोनम्	पूर्णम्

वक्रगत्यादि ग्रहों के फलकी वृद्धिहानिका परिज्ञानः—

वक्राश्रवासे द्विगुणं फलं स्यात्स्वोदग्रयाते त्रिगुणं तदुक्तम् ।
स्वभावजन्यं त्वरितग्रहेन्द्रे नतोपगो नेमफलो न भोगः ॥ २०७ ॥

यदि 'ग्रह' वक्री हो तो पूर्वोक्त विधि से प्राप्त हुआ फल द्विगुणित, उच्चराशिमें 'ग्रह' हो तो त्रिगुणित, शीघ्रगति में 'ग्रह' हो तो स्वभावानुकूल अर्थात् जितना फल आया हो उतनाही और नीचराशिपर हो तो 'आधा फल' होता है ।

क्रूरग्रहा वक्रमिता यदा महाक्रूराः शुभा वक्रमिता महाशुभाः ।
क्रूराभ्रगेहाः सुकृताभिधास्तथा चेच्छीघ्रगाः स्युः सहजस्वभावगाः ॥ २०८ ॥

'क्रूरग्रह' 'वक्री' हो तो 'महाक्रूर' तथा 'शुभग्रह' वक्री 'हो तो 'महाशुभ' होता है । एवं पाप अथवा शुभग्रह शीघ्रगति में हो तो सहजस्वभाव वाले होते हैं ।

शोभनशीघ्राः स्युर्बलवन्तः ।
पामरतूर्णा वीर्य्यविहीनाः ॥ २०९ ॥

यदि शुभग्रह शीघ्रगति वाले हों तो बलवान् और पापग्रह शीघ्रगति वाले हों तो निर्बल होते हैं ।

वक्रर्जुतुङ्गाधरराशिसंस्थाः कल्याणसंज्ञा दुरितास्तथैव ।
स्थानंच तेषामिति वेद्यमत्र विज्ञायवीर्य्यं प्रवदेत्फलं वित् ॥ २१० ॥

शुभ तथा पाप ग्रहों की वक्र तथा मार्गगतिको, उच्च तथा नीचराशिको और स्व, मित्र, सम तथा शत्रु स्थानको एवं ग्रहके बलको जानकर पण्डितजन फलको कहे ।

ग्रहों के निर्बलत्व का परिज्ञानः—

वेधकारकवियच्चरेऽस्तगे पङ्कखेचरयुतेऽधरङ्गते ।
किं विपक्षभवनोपगे यदा सत्फलं न कुरुते नभश्चरः ॥ २११ ॥

यदि 'वेधकर्त्ताग्रह' अस्तगत पापयुक्त नीचराशिगत अथवा शत्रु राशि में हो तो वह शुभ फलको नहीं करता है ।

जाति नक्षत्र परिज्ञानः—

पूर्वात्रयं चानलभं द्विजानां तथोत्तराख्यत्रितयंच जैवम् ।
बाहूत्थितानामथ पित्र्यपौष्णे प्रजेशमैत्रे वसुधास्पृशां च ॥ २१२ ॥
तथांघ्रिजानामभिजित्सुराम्बाहस्ताश्विनीभान्यथ कारुकाणाम् ।
उच्छिष्टभानि द्विजपूर्वकाणां विद्धैरमीभिः सदसत्फलं स्यात् ॥ २१३ ॥

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा और कृत्तिका ये चार नक्षत्र ब्राह्मणों के; उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा और पुष्य ये चार नक्षत्र क्षत्रियों के; रोहिणी, मघा, अनुराधा और रेवती ये चार नक्षत्र वैश्यों के; अभिजित्, हस्त, पुनर्वसु और अश्विनी ये चार नक्षत्र शूद्रों के और शेष १२ नक्षत्र कारुक (शिल्पकार) आदि निम्नजाति के हैं। अतः जिस नक्षत्र को वेध हो उस नक्षत्रकी जाति को वेध जानना । यदि वेधकर्त्ता शुभग्रह हो तो शुभफल और पापग्रह हो तो अशुभ फल होता है।

उपग्रह परिज्ञानः—

धिष्ण्यं पञ्चममर्कभादिह *तडिद्वक्त्रं ध्वजोऽष्टादश
उल्का स्वर्गमिते चतुर्दशमिते भे सन्निपातं तथा ।
शूलं चाष्टमभे शराश्विमितभे कम्पश्चतुर्विंशतौ
निर्घातः कुलिशं गुणाक्षिमितभेऽष्टामी उपव्योमगाः ॥२१४॥

इष्ट समय में ‘ सूर्य ’ जिस नक्षत्रपर हो उससे ५ वें नक्षत्र पर ‘ विद्युन्मुख ’ १८ वें पर ‘ केतु ’ २१ वें पर ‘ उल्का ’, १४ वें पर ‘ सन्निपात ,’ ८ वें पर ‘ शूल,’ २२ वें पर ‘ कम्प,’ २४ वें पर ‘ निर्घात ’ और २३ वें पर ‘ कुलिश ’ ये आठ उपग्रह हैं। उक्त उपग्रहों की गणना करने में अभिजित् की गणना न करे।

उपग्रहों के फलका परिज्ञानः—

यस्याङ्गिनः सम्भवभं खलेन विद्धं तथोपग्रहसम्भवश्चेत् ।
तत्रोपतापेन किमाहवेऽपि तत्पञ्चतोक्ता नहि संशयोऽत्र ॥ २१५ ॥

जिस मनुष्यके जन्म नक्षत्र पर पापग्रह का वेध हो और उस पर उक्त उपग्रह भी हो तो उस मनुष्य की रोग से अथवा सङ्ग्राम में मृत्यु होती है। इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

लत्तादोष परिज्ञानः—

संलत्तयन्तीनमुखा रविप्रमं शैलोन्मितं राममितं द्विदोर्मितम् ।
षष्ठं तथा सिद्धमितं गजोन्मितं भं गोभमात्मोपगभात्पुरः क्रमात् ॥ २१६ ॥

---

* ‘ इह कैश्चिदुपग्रहाणांरव्यादिसञ्ज्ञा उक्ताः ’—विद्युन्मुखो रविर्ज्ञेयः शूलश्चन्द्रः प्रकीर्तितःसन्निपातःकुजो ज्ञेयो बुधः केतुः प्रकीर्तितः १. उल्का ज्ञेया सुराचार्य्यो वज्रं भार्गव उच्यते । कम्पः शनैश्चरो ज्ञेयो राहुनिर्घात एव च २. यद्येन वर्त्तते विद्धं पूजां तस्य तु कारयेत् ” इति ।

इह ‘ ग्रन्थान्तरे ’ ‘ राज्ञां राजेतराणां च जन्मभादीनां पृथक् फलविवेक उक्तः—जन्मभं कर्म्म आधानं विनाशं सामुदायकम् । संघातिकमिदं धिष्ण्यं षट्कं सर्वजननिकम् १. जातिदेशाभिषेकैश्च नव धिष्ण्यानि भूपतेः । वेधं ज्ञात्वा फलं ब्रूहि क्रूरे हानिं शुभे शुभम् ’ इति । तत्र जन्मादिनक्षत्र ज्ञानमप्युक्तम् ‘ जन्मभं जन्मनक्षत्रं दशमं कर्म्मसञ्ज्ञकम् । एकोनविंशमाधानं त्रयोविंशं विनाशभम् १. अष्टादशं च नक्षत्रं सामुदायिकसञ्ज्ञकम् । संघातिकं च विज्ञेय मृक्षं षोडशमत्रहि २. षड्विंशं राज्यजात्यं च जातिनाम स्वजातिभम् । देशभं देशनामर्क्षं राज्यर्क्षमभिषेकभम् ३.’ इत्यत्र जन्मभात् षड्विंशं राज्यजात्यं नक्षत्रं अथवा जातिनामनक्षत्रं जातिभम् । देशनामभं देशभम् । राज्याभिषेक कालीनं भं राज्यनक्षत्रं ज्ञेयम् । ‘ ग्रन्थान्तरे तु जात्यादिभमन्यथोक्तम् ’—पञ्चविंशतिजातिश्च सप्तविंशाभिषेकभम् । षड्विंशतमं देशं च जन्मऋक्षादि शोधयेत् ” इति ।

अश्विनी से रेवती पर्यन्त २७ नक्षत्रों में से जिस नक्षत्रपर ग्रह हो उस नक्षत्र से आगे के १२ वें नक्षत्र को सूर्य, ७ वें को चन्द्र, ३ रे को मङ्गल, २२ वें को बुध, ६ ठे को गुरु, २४ वें को शुक्र, ८ वें की राहू लातसे ताडन करते हैं। लत्ता विचार में भी अभिजित् की गणना न करे।

लत्ताफल परिज्ञानः—

वामोपयामे विधवाऽऽहवाह्वयेभङ्गश्च मृत्युर्गमनेऽनिवर्त्तनम्।
लत्तायुतोडूनि फलं प्रकुर्व्वत एवं भणन्ति स्वरशास्त्रकोविदाः ॥२१७॥

जिस नक्षत्र पर ग्रहकी लात हो उस नक्षत्र में यदि विवाह करे तो स्त्री विधवा होती है। युद्ध का आरम्भ हो तो भङ्ग (पराजय) अथवा मृत्यु होती है। एवं लत्ता नक्षत्र में यात्रा करे तो पुनरागमन नहीं होता है। लत्ता नक्षत्र उक्त फल को करते है इस प्रकार स्वरशास्त्रके पण्डित कहते हैं।

लत्ता तथोपद्युसदोऽत्रयस्मिन्धिष्ण्येऽपि तिष्ठेयुरसद्ग्रहेन्द्राः।
तत्रर्जुगत्या गददायकास्ते वक्रेतितो मृत्युकरा भवन्ति ॥२१८॥

यदि मनुष्य के जन्म नक्षत्र पर जिस समय ग्रह की लात हो, उस में उपग्रह हो और उसी नक्षत्र पर मार्गी क्रूर ग्रह भी हो तो रोगदायक और वक्री क्रूरग्रह हो तो मृत्यु देने वाला होता है।

जन्मकर्मादि नक्षत्र परिज्ञानः—

स्यात्कर्म्मसञ्ज्ञं दशमंच षोडशं संघातिकं त्र्यक्षिमितं विनाशभम्।
एकोनविंशंच निषेकभं जनुर्भंजन्मनक्षत्रभिमेन्दुसम्मितम् ॥२१९॥
तत्सामुदार्यं विषयोडु षट्करोन्मितं भतुल्यं ह्यभिषेकभं बुधैः।
जात्यृक्षमक्षाक्षिमितं प्रजाल्पितं भानां नवानामिति वेधवीक्षणे ॥ २२०॥
विज्ञाय वेधं द्युसदः शुभस्य शुभं फलं सन्न खलस्य तत्र।
त्यजेद्विवादं ग्रहणं शयस्य किं दूरदेशान्तरयानपूर्वम् ॥२२१॥

ग्रह के वेध को जानकर शुभग्रह का शुभ फल और पापग्रह का अशुभ फल होता है। वेध नक्षत्र में विवाद, विवाह अथवा दूरदेश की यात्रा को न करे।

ग्रहोंकी नक्षत्र दृष्टिका परिज्ञानः—

वीक्षन्ते सकलास्तिथिप्रमितभं भौमोऽष्टमेघोन्मितं
स्वर्गेष्वग्निमितं शनिर्दशमभं चैकोनविंशन्मितम्।
जीवोनन्दरविप्रमं कविविदौ सम्पश्यतोऽगुर्नव—
स्तुल्यं पञ्चमितं प्रपश्यति पपीः प्राग्वत्स्मृता राशिदृक् ॥२२२॥

सब सूर्यादि ग्रह अपने अधिष्ठित (जिसमें स्थित हो उस) नक्षत्र से १५ वें नक्षत्र को देखते हैं। ८ वें तथा १७ वें को मङ्गल, २१ वें, ५ वें तथा ३ रे को शनि, १० वें तथा १९ वें को गुरु, ७ वें तथा १२ वें को शुक्र बुध ये दोनों, ९ वें को राहु एवं ५ वें को सूर्य देखता है। पूर्वोक्त प्रकार के समान यहां भी ग्रहों की राशि (स्थान) दृष्टि का विचार करे।

'ग्रहाणां नक्षत्र दृष्टिचक्रमिदम्' ।

ग्र.	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श	रा.	के.
न.	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
न.	५	०	८	९	१०	९	२१	९	९
न.	०	०	१७	१२	१९	१२	५	०	०
न.	०	०	०	०	०	०	३	०	०

'ग्रहाणां स्थानदृष्टिचक्रमिदम्' ।

ग्रहः	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
ए.पा.दृ	३|१०	३|१०	३|१०	३|१०	३|१०	३|१०	०	३ ६	३ ६
द्विपा.दृ	५|९	५|९	५|९	५|९	०	५|९	५|९	२ १०	२ १०
त्रिपा.दृ	४|८	४:८	०	४|८	४|८	४|८	४|८	१	१
पू. दृ.	७	७	७ ४|८	७	७ ५|९	७	७ ३|१०	५ ७	५ ७

कालकी विशेषता से दृष्टिभेद परिज्ञानः—

सदाऽग्रदृष्ट्या शुभदः सितेदले दृशा स पश्चादसिते दले तथा ।
प्रागुक्तभं पश्यति पामरग्रहो व्यत्यासतः पश्यतिभं यदीरितम् ॥२२३॥

'शुभग्रह' शुक्लपक्ष में आगे के ओर के और कृष्णपक्ष में पीछे की ओर के एवं क्रूर ग्रह शुक्लपक्ष में पीछे की ओर के और कृष्णपक्ष में आगे की ओर उक्त नक्षत्रों को देखते हैं ।

पश्यत्यघः पृष्ठदृशा दिवाग्रेक्षणेन नक्तं विमलो विलोमात् ।
घस्राद्यभागेऽग्रदृशाऽथ पृष्ठेक्षया परार्द्धे सुकृतोऽन्यथाऽन्यः ॥ २२४ ॥

'क्रूरग्रह' दिनमें पीछेकी ओरके तथा रात्रिमें आगेकी ओरके एवं शुभग्रह दिनमें आगेकी ओरके तथा रात्रिमें पीछेकी ओरके उक्त नक्षत्रोंको देखते हैं । शुभग्रह मध्याह्नके पहले आगेके ओरके तथा मध्याह्नके पश्चात् पीछेकी ओरके एवं क्रूरग्रह मध्याह्न के पहले पीछे की ओर के तथा मध्याह्न के पश्चात् आगे की ओर के नक्षत्रों को पूर्वोक्त क्रम से देखते हैं ।

शस्ता सतांदृग् यदि वक्रगत्या शुभेतराणां शुभदा समेत्या ।
न शोभना सद्द्युसदां द्रुतेत्या दृष्टिस्तथा मध्यफला समेत्या ॥ २२५ ॥
दृगस्तगानां विफला शुभानां या दृक्खलानां यदि वक्रभुक्त्या ।
शस्ता न सा मध्यफलाऽऽशुगत्या सा निष्फला या तु दृगस्तगानाम् ॥ २२६ ॥

वक्रगति वाले शुभग्रहकी दृष्टि 'अतिशुभ' मध्यगति वाले पापग्रह की दृष्टि शुभ, शीघ्रगति वाले शुभग्रह की दृष्टि अशुभ, मध्यम गतिवाले शुभग्रह की दृष्टि मध्यम, अस्तगत शुभग्रह की दृष्टि निष्फल, वक्रगति वाले पापग्रह की दृष्टि अशुभ, शीघ्रगतिवाले पापग्रह की दृष्टि मध्यम एवं अस्तगत पापग्रह की दृष्टि विफल होती है ।

वर्णस्वर तिथ्युपरि दृष्टि परिज्ञानः—

भमण्डले मेषाद्ये वर्णस्वरपूर्वाणां यो राशिः ।
सोऽपि खचरदृग्वशतो ज्ञेयो वर्णवदने वेधः ॥ २२७ ॥

विद्ध वर्ण स्वरादियों की जो राशि हो उस राशिपर मेषादि द्वादश राशिचक्रमें वेधकारक ग्रह की जो दृष्टि हो वह दृष्टि उन विधे हुए वर्ण स्वरादियों पर जाननी चाहिए।

चक्रोक्ताः स्वरवर्णा ये ते प्रपीडिताः स्युस्तिथिवेधे ।
यो राशिर्वर्णतिथिषु तद्दृशि तिथिलोकनं प्रभवेत् ॥ २२८ ॥

स्वर वर्ण चक्रमें कहे स्वर और वर्ण की तिथि को वेध होनेसे वे स्वर और वर्ण भी वेधे जाते हैं। यदि वेधकर्त्ता ग्रह की उन तिथि वर्णों की राशिपर दृष्टि हो तो उन वर्ण स्वर तथा तिथिपर भी दृष्टि होती है।

असन्नभोगः शुभखेचरो वा तिथिं प्रविध्येद्यदि शुक्लपक्षे ।
अनूनकं स्वीयफलं प्रदत्ते सितेतरे स्वीयफलस्य नेमम् ॥ २२९ ॥

वेधकर्त्ता अशुभग्रह अथवा शुभग्रह यदि शुक्लपक्ष में तिथि को वेधे तो आपने पूर्वोक्त वेध फलको 'पूर्ण' देता है और कृष्णपक्ष में तिथि को वेधे तो 'आधा फल' देता है।

विहङ्गमानां निजनन्दभागे प्रकीर्तितेक्षा निखिला विधिज्ञैः ।
व्योमौकसो दृष्टिमृते प्रवेधे फलंनकिञ्चित्सदसद्यदुक्तम् ॥ २३० ॥

ग्रहों की अपने नवांशपर पूर्णदृष्टि कही है। वेधकर्त्ताग्रह की दृष्टि के विना केवल वेधसे कुछ भी शुभाशुभ फल नहीं होता है।

दृष्टिके द्वारा वेध फलका परिज्ञानः—

वेदस्य कर्ताऽभ्रचरः प्रविद्धं पश्यन्यदा पूर्णदृशा फलं सः ।
पादेन तस्य क्रमतः करोति चेदन्यथा दृष्ट्यनुमानतस्तत् ॥ २३१ ॥

जिस वर्ण स्वरादि को वेधकर्त्ता ग्रह वेधे उस वेधे हुए को (उसकी राशिको) यदि वह वेधकर्त्ताग्रह पूर्ण दृष्टिमें देखता हो तो स्वग्रहमित्रग्रहादिका पूर्वोक्त पादक्रम से जितना वेधफल कहा है उतनेही विंशोपक फलको देता है। यदि वेधकर्त्ताग्रह वर्णादि को पूर्ण दृष्टि से न देखता हो तो अर्थात् एक, दो वा तीन पाद दृष्टिसे देखता हो तो दृष्टि के ही अनुसार न्यूनाधिक फलको देता है।

इत्येवमीक्षणवशादखिलं फलं य-
त्सङ्कीर्त्तितं मुनिवरैः कुशलैः प्रविद्धे ।

वर्णादिपञ्चक इहाश्रसदा सखेटो
दत्ते शुभाशुभफलं बलतारतम्यात् ।। २३२ ।।

इस प्रकार दृष्टि के भेदसे चतुर मुनिजनोंने वेधजन्य समस्त फल कहा है । यदि वर्णादि पाँचों ग्रहसे वेधे गये हों तो वह ग्रह बल के तारतम्य से शुभाशुभ फल को देता है अर्थात् वेधकर्त्ता ग्रह ' शुभ ' हो तो शुभ फल और पाप हो तो अशुभ फल देता है ।

देवालयं संवसथश्च मण्डलं दुर्गं पुरं वा नगरं विनश्यति ।
विद्धं यदा क्रूरसुराध्वचारिभिर्नो संशयोऽत्रेति विपश्चितो विदुः ।। २३३ ।।

देवालय (मन्दिर), ग्राम, मण्डल, दुर्ग, पुर वा नगर इत्यादि के वर्ण वा स्वर पापग्रहों से विद्ध हो तो वह ' नष्ट ' होता है । इसमें सन्देह न करे । इसप्रकार पाण्डितजनोंने कहा है ।

पापैरुभतो यदि विद्धा राशिभाक्षरतिथिस्वरसञ्ज्ञाः ।
पञ्च यस्य मनुजस्य विनाशस्तस्य शास्त्रकुशलैः परिवेद्यः ।।२३४।।

जिस मनुष्यकी राशि, नक्षत्र, अक्षर, तिथि और स्वर ये पाँचों यदि पाप ग्रहों के द्वारा पार्श्वद्वय (दोनो ओर) से वेधे गये हों तो शास्त्रवेत्ताओंने उस मनुष्यका नाश कहा है ।

वेधस्यकर्त्ता कलुशो नभोगो यस्मिन्नुडौ संस्थित एष यत्र ।
कालेऽन्त्यधिष्ण्यं समुपैति तत्र सम्पीडितानां कुशलं करोति ।।२३५।।

वेधकर्त्ता पापग्रह जिस नक्षत्रमें स्थित होकर वेध करे यदि पापग्रह उस नक्षत्रके अन्त्य भाग में हो तो उस समय पीडितजनोंको सुखी करता है ।

वेधफल परिपाककाल परिज्ञानः—

वर्णःस्वरो राशितिथीच तारकैस्तत्पञ्चकं व्योमसदेन्दुना पुनः ।
संविध्यते यद्दिवसे शुभाशुभं तद्वासरे वेधभवं फलं वदेत् ।।२३६।।

वर्ण, नक्षत्र, राशि, स्वर और तिथि इन पाँचोमेंसे जिस किसी को ग्रहका वेध हो जब उसको पश्चात् जिस दिन चन्द्रमा वेधे तब उसीदिन उस ग्रहका पूर्वोक्त वेधजन्य शुभाशुभ फल होता है ।

अर्घ्यंवक्ष्ये खेटवेधेन मेन शस्ताशस्तं सर्वतोभद्रचक्रे ।
वस्त्वर्घाणां निर्णयाय प्रदिष्टं देशः कालः पण्यकं त्रीणिचेति ।।२३७।।

श्री शिवजीने ब्रह्मयामलग्रन्थ में वर्णित सर्वतोभद्र चक्रमें ग्रहोंके वेधसे जो अर्घ्य (भाव) का शुभाशुभ कहा है । अतः यहां वस्तुओं के अर्घ्य निर्णय के लिए देश, काल तथा पण्य इस प्रकार इन तीनों को कहते है '

देश, काल और पण्य परिज्ञानः—

वेध्यानि चिन्त्यानि विचक्षणैः सदोपवर्त्तनं मण्डलसञ्ज्ञकं तथा।
स्थानं त्रिधा देश इति प्रकथ्यतेऽब्दो मा दिनं काल इति त्रिधोच्यते ॥२३८॥

देश, मण्डल और स्थान इस प्रकार देशके तीन भेद कहे हैं। वर्ष, मास और दिन इस प्रकार काल के तीन भेद कहे हैं।

पण्यं त्रिधैवं गदितंच धातुर्मूलं शरीरी त्वथ कूर्म्मचक्रे।
देशानिरुक्ता तदवान्तरं यत्तन्मण्डलं यत्पुर पूर्वकं तत् ॥२३९॥
स्थानं त्रिधादेशविनिर्णयोऽथो सङ्क्रान्तितोऽब्दो धिषणस्यवेद्यः।
मासस्त्विषां नायकसङ्क्रमेण वारोदयेनैव दिनं प्रबोध्यम् ॥२४०॥
त्रिधेति कालस्य विनिर्णयः स्मृतः स्युर्धातवो हाटकमृत्तिकान्तकाः।
मूलानिवृक्षाज्र्जुनकावसानिच जीवाख्यका मानवकीटकान्तकाः ॥२४१॥

धातु, मूल और जीव इस प्रकार पण्य के तीन भेद कहे हैं। कूर्म्मचक्रोक्तदेश, प्रत्येक देशके अन्तर्गत जो प्रदेश (प्रान्त वा जिला) हो वह मण्डल और प्रत्येक मण्डल में जो ग्राम हो वह स्थान इस प्रकार देशके तीन भेद कहे हैं। गुरुकी सङ्क्रान्ति (राशिचार अर्थात् एक राशि को भोगपर दुसरी राशिपर जाने) से वर्ष, सूर्यकी सङ्क्रान्तिसे मास और सूर्योदयसे दिन इस प्रकार काल के तीन भेद कहे हैं। सुवर्णप्रभृति मृत्तिकापर्य्यन्त अर्थात् समस्त खनिज पदार्थ धातुसञ्ज्ञक हैं। वृक्ष प्रभृति तृणपर्य्यन्त अर्थात् समस्त उद्भिज पदार्थोंकी मूल संज्ञा है। जीव प्रभृति मनुष्य कीट पर्य्यन्त अर्थात् जल स्थल तथा अन्तरिक्षमें विचरने वाले सम्पूर्ण प्राणी जीवसंज्ञक हैं।

देशादियोंके स्वाम्यादिका परिज्ञानः—

वक्ष्येऽधिनाथान् विषयादिकानां देशाधिपाला गुरुपङ्गुपाताः।
स्युर्मण्डलेशा अनिलेनकाव्याः स्थानाधिपा बोधनवक्रचन्द्राः ॥२४२॥

देशादिके कहनेके अनन्तर उनके स्वामियोंको कहता हूं। गुरु, शनि और राहु इन तीनों में से जो अधिक बली हो वह देशका स्वामी; केतु, रवि और शुक्र इन तीनोमें से जो अधिक बली हो वह मण्डल का स्वामी एवं बुध, मङ्गल और चन्द्र इन तीनों में से जो अधिक बली हो वह स्थानका स्वामी होता है।

तमोग्रहार्क्यङ्गिरसोऽब्दनाथा मानायका मङ्गलभेनहेम्नाः।
दिनाधिपालो जलगोलमूर्तिर्धात्वीश्वरा मङ्गलमन्दपाताः॥ २४३॥

जीवाधिनाथाः कुमुदेकबन्धूतथ्यानुजज्ञा अथ मूलनाथाः।
छायाधिपालानिलदानवेज्या वेद्या विहङ्गा इति पण्यपालाः॥ २४४॥

राहु, शनि और गुरु इन तीनों में से जो अधिक बली हो वह वर्षेश; मङ्गल, शुक्र, सूर्य और बुध इन चारों में से जो अधिक बली हो वह मासेश एवं 'चन्द्रमा' दिन का स्वामी होता है। मङ्गल, शनि और राहु इन तीनों में से जो अधिक बली हो वह धातु का स्वामी; चन्द्र, गुरु और बुध इन तीनों में से जो अधिक बली हो वह जीव का स्वामी एवं सूर्य, केतु और शुक्र इन तीनों में से जो अधिक बली हो वह मूल का स्वामी होता है।

पुरुषादि ग्रह परिज्ञानः—

पुंखेचरा जीवकबन्धखेचरमहीजमार्त्तण्डशिरोनभश्चराः।
काव्यौषधीशौ वनितावियच्चरौ नपुंसकौ नेमिजनीलवाससौ॥ २४५॥

गुरु, केतु, मङ्गल, सूर्य और राहु ये पुरुषग्रह हैं। शुक्र तथा चन्द्रमा ये स्त्री ग्रह हैं। बुध तथा शनि नपुंसक ग्रह हैं।

श्वेतादि वर्ण के स्वामियों का परिज्ञानः—

श्वेतवर्णरमणौ सितसोमौ रक्तवर्णरमणौ रविभौमौ।
पातपङ्गुशिखिनोऽसितनाथाः पीतवर्णदयितौ बुधगौरौ॥ २४६॥

शुक्र तथा चन्द्रमा श्वेत वर्ण के स्वामी; रवि तथा भौम लालवर्ण के स्वामी, केतु, शनि तथा राहु कृष्णवर्ण के स्वामी एवं गुरु तथा बुध ये दोनों पीत वर्ण के स्वामी हैं।

बल के द्वारा देशादियों के स्वामी का निर्णयः—

वक्रोदयोच्चर्क्षमुखोपयातो वीर्य्याधिको यो गगनेचरेन्द्रः।
प्रोक्तः स एको विषयादिकानामधीश्वरः प्राक्तनशास्त्रविज्ञैः॥ २४७॥

देशादियों के अपने अपने स्वामी ग्रहों में से जो ग्रह जिस समय वक्रादि को प्राप्त होकर अधिक बली हो अर्थात् पूर्वोक्त स्थान बलादि चारों बलों का योग जिस ग्रह का सब से अधिक हो वही एक ग्रह उस समय देश प्रभृति का स्वामी होता है।

स्वामी के द्वारा वेधजन्य फल का निर्णयः—

देशादिनाथा इति ये वियच्चरास्तेऽनूनका वेधकखेचरं प्रति।
मित्राणि मध्याः परिपन्थिनस्तथा विचिन्तनीया विबुधैः प्रयत्नतः॥ २४८॥

इस प्रकार जो देश मण्डलादिकों के पृथक् पृथक् स्वामी निश्चय किये हुए हैं वे ग्रह अपने देशादि के वर्णादिकों को वेध करने वाले ग्रह के प्रति मित्र शत्रु वा सम कैसे हैं इस का विचार करना चाहिए।

स्वीयमित्रसमशात्रववेधे चेत्क्रमाद्विषयपूर्वक एव।
वेदरामयमशीतगुपादैः शोभनं गतमलो विदधीत ॥ २४९ ॥

देश, मण्डल तथा स्थान को वेध करने वाला देशादि की राशि का स्वामी शुभग्रह हो तो चार पाद, शुभ मित्र ग्रह हो तो तीन पाद, शुभ सम ग्रह हो तो दो पाद और शुभ शत्रु ग्रह हो तो एक पाद शुभ फल को करता है।

क्रमेण देशादिषु नैजमित्रोदासीनदुर्हृत्सुखत्मवेधे।
शीतांशुदृक्पावकतुर्य्यपादैर्दुष्टं फलं दुष्टखगो विधत्ते ॥ २५० ॥

देश, मण्डल तथा स्थान को वेध करने वाला देशादि की राशि का स्वामी पाप ग्रह हो तो एक पाद, पाप मित्र ग्रह हो तो दो पाद, सम पाप ग्रह हो तो तीन पाद और शत्रु पाप ग्रह हो तो चार पाद (पूर्ण) अशुभ फल को करता है।

दृष्टि के द्वारा वेध फल का परिज्ञानः—

विद्धं विहङ्गो यदि वेधकर्त्ता पश्यन्यदा पूर्णदृशा फलं सः।
पादेन तस्य क्रमतः करोति चेदन्यथा दृष्ट्यनुमानतस्तत् ॥ २५१ ॥

वर्ण स्वरादिको वेध करने वाला ग्रह उस वेधे हुए वर्ण स्वरादि की राशि को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो स्वमित्रादि का पूर्वोक्त पादक्रम से जितना वेध फल कहा हुआ है उतना पूर्ण फल को देता है। वेध कर्त्ता ग्रह यदि वर्ण स्वरादि की राशि को पूर्ण दृष्टि से न देखता हो अर्थात् न्यून दृष्टि से देखता हो तो दृष्टि के तीन दो एक पाद के अनुसार न्यून फल को देता है।

'स्वाम्यादिवेधकदृष्टिवशाद्वेधफलबोधकचक्रमदः'।

'शुभानां शुभफलबोधकचक्रम्'।					'पापानां दुष्टफलबोधकचक्रम्'।				
दृष्टिः	स्वामिनः	सुहृदः	समस्य	अरेः	दृष्टिः	स्वामिनः	सुहृदः	समस्य	अरेः
पूर्णा	२० ०	१५ ०	१० ०	५ ०	पूर्णा	५ ०	१० ०	१५ ०	२० ०
पादोना	१५ ०	११ १५	७ ३०	३ ४५	पादोना	३ ४५	७ ३०	११ १५	१५ ०
द्विचरणा	१० ०	७ ३०	५ ०	२ ३०	द्विचरणा	२ ३०	५ ०	७ ३०	१० ०
एकचरणा	५ ०	३ ४५	२ ३०	१ १५	एकचरणा	१ १५	२ ३०	३ ४५	५ ०

वेधजन्यफल विंशोपक परिज्ञानः—

वर्णादिपञ्चकमघाम्बरगः प्रपश्यन्
विध्यन्यदाऽखिलदृशा चतुरः प्रयच्छेत् ।
विंशोपकाः फलमथो शुभदाभ्रचारी
चेतद्विधो दिशति पञ्च फलं विशोपाः ॥ २५२ ॥

वर्णादि पाँचों को वेध करनेवाला पापग्रह यदि उन वर्णादियों की राशि को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो ४ विंशोपका फल को देता है । एवं वर्णादि पाँचों को वेध करनेवाला शुभग्रह यदि उन वर्णादियों की राशि को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो ५ विंशोपका फल को देता है ।

वेधो भवेद्वर्णमुखे यदुन्मितस्थानप्रवेधे च भदृग् यदुन्मिता ।
वेधस्य कर्त्तुः खसदस्तदुन्मिता विंशोपकाः सांहितिकैरुदाहृताः ॥ २५३ ॥

वर्ण, स्वर, तिथि, नक्षत्र और राशि इन पाँचों में से जितने को वेध हो और उन वर्णादियों की राशिपर वेधकर्त्ता ग्रह की जितने पाद दृष्टि हो उसी के अनुमान से संहिताशास्त्रवेत्ताओंने वेधफल के विश्वे (विंशोपक) कहे हैं ।

' वर्णादिपञ्चवेधेषु दृष्टिवशाद्विंशोपकात्मकफलबोधकचक्रम् ' ।

' शुभग्रहदृष्टिभवफलबोधकचक्रम् ' ।						' पापग्रहदृष्टिभवफलबोधकचक्रम् ' ।					
दृष्टिः	एकम्	द्वौ	त्रीन्	चतुरः	पञ्च	दृष्टिः	एकम्	द्वौ	त्रीन्	चतुरः	पञ्च
पूर्णा	१ ०	२ ०	३ ०	४ ०	५ ०	पूर्णा	० ४८	१ ३६	२ २४	३ १२	४ ०
पादोना	० ४५	१ ३०	२ १५	३ ०	३ ४५	पादोना	० ३६	१ १२	१ ४८	२ २४	३ ०
द्विचरणा	० ३०	१ ०	१ ३०	२ ०	२ ३०	द्विचरणा	० २४	० ४८	१ १२	१ ३६	२ ०
एकचरणा	० १५	० ३०	० ४५	१ ०	१ १५	एकचरणा	० १२	० २४	० ३६	० ४८	१ ०

विंशोपका यत्र भवेयुरेवं शुभाशुभाख्याः सदसद्ग्रहाणाम् ।
परस्परं शोधय दिव्यदृक् ताः शुभाशुभं संस्मृतमत्र शेषात् ॥ २५४ ॥

इस प्रकार जहाँ शुभाशुभ ग्रहों के पृथक् पृथक् शुभाशुभ विंशोपक प्राप्त हों तो उनका अन्तर करे यदि शुभग्रहों का विंशोपक शेष हो तो शुभफल और पापग्रहों का विंशोपक शेष हों तो अशुभ फल जानना चाहिए ।

अर्घभेद परिज्ञानः—

पण्यानि सन्ति त्रिविधानि यानि चतुर्विधाश्चात्र तदर्घभेदाः ।
पल्ल्या प्रमाणेन च सेतिकाभिः संख्याभिरेवं कृतिभिः प्रदिष्टाः ॥ २५५ ॥

पण्य के जो तीन भेद हैं उन (खरीदने बेचने की सब वस्तुओं) के अर्घ (भाव) के सब जगह पल्ली (प्रस्थ वा पयाली), प्रमाण (माप), सेतिका (सेरादि से तौल) एवं संख्या (गिनती) इस प्रकार चार भेद होते हैं। परन्तु इन में भी प्रत्येक के दो भेद हैं एक भाव, दूसरा मूल्य अर्थात् अमुक द्रव्य से अमुक वस्तु इतना मिले उस को 'भाव' और अमुक वस्तु इतने द्रव्य देनेपर मिलती है उस को 'मूल्य' कहते हैं अतः जिस वस्तु का भाव वा मूल्य पूर्वोक्त चार प्रकार में से जिस प्रकार में हो उस वस्तु की समर्घता तथा महार्घता का उसी प्रकार से निर्णय करे।

विंशोपकों के द्वारा वस्तु के समर्घ महार्घ के परिमाण का परिज्ञानः—

***यो वर्त्तमानार्घक इष्टवस्तुनो विंशांशकास्तस्य तदा प्रकल्पनाः ।**
तेषु प्रदेयाः क्रमशः प्रपात्यकाः शुभाशुभेऽर्घे त्विह वर्त्तमानके ॥ २५६ ॥

इष्ट वस्तु (वेध से अर्घनिर्णय करनेवाली वस्तु) का वर्त्तमानसमय (वर्ष, मास तथा दिन में से जिस समय का निर्णय करना हो उस के प्रवेश समय) में जो अर्घ (भाव) हो उस के बीस विश्वे अर्थात् २० भाग कल्पना करे। तदनन्तर उस एक भाग के तुल्य पूर्वोक्त १ विश्वे को मानकर पुनः पूर्वोक्त क्रम से प्राप्त शेष विश्वे यदि शुभग्रहों के हों तो वर्त्तमान अर्घ के २० वें भाग में युक्त करे। यदि शेष विश्वे अशुभग्रहों के हों तो वर्त्तमानार्घ के २० वें भाग में हीन करे। इस प्रकार उक्त क्रिया करने से २० विश्वे से अधिक जितने विश्वे हों उतने विश्वे वस्तु की समर्घता (मन्दी) एवं हीन करने से २० विश्वे से जितने विश्वे न्यून हों उतने विश्वे वस्तु की महार्घता (तेजी) होती है अर्थात् वर्त्तमान भाव से अर्घ निर्णय के अन्त्य समय पर्यन्त जाने क्योंकि वस्तुओं की विंशोपका की वृद्धि में वस्तु की वृद्धि और मूल्य की हानि (न्यूनता) एवं वस्तुओं की विंशोपका (विश्वे) की हानि (न्यूनता) में वस्तु की हानि (अल्पता) और मूल्य की वृद्धि होती है।

प्रकारान्तर से अर्घनिर्णयः—

सामर्घ्यमुक्तं सुकृतस्य वेधे महार्घता क्रूरविहङ्गवेधे ।
विचारयेत्पुष्करचारिवेधाद्देशं तथानेहसमिष्टवस्तु ॥ २५७ ॥

शुभग्रह के वेध से समर्घता और क्रूरग्रह के वेध से महार्घता होती है। ग्रहों के वेध के वश से देश; काल तथा इष्ट वस्तु इन तीनों का विचार करे।

---

* इहाभीष्टवस्तुनो वर्त्तमानार्घानयनविधिरीदृक्—वेधकर्त्तॄणां ग्रहाणां स्थानबलादि बलचतुष्टयं संसाध्यं ततो दृग्वेधवशात्तेषां विंशोपका आनीताः सौम्यपापानां विंशोपकानां मिथोऽन्तरं कार्यं ततः सौम्य-विंशोपकाधिक्ये शेषं धनम्। एवं पापविंशोपकाधिक्ये शेषमृणं मतम्। इष्टवस्तुनो वर्त्तमानार्घं शेषेण विंशोपकात्मकेन सङ्गुण्य विंशत्या विभज्य यल्लभ्यते तद्वर्त्तमानार्घे धनर्णं कार्यम् अर्थात् धनशेषे धनमृणशेषे ऋणं कार्यं तदेष्टवस्तुनोऽभीष्टसमयेऽर्घो (मूल्यं) भवेत्।

यथा खला दुष्टफलप्रदाः स्युस्तथैव कल्याणखगा भवन्ति ।
शुभप्रदाः क्रूरनभोगयुक्ताः सन्तः पुनः क्रूरफलप्रदास्ते ॥ २५८ ॥

जैसे पापग्रह दुष्टफल दायक होते हैं वैसेही शुभग्रह शुभफल दायक होते हैं। यदि शुभग्रह पाप युक्त हों तो क्रूर (अशुभ) फल देते हैं।

नक्षत्राणां वेधवशेन वस्तूनां सामर्घ्यमहार्घ्यबोधकचक्रम् ।

नक्ष.	अश्वि.	भर.	कृत्ति.	रोहि.	मृग.	आर्द्रा	पुन.	पुष्यः	आश्ले.	मघा	पू. फा.	उ. फा.	हस्तः	चित्रा
वस्तूनि	चावल घृत सर्व-धान्य सर्वव-स्त्र तृण खच्चर ऊंठ	तुषधा-न्य जुवार बाजरी मिर्चे सर्वौ षधि	चावल जव तिल माणि हीरा धातु	सर्व-धान्य सर्वरस ऊर्णवस्त्र सर्वधातु	कोदों-धान्य तुहर (तूरिः) रत्न घोटक महिषी गौ गर्दभ लाख	सर्वरस सर्वक्षार लवण तेल चन्दना दिसु-गन्ध-द्रव्य	(युगं धरी) जुवार बाजरी कपास श्यामेरे श्मीवस्त्र कुसुम्भ सोना रूपा	चावल सरसों तेल घृत सौंचल-लोंष हींग सज्जी सोना रूपा	गेहूं चावल कोदों-धान्य गुड खांड मजीठ सुंठी मिर्चे	चणा अलसी कांगुनी गुड तिल तेल घृत प्रवाल	जुवार बाजरी तिल ऊर्णादी कम्बल रजत-वस्तु कल्याण	चावल उड़द मूंग आदि कोदों-धान्य सैन्धव लहसुन सज्जी	चन्दन कपूर देवदास अगर लाल चन्दन कन्द	उड़द् मूंग सोना रक्त प्रवाल घोड़ा आदि-वाहन
कालः	२ मास	८ मास	८ मास	७ दिन	२ मास	१ मास	२ मास	८ मास	१ मास	८ मास	८ मास	२ मास	२ मास	२ मास
स. म.	महार्घ	महार्घ	महार्घ	महार्घ	महार्घ	महार्घ	समर्घ	महार्घ	समर्घ	महार्घ	महार्घ	महार्घ	समर्घ	महार्घ
दिशा	उत्तर	दक्षिण	दक्षिण	पूर्व	उत्तर	पश्चिम	उत्तर	दक्षिण	पश्चिम	दक्षिण	दक्षिण	उत्तर	उत्तर	उत्तर

नक्ष.	स्वाती	विशा.	अनुरा.	ज्येष्ठा	मूल	पू. षा.	उ. षा.	अभि.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेवति
वस्तूनि	सरसो राई तेल आदि खजूर आदि हिंग सुपारी मिर्चे	चावल गेहूं जव मूंग मसूर धान्य मोठ राई	चावल चणा तुहर (तुवरी) मोठ सर्ववि-दलान्न	गुड़ कांसी पारा हींग गुगुल लाख कपूर हिंगुल	रस धान्य सर्वश्वेत-वस्तु कपास सैंधा-लोन लवण	चावल तुष-धान्य घृत कन्द मूल तृण सुरमा	घृत घोड़ा बैल हाथी लोहा-आदि धातु सर्वसार वस्तु	मूंग दाख खजुंर सुपारी इला-यची जाय-फल घोड़ा	तुष-धाम्य अखरोट चिंरोजी पिप्पली सुपारी का बगिचा	सोना रूपा धातु मणि मोती रत्न सर्व नाणक (रुपये पैसे)	कोदों तेल मधादि अर्क आंवला पत्र मूल छाल	सर्व धान्य प्रियंगु सर्व धातु सर्वौ-षधि मूल जावि-त्री देवदारु	चावल घृत खल तिल गुड़ खांड शर्करा मणि मोती	नारियल सुपारी आदि मोती मणि छेडा सर्व क्रया-णक
कालः	७ दिन	८ मास	७ दिन	७ दिन	१ मास	१ मास	७ दिन	७ दिन	७ दिन	७ दिन	१ मास	८ मास	१ मास	८ मास
स. म.	महार्घ	महार्घ	महार्घ	महार्घ	समर्घ	महार्घ	महार्घ	महार्घ	समर्घ	महार्घ	समर्घ	महार्घ	समर्घ	समर्घ
दिशा	उत्तर	दक्षिण	पूर्व	पूर्व	पश्चिम	पश्चिम	पूर्व	पूर्व	पूर्व	पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	पश्चिम	पश्चिम

कूर्म्मचक्रस्थ ग्रहों के द्वारा शुभाशुभ फल का परिज्ञानः—

चक्रे कूर्म्मे यत्र भागेऽघखेटाः संस्थाश्चेत्तद्भागगा नाशमीयुः।
देशा वेधस्थानकं पीडयन्तीष्टास्तत्रस्थाश्चेत्फलं कुर्य्युरिष्टम् ॥ २५९ ॥

कूर्म्म के जिस अङ्ग के नक्षत्रों पर क्रूर ग्रह स्थित हों उस अङ्ग में जो देश स्थित हों वे नाश को प्राप्त होते हैं। एवं जिस अङ्ग के देशों पर क्रूर ग्रहों का वेध हो उस अङ्ग के 'देश' कष्ट से पीडित होते हैं। जिस अङ्ग के नक्षत्रों पर शुभग्रह स्थित हों अथवा शुभ ग्रहों का वेध हो उस अङ्ग के देश सब प्रकार से सुखी होते हैं। एवं मिश्र ग्रहों से मिश्रफल जानना चाहिए।

'कूर्म्मचक्रे नक्षत्रवशतो देशबोधकचक्रमिदम्'।

कृत्ति., रोहि., मृग., (कूर्म्मनाभिगा मध्यदेशाः)	आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, (कूर्म्मशिरोगताः पूर्वदेशाः)	आश्ले. मघा, पूर्वाफाल्गु (कूर्माग्निकोणगतपादस्थदेशाः)
साकेत, मिथिला, चम्पा, कौशाम्बी, गया, कौशिकी, अहिच्छत्राविन्ध्य, अन्तर्वेदि, मेखला, कान्यकुब्ज, प्रयाग,	गौडदेश, हस्तिबन्ध, पञ्चराष्ट्र, कामरु, ऐन्द्र, मगध रेवानट, मेवास,	अङ्गदेश, वङ्ग, कालिङ्ग, कुर्वज, कोशल, डहल, जयन्द्र, तुलंजिक, उडीसा वराट,
उत्तराफा. हस्त, चित्रा, (कूर्मदाक्षिणकुक्षिगा देशाः)	स्वाती, दिशाखा, अनुराधा, (कूर्म्म नैर्ऋत्यकोणगतपादस्थदेशाः)	ज्येष्ठा; मूल, पूर्वाषाढा, (कूर्म्मपुच्छगतपाश्चिमस्थदेशाः)
दर्दुरदेश, महेन्द्र, वनवास, सिंहल, तापीनदी, भीमस्थानदी, लंका, त्रिकूटपर्वत, मलयपर्वत, श्रीपर्वत, किष्कन्धापर्वत,	नासिकदेश, सुराष्ट्र, (सोरट) धृत, मालव, वह्ली, (वसही) प्रकाश भृगु, कच्छ, कोंकण (मुम्बई) खेड़ापुर मोढेर (मरहटा देशः)	पारतदेश, अर्बुद (आबू) कच्छ उज्जयिनी, पूर्वमालव, पारावत, बर्बर, सौराष्ट्रद्वीप, सिन्धुद्वीप, जलस्थ देश (टापू) स्त्रीराज्य,
उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, (कूर्म्मवायव्यकोणगतपादस्थदेशाः)	शतभिषा, पूर्वाभाद्र. उत्तराभाद्र, (कूर्म्मोत्तरकुक्षिगता देशाः)	रेवती, अश्विनी, भरणी, (कूर्म्मेशानगतपादस्थदेशाः)
गुर्जरदेश, यामुन, मरुदेश (मारवाड़) सरस्वती, जालंधर, कराट, वालुकासमुद्र, मेरुशृङ्ग,	नेपालदेश, कीर, काश्मीर, गजनी खुराशान, माथुर, म्लेच्छदेश, खश, केदारमण्डल, हिमालयाश्रितदेश	गङ्गाद्वारदेश, कुरुक्षेत्र, श्रीकण्ठ, हस्तिनापुर, अश्वचक्र, एकपाद, गजकर्ण,

कूर्म्मचक्रस्थित नक्षत्र द्वारा अन्नादियों के अर्घ का परिज्ञानः—

तौल्यं च भाण्डं रसधान्यसञ्ज्ञं तुरङ्गनागादिचतुष्पदानि।
महार्घतां यान्ति तदाऽखिलानि व्यवस्थितो यत्र खलाभ्रचारी ॥ २६० ॥

कूर्म्म चक्र के जिस अङ्ग के नक्षत्रों पर क्रूरग्रह हों वा जो नक्षत्र क्रूर ग्रह से विद्ध हों उस अङ्ग के देशों में तौल्य (तुला से बिकने वाले पदार्थ), भाण्ड (वर्त्तन से नापे जानेवाले द्रव्य), रस (मधुरादि), धान्य (गोधूमादि) घोड़े, हाथी आदि चतुष्पद (चौपाय) ये सब महार्घता (महंगाई) प्राप्त होते हैं।

द्रव्यस्य देशस्य च येऽक्षरास्ते विद्धा विहङ्गैः शुभदैरसौम्यैः ।
शुभाशुभं सर्वफलं च तेषां प्रागुक्तचक्रे कथितं विशेषात् ॥ २६१ ॥

द्रव्य (वस्तु) और देश इन दोनों के नाम के आद्य अक्षर को एक ही समय शुभ ग्रह को वेध हो तो उस देश में उस वस्तु का सामर्घ्य (सस्ताई) एवं द्रव्य तथा देश के नाम के आद्य अक्षर एकही समय पाप ग्रह से विद्ध हो तो उस देश में उस वस्तु की महार्घता (महंगाई) होती है। विशेषतया सर्वतोभद्र चक्र में शुभाशुभ ग्रहों के वेध का सब शुभाशुभ फल कहा है।

इति श्रीमत्पण्डित मुकुन्दरामविरचिते ज्योतिस्तत्त्वेऽर्घ प्रकरणं द्विचत्वारिंशमवासितम् ।

अथ

प्रकीर्णप्रकरणं प्रारभ्यते ।

यात्रा काल में उत्तम शकुनों का परिज्ञानः—

वाद्यस्य शब्दः किमु भिन्नभेरीध्वानस्तथैहीति रवः पुरस्तात् ।
प्रशस्यते नैव तु पृष्ठतो यो गच्छेति पश्चात्पुरतोऽतिनिन्द्यः ॥ १ ॥

यदि यात्रा के समय वाद्य (वाजे) का शब्द श्रवणगता हो अथवा भिन्न भेरी का शब्द सुनाई दे अथवा सामने की ओर ' एहि ' इस प्रकार का शब्द हो तो शुभफलप्रद होता है। किन्तु पीठ पीछे से ' एहि ' शब्द शुभ नहीं होता है। एवं पीठ पीछे से ' गच्छ ' इस प्रकार का शब्द शुभ और सामने की ओर ' गच्छ ' इस प्रकार का शब्द अशुभ होता है।

पुष्पाणि पुष्टानि सिताह्वयानि किं पूर्णकुम्भोऽण्डभवा जलोत्थाः ।
मत्स्यस्य मांसं ज्वलितोऽग्निरेकः पशुस्त्वजा वृद्धकरी तुरङ्गः ॥ २ ॥

गीर्वाणगावः सुहृदो द्विजेन्द्रा दूर्वास्तथाऽऽर्द्रा गणिका सुवर्णम् ।
रौप्यं च ताम्रं निखिलं च रत्नं यवोऽखिलज्ञः किमुतौषधानि ॥ ३ ॥

मृत्खड्गपात्रायुधपीठकानि सर्वार्थकाख्याः किमुत ध्वजाख्याः ।
चिह्नानि राज्ञः सकलानि किं वा नृणां शवं रोदनवर्जितं वा ॥ ४ ॥

सशर्करोऽत्युष्णक आशुगो दधि फलान्यनेकान्यथ सुस्वराः स्वराः ।
गान्धारषड्जर्षभसञ्ज्ञकाश्च ये गीता मनस्तुष्टिरथो मनः प्रियम् ॥ ५ ॥

आज्यं क्षीरं स्वस्तिवृद्धिध्वनिर्वा नन्द्यावर्त्तः कौस्तुभाढ्यो निनादः ।
वादित्राणां शोभनो वा मनोज्ञो गम्भीरो वा सर्वविघ्नप्रहर्त्ता ॥ ६ ॥

पुष्ट श्वेतपुष्प, जल से पूर्ण घट, अण्डज, जलज जीव, मच्छली का मांस, ज्वलित अग्नि, वन्धा हुआ एक पशु, बकरी, वृद्ध हाथी, घोड़ा, देवता, गौ, मित्र, ब्राह्मण, आर्द्रदूब, वेश्या, सोना, चान्दी, ताम्बा, समस्तरत्न, जौ, सर्वज्ञ, औषध, मिट्टी, खड्ग, पात्र, आयुध (हथियार), आसन, सर्वार्थ (सरसों), पताका, सम्पूर्णराजचिह्न, रोदनरहित मनुष्य का शव (मुर्दा), धूली सहित अत्यन्त उष्ण (गर्म) वायु, दही, अनेकफल, सुन्दर स्वर, गान्धार, षड्ज और ऋषभसंज्ञक स्वर युक्त गीत, चित्त संतुष्ट करने वाली वस्तु, चित्त में प्रेम उत्पन्न वाले पदार्थ, घी, दूध, स्वस्ति तथा वृद्धि शब्द, कौस्तुभ युक्त वन्द्यावर्त्त एवं वादित्रों (वाजों) का शब्द यात्रा काल में शुभफलदायक होते हैं। एवं सुन्दर वा गम्भीर शब्द सब विघ्नों को हरण करने वाला होता है।

यात्रा समय में स्निग्ध, अनुकूल, मृदु (कोमल) वायु वहे तो सुख उत्पन्न करनेवाला जानना चाहिए ।

स्वान्तस्य मोदो हृदयोत्सवत्वं प्राप्तिः शुभस्योत जयप्रवादः ।
प्राप्तेः श्रुतिर्माङ्गलिकाभिधानां बोध्यान्यवश्यं जयदानि राज्ञाम् ॥ ८ ॥

हृदय में हर्ष और उत्सव, मङ्गल की प्राप्ति, प्राप्तीका जयप्रवाद, माङ्गलिक शब्दोंका श्रवण इत्यादि राजाओंके यात्राकाल में अवश्य जयप्रद होते हैं ।

उलूकजम्बू खरनीलकण्ठकौ श्वसञ्ज्ञकः क्षेमकरा उदाहृताः ।
प्रस्थानकाले यदि वामतश्च ते श्रेष्ठाः प्रवेशावसरे तु दक्षिणाः ॥ ९ ॥

यदि प्रस्थान काल में उल्लू, गीदड, गर्दभ, नीलकण्ठपक्षी और श्वान (कुत्ता) ये बाईं ओर दिखाई दें अथवा शब्द करें तो मङ्गल दायक कहे हैं । एवं नगर प्रवेश समय में उक्त जीव दक्षिण की ओर दिखाई दें वा शब्द करें तो मङ्गल दायक कहे हैं ।

यात्रा में दुष्ट शकुनों का परिज्ञानः—

यात्राकाले दृश्यतेचेन्नियुक्त ओषध्या ना गोमयं शुष्कमेव ।
कृष्णं धान्यं यत्तृणं शुष्कसञ्ज्ञं कार्पासोऽसद्बोध्यमेतत्समस्तम् ॥१०॥

यात्राकाल में यदि ओषधि से युक्त मनुष्य, सूखा गोबर, काले धान, सूखा तृण और कपास ये सब पदार्थ दिखाई दें तो अशुभ जानने चाहिएँ ।

काषायाम्बरधारिणोऽथ मलिनोऽभ्यक्तो नरो नग्नको
मन्दो मुक्तकचो नपुंसकरुजार्त्तोन्मत्तदीनाभिधाः ।
कन्याढ्यः किमुसत्त्वकोऽथ च गुडाङ्गारेन्धनायांसि वा
पङ्काज्ये कचबन्धनं च वधकश्चर्म्माबला गुर्विणी ॥११॥
यद्वेह चण्डालशवं किमूध्दृतसाराणि पिण्याकमुखानि वा तुषम् ।
किं भिन्नभाण्डान्यथ राजबन्धनपालाःकपालोऽस्थि तथा मृतोऽण्डजः ॥१२॥
सारङ्गको भस्म तथाऽघकर्म्मकृद्रिक्तानि भाण्डान्यथ वस्त्रसङ्क्रमः ।
मर्त्योऽथ यानास्खलनं च वायसास्थानं ध्वजेवाऽऽनयनं पलस्य च ॥१३॥
आगच्छ यासि क्व च तिष्ठ किं ते गतस्य तत्रेतर एव शब्दाः ।
येऽनिष्टकास्ते कथिता विपत्तिकरा गमानेहसि दिव्यदृग्भिः ॥ १४ ॥

यात्रा के समय में यदि काषाय (गेरूआ) वस्त्रधारी, मलिन, तेलमलता हुआ मनुष्य, नङ्गा, मन्द (रोगी) मुक्तकच (खुले केश वाला), नपुंसक (हिजडा), रोगसे पीडित, उन्मत्त (पागल), दीन (भिखारी), गुदड़ीधारी, दुष्टजन्तु, गुड़, अङ्गार, लकडी, लोहा, कीचड़, घी, बालोंका बान्धना, वधक (कसाई)

चर्म (चमड़ा) गर्भिणी स्त्री, चण्डाल का शव, पिण्याकप्रभृति निःसारद्रव्य, तुष (भूसा चोकर), भग्नभाण्ड (फूटे हुए वर्त्तन), कैदीको ले जानेवाले राजपुरुष, कपालधारी, हड्डी, मराहुआ सारङ्गपक्षी, भस्म (राख), पापकर्म करने वाला, रिक्तभाण्ड (खाली वर्त्तन), वस्त्रोंसे लपेटा हुआ, सवारीका टूटना, ध्वजा में कौआ का बैठना, मांसका आना, आगच्छ (आ), क्वयासि (कहां जाता है), तिष्ठ (खडा रह), 'तत्र गतस्य किं ते' (वहां जानेसे तेरा क्या मतलब) इत्यादि अन्य अनिष्ट सूचक शब्द यदि श्रवणगत हों तो श्रेष्ठ पंडित जनोंने यात्रा कालमें विपत्तिदायक अर्थात् अशुभ फलदायक कहे हैं ।

दुष्ट शकुन का परिहारः—

दुष्टे निमित्ते प्रथमे समर्चयेद्धरिं सुधीन्द्रो मधुसूदनं तथा ।
स्तवेन दुष्टे द्वितये यदेक्षिते गृहं प्रतीपे प्रविशेत्तदा नरः ॥ १५ ॥

यात्रा कालमें मनुष्य को यदि पहला दुष्ट शकुन मिले तो पण्डितजन श्रीभगवान् हरि को पूजे तथा स्तोत्र द्वारा श्रीभगवान् मधुसूदन का स्मरण करे । यात्रा काल में यदि द्वितीय (दूसरा) दुष्टनिमित्त (दुष्टशकुन) मिले तो यात्री मनुष्य लौटकर अपने घरको वापस आजाय ।

होरा शकुन कथनः—

षष्ठस्य षष्ठस्य दिनस्यवारतो होरेह सार्द्धान्तकतुल्यनाडिका ।
सूर्य्यास्फूजिद्बोधनयामिनीपतिसञ्ज्ञातनूजार्चितमेदिनीभुवाम् ॥ १६ ॥

दिनके वारके क्रम २½ घटी के तुल्य अपने से छठे छठे की सूर्य, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु और मङ्गलकी कालहोरा होती है ।

बोधे विदोऽर्थाय शनेर्गृहाण होरां गमेऽच्छस्य गुरोर्विवाहे ।
समस्तकार्य्येषु विधोर्नरेन्द्रसेवासु भानोः समरे कुसूनोः ॥ १७ ॥

बोध (ज्ञान) के लिए बुधकी होरा, धनके लिए शनिकी होरा, यात्रा के लिए शुक्र की होरा, विवाह के लिए गुरुकी होरा, समस्त कार्यों के लिए चन्द्रमा की होरा, राजसेवा के लिए सूर्य की होरा और युद्धकार्य के लिए मङ्गल की होरा ग्रहण करे ।

प्रकीर्त्तितं यस्य नभश्चरस्य यत्कर्म्म वारेऽपि बुधाग्रगण्यैः ।
होराभिधायां द्युचरस्य तस्य विधीयतेऽनूनककर्म्म नित्यम् ॥ १८ ॥

श्रेष्ठ पण्डितजनों ने जिस ग्रह के वार में जो कर्म्म कहा हुआ है वह समस्त कर्म्म उस ग्रह की काल होरा मे करना चाहिए ।

होरायां दिवसविभोर्मनोज्ञवस्त्रं
द्वौ चाषौ किमु नकुलौ तथा कुदेवाः ।

चत्वारस्त्रिद्विजलिभुजश्च गोरजक्या
उक्षैको मिलति गमे तथा कुमारी ॥ १९ ॥

यदि मनुष्य सूर्य की कालहोरा में यात्रा करे तो सुन्दरवस्त्र, दो चाष (नीलकण्ठ) पक्षी अथवा दो नकुल (नेवला), चार ब्राह्मण, तीन कौवे, गौ, धोबिन, एक बैल तथा एक कुमारी मार्ग में मिलती है।

होरायां शशिनो मृदङ्गनकुलोष्ट्राः स्त्रीद्वयं श्वाविगो-
भेरीकाकखरा हयश्च कुसुमं विप्रद्वयं भूभुवः ।
षण्ढःश्वत्रितयं बिडालसमरं गेहस्य दाहो रजः
संयुक्ता युवतिः कलिः परिजने नग्नो विमुक्तो द्विजः ॥ २० ॥

यदि चन्द्रमा की काल होरा में यात्रा करे तो मृदङ्ग, नकुल, ऊंठ, दो स्त्रियां, कुत्ता, भेरी, कौआ, गधा, घोडा, फूल और दो ब्राह्मण मार्ग में मिलते हैं। एवं मङ्गलकी कालहोरा में यात्रा करे तो नपुंसक (हिजडा), तीन कुत्ते, बिल्लों की लडाई, मकानका जलना, रजोवती स्त्री, कुटुम्ब में कलह, नग्न, संन्यासी और ब्राह्मण मार्ग में मिलते हैं।

बालःस्त्री सुमचाषचातकगजाः पूर्णो घटो दर्पणो
निःशेषः शकुनोऽङ्गना सतनया होराभिधायां विदः ।
मार्गेऽर्च्यस्य बकश्च काकगणकोर्णा धेनुबभ्रुद्विजा
वेश्या बह्वच उताबला सुतयुता साम्भोघटो हंसराट् ॥ २१ ॥

बुधकी काल होरा में यात्रा करे तो बालक, स्त्री, पुष्प, नीलकण्ठ, चातक, हस्ती, जलसे भरा हुआ घडा दर्पण, समस्त शकुन और कन्या युक्त स्त्री मार्ग में मिलती है।

एवं गुरु की काल होरा में यात्रा करे तो बक (बगुला), कौआ, गणक (ज्योतिषी), ऊन, धेनु (गौ) बभ्रु (नेवला), ब्राह्मण, बहुतसी वेश्या तथा पुत्रयुक्त स्त्री, जलका घडा और राजहंस मार्ग में मिलते हैं।

शुक्रस्यांघ्रिभवत्रयं च गणकः काकास्त्रयः पञ्च वा
मद्यं विट् पलधेनुधान्यगणिकाः षण्ढो द्विजेन्द्रः शनेः ।
होरायां यवनप्रचण्डमृतका नग्नो नपुंसो रजो–
युक्तास्त्री विधवा युवा च दहनो गृध्रः पिशाचः पथि ॥ २२ ॥

शुक्र की काल होरा में यात्रा करे तो तीन शूद्र, गणक (ज्योतिषी), तीन वा पाँच कौवे, मदिरा, विष्ठा, मांस, गौ, धान्य, वेश्या, नपुंसक और ब्राह्मण मार्ग में मिलते हैं। एवं शनिकी काल होरा में यात्रा करे तो यवन (मुसलमान); प्रचण्ड (दुर्धर्ष), मृतक (मुर्दा), नग्न (नङ्गा), नपुंसक, रजोवती स्त्री, विधवा स्त्री, युवा पुरुष, अग्नि (आग), गृध्र (गीध) और पिशाच मार्ग में मिलते हैं।

भ्रमण तथा आडल मुहूर्त्तः—

ध्वान्तारिधिष्ण्याद्गणयेद्धनाथभं भागंहरेत्सप्तिमितैर्विशेषिते ।
नेत्रे तुरङ्गेमहदाडलं मतं तर्कत्रितुल्ये भ्रमणं तथाडलम् ॥ २३ ॥
विनिश्चितं नास्ति मृगाङ्कसायकसमुद्रशेषे भ्रमणे विनाशनम् ।
कार्य्यस्य चाथाडलके प्रताडनं यात्रा न कार्या मनुसम्भवैस्तयोः ॥ २४ ॥

सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र पर्यन्त गिनकर जो संख्या मिले उसमें ७ से भाग दे यदि दो और सात शेष वचे तो 'महत् आडल' जानना चाहिए । छः तथा तीन शेष वचे तो 'भ्रमण मुहूर्त्त' होता है । एवं एक पाँच और चार शेष वचे तो 'आडल' नहीं होता है । भ्रमण में कार्य का नाश और आडल मे प्रताडन होता है इसलिए उक्त दोनो योगों में मनुष्य यात्रा न करे ।

हैवर मुहूर्त्तः—

भाकोषभात्सङ्गणयेदिहैन्दवं यावत्समेतं तिथिपक्षवासरैः ।
गोभिर्हरेद्भागमिहाद्रिशेषितं स्याद्धैवरं सद्गमनेऽद ईरितम् ॥ २५ ॥

सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र पर्यन्त गिनकर जो संख्या मिले उसमें वर्तमान तिथि की संख्या, पक्षकी संख्या और वार की संख्या को युक्तकरके ९ से भाग दें यदि ७ शेष वचे तो 'हैवरमुहूर्त्त' होता है । यह यात्रा में 'शुभ' होता है ।

घबाडक मुहूर्त्तः—

ऐन्दवं प्रगणयेद्रविधिष्ण्यात् त्र्याहतं तिथियुतं खगतुल्यैः ।
भागमाहरतु पावकशेषं स्याद् घबाडकमदो गमने सत् ॥ २६ ॥

सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र पर्यन्त गिनकर जो संख्या मिले उसको ३ से गुणकर जो गुणन फल हो उसमें तिथि की संख्या को युक्त करके ५ से भाग दे यदि ३ शेष वचे तो 'घबाडक मुहूर्त्त' होता है । यह यात्रा काल में 'शुभ' होता है ।

वारों के अनुसार से कालराहु का वासः—

वायव्य इन्दौ तरणावुदीच्यां प्राच्यां यमेऽग्नेर्दिशिभे प्रतीच्याम् ।
वक्रे विधूत्थे निर्ऋतौ सुरेज्येऽवाच्यां बुधाः कालतमं वदन्ति ॥ २७ ॥

सोमवार को वायव्य में, रविवार को उत्तर में शनिवार को पूर्व में, शुक्रवार को आग्नेय में, भौम वार को पश्चिम में, बुधवार को नैर्ऋत्य में और गुरुवार को दाक्षिण में कालराहु के वास को कहते हैं ।

कालाभिधो भुजङ्गेन्द्रो वामे पृष्ठे यदा वसेत् ।
निःशेषगमकार्य्येषु सिद्धिर्वाच्या विपश्चिता ॥ २८ ॥

यदि काल राहु का वास बाईं ओर अथवा पीठ पीछे हो तो पण्डित जनों ने समस्त यात्रा के कार्यों में सिद्धि कही है ।

पर्ज्जन्यानिलधर्म्मराजगिरिशाम्भः पाग्निविद्रक्षसां
यामार्द्धं क्षुधितः फणी प्रतिदिनं दिक्षु क्रमात्सम्भ्रमेत् ।
यात्रायां यदि दक्षिणे दिनकरे सञ्चिन्तयेन्नो तिथिं
नो धिष्ण्यं न युतिं न धिष्ण्यरमणं सिद्ध्यन्ति कार्याणिहि ॥ २९ ॥

पूर्व, वायव्य, दक्षिण, ईशान, पश्चिम, आग्नेय, उत्तर और नैर्ऋत्य पर्यन्त आठ दिशाओं मे क्रमसे यामार्द्ध (दिनमान वा रात्रिमान के अष्टमांश) तुल्य पर्यन्त प्रत्येक दिशामें ' क्षुधित राहु ' प्रतिदिन भ्रमण करता है । यात्राके समय यदि ' सूर्य ' दाहिनी ओर हो तो सब कार्य सिद्ध होते हैं । इसमें तिथि, नक्षत्र, योग और चन्द्रमा का विचार न करे ।

आठ प्रकार का काल और उनके स्पष्टीकरण की रीतिः—

क्रमेण कालश्च पलं च पातकोऽथो लोहपातो वडवानलाभिधः ।
खड्गाभिधोऽथो कवचोऽथ कान्तिको नखा जिनाःषड्दिशईश्वराधृतिः ॥ ३० ॥
वेदाहुताशास्तिथिसंयुतावसुहृच्छेषिताः कालमुखाः पुरः पलम् ।
खड्गोऽथ वामे कवचोऽथ दक्षिणे कान्तिः परे पृष्ठगताः शुभा मताः ॥ ३१ ॥

काल, पल, पातक, लोहपात, वडवानल, खड्ग, कवच और कान्ति ये क्रमसे आठ काल हैं । २०, २४, ६, १०, ११, १८, ४, ३, इन उक्त संख्याओं में वर्त्तमान तिथि की संख्या को युक्त करके ८ से तष्ट करे शेष कालादि होते हैं । पल तथा खड्ग आगे की ओर, कवच बाईं ओर, कान्ति दाहिनी ओर एवं शेष काल (काल, पातक, लोहपात तथा वडवानल) पीठ पीछे शुभ होते हैं ।

पन्थादिराहु चक्रपरिज्ञानः—

धर्म्मे जैवद्वीशमैत्राम्बुनाथदास्राश्लेषावासवाह्वानि भानि ।
अर्थे पूर्वाभाद्रपाद्विष्णुवातादित्यज्येष्ठाकव्यभुग्याम्यभानि ॥ ३२ ॥
कामेविध्यार्द्राभगाग्नेयबुध्न्यचित्रारक्षोमान्यथो मोक्षसञ्ज्ञे ।
अर्कोकाम्भोवैश्वदेवैन्दवान्त्यप्राजापत्यर्क्षाणि पन्थादिराहौ ॥ ३३ ॥

पुष्य, विशाखा, अनुराधा, शतभिषा, अश्विनी, आश्लेषा और धनिष्ठा ये सात नक्षत्र धर्ममार्ग में हैं । पूर्वाभाद्रपदा, श्रवण, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, मघा और भरणी ये सात नक्षत्र अर्थमार्ग में हैं । अभिजित्, आर्द्रा, पूर्वाफाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपदा, चित्रा और मूल ये सात नक्षत्र काममार्ग में हैं । हस्त, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, रेवती, मृगशिरा और रोहिणी ये सात नक्षत्र पन्थादि राहुके मोक्षमार्ग में हैं ।

पल्लीपतन तथा सरटादि रोहण फलका परिज्ञानः——

पल्ल्याः प्रपातं सरटाधिरोहणं राज्यप्रदं पुङ्गलमूर्ध्नि चेद्भवेत् ।
ललाटदेशे निजबन्धुदर्शनं स्यादुत्तरोष्ठे धनसंक्षयो मतः ॥ ३४ ॥
तथाधरोष्ठे द्रविणं विभूतिर्नासान्तके व्याधिनिपीडनं च ।
आयुष्यमेवं श्रवणे च दक्षे वामेऽतिलाभोऽतिधनं च नाभौ ॥ ३५ ॥
मध्ये भ्रुवो मानवनाथतः सम्मानं भुजे भूपतितुल्यता स्यात् ।
दक्षेऽथ वामे मनुजाधिपस्य क्षोभं गले वैरिविनाशनं च ॥ ३६ ॥
स्याज्जानुजंघे च शुभावहं बुधैर्वस्त्रस्य लाभः कथितः करद्वये ।
तुन्दे शुभं मण्डनमंसयोर्जयी स्तनद्वये दुर्विधिराननने तथा ॥ ३७ ॥
मिष्टान्नभोज्यं मरणं कचान्तके पृष्ठे प्रजायाश्च परिक्षयो भवेत् ।
ऊर्व्वोर्भयं बन्धनमत्र गुल्फयोः पादस्य मध्ये युवतेर्विनाशनम् ॥ ३८ ॥
पादान्तकेऽन्तो नखरेषु धान्यलाभस्तथाऽध्वा खलु दक्षिणेऽङ्घ्रौ ।
वामे विनाशो निजबान्धवानां वामे बुधेन्द्रा मणिबन्धनाख्ये ॥ ३९ ॥
वदन्तिवृद्धिं यशसोऽर्थलाभं दक्षाभिधाने मणिबन्धने चेत् ।
धनक्षयो मानसताप एतत्फलं गमोद्युक्तनरस्य वेद्यम् ॥ ४० ॥

यदि पुरुष के शिरप्रदेश में पल्ली (छोटी छिपकली) का प्रपात (गिरना), सरट (गिरगट) का अधिरोहण (चढना) हो तो राज्यदायक होता है । एवं ललाट में अपनें बान्धवों का दर्शन, उत्तर ओष्ठमें धनका नाश, अधर ओष्ठमें द्रव्यलाभ तथा ऐश्वर्य, नासिका के अन्तमें रोग से पीडा, दक्षिण कर्ण में आयुकी वृद्धि, वामकर्ण में अतिलाभ, नाभि में बहुत धन, भ्रू (भौह) के मध्यमें राजासे सम्मान, दक्षिण बाहुमें राजा के सदृश, वाम बाहुमें राजा का कोप, गलमें शत्रुनाशक, जानु तथा जंघा में शुभफल की प्राप्ति, दोनों हाथों में वस्त्रका लाभ, उदर (पेट) में शुभफल तथा मण्डन (अलंकार वा सजाना), दोनों कन्धों में जय, दोनों स्तनों में दुर्भाग्य, मुखमें मिष्टान्नभोजन, बालोंके अन्तमें मरण, पीठ में प्रजा (सन्तान) का नाश, ऊरु में जय, गुल्फों में बन्धन, पैरों के मध्यमें स्त्रीका नाश, पैरों के अन्त में मृत्यु, नखों में धान्य का लाभ, दक्षिण पादमें मार्गगमन, वामपादमें अपने बन्धुजनों का नाश, वाम मणिबन्धमें वृद्धि तथा यश से धनलाभ और दक्षिण मणिबन्धमें धनका नाश तथा हृदय में सन्ताप होता है । यात्रा के लिए उद्यत हुये पुरुष को उक्तफल कहे ।

छिका के फलका परिज्ञानः——

छिकाया अशुभं फलं निगदितं प्राच्या यदा साभवेद्
याम्येऽरिष्टमुषर्बुधस्य दिशि चेदाभीलशोकाहृयौ ।
नैर्ऋत्ये शुभमम्बुनाथदिशि सा मिष्टस्य वै भक्षणं
कौबेर्य्यां कलहो मरुद्दिशि धनप्राप्तिर्दिशीशस्य सत् ॥ ४१ ॥

यात्रा प्रभृति के समय यदि पूर्वकी ओर छीक हो तो अशुभ फल, दक्षिणकी ओर कष्ट, आग्नेय की ओर दुःख तथा शोक, नैर्ऋत्य की ओर शुभ फल, पश्चिम की ओर मिष्टान्न भक्षण, उत्तर की ओर कलह, वायव्य की ओर धनकी प्राप्ति और ईशान की ओर ' शुभफल ' होता है ।

छिक्का कलिश्चेत्पुरतोऽथ मध्ये छिक्काऽऽत्मनोऽतीवभयं सदुर्ध्वम् ।
स्वप्ने क्षणे भोजनदानपीठे वामाङ्गपृष्ठे शुभदाः क्षुताः षट् ॥ ४२ ॥

यात्रा का समय यदि आगेकी ओर छीक हो तो कलह होता है । आत्मीय छीक यदि मध्यकी ओर हो तो अत्यंत भय होता है । उपरकी ओर छीक हो तो शुभ फल होता है । स्वप्न (सोने) के समय, भोजन के समय, दान के समय, आसन के समय, बाई ओर एवं पीठ पीछे छीक हो तो ये छः छींकें शुभ फलदायक होती हैं ।

क्षुतं चतुर्णां श्वबिडालमानवगवामसून् क्षाभयते बलात्कृतम् ।
बालैर्जरत्पीनसितैः कृतं क्षुतं वदन्ति केचिद्विफलं विचक्षणाः ॥ ४३ ॥

कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य और गौ इन चारों की छीक प्राणों को क्षोभ उत्पन्न करती है । बलात्कार से किई छीक, बालक की छीक, वृद्धकी छीक और नासिका रोग वाले की छीक इन चारों की छींकें निष्फल होती है । इस प्रकार कोई पाण्डितजन कहते हैं ।

पुरुषोंके अङ्गस्फुरण का फलः—

अङ्गस्य स्फुरणंभवेच्छुभतरं पार्श्वे सदा दक्षिणे
भागे वाम इहाप्रशस्तमुदितं स्वान्तस्य पृष्ठस्य च ।
लाभो मूर्ध्नि भुवो ललाटविषये स्थानस्यवृद्धिर्नसा
भ्रूदेशे प्रियसङ्गमोऽथ नयनोपान्ते धनस्यागमः ॥ ४४ ॥

पुरुषके दक्षिण पार्श्वके अङ्गमें स्पन्दन (स्फुरण) हो तो शुभ फलदायक एवं वाम पार्श्व के अङ्गमें हृदय और पीठ में स्पन्दन हो तो अशुभफलदायक होता है । शिर प्रदेशमें स्फुरण हो तो भूमि का लाभ होता है । ललाट देश में स्थान की वृद्धि नहीं होती है । भ्रुप्रदेशमें स्पन्दना हो तो प्रियजनका समागम और नेत्रों के उपान्त में स्पन्दना हो तो धन का लाभ होता है ।

दृग्देशे भृतकाप्तिराहवजयं दृग्बन्धने प्राप्नुया
दुत्कण्ठोपगमस्य मध्यविषये राज्याप्तिरुक्ता बुधैः
लाभः स्याद्युवतेरपाङ्गविषये कण्ठे विभूतिं लभे—
त्कर्णान्ते कथिता प्रियश्रुतिरथो भोगर्द्धिरंसारव्ययोः ॥ ४५ ॥

नेत्रप्रदेश मे स्पन्दन हो तो भ्रुतक (दास) का लाभ, नेत्रबन्धन में सङ्ग्राम में विजय की प्राप्ति, कण्ठके मध्यभागमें राज्य की प्राप्ति, अपाङ्ग प्रदेश में स्त्रीका लाभ, कण्ठमें ऐश्वर्य की प्राप्ति, कर्णान्त में प्रियवार्त्ता का श्रवण एवं कन्धों में स्फुरण हो तो भोगकी वृद्धि होती है ।

संब्रूयादधरोष्ठयोः प्रियजनप्राप्तिं सुहृत्सङ्गमो
बाहुभ्यां द्रविणागमो यदि शये वक्षःस्थले स्याज्जयः ।

पद्भ्यामुत्तमकस्थलं प्रलभते चेन्नासिकायां सुखं
प्रीतिं संलभतेऽथ मार्गगमनालाभे तथांघ्र्योस्तले ॥ ४६ ॥

उत्तरोष्ठ तथा अधरोष्ठ में स्फुरण हो तो प्रियजन की प्राप्ति, बाहु में स्फुरण हो तो मित्रका समागम, हाथ में स्फुरण हो तो धनकी प्राप्ति, वक्षःस्थल में स्पन्दन हो तो जय, पैरों में स्पन्दन हो तो उत्तम स्थल का लाभ, नासिका में स्पन्दन हो तो सुख तथा प्रीति की प्राप्ति, पैरो के तल में स्फुरण हो तो मार्गगमन और लाभ क अभाव होता है।

स्थानभ्रंशो नाभिदेशेऽथ लिङ्गे वामालाभोवित्तलाभस्तथांत्रे।
द्विड्भिःसन्धिर्वीर्य्यवद्भिश्च जानुसन्धौ प्रीतिःकुक्षिदेशे प्रदिष्टा ॥ ४७ ॥

नाभि देश में स्फुरण हो तो स्थानसे भ्रष्ट, लिङ्गमें स्फुरण हो तो स्त्री का लाभ, अन्तडी में स्फुरण हो तो धन का लाभ, जानु की सन्धि में स्फुरण हो तो बलवान् शत्रु से सन्धि और कुक्षि प्रदेश में स्पंदन हो तो प्रीति होती है।

स्वामी स्यादेकदेशस्य जंघाभ्यां स्फुरणे सदा।
पराजयस्तथोत्सेधः पृष्ठदेशे निगद्यते ॥ ४८ ॥

जंघाओं में स्फुरण हो तो एक देशका स्वामी और पृष्ठ देश में स्फुरण हो तो पराजय और उत्सेध होता है।

नेत्रों के स्फुरण के फलका परिज्ञान:—

नेत्रस्योर्ध्वं चेतसो दुःखजालं हन्यान्मृत्युर्नासिकान्तेऽर्थमेति।
नेत्रोपान्ते स्पन्दनं लोचनाधो युद्धेऽभद्रं स्यान्नृणां दक्षनेत्रे ॥ ४९ ॥

नेत्र के उपर भाग में स्पन्दन हो तो हृदयके दुःख जाल को दूर करता है। एवं नासिका के अन्त भाग में मृत्यु, नेत्रो के उपान्त भाग में धन का लाभ और नेत्रो के नीचे स्पन्दन हो तो युद्ध में पराजय होती है। यह पूर्वोक्तफल पुरुषों के दाहिने नेत्र में जानना चाहिए।

स्त्रियों के अङ्गस्फुरण का फलः—

यत्फलं कीर्त्तितं पुंसो विपरीतं स्त्रिया मतम्।
नृनार्योःसंस्मृतं तुल्यं फलं यत्कथितं भ्रुवः ॥ ५० ॥

आचार्यों ने पुरुषों के अङ्गस्फुरण का जो फल कहा हुआ है। उससे विपरीत स्त्रियों का फल जानना चाहिए। किन्तु भ्रू देश का फल पुरुष तथा स्त्री का समान होता है।

शुभस्वप्नोंका परिज्ञानः—

स्वप्ने पृथ्वीदेवता नाकनाथाः सद्राजा स्त्रीश्वेतवस्त्रा गुरुश्च ।
गन्धर्वाख्याः किन्नराख्याश्च सिद्धास्तेषामाशीर्दर्शनं शोभनं स्यात् ॥ ५१ ॥

स्वप्नमें यदि ब्राह्मण, देवता, उत्तम राजा, श्वेतवस्त्रयुक्त स्त्री, गुरु, गन्धर्व, किन्नर और सिद्ध इनका आशीर्वाद तथा दर्शन हो तो 'शुभफल' होता है।

प्रासादशुभ्रोक्षहयासनद्विपाद्रिदर्शनारोहणमर्थलाभदम् ।
पञ्चाननारोहणकं तथा भवेद्दध्यब्जरौप्यध्वजकाञ्चनानि च ॥ ५२ ॥

छत्राणि रत्नानि फलानि दीपको गोधूमसिद्धार्थयवाः कुमारिकाः ।
श्रीखण्डदूर्वाक्षतपुष्पितद्रुमादर्शेक्षवो लाभ उताथ दर्शने ॥ ५३ ॥

एषां लाभः सौख्यकं स्याद्यशोऽथ शस्तं वीणावादनं भोजनं च ।
तद्वद्विष्ठालेपनं रोदनं च किंवा शस्तः स्यादगम्यागमश्च ॥ ५४ ॥

मन्दिर, श्वेतवृषभ, घोडे, आसन, हाथी और पर्वत इनका दर्शन तथा आरोहण (चढना) धनलाभ दायक होता है। एवं सिंहका आरोहण भी उत्तम होता है। दही, कमल, चान्दी, ध्वजा, सुवर्ण, छत्र, रत्न, फल, दीपक, गेहूं, सरसों, जौ, कन्या, चन्दन, दूर्वा, अक्षत, पुष्पयुक्त वृक्ष, दर्पण और ऊख यदि स्वप्न में उक्त वस्तुओंका लाभ वा दर्शन हो तो धन लाभ, सौख्य और कीर्ति होती है। वीणाका बजाना, भोजन, शरीर में विष्ठाका लेपन करना, रोदन और अगम्य स्त्री से सहवास करना श्रेष्ठ है।

आरूढः फलितद्रुमे सकुसुमे जागर्त्ति योऽथाहिना
दष्टो दक्षकरे सितेन बहुलद्रव्यैः समेतोऽसृजा ।
स्नानं पानमथो निजा मृतिरुत व्यालेन दष्टस्तथा
शय्याहर्म्यकयोर्भवेज्ज्वलनकं पीठस्य किंवा शुभम् ॥ ५५ ॥

पुष्प–फलसहित वृक्ष में चढकर जागे अथवा दाहिने हाथको सफेद साँप काटे तो बहुत द्रव्य का लाभ होता है। रक्त (खून) से स्नान वा पान वा आप मरजाय वा साँप काटे वा शय्या महल वा आसन अग्निसे जल जाय तो 'शुभ' होता है।

स्नानं पयोभिर्मरणं च शोणितस्रावस्तथा स्वीयशिरश्छिदा शुभा ।
पानं सुरायाः पयसोऽथ पायसाशनं प्रशस्तं पलभक्षणं तथा ॥ ५६ ॥

यदि स्वप्न में जल से स्नान, किसीका मरण, रक्तस्राव वा अपना शिर कट जाय, मदिरापान, दुग्धपान, पायसान्न-भोजन वा मांसभक्षण करे तो 'शुभ' होता है।

रम्भावृक्षाः कल्पवृक्षाश्च राज्यं तीर्थं गङ्गाद्यं नदी तोरणं च ।
भूषा स्वन्नैर्वेष्टनं ग्रामकस्य सन्निर्घोषो वेदवाद्यादिकानाम् ।। ५७ ।।

यदि स्वप्नमें केले का वृक्ष, कल्प (मन्दार) वृक्ष, राज्य, गङ्गादि तीर्थ, नदी, तोरण, भूषण, उत्तम अन्नोंसे घिरा हुआ गांव, वेद और बाजे आदिका शब्द शुभ होता है।

उद्यानस्य विलोकनं च सरसश्चालोकनं शोभनं
गर्त्तान्निःसरणं च कीटवदनालीनां च दंशस्तथा ।
पीतासृक्फलपुष्पकाणि मनुजः स्वप्ने यदा प्राप्नुयाद्
गाङ्गेयं किमु पद्मरागमणिकं नूनं लभेत द्रुतम् ।। ५८ ।।

यदि स्वप्नमें उद्यान (बगीचा) और तालाब का दर्शन हो तो 'शुभ' होता है। गड्ढेसे निकलना और डांस तथा वृश्चिक का काटना शुभ होता है। एवं स्वप्न में पीले और लाल फलपुष्प मिलें तो शीघ्रही सुवर्ण वा पद्मराग माणि की प्राप्ति होती है।

ध्वजेक्षणं गोत्रभिदो रणे पणे वादे जयो बन्धनकं निजात्मनः ।
शीर्षस्य बाह्वोर्बहुलं शुभं भवेत्सन्नाकनाथातपधारणं द्विजः ।। ५९ ।।
कर्त्ताऽभिषेकस्य तथा स्वनाभौ तृणाम्बुपुष्पद्रुमसम्भवश्च ।
व्याघ्न्याश्च सिंह्या महिषीसुरभ्योः स्तन्यस्य पानं कुरुते नरो यः ।। ६० ।।

चेत्क्रमणोत्क्षेपणकं भूमिधरस्येह भुवः ।
सद्भवति प्रोक्तमिति शिक्षितकैर्ज्यौतिषिकैः ।। ६१ ।।

यदि स्वप्नमें इन्द्र की ध्वजा का दर्शन; सङ्ग्राम, द्यूत और विवाद में विजय पाना एवं अपने शरीर शिर बाहुका बन्धन हो तो बहुत शुभ होता है। देवताओंका छत्र धारण और अभिषेक कर्त्ता ब्राह्मण का दर्शन हो तो शुभ होता है। अपनी नाभि में तृण, जल, पुष्प और वृक्ष निकले तो शुभ होता है। व्याघ्री, सिंही, महिषी और गौका स्तनपान करे तो शुभ होता है। एवं शेष भगवान् पृथ्वी को उछाले तो शुभ होता है। इस प्रकार शिक्षित ज्योतिषियोंने कहा है।

रौप्यस्य किंवा मणिहाटकानां पात्रेऽथवा पङ्करुहस्य पत्रे ।
स्वप्ने यदा पायसमश्नुते यः पुमान् स राज्यं लभते तदानीम् ।। ६२ ।।

जो मनुष्य स्वप्न में चान्दी के वा सुवर्ण के पात्र में अथवा कमल के पत्ते मे पायस भोजन करे वह राज्य को पाता है।

लिङ्गी द्विजो गौर्नृपतिः पिता च गीर्वाणमित्राणि शुभाशुभं यत् ।
स्वप्ने वदेयुः प्रभवेत्तदेव सद्दर्शनं सिद्धसुहृन्नृपाणाम् ।। ६३ ।।

संन्यासी, ब्राह्मण, गौ, राजा, पिता, देवता और मित्र स्वप्न मे जो शुभ वा अशुभ वार्ता कहें वह सत्य होती है। स्वप्न में सिद्ध, मित्र और राजाओंका दर्शन भी शुभ होता है।

प्रसवः सदने गवां द्विपीवडवानां प्रभवेत्तदा शुभम् ।
भुजगः किमलिः प्रदंशते सलिलौकाः स्वसुताप्तिमादिशेत् ॥ ६४ ॥

स्वप्न में गौ, हस्तिनी और घोडियोंका प्रसव अपने घरमें हो तो शुभ होता है। यदि स्वप्न में साँप, वृश्चिक वा जलौका (जूँक) काटे तो धन तथा पुत्र की प्राप्ति को कहे ।

स्वप्नावसाने यदि भक्षयेद्यो मांसानि मर्त्यो मनुसम्भवानाम् ।
निगद्यते तत्फलमत्र पङ्के विचक्षणैर्वा हरितालसञ्ज्ञे ॥ ६५ ॥

यदि स्वप्नके अन्त में जो मनुष्य मनुष्योंका मांस खाय उसका फल पङ्क (कीचड) में वा हरिताल में कहे ।

सहस्रं लभते बाहुभक्षणे पादभक्षणे ।
लभेत्पञ्चशतं मस्तभक्षणे पादभक्षणे लक्षमाप्नुयात् ॥ ६६ ॥

यदि मनुष्य स्वप्न में बाहु (हाथ) भक्षण करे नो एक हजार मुद्रा मिले । पाद भक्षण करे तो पांच सौ और शिरका भक्षण करे तो एक लाख मुद्रा मिले ।

नीवृत्कराज्यं किमु मण्डलं च निकेतनाख्यं किमुदेशसञ्ज्ञम् ।
स्वप्नेन मर्त्यः परिवेष्टितं यो विलोकयेत्तस्य पतिर्भवेत्सः ॥ ६७ ॥

स्वप्न में जो मनुष्य जनपद राज्य मण्डल गृह वा देश इनको उत्तम अन्नों से घिरा हुआ देखे वह उसी स्थानका स्वामी होता है।

यथाविधि त्र्यम्बकलिङ्गनाम प्रपूजितं वाऽदितिनन्दनाश्च ।
स्वप्ने मनुष्यैः परिवीक्षिताश्चेद् दद्युर्नराणां विपुलं हिरण्यम् ॥ ६८ ॥

स्वप्न में यदि मनुष्यों से यथाविधि शिवलिङ्गका पूजन किया जाय वा देवताआका दर्शन हो तो मनुष्यों को बहुत धन देते है ।

कार्पासतक्रे अपहाय सर्वं श्वेतं शुभं संस्मृतमार्य्यवर्य्यैः ।
विहाय गा भूमिसुरान्मतङ्गान् देवानसत्कृष्ण मनूनकं स्यात् ॥ ६९ ॥

कपास और छाछ (मट्ठा) को छोडकर समस्त श्वेत वस्तु का दर्शन शुभ होता है । एवं गौ, ब्राह्मण, हाथी और देवताओंको छोडकर समस्त कृष्ण वस्तु का दर्शन अशुभ होता है ।

अशुभ स्वप्नों का परिज्ञान :—

आरूढो महिषं खरं मयं वा कृष्णाख्यं वृषभं हयं प्रगच्छन् ।
याम्यां जीवति नो नरोऽथ तैलाभ्यक्तो वा हरिदंशुकं तथैव ॥ ७० ॥

स्वप्नमें यदि महिष, गर्दभ, ऊँट, काले बैल वा काले घोडे में सवार होकार दक्षिण दिशाकी ओर जाय अथवा तेल का लेपन करे अथवा हरित वस्त्रका दर्शन हो तो वह मनुष्य न जीवे ।

सरक्तपुष्पे विपिने च पाकस्थाने प्रसूतेर्भवनेविशेद्यत् ।
मनोरपत्यं विकलाङ्गमेतत्स्वप्नेऽसुभिस्तत्प्रवियुज्यतेऽत्र ॥ ७१ ॥

लाल पुष्पों के बन में, पाकस्थान (रसोई घर) में, सूतिका गृह में जो विकल शरीरवाला मनुष्य प्रवेश करे तो उसका मरण होता है ।

निकेतने यस्य पतन्ति धावतः सिल्हादयः कुक्कुमयावकादयः ।
पलाशितस्तस्य निकेतनस्य च दाहस्तथा तस्करसम्भवं भयम् ॥ ७२ ॥

यदि स्वप्नमें जिस मनुष्य के घर में वृक्षसे सिलारस, कुङ्कुम और लाख इत्यादि धातु पड़े तो उसके घर को दाह तथा चोरी का भय होता है ।

अन्येषु गात्रेषु विनेह नाभिमनोकहः पुष्पतृणोद्गमश्च ।
यानं खरोष्ट्रोरगवानराद्यैः स्नेहस्य वा भक्षणमप्रशस्तम् ॥ ७३ ॥

स्वप्नमें नाभिको छोडकर यदि शेष अङ्गों में वृक्ष, पुष्प और तृण उत्पन्न हो । गधा, ऊँठ, साँप और वानर इत्यादि की सवारी करे अथवा स्नेह (घृत वा तिलहन) पदार्थों को खाय तो अशुभ फल होता है ।

स्नेहेन मस्या कलुषेण वारिणा किं कर्दमैर्गोमयकेन लेपनम् ।
कलेवरस्योत निषद्वराभिधे निमज्जनं दन्तदृशां निपातनम् ॥ ७४ ॥
हस्तांत्रजिह्वाविनिपातनं त्विमे स्वप्नाः प्रदृष्टा यदि हानिकारकाः ।
शोकप्रदाः स्युर्हसितं च भर्त्सितं स्रोतोवहा* वाथ पयस्यधोगतम् ॥ ७५ ।
सान्दोलनं क्रीडितगीतसञ्ज्ञके किं स्फोटितं पुष्पवतोर्ध्वजस्य च ।
पातोऽथ ताराविनिपातनं प्रसूगर्भे प्रवेशः किमुतात्मनश्चिता ॥ ७६ ॥
धारणं कांस्यवर्णस्य विभागेमस्तकस्य च ।
गुणच्छेदोऽशुभंवल्ल्याः पाशेन बन्धनं तथा ॥ ७७ ॥

स्वप्नमें तेल, घृत, स्याही वा मलिन जलसे स्नान अथवा कीचड़ वा गोमय (गोबर) से शरीरका लेपन अथव कीचड़ में स्नान, दांत, नेत्र, गिर जाय वा हाथ, अन्तडी, जिव्हा गिर जाय तो हानिकारक और शोकप्रद होते हैं। यदि स्वप्न में हंसे, झिड़के जलके प्रवाह में घुस जाय, हिण्डोले में झूले, खेले, गीतगाय, कूदे अथवा सूर्य, चंद्रमा, ध्वजा तथा ताराओं का पतन दृग्गोचर हो अथवा माता के गर्भ में प्रवेश अथवा अपनी चिता दृग्गोचा हो अथवा शिरमें कांस्यवर्ण की वस्तु को धारण करे अथवा रस्सी टूटे अथवा लता के पाश से बन्धन हो तो अशुभ फल होता है ।

आलिंङगनं त्वसितवस्त्रधरायुवत्या
मृत्युप्रदं च करवीरमशोकसञ्ज्ञम् ।

---

* ' श्रोतोवहानीरे ह्यधोगतम् ' इति पाठः । अथवा स्रोतोवहा नीरे ह्यधोगतमित्यपि पाठः ।

आरुह्य पुष्पिततरून् परिचिन्त्य यः स्वं
गात्रं च भूषयति रक्तसुमैः स मर्त्यः ॥ ७८ ॥
समेति मृत्युं धृतरक्तचीवरालिष्टः स हत्यां लभतेऽथ धूमितः ।
आत्मानमाकीर्णमवेक्षते तु यो धूमेनकालायसभस्मसर्पिषाम् ॥ ७९ ॥
लाभं समेतीन्दिरया वियुज्यते मार्जारगोधालिशृगालकुक्कुटाः ।
दंशाश्वबभ्रूरगमक्षिका इमे स्वप्ने प्रदृष्टा नहि शोभना मताः ॥ ८० ॥

यदि स्वप्नमें काले वस्त्र धारण किई हुई स्त्री से आलिङ्गन करे तो मृत्यु होती है। एवं स्वप्नमें कनीर और अशोक दृग्गोचर हों तो भी मृत्यु होती है। फूले हुए वृक्षोंपर चढकर अपने शरीर का विचार करके लाल पुष्पों से विभूषित हो तो मृत्यु को प्राप्त होता है। लाल वस्त्रो को धारण करे तो हत्या को प्राप्त होता है। जो अपने शरीर को धुएँ से व्याप्त अथवा धुएँ को देखे अथवा जिसको लोहा भस्म वा घी मिले उसकी लक्ष्मी का नाश होता है। यदि स्वप्नमें बिडाला, छिपकली, शृगाल (सियार), कुक्कुट (मुर्गा), वनमक्खी, नेवला, साँप और मक्खियां देखे तो शुभ फल नहीं होता है।

शय्याभूषाश्वायुधोपानररत्नवस्त्रार्थानां मोषणं वल्लभानाम् ।
द्रव्याणां वा योषितामर्थनाशो वा शुक् पाणेः पीडने वोत्सवाख्ये ॥ ८१ ॥
भ्रंशे नखानां किमुकुन्तलानां विच्छेदनेदोर्वदनाङ्गकानाम् ।
विनाशकृत्स्यात्पतनं दृशोरुग्वाश्मश्रुणां वा वपनं कचानाम् ॥ ८२ ॥
गर्त्तग्रहिध्वान्तवपादरीषु नो शोभनं श्येनकपोतगृध्राः ।
श्वोलूककाकाः शशकः शिवर्क्षौस्वप्ने न शस्ता अवलोकिताश्चेत् ॥ ८३ ॥

यदि स्वप्न में शय्या, भूषण, घोड़े, आयुध (हथियार), जूता, रत्न, वस्त्र, द्रव्य, प्रियवस्तु और स्त्रीका हरण दृग्गोचर हो तो धनका नाश होता है। विवाह और उत्सव में शोक; दन्त और केशों का पतन; हस्त पादादि शरीरके अङ्गका विच्छेदन दृग्गोचर हो तो विनाश करने वाला होता हैं। ऊंचे से गिर पडे, आँखो में पीडा हो, दाढी मूँछ और केश आदि को मुंडवावे एवं गड्ढे, कूआ, अन्धकार, बिल और कन्दरा में पड़ जाय तो अशुभ होता है। यदि स्वप्न में श्येन (बाज), कपोत (कबूतर), गीध, कुत्ता, उल्लू, कौआ, खरगोश, शृगाल और रीछ ये सब वस्तु दृग्गोचर हों तो अशुभ फल होता है।

अपूपकृशराश्राणाशष्कुलीगुडादि भक्षणं स्वप्ने ।
गोमयमुष्णसलिलं पीतं स्वप्ने न शस्तं स्यात् ॥ ८४ ॥

यदि स्वप्नमें पूड़े, लापसी, सुहाली गुड आदिका भक्षण अथवा गोमय दृग्गोचर हो अथवा गर्म पाणी का पान करे तो शुभफल नहीं होता हैं।

मूत्रे पुरीषे क्षतजे यदा स्रवन् लभेत मृत्युं क्षतजासितानि यः ।
बिभर्ति वस्त्राणि सुमानि भूतकैः प्रेतैः पिशाचैः श्वपचैः समंगतः ॥ ८५ ॥

तैर्याम्यां किमुताहृतः कृशाहैः कुर्वाणः पितृकार्य्यमेति सोऽन्तम् ।
भानूनं दिवसं निशं विचन्द्रां तारोनां परिवीक्षते नरो यः ॥ ८६ ॥
स्वप्ने वृष्टिमकालजां विनश्येच्छिल्पी शुष्कतरुस्तथौषधं च ।
कांस्यायस्त्रपुताम्रपित्तलानि योगेष्टं च मतान्यशोभनानि ॥ ८७ ॥

स्वप्नमें मूत्र और विष्ठा में रक्तस्राव हो तो मृत्युको प्राप्त होता है। रक्त और नील वस्त्र तथा पुष्प को धारण करे अथवा भूत, प्रेत, पिशाच और चण्डालों के साथ गमन करे अथवा भूतादियों द्वारा दक्षिण दिशा में लेजाया जाय तो अल्प (थोडे) दिन में मृत्यु को प्राप्त होता है। अथवा पितृकार्य किया जाय तो भी मृत्यु को प्राप्त होता है। दिन में सूर्य और रात्रि में चन्द्रमा तथा तारा न देखते हों एवं असामयिकवृष्टि दृग्गोचर हो तो मृत्यु होती है। शिल्पी (राज तथा बढई), सूखा वृक्ष, औषध, कांसी, लोहा, रांग, ताम्बा, पित्तल और सीसा ये सब वस्तु दृग्गोचर हो तो शुभफल नहीं होता है।

प्रासादशैलेन्द्रधनुःपताकाशृङ्गाभिधानां पतनं विनाशः ।
राष्ट्रस्य मर्त्याधिभुवां च तारकोलाहलाह्वानकगर्हणोत्थान् ॥ ८८ ॥

आक्रोशजं राजभयं प्रविद्यादभिद्रवान् दंष्ट्रिकशृङ्गिकाणाम् ।
कीशस्य पश्यन्न सदीक्षिता ये स्वप्नाः स्वकीयं प्रति संस्मृतास्ते ॥ ८९ ॥

फलप्रदा निजस्यैव यदि चेत्ते परं प्रति ।
तस्य ते फलदा विज्ञैः प्रवेद्याः किञ्चिदात्मनि ॥ ९० ॥

यदि स्वप्नमें देवमन्दिर, पर्वत, इन्द्रधनु और पर्वतों की चोटियों का पतन हो तो राष्ट्र (प्रजा) और राजाओंका नाश होता है। ऊँचा शब्द, कोलाहल, आह्वान (बुलाहट) निन्दा और आक्रोश शब्दों को सुनेतो राजा को भय होता है। दाढवाले पशु, सींगवाले पशु और वानर प्रभृति भागते हुए दृग्गोचर हों तो अशुभ फल होता है। जो स्वप्न अपने प्रति दृग्गोचर हों वे अपने ही को फलदायक होते है। एवं जो स्वप्न दूसरे के प्रति दृग्गोचर हो वे उन ही को फलदायक और किञ्चित् अपनी आत्माके प्रति फलदायक जानने चाहिएँ।

स्वप्न के फल का परिपाक समय का परिज्ञानः

स्वप्नोऽब्देन फलप्रदो रजन्याश्चेदाद्ये प्रहरे ततो द्वितीये ।
षण्मासैस्त्रितये त्रिभिस्तु मासैः स्वप्यान्नो मनुजो द्रुतं तुरीये ॥ ९१ ॥

यदि रात्रि के प्रथम प्रहर में स्वप्न हो तो एक वर्ष में फलदायक, द्वितीय प्रहरमें छः मास में फलदायक, तृतीय प्रहर में तीन मास में फलदायक और चतुर्थ प्रहर में स्वप्न होने के पश्चात् शयन न करे तो शीघ्र फलदायक होता है।

सात प्रकारके स्वप्नों का परिज्ञानः—

दृष्टं श्रुतमनुभूतं तथा पार्थिवं कथितं चापि।
भावितदोषजे विदुः सप्तविधं स्वप्नं महान्तः॥ ९२॥
तत्राद्यं पञ्चविधं कीर्त्तितं विफलं प्राचीनैः।
द्विविधमन्त्यं विचिन्त्यं विधेया शान्तिर्दुःस्वप्ने॥ ९३॥

दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, पार्थिव, कथित, भावित और दोषज ये सात प्रकार के स्वप्न पण्डितजनों ने जानने। उनमें प्रथम पाँच प्रकार के स्वप्न पूर्वाचार्यों ने निष्फल कहे हैं। अन्त्य के दो (भावित तथा दोषज) स्वप्नों के शुभाशुभ फलका विचार करना चाहिए। दुष्ट स्वप्नों के दोषपरिहार के लिए शास्त्रोक्त विधान से शान्ति करनी चाहिए।

वर्षे दर्शननन्दगोमहिमिते श्रीवैक्रमीये तपो—
मासे भास्वति नक्रगे सितदले विष्णोस्तिथौ ग्लौदिने।
ज्योतिस्तत्त्वमिदं मुकुन्दविदुषा देवप्रयागस्थले
बालानां पठनाय शुद्धमनसां मेधाविनां निर्मितम्॥ ९४॥

श्री विक्रमसंवत् १९९६ माघमास, मकर गत सूर्य, शुक्लपक्ष, द्वादशी तिथि और चन्द्रवार के दिन देव-प्रयाग तीर्थ में श्री ६ युत पूज्य आचार्य्यचरण श्रीपण्डितवर्य्य मुकुन्दराम शर्म्मा वडेथवाल ज्योतिर्विद् महोदयजीने शुद्धचित्त वाले मेधावी बालकों के पढने के लिए यह ' ज्योतिस्तत्त्व ' नामक पुस्तक बनाई।

शाकेऽसुरागोरगरूपसम्मिते चैत्रेऽसिते कामतिथौ ज्ञवासरे।
भाषा कृता चक्रधरेण धीमता शिष्टया गुरूणां शिशुसंवसम्मुदे॥

इतिश्रीबदरिकाश्रमहिमालयप्रदेशान्तर्वर्तिगढवालदेशान्तर्गतदेवप्रयागतीर्थसमीपवर्त्तिखण्डग्रामनिवासिवडेथवालवंशावतं-सश्रीमत्पण्डितवर्य्यरघुवरदत्तशर्म्ममहोदयतनूजदैवज्ञप्रवरश्रीपण्डितमुकुन्दरामज्योतिर्विद्विरचितज्योतिस्तत्त्वेश्रीदेवप्रयागनिवासि-श्रीमत्पण्डितवर्य्यलक्ष्मीधरशर्म्मभट्टज्योतिर्वित्तनुजनुषाज्योतिषाचार्यजोशीत्युपाह्वश्रीपण्डितचक्रधरशर्म्मभट्टज्योतिर्विदाविरचित-भाषाटीकोदाहरणोपेतेप्रकीर्णप्रकरणंत्रिचत्वारिंशं समाप्तिमगमत्। इति शम्।

समाप्तो ऽ यं ग्रन्थः।

ज्योतिस्तत्त्वोत्तरार्द्धस्य शुद्धिपत्रम्

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
सन्तात	सन्तति	७११	९
स्वले	खले	७२०	१४
कलते	कलत्रे	७२३	६
आहा	आहो	७४७	२९
मापि	मपि	७६०	४
द्व्युग्रौ	ह्युग्रौ	७६२	३४
साधे	साघे	७६८	१२
पति	पथि	७७९	१४
ष्णांश्रुजे	ष्णांशुजे	७९५	२१
ज्ञस्त्रि	ज्ञस्त्रि	८०१	३
पावले	पावके	८०१	१२
ण्ट	ण्ट	८१३	२४
भृगो	भृगौ	८१९	२२
क	का	८१९	२२
न्य	च्यं	८१९	२७
व	ख	८१९	२७
भृं	मृं	८२०	२६
क्षम्	क्षयम्	८२१	८
स्रो	स्त्री	८२९	२७
पि	षि	८५१	२५
थ	थे	८५६	१
धी	र्धी	८५९	२२
करकग्रहः	करग्रहः	८६०	२१
आर्द्र	अर्द्धं	८६३	१
भाशं	भांशं	८६७	२४
दहे	देहे	८६७	३०
द्विङ्गा	द्विहङ्गा	८६८	२९
चेग्रे	चोग्रे	८६९	२८
चर...	चरमभवने	८६९	२८
योपा	योषा	८७७	२९
पूव	पूर्वं	८९२	१९
युंः	युः	८९२	१९
जन्मा	जन्मा	८९८	१३
ाक	कि	९०३	६
विधा	विधौ	९०४	९४
कि ता	कितौ	९०५	३०
सर	सुर	९१३	४
ऽर्थे	ऽर्थेने	९१३	१५
धराय्यश	धराय्यंश	९१६	२
काभिः	कोभिः	९१६	१८
पारगतः	पौरगतः	९१६	२६
ुरोधाः	पुरोधाः	९१६	२६
ाक	कि	९१७	१५
न	नं	९१८	१०
स्य	स्य	९१९	७
स्या	स्यात्	९२१	१६
शक्ष	शर्क्षं	९२४	२८
मद	मन्द	९२५	३०
वोवानां	वोढ्रवानां	९२६	२
त्यय	त्ययः	९२७	१८
दक्षिको	दीक्षको	९२८	१४
वन्ह	वह्नि	९२९	२०
कुज	कुजे	९३२	१७
उ...	उद्व	९३२	२७
पुर	पुरे	९३३	२४
कि	किमु	९३४	८
सना	सैना	९३४	८
रुणारा	रुणारौ	९३४	९
न्विते भूपति	न्वितेक्षितेभूपति	९३४	१४
लोकि ..	लोकित	९३४	१६
पूज्यन	पूज्येन	९३४	१८
गंदभ	गर्दभं	९३४	२५
श ...ऽन्त्ये	शतेऽन्त्ये	९३६	८
श	शे	९४०	१७
सोत्य	सोत्थ	९४१	१३
क्षाश	क्षांश	९४२	६
सङ्ग्रा	सङ्गा	९४२	१३
वष	वर्षे	९४३	१३
कत्ता	कर्त्ता	९४४	८
कृव्याः	कृष्यः	९४६	२
ण्य	पुण्य	९४९	७
हम्या	हर्म्यो	९५५	७
ाक	कि	९६३	३१
ऽश	शे	९६३	३१
क	के	९६३	३१
ऽशापाकमुगुरा	ज्शपे किमु गुरौ	९६३	२४
ाक	किं	९६४	२९
वन्दा	वेन्दौ	९६४	२९
ऽङ्गःश	ङ्गेःशे	९६६	१९
कुज	कुजे	९६७	१४
म्ते	स्ते	९६७	२३
यक	युक्	९७७	११
नपुण्यः	नैपुण्यः	९७८	२३
नाथा	नाथो	३७८	३०
विकत	विकृत	९८१	५
भाक	भाक्	९८१	५
धम्म	धर्म्मे	९८४	७
कपि	कृषि	९८६	४

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
खेश	खेशै	९८८	१६
यै	स्यै	९८९	११
कद	कृद	९८९	१७
...पे	म्बुपे	९९१	८
कत	कृत	९९२	४
गुरा	गुरौ	९९२	१६
गुरा	गुरौ	९९२	१९
साम्य	सौम्य	९९२	८
गदे	गर्दे	९९२	१९
गहे	गृहे	९९३	२
गृह	गृहे	९९३	२०
यपा	यपौ	९९५	२५
गंग:	गंगै:	९९९	५
शनश्चर:	शनैश्चर:	१०००	२७
मग	मगै	१००१	१०
तस्य:	तस्थै:	१००२	४
वशा	वंशा	१००२	११
कि...	किमु	१००२	१२
मूत्त	मूर्त्त	१००२	३०
न्यार्गे	न्मार्गे	१००३	१
भाणौ	र्भाणौ	१००३	२
नाये	नाथे	१००२	३
ऽक	ऽर्के	१००३	४
कम	कर्तृ	१००४	६
तपन	तपनं	१००४	१८
ऽक	ऽर्के	१००५	१०
भागवयो:क्षतेश	भार्गवयो:क्षतेश	१००५	२४
नाथया:	नाथयो:	१०११	६
स्खेश	स्खेशे	१०१२	१२
पेऽ....	पेऽङ्ग	१०१२	२०
ज्या	ज्यौ	१०१२	२१
धम्म	धर्म्मे	१०१२	२२
साथनाथ:	सार्थनाथै:	१०१२	२५
स्त्य:	स्त्यै:	१०१२	२७
हाथस	हार्थसं	१०१६	२
घने	घनै	१०१६	१०
भाक	भाक्	१०१८	२२
कम्भ	कुम्भ	१०१८	३०
दे...	देक	१०१९	२
गापाल	गोपाल	१०२०	१५
लव	लवे	१०२२	२२
जायत	जायते	१०२२	२३
मुव	वमु	१०२३	९
कुज	कुजै	१०२३	२२
शा	श	१०२४	१४
सभानां	सभानौ	१०२४	३१
कम्भो	कुम्भो	१०२५	२
क	क्	१०३४	२
दह	देह	१०३४	६
ऽब्ज	ऽब्जे	१०३४	२२
कीत्या	कीर्त्या	१०३४	२२
साम्यै:	सौम्यै:	१०३४	२५
शा	श	१०३५	२१
धमा	धर्मा	१०३५	२८
त्स	त्सु	१०३६	३०
ऽलि	ऽति	१०३६	१५
क्वब्द	क्वब्दे	१०३७	२
पता	पतौ	१०४१	४
वर	वैर	१०४१	८
रुयुक्	रुग्युक्	१०४१	९
कप	कृप:	१०४२	२
ऽ–ब	ऽम्ब	१०४२	१९
कद	कृद	१०४२	२१
मृ	भृ	१०४२	२९
कषि	कृषि	१०४३	३०
कम्म	कर्म्म	१०४४	२०
निदय	निर्दयं	१०४४	२५
वीययतो	वीर्ययुतो	१०४९	३
सख	सुख	१०४९	४
व	ख	१०५०	७
पण्डित:	पण्डितै:	१०५०	८
सम्बमध	सम्बन्ध	१०५०	१८
पजन्य	पर्जन्य	१०५०	२४
सतिम्यजङ्ग	सतिभ्यजेऽङ्गे	१०५१	५
......	मन्दगतौ	१०५१	१३
......	वैक्लयवान्	१०५१	१४
गुण:	गुणै:	१०५२	५
भाक	भाक्	१०५३	२
शभ	भुभ	१०५३	१०
रू	रु	१०५५	११
न्मा	न्मो	१०५५	१३
सख	सुख	१०५६	२३
भाक	भाक्	१०६०	३
य	यं	१०६०	७
सदव	सदैव	१०६०	२०
ङ्गते	ङ्गते	१०६१	४
ऽ	ऽर्थ	१०६६	३०
शौय्य	शौर्य्य	१०७४	१३
संते	स्रयते	१२७९	२८
सू...	सूनु	१०८२	२
भाक	भाक्	१०८४	९
कपणो	कृपणो	१०८४	२२

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
ताती	तापी	१०८५	२८	सूय्या	सूर्य्या	११८७	१२
कारि	कारी	१०८५	२८	प्रदा	प्रदो	११९३	८
शुभ	शुभै	१०८९	९	काय्या	कार्य्या,	११९३	१६
उजक	उर्जकं	१०८९	१८	काय्य	कार्य्य	११९३	१८
स्वग···ग:	स्वराशिग:	१०९०	२३	सिद्धि	सिद्धिं	११९३	१९
भवा	भावा	१०९०	२८	काय्यप:	कार्य्यप:	११९३	२१
शुभद	शुभदै	१०९२	१२	खाथ	खार्थ	११९४	२७
तज्ज्ञे:	तज्ज्ञै:	१०९४	८	काय्ब	कार्य्य	११९५	५
पञ्चाना	पञ्चानां	१०९७	१७	सर्ा	सर्व	११९६	२
प॒	पत्यु	१०९८	२७	सर्वा···भं	सर्वाशुभं	११९६	३
तद्भाव	यद्भाव	११००	१९	कन्द्र ुख	केन्द्रमुख	११९६	४
भर्त्तार	भर्त्तरि	११०५	५	......	दृष्टेऽर्के	११९६	१२
कण:	कर्ण:	११०९	९	किंभ	किंभानौ	११९६	१३
कृशा	कृशा	१११२	१४	......	युतै:	११९६	२०
···	संस्थ:	१११२	२२	वं ा	वंधा	११९६	२२
चित	चित	१११४	१६	ङ्काथ	ङ्कार्थ	११९७	५
काव्ये	काव्ये	११२१	१६	तुय्य	तुर्य्ये	११९७	६
थ	थं	११२२	१९	तनो	तनौ	११९७	७
प्रयुक्ता	प्रयुक्तो	११२४	८	थं · ब्ध्यै	थंलब्ध्यै	११९८	६
कता	कृता	११२५	२	ज्ञा	ज्ञो	११९९	२५
गुण:	गुणै:	११२५	१९	काय्य	कार्य्य	१२००	११
नृत	नृत:	११२६	७	यारसाम्य:	योरसौम्यै:	१२००	१५
कती	कृती	११२७	२०	तुय्यस्था	तुर्य्यस्थौ	१२०१	१
ख्योग:	ख्य योग:	११३३	११	प्रक	प्रकु	१२०१	६
गारा	गौरा	११३३	१२	नृष्ट	दृष्ट:	१२०१	२६
भाघा	भाद्या	११३६	२०	कष्ट	कण्ट	१२०१	२७
माला	मला	११३९	२	नंष्ट	नष्टं	१२०२	३०
पाधषणा	पधिषणो	११३९	१२	स्तान्न	स्तान्नि	१२३६	१५
खटै:	खेटै:	११४३	३०	कन्द्रे	केन्द्रे	१२३६	१९
क्रूरे:	क्रूरै:	११४३	३१	पयादा	पयोदा	१२४६	२९
रितश्च	रितैश्च	११४७	५	परिवष	परिवेष	१२४६	२९
सवदा	सर्वदा	११४७	२३	ममीर	समीर	१२४७	३
नृत्य:	नृर्मै:	११४८	२१	स्तदक	स्तदैक	१२४८	१७
दाघै:	दार्घै:	११५२	१४	वरक	करका	१२४९	२
भथा	भस्था:	११५५	१८	मति	सूति	१२५०	९
मुक्त	मुक्ता	११६२	१६	द्युभिजलम्	द्युंमिर्जलम्	१२५३	२१
जाथम्	जार्थम्	११६२	१६	रुद्धा	रुद्धा	१२५४	२८
रवर	स्वर	११६३	१८	खुरों	पंजों	१२५५	१५
शाका	शार्का	११६४	२८	मु · का:	मट्का	१२५५	२७
गृ	गृह	११६८	४	विधौ	विधौ	१२७४	१२
यात:	यातै:	११७०	९	विलार	विसार	१२७७	१३
सव	सर्वं	११७१	११	ण्ह···हं	ण्हाम्यहं	१२७८	३१
चित्त	चिन्त	११७३	२६	यत्री	यत्री	१२७९	२
स ा	सुता	११८०	१२	ब्ण	ब्ण्य	१३०१	१७
ध्रुव	ध्रुवं	११८०	२२	घटचा	घटचो	१३०१	२६
शमा	शंना	११८४	२२	ङ्तौ	ङ्गतौ	१३०६	२८
खटा:	खेटा:	११८६	२५	सभेत्य	समेत्य	१३०७	२२

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पांक्ति
घोरा	घोरो	१३०९	१५
न्नात्ति	न्नात्ति	१३११	७
ज्येष्टे	ज्येष्ठे	१३१२	२८
स्यानृ	स्यान्नृ	१३१३	२
त्वर	त्वार	१३१४	१
यारो	कारो	१३१४	५
भं	भं	१३१५	२०
कां…स्थौ	कांशस्थौ	१३१५	२५
रूप्य	रूप्यम्	१३१५	२५
…घ	बुध	१३१७	१८
२२५	२१५	१३३९	१४
भ्रवर	भ्रचर	१३४२	२६
क्रम	क्रमतः	१३४२	२७
भण्डं	भाण्डं	१३५०	९
पात्र	पात्रा	१३५२	१४
गुर्व्वीणी	गुर्व्विणी	१३५३	२२
पूणा	पूर्णो	१३५५	१५
शेपं	शेषं	१३५६	१८
मसून	मसन्	१३५९	९
वाम	वामा	१३६०	९
नि:स	न्नि:स	१३६२	६
स्वप्न	स्वप्ने	१३६२	२८
भवेनं	भंवनं	१३६४	६
वासी	वासि	१३६७	२६